सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

२०

(अप्रैल – अगस्त १९२१)

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मन्त्रालय

भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें १४ अप्रैल, १९२१ से १५ अगस्त, १९२१ तक अर्थात् चार महीनोंकी सामग्री संगृहीत है। गांधीजीने इसी वर्षमें "एक ही सालके भीतर स्वराज्य" प्राप्त करनेका नारा दिया था। इस अवधिमें उन्होंने जो-कुछ कहा या किया उसका उद्देश्य था, उनकी अपनी कल्पनाके स्वराज्यको स्पष्ट करना, लोगोंको उसके योग्य बनाना और उसे यथासम्भव शीघ्र प्राप्त करनेके लिए उन्हें मानसिक रूपसे तैयार करना। उन्होंने पहले 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' में लिखकर और स्थान-स्थानपर भाषण देकर बेजवाड़ा कार्यक्रमपर जोर दिया। तदनुसार मार्च १९२१में तिलक स्वराज्य कोष और कांग्रेसकी सदस्यता तथा चरखेके प्रचारके विषयमें ३० जून तक कितना-कुछ कर डालना चाहिए, इसके आँकड़े निर्धारित कर दिये गये थे।

गांधीजीने जब "एक वर्षमें स्वराज्य" पानेकी बात कही, तब उनके मनमें यह बिलकुल साफ था कि स्वराज्यकी प्राप्तिकी कुछ शर्तें हैं और उन्हें पूरा किये बिना स्वराज्य नहीं मिल सकता। देश स्वराज्यके योग्य हुआ है या नहीं, वे इसकी कसौटी बेजवाड़ामें किये गये निर्णय, स्वदेशी कार्यक्रमपर अमल तथा अहिंसा और हिन्दू-मुस्लिम एकताकी पूरी-पूरी साधनाको ही मानते थे।

गांधीजीका विरोध सरकारके तन्त्रसे था। उन्होंने भारतमें जो अंग्रेज थे उनके नाम एक अपील निकाली और कहा कि उन्हें चाहिए कि वे इस देशके लोगोंकी माँगको अपनी माँग बनायें। उन्होंने लिखा: "अपने ही द्वारा प्रस्तुत प्रणालीकी अपेक्षा आदमी स्वयं अच्छा होता है। . . . यहाँ भारतमें आप जिस प्रणालीसे सम्बन्धित हैं वह इतनी निकृष्ट है कि उसका वर्णन ही नहीं हो सकता। अतः मेरे लिए यह सम्भव है कि आपको बुरा समझे बिना तथा प्रत्येक अंग्रेजपर बुरे उद्देश्यका दोष मढ़े बिना कठोरसे-कठोर शब्दोंमें उक्त प्रणालीकी निन्दा कर सकूँ। राजविधि द्वारा गठित हमारा जीवन पारस्परिक अविश्वास और भयपर आधारित है। आप स्वीकार करेंगे कि यह इन्सानियत नहीं है। . . . इस प्रणालीने . . . हमें और आपको नीचे गिरा दिया है।" (पृष्ठ ३८०–८१) गांधीजीका उद्देश्य साम्राज्यको परिष्कृत करके एक ऐसे राष्ट्रमण्डलका रूप देना था "जिसमें सभी राष्ट्र यदि चाहें तो संसारकी उन्नतिमें अपना सर्वोत्तम योगदान करनेके लिए और निरे भौतिक बलके बदले वास्तवमें कष्ट-सहन द्वारा संसारके कमजोर राष्ट्रों या जातियोंको अभय देनेके लिए सम्मिलित और सक्रिय हो सकते हैं।" (पृष्ठ ३०५)

स्वराज्यकी स्थापना कैसे हो? गांधीजीने इतिहासके अपने ज्ञानके आधारपर यह जाना था कि शुद्ध न्यायकी बिलकुल सीधी-सादी बातका उन [अंग्रेजों] पर कोई असर नहीं होता। उनको वह कोई हवाई-खयाल जैसी लगती है। लेकिन जब उसी न्यायकी बातके पीछे शक्ति भी होती है, तब उनकी दूरदर्शिता काम करने लगती है। शक्ति

होनी चाहिए; फिर वह निरी भौतिक शक्ति है या आत्मिक शक्ति, इसमें वे कोई अन्तर नहीं करते।

किन्तु जहाँतक गांधीजीका सवाल है, निश्चित था कि वे अहिंसात्मक असहयोगकी शक्तिसे ही काम लेंगे। हिंसा, गोपनीयता या छल-कपट आदिका सहारा लेना वे सदा निन्दनीय मानते थे। उन्होंने पहली जूनको गुजरात राजनीतिक परिषद्में असहयोगके पक्षमें एक प्रस्ताव रखा। उनके अनुरोधपर अली बन्धुओंने इस आशयका वक्तव्य जारी किया कि विदेशी शत्रुओंसे साँठ-गाँठ करने अथवा हिंसाका आश्रय लेनेका उनका कोई इरादा नहीं था, तब उनकी कड़ी आलोचना हुई। किन्तु वे नीतिको राजनीतिसे बढ़कर मानते थे और इसीलिए उन्होंने अली बन्धुओं द्वारा माफी माँगे जानेका समर्थन किया और कहा : "यह कदम एक ध्रुवतारा है जो असहयोगकी राहसे भटकनेवाले लोगोंको हमेशा रास्ता दिखाता रहेगा। विरोधियोंकी उपस्थितिमें और इस बातका खतरा उठाकर भी कि उनके आचरणको कमजोरीका लक्षण समझा जा सकता है, असहयोगियोंको निरन्तर अपनी शुद्धि करते चलना है। अपनेको सुधारनेकी प्रक्रियामें उनको इस बातका खयाल नहीं करना चाहिए कि उसकी उनको क्या कीमत चुकानी पड़ती है। सत्यके लिए सत्यके पालनका यही अर्थ होता है।" (पृष्ठ २५४)

१९२०का असहयोग आन्दोलन "निश्चय ही पदवियों, कानूनी अदालतों, स्कूलों, और परिषदोंके साथ जुड़ी हुई प्रतिष्ठाके भ्रमको दूर करनेके लिए आवश्यक था।" (पृष्ठ १४) उद्देश्यकी प्राप्ति हुए बिना उसे बन्द कर देना सम्भव नहीं था और फिर भी सुविधा यह थी कि लोग अपनी मरजीसे उसे जब चाहें तब अख्तियार कर सकते थे। गांधीजी कहते थे कि इस आन्दोलनका उद्देश्य अंग्रेजोंके मनको भारतीयोंके साथ सम्मानपूर्ण शर्तोंपर सहयोगके लिए तैयार करना था। साथ ही वे यह भी कहते थे कि यदि उन्हें ऐसा सहयोग स्वीकृत न हो तो "वे हमारा देश छोड़कर चले जायें। यह आन्दोलन हम दोनोंके सम्बन्धोंको शुद्ध आधारपर स्थापित करनेके लिए है, अपने आत्मसम्मान और अपनी प्रतिष्ठाके अनुकूल उन्हें सुनिश्चित करनेके लिए है।" (पृष्ठ १६)

आन्दोलनका मुख्य उद्देश्य आत्मशुद्धि अर्थात् क्षात्र-धर्मका पुनरुत्थान था। हम प्रार्थना भी "स्वराज्यके लिए नहीं बल्कि स्वराज्यके लिए शक्ति प्राप्त करनेके लिए करते हैं।" (पृष्ठ ९८) "हम अंग्रेज-जनताको बदलनेका प्रयास भी नहीं करते। हम तो स्वयं अपने-आपको बदलनेका प्रयास कर रहे हैं।" (पृष्ठ १२१) "हिमालय जितनी बड़ी" अपनी भूलके मूलमें उन्होंने "देशकी तैयारीके" (पृष्ठ ६१) विषयमें अपने गलत अनुमानको स्वीकार किया और जब 'टाइम्स ऑफ इंडिया' ने "गांधी — तब और अब" शीर्षकसे उनकी आलोचना की तो गांधीजीने उसका जवाब देते हुए कहा कि पुराने और नये गांधीमें कोई अन्तर नहीं है। अगर अन्तर है तो इतना ही कि "आज गांधीकी दृष्टि सत्याग्रहके बारेमें अधिक स्पष्ट है और वह अहिंसाके सिद्धान्तको पहलेसे कहीं ज्यादा महत्त्वपूर्ण मानने लगा है।" (पृष्ठ ६१–६२)

गांधीजी आलोचकोंकी उपेक्षा कभी नहीं करते थे। यों तो वे यथासम्भव सबको समयसे उत्तर देनेका प्रयत्न करते थे; किन्तु ज़ब कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरने उनकी

आलोचना की तो उसे उन्होंने चुनौतीकी तरह लिया और विनम्रताके साथ उसका बहुत ही स्पष्ट और दृढ़ उत्तर दिया। उन्होंने आन्दोलन और उसकी विकृतिके भेदको समझनेकी प्रार्थना की और लिखा: "हो सकता है कि असहयोग आन्दोलन अपने उचित समयके पहले ही शुरू हो गया हो। तब हिन्दुस्तान और संसार दोनोंको उचित समयकी प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। पर हिन्दुस्तानके सामने हिंसा और असहयोग इन दोमें से किसी एकको चुननेके अलावा कोई मार्ग नहीं रह गया था।" उन्होंने कहा कि कविको ऐसा नहीं मानना चाहिए कि "असहयोग आन्दोलन भारतवर्ष तथा यूरोपके बीच एक बड़ी दीवार खड़ी करना चाहता है। इसके विरुद्ध असहयोग आन्दोलनका मंशा यह है कि पारस्परिक सम्मान और विश्वासकी बुनियादपर बिना किसी दबावके सच्चे, स्वैच्छिक तथा सम्मानपूर्ण सहयोगके लिए जमीन तैयार की जाये।... असहयोग आन्दोलन इस बातके विरोधमें किया गया है कि बिना हमारी इच्छा और जानकारीके हमसे बुराईमें सहयोग कराया जा रहा है।" (पृष्ठ १६२)

अंग्रेजीके तथाकथित महत्त्वपर टिप्पणी करते हुए गांधीजीने कहा कि राष्ट्रीय सामर्थ्य ही वह चीज है जो विदेशके प्रभावको ठीकसे पचा सकती है। "मैं अपने-आपको खुली हवाका उतना ही बड़ा उपासक मानता हूँ जितना कि कवि स्वयं अपनेको मानते हैं। मैं अपने घरको चारों ओरसे दीवारोंसे घेर नहीं लेना चाहता और न खिड़कियोंको बन्द कर रखना चाहता हूँ। मैं तो चाहता हूँ कि सब देशोंकी संस्कृतियाँ मेरे घरके चारों ओर अधिकसे-अधिक निर्बाध रूपमें प्रवाहित हो सकें। अलबत्ता मैं यह कभी नहीं चाहूँगा कि उनके तेज झोंके मेरे पाँव ही उखाड़ दें। मैं किसी दूसरेके घरमें एक अवांछनीय मेहमान, भिखारी या गुलामके रूपमें रहना भी बरदाश्त नहीं करूँगा।... मेरा धर्म जेलकी तंग कोठरी-जैसा संकुचित और अनुदार नहीं है। इसमें तो भगवान्‌की सारी सृष्टिके लिए स्थान है। लेकिन अविनय, जाति, धर्म अथवा वर्णगत अहंकारके लिए यहाँ कोई स्थान नहीं है।" (पृष्ठ १५८)

इस तरह असहयोग भावनाकी नई अभिव्यक्तिका आधार तैयार किया जा रहा था। गांधीजीने वाइसरायका भाषण आन्दोलनको समझनेकी दिशामें एक प्रारम्भिक प्रयत्न माना। किन्तु फिर उन्होंने लिखा: "पहलेकी बहुत-सी असफलताओंको वाइसरायने अपने भाषणमें कहीं भी खुले दिलसे स्वीकार नहीं किया है। इसीलिए उसमें नया अध्याय आरम्भ करनेकी, नये सिरेसे काम करनेकी सहज आकांक्षाका अभाव दिखाई देता है।" (पृष्ठ १८८-९) इसके बाद अली बन्धुओंके माफीनामेको लेकर वाइसरायने जो विज्ञप्ति निकाली और उसके विषयमें जो भाषण दिया, उसपर गांधीजीको "बहुत ही दुःख" हुआ, क्योंकि वे दोनों ही तथ्योंकी दृष्टिसे गलत थे। २८ जूनको उन्होंने यह इच्छा व्यक्त की कि जिन परिस्थितियों और कारणोंसे वे वाइसरायसे मिले, उनका एक ऐसा विवरण प्रकाशित किया जाये जिसे दोनोंकी मंजूरी प्राप्त हो। क्योंकि उनकी समझमें वाइसराय नौकरशाहीके हाथोंमें खेल गये थे और नौकरशाही तो "बहुत चालाक, संगठित और पूर्णतया सिद्धान्तहीन" होती है।

इसके बाद तय हो गया कि तत्कालीन शासन-पद्धतिके विरुद्ध प्रचार करना असहयोगीका कर्त्तव्य है। गांधीजीने इन्हीं दिनों असहयोग और सविनय अवज्ञाके अन्तर

और सम्बन्धको भी स्पष्ट किया। "अवज्ञा असहयोगका उग्रतम रूप है . . . इसकी इजाजत तभी दी जा सकती है जब सरकार इतनी भ्रष्ट हो जाये कि उसे किसी भी तरह सुधारा न जा सके।" (पृष्ठ २३१-३२)

१७ जुलाईको असहयोग समितिने बेजवाड़ामें स्वीकृत कार्यक्रम और असहयोगको सफल बनानेके लिए अधिक प्रयत्न करनेकी अपील करते हुए प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। गांधीजी, शौकत अली, डा० किचलू और खत्री इस समितिके सदस्य थे। गांधीजीको इस बातकी प्रतीति थी कि आन्दोलनोंमें सर्वाधिक धार्मिक यह आन्दोलन बड़े बलिदान और कष्ट-सहनकी अपेक्षा रखता है। "तपस्वियोंके रक्तदानके बिना स्वतन्त्रताके मन्दिरका निर्माण नहीं हो सकता।" (पृष्ठ ४६०) कारावास, बार-बार गिरफ्तारियाँ और बार-बार सजाएँ — इन सबके लिए तो जनताको तैयार रहना ही था।

गांधीजी यह बात अवश्य मानते थे कि सविनय अवज्ञा खतरनाक हो सकती है। वे मानते थे कि यदि सविनय अवज्ञा करनेवाले व्यक्ति आत्यन्तिक कष्टोंको सहन करनेके लिए तैयार हों तो ऐसी कोई चीज नहीं है जो उन्हें दबा सके। किन्तु वे यह भी मानते थे कि यह एक कठिन प्रयोग है: "हजारों मुसलमानोंको, और यों हिन्दुओंको भी, अहिंसा अपनाने और सर्वथा अहिंसक आचरण करनेके लिए तैयार करना सचमुच एक बड़ा खतरनाक प्रयोग है, क्योंकि उनकी धार्मिक आस्था उनको परिस्थिति विशेषमें हिंसात्मक आचरण करनेकी अनुमति देती है।" (पृष्ठ ५१२) गांधीजी उन दिनों तत्काल या निकट भविष्यमें सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करनेकी कोई सम्भावना नहीं देख पा रहे थे, क्योंकि उनकी रायमें देश बड़े पैमानेपर तदनुसार आचरण करनेके योग्य नहीं बना था।

तिलक स्वराज्य-कोषके लिए जूनके अन्ततक एक करोड़ रुपयेकी निधि एकत्रित करनेका निश्चय हुआ था — यह काम देशने कर दिखाया। अब स्वदेशीके अंगीकार और विदेशी कपड़ेके बहिष्कारपर अधिक जोर दिया जाने लगा और इसका उद्देश्य था ऐसा वातावरण तैयार करना "जिसमें हम इतने बड़े पैमानेपर सविनय अवज्ञा शुरू करनेमें समर्थ हो सकेंगे जिसका विरोध कोई सरकार नहीं कर सकती।" (पृष्ठ ४८७)

१ जुलाईको गांधीजीने देशको आह्वान दिया कि १ अगस्त तक विदेशी कपड़ेका पूरा-पूरा बहिष्कार कर दिया जाना चाहिए क्योंकि "हमें स्वराज्य-मन्दिरमें प्रवेश करनेके लिए स्वदेशीकी ही जरूरत है। स्वदेशी अर्थात् विदेशी कपड़ेका बहिष्कार।" (पृष्ठ ३५४)

जुलाईके लगभग मध्य तक गांधीजीने हाथकते स्वदेशी कपड़ोंको काममें लेनेकी प्रतिज्ञा तैयार की और तदनुसार स्वदेशी व्रत लेनेके लिए जनताको प्रेरित किया। यह वही जमाना है जब विदेशी कपड़ोंकी होली उन दिनोंका ज्वलन्त प्रदर्शन था। गांधीजीने सारे देशसे कहा कि पहली अगस्तको विदेशी कपड़ेको त्याग देनेका व्रत लिया जाये और हजारोंकी संख्यामें लोगोंने स्वदेशी व्रत लिया। विदेशी वस्त्रोंकी सबसे जबरदस्त होली जलाई गई परेलकी सार्वजनिक सभामें। ३१ जुलाईके इस दिनको गांधीजीने "बम्बईके लिए पवित्र दिन" की संज्ञा दी। यह सभा दक्षिण आफ्रिकामें प्रिटोरियाकी उस सभाका स्मरण दिलाती है जिसमें भारतीयोंने "पंजीयन प्रमाणपत्रों"

की होली जलाई थी। उन्होंने इस बातके महत्त्वको इन शब्दोंमें व्यक्त किया: "मैं होली जलानेकी इस रस्मको एक पुनीत यज्ञ मानता हूँ।" (पृष्ठ ४७४) "बाहरी अग्नि मेरे लिए अन्तःस्थित अग्निका प्रतीक है। वह . . . सारी दुर्बलताओंको भस्मीभूत कर दे। इस प्रकार परिष्कृत विवेक हमें स्वदेशीकी सच्ची आर्थिक उपयोगिता बताये।" (पृष्ठ ४७९) "सभीके चेहरोंपर स्वतन्त्रताकी आभा दमक उठी। यह शानदार काम बड़े शानदार ढंगसे सम्पन्न हुआ।" (पृष्ठ ५०५) श्री एन्ड्रयूजको लिखे गये एक पत्रमें उन्होंने इसका औचित्य समझाते हुए लिखा: "मैं इस समय इस प्रयत्नमें हूँ कि शल्य-क्रिया हाथको दृढ़ रखकर की जाये जिससे वह सुचारु रूपसे हो सके। . . . मैं जीवनमें अनुशासन और संयम चाहता हूँ। . . . लोग जो पापीसे घृणा करते थे किस प्रकार चुपचाप अनजाने ही पापीके बजाय पापसे घृणा करने लगे हैं।" (पृष्ठ ५१९)

जिस स्वराज्यकी प्राप्तिके लिए गांधीजी लोगोंको तैयार कर रहे थे, उस स्वराज्य-के स्वरूपको गांधीजीने बहुत स्पष्ट करके कह रखा था: "स्वराज्य व्यक्ति और राष्ट्रके अस्तित्वका परिचायक है।" (पृष्ठ ९८) स्वराज्य "मृत्युके भयका त्याग" है। (पृष्ठ ५२४) कामके पीछे पड़नेकी योग्यता ही स्वराज्य है। (पृष्ठ ५४९) "राम-राज्यका अर्थ स्वराज्य, धर्मराज्य, लोकराज्य करते हैं। वैसा राज्य तो तभी सम्भव है जब जनता धर्मनिष्ठ और वीर्यवान् बनेगी।" (पृष्ठ १२०) "भगवान् भी हमें स्वराज्य नहीं दे सकता। उसे तो हमें खुद ही हासिल करना होगा।" (पृष्ठ १३२)

किन्तु गांधीजी स्वराज्यका कोई परिपूर्ण नकशा बनाकर देना अनावश्यक समझते थे। इसीलिए जब विपिनचन्द्र पालने इस सम्बन्धमें प्रश्न उठाया तो गांधीजीने इसे असामयिक माना और कहा, इसका प्रयत्न तो "उस कारीगरकी तरहका था जो इमारतकी पक्की नींव तैयार करनेसे पहले ही सबसे ऊपरकी मंजिल बनाना शुरू कर दे।" (पृष्ठ २३५)

ऐसे स्वराज्य अथवा धर्मराज्यको पानेका साधन अहिंसक असहयोग ही हो सकता है। गांधीजीने कहा: "मैं यदि कुछ चाहता हूँ तो केवल सत्यकी विजय चाहता हूँ। मैंने कभी भी इसपर विश्वास नहीं किया और आज भी नहीं करता कि लक्ष्य ही सब-कुछ है। आप भले लक्ष्यको बुरे साधनोंके जरिए प्राप्त नहीं कर सकते। . . . (पृष्ठ ५१२) वे चाहते थे कि भारत सिर उठाकर खड़ा हो सके। स्वतन्त्र भारतमें कोई वर्ग विशेष राज्य कर सकता है इसकी गुंजाइश भी वे नहीं मानते थे। राज्य तो जनताका ही हो सकता है और वह उसके प्रति जाग उठी है। "भारतवासी . . . इस बातको बहुत अच्छी तरह समझ गये हैं कि कोई भी अच्छीसे-अच्छी सरकार अपनी सरकारका, स्वराज्यका स्थान नहीं ले सकती।" (पृष्ठ १८९) कुछ लोगोंका यह कथन कि "भारतका भावी लक्ष्य भले ही स्वतन्त्रता हो, आज तो उसे किसीके आश्रयमें ही रहना चाहिए" (पृष्ठ १८९) गांधीजीकी समझमें ही नहीं आता था। उनका कहना था कि जबतक जलियाँवाला बागमें किये गये रक्तपात और इस्लामके प्रति विश्वासघातका कलंक बना हुआ है, तबतक भारत शान्त नहीं रह सकता। अशान्तिके कारणोंका परिमार्जन किया जाना चाहिए। यदि इंग्लैंड अपने इस कलंकको धो डाले तो भारत "साम्राज्यके अन्तर्गत रहकर" भी स्वराज्य स्वीकार कर सकता

है। इसीलिए "कांग्रेसका सिद्धान्त जान-बूझकर ऐसा लचीला बनाया गया है कि स्वराज्यकी माँगके लिए उसमें जगह रहे।" (पृष्ठ ३६८)

स्पष्ट ही स्वराज्यकी पालकी कांग्रेसके कन्धोंपर चढ़कर आनी थी। २२ जुलाईको अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें कांग्रेसके विधानके विषयमें बोलते हुए उन्होंने कहा कि वह बनाया ही इस दृष्टिसे गया है कि देश उसके मुताबिक चलते हुए स्वशासनकी अपनी शक्तिको बढ़ाये और शुद्ध करे। उन्होंने दावा किया कि जैसे-जैसे कांग्रेसकी शक्ति बढ़ती जायेगी, सरकारकी शक्ति कम होती चली जायेगी और "जिस दिन लोग कांग्रेसमें पूरी तरह विश्वास करने लगेंगे और उसके निर्देशोंका स्वेच्छया पालन करने लगेंगे, उसी दिन पूर्ण स्वराज्य स्थापित हो जायेगा।" (पृष्ठ ३०२) नरसिंह चिन्तामण केलकरको अपने ४ जुलाईके पत्रमें उन्होंने लिखा: "हमें कार्य-समितिको ऐसी संस्था बना देना चाहिए जो तेजीसे कार्य कर सके, जो शक्ति-शालिनी हो और जिसमें मतैक्य हो। . . . मेरा तो विश्वास है कि हम कांग्रेसके संविधानको दक्षतापूर्वक कार्यान्वित करके जो-कुछ चाहते हैं वह सब पा सकते हैं।" (पृष्ठ ३३४)

राजनीतिक क्षेत्रमें इस तरह व्यस्त रहनेपर भी गांधीजी सामाजिक क्षेत्रोंमें अस्पृश्यता-निवारण जैसे सुधारोंपर बराबर ध्यान दिये रहे। वे इस प्रथाके विरोधमें लिखने-बोलनेका एक भी अवसर हाथसे नहीं जाने देते थे, क्योंकि वे मानते थे कि इससे मुक्ति पाना हिन्दू समाजका धर्म है। वे इस प्रथाको तर्क-सम्मत नहीं मानते थे और कहते थे कि यह सत्य और अहिंसाके भी विरोधमें है और धर्मसे तो इसका कोई वास्ता हो ही नहीं सकता। वे जानते थे कि अपनी निर्मम आलोचनाके कारण बहुतसे लोगोंने उनका साथ छोड़ दिया है और अनेक उनके विरोधमें हो गये है, किन्तु अस्पृश्यताके साथ समझौता करना उनके लिए असम्भव था। साम्प्रदायिक एकतापर भी वे इसी तरह जोर देते रहे। ये बातें उनके लिए कोरे शब्द नहीं थे; वे इन्हें जीवन-मरणका प्रश्न मानते थे। उन्होंने इस बातकी सचाईको समझ लिया था: "आपसी फूटसे तो हमारी बर्बादी ही है।" (पृष्ठ ८८) मजदूरों और मालिकोंमें भी वे अधिक मेल-जोल चाहते थे और यह भी कानूनन नहीं बल्कि वास्तविक हृदय-परिवर्तनके द्वारा। उनकी रायमें जो कानून लोकमत तैयार होनेके पहले ही बना दिया जाता है वह किसी कामका सिद्ध नहीं होता। मद्य-निषेधको भी वे एक अनिवार्यता मानते थे। उन्होंने कहा: "पूर्ण मद्य-निषेध किसी प्रकारके प्रशासनके अन्तर्गत तो राष्ट्रके आग्रहपर ही किया जा सकता है।" (पृष्ठ ३८२)

इस खण्डकी सर्वाधिक मूल्यवान् मणि कदाचित् "श्रद्धाका स्वरूप" है। (पृष्ठ ३८२–८६) यहाँ गांधीजीने गोखलेके प्रति अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए गुरु-शिष्य सम्बन्धोंकी पवित्रतापर जोर दिया है। उन्होंने अपने गुरुकी जो विशेषताएँ वर्णित की हैं, सारा संसार स्वीकार करेगा कि वे शिष्यपर भी भली-भाँति लागू होती हैं: "स्फटिकके समान शुद्ध, मेमनेकी भाँति विनम्र, और सिंहके समान शूर थे। उनमें उदारता तो इतनी थी कि वह एक दोष बन गई थी। वे राजनीतिक क्षेत्रमें सबसे दोषरहित व्यक्ति थे और हैं।"

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐंड मेमोरियल ट्रस्ट) और संग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट, गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि व संग्रहालय, राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया), नई दिल्ली; गृह-विभाग, बम्बई सरकार; श्री छगनलाल गांधी, अहमदाबाद; श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्री नारायण देसाई, बारडोली; श्रीमती राधाबहन चौधरी, कलकत्ता; 'नरसिंहरावनी रोजनिशी', 'बापुना पत्रो : मणिबहेन पटेलने', 'बापुना पत्रो : सरदार वल्लभभाईने', 'बापुनी प्रसादी' पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा निम्नलिखित समाचारपत्रों और पत्रिकाओंके आभारी हैं: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'आज', 'गुजराती', 'नवजीवन', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'यंग इंडिया', 'लीडर', 'सर्चलाइट' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मंत्रालयके अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, नई दिल्ली; साबरमती संग्रहालय और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद हमारे धन्यवादके पात्र हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलें सुधार दी गई हैं।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय उसे यथासम्भव मूलके निकट रखने का पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद हमें 'हिन्दी नवजीवन' अथवा नवजीवन प्रकाशन मन्दिरकी पुस्तकोंमें प्राप्त हुए हैं हमने उनका उपयोग मूलसे मिलाने और संशोधन करनेके बाद किया है। नामोंको सामान्यतः जैसा बोला जाता है वैसा ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणोंमें संशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है; जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है और आवश्यक होने पर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन हिन्दी और गुजरातीके व्यक्तिगत पत्रोंमें गुजराती संवत्के अनुसार तिथि दी गई थी उनमें ईसवी सन्के अनुरूप तिथि भी दे दी गई है। कुछ पत्रोंकी लेखन-तिथिका निर्णय बाह्य या आन्तरिक साक्ष्यके आधारपर किया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका और 'सी० डब्ल्यू०' कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी (सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

चित्र-सूची

१. भाषण : रासकी सभामें[1]

१५ अप्रैल, १९२१

एक समय मैंने जनताको सलाह दी थी कि वह सरकारको उसकी मुश्किलके वक्त मदद करे। साम्राज्यके अन्तर्गत अगर हम हक प्राप्त करना चाहते हों तो पहले हमें अपना फर्ज अदा करना चाहिए, ऐसा मैंने कहा था और इसी कारण खेड़ा जिले-का संघर्ष पूरा होनेके तुरन्त बाद मैं लोगोंको फौजमें भरती होनेके लिए समझाने आया था।[2] मैं सिपहगरीके लिए तैयार हो गया था। उसके लिए मुझे अब भी कोई पश्चा-त्ताप नहीं होता। इससे तो मुझे कौमको फायदा हुआ ही दिखाई देता है। सिपहगरी अपनानेके अपने प्रस्तावसे हमने अपनी भलमनसाहत दिखाई। उसके लिए मुझे दुःख नहीं है। दुःख सिर्फ इतना ही होता है कि जब मैं खेड़ा जिलेके साहसी और दृढ़ पाटीदारों तथा 'ठाकोरों' के पास गया, उस समय बहुत कम लोग सिपाही बननेके लिए तैयार थे। उसका कारण सरकारके प्रति उनकी नाराजगी अथवा अविश्वास न था बल्कि उसका कारण यह था कि उनमें हिम्मतकी कमी थी। वे मरनेके लिए तैयार न थे। उनको किसीके लिए अथवा सरकारके लिए मरनेकी बात पसन्द न थी। लेकिन अब तो युग ही बदल गया है। मैं अब सरकारके विरुद्ध हूँ, इस सरकारके लिए लड़ना मैं अधर्म समझता हूँ, उसके प्रति मेरे मनमें पूर्णतः अविश्वासकी भावना घर कर गई है। उस समय मैं इस सरकारको राक्षसी नहीं कहता था, लेकिन आज मैं इस राज्यको राक्षसी राज्य अथवा रावण-राज्य कहता हूँ। जिस अनन्य भक्तिभावसे मैं खेड़ा जिलेमें पैदल घूम रहा था और सरकारके लिए अपनी ताकत खर्च कर रहा था, अपनी उसी ताकतको — विरासतमें मिली अपनी ताकतको — अब मैं सरकारके विरुद्ध इस्तेमाल कर रहा हूँ; कारण, जो सत्य हो उसे करनेका नाम ही सत्याग्रह है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १–५–१९२१

१. **नवजीवन**में प्रकाशित गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

२. देखिए खण्ड १४।

२. भाषण : बोरसदकी सभामें[1]

१५ अप्रैल, १९२१

जब मैं पहले-पहल बोरसद आया था[2] तब मुझे सफलता नहीं मिली थी। लेकिन अब बोरसदमें जागृति आ गई है। जागृतिकी पहली निशानी यह है कि हममें सभाएँ आयोजित करनेकी, आयोजनोंमें व्यवस्था रखनेकी शक्ति आनी चाहिए। उसके लिए अनुशासन चाहिए। अग्नि अथवा जल-प्रपातको कुशलतापूर्वक नियन्त्रित किये बिना जैसे उपयोगमें नहीं लाया जा सकता उसी तरह अनुशासनके बिना जागृति भी व्यर्थ है। जागृतिकी पहली शर्त यह है कि हम जिस समय जहाँ हों उस स्थल और समयके धर्मको समझ लें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १–५–१९२१

३. भाषण : ताल्लुका परिषद्, हालोलमें[3]

१६ अप्रैल, १९२१

मेरे लिए तो खादीका ही शृंगार, खादीका ही उपहार और खादीके ही तमगे होने चाहिए। मुझे जो वस्तु दी गई है उसमें स्वराज्यकी निशानी नहीं है। हमें आज ही स्वराज्य क्यों नहीं मिल जाता, इसका कारण इसमें देखा जा सकता है। अपने-आपको एक किसानके रूपमें, एक बुनकरके रूपमें और अब एक भंगीके रूपमें पहचाननेवाले व्यक्तिको आपने अध्यक्ष नियुक्त किया है और उसे दी है ऐसी थैली! यह न तो कागजों [नोटों] से भरी हुई है और न चाँदी अथवा सोनेसे ही भरी हुई है। आपने तो मुझे खाली थैली दी है और तिसपर दूसरा गुनाह यह है कि उसकी तमाम चीजें विदेशी हैं।[4] वह विदेशी रंगमें रँगी हुई है, उसका सूत विदेशी है, रेशमका तागा विदेशी है; तो फिर इसमें स्वदेशी क्या है? मैं स्वदेशीका नायक होनेका दावा करता हूँ इसलिए उसकी परीक्षा करनेका गुण मुझमें होना चाहिए। मेरी स्वदेशीकी व्याख्या तो इतनी सुन्दर है कि अगर हम उसका पालन करें तो

१. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

२. १९१८ में खेड़ा जिलेके संघर्षके दौरान। देखिए खण्ड १४।

३. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत। हालोल, गुजरातके पंचमहाल जिलेमें है। गांधीजीने परिषद्की अध्यक्षता की थी।

४. इसपर श्रोताओंमें से किसीने बात काटते हुए कहा कि यह थली स्वदेशी है। इसीके उत्तरमें गांधीजीने आगेके वाक्य कहे थे।

हमें कोई पछाड़ नहीं सकता। हालोलकी स्वदेशी अर्थात् हालोलमें ही बनी हुई। हिन्दुस्तानके बाकी भागोंमें बनी चीजें हालोलके लिए हराम होनी चाहिए। हम सबको स्वावलम्वी बनना है, सबको सर्वोपरि बननेका प्रयत्न करना है। बस, इस सम्बन्धमें जब हम परस्पर एक-दूसरेके साथ होड़ करेंगे तभी हमें स्वराज्य मिलेगा। यही स्वराज्यकी चावी है।

इस शहरकी सजावट मुझसे सहन नहीं होती। सजावटमें एक इंच-भर विदेशी कपड़ा नहीं होना चाहिए। उसके बदले यहाँ तो स्थान-स्थानपर विदेशी कपड़े लटके हुए हैं। सब ध्वजा-पताकाएँ विदेशी हैं। उन सबका रंग विदेशी है। इसलिए इस सजावटको चिथड़ोंका प्रदर्शन-भर समझना चाहिए। हम सजावट तो मेहमानकी खातिर करते हैं, तो फिर मेरे विवेककी खातिर, मेरी मर्यादाकी खातिर भी मुझे जो अच्छा लगता हो वही आपको करना चाहिए था। यदि हम सोच-समझकर हर चीज करेंगे तभी हमें आगे जाकर स्वराज्य मिलेगा। यहाँ जो स्वयंसेवक घूमते-फिरते दिखाई देते हैं वे जीनके बने अंग्रेजी ढंगके कोट-पतलून पहने हैं। स्वराज्यके स्वयंसेवकोंके पास जीन कैसे? आप नई खादीके लिए अगर पैसे खर्च नहीं कर सकते तो मैं आपको इस जीनके बदले खादी देनेको तैयार हूँ। अगर आपको ऐसा लगता हो कि आप खादीके पैसे मुझसे कैसे ले सकते हैं तो मैं आपसे लंगोट पहनकर स्वयंसेवकी करनेके लिए कहूँगा। अंग्रेजों-जैसे वस्त्र पहनकर ही सेवा हो सकती हो, सो बात नहीं। लोगोंपर आपके प्रेमका, आपके सद्व्यवहारका असर पड़ेगा। यदि आप विलायती पतलून पहनकर लोगोंपर प्रभाव डालना चाहें तो [बेहतर होगा कि] आप उसका त्याग करें। स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए निकले हुए भारतीयोंके रूपमें अपने सम्मानकी खातिर भी इस पोशाकका त्याग कर देना चाहिए। मैं तो स्वयंसेवकोंको प्रतिदिन दो घंटे चरखा चलानेकी सलाह दूँगा। जब आप अपने हाथसे कते सूतके कपड़े बुनवाकर पहनेंगे तभी आप सच्चे स्वयंसेवक बनेंगे।

हमारी स्वराज्यकी सेनामें जितना काम लड़के-लड़कियाँ करेंगे उतना पुरुष नहीं कर सकेंगे। उनमें धूर्तता, पाखण्ड और मद भरा हुआ है। वह चला जाये तो आज ही स्वराज्य है। उम्रमें ज्यादा होनेपर भी हममें निर्दोषता होनी चाहिए, मौलाना शौकत अली[1]-जैसी! इस मनुष्यका मन वालक-जैसा स्वच्छ और कोमल है। वे किसीका बुरा नहीं चाहते। उन्हें डर सिर्फ खुदाका है, ईश्वरका है। उनसे आप निर्दोषता सीखें। मैंने अभ्यासपूर्वक निर्दोषताका विकास किया है। मैंने कंकर-कंकर करके बाँध बाँधा है। मेरा सरोवर बूँद-बूँद करके भरा गया है तथापि वह अधूरा है। मौलाना शौकत-अलीने तो अनेक प्रकारके ऐशो-आरामका उपभोग किया है। लेकिन फिर भी उनमें इतनी ताकत है कि वे सूलीपर चढ़ सकते हैं। मेरा तो भोग-विलास खादी है। मेरे शरीरसे रेशम छुआना मुझपर अत्याचार करनेके समान है। जब कि मलमल और रेशम

१. १८७३–१९३८; राष्ट्रवादी मुस्लिम नेता। मौलाना मुहम्मद अलीके बड़े भाई। उन्होंने खिलाफत आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया था।

शौकत अलीको बहुत पसन्द है तथापि वे खादी पहनते हैं। इसे एक चमत्कार समझना चाहिए। उन्होंने इस्लामकी खातिर फकीरीको धारण किया है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १–५–१९२१

४. भाषण : हालोलकी किसान सभामें[1]

१६ अप्रैल, १९२१

आपको तो खाद लेकर धान उगाना होता है। तो फिर आप भंगियोंका कैसे तिरस्कार कर सकते हैं? हमें दुनियामें सतयुग लाना है। वह कोई आकाशसे गिरनेवाला नहीं है। उसे हमें अपने सत्कर्मोंसे प्राप्त करना है। उसके लिए सब व्यसन छोड़ने चाहिए। दारू, ताड़ी, गाँजा और अफीम-जैसी वस्तुओंका सेवन करके जो व्यक्ति होश-हवास खो बैठता है वह खेत-जैसी अमूल्य वस्तुको कैसे सँभालकर रख सकता है? आप तो जमीनकी रक्षा करनेवाले हैं, दुनियाको अन्न प्रदान करनेवाले हैं। आजकल मैं सरकारके लिए लुटेरी और राक्षसी-जैसे विशेषणोंका प्रयोग करता हूँ लेकिन आप किसान लोग ही अगर जनताको लूटेंगे तो आप क्या कहलायेंगे? आप अपनी कुलीनता छोड़ दें, वीरता छोड़ दें, सत्य छोड़ दें और जगत्का तात कहलाते हुए भी आप जनताको दुःख दें, यह तो दरियामें आग लगनेके समान हुआ। वकालतके प्रति अरुचि होनेके बाद अपनेको किसान, बुनकर और भंगी माननेवाले मेरे-जैसे लोग फिर कहाँ जायें? लेकिन मेरा विश्वास है कि आप अच्छे हैं और इसीसे मैं किसान बना हूँ। किसानका तकिया मौत है। किसान मौतको तकियेके नीचे रखकर सोता है। उसे कौन डरा सकता है? आप तो बादशाह हैं और बादशाह ही रहें, यही मेरी माँग है। जो बादशाह प्रजाको लूटता है वह पापी है। इसलिए आप सदाचारी बनें।

आप अन्य किसानोंको जाकर इस किसान गांधीका सन्देश देना कि उसने चोरी करनेको मना किया है, जुआ न खेलनेके लिए कहा है। आपको तो फसल पकाकर उसे सही दामोंपर बेचना है। आप कम दाममें न दें लेकिन कंजूस बनियेकी तरह बहुत ज्यादा दाम लेकर अनाज बेचना भी किसानका धर्म नहीं है। आप इससे बचेंगे तो आपको बरकत दिखाई देगी।

आपको बेगार करनेकी जरूरत नहीं है। आप खेतकी बेगार करेंगे कि सरकार और उसके बदमाश अधिकारियोंकी बेगार करेंगे? उनसे कहना कि हम कमीन नहीं हैं, हम तो किसान हैं।

१. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत। चूँकि परिषद्में भाग लेनेके लिए आये किसान गांधीजीका भाषण नहीं सुन सके थे इसलिए शामको उनके लिए एक अलग सभाकी व्यवस्था की गई थी।

आप निर्व्यसनी बनें, संयमी बनें। सवेरे उठकर प्रभुका नाम लेनेके बाद काम करना शुरू करें। साँझको हल छोड़नेके बाद गालियाँ देना अथवा गालियोंसे भरे हुए गीत गाना उचित नहीं है। रातको भजन गाओ, हरिकीर्तन करो। अब बरसात नहीं होती, कारण राजा पापी बन गया है, प्रजा पापी बन गई है। ईश्वर हमारा समूल नाश नहीं करता कारण उसे हमारी पूरी परीक्षा करनी है। इसलिए सदाचारी बनो, व्यसन छोड़ो, भजन-कीर्तन करो, फिर आप देखेंगे कि आपको मुँह माँगा मेह मिलेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १–५–१९२१

५. टिप्पणियाँ

भाषा और विचार

भाषा विचारोंको पूरी तरहसे अभिव्यक्त करनेका कदाचित् ही एक सफल वाहन बन पाती है। अनेक बार भाषा विचारोंको आच्छादित कर देती है। भाषा सदैव विचारोंको परिसीमित करती है। उसपर भी जब एककी भाषाका दूसरा व्यक्ति अनुवाद करता है तब जो मुश्किलें और अनर्थ उपस्थित होते हैं उसे अनुवादक और पत्रकार ही समझते हैं। हमें तो ऐसी अनेक विडम्बनाओंका सामना करना पड़ा है। हमने मुखपृष्ठपर बड़े-बड़े अक्षरोंमें श्री वामनराव जोशीका[1] सन्देश[2] प्रकाशित किया था। प्रकाशित अनुवादको जब हमने पढ़ा तब हमें स्वयं ही शरम आई। हमें लगा कि हमने इस वीर पुरुषके साथ अथवा पाठक-वर्गके साथ अन्याय किया है। जिन विचारों-को, जिस पद्धतिको हम महत्त्व प्रदान करना चाहते थे, उसकी शायद इस सन्देशमें हत्या हो गई है। हमने जो अनुवाद प्रकाशित किया है वह अंग्रेजीसे किया गया है। श्री वामनरावका मूल सन्देश तो मराठीमें है। हम अपने अनुवादमें जो दोष देखते हैं वह वस्तुतः मूलमें है ही नहीं। "अपनी कमजोरियोंको प्रकट करनेका काम हमारा नहीं है" यह वाक्य हमने श्री वामनरावके मुखसे कहलवाया है।[3] हमारी वीरता तो सदैव अपनी कमजोरियोंको प्रकट करनेमें है। श्री वामनराव स्वयं वीर बनकर लोगोंकी कमजोरियोंको ढकना चाहते हैं, छिपाना नहीं चाहते। कमजोरियोंको

१. वीर वामन गोपाल जोशी, निर्भीक पत्रकार और राष्ट्रीय नेता।

२. १४–४–१९२१ के **नवजीवन**में। श्री जोशीको राजद्रोहके अपराधमें गिरफ्तार किया गया था और उन्होंने कहा था कि वे अपना बचाव नहीं करना चाहते।

३. श्री जोशीने कहा था कि इस समय उनका कर्त्तव्य विदेशियोंके कुकृत्योंका पर्दाफाश करना है, अपने लोगोंकी कमजोरियोंको प्रकट करना नहीं। अगर वे अपना बचाव करेंगे तो यह अपने लोगोंकी कमजोरियोंको प्रकट करना ही होगा। उन्होंने कहा कि मेरे विचारसे इससे बढ़कर शर्मकी और कोई बात नहीं हो सकती कि एक भारतीय दूसरे भारतीय द्वारा गिरफ्तार किया जाये और तीसरा उसे जेल भेजे।

छिपानेसे तो जनताकी कमजोरी ठीक उसी तरह बढ़ जाती है जिस तरह रोगको छिपानेसे रोग बढ़ता है। एक भारतीय दूसरे भारतीयको पकड़े और तीसरा उसे सजा दे, इसमें तो शर्मकी कोई बात नहीं है। हाँ, अगर ऐसा कोई अवसर उपस्थित हो जाये तो यह अवश्य ही हमारे लिए शर्मकी बात है। इसके अलावा जब स्वराज्यकी स्थापना हो जायेगी तब अपराधी भारतीयको एक भारतीय सिपाही ही पकड़ेगा और भारतीय न्यायाधीश सजा देगा। वह शोचनीय नहीं जान पड़ेगा, इतना ही नहीं वरन् वह मान्य होगा और उचित भी जान पड़ेगा। श्री वामनरावने जो उद्‌गार प्रकट किये हैं वे वर्तमान परिस्थितियोंको देखकर प्रकट किये हैं। पापी पेटकी खातिर नौकरी करनेवाला सिपाही एक निर्दोष भारतीयको पकड़े और उसे वैसा ही भारतीय न्यायाधीश सजा दे — श्री वामनरावने हमारी इसी शर्मका जिक्र किया है और उसे उघाड़कर रख दिया है। लेकिन हम अपने अनुवादमें इस अर्थको अभिव्यक्त नहीं कर पाये हैं, यह बात हमें दुःख देती है। तथापि ऐसे दोषोंको अनिवार्य मानकर हमें सन्तुष्ट रहना है। भाषा और उसमें भी अनुवाद मनुष्यके विचारोंको अभिव्यक्त करनेके लिए कितना अपर्याप्त साधन है, यह हम देख रहे हैं। सच बोलनेकी अपेक्षा सच्चा काम करना ही सच्चा भाषण है। कृत्योंमें विचारोंका जो प्रतिबिम्ब पड़ता है वह भाषणोंमें कहाँसे हो सकता है? आइये, हम सब श्री वामनरावके कृत्योंका अनुकरण करें और उनके आत्मत्यागमें, उनकी वीरतामें, उनकी निर्भयतामें, उनकी सादगी और निरभिमानतामें उनके सन्देशको पढ़ें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७–४–१९२१

६. पत्र : नरसिंहराव दिवेटियाको

गोधरा

सोमवार, १८ अप्रैल, १९२१

सुज्ञ भाईश्री,[१]

मुझे महादेवने खबर दी है कि आपके खुले पत्रका मैंने जो उत्तर दिया है, उसमें मैंने श्री दयाराम गीदुमलजीके सम्बन्धमें जो-कुछ लिखा है, उससे आपको दुःख हुआ है[२] — बहुत ज्यादा दुःख हुआ है। वह वाक्य आपको दुःख देनेके उद्देश्यसे नहीं लिखा गया। वह तो आपके और दयारामजीके प्रति मेरे मनमें जो आदरभाव है उसे व्यक्त करनेके लिए लिखा गया है। दुनिया चाहे जो कहे लेकिन आप दोनों पवित्र हैं, यह बतानेके लिए मैंने उक्त वाक्य लिखा है तथापि अगर आपको बुरा

१. १८५९-१९३७; गुजराती कवि और साहित्यकार; एलफिन्स्टन कालेज, बम्बईमें गुजरातीके प्रोफेसर।

२. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ १८१-८५।

लगा हो तो उसके लिए आप मुझे जो प्रायश्चित्त करनेके लिए कहेंगे सो मैं करूँगा। मैं आपको दुःख कैसे दे सकता हूँ?

आपके यहाँ अभीतक नहीं पहुँचा और पटेलसे[1] मिलने आया — मैंने सुना कि आपको इस बातका भी दुःख हुआ है। इसका मैं क्या जवाब दे सकता हूँ? आपके यहाँ तो मुझे आना ही है। पटेलके यहाँ तो मैं कार्यवश गया था। वहाँसे आपके पास शान्तिपूर्वक आ बैठनेका मुझे समय मिल सकता था? मेरे कितने ही मधुरसे-मधुर मनोरथ बिना सफल हुए रह जाते हैं। मैंने जान-बूझकर अपराध नहीं किया, ऐसा मानकर क्या आप मुझे माफ नहीं करेंगे?

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

नरसिंहरावनी रोजनिशी

७. भाषण : गोधराकी सभामें[2]

१८ अप्रैल, १९२१

हम इस सल्तनतके, साम्राज्यके, सरकारके भंगी बने हुए हैं उसका मुख्य कारण यह है कि हमारे वैष्णव, शैव अपनेको कट्टर सनातनी हिन्दू कहनेवाले भंगियोंके प्रति पशुओं-जैसा बरताव करते हैं, उनपर सितम ढाते हैं। भंगी हमारे सहोदर हैं, सगे भाई हैं। उनसे हम अपनी सेवा करवाते हैं और पेट भरनेके लिए पूरा वेतन भी नहीं देते; फलस्वरूप उन्हें जूठनसे अपना निर्वाह करना पड़ता है, सड़ा हुआ मांस खाना पड़ता है। सेवाका विचार करते हुए मुझे लगता है कि वकील, डाक्टर अथवा कलक्टर भंगीकी अपेक्षा समाजकी तनिक भी ज्यादा सेवा नहीं करते। उनसे तो भंगीकी सेवा कहीं बढ़ी-चढ़ी है। भंगी सेवा करना छोड़ दें तो समाजकी क्या दशा हो? हमपर जो दुःख टूट पड़ा है वह हमारे द्वारा अन्त्यजोंके प्रति किये गये पापका फल है। मुसलमानोंको भी हमारे साथ रहनेके कारण हमारे पापका दुःख भोगना पड़ रहा है। अनेक हिन्दू भंगियोंका स्पर्श न करनेके औचित्यके सम्बन्धमें शास्त्रोंका उद्धरण देते हैं। लेकिन मैं कहता हूँ कि अगर कोई शास्त्र यह कहता है कि भंगीको छूना पाप है तो वह शास्त्र नहीं, अशास्त्र है। जो बुद्धिगम्य न हो, जो सत्य न हो उसे शास्त्र कदापि नहीं कहा जा सकता। इनके अलावा, शास्त्रके भी कितने ही अर्थ किये जा सकते हैं। हम शास्त्रके नामपर क्या नहीं करते? शास्त्रके नामपर साधु बाबा भाँग पीते हैं, गाँजा फूँकते हैं; शास्त्रके नामपर देवीके भक्त मांस-मदिराका सेवन करते हैं, शास्त्रके नामपर अनेक व्यक्ति व्यभिचार करते हैं। शास्त्रके नामपर मद्रासमें कोमल बालाओंको वेश्या बनाया जाता है। इससे ज्यादा शास्त्रका अनर्थ और क्या हो सकता है? मैं अपनेको कट्टर वैष्णव मानता हूँ, मैं वर्णाश्रम धर्मको माननेवाला हूँ। लेकिन मैं कहता

१. सम्भवतः विट्ठलभाई पटेल।

२. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

हूँ कि यदि भंगीको स्पर्श करनेसे हम अस्पृश्य हो जाते हैं तो यह वर्णाश्रम धर्मकी ज्यादती है, उसपर चढ़ा हुआ मैल है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १–५–१९२१

८. भाषण : मानपत्रके उत्तरमें[1]

१९ अप्रैल, १९२१

मुझे यह कह देना जरूरी जान पड़ता है कि जिस तरह प्रत्येक व्यक्ति पौष्टिक पदार्थ खा अथवा हजम नहीं कर सकता उसी तरह मेरे लिए जिन पौष्टिक विशेषणों-का प्रयोग किया गया है मेरी समझमें मैं उन्हें हजम नहीं कर सकूँगा। हाँ, इस दिशामें मैं प्रयत्न अवश्य कर रहा हूँ कि किसी दिन उनके योग्य अवश्य बन जाऊँ। मैं प्रयत्न कर रहा हूँ कि क्रोधको अक्रोध और असत्यको सत्यसे पराजित करूँ और ऐसा करते-करते मर जाऊँ। लेकिन फिलहाल तो आपने मेरे लिए जिन विशेषणोंका प्रयोग किया है उनका कोई उपयोग नहीं हो सकता। इन विशेषणोंको सुनकर अगर मैं लापरवाह हो जाऊँ अथवा उद्धत बन जाऊँ और ऐसा मान लूँ कि प्रजाने मुझे ऐसा कहा है इसलिए मैं लायक बन गया हूँ तो उसी दिनसे मेरा अधःपतन आरम्भ हो जायेगा। मेरा पुरुषार्थ मेरी नम्रतामें है, मर्यादाका उल्लंघन न करनेमें है। मेरा और हिन्दुस्तानका मंगल इसीमें है कि मैं इतना जाग्रत रहकर अपना कार्य करूँ।

आप मुझे मानपत्र देते हैं, यह देशमें हुई अद्भुत जागृतिका सूचक है। इसका अर्थ यही है कि नगरपालिकाने अपने अधिकारको पहचान लिया है। मैंने नगरपालिकाओं-की मार्फत देशका बहुत ज्यादा कार्य करनेकी आशा रखी है। यही कारण है कि कांग्रेसके अन्तिम दो अधिवेशनोंमें[2] जो प्रस्ताव पास किये गये उनमें नगरपालिकाओंसे असहयोगमें शामिल होनेके लिए नहीं कहा गया है। उनमें सहकारकी गन्ध है, स्पर्श है; लेकिन इस समय हमारे पास तो एक भी ऐसी वस्तु नहीं है कि जिसमें सहकारका स्पर्श न हो। गेहूँका एक दाना खानेमें भी सहकार है। अभी हम जो असहयोग कर रहे हैं उसमें तो एक बालक भी हाथ बँटा सकता है। यदि हम तीव्र असहयोग कर सकें तो असहयोग एक इतनी चमत्कारपूर्ण वस्तु है कि हम एक ही दिनमें स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन मैंने तो देशके सम्मुख असहयोगका बहुत ही आसान रूप प्रस्तुत किया है; उसे वह सरलतासे सहन कर सकता है। इसमें प्रत्येक नगरपालिका शामिल हो सकती है। यदि देशकी हर नगरपालिका इस बातको समझ जाये और अपनी शक्तिके अनुरूप कार्यक्रम बना ले तो उनकी मार्फत स्वराज्य सहज ही प्राप्त किया जा सकता है।

१. यह मानपत्र सूरत नगरपालिकाकी ओरसे दिया गया था।

२. कलकत्ता और नागपुर अधिवेशन-जो क्रमशः सितम्बर और दिसम्बर १९२० में हुए थे।

नगरपालिका क्या करे, इस बारेमें मुझे इतना ही कहना है कि आपने कांग्रेसकी सलाहके मुताबिक चलनेका जो वचन दिया है उसका पालन करो और अस्पृश्यताको दूर करनेके लिए कमर कसकर तैयार हो जाओ। चरखेको एक ओर छोड़कर मैंने पहले इस बातका उल्लेख किया है। चरखा हमारे पुरुषार्थका सूचक है लेकिन अस्पृश्यता-की गन्धतक न रहने देना तो हिन्दुओंके लिए पुरुषार्थकी चरमसीमा है। चरखेकी प्रवृत्तिमें कार्य करना पड़ता है जब कि इसमें तो भावनाको बदलना-भर है।

मैं कल रात गोधराके भंगीवाड़ेमें गया था। वहाँकी स्थिति देखकर मेरा हृदय बड़ा दुःखी हुआ। मुझे आश्चर्य होता है कि जो चीज मोटे तौरपर दिखाई पड़ जाती है उसे इतनी सूक्ष्म दृष्टि रखनेवाला हिन्दू-समाज क्यों नहीं देख पाता। उनकी पीठपर अदीठ हो गया है, इसका उन्हें पता क्यों नहीं चलता।

आप शहरका कूड़ा-करकट साफ करनेके लिए, लोगोंका स्वास्थ्य सँभालनेके लिए, बालकोंको शिक्षा देनेके लिए, रोगोंके प्रसारको रोकनेके लिए नियुक्त किये गये हैं। यह कार्य आपसे तभी हो सकेगा जब आप भंगियोंका उद्धार करेंगे। इंग्लैंडने जिस तरह बेल्जियम-जैसे छोटे-छोटे राज्योंके लिए लड़ाई लड़नेका बहाना बनाकर अपना स्वार्थ साधा उसी तरह यदि हम भी अपनी जेबें भरनेका विचार करेंगे तो हमारे स्वराज्य का कोई अर्थ नहीं है।

इस सरकारको मैं राक्षसी क्यों कहता हूँ? क्योंकि उसने निर्बलकी रक्षा करने-के लिए नहीं वरन् उनका भक्षण करनेके लिए तलवार खींची थी। हमारे स्वराज्य अथवा धर्मराज्यमें तो निर्बलकी सेवा करनेकी भावना ही रहेगी। हम जब शान्तिमय स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए तपश्चर्या करेंगे तभी सच्चे स्वराज्यवादी कहलायेंगे।

इसलिए भंगियोंका उद्धार करना आपका सर्वप्रथम कर्त्तव्य है। उनका निवास-स्थान स्वच्छ होना चाहिए, उनके घर साफ होने चाहिए, उनके लिए पानीकी व्यवस्था होनी चाहिए। मैं अब अपने आपको भंगी कहता हूँ। मुझे तो भंगीवाड़ेमें रहनेमें आनन्द आता है। यह मेरा सच्चा विलास है। उनके बालकोंको खिलानेमें मुझे आनन्द मिलता है। इसलिए मेरे जैसा व्यक्ति भंगीवाड़ेमें रह सकता है। जबतक उनकी स्थिति ऐसी नहीं हो जाती कि वे स्वास्थ्यके नियमोंका पालन कर सकें तबतक यह नहीं कहा जायेगा कि नगरपालिकाने अपना कर्त्तव्य निभाया है।

हमें इस समय राष्ट्रीय स्कूलका मतलब चरखा स्कूल ही समझना चाहिए। कारण शिक्षा तो ऐसी होनी चाहिए जो हमें पुष्ट करे, जिससे हम स्वतन्त्र हों और तेजस्वी बनें। शिक्षा सम्बन्धी अपनी भूलको मैं अब सुधारनेकी कोशिश कर रहा हूँ। सरकार जैसी शिक्षा देती है वैसी ही शिक्षा देनेका हम प्रयत्न करेंगे तो हम पिछड़ जायेंगे। हम यदि अपनी जनतामें शक्तिका संचार करना चाहते हैं तो चरखा ही हमारे लिए रामबाण है। चरखा इस शिक्षाके लिए सुनहरी योजना है। यदि आप स्कूलोंमें चरखेको स्थान देंगे तो इसका अर्थ होगा कि आपको स्कूलोंके लिए भिक्षा नहीं माँगनी पड़ेगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-५-१९२१

९. टिप्पणियाँ

आँकड़े और उनके अर्थ

कार्यकर्त्ताओंके मार्गदर्शनके लिए मैं नीचे एक सारणी दे रहा हूँ, जिसमें प्रत्येक कांग्रेस-प्रान्तकी जन-संख्या लाखमें तथा तिलक स्मारक-कोषके लिए उनके द्वारा एकत्र किये जानेवाले धनका अनुपात हज़ारमें दर्शाया गया है।[1]

क्रम-संख्या	प्रान्त	जन-संख्या (लाखमें)	चन्देका अनुपात (हज़ारमें)
१.	मद्रास	२००	६५०
२.	आन्ध्र	२१०	६८२
३.	कर्नाटक	१२०	३९०
४.	केरल	७०	२२७
५.	बम्बई	१०	३२.५
६.	महाराष्ट्र	१२०	३९०
७.	गुजरात	११०	३५७
८.	सिन्ध	४०	१३०
९.	संयुक्त प्रान्त	४९०	१,५९२
१०.	पंजाब	२७०	८७७
११.	पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त	३०	९७.५
१२.	दिल्ली	१०	३२.५
१३.	अजमेर-मारवाड़	१९०	६१७
१४.	मध्य प्रदेश (हिन्दी)	९०	२९२
१५.	मध्य प्रदेश (मराठी)	३०	९७.५
१६.	बरार	३०	९७.५
१७.	बिहार	२९०	९४२
१८.	उत्कल	२५०	४८७
१९.	बंगाल	४७०	१,५२७
२०.	असम	४०	१३०
२१.	बर्मा	१२०	३९०

१. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसने २६ दिसम्बर, १९२० को नागपुरके अपने वार्षिक अधिवेशनमें अखिल भारतीय तिलक स्मारक स्वराज्य-कोष शुरू करनेका प्रस्ताव पास किया था। ३१ मार्च, १९२१ को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने बेजवाड़ाकी अपनी बैठकमें कोषमें एक करोड़ रुपयेकी राशि जमा करनेका लक्ष्य निर्धारित किया था। देखिए खण्ड १९।

यद्यपि समूचे भारतका विस्तार और जिनकी स्मृतिको चिरस्थायी बनाने तथा जिस प्रयोजनको पूरा करनेके लिए यह कोष इकट्ठा किया जा रहा है उन्हें देखते हुए यह रकम बहुत कम है, तथापि वह एक बड़े पैमानेपर अथक प्रयत्न किये बिना एकत्र नहीं की जा सकेगी। इस रकमको एकत्र न करनेका सबसे अचूक उपाय यह है कि प्रत्येक प्रान्त केवल अपने निर्धारित अंशकी बात सोचता रहे और उसीसे सन्तुष्ट बना रहे। और इसे एकत्र कर लेनेका सबसे अचूक और क्षिप्र उपाय है कि प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक प्रान्त पूरी राशिकी बात सोचे या अपनी शक्तिभर जितना कर सकता है, एकत्र करे। उदाहरणके लिए बम्बईके कुछ ही लखपती, यदि चाहें तो, एक दिनमें एक करोड़ रुपयेकी निर्धारित राशि चन्देमें दे सकते हैं। बम्बईके लिए यह हास्यास्पद होगा कि वह देशके आगे केवल अपना हिस्सा फेंककर सन्तुष्ट हो जाये। अकेला बम्बई ही यह पूरा भार उठा सकता है। बम्बईने अपने बारेमें देशका यह खयाल बना दिया है कि वह जन-आन्दोलनका खर्च जुटा सकता है। जलियाँवाला बाग-कोषके लिए बम्बईने सबसे अधिक धन दिया था। कांग्रेसकी पंजाब उप-समितिके लिए बम्बईने ही सबसे मोटी रकम दी थी। बम्बईने आर्थिक सहायतामें और सभी प्रान्तोंको हमेशा पछाड़ा है। गुजरातका भी साढ़े तीन लाखसे कुछ ऊपरका अपना हिस्सा देकर अलग बैठ रहना इतना ही हास्यास्पद होगा। वह आसानीसे और अधिक इकट्ठा कर सकता है; जब कि यदि अतीतके आधारपर भविष्यके बारेमें अनुमान किया जाये तो संयुक्त प्रान्तसे किसी बड़ी रकमकी आशा नहीं की जा सकती। वहाँ कोई समृद्ध सार्वजनिक कार्यकर्त्ता नहीं है। पण्डित नेहरू[1] सदा खुले हाथों दिया करते थे किन्तु अब उनकी लाखों रुपये प्रतिवर्षकी कमाई बन्द हो गई है। भारतके सबसे बड़े भिखारी, पण्डित मालवीयजीकी[2] सेवायें अभी आन्दोलनको सुलभ नहीं हैं। इसलिए संयुक्त प्रान्तसे यह आशा करना व्यर्थ होगा कि वह लगभग १६ लाख रुपयेका अपना हिस्सा पूरा कर देगा। फिर भी, यदि उस प्रान्तके चार करोड़ नब्बे लाख लोगोंके हृदयको छुआ जा सके, यदि बड़े-बड़े जमींदारोंका ध्यान आकर्षित किया जा सके तो सोलह लाख क्या बड़ी रकम है? शराबके खर्चकी बचतसे ही उसका हिस्सा पूरा किया जा सकता है। और फिर उसमें हरिद्वार और बनारस भी तो हैं। इन प्रख्यात देवस्थानोंमें दर्शनार्थ जो धनवान तीर्थयात्री आते हैं, उनसे कार्यकर्त्ता तिलक स्मारक-कोषके लिए आसानी-से चन्दा ले सकते हैं। उनमें आस्था और आस्थासे उत्पन्न होनेवाला साहस होना चाहिए। यही हाल बंगालका है। बंगालमें अनेक धनवान व्यक्ति हैं, किन्तु वह अभी तक कभी देशभक्तिपूर्ण कार्योंके लिए दान देनेके लिए प्रसिद्ध नहीं रहा। श्री दासको[3] इस कामको हाथमें लेना चाहिए। कलकत्तामें बसे हुए मारवाड़ियों और

१. मोतीलाल नेहरू (१८६१–१९३१); सुप्रसिद्ध वकील व राजनीतिज्ञ।

२. मदनमोहन मालवीय (१८६१–१९४६); बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके संस्थापक; शाही परिषद्के सदस्य; दो बार कांग्रेसके अध्यक्ष निर्वाचित।

३. देशबन्धु चित्तरंजन दास (१८७०–१९२५); प्रसिद्ध वकील व कांग्रेसी नेता, वक्ता और लेखक; १९२१ में कांग्रेसके अध्यक्ष निर्वाचित।

गुजरातियोंकी सहायता मिले तो बंगालको अपने हिस्सेकी रकम इकट्ठी करनेमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। अजमेर-मारवाड़को ६ लाखसे ऊपरका अपना हिस्सा इकट्ठा करनेमें कठिनाई होगी। उसे विभिन्न रियासतोंमें जाना पड़ेगा। उसकी हालत शायद सबसे ज्यादा नाजुक है। मुसलमानोंके लिए अजमेरके नाममें ही जादू है। अजमेर शरीफ जानेवाले हजारों मुसलमान तिलक स्वराज्य-कोषके लिए खासी रकम दे सकते हैं। प्रत्येक कार्यकर्त्ताको समझना चाहिए कि हमें एक क्षण भी नहीं खोना है। प्रत्येक प्रान्तके प्रमुख नेताओंसे मेरा अनुरोध है कि वे जमा की गई रकमोंका साप्ताहिक ब्यौरा प्रकाशनके लिए भेजें। चन्देकी उगाहीका काम व्यवस्थित ढंगसे घर-घर जाकर किया जाना चाहिए। गुजरातने पंजाबका अनुकरण किया है। उसकी रसीदें रंगीन आर्ट पेपरपर छपी हैं और एक कोनेमें दिवंगत देशभक्तका सुन्दर चित्र है। भारतका मानचित्र रसीदके शेष भागकी शोभा बढ़ाता है। उसकी पुश्तपर स्वराज्यकी दस शर्तें दी गई हैं। प्राप्ति-स्वीकृति गुजराती, देवनागरी और उर्दू लिपियोंमें दी गई है। रसीदें एक रुपये, पाँच रुपये और दस रुपयोंकी हैं। पंजाबने पिछली १२ तारीख तक १ लाख, ८५ हजार रुपये एकत्र भी कर लिये थे। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने देशके सामने जो कार्यक्रम[1] रखा है, वह कर्मठ लोगोंके लिए सरल है। खाली सपने देखनेवालों या लम्बे-चौड़े भाषण झाड़नेवालों के लिए यह असाध्य कार्य है। जबतक स्वराज्यी कार्यकर्त्ता कामकाजी लोगों जैसी आदतें नहीं बनायेंगे तबतक भारत स्वराज्यकी स्थापना नहीं कर सकता।

जख्मी आँख

इन स्तम्भोंमें अहमदाबादके मद्य-निषेध कार्य तथा उसके कार्यकर्त्ताओंके अपार आत्मसंयमकी ओर ध्यान आकर्षित किया जा चुका है। किसी अज्ञात व्यक्ति द्वारा फेंके पत्थरसे डा० कानुगाकी आँखमें इतनी गहरी चोट आ गई थी कि उनको आँखसे हाथ भी धोना पड़ सकता था। अन्ततः उन्हें कुछ दिन खटिया पकड़नी पड़ी। चोट खाकर भी, वे तबतक अपनी जगहपर डटे रहे जबतक कि उनकी जगह लेने कोई दूसरा नहीं आ गया। धरना देनेवाले अन्य लोग अपनी जगहपर जमे रहे। कोई भगदड़ नहीं मची। कोई शिकायत दायर नहीं की गई, यह तो ठीक ही है। इसका असर बिजलीका-सा हुआ। पियक्कड़ोंके हाथोंके तोते उड़ गये। धरना देनेवालोंको अविचलित देखकर पथराव भी बेमतलब लगने लगा। और मुझे मालूम हुआ है कि उस घटनाके बाद फिर किसी तरहका पथराव हुआ ही नहीं। शराबकी दुकानोंपर जानेवालोंपर भी इतना ही जबरदस्त प्रभाव पड़ा है। मैं इसे असहयोग तथा उसके तात्कालिक परिणामोंका एक सर्वोत्तम उदाहरण मानता हूँ। यदि डा० कानुगाने पुलिसमें शिकायत की होती, और यदि उनके साथियोंने हमलेका जवाब दिया होता तो मामला गड़बड़ीमें पड़ जाता। अनेक प्रकारके अन्य महत्त्वहीन प्रश्न उठने लगते और हमेशाकी तरह दोनों

१. चन्दा एकत्र करनेके अतिरिक्त बेजवाड़ा कार्यक्रममें ये बातें भी शामिल थीं: कांग्रेसके एक करोड़ सदस्य बनाना और बीस लाख चरखे चालू करवाना। इस कार्यक्रमको ३० जून, १९२१ तक पूरा करना था।

पक्षोंमें उत्तेजना फैलती और अधिक बुरा तो यह होता कि मद्य-निषधके कार्यको धक्का पहुँचता। किन्तु आज तो डा० कानुगाके शौर्य, त्याग तथा आत्मसंयमने उस आदर्शको आगे बढ़ाया है, जिसके लिए उन्होंने अपना खून बहाया है। उसने शराबके दुकानदारों और उनके पास जानेवालोंकी और अधिक गुस्सा दिखानेकी प्रवृत्तिको रोका है और मद्य-निषेधके धर्म-युद्धका स्तर बहुत ऊँचा उठा दिया है।

एक मजिस्ट्रेटकी सनक

देहरादून छावनीके मजिस्ट्रेटने सत्याग्रह दिवसपर यह हुक्म निकाला कि उस दिन उनकी छावनीमें दुकानें अवश्य खोली जायें और यदि दुकानदारोंने उनकी आज्ञाका उल्लंघन किया तो वे छावनीसे निर्वासित कर दिये जायेंगे। इस आज्ञाने यह दर्शा दिया है कि भारतमें ओ'डायरशाही[1] अभीतक मरी नहीं है। ज्यादातर लोगोंको इस बातकी जानकारी नहीं है कि छावनियोंमें मजिस्ट्रेटोंको वे अधिकार प्राप्त रहते हैं, जिनका अन्य स्थानोंमें केवल 'मार्शल लॉ' के अधीन ही प्रयोग किया जा सकता है। छावनियोंके निवासी मजिस्ट्रेटोंकी दयापर निर्भर रहते हैं। आश्चर्यकी बात तो यह है कि लोगोंने एक ऐसी शासन-पद्धतिको इतनी लम्बी अवधितक और इतने धैर्यके साथ बरदाश्त कर लिया, जिसका निर्माण ही इस दृष्टिसे किया गया था कि उनकी स्वतन्त्रताको इतना नियन्त्रित किया जाये जिससे वे गुलामों-जैसे बन जायें।

सम्पादकीय परिवर्तन

मैं पाठकोंको खेदके साथ सूचित करता हूँ कि श्री लालचन्द अडवानी, जो सहायक सम्पादक थे, अपने कार्य-भारसे मुक्त कर दिये गये हैं और अब उनका 'यंग इंडिया'से किसी भी हैसियतसे कोई सम्बन्ध नहीं है। अतः अब 'यंग इंडिया' को भेजे जानेवाले पत्र केवल सम्पादक, 'यंग इंडिया', के पतेपर भेजे जायें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०–४–१९२१

१०. कुहरा

जब-जब मैं देखता हूँ कि मेरे मित्र आन्दोलनको गलत समझ रहे हैं तब-तब मैं अपने मनमें एक प्रसिद्ध भजनके ये शब्द दुहरा लेता हूँ: "वी शैल नो ईच अदर बैटर व्हेन दि मिस्ट्स हैव रोल्ड अवे"—जब भ्रांतिका कुहरा छँट जायेगा तब हम परस्पर एक-दूसरेको अधिक अच्छी तरह जानेंगे। एक मित्रने अभी-अभी मुझे दिनांक १४ के 'सर्वेंट आफ इंडिया' से लिये हुए असहयोगसे सम्बन्धित कुछ अनुच्छेद भेजे हैं। प्रस्तावों तथा प्रयोजनोंकी कैफियत देना एक अत्यन्त निरर्थक कार्य है। यह वर्ष शीघ्र ही बीत जायेगा और शब्दोंकी अपेक्षा हमारे कार्य ही असहयोगके अर्थको अधिक व्यक्त करेंगे।

१. सर माइकेल ओ'डायर, पंजाबके लेफ्टिनेंट गवर्नर (१९१३–१९१९); जिनका शासन १९१९ में किये गये अत्याचारोंके कारण भारतीय इतिहासमें 'डायरशाही' के नामसे प्रसिद्ध हुआ।

मैं तो असहयोगको स्थगित हुआ नहीं मानता और वह तबतक स्थगित होगा भी नहीं जबतक कि सरकार भारत, मुसलमानों और पंजाबियोंके प्रति अपने अपराधोंका निराकरण नहीं कर लेती और जबतक यह व्यवस्था इस प्रकार नहीं बदल दी जाती कि वह राष्ट्रकी इच्छाके प्रति उत्तरदायी हो जाये। निश्चय ही पदवियों, कानूनी अदालतों, स्कूलों और परिषदोंके साथ जुड़ी हुई प्रतिष्ठाके भ्रमको दूर करना आवश्यक था। मैं तो समझता हूँ कि सब मिलाकर 'नेशनलिस्टों' (राष्ट्रवादियों) ने इस सिल-सिलेमें अत्यन्त ही उत्तम आचरण किया है। उनमें अब कोई पदवीधारी व्यक्ति नहीं रह गया है, किसी भी ऐसे राष्ट्रवादी वकीलकी असहयोगियोंमें कोई प्रतिष्ठा नहीं रह गई है जिसने अपनी वकालत स्थगित नहीं कर दी है। राष्ट्रीय शालाओं और महाविद्यालयोंने ऐसे लड़के और लड़कियोंको तैयार किया है जो आज अपनी योग्यता-का अच्छा परिचय दे रहे हैं और मैं कह सकता हूँ कि परीक्षाका समय आनेपर वे अपने त्यागसे लोगोंको चकित कर देंगे। यह तो कोई भी देख सकता है कि परिषदोंसे दूर रहनेवाले लोग आज जो सेवा कर रहे हैं वह परिषद्‌में जाकर नहीं कर सकते थे। अपनी पदवियाँ त्यागनेवाले चन्द व्यक्तियोंने दूसरोंको मार्ग दिखाया है। ये सब चीजें समाजको बदल रही हैं। अब इन विशेष वर्गोंमें मौखिक प्रचारकी आवश्यकता नहीं है। जिन्होंने पदवियों, स्कूलों, अदालतों अथवा परिषदोंका परित्याग किया है, उनके आचरण और उनके चरित्रसे भाषणोंकी अपेक्षा कहीं अधिक सफल और कारगर प्रचार हुआ है। राष्ट्रीय स्कूलोंकी संख्या बढ़ रही है। लड़के अभीतक स्कूलों और कालेजोंको छोड़ रहे हैं। सरकारी आँकड़े बिलकुल गलत हैं। मुझे याद है, मैंने परिषद्‌के एक सदस्यको यह कहते सुना है कि कमसे-कम ३,००० छात्रोंने शिक्षण-संस्थाएँ छोड़ दी हैं। इसमें उन हजारोंकी गणना नहीं की गई है जो राष्ट्रीय स्कूलोंमें पढ़ रहे हैं। वकालत स्थगित करनेवालोंकी संख्या बराबर बढ़ रही है — अन्य स्तम्भमें धारवाड़ और गुंटूरके वकालत स्थगित करनेवालोंकी संख्या देखिए। पदवियोंका परित्याग भी अभीतक चल रहा है। और जब भीरु अथवा सतर्क व्यक्ति समझ लेंगे कि यह आन्दोलन एक गम्भीर और धार्मिक प्रयत्न है तथा लोगोंपर इसका प्रभाव स्थायी है तो वे भी अपनी पदवियाँ त्याग देंगे।

यदि भारतमें दक्षिण आफ्रिकाके आन्दोलनके इतिहासकी पुनरावृत्ति हो तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा। मुझे आश्चर्य तो तब होगा जब ऐसा न हो। दक्षिण आफ्रिकामें आन्दोलन सर्वसम्मत प्रस्तावसे[1] प्रारम्भ हुआ था। जब उसके प्रथम चरणके प्रारम्भमें अधिकांश लोग ढीले पड़ने लगे थे, केवल १५० [व्यक्ति] जेल जानेके लिए आगे आये, फिर एक समझौता हुआ और जब वह फिर भंग हुआ तो आन्दोलनकी पुनरा-वृत्ति की गई, हम कुछ लोगोंको छोड़कर अन्य किसीको विश्वासतक नहीं होता था कि जनता ठीक समयपर आगे आ जायेगी। सत्याग्रहके अन्तिम चरणके प्रारम्भमें केवल सोलह स्त्री-पुरुष जेल जानेके लिए सामने आये थे। इसके बाद तो जैसे तूफान ही आ गया। सारी जनता मानो एक ज्वारके समान उठी। बिना किसी संगठनके, बिना

१. प्रस्तावके लिए देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४३४।

किसी प्रचारके लगभग ४०,००० व्यक्ति जेल जानेके लिए निकल पड़े। लगभग दस हजार तो कैद ही किये गये। उसके बाद क्या हुआ सो सबको मालूम है। उस समय जनता जिन चीजोंके लिए लड़ी थी, वे सब उसे प्राप्त[1] हो गईं। स्वेच्छापूर्वक कष्ट-सहनके कठोर अनुशासनमें तपकर वह रक्तहीन क्रान्ति सम्पन्न हुई।

मैं यह विश्वास नहीं कर सकता कि भारत उतना सब नहीं कर पायेगा। लॉर्ड कैनिंगके शब्दोंको दोहरायें तो, हो सकता है कि भारतके शान्त नीलाकाशमें भले ही मनुष्यके अँगूठेके बराबर एक मेघ-खण्ड क्षितिजपर दिखाई दे रहा हो, किन्तु वह किसी भी क्षण कल्पनातीत आकार धारण करके कब फट पड़ेगा, यह कोई नहीं कह सकता। मैं नहीं कह सकता कि समूचे भारतकी जनता कब मैदानमें कूद पड़ेगी। किन्तु इतना मैं अवश्य कहता हूँ कि शिक्षित-वर्ग, जिससे कांग्रेसने अपील की है, एक दिन अवश्य — कदाचित् इस वर्षके भीतर ही — राष्ट्रोचित ढंगसे मैदानमें उतरेगा।

किन्तु वे ऐसा करें या न करें, राष्ट्रकी प्रगतिको कोई भी व्यक्ति अथवा वर्ग रोक नहीं सकता। अशिक्षित कारीगर, स्त्रियाँ, साधारण जन — सभी आन्दोलनमें अपना हिस्सा बँटा रहे हैं। शिक्षित-वर्गके प्रति की गई अपीलने उनके लिए मार्ग प्रशस्त कर दिया है। भेड़ोंसे बकरियोंको पृथक करना आवश्यक था। शिक्षित-वर्गको कसौटीपर कसना ही था। उनके द्वारा और उनके माध्यमसे ही आन्दोलन प्रारम्भ करना जरूरी था। भगवान्की दयासे असहयोग आन्दोलनने अबतक अपने सहज मार्गका ही अनुसरण किया है।

स्वदेशीके प्रचारको एक तीव्र एवम् अनन्य रूपमें सामने आना ही था और वह उचित समयपर सामने आ गया है। वह असहयोग आन्दोलनके कार्यक्रमका ही एक भाग था और है। मेरा दावा है कि वही भाग सबसे बड़ा, सबसे निरापद और सर्वाधिक सफल है। वह अपने वर्तमान रूपमें इससे पहले प्रारम्भ नहीं किया जा सकता था। आवश्यक था कि देश अपने लिए चरखेका महत्त्व स्पष्ट रूपसे समझे। पुराने अन्धविश्वासों तथा पूर्वग्रहोंसे देशको मुक्त करना था। देशको ठीक-ठीक समझना था कि केवल ब्रिटिश वस्तुओंका बहिष्कार व्यर्थ है, और उसी प्रकार समस्त विदेशी वस्तुओंका बहिष्कार भी व्यर्थ है। उसे समझना था कि वस्त्रोंमें स्वदेशीका परित्याग करके ही उसने अपनी स्वतन्त्रता खोई थी, और अब वह हाथके कते और बुने कपड़ेको अपनाकर ही उस स्वतन्त्रताको फिरसे प्राप्त कर सकता है। उसे समझना था कि उसने अपनी नादानीमें हाथसे कातना-बुनना छोड़कर अपनी कलात्मक रुचि और अपना कौशल खो दिया है। उसे समझना था कि भारतकी जीवन-शक्तिमें घुन लगने और भारतीय जीवनमें बार-बार अकाल आनेका इतना बड़ा कारण सेनापर होनेवाले धनका अपार व्यय नहीं है, जितना कि इस अनुपूरक उद्योगका नष्ट होना है। प्रत्येक प्रान्तमें चरखेके प्रति आस्थावान् लोगोंका उद्भव होना था और लोगोंको खद्दरके सौन्दर्य तथा उसकी उपयोगिताको ठीक-ठीक हृदयंगम करना था।

१. दक्षिण आफ्रिकी संघर्षके सिंहावलोकनके लिए देखिए खण्ड १२, परिशिष्ट २८।

अब ये सब बातें हो चुकी हैं। अब इस राष्ट्रीय धर्मके पुनरुद्धारके लिए एक करोड़ स्त्री-पुरुषों और एक करोड़ रुपयोंकी आवश्यकता है। सवाल चन्द चरखोंका नहीं, ६ करोड़ घरोंमें से प्रत्येकमें चरखेका प्रवेश करानेका है। सवाल भारतके लिए आवश्यक सारे कपड़ेका उत्पादन एवम् वितरण करनेका है। यह काम एक करोड़ रुपयोंसे नहीं हो सकता। यह तो तभी हो सकता है जब भारत १ करोड़ रुपया तथा १ करोड़ स्त्री-पुरुष जुटाये और साथ ही ३० जूनसे पहले-पहल २० लाख चालू चरखों-का २० लाख घरोंमें प्रवेश करा दे। और तब समझिये कि वह स्वराज्यके लिए लगभग तैयार है। क्योंकि इस प्रयाससे समूचे राष्ट्रमें उन सभी गुणोंका उद्भव हो जायेगा जो राष्ट्रको उत्तम, महान्, आत्मनिर्भर और अपने आपमें पूर्ण बनाते हैं। जब हमारा राष्ट्र अपने स्वतःस्फूर्त प्रयत्नसे विदेशी कपड़ेका बहिष्कार पूर्ण कर लेगा तब वह स्वराज्यके योग्य बन जायेगा। मैं वचन देता हूँ कि उस स्थितिमें भारतीय नगरों-में खड़े ये बड़े-बड़े किले भारतकी स्वतन्त्रताके लिए खतरा नहीं रह जायेंगे बल्कि भारतीय बच्चोंके खेलकूदके स्थान बन जायेंगे। तब हमारे और अंग्रेजोंके बीचके सम्बन्ध शुद्ध हो जायेंगे। तब लंकाशायरके मतदाता हमें हानि नहीं पहुँचायेंगे और तब यदि अंग्रेज चाहें तो भारतमें भारतको लाभ पहुँचाने और सच्चे दिलसे उसकी मदद करने-के एकमात्र ध्येयको लेकर मित्रों और बराबरीवालोंकी तरह रह सकते हैं। असहयोग एक ऐसा आन्दोलन है जिसका उद्देश्य अंग्रेजोंसे यह अनुरोध करना है कि वे या तो हमारे साथ सम्मानपूर्ण शर्तोंपर सहयोग करें या फिर हमारा देश छोड़कर चले जायें। यह आन्दोलन हम दोनोंके सम्बन्धोंको शुद्ध आधारपर स्थापित करनेके लिए है, अपने आत्मसम्मान और अपनी प्रतिष्ठाके अनुकूल उन्हें सुनिश्चित करनेके लिए है।

आन्दोलनका आप जो भी चाहे नाम रख लीजिये। आप उसे 'स्वदेशी और मद्य-निषेध' कह सकते हैं। मान लीजिये कि पिछले इन सारे महीनोंका प्रयत्न व्यर्थ गया है। मैं सरकार तथा नरम (माडरेट) दलके मित्रोंसे अनुरोध करता हूँ कि वे हाथकी कताईको देशव्यापी बनाने तथा मद्यपानको अपराध करार देनेमें राष्ट्रके साथ सहयोग करें। दोमें से किसी भी पक्षको इन दो आन्दोलनोंके परिणामोंके सम्बन्धमें अटकल लगानेकी कोई आवश्यकता नहीं। पेड़की पहचान उसके फलसे हो जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०–४–१९२१

११. फूटके बलपर शासन

विधान सभामें दिया गया सर विलियम विन्सेंटका[१] भाषण पढ़कर दुःख होता है। मैं समझता हूँ कि जानकारी जुटानेवाले लोगोंने उनको बिलकुल ही अँधेरेमें रखा है। उनके भाषणसे सिद्धान्तहीनता तो नहीं, अज्ञान टपकता है।

उन्होंने जो सफाई दी है वह ऊपरसे देखनेमें तर्क-सम्मत लगती है। पर उसमें तथ्योंको कभी तोड़-मरोड़कर और कभी गढ़कर पेश किया गया है। उसके द्वारा हम लोगोंमें लोभकी प्रवृत्तिको जगानेकी कोशिश की गई है और उसमें असहयोगियोंके इरादोंको गलत ढंगसे पेश किया गया है।

वे कहते हैं कि असहयोगियोंका जाना-माना उद्देश्य सरकारको ठप्प कर देना है और "वे अपना यह उद्देश्य पूरा करनेके लिए असन्तोष फैला सकनेवाले किसी भी साधनका प्रयोग करनेसे बाज नहीं आये हैं।" उनके ये दोनों ही कथन अर्ध-सत्य हैं। असहयोगका प्राथमिक उद्देश्य कहीं भी सरकारको ठप्प करना नहीं बतलाया गया है। उसका प्राथमिक उद्देश्य आत्म-शुद्धि है। अलबत्ता इसका प्रत्यक्ष परिणाम होना यही चाहिए कि हमारी बुराइयों और कमजोरियोंपर पनपनेवाली सरकार ठप्प हो जाये। इसी प्रकार इस कथनमें भी पूरी सचाई नहीं है कि हमने लोगोंके असन्तोषके सभी उद्गमोंका उपयोग अपने पक्षमें किया है। अवश्य ही जहाँ लोग ठीक कारणोंसे असन्तुष्ट थे हमें उनका उपयोग करनेके लिए बाध्य होना पड़ा है। किन्तु यदि कहीं लोगोंका असन्तोष बेजा है तो हमने उसका समर्थन नहीं किया है और उसका बेजा फायदा तो कभी नहीं उठाया। भले ही इसमें भावना यह रही हो कि अगर हम वैसा करेंगे तो उससे हमारे उद्देश्यको हानि पहुँचेगी। आगे जो वाक्य दिया जा रहा है सर विलि-यमने वह अपने मतके समर्थनमें कहा था। वह गलत है और इससे साफ हो जाता है कि मेरे कथनका क्या तात्पर्य है। उन्होंने कहा था: "जहाँ भी मालिकों और कर्मचारियोंके बीच कोई झगड़ा दिखता है, असहयोग दलका कोई-न-कोई नुमाइन्दा या कार्यकर्त्ता वहाँ असन्तोष और वैमनस्य फैलाने तुरन्त पहुँच जाता है।" यह सिर्फ गलत ही नहीं है बल्कि ऐसा कहनेमें उनका इरादा दोनों ही पक्षोंको असहयोगियोंके विरुद्ध भड़काना है। मजदूरों और पूँजीपतियोंके बीच विवादोंसे कोई राजनीतिक लाभ न उठाना तो असहयोगियोंका घोषित उद्देश्य है। असहयोगियोंने दोनोंके प्रति निष्पक्ष रहनेकी कोशिश की है। मजदूरोंको पूँजीपतियोंके विरुद्ध खड़ा करनेकी बात सोचना हमारे लिए मूर्खतापूर्ण होगा। वह तो बिलकुल सरकारके हाथोंमें खेलना होगा, क्योंकि सरकार पूँजीपतियोंको मजदूरोंके और मजदूरोंको पूँजीपतियोंके विरुद्ध खड़ा करके अपनी स्थिति काफी सुदृढ़ बना लेगी। उदाहरणके तौरपर झरियामें एक असहयोगीने ही हड़तालको बढ़नेसे रोका था। कलकत्तामें असहयोगियोंने ही स्थितिको ज्यादा नहीं

१. वाइसरायकी कार्यकारिणी परिषद्में गृह-मन्त्री।

बिगड़ने दिया था। किन्तु जहाँ-कहीं हड़तालियोंकी शिकायतें वाजिब होंगी वहाँ असहयोगी उनके पक्षमें खड़े होनेमें तनिक भी आगा-पीछा नहीं करेंगे। वे हमेशा गैर-वाजिब हड़तालोंमें मदद देनेसे तो इनकार करते ही रहे हैं। सर विलियम विन्सेंट कहते हैं: "जहाँ भी जातिगत दुर्भावना दिखाई पड़ती है यह शैतान चौकड़ी तुरन्त वहीं आग भड़काने पहुँच जाती है।" वे स्वयं जानते होंगे कि यह एक झूठ बात है। अंग्रेजों और भारतीयोंके बीच जातिगत दुर्भावना मौजूद है। जलियाँवाला बागकी याद तो सदा ताजा रहेगी। फिर भी यह शैतान चौकड़ी सचमुच शान्ति-दूत बनकर काम करती रही है। हर मौकेपर अविवेकपूर्ण क्रोधको भड़कनेसे रोकती रही है। और मैं तो इतना तक कहनेका साहस कर सकता हूँ कि यदि हमारे अन्दर अहिंसाकी भावना न होती तो डायरशाही और ओ'डायरशाहीकी धमकियोंके बावजूद कहीं अधिक संख्यामें निर्दोष व्यक्तियोंका लहू बहता। हमारा कसूर सिर्फ इतना था कि हमने ठोकर मारनेवाले बूटको चाटनेसे इनकार कर दिया था और सरकार द्वारा सार्वजनिक रूपमें पश्चात्ताप प्रकट करने तक उससे सहयोग बन्द कर दिया था। असहयोगियोंको इसका श्रेय मिलना चाहिए कि उन्होंने अन्यायके कारण उत्तेजित जनताके क्रोधका रुख अंग्रेजोंके बजाय अंग्रेजों द्वारा चलाई जानेवाली शासन-व्यवस्थाकी ओर मोड़ दिया है।

परन्तु फूट डालकर शासन करनेके प्रयासमें यदि कोई कसर रह जाये तो फिर सर विलियम, सर विलियम ही नहीं रह जायेंगे। वे पूरे आवेशके साथ कहते हैं: "जमींदारों और किसानोंके बीच जहाँ कोई झगड़ा हुआ कि यह शैतान चौकड़ी वहीं अशान्ति फैलाने और अव्यवस्थाको उभारने पहुँच जाती है।" सर विलियमको मालूम होना चाहिए कि किसान आन्दोलनकी बागडोर पंडित जवाहरलाल नेहरूके हाथमें है और उनका प्रमुख ध्येय ही यह है कि किसानोंको शान्त और धैर्यशील रहना सिखाया जाये। सीधी-सी बात है कि सर विलियम जमींदारोंको असहयोग आन्दोलनके खिलाफ भड़काना चाहते हैं। गनीमत यह है कि जमींदार और किसान दोनों ही भली प्रकार जानते हैं कि उनका पक्ष जबतक न्यायपूर्ण रहेगा तबतक उनको असहयोगियोंसे कोई भय नहीं है।

सर विलियमका कहना है कि "आन्दोलन सर्वथा ध्वंसात्मक है और जहाँतक मैं समझ पाया हूँ उसमें रचनात्मक क्षमताका लेश भी नहीं है।" असहयोग आन्दोलनको ध्वंसात्मक कहना रोग-ग्रस्त अंगपर नश्तर लगानेवाले शल्य-चिकित्सकके कामको ध्वंसात्मक कहना है। इस ध्वंसात्मक आन्दोलनमें निर्माण या रचनाके बीज उसी तरह समाहित हैं जैसे शल्य-चिकित्सकके नश्तरमें स्वास्थ्यके बीज। क्या शराब-बन्दी ध्वंसात्मक है? क्या जगह-जगह खुल रहे राष्ट्रीय स्कूल ध्वंसात्मक हैं? क्या हजारों नये चरखे राष्ट्रकी समृद्धिकी जड़ें खोदते हैं? वे विदेशी आधिपत्यको जरूर ध्वस्त करते हैं; फिर वह लंकाशायरका हो या जापानका।

सर विलियम समाजके विशिष्ट वर्गोंको आम जनताके खिलाफ भड़काकर ही दम नहीं लेते, इसके बाद वे ऊँचे तबकों और सामान्य जनता दोनों ही में अन्दरूनी झगड़ों तथा बाहरी हमलोंके भयकी भावना पैदा करके उनको असहाय और अपंग बना देना चाहते हैं। क्या हिन्दू-मुस्लिम एकता एक ऐसी तुच्छ और ऊपरी चीज है कि जैसे

ही हमारे देशसे अंग्रेजोंकी बन्दूकें, उनका शस्त्र-बल हटेगा वैसे ही हम आपसमें लड़ना शुरू कर देंगे? क्या आजसे साठ वर्ष पहले हम अपनी रक्षा करनेमें आजकी अपेक्षा कम समर्थ थे? या क्या यह सच नहीं है कि पाश्चात्य मानदण्डोंसे देखा जाये तो हम इतने असहाय कभी थे ही नहीं जितने कि आज हैं? जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ स्वराज्यका अर्थ यही है कि उसमें आत्म-रक्षाकी शक्ति होनी चाहिए; जो देश स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर सकता उसे तत्काल तो पूर्ण स्वराज्यके योग्य नहीं माना जा सकता। सर विलियमने अपने एक इसी वाक्यके जरिये अनजाने ही ब्रिटिश शासनकी भर्त्सना कर दी है और उससे यह सिद्ध कर दिया है कि इसे सुधारना या उसका बिलकुल ही अन्त कर देना अब एक फौरी आवश्यकता बन गई है। मेरा तरीका तो कष्ट-सहन और आत्मिक बलका है और देश आज इस तरीकेसे अपनी आत्म-रक्षा करनेके लिए तैयार है। पर सर विलियमके मानदण्डके अनुसार तो इन सुधारोंमें ऐसी कोई चीज नहीं है जो आगामी सौ वर्षोंमें भी भारतको विश्वकी सम्मिलित शक्तियोंसे आत्म-रक्षा करने योग्य बना सके। उस मान दण्डके अनुसार तो ये सुधार भारतको जकड़नेवाली शृंखलाओंको और मजबूत बनाते हैं और उसमें असमर्थताकी भावना पैदा करते हैं। वक्ताने बड़ी शानके साथ कहा है कि हर तरहके निहित स्वार्थोंका खात्मा हो जायेगा। यहाँ उनको इस बातकी याद दिलाना जरूरी है कि भारतके सबसे महत्त्वपूर्ण हितको, उसकी स्वावलम्बिताको इसी विदेशी शासनने नष्ट किया है और वक्ताकी जो योजना है वह तो भारतकी गरीबीको और भी बढ़ा देगी।

सर विलियमने असहयोगियोंके इरादोंको जितने गलत रूपमें पेश किया है उतने ही गलत ढंगसे उन्होंने उनके तरीकोंको समझा है। शिक्षित-वर्गोंका सहयोग प्राप्त करनेमें हमें असफलता नहीं मिली है। मैं मानता हूँ कि हमें उनका और अधिक सहयोग मिल सकता था। लेकिन मैं कह सकता हूँ कि उनका एक भारी बहुमत मनसे हमारे साथ है; अलबत्ता अपनी दैनिक दुर्बलताओंके कारण वे जिसे त्याग समझते हैं, वह कर नहीं पाते। हम शुरूसे ही अपने विचारोंसे जनताको प्रभावित करनेका प्रयोग कर रहे हैं। हम जनताको ही अपना मुख्य आधार समझते हैं, क्योंकि स्वराज्य तो आखिर उसीको पाना है। स्वराज्यकी इतनी अधिक आवश्यकता न तो धनी लोगोंको है और न शिक्षित-वर्गोंको। स्वराज्य किसी भी किस्मका हो, इन दोनों वर्गोंको अपने हितको स्वराज्यके लिए उपयोगी बनाना पड़ेगा। जैसे ही जनता अपने अन्दर आत्मनियन्त्रणकी सामर्थ्य पैदा कर लेगी और सार्वजनिक अनुशासनमें दीक्षित हो जायेगी, हम उसे आवश्यकता पड़नेपर यह सलाह देनेसे नहीं चूकेंगे कि वह ऐसी सरकारको करोंकी अदायगी बन्द कर दे जिसने सचमुच कभी उसके कल्याणका खयाल नहीं रखा; जिसने उसका शोषण किया है और शोषणके विरुद्ध खड़े होनेका जरा भी रुख अख्तियार करते ही उसका दमन किया है।

सर विलियमने असहयोग आन्दोलनके प्रति अपनाये गये सरकारके तरीकोंका वर्णन करनेमें बड़ी चालाकी दिखाई है। वे कहते हैं कि भारत सुरक्षा कानून उन लोगोंके खिलाफ इस्तेमाल नहीं किया जायेगा जो किसीको हानि नहीं पहुँचाते और जो लोगोंको हिंसा करनेसे रोकते हैं। लेकिन वे असहयोगियोंके खिलाफ साधारण

कानूनोंको बिलकुल मनमाने ढंगसे प्रयुक्त कर रहे हैं; और इनसे फायदा उठाया जा रहा है असहयोगियोंके इस निश्चयका कि वे न्यायालयोंमें सरकारी आदेशोंपर कोई आपत्ति नहीं उठायेंगे। सर विलियमका कहना है कि स्वराज्य देना उपद्रवी लोगोंके आगे झुकना है और इस प्रकार अराजकताको प्रश्रय देना है। वे उन दो बातोंके बारेमें अपना सिर खपानेकी कोई जरूरत नहीं समझते जो इस तमाम अशान्तिका कारण हैं और जो तीव्र विष बनकर देशके शरीरमें भिद गया है। खिलाफत[1] और पंजाबके साथ हुआ अन्याय[2] —— ये दो विष हैं। वे हमको यह क्यों नहीं बतलाते कि यदि खिलाफतके सिलसिलेमें किये गये वायदे पूरे कर दिये जायें और पंजाबके जख्मको भर दिया जाये तो भारतपर कौनसी विपत्ति आ जायेगी।

सर विलियमने अली भाइयोंपर असज्जनतापूर्ण आक्षेप करके अपने इस विचित्रसे भाषणको और भी विचित्र बना डाला है —— वे अली भाई जो इस्लाम और भारतकी खातिर एक उच्च आदर्शपूर्ण संघर्ष चला रहे हैं। साथ ही उन्होंने याकूब हसन नामक सज्जनपर तो और भी असज्जनतापूर्ण आक्षेप किया तथा उसमें उनकी तुर्क पत्नीका अशोभनीय ढंगसे उल्लेख भी किया।

मैं पहले भी बतला चुका हूँ कि इस भाषणको पढ़कर मुझे बड़ा दुःख पहुँचा था और उसकी आलोचना करनेका अपना कर्त्तव्य निभाना मुझे और भी पीड़ाजनक लगा है। मैं पाठकोंको आश्वस्त कर देना चाहता हूँ कि भाषाके प्रयोगमें संयमसे काम लेनेका आदी होनेपर भी मुझे इस भाषणकी आलोचनाके दौरान भाषाको संयत रखनेके लिए अपनी पूरी शक्ति लगा देनी पड़ी है, मुझे अपने-आपको रोके रखनेका बहुत अधिक प्रयत्न करना पड़ा है। मैं ऐसे अनेक विशेषणोंका उपयोग करनेमें सफल हो सका हूँ जो मेरी समझमें सर विलियमके कारनामेका ठीक-ठीक परिचय देते हैं और मुझे इसका दुःख है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०–४–१९२१

१. यह आन्दोलन प्रथम विश्व-युद्धकी समाप्तिपर टर्कीको एकाधिक खण्डोंमें बाँटनेकी ब्रिटिश सरकारकी नीतिको बदलवानेके लिए शुरू किया गया था, जिससे खलीफाकी धार्मिक प्रतिष्ठापर भी बुरा प्रभाव पड़ता था। देशके मुसलमान इस मसलेपर बहुत ही उत्तेजित थे और कांग्रेसने इसे अपने कार्यक्रममें शामिल कर लिया था।

२. अप्रैल १९१९ में पंजाबमें मार्शल लॉके अन्तर्गत सरकार द्वारा किया गया दमन और हिंसापूर्ण कार्रवाइयाँ — जिनकी चरम परिणति जलियाँवाला बागके कत्लेआममें हुई, जिससे देशभरमें क्षोभकी लहर दौड़ गई थी। गांधीजीका मत था कि सरकार खिलाफत और पंजाबके बारेमें किये गये अन्यायोंको बरकरार रखनेके लिए असत्य और दम्भका सहारा ले रही है। ये ही बादमें असहयोग आन्दोलनके अहम मसले बने थे।

१२. प्रतिवादके सम्बन्धमें टिप्पणी[1]

श्री वर्माने जोरसे प्रतिवाद किया, इसकी मुझे खुशी है। मैं मान लेता हूँ कि जबलपुरके वकील ही वहाँके असहयोग आन्दोलनका नेतृत्व कर रहे हैं। लेकिन मैं अपने इस कथनपर अटल हूँ कि जिस दिन मैं जबलपुर गया उस दिन वहाँ वकील-मण्डलीका एक भी सदस्य उपस्थित नहीं था। जिन दो युवकोंका मैंने हवाला दिया है, सारा इन्तजाम उन्हींके हाथमें था। वे जमींदारोंके बेटे हैं, यह बात बिलकुल सही है। आज वे मजबूरीके कारण सरकारसे सहयोग भी कर रहे हैं। जमींदार अपनी जमीनें सरकारको लौटा दें, ऐसा नारा अभीतक कांग्रेसने नहीं दिया है और शायद कभी देगी भी नहीं। ये युवक दूसरी जगहोंके जमींदारोंके चन्द बेटोंकी ही तरह राष्ट्रीय उत्थानमें शानदार हिस्सा ले रहे हैं और वकीलोंसे हर तरहका बढ़ावा पानेके हकदार हैं। जहाँतक धनके मुकाबले बुद्धि द्वारा नेतृत्व करनेकी बात है, उसमें तो कोई दो रायें हो ही नहीं सकतीं। तथा यह तो मानना ही पड़ेगा कि अन्तमें मस्तिष्क नहीं हृदय ही राह सुझायेगा। संकटकी घड़ीमें तो बुद्धि नहीं चारित्रिक बल ही काम देता है और मेरा खयाल है कि उन नौजवानोंने चारित्रिक दृढ़ता दिखाई है। यदि कुछ विपरीत सामने आया तो मुझे अफसोस होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०–४–१९२१

१३. भाषण : सूरतकी सभामें

२० अप्रैल, १९२१

महात्माजीने शामको तिलक मैदानमें आयोजित एक विशाल सभामें भाषण दिया। सभामें १५ से २० हजारतक लोग उपस्थित थे। उन्होंने उस दिनकी सभाके अत्यन्त व्यवस्थित और सुचारु प्रबन्ध के लिए सूरतके नागरिकोंको बधाई देते हुए कहा कि मुझे इस बातकी बहुत खुशी है कि प्रबन्धकी त्रुटियोंके बारेमें अपनी पिछली बातें दोहरानी नहीं पड़ीं। मुझे सूरत नगर व जिले द्वारा किये गये शानदार कामका ब्यौरा सुनकर भी प्रसन्नता हुई है।

१. गांधीजीने जबलपुरसे कटक जाते हुए एक भेंट दी थी जिसमें कहा गया था कि जबलपुरमें दो धनी व्यापारियोंके लड़के आन्दोलनको बड़ी कामयाबीके साथ चला रहे हैं और वहाँके वकील उसमें काफी दिलचस्पी नहीं ले रहे हैं। जबलपुरके वकील श्री ज्ञानचन्द वर्माने इस कथनका विरोध करते हुए जो पत्र लिखा था यह टिप्पणी उसके उत्तरमें है।

उन्होंने कहा :

जो जिला, नगर या गाँव अपना कर्त्तव्य पूरी तरह निभाता है उसके बारेमें कहा जा सकता है कि उसने स्वराज्य प्राप्त कर लिया है। हम ऐसा स्वराज्य चाहते हैं जिसमें सभी व्यक्तियोंको, भंगियों तकको, समान अधिकार प्राप्त हों। जिस दिन आपको कमजोर, दुःखी और जरूरतमन्द लोगोंकी मददके लिए अपने कटिबद्ध हो जानेकी प्रतीति हो जायेगी उसी दिन आपको लगेगा स्वराज्य करीब आ रहा है। स्वराज्य हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच स्थापित एकताके कारण ही सम्भव हो गया है। हमारी कमजोरीकी वजहसे ही मुट्ठीभर यूरोपीय हमपर शासन कर रहे हैं। हमारे विचारोंमें एक बड़ी तब्दीली आनी चाहिए और हमें यह महसूस करने लगना चाहिए कि अपना राज खुद चलाना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। यह तो अंग्रेज भी मानते हैं कि भारतमें उनका साम्राज्य हमारी कमजोरीपर टिका है। सर आर० क्रेडॉकने एक बार कहा था कि अंग्रेज भारतपर तभीतक राज्य कर सकेंगे जबतक कि भारतकी जनता उनको राज्य करने देगी।

गांधीजीने आगे बोलते हुए कहा कि जिन वकीलोंने अपनी वकालत बन्द कर दी है, जिन विद्यार्थियोंने सरकारी स्कूल छोड़ दिये हैं उनको अब दूसरोंके सामने एक अच्छी मिसाल पेश करनी चाहिए। उनका चरित्र ऐसा होना चाहिए कि दूसरे उनकी ओर खिंच जायें। पंडित मोतीलाल नेहरू और श्री चित्तरंजन दासने बड़ी शानदार मिसालें हमारे सामने रखी हैं। भारतको स्वाधीनताके लिए अन्ततक लड़नेवाले दस हजार सच्चे सिपाही चाहिए।

नगरकी सजावटका उल्लेख करते हुए गांधीजीने कहा कि इससे मुझे खुशी तो हुई लेकिन इस बातसे बड़ा दुःख हुआ कि सजावटके लिए विदेशी कपड़ेका इस्तेमाल किया गया है। इसकी जगह खद्दरका इस्तेमाल किया जाना चाहिए था।

कांग्रेस कमेटीकी सिफारिशोंका जिक्र करते हुए उन्होंने श्रोताओंसे पूछा : अब हर साल दारूपर सत्रह करोड़ रुपये बर्बाद किये जाते हैं तब क्या कांग्रेसके लिए एक करोड़ रुपये इकट्ठे करना बहुत मुश्किल है?

चरखेके बारेमें उन्होंने कहा कि चरखा स्वराज्यका प्रतीक है। आर्थिक दृष्टिसे वही सर्वोत्तम साधन है। कताई-बुनाईके जरिये हर आदमी ईमानदारीके साथ काम करके दो रुपये रोज कमा सकता है। इसीलिए चरखेका चलन हर परिवारको अपने यहाँ शुरू करना चाहिए। आगे बोलते हुए उन्होंने कहा कि स्वयंसेवकोंको दारूबन्दीका अपना आन्दोलन जारी रखना चाहिए और इस तरह देशको दारूकी बुरी लतसे छुटकारा दिलाना चाहिए। अन्तमें उन्होंने श्रोताओंसे अनुरोध किया कि वे तिलक स्वराज्य-कोषमें भरसक ज्यादासे-ज्यादा चन्दा दें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-४-१९२१

१४. भाषण : बलसाड़की सभामें[1]

२० अप्रैल, १९२१

इन पारसी भाईने[2] मधुर गुजरातीमें जो शब्द कहे वे याद रखने योग्य हैं। हिन्दू-मुस्लिम एकताका अर्थ ही यह है कि हिन्दुस्तानकी छोटी-बड़ी कौमें स्वधर्मका पालन करते हुए भी स्वतन्त्रतापूर्वक रह सकें। हिन्दू-मुस्लिम एकतामें मानवजातिके तीस करोड़ व्यक्तियोंका बल समाहित है। लेकिन जिस तरह यूरोपके बड़े राष्ट्र, छोटे राष्ट्रोंको बचानेके बहाने उन्हें निगल गये अगर इस एकताका भी यही अर्थ होता तो ५२ वर्षकी आयुमें मैं इस तरह जगह-जगह न भटकता। मुझे न तो राज्य चाहिए और न मुझे धन-वैभवकी ही कोई अभिलाषा है। इनसे मेरा जी भर चुका है। मेरी आत्मा तो कहती है कि मेरी प्रवृत्ति ऐसी है जिसमें हिन्दुस्तानकी छोटीसे-छोटी कौम भी निर्भयतापूर्वक रह सकती है। पारसी, सिख, यहूदी और ईसाईको कोई दुःख न दे सके, एक अबलापर कोई कुदृष्टि न डाल सके — यह स्वराज्यका अर्थ है। यह स्वराज्य कोई हमें देनेवाला नहीं है। यह न तो ऊपरसे गिरनेवाला है और न जमीनसे फूट निकलनेवाला है। उसकी तो हमें अब स्थापना करनी है। पारसी भाइयोंको [निश्चय करनेमें] समय लेनेका अधिकार है। वे अवश्य देखें कि ये दो कौमें क्या करती हैं; लेकिन मुझे इस बातका पक्का विश्वास है कि वे निरापद हैं। इसीलिए मैंने उन्हें स्वराज्य-यज्ञमें बलिदान देनेके लिए आमन्त्रित किया है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–५–१९२१

१५. भाषण : सीसोदरामें[3]

२१ अप्रैल, १९२१

आज आप अपने सहोदर भाइयोंको अपने बीचमें जगह देकर पवित्र हो गये हैं, लेकिन इस पवित्रताको हमेशा बनाये रखना है। दुधारू गायकी लात क्यों मारी जाये यह सोचकर मेरी सेवा प्राप्त करनेके लिए, मुझे खुश करनेके लिए आप इसे न करें बल्कि अपना धर्म समझकर करें। मैं जो-कुछ सेवा करता हूँ सो धर्म समझकर ही

१. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

२. पारसी कौमकी ओरसे बोलते हुए इन्होंने कहा था : "स्वतन्त्रताके इस संग्राममें पारसी हिन्दुओं और मुसलमानोंके साथ हैं लेकिन वे यह सोचकर इसमें शामिल होनेमें थोड़ा हिचकिचाते हैं कि क्या स्वराज्यमें उनके हितोंकी रक्षा की जायेगी।"

३. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

करता हूँ। मुझे आपसे इस सेवाका बदला नहीं चाहिए। धर्मका बदलेके साथ सम्बन्ध नहीं है; इसका तो ईश्वरके साथ सम्बन्ध है। मुझे जनतासे वेतन नहीं चाहिए। वेतन और बदला मुझे ईश्वर देगा। हिन्दू धर्म तो सिखाता है कि व्यक्ति जो-कुछ भी करे उसे कृष्णार्पण करे तभी उसकी सेवा फलीभूत होती है। इसलिए आज आपने अन्त्यजोंको स्पर्श कर जो पुण्य कार्य किया है वह अगर मेरी सेवाका बदला चुकानेके रूपमें किया हो तो उससे मेरा और आपका भला नहीं होगा; वह शोभान्वित तभी होगा जब कि उसे आपने विवेकपूर्वक किया हो।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–५–१९२१

१६. भाषण: नवसारीमें

२१ अप्रैल, १९२१

बहनो और भाइयो,

नवसारी मैं पहली बार नहीं आया हूँ। सन् १९१५ में जब मैं भारत-भ्रमण कर रहा था उस समय एक दिनके लिए मैं यहाँ आया था। लेकिन वह समय जुदा था और आजका समय जुदा है। दोनोंमें बहुत भेद है। आज तो नया युग है। इस युगमें हम जो कर रहे हैं उसका क्या परिणाम निकलेगा तथा संसार हमारी क्या परीक्षा लेगा सो तो ईश्वर जाने। हम चाहे जो सोचें लेकिन वह सोचा हुआ विचार सफल होगा या नहीं सो तो ईश्वरके हाथ है। इसीसे कहा जाता है कि मनुष्य चाहे जो सोचे, करनेवाला तो खुदा है।

मेरे जैसा व्यक्ति प्रजामें दिखाई देनेवाले उत्साहसे, प्रजाकी प्रतिज्ञासे भ्रमित होकर यह विश्वास रखता है कि एक वर्षके भीतर धर्मराज्यकी स्थापना होगी, स्वराज्यकी स्थापना होगी; लेकिन किसे खबर कि हम जो राज्य स्थापित करेंगे वह धर्मराज्य होगा या अधर्मराज्य? हमारा स्वराज्य राक्षसी राज्य होगा या रामराज्य इसकी अभी किसे खबर है। लेकिन मेरी आत्मा तो गवाही देती है कि हमारी गति धर्मकी ओर है। हिसाब करते-करते ऐसा जवाब आता है कि पिछले पाँच अथवा छ: महीनोंमें जिस रफ्तारसे हमने काम किया है अगर उसी रफ्तारसे बाकीके छ: महीनोंमें काम करेंगे तो अवश्यमेव धर्मराज्यकी स्थापना कर सकेंगे।

मुझे इस बातका अहसास है कि इस समय मैं ब्रिटिश राज्यकी सीमामें नहीं हूँ। मैं महाराजा गायकवाड़की सीमामें बैठकर भाषण दे रहा हूँ। लेकिन मैं जो कहने जा रहा हूँ वह यहाँ भी लागू है। मेरा कार्य ब्रिटिश और देशी दोनों राज्योंके लिए समान है। दोनों जगहोंपर धार्मिक भावना जाग्रत करना, दोनों जगहोंमें जो मैल हो उसे निकाल बाहर करना तो अभीष्ट है ही।

लेकिन ब्रिटिश सीमामें रहकर मुझे जो टीका करनी पड़ती है, जिन बातोंके कारण कितने ही कार्य करनेकी सलाह देनी पड़ती है, मैं जानता हूँ कि वे बातें यहाँ नहीं हैं। इसलिए मुझे जो कहना है सो सामान्य रूपसे कहूँगा।

नवसारी आनेका मेरा खास उद्देश्य यह है कि मैं पारसियोंके इस गढ़में आकर पारसी बहनों और भाइयोंके दर्शन करूँ और उनसे दो शब्द कहूँ। नवसारी पारसियोंका बड़ा भारी गढ़ है। बम्बई पारसियोंका गढ़ है, लेकिन बम्बईको अकेले पारसियोंका ही नहीं कहा जा सकता। बम्बई तो अंग्रेजीमें जिसे "कॉस्मोपोलिटन सिटी" कहते हैं, वैसा शहर है। बम्बई जगन्नाथपुरी-जैसा है, यद्यपि जगन्नाथपुरी उसे तभी कहा जा सकता है जब वह जगन्नाथपुरीके समान पवित्र हो और मैं बम्बईको पवित्र माननेके लिए तैयार नहीं हूँ। पारसियोंका सच्चा धाम नवसारी ही है।

स्वर्गीय दादाभाई नौरोजीकी[1] यह जन्मभूमि है। मैं उनके घर होकर आया हूँ। मेरे लिए तो यह तीर्थस्थान है। लेकिन इसके अलावा पारसी बहनों और भाइयोंके साथ मेरे कितने निकटके सम्बन्ध हैं, उसकी मैंने पारसियोंके प्रति अपने खुले पत्रमें[2] चर्चा की है। उसमें मैंने अपने समस्त सुन्दर संस्मरणोंका जिक्र नहीं किया है। उनके लिए उसमें जगह ही न थी। मेरे वे संस्मरण सुन्दर हैं और उनके साथ मेरे सम्बन्ध निकटके हैं। मैं उनके कर्जसे दबा हूँ — उनका ऋणी हूँ। मैंने अपने इस कर्जको चुकानेके लिए यह पत्र लिखा था। पारसियोंने हिन्दुस्तानमें, विलायतमें, दक्षिण आफ्रिकामें, जंजीबार और अदनमें मेरे प्रति जो प्रेम-भाव दिखाया है उसे मैं भुला नहीं सकता। स्वयं अपने बारेमें इतना तो मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि मैं एहसान-फरामोश नहीं हूँ। मुझपर उन्होंने जो उपकार किया है उसकी मैं कीमत आँक सकता हूँ और इसी कारण आज जो संघर्ष चालू है उससे पारसियोंका अलग अथवा तटस्थ रहना मुझे दुःख देता है।

मुझे पारसियोंके प्रति प्रेम है, उनकी शक्तिके प्रति मेरे मनमें सम्मान है, उनकी बुद्धिका मुझे अनुभव है, उनकी कार्यदक्षताका मुझे ज्ञान है। इसलिए मैं मानता हूँ कि इस आन्दोलनसे वे अलग नहीं रह सकते। पारसी इससे अलग रहें अथवा असहयोगी न बनें तो मुझे दुःख जरूर होगा।

पारसियोंमें वणिक-वृत्ति है। वे सारी दुनियाके व्यापारियोंसे व्यापारमें कम नहीं उतरते। पारसी कौम बहुत साहसी है। अस्सी हजार अथवा एक लाख व्यक्तियोंकी आपकी कौमकी कीर्ति आपके साहसके कारण ही सारी दुनियामें फैली हुई है। आप जहाँ-जहाँ गये हैं वहाँ-वहाँ आपने अपनी बुद्धि और शक्तिका चमत्कार दिखाया है। उदारतामें पारसी कौमका कोई मुकाबला नहीं कर सकता। पारसी कौमने जगत्‌की भलाईके लिए जितना धन दानमें दिया है उतना किसी दूसरी कौमने नहीं दिया। श्री एन्ड्रचू लैंगने समस्त संसारकी कौमोंकी दानशीलताके आँकड़े पेश करके बता दिया है कि आबादीके

१. १८२५–१९१७; ब्रिटिश संसदमें निर्वाचित होनेवाले प्रथम भारतीय सदस्य; १८८६, १८९३ और १९०६ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष।

२. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ४७५-७७।

हिसाबसे पारसियोंकी दानशीलता सबसे बढ़कर है। हिन्दू कौमने बहुत दिया है, लेकिन हिन्दू कौम तो महासागर है और उसकी दानशीलता अपनी सामर्थ्यके अनुपातमें एक बिन्दुके समान है। मुसलमानोंने भी बहुत दान दिया है, ईसाइयोंकी दानशीलता भी प्रसिद्ध है तथापि पारसियोंकी दानशीलताकी थोड़ी-बहुत तुलना यहूदियोंकी उदारताके साथ ही की जा सकती है किन्तु उसमें भी पारसी आगे बढ़ जाते हैं। इसके अलावा पारसियोंकी दानशीलता सबके लिए है। ऐसी कौम अगर अपनी शक्तिका सदुपयोग करे तो दुनियाका अवश्य भला कर सकती है

लेकिन हिन्दुस्तानके साथ तो उनका खास सम्बन्ध है। हिन्दुस्तानने पारसियोंको उनके नाजुक समयमें प्रश्रय दिया था; इससे हिन्दने कुछ खोया नहीं है। उन्हें स्थान देकर हिन्दू कौम और हिन्दुस्तानने लाभ ही उठाया है। पारसियोंने भी लाभ उठाया है। भारतमें अपनेको भारतीय कहकर वे गर्वका अनुभव कर सकते हैं। पारसियोंने यहाँ आकर लिया और दिया है। मुझे उनसे बड़ी-बड़ी आशाएँ हैं। मुझे दृढ़ विश्वास है कि वे नवयुगकी इस प्रवृत्तिमें अपनी उदारताके अनुपातमें ही चन्दा देंगे। मैं आपसे पैसेका अथवा बुद्धिका दान नहीं माँगता, मैं तो धार्मिक भावनाओंका दान माँगता हूँ। आप जिस पैगम्बरको मानते हैं उनके फरमानको याद करें। गुजराती और अंग्रेजीमें आपके जितने धर्मग्रन्थ मिलते हैं, उन सबको मैंने पढ़ा है। और मुझे ऐसा लगा है मानो मैं वेद, उपनिषद् अथवा 'गीता' पढ़ रहा हूँ। कुछ-एक पारसियोंने जरतुश्तके कथनोंकी उपनिषदोंके साथ तुलना की है। इसलिए मुझे पक्का विश्वास है कि आप लोग धार्मिक चन्दा देंगे।

जगत् कोई बुद्धिसे नहीं चलता बल्कि हृदयसे चलता है। इस जगत्‌में बुद्धि नहीं बल्कि आत्मा राज्य करेगी। आत्मा राज्य करेगी अर्थात् सदाचारका राज्य होगा। अभी सदाचार नहीं है, सो मैं नहीं कहता लेकिन यहाँ मैं सदाचारका विशेष अर्थोंमें प्रयोग कर रहा हूँ। सदाचार अर्थात् धर्माचार।

ईरान पूर्वका देश है। आजकल पूर्व और पश्चिमके बीच द्वन्द्व चल रहा है। पश्चिमकी ओरसे हमपर एक भारी तूफान चढ़ आया है। या तो हम उसमें बह जायें अथवा दृढ़तासे उसका सामना करके उसे वापस ठेल दें। इस तूफानका नाम है जड़-वाद अथवा पैसेको परमेश्वर माननेका वाद। अगर हम इसका विरोध नहीं करेंगे और इसकी नकल करनेमें फँस जायेंगे तो हम जड़वादी बन जायेंगे। पैसेको परमेश्वर मानेंगे तो नाशको प्राप्त होंगे।

आपकी इतनी स्तुति करनेके बाद मुझे लगता है कि आपसे चेतावनीके दो शब्द कहना मेरा फर्ज है। यह सम्भव है कि आपकी कौम पश्चिमी शिक्षासे लुब्ध होकर पश्चिमकी हवामें बह जाये। पारसियोंकी मातृभाषा गुजराती है। मुख्यतया उनकी आबादी गुजरातमें है इसलिए वे गुजराती ही हैं। तथापि एक गुजराती बहनने थोड़े दिन पूर्व मुझे एक पत्र लिखा था जिसमें उन्होंने बताया कि हमारे पारसी भाई 'हमें गुजराती नहीं आती', यह कहनेमें बड़प्पन मानते हैं। हम गुजराती भूल गये हैं, ऐसा कहनेमें गर्वका अनुभव करते हैं। इतना ही नहीं बल्कि अंग्रेजी तौर-तरीकोंके प्रति खास ध्यान रखनेमें अपना बहुत सारा समय खराब करते हैं। कुछ-एक पारसी बहनें

इस काममें मेरी बहुत मदद करती हैं। उनसे मैं गुजरातीमें लिखनेके लिए कहता हूँ तो वे शर्मिन्दा हो जाती हैं और कहती हैं कि हम गुजरातीमें नहीं लिख सकतीं। यह बात कौमकी दीन दशाको सूचित करती है।

अंग्रेजी भाषा आजकल फैशनमें आ गई है। मेरे मनमें उसके प्रति तिरस्कार-भाव नहीं है। लेकिन इस भाषाको सीखना जुदा बात है और इसे अपनी मातृभाषा मान बैठना जुदा बात है। राजनीतिक भाषा और व्यापारिक भाषाके अलावा अंग्रेजीका कोई दूसरा स्थान नहीं है। लेकिन पारसी अगर उसे मातृभाषा मान बैठें तो यह उनका और हिन्दुस्तानका दुर्भाग्य है। यदि आप उसे अपनायेंगे तो आप पश्चिमके गुलाम बन जायेंगे, आप अपने प्राचीन पैगम्बरकी चमत्कारपूर्ण शिक्षाको भूल जायेंगे।

यूरोपकी जनता ईसाई कहलाती है लेकिन वह ईसाके आदेशको भूल गई है। भले ही वह 'बाइबिल' पढ़े, भले ही वह हिब्रूका अभ्यास करे लेकिन ईसाके आदेशानुसार वह आचरण नहीं करती। पश्चिमकी हवा ईसाके आदेशोंके विरुद्ध है। पश्चिमकी जनता ईसाको भूल गई है।

पारसी भाइयोंको मेरा यह सन्देश है, अगर यहाँ ज्यादा पारसी नहीं आये हैं तो जो लोग आये हैं उनसे मेरी प्रार्थना है, कि वे कल ही उन लोगोंके घरोंमें मेरे इस सन्देशको पहुँचायें। आप मुट्ठी-भर हैं, इसके लिए आपको दु:खी होनेकी जरूरत नहीं है। संख्या महत्त्वपूर्ण वस्तु नहीं है। गुण संख्यामें नहीं बल्कि मनुष्यतामें है, बहादुरीमें है, हिम्मतमें है। अगर पचास हजार खोटे सिक्के हों तो उनकी कोई कीमत नहीं है। एक खरे सिक्केकी कीमत असंख्य खोटे सिक्कोंसे ज्यादा है। इसलिए पारसी अगर खरे हों तो वे दुनियाको अपना हिसाब दे सकते हैं। उनसे मैं आशा रखता हूँ कि वे खरे उतरेंगे।

यदि आप पश्चिमी हवामें बह निकलें, भोग-विलासके पीछे पागल बन जायें, ऐश-आराममें निरत हो जायें, पैसेके पुजारी बन जायें तो इस तरह ईश्वरको भूल जायेंगे। यदि आप जरतुश्तके उपदेशको भूल जायेंगे तो जिस बातके लिए आप लोग प्रसिद्ध हैं उसे खो देंगे, मणिको खोकर पत्थर ले लेंगे।

पारसियोंमें अनेक अरबपति हो गये हैं। इतना धन संचित करनेके बाद भी उन्होंने सादेपनको नहीं छोड़ा था, उन्होंने अपने दिलोंको साफ रखा था, वे ईश्वरको नहीं भूले थे। लेकिन आधुनिक युगके पारसी बहनों और भाइयोंके सम्बन्धमें मुझे कुछ शंका होती है। मुझे भय बना रहता है कि सम्भवत: वे यूरोपकी मोहिनी छविसे लुब्ध होकर अपनी प्राचीन विरासतको खो बैठेंगे।

मैंने बहुत-कुछ कह दिया है। अभी अगर आप असहयोगके पूरे कार्यक्रममें शामिल नहीं होते तो कोई बात नहीं लेकिन एक बातके सम्बन्धमें मैं आपसे खास मदद चाहता हूँ। अगर आप शराबखानेसे पैसा कमानेका विचार छोड़ दें तो आपका बड़ा उपकार होगा। अकेले पारसी ही शराबखाने चलाते हों सो बात नहीं। हिन्दू भी चलाते हैं, अनाविल ब्राह्मण भी चलाते हैं। मुसलमान भी इसमें पड़े हुए हैं। पंजाबमें बहादुर गुरु गोविन्दसिंहके अनुयायी सिख लोगोंके हाथमें भी शराबकी भट्टियाँ हैं। उन सबसे मैं प्रार्थना कर रहा हूँ। लेकिन पारसी लोग एक छोटी कौम होनेके कारण इस कामको

आसानीसे कर सकते हैं। हिन्दुस्तानमें हर जगह पारसी भाइयोंके हाथमें शराबखाने हैं। स्वराज्यका पहला काम यह है कि देशमें शराबखाना न हो, शराब बनानेकी बड़ी-बड़ी भट्टियाँ न हों। किसी-किसी स्थानपर दवाके लिए शराबकी छोटी-छोटी भट्टियाँ भले ही हों। लेकिन इस शराबका अफीम अथवा विषकी तरह उपयोग किया जाना चाहिए। विषकी दुकानें स्थान-स्थानपर नहीं होतीं। उसे प्राप्त करना मुश्किल है लेकिन फिर भी दवाइयोंकी दुकानपर तो वह मिल सकता है। उसी तरह शराब मिलनी भी मुश्किल होनी चाहिए।

मैं स्वदेशीके जबरदस्त आन्दोलनमें पारसियोंकी मदद माँगता हूँ। आप यह जानकर खुश होंगे कि एक पारसी बहनने शुद्ध स्वदेशी चालीस साड़ियोंका आर्डर दिया है। मद्रासमें हाथके कते सूतकी महीन साड़ियाँ बुनी जा सकती हैं। अगर पारसी बहनोंको सरुचिपूर्ण साड़ियोंकी जरूरत हो और जो उन्हें पुसाये भी तो वैसी साड़ियाँ बेजवाड़ामें तैयार हो सकती हैं।

अनेक पारसी बहनोंने स्वदेशीको अपनाया है। लेकिन मैं तो लोभी ठहरा, कंजूस ठहरा। इसलिए जबतक इतनी छोटी कौमके सब लोगोंमें उज्ज्वलताके दर्शन न हों तबतक मुझे खुशी न होगी। आप रेशमी वस्त्रमें शोभा मानते हैं लेकिन आप खादी पहनकर ही सच्चे अर्थोंमें अपनेको तथा हिन्दुस्तानको शोभान्वित कर सकेंगे। अनेक हिन्दू अभी खादी नहीं पहनते, मुसलमान भी नहीं पहनते। लेकिन आप दूसरोंके उदाहरण-को न लें। दूसरे बुरे बनें तो आपको बुरा बननेकी जरूरत नहीं है। आपकी कौम करोड़ों हिन्दू-मुसलमानोंके सामने उदाहरण पेश कर सकती है। जब मैं सूरतमें हाथ-बुनाई-की एक फैक्टरी देखने गया तब मुझे यह देखकर आनन्द हुआ कि एक पारसी भाई स्वदेशीके काममें कुछ मदद कर रहे हैं। लेकिन मैं उतने ही से खुश होनेवाला नहीं हूँ। आप अपने-अपने घरोंमें चरखेको स्थान दें। आप पारसी बहनें बहुत बारीक सूत कात सकती हैं। आप अपनी कस्ती [यज्ञोपवीत]के लिए बहुत बारीक ऊन कातती हैं। अपनी इस शक्तिको आप हिन्दुस्तानको अर्पित करें।[1]

आपके लिए तो यही एक देश है। इस देशको छोड़कर संसारमें ऐसा कोई भी देश नहीं जिसकी इंचभर भूमिको भी आप अपना कह सकें। हमारे शास्त्रोंमें तो कहा गया है कि मोक्ष प्राप्त करनेके लिए संसार-भरमें भारतवर्षको छोड़कर और कोई स्थान नहीं है। आपके लिए तो सद्‌गुणोंका विकास करने और उनका प्रदर्शन करनेके लिए यही एक स्थान है। आप हिन्दुस्तानको उज्ज्वल बनायें, उसे वीर पुरुषों-की भूमि बनायें।

हिन्दुओंने संसारके इतिहासमें अपना क्या योगदान दिया है, उसके बारेमें मैं क्या कहूँ? हमारा इतिहास गौरवमय है। लेकिन यदि हम अपनी प्राचीन विरासतके आधार-पर लड़ेंगे तो हार जायेंगे। हमें अपने पूर्वजोंके समान बनकर दिखा देना चाहिए। हमारे ऋषि-मुनियोंने हमारे धर्मको बचानेके लिए अपना अंग-अंग कट जाने दिया।

१. इसके बाद गांधीजीने सभामें उपस्थित हिन्दुओंको सम्बोधित करते हुए कुछ शब्द कहे। इसकी रिपोर्ट भी **नवजीवन**के इसी अंकमें गांधीजीके यात्रा-विवरणके साथ छपी थी।

टॉड[1] हमें बताते हैं कि "यूरोपमें तो एक ही थर्मापोली है लेकिन भारतमें तो हर एक मुहल्लेमें थर्मापोली दिखाई देती है।" हिन्दुस्तानमें कितने वीर पुरुष हो गये हैं इसके लिए मैं आपके सामने इतिहासके पन्ने क्यों खोलूँ ? मैं तो आपसे इतना ही कहता हूँ कि आप अपने हृदयको टटोलें और देखें कि आज हममें ऐसी वीरता है या नहीं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-५-१९२१

१७. भाषण : सूरत जिलेमें[2]

२२ अप्रैल, १९२१

उन्होंने विभिन्न स्थानोंपर जो संदेश दिया उसमें चार बातें मुख्य थीं — ३० जून तक एक करोड़ रुपये इकट्ठा करना, कांग्रेसके सिद्धान्तोंसे सहमति रखनेवाले एक करोड़ व्यक्तियोंके हस्ताक्षर जमा करना, बीस लाख चरखे चालू कराना और जितनी जल्दी हो सके छुआछूतके अभिशापसे छुटकारा पाना। भारतकी स्वराज्य पानेकी योग्यता कितनी है इसकी कसौटी इन उद्देश्योंकी सफलताका परिमाण ही होगा। यदि हम इनमें आज सफलता प्राप्त कर लें तो स्वराज्य कल आया ही समझिए।....

महात्माजीने आगे सलाह देते हुए कहा : अब वकालत न छोड़नेवाले वकीलों और सरकारी स्कूल न छोड़नेवाले विद्यार्थियोंकी बात करना जरूरी नहीं रहा। सरकारकी तरह इन वकीलों और विद्यार्थियोंकी प्रतिष्ठा भी घट चुकी है। अब असहयोगियोंको चाहिए कि वे इस कार्यक्रमको पूरा करके दिखायें और इस प्रकार आन्दोलनके विरोधियों और उसमें भाग लेनेसे झिझकनेवालों को अपने पक्षमें करें। उन्होंने कहा कि यदि सूरत जिला और यहाँतक कि एक गाँव भी स्वराज्य हासिल करनेके एकमात्र उद्देश्यको सामने रखकर अपनी सारी शक्ति अन्य किसीकी राह देखे बिना इसी उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए लगा दे तो संसारकी कोई ताकत उसे स्वराज्य प्राप्त करनेसे नहीं रोक सकती। यह कार्यक्रम इसी भावनाके साथ कार्यान्वित किया जाना चाहिए। यदि कोई एक जिला या प्रान्त स्वराज्य हासिल कर ले तो शेष भारत भी दूसरे ही दिन स्वराज्य हासिल कर लेगा। उन्होंने आगे कहा कि स्वराज्य एक स्वाभाविक चीज है; वह कोई ऐसी कृत्रिम चीज नहीं है जिसे तैयार मालकी तरह इंग्लैंडसे मँगाया जा सके या कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे कोई आदमी किसी दूसरेको दे सके, चाहे वह आदमी मैं होऊँ या मुहम्मद अली या शौकत अली हों। उन्होंने अली भाइयोंके

१. कर्नल जेम्स टॉड (१७८२-१८३५); प्रसिद्ध इतिहासकार। **अनलस ऐंड ऐंटिक्विटीज ऑफ राजस्थानके** लेखक।

२. गांधीजीने १९ से २२ अप्रैल तक सूरत जिलेके मुख्य-मुख्य ताल्लुकों, नगरों और खास-खास गाँवोंका दौरा किया और वहाँ कई सभाओंमें भाषण दिये। यह उन्हीं भाषणोंका सारांशहै।

बारेमें कहा कि उन्होंने तो अपने लिए स्वराज्य हासिल कर ही लिया है। जरूरत गांधी-राज या मुहम्मद अली-[1]राज या शौकत अली-राजकी नहीं, स्वराज्यकी है; राम-राज्यकी है, जिसमें दलित-वर्गके अदनासे-अदना आदमीको और देशकी कमजोरसे-कमजोर औरतको समान स्वाधीनता और संरक्षण प्राप्त हो।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २६–४–१९२१

१८. कुछ शंकाएँ

पारसियोंके प्रति मैंने जो पत्र लिखा था, वह बहुत चर्चाका विषय बन गया है। भाई जी० के० नरिमनने खुला पत्र लिखा है जो अन्य समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हो चुका है। उम्मीद है कि इस चर्चामें दिलचस्पी लेनेवाले पाठकोंने उसे अवश्य पढ़ा होगा, इसीसे मैं उसे 'नवजीवन' में प्रकाशित नहीं कर रहा हूँ। भाई नरिमनने जो विचार व्यक्त किये हैं उनपर अच्छी तरहसे गौर किया जाना चाहिए और उस पत्रमें जो शंकाएँ उठाई गई हैं वे अन्य पारसी भाई-बहनोंके मनमें भी अवश्य उठती होंगी। इसलिए मैं उनका उत्तर देनेका प्रयत्न करूँगा।

पारसियोंके असहयोग आन्दोलनमें शामिल न होनेके भाई नरिमनने जो कारण दिये हैं वे निम्नलिखित हैं :

१. अभी कुछ-एक वर्षोंतक हमारा अंग्रेजोंके बिना गुजारा नहीं हो सकता।

२. असहयोग आन्दोलनमें पारसियोंके शामिल होनेसे पहले मुझे अधिकांश हिन्दुओं-को शामिल करनेका प्रयत्न करना चाहिए।

३. चरखा स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए मृगतृष्णाके समान है।

४. जहाँ पण्डित मदनमोहन मालवीयजी, शास्त्रियर[2], सर दिनशा वाछा[3] आदि असहयोगका विरोध करते हैं वहाँ सामान्य पारसी क्या कर सकते हैं?

५. मैं खिलाफतको नहीं समझता अथवा हिन्दू और मुस्लिम धर्मके बीच जो अनिवार्य विरोध-भाव है उसे छिपाना चाहता हूँ।

६. पंजाब सम्बन्धी मेरे विचार अतिशयोक्तिपूर्ण हैं। उदाहरणके तौरपर लाला हरकिशनलालका मामला लिया जा सकता है।

१. मौलाना मुहम्मद अली (१८७८–१९३१); वक्ता, पत्रकार और राजनीतिज्ञ; साप्ताहिक **कामरेड**के सम्पादक; शौकत अलीके छोटे भाई; १९२० में इंग्लैंड भेजे गये खिलाफत शिष्टमण्डलके नेता; १९२३ में कांग्रेस अध्यक्ष।

२. वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री (१८६९–१९४६); विद्वान्, राजनीतिज्ञ और वक्ता; भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के अध्यक्ष, १९१५-२७; वाइसरायकी विधान परिषद् और राज्य परिषद्के सदस्य; दक्षिण आफ्रिकामें भारत सरकारके एजेंट जनरल।

३. दिनशा ईदुलजी वाछा (१८४४–१९३६); प्रमुख भारतीय राजनीतिज्ञ, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष, १९०१।

७. अहिंसाका मेरा उपदेश हास्यास्पद है, वह सिर्फ जैन लोगोंको ही मान्य है और उसके अनुकूल आचरण करनेवाले को तो आत्महत्या ही कर लेनी चाहिए। इसके अतिरिक्त मेरे आन्दोलन, हड़ताल आदिसे हिंसा हो रही है।

८. मद्यपान-निषेध ठीक है लेकिन सबसे पहले अफीम आदि छुड़वानेका प्रयत्न करना चाहिए। इसके अलावा सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु तो गोवध-निषेध है। उसमें मैंने कितना योग दिया है?

पहली शंकाका उत्तर

कुछ समयतक अंग्रेजोंके बिना हमारा गुजारा सम्भव नहीं है, ऐसे विचार ही हमारी दुर्दशाके परिचायक हैं और इन विचारोंसे मुक्ति पाना ही स्वराज्य है। अंग्रेजों-के आनेसे पहले क्या हमारी हालत खराब थी? उनके जानेके बाद तुरन्त हम झगड़ने लगेंगे — ऐसा मानना हमारे लिए अपमानजनक है। एक बार अगर हम यह समझ भी लें कि यह भय सच्चा है तब भी हमें, आपसी झगड़ेका जोखिम उठाकर भी, अंग्रेजोंके प्रभुत्वसे मुक्ति प्राप्त कर लेनी चाहिए।

दूसरी शंकाका उत्तर

असहयोग आन्दोलनमें पारसियोंके शामिल होनेसे पहले मुझे अधिकांश हिन्दुओंको शामिल करनेका प्रयत्न करना चाहिए, यह कथन भी हमारी दुर्बलताका परिचायक है। पारसी और हिन्दू दोनों भारतीय हैं। दोनोंमें से जो समझदार हैं उनका हिन्दुस्तानके प्रति एक ही धर्म है। और फिर हिन्दू तो बहुत शामिल हो चुके हैं और जो शेष बचे हैं उन्हें शामिल करनेके प्रयत्न चालू हैं। असहयोगमें यदि एक भी हिन्दू शामिल न हो और पारसी उसके मर्मको हिन्दुओंसे पहले समझ लें तो हिन्दुओंकी राह देखे बिना उन्हें असहयोगमें शामिल हो जाना चाहिए। जो समझ गये हैं वे दूसरोंकी राह न देखें।

तीसरी शंकाका उत्तर

चरखेसे स्वराज्य प्राप्त करनेकी बात जिसे मृगतृष्णा जान पड़े तो मुझे यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि उसे असहयोग कतई रुचिकर प्रतीत नहीं होगा। हिन्दुस्तान-के लोग धीरे-धीरे इस बातको समझते जा रहे हैं और मुझे विश्वास है कि वे आगे और अच्छी तरह समझ जायेंगे। जिस धर्मको छोड़नेसे हम भिखारी बन गये उस धर्मको स्वीकार करनेसे ही हम मालदार बन सकते हैं, यह बात कमसे-कम मुझे तो मृगतृष्णा नहीं लगती। चरखा सहज धर्म है, यह बात अब दिन-ब-दिन अनुभवसे स्पष्ट होती जा रही है। दो हजार अथवा बारह सौ वर्ष पहलेकी स्थितिमें पहुँचनेकी बातको मैं पाप नहीं मानता। हमने भूलसे, जोर-जबरदस्तीसे अथवा कालके अधीन होकर अमुक अच्छी आदतोंको छोड़ दिया हो और उन्हें अगर हम पुनः ग्रहण करते हैं तो इसमें हम अपनी विवेकबुद्धिका उपयोग करते हैं।

चौथी शंकाका उत्तर

पण्डितजी और अन्य महान् नेता इस युद्धमें शामिल नहीं हैं यह सचमुच खेद-जनक बात है। लेकिन जब नेताओंके बीच मतभेद हो तब जनताको अपने विवेकसे

रास्ता चुन लेना चाहिए। अगर जनता ऐसा निश्चय करे कि सब नेताओंके एकमत होने तक कोई कार्य नहीं किया जाना चाहिए तो राष्ट्र कभी प्रगति नहीं कर सकता। स्वराज्यमें सबको अपनी-अपनी राह चुन लेनी होगी।

पाँचवीं शंकाका उत्तर

सम्भव है कि खिलाफतको मैं न समझता होऊँ तथापि मैंने उसका यथाशक्ति अध्ययन तो किया ही है। मुस्लिम और हिन्दू धर्मके बीच अनिवार्य विरोध है, यह मैं नहीं मानता। यदि यह बात है तो उसका अर्थ हुआ कि हिन्दू-मुसलमान हमेशा ही परस्पर एक-दूसरेके शत्रु रहेंगे। मनुष्य जातिको सदा-सर्वदा परस्पर एक-दूसरेका शत्रु ही बने रहना चाहिए ऐसा मैं नहीं मानता। खलीफाको धर्मकी खातिर दस वर्षमें एक बार अवश्य युद्ध करना चाहिए ऐसा नियम मैं नहीं जानता। क्रूसेडेसके[1] बाद धर्मकी खातिर कोई युद्ध हुआ, इस बातसे मैं परिचित नहीं हूँ। आफ्रिकामें मुझे ऐसी कोई बात दिखाई नहीं दी जिससे मुझे यह लगे कि जजीरत-उल-अरबपर मुसलमानों-का अधिकार नहीं होना चाहिए।

छठी शंकाका उत्तर

मैं जानता हूँ कि पंजाब सम्बन्धी मेरे विचार अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं हैं। लाला हरकिशनलाल अगर स्वयं सरकारके साथ मिल गये हैं तो मेरे लिए यह अब और भी जरूरी हो जाता है कि मैं असहयोग करूँ। लाला हरकिशन-जैसे व्यक्तियोंको भी पंजाब-के अपमानका इतना कम दर्द हो तो उसकी पूर्ति करनेके लिए भी असहयोग करना उचित जान पड़ता है।

सातवीं शंकाका उत्तर

अहिंसाका मेरा उपदेश हास्यास्पद लगता है। लेकिन उसीमें हिन्दू धर्म निहित है। उसका कम-ज्यादा पालन करना ही सब धर्मोंका मूल है। जिस धर्ममें जितना दया-भाव है उतना ही उसमें धर्म है। दयाकी कोई सीमा नहीं होती। सीमा बाँधना मेरा काम नहीं है। सब कोई अपनी-अपनी सीमा निर्धारित कर लेते हैं। वैष्णव धर्ममें अहिंसा प्रधान है। जैन-ग्रन्थोंमें उसपर विशेष रूपसे विचार किया गया है और वह मुझे मान्य भी है। लेकिन अहिंसापर जैन अथवा अन्य किसी धर्मका एकाधिकार नहीं है। अहिंसा सर्वव्यापक और अविचलित नियम है। जैन-दर्शनमें उपवास आदिके जो नियम दिये गये हैं उन्हें आत्मघातका पोषण करनेवाला कहना मेरे खयालसे जैन-पद्धतिको न समझना है। लेकिन अहिंसाके अन्तिम लक्षणकी चर्चा करनेकी यहाँ कोई जरूरत नहीं है। अगर वह मान्य न हो तो भी इस समय हमारा कर्त्तव्य शान्तिपूर्वक कष्टसहन करके ही युद्ध करना है, यह बात सबको स्वीकार करनी ही होगी — इसे स्वीकार किये बिना काम नहीं चलेगा।

भाई नरिमनने एक ओर अहिंसाके अन्तिम लक्षणकी हँसी उड़ाई है तथा दूसरी ओर इस आन्दोलनको हिंसात्मक माना है जिससे यह सूचित होता है कि उन्होंने

१. जेरुसलेमपर पुनः अधिकार करनेके लिए ईसाई-राष्ट्रों द्वारा किये गये धर्म-युद्ध।

अहिंसाके तत्त्वको पहचाना ही नहीं है। श्री नरिमन तो यह सुझाव देते जान पड़ते हैं कि असहयोगके उपदेशसे वैर बढ़ता है। हड़तालसे लोगोंको नुकसान पहुँचता है। ये सब हिंसाके ही रूप हैं। अहिंसाका मुद्दा यह है कि क्रूर व्यक्तिकी क्रूरताको जानते हुए भी उसके प्रति द्वेष न किया जाये। पंजाबके अत्याचार अथवा खिलाफतके सम्बन्धमें किये गये विश्वासघातको जनतासे छिपाकर जनताको द्वेषरहित नहीं बनाया जा सकता। लोगोंको हत्याकाण्डसे भिज्ञ रखते हुए भी उन्हें शान्त रखना मेरा फर्ज है। हड़ताल आदिसे कुछ-एक लोगोंको दुःख पहुँचे तो उसमें हिंसा नहीं है। अपना कर्त्तव्य करनेसे अगर दूसरोंको दुःख हो तो उसके लिए कर्त्तव्य करनेवाला उत्तरदायी नहीं है। अफीम-की दुकानपर न जानेसे अफीम विक्रेताको जो नुकसान होता है उसका दोष मुझे नहीं लगता। उससे होनेवाला दुःख तो अफीम विक्रेताके लिए भी कल्याणकारक है। असहयोगका अर्थ यह है कि पापीको पाप-कर्ममें मदद न दें। और जबतक वह पश्चात्ताप न करे तबतक उसकी मदद और दान ग्रहण न करें।

आठवीं शंकाका उत्तर

भाई नरिमन ऐसा मानते जान पड़ते हैं कि अफीम आदिका बहिष्कार सफल नहीं हो रहा है। सब व्यसनोंको छुड़वानेकी कोशिश हो रही है। चूँकि लोग शराब-की दुकानोंपर जानेके लिए ललचाते हैं इसलिए वहाँपर धरना दिया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त कितने ही पारसी भाई शराबका व्यापार करते हैं, इसलिए मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वे इस व्यापारको छोड़ दें। अफीमके व्यापारियोंसे भी मैं प्रार्थना कर रहा हूँ। लेकिन मेरा तर्क यह है कि अगर अफीमका व्यसन नहीं छूटता तो भी शराबके व्यसनको छोड़ा ज़ा सकता है।

भाई नरिमनने बहुतसे मुद्दे उठाये हैं। मेरी यह प्रार्थना है कि भले वे खिलाफत, पंजाब आदिके सम्बन्धमें मेरा विरोध करें लेकिन अगर स्वतन्त्र रूपसे मद्यनिषेधके बारेमें विचार करने पर उन्हें निषेध करना उचित लगे तो इस कार्यमें मदद करनेके लिए उन्हें पारसियोंको प्रेरित करना चाहिए। आत्मशुद्धिकी इस लड़ाईमें जो जिस रूपमें भाग लेना चाहें उस रूपमें भाग लेकर भी अगर वे हमारी मदद करें तो उससे राष्ट्रको उतना लाभ अवश्य होगा।

मैं मद्यनिषेध कर रहा हूँ। गोवध-निषेधके लिए मैं क्या कर रहा हूँ और उसमें मैंने कितना समय दिया है — भाई नरिमनका यह अन्तिम तीर है। और यह मर्म-स्थलपर जाकर लगा है। गोवधसे मेरे-जैसे कट्टर हिन्दूको कितना दर्द पहुँचता है, उसका भाई नरिमन भला क्या अन्दाज लगा सकते हैं? जबतक गोवध होता रहता है तबतक मुझे ऐसा लगता रहता है मानो मेरा ही वध किया जा रहा है। गायको छुड़वानेका मैं निरन्तर प्रयत्न करता रहता हूँ। यद्यपि मैंने इस समय इस्लामकी रक्षा करनेकी खातिर अपने प्राणोंको उत्सर्ग कर दिया है सो गायको बचानेके विचारसे ही किया है। मैं मुसलमानोंके साथ व्यापार नहीं करना चाहता। इससे मैं गोवधकी बात नहीं करता। मेरी प्रार्थना तो ईश्वरके प्रति है। मेरे हृदयकी बात तो वही जानता है। सज्जनताका बदला ईश्वर सज्जनतासे ही देता है। इस्लामकी रक्षा करते हुए

मैं गायकी रक्षा अवश्यमेव कर लूँगा, ऐसी मान्यतासे मैं खिलाफतके लिए प्राण उत्सर्ग करूँ तो मेरा विश्वास है कि उसमें गोरक्षाकी बात आ ही जाती है। जबतक मैं मुसलमानोंका प्रेम प्राप्त नहीं कर लेता तबतक अंग्रेजोंके हाथोंसे गायको नहीं बचा सकता। मैं भाई नरिमनसे यह अनुरोध करता हूँ कि वे इस बातको अच्छी तरह समझ लें कि मेरे सब प्रयत्न गायको बचानेके लिए ही हैं। जो गायको बचानेके लिए प्राणोंकी बलि देनेके लिए तैयार नहीं है, वह सच्चे अर्थोंमें हिन्दू नहीं है। जबतक हिन्दू, मुसलमान और ईसाइयोंकी ओरसे शुद्ध रूपसे हिन्दुस्तानकी रक्षा नहीं की जाती तबतक हिन्दू नाममात्रके हिन्दू हैं। मेरा अहिंसा धर्म मुझे यही सिखाता है कि मैं गायको बचानेकी खातिर मुसलमान अथवा ईसाईकी हत्या न करूँ बल्कि उसकी रक्षा-के लिए मैं स्वयं अपनी बलि दे दूँ। ईश्वरके दरबारमें शुद्ध बलिदान ही काम आता है। मैं शुद्ध बननेका प्रयत्न कर रहा हूँ। अन्य हिन्दुओं और हिन्दुस्तानकी सब सन्तानों-को मैं इस शुद्धिमें शामिल होनेके लिए कह रहा हूँ। भाई नरिमनको भी गोवधसे दुःख होता है। उन्हें मैं इस आत्मशुद्धिमें शामिल होनेके लिए निमन्त्रित करता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४–४–१९२१

१९. गुजरातके अनुभव

मुझे इतने ज्यादा अनुभव होते रहते हैं कि उन सबको लिपिबद्ध करनेका समय ही नहीं मिल पाता। इससे मुझे अनेक अनुभवोंको छोड़ देना पड़ता है। कार्य करने-वालोंका यह लोभ कि थोड़े ही समयमें मेरा जितना लाभ उठाया जा सकता है, उतना उठा लें, मुझे शान्तिसे रहने नहीं देता और न ही मैं एकान्तमें कुछ लिख पाता हूँ। उनके लोभकी कोई हद नहीं है और मुझे भी सेवाका लोभ बना रहता है। जितना बन सके उतना कर लिया जाये, जितना समझाया जा सके उतना समझा दूँ; इसी कारण मैं अपने समस्त अनुभवोंको पाठकोंके सामने प्रस्तुत नहीं कर पाता।

आनन्द, रास, बोरसद, हालोल, कालोल, बेजलपुर, गोधरा, सूरत, ओरपाड और रांदेर — अबतक मैं इतने स्थानोंपर हो आया हूँ। प्रत्येक स्थानपर लोगोंके उत्साह-की सीमा नहीं थी। सभी स्थानोंपर स्त्री-पुरुष बड़ी संख्यामें उपस्थित हुए। सभी जगह मैंने चरखेकी प्रवृत्तिको जोरोंपर पाया और लगभग प्रत्येक स्थानपर लोगोंने तिलक स्वराज्य-कोषमें चन्दा दिया।

एक विधवाका दान

आनन्दमें एक विधवा बहनके पास पच्चीस-एक तोले सोनेकी छड़ थी, उसने वही दानमें दे दी। यह दान एक विधवा बहनके लिए बहुत ज्यादा है। मैंने उस महिलाका नाम पूछा। उसने नाम बतानेसे इनकार किया। धर्मके लिए पैसा देनेमें नाम-धाम कैसा? ज्यादा पूछनेकी मेरी हिम्मत न हुई।

सशर्त दान

गोधरामें श्रीमती कोठावाला अपने स्वभावके अनुसार सभामें आईं। उन्होंने मुझसे कहा "आपका सब काम मुझे पसन्द आता है लेकिन आपका असहयोग मुझे पसन्द नहीं। आप लॉर्ड रीडिंगको कमसे-कम एक अवसर अवश्य दें।"

मैंने कहा: "मैं निस्सन्देह सबको अवसर देना चाहता हूँ। अगर वे न्याय करते हैं तो इसका अर्थ [हमारी ओरसे] सहयोग ही होगा। आप ही उन्हें समझायें कि वे पश्चात्ताप करें, अपने किये हुए गुनाहोंकी भारतसे माफी माँगें और न्याय करें। तब कोई झगड़ा ही न रहेगा।"

"आप मुझसे कहें कि आप उन्हें अवसर देंगे। आप उन्हें लिखेंगे कि यदि आप न्याय प्रदान करेंगे तो हम असहयोगको छोड़ देंगे?"

मैंने कहा: "समय मिलने पर मैं अवश्य लिखूँगा। लेकिन लॉर्ड रीडिंग इतना तो जानते ही हैं।"

इस भली बहनने ऐसी शर्तके साथ पचास रुपये दिये। अगर सब बहनें ऐसी ही शर्तके साथ रुपया दें तो भी मेरा खयाल है कि जल्दी ही एक करोड़ रुपया इकट्ठा हो जायेगा।

व्यवस्था

मुझे सब स्थानोंपर व्यवस्थामें सुधार दिखाई दिया; लेकिन सबसे ज्यादा व्यवस्था तो मुझे सूरतमें दिखाई पड़ी। मैं जहाँ-जहाँ जाता था वहाँ-वहाँ लोगोंको पहलेसे ही अच्छी तरहसे समझा दिया जाता था और इसी कारण कम शोरगुल और कम हड़-बड़ीमें काम हो जाता था। लोगोंसे पहलेसे कह रखनेके कारण पैसे भी आसानीसे इकट्ठे हो जाते थे। सूरतकी बहनोंने हीरेकी अँगूठियाँ भी दानमें दीं।

रांदेरका अनुभव

सूरतमें नगरपालिकाने मुझे मानपत्र भेंट किया जबकि मुझे मालूम हुआ कि रांदेर-की नगरपालिकाने मानपत्र देनेसे इनकार कर दिया। तिसपर भी वहाँके हिन्दू और मुस्लिम नवयुवक मुझे मानपत्र देनेके लिए आगे आये। एक मानपत्र नागरिकोंकी ओरसे तथा दूसरा खिलाफत [समिति] की ओरसे दिया गया। रास्ते भी सजाये हुए थे। तथापि मैंने देखा कि वहाँके नेता इन सबसे दूर ही रहे। उन्होंने सिर्फ उतना ही उत्साह दिखाया जितना कि बच्चे दिखाते हैं। मैंने बहुत प्रयत्न किया लेकिन रांदेरमें इस स्थितिमें मैं बहुत कम पैसे इकट्ठे कर सका। एक मुसलमान भाईने हमारे हाथमें पाँच रुपयेका नोट दिया, एक बहनने पाँच रुपये दिये और हर रोज दो घंटे चरखा चलाने तथा विदेशी वस्त्र न पहननेकी प्रतिज्ञा की। रांदेर जैसा रूखा अनुभव तो मुझे अपनी सारी यात्राके दौरान कहीं नहीं हुआ।

युवकोंको मेरी सलाह है कि वे इससे हतोत्साहित न हों। उन्हें मानपत्र देनेका प्रयत्न छोड़ देना चाहिए और चन्दा इकट्ठा करनेके लिए अवश्य जुट जाना चाहिए। अच्छे, मेहनती और नम्र नवयुवक बहुत-कुछ कर सकेंगे। मध्यम-वर्ग उन्हें पैसा देगा।

श्रद्धालुके मनमें श्रद्धा उपजेगी। नवयुवक समुदायके मुसलमान और हिन्दू एकमत होकर और एक दिलसे बहुत ज्यादा काम कर रहे हैं, हमारे लिए आशाकी यह बहुत बड़ी निशानी है।

दो दोष

मैं देखता हूँ कि अभी लोगोंमें स्वदेशीके बारेमें पूरी समझ अथवा जागृति नहीं है। अभी साज-सज्जामें विदेशी वस्त्र और विदेशी कागजोंका इस्तेमाल जारी है। हमें यदि विदेशी वस्त्रका बहिष्कार इसी वर्ष करना है तो हमें प्रत्येक विषयपर विचार कर लेना होगा। सूक्ष्मसे-सूक्ष्म बातोंपर भी हमें ध्यान देना होगा। धर्म समझकर ही जब विदेशी वस्त्रको तिलांजलि दी जायेगी तभी बड़ा होनेपर भी इस कार्यको हम आसानीसे कर सकेंगे। इसमें थोड़ी भी गुंजाइश नहीं माननी चाहिए। समझदार लोगोंके लिए तो हमारी मिलका कपड़ा भी विदेशी ही है। हमेशा देशी मिल और विदेशी मिलके मालको नहीं पहचाना जा सकता। स्वदेशीका सन्देश जिनतक पहुँचा ही नहीं है मिलका माल उन गरीबोंके लिए आवश्यक ही है। सच्ची स्वदेशी वही है जिसकी सूईसे लेकर समस्त प्रक्रियाएँ उसी गाँव अथवा शहरमें हुई हों। जिस शहरमें यह चीज होगी उस शहरकी आबादी बढ़ेगी और वह शहर अपनी स्वतन्त्रताको खुद प्राप्त कर लेगा। इस स्थितिको लानेके लिए इस बातकी जरूरत है कि लोग खूब सोच-समझकर विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करें।

दूसरा दोष है लोगोंका फूलोंके हार भेंट करनेका शौक। यह अभी तक नहीं गया है। फूलोंके हार देनेमें मैं कोई लाभ नहीं देखता। असंख्य फूल व्यर्थ चले जाते हैं। अभी हमारे पास इस तरह फेंकनेके लिए पैसे नहीं हैं। हार तो सिर्फ सूतके ही होते हैं। सूतके अनेक तरहके कला कौशलयुक्त हार बनाये जा सकते हैं। सूतको अनेक तरहसे गूँथा जा सकता है। सूतकी पतली-पतली लड़ियाँ बनाई जा सकती हैं। सिर्फ इसी तरह महीन सूत कातकर उसकी लड़ीका हार बनाकर देनेमें विचार और प्रेमका भाव निहित है। जिसे सूतका हार मिले वह उसका उपयोग कर सकता है। ऐसा समय आ रहा है कि जब सूतके हार गरीबोंको दिये जायेंगे और वे उसका उपयोग करेंगे। पुष्प-मालाका कोई उपयोग नहीं कर सकता और फूलोंको व्यर्थ बखेरना तो बिलकुल ही नाहक कहा जायेगा।

काम, काम और काम

यदि हम इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हों तो हमें काममें ही लगे रहना चाहिए। सभाएँ, जलूस और इस तरहकी अन्य चीजें, जिस हदतक लोगोंमें जागृति लानेकी बात है उस हदतक तो ठीक है लेकिन जहाँ लोगोंमें जागृति आ गई है वहाँ तो चुपचाप काम ही करना है। हमेशा चन्दा इकट्ठा करना, हमेशा सूत कत-वाना, नये चरखे तैयार करवाना, जिस घरमें चरखा न हो वहाँ चरखा दाखिल करना, खादी इकट्ठी करना, जिन्होंने खादीको इस्तेमाल करना शुरू न किया हो उनसे उसे इस्तेमाल करनेके लिए अनुरोध करना तथा मद्यनिषेधके कार्यमें उत्साही व्यक्तियोंको

लगाना — सभीको स्वराज्यके ये सब कार्य करने चाहिए तथा जनताको भी इन्हें करनेके लिए प्रेरित करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४–४–१९२१

२०. टिप्पणियाँ

'नवजीवन' की भाषा

एक पारसी बहन, एक पारसी भाई और अन्य लोगोंने 'नवजीवन' की भाषाकी आलोचना की है। हम 'नवजीवन' की भाषाको सरल रखनेकी बराबर कोशिश करते रहते हैं। मेरी मान्यता है कि 'नवजीवन' का कार्यक्षेत्र भाषा सुधारने अथवा उसमें कठिन शब्द दाखिल करनेका नहीं वरन् सरलसे-सरल और जिसे ज्यादासे-ज्यादा लोग समझ सकें ऐसी भाषामें विचारोंका प्रचार करनेका है। ऐसा होनेके बावजूद लेखक इस उद्देश्यको ध्यानमें रखकर नहीं लिखते। सबको अपने-अपने शब्दोंको प्रयुक्त करनेकी आदत पड़ी हुई है। फलतः 'नवजीवन' की भाषा हमेशा ही सरल नहीं रह पाती, यह भी मैं देखता हूँ। मैं पाठकोंको इतना विश्वास अवश्य दिलाना चाहता हूँ कि जान-बूझकर भाषाको जटिल बनानेका प्रयत्न नहीं किया जाता है। हमारा उद्देश्य तो हमेशा भाषाको सरल बनाये रखनेका ही रहेगा। आलोचकोंने आलोचना लिख भेजी — इसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। संस्कृत शब्दोंका कम इस्तेमाल किया जाये, ऐसा प्रयत्न मैं अवश्य करूँगा। मुझे मालूम है कि अनेक मुसलमान और पारसी भाई 'नवजीवन' पढ़ते हैं। ऐसी अनेक बहनें भी 'नवजीवन' पढ़ती हैं जो कठिन शब्द नहीं समझ सकतीं। उनके लिए 'नवजीवन' की भाषाको सरल बनाना मैं अपना धर्म समझता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४–४–१९२१

२१. गुजरातियोंसे

[२५ अप्रैल, १९२१][१]

मैं महान् सिन्धु नदीके तटपर, सुबह-सुबह एक वृक्षके तले एकान्तमें बैठा हुआ हूँ। वृक्षोंपर पक्षी गुंजन कर रहे हैं। दो-तीन स्वयंसेवकोंके अतिरिक्त और कोई नजर नहीं आता। एक ओर दूरसे कोटरीका पुल दिखाई देता है तो दूसरी ओर पानीके अलावा और कुछ दिखाई नहीं पड़ता। सामनेके तटपर मैं वृक्ष और कुछ-एक घर देख पा रहा हूँ। नदीमें दो-चार छोटी-छोटी नावें बिना किसी कामके खड़ी हुई हैं। मन्द समीर बह रहा है और समीर बहनेके कारण नदीका जल अठखेलियाँ करता हुआ मन्द मधुर स्वरमें गा रहा है। जल और रेत सूर्यकी किरणोंसे मिलकर स्वर्ण समान दीप्त हो रहे हैं। सिन्धी भाइयोंने मुझे अपने प्रेमपाशमें बाँध रखा है।

आज सोमवारका दिन है इसलिए मेरे लिए एकान्त और शीतल स्थान ढूँढ़कर उन्होंने मुझे यहाँ ला बैठाया है। जब कोई मुझसे यह कहता है कि मैंने बहुत त्याग किया है तब मुझे हँसी आती है। जिस सुख, शान्ति और आनन्दका मैं अनुभव कर रहा हूँ वे सब कदाचित् ही किसी चक्रवर्तीको मिलते हों। मेरी मान्यता है कि चक्रवर्तीको ऐसी शान्ति मिलनी असम्भव है। उसे तो राजपाटका बोझ ही कुचल डालता है। मुझे इस बातका पूरा-पूरा अनुभव हो रहा है कि मन ही बन्धन और मोक्षका कारण है।

गुजरातमें मैंने अभी-अभी जिस प्रेमका अनुभव किया है, इस प्रेमके साथ उसकी तुलना करता हूँ तो मुझे दोनों एक जैसे लगते हैं। जहाँ जाता हूँ वहाँ लगता है जैसे गुजरातका प्रेम ही यहाँ भी उमड़ रहा है। चूँकि मैं सिन्धको भी अपना ही देश मान सकता हूँ, सिन्धियोंके सुख-दुःखमें भी उतना ही भाग ले सकता हूँ। सिन्धकी बलि देकर मैं स्वप्नमें भी गुजरातका लाभ नहीं चाहता। लेकिन गुजरातके दोषोंको सिन्ध ग्रहण न करे, मेरा देशप्रेम और मेरा धर्म इसके लिए मुझे सजग रहनेके लिए कहता है। जिस तरह मैं यह बात कतई पसन्द नहीं कर सकता कि गुजरातके कारण सिन्धको नुकसान पहुँचे उसी तरह विदेशके बारेमें भी मेरे मनमें वही भाव रहता है। विदेशको नुकसान पहुँचाकर मैं हिन्दुस्तानको लाभ पहुँचानेकी भूल कदापि न करूँ, इसी भावनाको मैं सच्चा स्वदेशाभिमान मानता हूँ।

लेकिन मेरा स्वदेशाभिमान जितना विशाल है उतना ही संकुचित भी है। सारी दुनियाका कल्याण करनेमें मुझे कोई रस नहीं आता। मुझे तो अपने देशका कल्याण करनेमें ही रस आता है। देशके कल्याणमें मैं जगत्का कल्याण देखता हूँ। मेरा वर्णाश्रम धर्म मुझे सिखाता है कि यदि मैं यूरोपमें उत्पन्न न होकर भारतमें उत्पन्न हुआ

१. गांधीजीने २४ अप्रैलसे ३० अप्रैल तक सिन्धका दौरा किया था। ऐसा प्रतीत होता है कि यह लेख सोमवार २५ अप्रैलको ही लिखा गया होगा।

हूँ तो उसका कुछ अभिप्राय होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति कर्जदारके रूपमें जन्म लेता है। उसे अगर किसीसे कुछ लेना होता है तो इसका उसे भानतक नहीं होता, होना भी नहीं चाहिए। जो व्यापारी अपने उधार खातेकी जाँच कर लेता है उसे अपने जमा खातेकी फिक्र ही नहीं करनी पड़ती। जो अपने कर्त्तव्यको निभाना सीख लेता है उसे उसके अधिकार स्वयंमेव मिल जाते हैं।

मेरा स्वदेशाभिमान, देशके प्रति मेरा क्या कर्त्तव्य है, उसी ओर मेरा ध्यान खींचता है। मेरा गुजराती होनेका अभिमान मुझे बताता है कि भारतके प्रति एक गुजरातीका क्या कर्त्तव्य है। यदि यह विचार सच्चा हो, यदि गुजराती भाई-बहन इसे स्वीकार करते हों तो गुजराती निस्सन्देह अपने कर्त्तव्यसे अच्छी तरह परिचित हैं।

गुजरात अकेला ही इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त कर सकता है। प्रत्येक व्यक्ति अपना-अपना स्वराज्य प्राप्त कर सकता है। गुजरातका प्रत्येक गाँव अपना स्वराज्य प्राप्त कर सकता है। और सभी अपना-अपना स्वराज्य प्राप्त करके हिन्द स्वराज्य प्राप्त करनेमें अपना-अपना योग दे सकते हैं।

जो अपने हिस्से-भरका योग देकर चुपचाप बैठा रहेगा वह कंजूस माना जायेगा। स्वराज्यकी शर्त यह है कि सब कोई अपने हिस्सेका योग दें, इतना ही पर्याप्त नहीं बल्कि सब लोग उनसे जितना बन पड़े उतना योग दें। जब सब लोग सबका बोझ उठानेके लिए तैयार हो जायेंगे तभी सबका बोझ समान रूपसे बँटाया जा सकेगा, क्योंकि सबकी शक्ति एक समान नहीं होती। ऐसी स्थितिमें अगर सभी अपने-अपने हिस्से-भरका कार्य करनेके बाद बैठ जायें तो गरीब कुचल जायेंगे; अमीर उन्हें रौंद डालेंगे।

हिन्दुस्तानकी आबादी बत्तीस करोड़की है। एक करोड़ रुपया देने — इकट्ठा करने — का मतलब प्रति व्यक्तिके हिसाबसे दो पैसे इकट्ठा करना हुआ। यदि करोड़पति दो पैसे देकर ही बैठ रहें तो कंगालकी ओरसे, बालकोंकी ओरसे, लूले-लँगड़ोंकी ओरसे तथा भिखमंगोंकी ओरसे कौन देगा? सीधा हिसाब ही यह है कि करोड़पतिको ज्यादा बोझ उठानेकी वृत्ति रखनी चाहिए। जिसे भगवान्‌ने बहुत दिया है वह बहुत दे।

इस तरहसे हिसाब किये जानेपर गुजरातको अपना हिसाब लगाना चाहिए। गुजरात अगर दस लाख रुपया इकट्ठा करे तो वह कोई ज्यादा नहीं कहा जायेगा। बाहर रहनेवाले गुजरातियोंको मैं इनमें नहीं गिनता। बंगालमें रहनेवाले गुजराती भले ही गुजरातको धन भेजें, लेकिन उन्हें बंगालमें अपना हिस्सा देना ही चाहिए। मद्रासमें बसनेवाले गुजरातियोंको मद्रासकी सेवा करनी ही चाहिए। जहाँसे गुजराती धन प्राप्त करें वहाँ वे अपनी कमाईका एक अच्छा भाग खर्च करें, यह उनको और हिन्दुस्तानकी सभ्यताको शोभान्वित करनेवाली बात है। इस तरह विचार करके ही मैं गुजरातके लिए दस लाख रुपयेकी रकम निर्धारित करता हूँ।

इस गिनतीमें मैंने बम्बईको भी अलग रखा है। बम्बईमें रहनेवाले गुजराती बम्बईमें भारी दान दे ही रहे हैं। बम्बईसे मुझे कितनी आशाएँ हैं इसके बारेमें मैं बादमें लिखनेकी सोचता हूँ। अभी तो गुजरातमें बसनेवाले गुजरातियोंसे ही दस लाख रुपये मिलनेकी आशा रखता हूँ।

इतनी अथवा इससे अधिक अथवा कम रकम इकट्ठी करनेका व्यावहारिक कदम यह है कि प्रत्येक जिले और प्रत्येक देशी राज्यके कार्यकर्त्ता यथाशक्ति चन्दा इकट्ठा करनेका काम उठा लें।

यही बात कांग्रेसकी सदस्यताके बारेमें लागू होती है। जहाँ लोगोंमें अधिक जागृति है वहाँ अधिक सदस्य बननेकी उम्मीद होनी चाहिए। सूरत और नडियाद-जैसे शहर, जहाँ बहुत ज्यादा जागृति आ गई है, अगर अपने हिस्से-भरके सदस्य देकर सन्तुष्ट रहेंगे तो हम हाथ आई हुई बाजीको खो बैठेंगे। जिन गाँवोंमें भारी जागृति आ गई है वहाँके लिए तो मैं जरूर यह उम्मीद करता हूँ कि वहाँके २१ वर्षसे ऊपरके हर स्त्री, पुरुष, ढेढ़, भंगी, हिन्दू और मुसलमानको कांग्रेसका सदस्य बनना चाहिए। यदि किसी गरीब व्यक्तिके पास चार आने न हों तो उसके पड़ोसीको चाहिए कि वह उसे उतने पैसे देकर उसका नाम दर्ज करवाये।

जो बात सदस्यता और चन्देपर लागू होती है वही बात चरखेपर भी लागू होती है। जहाँके लोग अधिक कार्यदक्ष हैं वहाँ अधिक चरखोंको अवश्य दाखिल किया जाना चाहिए। इस तरह परस्पर एक-दूसरेकी सहायता करके ही हम जून मास तक अपनी छोटी, सरल और जो सबकी समझमें आ जाये, ऐसी योजनाको अमलमें ला सकेंगे।

यद्यपि योजना आसान है तथापि अगर हम आलस्यमें पड़े रहेंगे तो उसे कदापि पूरा नहीं कर सकेंगे। जब सब कार्यकर्त्ता ईमानदारीसे निरन्तर यथाशक्ति काम करेंगे तभी हमारी योजना सफल होगी। यह योजना हमारी परीक्षा है, कसौटी है। स्वराज्य-की योग्यता प्राप्त करनेकी दिशामें यह प्राथमिक शिक्षा है। लेकिन यह शिक्षा हमें इतनी दूर तक पहुँचा देगी कि अगर हम इस परीक्षामें उत्तीर्ण हो जायें तो बाकीकी शिक्षाके लिए तीन महीनोंकी भी कदाचित् ही जरूरत होगी, क्योंकि यह परीक्षा हमें आत्मविश्वास, हिम्मत और बल देनेवाली है।

मुझे उम्मीद है कि गुजरात अपने धर्मका पूरा-पूरा पालन करेगा।

गुजरातकी बहनोंमें जो जागृति आ गई है उससे मैं चकित हो उठा हूँ। उनके हाथमें बहुत शक्ति है। स्वराज्य प्राप्त करनेकी योजनामें बहनोंका भाग पुरुषों जितना ही है बल्कि उनसे ज्यादा ही है। मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि बहनें अपना योगदान देकर अपनी, गुजरातकी और भारतकी कीर्ति और धर्मको गौरवान्वित करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १–५–१९२१

२२. पत्र : सी० एफ० एण्ड्रयूजको

हैदराबाद (सिन्ध)
२५ अप्रैल, [१९२१]

प्रिय चार्ली,[१]

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे प्रश्नका उत्तर मैंने 'यंग इंडिया' में दिया है। यदि उसमें कोई कसर रह गई होगी तो तुम लिखोगे ही। इस प्रश्नके बारेमें मेरे कुछ अपने निश्चित विचार हैं। हालके अनुभवोंसे मैं अपने इन विचारों पर और भी दृढ़ हो गया हूँ।

पति और पत्नीके बीच वासनारहित सम्बन्धकी आवश्यकताके बारेमें मैं प्रचार नहीं करता। इसलिए कि वह सम्बन्ध इतना पवित्र है कि उसे उपदेशोंका विषय नहीं बनाया जा सकता। परन्तु मेरे अपने लिए वह एक पवित्र कामना-भर नहीं है। भारतकी आज जो दुरवस्था है, उसमें यदि मुझे शिष्ट और स्वैच्छिक ढंगसे प्रजनन रोकनेका कोई तरीका मिल जाये तो मैं उसे तत्काल अपना लूँ। लेकिन मैं जानता हूँ कि ऐसा कोई तरीका सम्भव ही नहीं है। मैं तुमको बताना चाहता हूँ कि उस लेखका काफी प्रभाव पड़ा है। मैं ऐसे कई युवकोंको जानता हूँ जो संयमका पालन कर रहे हैं और इससे उनको और उनकी पत्नियों दोनों ही को लाभ हो रहा है। मुझे आश्चर्य इस बातपर है कि तुम इतनी सीधी-सी चीज क्यों नहीं देख पा रहे हो। परन्तु यह बहसका विषय नहीं है। यह एक मूलभूत सत्य है जिसे तुम यथा-समय स्वयं पा लोगे।

आशा है तुम्हारा स्वास्थ्य अब पहलेसे अच्छा है।

तुम्हारा,
मोहन

[पुनश्च :]

मैंने तुमको बतलाया है या नहीं कि लालचन्द बेईमान ही नहीं निकला, वह सिद्धान्तहीन और निर्लज्ज भी साबित हुआ है। साफ दिखता है कि उसने गबन किया है। इसपर पर्दा डालनेके लिए उसने और अधिक झूठका सहारा लिया है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ९६५) की फोटो-नकलसे।

१. चार्ल्स फ्रेयर एण्ड्रयूज (१८७१-१९४०); अंग्रेज मिशनरी, लेखक व शिक्षा-शास्त्री; जिन्होंने विश्वभारती विश्वविद्यालयके कार्यमें बहुत दिलचस्पी ली। कई वर्षोंतक भारतीयोंके साथ काम किया।

२३. सन्देश: 'बॉम्बे क्रॉनिकल' को[1]

मैं श्री हॉर्निमैनके बारेमें कह सकता हूँ कि मैंने उन्हें जितना अधिक जाना, उनके प्रति मेरा प्रेम उतना ही अधिक बढ़ता गया। श्री हॉर्निमैनने जितनी निर्भयता और दृढ़ विश्वासके साथ पत्रकारिता की और अपनी प्रतिभाके जरिये भारतकी सेवा की उतनी इने-गिने अंग्रेजोंने ही की है। और यह मैं बावजूद इस बातके कह सकता हूँ कि मैंने प्रायः उनकी सख्त भाषा और खरी-खोटी सुनानेकी आदतके बारेमें, जिसमें उन्हें महारत हासिल थी, नापसन्दगी जाहिर की है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-४-१९२१

२४. टिप्पणियाँ

मूलशीमें सत्याग्रह

मेरी सहानुभूति मूलशीके[2] गरीब लोगोंके साथ है। मैं चाहता हूँ टाटा-जैसे बड़े घरानेके लोग अपने कानूनी अधिकारोंपर अड़नेकी बजाय खुद इन लोगोंके साथ बात-चीत करें और इनसे सलाह-मशविरा करके इनके लिए जो-कुछ कर सकते हों करें। भू-अधिग्रहण अधिनियमोंका मुझे भी थोड़ा अनुभव है। मैं इस तरहके लगभग ८० मुकदमोंकी पैरवी कर चुका हूँ। किन्तु वहाँ भूमिके अधिग्रहणका कारण औद्योगिक विकास नहीं बल्कि गन्दगी था। मैं जानता हूँ कि जिन लोगोंकी जमीनें ली गईं उनको जितना चाहिए था ठीक उतना ही, समुचित मुआवजा नहीं मिला है। यदि एक भी गरीब आदमीको कुछ भी नुकसान उठाना पड़े तो फिर उस टाटा-योजनाका क्या मूल्य रह जायेगा जो भारतके लिए इतनी कल्याणकारी बतलाई जाती है? कहने-को तो यह भी कहा जा सकता है कि अगर अध-पेट रहनेवाले तीन करोड़ स्त्री-पुरुषों और लाखों भूखे-नंगे इन्सानोंको गोली मार दी जाये और उनकी लाशोंको खादके काममें लिया जाये या उनकी हड्डियोंसे चाकुओंके बेंट बना डाले जायें तो रोग और निर्धनताकी समस्या आसानीसे हल की जा सकती है और बाकी बचे हुए लोग बड़े

१. यह सन्देश **बॉम्बे क्रॉनिकल** के सम्पादक बेंजामिन गाइ हॉर्निमैनके देश-निकालेकी दूसरी वार्षिकीके अवसरपर प्रकाशित किया गया था। श्री हॉर्निमैनको २६ अप्रैल, १९१९ को बिना मुकदमा चलाये निर्वासित किया गया था। देखिए खण्ड १५, पृष्ठ २६३-६४।

२. मूलशी गांवके किसानोंने अपनी शिकायतें दूर न होनेपर सत्याग्रह करनेकी धमकी दी थी। देखिए "भाषण: महाराष्ट्र प्रान्तीय सम्मेलन, बसईमें", ७-५-१९२१।

ऐश-आरामसे जिन्दगी बसर कर सकते हैं। इससे समस्या हल हो सकती है, फिर भी कोई सिरफिरा ही होगा जो ऐसा सुझाव पेश करेगा। लोगोंको गोली मार देनेके बजाय उनकी जमीनोंसे उनको जबरन बेदखल कर देना भी लगभग वैसा ही काम है, क्योंकि इन बेशकीमत जमीनोंके साथ उनकी भावनायें, उनके कोमलतम उद्‌गार और उनकी कल्पना अर्थात् वे सभी बातें जो जीवनको जीने योग्य बनाती हैं, जुड़ी हुई हैं। एक बड़े घरानेकी विरासत पानेवाले टाटाओंसे मुझे यही कहना है कि वे अपने कमजोर और असहाय देशवासियोंकी इच्छाओंको सिर-माथे लेकर ही भारतके वास्तविक कल्याणमें अभिवृद्धि कर सकते हैं। सत्याग्रहियोंका कर्त्तव्य तो सोनेके अक्षरोंमें लिखा हुआ होता है। सत्याग्रह किसी भी अन्यायपूर्ण उद्देश्यके लिए नहीं किया जा सकता। न्यायपूर्ण उद्देश्यके लिए किया जानेवाला सत्याग्रह भी, यदि उसे लेकर चलनेवाले लोग कृत-संकल्प न हों और कष्टसहन करते हुए आखिरी दमतक लड़नेके लिए तैयार न हों, तो एक दम्भ ही है। हिंसाका किंचित् प्रयोग भी न्यायपूर्ण उद्देश्यको विफल बना देता है। मन, वचन या कर्म — किसी भी रूपमें हिंसाका प्रयोग सत्याग्रहसे मेल नहीं खाता। यदि उद्देश्य न्यायपूर्ण हो, कष्टसहनकी अपरिमित क्षमता हो और हिंसासे बचा जाये तो विजय निश्चित है।

अस्पृश्यताका क्रमशः लोप

गुजरातके दौरेमें मुझे जो-जो सुखद अनुभव हुए उनमें सबसे ज्यादा सुखद था हिन्दुओं द्वारा दलित-वर्गके लोगोंका स्वागत। सभी स्थानोंपर श्रोताओंने इस विषयसे सम्बन्धित मेरी उक्तियोंको बिना किसी नाराजगीके सुना। कलोल में मुझे 'अछूतों' की एक सभामें भाषण देना था। मैंने महाजनोंसे अनुरोध किया कि आम सभाके लिए बनाये गये पण्डालमें ही उनके सामने भाषण करने दिया जाये। वे थोड़ी-बहुत हिचकिचाहटके साथ सहमत हो गये। मुझे उन 'बहिष्कृत' लोगोंको उनके मकानोंसे लेने जाना था। उनके मकान पण्डालसे इतनी दूरीपर थे कि वे आ नहीं सकते थे। इसीलिए मैंने अस्पतालके निकट ही उनके समक्ष भाषण किया। मुझे यह देखकर बड़ी खुशी हुई कि मेरे साथ जानेवाले कई सनातनी हिन्दू मेरे चारों ओर जमा होने-वाले अछूत स्त्री-पुरुषोंके साथ बिना-किसी हिचकके मिलजुल रहे थे। पर मुझे सबसे ज्यादा सन्तोष तो नवसारीके पासके एक बड़े गाँव सीसोदरामें हुआ। वहाँ मेरे भाषण-के दौरान सभा-स्थलपर बड़ी दूरपर खड़े कई ढेढ़ोंको गाँवके बड़े-बड़े लोगोंके लिए सुरक्षित स्थानपर जान-बूझकर बैठा दिया गया था। और उनको वहाँ बैठानेपर किसी भी स्त्री-पुरुषने कोई आपत्ति नहीं की। गाँवके लगभग सभी लोग सभामें मौजूद थे। आसपासके गाँवोंके लोग भी वहाँ आ गये थे। इस प्रकार अछूत-वर्गके कई सौ लोगोंको सोच-समझकर, एक पवित्र भावनाके साथ विशाल सभाके बीचों-बीच इतने महत्त्वपूर्ण स्थानपर बैठाना निश्चय ही इस आन्दोलनकी धार्मिकताका लक्षण है। श्री वल्लभभाई पटेलने[१] इस बातको भी पक्का बनानेके लिए श्रोताओंसे कहा कि जो लोग उन कार्यों-

१. (१८७५–१९५०); उस समय गुजरातके एक प्रमुख कांग्रेसी नेता। बादमें स्वतन्त्र भारतके प्रथम उप-प्रधान मंत्री।

का समर्थन करते हों वे अपने हाथ उठा दें और इसपर अनगिनत हाथ ऊपर उठ गये। बारडोलीमें भी ऐसी ही एक विशाल सभामें ऐसा ही परीक्षण दुबारा किया गया और उसका इतना ही सन्तोषप्रद परिणाम निकला। अस्पृश्यताका क्रमशः लोप होता जा रहा है और इसके लोपके साथ-साथ स्वराज्यका मार्ग सरल और निरापद होता जा रहा है।

सूतके गोलोंका अम्बार

सीसोदरामें अभी सालभर पहलेतक हाथकी कताईका चलन नहीं था। वहाँ हाथके कते सूतके पचास मन वजनी बोरोंको बड़े अच्छे ढंगसे एक कमरेमें सजाकर मुझे दिखाया गया। अब इस गाँवमें और आसपासके गाँवोंमें सैकड़ों चरखे चल रहे हैं। पंजाबकी भाँति अब गुजरातमें भी बच्चे और महिलायें अकसर ही मुझे आकर सूत भेंट करते हैं। गुजरातके विद्यार्थी हाथकी कताईमें सचमुच पंजाबके कार्यकर्त्ताओंको भी कुछ नई चीजें बता सकते हैं। इन विद्यार्थियोंने बहुत ही थोड़े समयमें कताईका काम सीख लिया है और अब गाँव-गाँवमें इसका आयोजन कर रहे हैं। इसलिए पंजाबियोंको होशियार हो जाना चाहिए। अगर इन लोगोंने इस होड़में उनको पछाड़ दिया तो मुझे सचमुच अच्छा नहीं लगेगा। आन्ध्र, कर्नाटक और गुजरातसे बाजी मारना पंजाबके लिए आसान नहीं होगा। शंकालु व्यक्तियोंको चाहिए कि वे जाकर इन कताई-केन्द्रोंको देखें जहाँ संगठित ढंगसे कार्य चल रहा है। उनको वहाँ जाकर कई ऐसे आर्थिक नियमोंका पता चलेगा जो किताबी अर्थशास्त्रके सिद्धान्तोंको गलत सिद्ध कर देते हैं।

विधवाका दान

स्त्री-पुरुषोंने खुले हाथों आभूषणों और धनका दान दिया है। पर आनन्द ग्रामकी एक विधवाने तो सात सौ रुपयेके मूल्यकी सोनेकी एक सिल्ली दानमें देकर हम सभीको चकित कर दिया। मैंने उससे नाम पूछा तो उसने बतलानेसे इनकार कर दिया और कहा कि वह सोना भगवान्‌के कामके लिए है।

अंग्रेजी-शिक्षा

एक मित्रने मुझसे अंग्रेजी शिक्षाके बारेमें अपनी निश्चित राय देनेके लिए कहा है और कटकके तटपर दिये गये मेरे भाषणका[1] स्पष्टीकरण चाहा है। मैंने इस भाषण-का प्रकाशित विवरण नहीं देखा। पर मैं अपने मित्रकी इच्छाका पालन बड़ी खुशीसे कर रहा हूँ। मेरी यह सोची-समझी राय है कि अंग्रेजी शिक्षा जिस ढंगसे दी गई है उसने अंग्रेजी पढ़े-लिखे भारतीयोंको नामर्द बना दिया है; उसने भारतीय विद्यार्थियोंके दिमागोंपर एक भारी बोझ डाल दिया है और हम लोगोंको नकलची बना दिया है। देशी भाषाओंको उचित स्थान दिलानेका काम बिलकुल नहीं किया गया और यह ब्रिटिश शासनके इतिहासका सबसे दुःखद अध्याय है। राममोहन रायको[2] यदि अंग्रेजी-

१, देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ४८२-८५।

२. राजा राममोहन राय (१७७४–१८३३); अध्येता, समाज-सुधारक और ब्राह्मसमाजके संस्थापक।

में सोचने और अपने विचार व्यक्त करनेका झंझट न होता तो वे और भी बड़े सुधारक बन सकते थे; यही बाधा यदि लोकमान्य तिलकके[1] आड़े न आती तो वे और भी बड़े विचारक सिद्ध होते। इन दोनों महान् व्यक्तियोंका अपने देशकी जनता-पर जबरदस्त प्रभाव पड़ा है। यह प्रभाव कहीं अधिक व्यापक होता यदि उनका पालन-पोषण एक अधिक स्वाभाविक पद्धतिमें हुआ होता। इसमें शक नहीं कि अंग्रेजी साहित्यके समृद्ध कोषकी जानकारीसे दोनोंको काफी लाभ हुआ था। लेकिन ऐसा ज्ञान तो उनको अपनी देशी भाषाओंके जरिये भी मिल सकता था। कोई भी देश कोरे अनुवादोंकी भरमार करके राष्ट्र नहीं बन सकता। जरा सोचिये कि अगर अंग्रेजीमें 'बाइबिल'का प्रामाणिक संकलन उपलब्ध न होता तो अंग्रेज जातिका क्या होता? मैं तो मानता हूँ कि चैतन्य, कबीर, नानक, गुरु गोविन्दसिंह, शिवाजी और प्रताप हमारे राममोहन राय और तिलकसे कहीं बड़े थे। वैसे मैं समझता हूँ कि इस प्रकारसे तुलना करना ठीक नहीं है। ये सभी विभूतियाँ अपने-अपने ढंगसे महान् थीं। परन्तु यदि उनके कामके फलसे उनको जाँचा जाये तो स्पष्ट है कि जनतापर राममोहन और तिलकका प्रभाव इतना स्थायी या व्यापक नहीं है जितना कि इन अन्य भाग्यशालियोंका है। पर यदि इन दोनोंके सामने आनेवाली बाधाओंको देखकर इनकी महानताको आँका जाये तो स्पष्ट है कि ये लोग प्रतिभाके बड़े धनी थे और अगर इन दोनोंका लालन-पालन एक स्वाभाविक पद्धतिमें हुआ होता तो ये और भी बड़े-बड़े काम करके दिखाते। मैं यह माननेको तैयार नहीं कि राजा राममोहन और लोकमान्यने जो विचार व्यक्त किये वे उनके दिमागमें अंग्रेजीकी शिक्षाके बिना आ ही नहीं सकते थे। भारत देश जितने भी अन्धविश्वासोंसे पीड़ित है उनमें सबसे बड़ा यही है कि स्वातन्त्र्य-परक विचारोंको प्रेरित करने और वैचारिक सुस्पष्टता पैदा करनेके लिए अंग्रेजी भाषाका ज्ञान आवश्यक है। हमें याद रखना चाहिए कि पिछले पचास वर्षोंके दौरान देशके सामने शिक्षाकी केवल एक पद्धति रही है और अभिव्यक्तिका केवल एक माध्यम देशपर जबरदस्ती लाद दिया गया है। इसलिए हमारे पास यह बतलानेका कोई साधन ही नहीं रह गया है कि यदि मौजूदा स्कूल-कालेजोंकी शिक्षा-पद्धति हमारे यहाँ प्रचलित न होती तो हम क्या बनते। लेकिन हम इतना तो जानते ही हैं कि आज भारत पचास वर्ष पहलेकी अपेक्षा ज्यादा निर्धन है, उसमें अपनी प्रतिरक्षाकी सामर्थ्य पहलेसे कम है, और देशके बच्चोंकी जीवन-शक्ति पहलेसे कम हो गई है। मुझे यह मत समझाओ कि इसका कारण त्रुटिपूर्ण सरकारी पद्धति है। सरकारी तन्त्रका सबसे अधिक दोषपूर्ण अंग उसकी शिक्षा-पद्धति है। मैं मानता हूँ कि अंग्रेजोंने गलत धारणाके आधारपर पूरी ईमानदारीके साथ इसका ढाँचा खड़ा किया था; क्योंकि अंग्रेज शासक पूरी ईमानदारीसे हमारी देशी पद्धतिको बिलकुल रद्दी समझते थे। इस शिक्षा-पद्धतिकी प्रवृत्ति भारतीयोंको शरीर, मस्तिष्क और आत्मासे हीनतर बना देनेकी रही है और इसीलिए यह पद्धति पापमय वातावरणमें ही पनपी है।

१. बाल गंगाधर तिलक (१८५६–१९२०); देशभक्त व राजनीतिज्ञ।

एक और गुप्त सन्धि

"खून छिपा नहीं रहता।" पता नहीं पिछली नापाक जंगके दौरान गुप्त सन्धियाँ करनेवालों ने यह समझ लिया था या नहीं कि आखिरकार एक दिन उनका भेद खुलकर रहेगा। ज्यादा सम्भावना तो इसी बातकी है कि वे शायद जानते होंगे कि भेद खुल ही जायेगा और सन्धियाँ करनेवालों को एक दिन आलोचनाका शिकार बनना पड़ेगा। ज्यादा सम्भावना यही है कि चोरी-छिपे साजिश करनेवालों को जो सन्तोष मिलता है वह उनको इस बातसे भी मिला होगा कि जिस समय ये सन्धियाँ की गई थीं उस समय वे उनको गुप्त रख सके और ये जिस मकसदसे की गई थीं वह पूरा हो गया। 'बॉम्बे क्रॉनिकल'ने जिस सन्धिका पता चलाया है वह एक ऐसी ही सन्धि मालूम पड़ती है। कहा जाता है कि यह सन्धि ब्रिटिश सरकार और मक्का शरीफके बीच हुई थी। अगर बात सही है तो इससे पता चलता है कि ब्रिटिश मन्त्रिगण अपना उल्लू सीधा करनेके लिए कितने गिर सकते हैं। और अब जब उनका काम बन गया है तो वे अपने ही लिखे दस्तावेजको रद्दीकी टोकरीके लायक समझने लगे हैं। ऐसी अवस्थामें यदि करोड़ों भारतीयोंका विश्वास ब्रिटेनपर से उठ गया है तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है। और अगर वे ब्रिटिश सरकारके साथ तबतक कोई सहयोग करनेको तैयार नहीं होते जबतक कि वह अपनी गलतियाँ नहीं सुधारती और अपनी आत्माको खोखला बनानेवाले भ्रष्टाचारसे मुक्त होकर अपनी शुद्धि नहीं करती तो इसमें भी ताज्जुब क्यों होना चाहिए?

बहुत देरसे

बम्बईके एक पारसी मित्रने 'तिलक स्वराज्य-कोष' के लिए दस रुपये भेजते हुए लिखा है:

> **आपने पारसियोंके नाम अपील करनेमें बहुत देर कर दी। आपके आन्दोलनके भयसे बम्बई सरकारने इस बार लगभग २३ लाख रुपयेकी पेशगी वसूली कर ली है। यदि पारसियोंको यकीन दिला दिया जाये कि उनके छोड़नेपर कोई दूसरी जाति उनका धन्धा अपने हाथमें नहीं लेगी और आप इस बुराईको हमेशाके लिए खत्म कर सकते हैं, तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि सभी प्रबुद्ध पारसी आपके आन्दोलनका हार्दिक समर्थन करेंगे।**

यदि सरकार साल भरका शुल्क पेशगी ले चुकी है तो दारूबन्दी आन्दोलनके समर्थनमें अपनी दूकानें बन्द करनेवालों को समय आनेपर पेशगीकी रकम वापस मिल जायेगी। जाहिर है कि दारू-विक्रेता तो असहयोगी नहीं हैं। इसलिए कोई कारण नहीं कि वे अपनी रकमकी वापसीके लिए सरकारको प्रार्थना-पत्र न भेजें। और मेरे मित्रने जो आश्वासन माँगा है उसके बारेमें मैं इतना ही कह सकता हूँ कि उन्होंने जैसी शर्तें रखी हैं वैसी शर्तोंपर आजतक कोई सुधार आन्दोलन नहीं चला। उनकी दलीलका मतलब तो यह निकलता है कि जबतक सभी भले नहीं बन जाते तबतक किसी भी आदमीको भला बननेकी जरूरत नहीं। लेकिन सुधारक लोग तो अकेले

ही खड़े होकर दूसरोंके लिए मिसाल बनते हैं। पारसियोंसे मेरा यही अनुरोध है कि वे इस दारूबन्दी आन्दोलनमें शामिल हों, दूसरे लोगोंका मुँह न ताकें। सच तो यह है कि कई गैर-पारसियोंने दारूका विक्रय बन्द कर दिया है।

मेसोपोटामियाकी चीख-पुकार

मुझे मेसोपोटामियामें होनेवाले दुर्व्यवहारकी शिकायतें अक्सर मिलतीरहती हैं। सभी पत्र-लेखकोंने, उनके साथ जो अमानवीय बरताव किया जाता है, उसकी बात लिखी है। मुझे मौलाना शौकत अलीने एक पत्रकी नकल भेजी है। और भी लोगोंको ऐसे पत्र मिले हैं। इनका प्रकाशन अब अधिक दिनोंतक नहीं रोका जा सकता। इन शिकायतोंका प्रचार होनेसे शिकायत करनेवालों को जितनी राहत मिल सकती है, कमसे-कम उतनी राहत तो उन्हें मिलनी ही चाहिए। भारत अपनी इस असहाय अवस्थामें अपने प्रवासियोंके लिए अभी इस समय अधिक कुछ नहीं कर सकता। पत्र-पर तीन व्यक्तियोंके हस्ताक्षर हैं। चूँकि उनके अधिकारी उनको नुकसान पहुँचा सकते हैं इसलिए मैं बचावकी दृष्टिसे उनके नाम प्रकाशित नहीं कर रहा हूँ। ध्यान देनेकी बात यह है कि पत्र-लेखकोंने उन्हीं लोगोंके नाम पत्र लिखे हैं जिनके नाम उन्होंने समाचारपत्रोंमें पढ़े थे। पत्र-लेखकोंने अरबों द्वारा किये जानेवाले दुर्व्यवहारकी शिकायतें की हैं। मुझे इससे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। मैं समझता हूँ कि अरब लोग चूँकि खुद असहाय हैं, इसीलिए वे भारतीय सैनिकों और क्लर्कोंपर अपना गुस्सा उतारते हैं। वे सोचते हैं कि शायद इस तरह वे भारतीयोंको मेसोपोटामियाके सिलसिलेमें भरती होनेसे रोक सकेंगे। मुझे उम्मीद है कि मेरे इस पत्रको प्रकाशित करनेसे दूसरे लोग भरतीके प्रलोभनोंमें पड़ते हुए हिचकिचाएँगे। बहादुर अरब लोगोंपर आज जो विपत्ति आ पड़ी है उसे किसी भी आत्म-सम्मानी भारतीयको अपनी जीविकाका साधन नहीं बनाना चाहिए। इस पत्रको[1] मैं ज्योंका-त्यों छाप रहा हूँ; मैंने केवल उन अंशोंको छोड़ दिया है जिनमें दुर्व्यवहारका शिकार बननेवाले लोगोंके नामोंके साथ जुड़ी हुई सैनिक टुकड़ियोंका हवाला दिया गया था।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७–४–१९२१

१. यहाँ उद्धृत नहीं किया गया।

२५. बाजी लगानेकी लत

अगर आप घोड़ोंपर बाजी लगाना बन्द करवा सकें तो हजारों भारतीय और यूरोपीय गृहणियाँ आपको दुआ देंगी। जबतक मेरे पति 'रेस' (घुड़दौड़)के मैदानमें बाजी लगाने नहीं जाते थे तबतक वे एक आदर्श पति थे। उन्हें अच्छी तनख्वाह मिलती है और वे शराब नहीं पीते, फिर भी हम तंगदस्त हैं और गलेतक कर्जमें डूब गये हैं। और यही हाल, जहाँतक मुझे मालूम है, मेरे-जैसी दूसरी बहुत-सी गृहणियोंका है। मैंने उनके पाँव पड़कर रेसमें जानेसे मना किया पर उन्होंने एक न सुनी। पति अपनेको घुड़दौड़में जानेसे न रोक पाये, वहाँ बाजीपर-बाजी हारे और बीबी-बच्चोंको तबाही भुगतनी पड़े, क्या यह बहुत ज्यादती नहीं है?

यह सच है कि शराबसे हजारों तबाह हो रहे हैं; मगर घोड़ोंपर बाजी लगानेसे तो लाखोंके घर चौपट हो रहे हैं।

यह वेस्टर्न इंडिया टर्फ क्लब अपने गोरे कर्मचारियोंको जो मोटी-मोटी तनख्वाहें देता है उसका सारा पैसा, सच पूछा जाये तो 'रेस' में जनतासे ही खसोटा जाता है। अगर आप यह जानते होते कि 'टर्फ क्लब' किस चतुराई और धूर्ततासे लोगोंका पैसा लूटता है तो आप मुझसे सहमत होते। भगवान्के लिए जैसे भी हो, इस हालतको सुधारिये। जब पेशेवर शर्तबाज और क्लबके सदस्य [ही] बाजी लगा सकते थे तब हालत आजसे कहीं अच्छी थी।

श्रीमान्जी, नई कौंसिलोंके अनेक सदस्योंसे अवश्य ही आपकी जान-पहचान होगी। मुझे पूरी उम्मीद है कि उनकी मददसे रेसोंमें बाजी लगाना बन्द कराया जा सकता है। बाजी लगानेवालोंसे पैसा लेने और जीतनेवालों को पैसा देनेका इन्तजाम अगर सरकार अपने हाथमें ले ले तो मुझे विश्वास है कि बहुत हद-तक हालत सुधर जायेगी। आज तो लाजिमी तौरपर हार आम लोगोंकी होती है और जीत होती है घोड़ोंके मालिकों, घोड़ोंको सिखानेवालों और घुड़सवारोंकी। महज इसलिए कि उसके कुछ बड़े अफसरोंकी घुड़दौड़में गहरी दिलचस्पी है, क्या यह निहायत शर्मकी बात नहीं कि सरकार इस ओरसे आँखें मूँदे रहे?

मेरे पति सरकारी कर्मचारी हैं, इसलिए यह पत्र बिना दस्तखतके भेजना ही ज्यादा अच्छा रहेगा; लेकिन मैं प्रार्थना करती हूँ कि मैंने जो-कुछ लिखा है उसपर आप ध्यान दें और घोड़ोंपर बाजी लगाना बन्द करवा दें।

यह पत्र कुछ अर्सेसे सफरमें मेरे साथ है। मेरे साथ पाठक भी यह महसूस करेंगे कि पत्र करुणाजनक है। गुमनाम पत्र कभी-कभी ही कामके निकलते हैं। यह है कामका, भले ही लेखिकाने अपना नाम न देना ठीक समझा हो।

घुड़दौड़के बारेमें मैं कुछ भी नहीं जानता। आमतौरपर इसके साथ जिस तरहकी चीजें जुड़ी रहती हैं मैं उनकी छायासे भी डरता हूँ। इतना मैं जरूर जानता हूँ कि घुड़दौड़के मैदानमें जानेवाले बहुत-से लोग तबाह हो गये हैं।

लेकिन मैं स्वीकार करता हूँ कि इसके खिलाफ कलम उठानेकी हिम्मत मैं अभीतक नहीं कर पाया था। यह देखकर कि आगाखाँ-जैसे धर्मगुरु, अनेक महन्त और महाधिपति, वाइसराय और देशके सर्वश्रेष्ठ माने जानेवाले लोग घुड़दौड़की सरपरस्ती कर रहे हैं, उसपर हजारों रुपये बहाते हैं, अतः मैं सोचा करता था कि उसके खिलाफ लिखना बेकार होगा। लेकिन एक पत्रकार और सुधारकके नाते, जिन बुराइयोंके खिलाफ जनमत तैयार किया जा सके, उनकी ओर लोगोंका ध्यान खींचना मेरा कर्त्तव्य है। [चेचकका] टीका लगवाना मैं बुरा समझता हूँ, फिर भी इस बुराईकी ओर लोगोंका ध्यान खींचना मैं अपनी शक्तिका अपव्यय ही मानता हूँ। यह भी स्वीकार करना मेरा कर्त्तव्य है कि शुद्धीकरणके इस आन्दोलनमें शराबबन्दीको शरीक करनेकी भी मेरी हिम्मत नहीं हुई थी। वह बात तो अपने आप ही आन्दोलनमें आ जुड़ी। लोगोंने खुद-ब-खुद उसे आन्दोलनमें शामिल कर लिया है।

बिना उपदेश या मार्गदर्शनके ही लोग अपने आप बहुतसे व्यसनोंको छोड़ रहे हैं, यह इस बातका पक्का लक्षण है कि असहयोग आन्दोलन शुद्धीकरणका आन्दोलन है। घुड़दौड़में बाजी लगानेके बारेमें भी इसी आशासे मैंने उपर्युक्त पत्र प्रकाशित किया है।

मैं जानता हूँ कि अगर घुड़दौड़के मौजूदा तरीकेमें कुछ रद्दो-बदल कर दी जाये तो उससे लेखिकाको सन्तोष हो जायेगा; लेकिन असली इलाज तो इस बीमारी-को जड़से मिटाकर ही हो सकेगा, और जरूरत भी इसी बातकी है। घोड़ोंपर बाजी लगाना भी जुआ ही है। अगर लोग असहयोग करें तो यह व्यसन, यह बुराई आप ही मर जायेगी। घुड़दौड़के मैदानमें जानेवाले हजारों आदमी वहाँ सिर्फ मजेके लिए जाते हैं। लोग वहाँ घोड़ोंको बेदम दौड़ते हुए देखनेके लिए जाते हैं या फिर इसलिए कि वहाँ जाना फैशनमें शुमार है, लेकिन जो भी हो; वे बाजी लगानेवालों की तबाहीको बढ़ावा देते हैं और उसमें मदद तो करते ही हैं।

शराबखोरीके मुकाबले घोड़ोंपर बाजी लगानेके व्यसनसे पेश पाना जरा टेढ़ी खीर है। जब कोई व्यसन फैशन ही नहीं बन जाता बल्कि बड़प्पन भी समझा जाने लगता है तो उससे निपटनेमें काफी लम्बा समय लगता है। रेसमें बाजी लगाना फैशनमें शुमार तो होता ही है, पर उसे किसी तरहका दुर्गुण या बुरा काम भी नहीं माना जाता। सौभाग्यसे शराबखोरीके साथ यह बात नहीं है। शराब पीनेको निश्चित बुराई न सही, आदमीकी कमजोरी तो माना ही जाता है। हर धर्मने शराब पीनेकी कमोबेश सख्तीके साथ बुराई की है। लेकिन घोड़ोंपर बाजी लगानेकी बातका कहीं ऐसा उल्लेख नहीं है। ऐसी सूरतमें हम आशा करते हैं कि जागरूक लोग घुड़दौड़के मैदानमें जानेके बदले अपने लिए कोई दूसरा अधिक निर्दोष मनोविनोद ढूँढ़ निकालेंगे, और इस तरह रेसके मैदानमें होनेवाली जुआखोरीके बारेमें अपनी नापसन्दगी जाहिर करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७-४-१९२१

२६. एक अब्राह्मणकी शिकायत[1]

मुझे इसी तरहके और भी कई पत्र मिले हैं। सभी पत्रलेखकोंने स्पष्ट ही मेरी बात समझनेमें भूल की है। मद्रासवाले अपने भाषणकी रिपोर्ट मेरे देखनेमें नहीं आई। मैं नहीं जानता कि कहीं उसीमें तो अर्थका अनर्थ नहीं कर दिया गया है। लेकिन फिर भी मैं यह दावा करता हूँ कि ब्राह्मणोंने हिन्दू धर्म या मानवताकी जो सेवा की है उसमें द्रविड़ सभ्यताकी उन सिद्धियोंकी वजहसे, जिनसे कोई इनकार नहीं करता, न तो कोई फर्क पड़ता है और न उन सेवाओंका महत्त्व ही कम होता है। पत्रलेखकोंका ऐसा सोचना वाजिब नहीं है कि दक्षिणके द्रविड़ और उत्तरके आर्य परस्पर सर्वथा पृथक और भिन्न हैं। उन्हें इस प्रवृत्तिसे सचेत रहना चाहिए। आजका भारत केवल द्रविड़ और आर्य सभ्यताका नहीं, और भी कई सभ्यताओंका घुला-मिला रूप है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७–४–१९२१

२७. टिप्पणियाँ

हड़तालको हलका न बनायें

हड़तालोंका तो ताँता ही बँध गया जान पड़ता है। इसमें कराचीने तो हद ही कर दी है। एक महीनेमें पाँच हड़ताल। कोई जेल जाये तो हड़ताल, कोई जेलसे छूटे तो हड़ताल, गवर्नरके आनेपर भी हड़ताल! इस तरह हड़ताल करनेसे हड़तालकी कीमत एकदम जाती रहती है। मेरे खयालसे तो हड़ताल एक पवित्र और बलवान् साधन है। किसी गम्भीर धर्मके प्रसंगपर हड़ताल होती है अथवा जब जनताकी भावनाएँ अत्यन्त उग्र होती हैं तब उन्हें प्रदर्शित करनेके लिए हड़ताल की जाती है। प्रत्येक प्रसंगको धार्मिक समझकर अथवा हर समय भावनाओंको उग्र बनाकर हम हड़ताल करते हैं तो इससे हम धार्मिकता और भावोद्वेगकी तीव्रताको कम ही करते हैं। अगर मुझे यह बात महसूस न हुई होती कि सत्याग्रह सप्ताहमें हड़तालके बिना काम नहीं चल सकता तो मैं इन सस्ती हड़तालोंके मौसममें उस हड़तालके मूल्यको सस्ता करनेका

१. ८ अप्रैल, १९२१ को मद्रास बीचपर दिये गये गांधीजीके भाषणके विवरणको पढ़कर उसके विरोधमें अनेक पत्र आये थे। सी० कंडास्वामीका ११ अप्रैलको मद्राससे लिखा गया यह पत्र उनमें से एक है। इसमें उन्होंने कहा था कि गांधीजीको द्रविड़ सभ्यता और ब्राह्मण विरोधी आन्दोलनके रहस्यकी कोई जानकारी नहीं है और इसलिए उन्होंने अब्राह्मणोंको लांछित किया है। प्रस्तुत टिप्पणी उसका उत्तर है। गांधीजीके भाषणके लिए देखिए खण्ड १९।

साधन कभी न बनता। मुझे उम्मीद है कि लोग अब हिन्दुस्तानमें सभी जगह बात-बातपर हड़ताल नहीं करेंगे। सबसे अच्छा उपाय तो यह है कि जबतक कांग्रेस और खिलाफत समिति सलाह-मशविरा करके सार्वजनिक विज्ञप्ति न निकालें तबतक लोग हड़ताल बिलकुल न करें।

जेल-महल

और फिर यदि किसीके जेल जानेपर हम हड़ताल करें तो यह हमारी दुर्बलताकी निशानी है। जेलोंको तो हमें भर देना है। हजारों व्यक्तियोंके जेल जानेपर ही छुट-कारा पाना सम्भव है। सामान्यतया अत्याचारी राज्यके अन्तर्गत अच्छे व्यक्तियोंके लिए जेल ही एक पवित्र स्थल है। जेल हमारी स्वतन्त्रताका स्थान है। नितान्त निर्दोष व्यक्ति भी जब बहुत बड़ी संख्यामें जेल जाने लगें तब आप समझ लें कि स्वराज्य समीप ही है। इस राज्यमें हम अगर जेलको ही अपना स्वाभाविक घर बनाना चाहते हों तो जेल भेजे जानेपर हड़तालें करनेका कोई अर्थ ही नहीं रह जाता। जब हम सचमुच जेलका भय छोड़ देंगे तब सरकार हमें जेल भेजना भूल जायेगी। जिस दिन हम घोर अत्याचारोंको भी हँसते-हँसते सहन करेंगे, लेकिन पेटके बल नहीं रेंगेंगे, 'यूनियन-जैक' के आगे सलामी नहीं देंगे, नाक नहीं रगड़ेंगे और डायरशाहीके विरुद्ध खड़े डटकर गोलियोंकी बौछारको पीठपर नहीं बल्कि सीनेपर झेलेंगे[1] उसी दिन स्वराज्य मिल जायेगा; क्योंकि इसीमें सच्ची वीरता है, इसी को क्षत्रियत्व कहते हैं। क्षत्रियत्वका विकास करनेके लिए पुष्ट शरीरकी आवश्यकता नहीं है बल्कि उसके लिए तो मजबूत और निडर हृदयकी जरूरत है। क्रूरता और कठोरता क्षत्रियत्वके गुण नहीं बल्कि सहनशीलता, क्षमा, दया, उदारता, अपलायन (युद्धक्षेत्रसे न भागना) और गोलियोंकी बौछारमें भी अडिग, निर्भयतापूर्वक खड़े रहनेकी शक्तिमें ही क्षत्रियत्व है। सच्चा क्षत्रिय प्रहार नहीं करता बल्कि प्रहारको अपने ऊपर झेल लेता है। ननकानाके महन्तको क्षत्रिय नहीं कहा जा सकता, वह तो खूनी कहलायेगा। लछमनसिंह और दलीपसिंह शुद्ध क्षत्रिय थे।[2] और ऐसा क्षत्रियत्व तो एक दुर्बल अपंग बालकमें भी हो सकता है। शान्तिमय असहयोग क्षत्रियत्वके इस गुणका विकास करनेका साधन है। इमाम हुसैन और हसन क्षत्रिय थे। उनपर जुल्म करनेवाला अत्याचारी था। बालक प्रह्लाद क्षत्रिय था। हिरण्यकशिपु राक्षस था। वर्णाश्रमका यह अर्थ नहीं कि क्षत्रियत्व अन्य वर्णोंमें होता ही नहीं। चारों वर्णोंमें वह गुण होना चाहिए लेकिन क्षत्रिय जातिमें यह गुण प्रधान होना चाहिए और इसका विकास करना ही उनका प्रमुख ध्येय होना चाहिए। लेकिन जो क्षत्रिय कुलमें जन्म लेकर अपने पशुबलका दुर्बल व्यक्तिपर प्रयोग करता है वह क्षत्रिय नहीं बल्कि अक्षत्रिय, राक्षस है। भारतसे क्षत्रियत्वका लगभग लोप हो गया है। इस शान्तिमय असहयोगका हेतु उसका फिरसे विकास करना है।

१. अप्रैल १९१९ में पंजाबमें मार्शल लॉके दिनोंमें ये सब अत्याचार लोगोंपर किये गये थे। देखिए खण्ड १७, पृष्ठ १२८-३२२।

२. इस घटनाके लिए देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ४२८-३२।
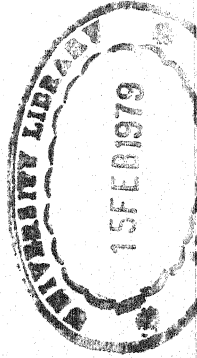
असभ्यता

माननीय गवर्नर महोदयकी कराची यात्राके दौरान जो पत्रक प्रकाशित किया गया था उसकी एक प्रति मुझे मिली है। उसमें ये वाक्य हैं:

> **गवर्नर आज सबेरे यहाँ आनेवाले हैं, उनके जलूसमें शामिल न हों। पूजनीय कांग्रेसका आदेश है कि वर्तमान सरकारके साथ किसी भी भारतीयको सहयोग नहीं करना चाहिए। सोमवार २१ तारीखके दिन हड़ताल करके आप सरकारको बता दें कि हमें स्वराज्य चाहिए। सब काम-धन्धे बन्द करके प्रार्थना करें कि हमें एक वर्षके भीतर स्वराज्य मिल जाये।**

असहयोगीको असभ्य व्यवहार नहीं करना चाहिए। ओहदेको जो सम्मान हम बादमें भी देना चाहते हैं, सम्मानसूचक उन शब्दोंका व्यवहार करना हमें नहीं छोड़ना चाहिए। बम्बईके गवर्नरके विरुद्ध एक व्यक्तिके रूपमें अथवा पदके विरुद्ध हमारा असहयोग नहीं है। हमारा असहयोग तो इस पूरी राजनीतिके विरुद्ध है। जब अमुक गवर्नर अपने सूबेके दौरेपर आये और जब उसके विरुद्ध हमें खास कुछ कहना न हो तब हमारा हड़ताल करना निरर्थक है। उनके सम्बन्धमें उद्धत भाषामें लिखना असभ्यता है। हम जलियाँवाला बागका हत्याकाण्ड करनेवाले व्यक्तिको पूरे नामसे पुकारते हैं, जनरल डायर कहते हुए हमें क्षोभ नहीं होता, होना भी नहीं चाहिए। जो असहयोगी भाषाके रूढ़ नियमोंकी अवहेलना करता है वह शान्तिके नियमको भंग करता है।

बताना किसे?

कांग्रेसका आदेश प्रत्येक अवसरपर हड़ताल करनेका नहीं है, तब भी उपर्युक्त सार्वजनिक विज्ञप्तिमें ऐसा आभास दिया गया है कि कांग्रेसका वैसा आदेश है। हड़ताल करके हमें सरकारको क्या बताना है? हमें तो स्वराज्य अपनी शक्तिके द्वारा प्राप्त करना है। हम हड़ताल करके अगर शक्ति प्राप्त कर सकते हों तो हमें ऐसा अवश्य करना चाहिए। इस अवसरपर तो विज्ञप्ति ही यह सूचित करती है कि हमारी हड़तालका उद्देश्य सरकारको कुछ बतानेका था। सरकारको कुछ भी बतानेकी हमें बहुत जरूरत नहीं है। अथवा कुछ बताना ही है तो वह ठोस कार्यके द्वारा बतायें और ठोस कार्य क्या है, यह कांग्रेसने बता ही दिया है।

मेरी प्रार्थना

अन्त्यज-परिषद्के[1] समय मैंने जो प्रार्थना की थी उसके सम्बन्धमें लिखते हुए एक सज्जन लिखते हैं कि वे मेरी बात समझ नहीं सके हैं। मेरा भाषण सही-सही प्रकाशित हुआ है या नहीं, सो मैं नहीं जानता। मोक्ष मेरी प्रार्थना है; मुझे मोक्ष ही प्रिय है। मेरे सब प्रयत्न इसी जन्ममें मोक्ष प्राप्त करनेके हैं। मैं असहयोगके महान् आन्दोलनमें भी इसी कारण पड़ा हूँ। तथापि यदि मैं अपने मनोरथमें इस जन्ममें सफल नहीं होता तो मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह मुझे दूसरा जन्म अन्त्यजके

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ५७६-८१।

घरमें दे ताकि मैं उन लोगोंके दु:खोंका पूरा-पूरा अनुभव प्राप्त करूँ और उन्हें कम करनेके लिए भारी तपस्या करूँ। मैं मानता हूँ कि वैष्णवके रूपमें मैंने जो दया-धर्म सीखा है, जिसका मैंने तुलसी 'रामायण' में से पान किया है, वह दया-धर्म मुझे यही प्रार्थना सिखाता है। अन्त्यजोंपर हिन्दू धर्मके नामपर होनेवाला अत्याचार मुझे असह्य है, प्रत्येक हिन्दूके लिए वह असह्य होना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १–५–१९२१

२८. टिप्पणियाँ

एक व्याघात

यदि अखबारोंमें छपी खबरें तत्त्वत: सही हों तो मालेगाँवके असहयोगी अपने सिद्धान्त, अपने विश्वास और अपने देशके प्रति सच्चे नहीं उतरे।[1] उन्होंने प्रगति रूपी घड़ीकी सुइयाँ पीछेकी ओर घुमा दीं। अहिंसा वह आधारशिला है जिसपर असहयोगका पूरा ढाँचा खड़ा किया गया है। अहिंसाके अभावमें हर कुर्बानी बेकार जाती है; जैसे कि कागजके फूल देखने-भरके ही हुआ करते हैं। अगर अखबारोंमें छपी खबर सच है तो जो लोग स्पष्ट ही अपना कर्त्तव्य पालन कर रहे थे, इरादतन उनकी हत्या की गई है। यह हमला कायरतापूर्ण था। कुछ लोगोंने जान-बूझकर कानून तोड़ा। परिणाम दण्डके सिवा होता ही क्या।

इस प्रकार जेलकी सजाके प्रति नाराजी प्रकट करना किसी भी तरह उचित नहीं ठहराया जा सकता। जो लोग मालेगाँवकी तरह हिंसात्मक कार्य करते हैं, वे सरकारके वास्तविक सहयोगी हैं। यदि सरकार इस प्रकार असहयोग आन्दोलनको कुचल सके तो वह बड़ी खुशीसे अपने कुछ अफसरोंको बलि हो जाने देगी। यदि ऐसी ही कुछ-एक हत्याएँ और हुईं तो हम जन-साधारणकी सहानुभूति खो बैठेंगे। मुझे पूरा यकीन है कि जनता हमारी ओरसे की गई हिंसाको बरदाश्त नहीं करेगी। जनता स्वभावसे शान्तिप्रिय है और उसने असहयोगका स्वागत इसी कारण किया है कि इसे समझ-बूझकर अहिंसात्मक रखा गया है।

तब हमें क्या करना चाहिए? हमें सार्वजनिक रूपसे और आपसी बातचीतमें भी हिंसाका सतत विरोध करते रहना चाहिए। बुराई करनेवालोंके प्रति हमें जरा भी हमदर्दी नहीं दिखानी चाहिए। जिन लोगोंने इन हत्याओंमें हिस्सा लिया है उनसे हमें यही कहना चाहिए कि यदि उनके मनमें जरा-सा भी पछतावा हुआ हो तो वे आत्म-समर्पण

१. अप्रैल १९२१ में खिलाफत आन्दोलनके कार्यकर्त्ताओंपर चलनेवाले मुकदमेसे उत्तेजित होकर जन-समुदायने हिंसापूर्ण कार्रवाई कर डाली थी। जिसके फलस्वरूप एक पुलिस सब-इन्स्पेक्टर और चार सिपाही मारे गये थे।

कर दें। कार्यकर्त्ताओंको तो अपनी बातचीतमें दोहरी सावधानी बरतनी चाहिए। उन्हें सरकार और उसके अफसरोंके दोषोंकी चर्चा बन्द कर देनी चाहिए, फिर वे चाहे यूरोपीय हों या हिन्दुस्तानी। लम्बी-चौड़ी डींगें मारनेके स्थानपर हमें कांग्रेस द्वारा देशके सामने प्रस्तुत रचनात्मक कार्यक्रमपर ध्यान देना चाहिए। यदि जनता आन्दोलनके लिए धन, जन और साधन जुटाने आगे न आये तो भी हमें रोष प्रकट नहीं करना चाहिए। पुलिसके सभी आदेशोंको पूरी तरह मानना चाहिए। जाने-माने कार्यकर्त्ताओंपर मुकदमे चलाये जाने अथवा उनके जेल भेजे जानेकी अवस्थामें जलूस नहीं निकालने चाहिए और न हड़तालें ही होनी चाहिए। यदि हम निर्दोष व्यक्तियोंके जेल भेजे जानेका स्वागत करें, जो हमें अवश्य करना चाहिए, तो हमें अपना आचरण निर्दोष बनाये रखनेका अभ्यास करना होगा। और यदि हमें कुछ विचार रखने या ऐसे कामोंके कारण सजा मिले, जिन्हें करना हमारा कर्त्तव्य हो जैसे सूत कातना, चन्दा इकट्ठा करना, कांग्रेसके सदस्य बनाना आदि तो हम इसे अपना सौभाग्य मानें। सविनय अवज्ञा बिलकुल न करें। हमने गम्भीरसे-गम्भीर उत्तेजनाके सम्मुख भी अहिंसक बने रहनेका व्रत लिया है। इसके लिए हमें बड़ा सावधान रहना होगा; कहीं ऐसा न हो कि हमारी मूर्खतासे ही हमारी विजयकी घड़ी हार और अपमानकी घड़ीमें न बदल जाये। 'टाइम्स ऑफ इंडिया'ने जिस परीक्षाका सुझाव दिया है, मैं पूर्णतः उसके पक्षमें हूँ। यह मानना पड़ेगा कि प्रत्यक्ष रूपसे आत्म-बलपर आधारित होनेके कारण इस आन्दोलनकी महत्ताकी एकमात्र कसौटी इसके अनुयायियोंकी परम निष्ठा ही हो सकती है। यदि इस निष्ठापर उचित रूपसे सन्देह करनेका कोई मौका दिया गया तो उसमें ऐसी शक्तियोंको प्रवेश करनेका अवसर मिल जायेगा जो उसके नैतिक रूपको नष्ट किये बिना नहीं रहेंगी।

सिन्ध-चर्चा

सिन्धका कार्यक्रम बड़ा व्यस्त रहा। २४ तारीखसे ३० तारीखके बीच हैदराबाद, कराची, लरकाना, शिकारपुर, सक्खर, रोहड़ी, कोटड़ी और मीरपुर खासकी यात्रा निःसन्देह एक काफी बड़ा काम था। और सक्खरके श्री मूलचन्दने[1] ठीक ही कहा: "काम आधा ही हो पाया।" दूसरा मित्र बोला, "खैर, कुछ नहीं से तो आधा ही भला।" निःसन्देह सिन्धको अन्य किसी भी प्रान्त जितने बढ़िया साधन उपलब्ध हैं। उसके पास कार्यकर्त्ता हैं, धन और योग्यता भी है। यदि वह चाहे तो नेतृत्व कर सकता है। लेकिन ऊपर बताई गई सुविधाओंके रहते हुए भी आज वह ऐसा करनेमें असमर्थ है। २५ तारीखको 'यंग सिन्ध'में[2] प्रकाशित अपने पत्रमें मैं बादके अनुभवोंके बावजूद कोई परिवर्तन करनेकी जरूरत नहीं समझता।

कराचीकी हालत सबसे खराब है। सिन्धमें जिलेवार दल हैं और उनको राह दिखानेवाला कोई केन्द्रीय संगठन नहीं है। लेकिन कराचीमें तो कोई दल भी नहीं है,

१. एक वकील जिन्होंने गांधीजीके दौरेके अर्सेमें वकालत छोड़ दी थी।

२. यह प्राप्त नहीं है।

गुट कई हैं। रुपये-पैसेका हिसाब-किताब रखनेके सम्बन्धमें जिस गड़बड़ीकी शिकायतें मेरे कानमें पड़ीं वे कराचीके बारेमें ही थीं। मुझे बताया गया था कि वहाँके सार्वजनिक राष्ट्रीय स्कूल अपना हिसाब प्रकाशित नहीं करते। कराची किसी एक नेताको नहीं मानता। मैंने तो धनका गबनतक किये जानेके आरोप सुने हैं। मैं कह नहीं सकता कि ये आरोप किस हदतक सही हैं। परन्तु इतनी अधिक बार इतने अधिक लोगोंने इन आरोपोंकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया है कि मैं समझता हूँ कि मुझे जनसाधारणकी निगाहमें यह बात अवश्य ला देनी चाहिए। जनता जो धन हमें देती है उसे हम पाई-पाईका हिसाब देनेके लिए बाध्य हैं। राष्ट्रीय स्कूलोंके संचालकोंसे मैं यह कहूँगा कि वे अपनी आमदनी और खर्चका न सिर्फ पूरा-पूरा हिसाब दें वरन् अपने स्कूलोंको सार्वजनिक व्यवस्थाके अधीन कर दें। मेरे खयालसे कोष केवल दो ही होने चाहिए -- एक तिलक स्वराज्य-कोष और दूसरा खिलाफत कोष। सभी प्रकारके कार्य इन दोनोंमें से किसी एक संगठनके अधीन होने चाहिए। सभी स्कूलोंका खर्चा इन दोनों कोषोंसे ही चलाया जाना चाहिए। अलग-अलग कामोंके लिए अलग-अलग धन जमा नहीं करना चाहिए। हमें अपनी शक्ति और साधनोंको एकत्र करके उनको सुसंगठित रूप देना है; अनेक संगठन खड़े करके उनको छिन्न-भिन्न नहीं करना है। अपने आपको स्वराज्य पाने योग्य सिद्ध करनेके लिए हमें चाहिए कि हम अपने आपसी मतभेद समाप्त कर दें, ईर्ष्या-द्वेषसे दूर रहें, केन्द्रीय संगठनका नियन्त्रण मानें; बड़ी-बड़ी रकमें इकट्ठा करने और उन्हें ईमानदारीसे खर्च करनेके योग्य बनें, अपने बच्चोंकी शिक्षाका प्रबन्ध स्वयं करें, अपने झगड़ोंको स्वयं निबटायें, भोजन और वस्त्रके सम्बन्धमें प्रत्येक गाँव आत्मनिर्भर बने और अस्पृश्यता तथा मद्यपान-जैसी देश-व्यापी बुराइयोंको निकाल बाहर करें।

सिन्धमें हर जगह राष्ट्रीय स्कूल खुल रहे हैं। इनके प्रबन्धकोंको मैं आगाह कर देना चाहता हूँ कि उनको इनके लिए लम्बा-चौड़ा बजट नहीं बनाना चाहिए। मेरा खयाल है कि कमसे-कम इस सालके लिए प्रत्येक स्कूल और कालेजको मुख्यतः धुनाई और कताईकी संस्था बन जाना चाहिए। उसको अपने महीनेका खर्च अपने यहाँ पढ़नेवाले लड़के-लड़कियोंके श्रमसे प्राप्त आयसे पूरा करना चाहिए। बड़ा खर्च तो सिर्फ मामूली फर्नीचर और चरखोंकी खरीदपर होना चाहिए। अभी अंग्रेजीके अध्ययनके लिए थोड़ा भी समय रखकर हमें राष्ट्रका समय नष्ट नहीं करना चाहिए। यदि स्वराज्य एक सालके अन्दर हासिल करना हो और यदि असहयोग कार्यक्रम तथा अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके संकल्पोंमें हमारी आस्था हो तो ईमानदारीका यही तकाजा है कि हम अवश्य ही कुछ आधार-भूत सिद्धान्तोंको मानकर चलें।

खैर, आलोचना तो काफी हो चुकी है। वहाँ ऐसी भी बहुत-सी बातें थीं जिनसे आशा बँधती है। जनताका अदम्य और विभोर कर देनेवाला उत्साह देखकर मन पुलकित हो उठता था। सिन्धकी महिलाओंने उदारतापूर्वक तिलक स्मारक-कोषमें दान दिया है। २५,००० रु०की थैली भेंट करके कराची सबसे आगे रहा। यह थैली मुझे सौंपी गई है और कहा गया है कि उसे मैं जैसे चाहूँ खर्च करूँ। मैं तो इसे तिलक स्मारक-कोषमें देनेका ही निश्चय कर सकता हूँ।

जमा किये गये धनका ब्यौरा मोटे तौरपर कुछ इस प्रकार है:

कराची	३०,०००
लरकाना	१,०००
शिकारपुर	१५,०००
सक्खर	१०,०००
रोहड़ी	१,०००
नवाबशाह	५,०००
हैदराबाद	१५,०००
मीरपुर खास	१,०००
फुटकर	१,०००

कई असहयोगी छात्र सिन्धमें बड़ा ही अच्छा कार्य कर रहे हैं। मुझे जो घटना सबसे ज्यादा उत्साहवर्द्धक लगी वह यह थी कि शिकारपुरमें आपसमें बड़े जोरका झगड़ा हो गया था जिसके फलस्वरूप अनेक जाने-माने लोगोंको कैद भी हो गई थी, लेकिन साधु वासवाणीकी[१] कोशिशोंके फलस्वरूप अब वे अपने मतभेदोंको दूर करनेमें कामयाब हो गये हैं। इसका स्वाभाविक परिणाम यह निकला कि गिरफ्तार किये गये सभी व्यक्ति रिहा कर दिये गये हैं। अगर हममें कभी झगड़ा हो ही नहीं तो हम मनुष्यता-से ऊपर उठे हुए कहलायेंगे। लेकिन जब हम उदारता दिखाकर मैत्रीपूर्ण ढंगसे अपने मतभेदोंको दूर कर लें तब हम अपने मनुष्य होनेका परिचय देते हैं।

हड़तालका दुरुपयोग

कराचीके एक सज्जनने मुझे पत्र लिखकर इस बातपर बड़ा खेद प्रकट किया है कि उस शहरमें बड़ी जल्दी-जल्दी हड़तालें होती हैं।

इसी विषयपर मैंने 'इंडियन सोशल रिफॉर्मर' की भी एक कतरन देखी है। मैं 'इंडियन सोशल रिफॉर्मर' की इस आलोचनासे सहमत हूँ कि इधर कुछ दिनोंसे बात-बातपर हड़तालें होने लगी हैं और उनकी गम्भीरता तेजीसे घटती जा रही है। ६ और १३ अप्रैलकी तिथियाँ[२] यदि इतनी पुनीत न होतीं तो मैं तो इन दो अवसरों-पर भी हड़ताल करनेकी सलाह न देता। हड़ताल या तो किसी असाधारण बातके प्रति विरोध प्रकट करनेके लिए की जानी चाहिए या किसी धार्मिक प्रदर्शनके रूपमें। परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयकी कराची-यात्राके अवसरपर हड़तालकी घोषणा करनेका कोई अर्थ नहीं था। यदि वह उनकी ज़ातके खिलाफ विरोध प्रकट करनेके लिए की गई थी तो वह एक बड़ी कुरुचिपूर्ण बात थी; क्योंकि मेरे खयालसे वे एक बहुत ही समझदार अधिकारी हैं, और यदि कुटिलतापूर्ण शासन व्यवस्थाके प्रशासनके अन्तर्गत

१. टी० एल० वासवाणी; **गीता मेडीटेशन्स, द फेस ऑफ बुद्धा** आदि पुस्तकोंके लेखक; पूनामें मीरां शैक्षणिक संस्थाओंके संस्थापक।

२. अप्रैल १९१९ में जलियाँवाला बागकी घटनाके बादसे देशमें ६ अप्रैलसे आरम्भ होनेवाला सप्ताह 'राष्ट्रीय सप्ताह' के रूपमें मनाया जाता था। देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ४७३-७५।

रहकर उन्हें काम न करना पड़ता तो वे एक लोकप्रिय गवर्नर होते। लोगोंके जेल भेजे जानेपर अथवा उनको रिहा करानेकी दृष्टिसे हड़तालें करना भी इतना ही कुरुचिपूर्ण है। किसीके जेल भेजे जानेपर हमारे मनमें भयका संचार नहीं होना चाहिए। अन्यायी शासनके अधीन निर्दोष व्यक्तियोंका जेल जाना उसी प्रकार स्वाभाविक माना जाना चाहिए जैसे अस्वास्थ्यकर स्थान व परिस्थितियोंमें रहनेवाले लोगोंका बीमार पड़ जाना। जैसे ही जेलोंका डर हमारे दिलोंसे निकल जायेगा वैसे ही सरकार हमें जेल भेजना बन्द कर देगी। जब सरकारकी अधिकसे-अधिक भयावह सजाओं, यहाँतक कि डायरशाहीसे भी हमारे मनोंमें भयका संचार न हो सकेगा तब सरकारका अस्तित्व अपने आप मिट जायेगा या वह अपने-आपको सुधार लेगी। इसीलिए जेल भेजे जानेके सम्बन्धमें हड़ताल करना घबराहट और भयका द्योतक है; इस कारण उसको वर्जित मानना चाहिए। मैं 'इंडियन सोशल रिफॉर्मर' की इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि स्थानीय नेताओंको प्रधान कार्यालयकी अनुमति लिये बिना हड़तालकी घोषणा नहीं करनी चाहिए। मैं तो यही कहूँगा कि सामान्यतः ६ और १३ अप्रैलको छोड़कर अन्य सभी अवसरोंपर हड़तालकी घोषणा अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और केन्द्रीय खिलाफत कमेटीकी सम्मिलित रायसे की जाये। जल्दी-जल्दी हड़तालें करके उन्हें महत्त्वहीन बना देना अनिष्टकर है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४–५–१९२१

२९. सवालोंका सिलसिला[1]

पहले सवालका जवाब मैं एक अलग लेखमें दे रहा हूँ।[2] दूसरे सवालके बारेमें मेरा खयाल ऐसा है कि ईश्वरका भय माननेवाले लोग ही सच्चे असहयोगी बन सकते हैं। लेकिन असहयोगका कार्यक्रम अपनानेके लिए किसीको अपने धर्म या विश्वासका उल्लेख करना जरूरी नहीं है। जिसे अहिंसामें विश्वास हो और जो असहयोगके कार्यक्रमको मंजूर करे ऐसा हर आदमी अवश्य ही असहयोगी बन सकता है। तीसरे सवालके बारेमें मैं ऐसा समझता हूँ कि पत्र-लेखकने परिस्थितिकी वास्तविकताको समझनेमें भूल की है। देशने पूर्ण असहयोग शुरू नहीं किया इसका कारण विश्वास या इच्छाकी कमी न होकर योग्यता अथवा तैयारीका न होना है। इसीलिए तो अभीतक सरकारी कर्मचारियोंसे नौकरियाँ छोड़नेकी बात नहीं कही गई है। सरकारी कर्मचारी जब भी चाहें नौकरी छोड़नेके लिए स्वतन्त्र हैं। लेकिन उनसे सरकारी नौकरी छोड़नेकी बात तभी कही जा सकती है जब हिंसाके न भड़क सकनेकी पूरी और समुचित व्यवस्था कर ली गई हो। अतएव जबतक देश नौकरी छोड़नेवाले प्रत्येक व्यक्तिको कोई दूसरा काम

१. बरेलीके अहमद हुसैनने १५ अप्रैलको गांधीजीसे चार प्रश्न लिखकर पूछे थे। देखिए परिशिष्ट १।

२. देखिए अगला शीर्षक।

मुहैया कर देनेकी स्थितिमें नहीं हो जाता तबतक नौकरी छोड़नेकी बात नहीं उठाई जा सकती। अबतक हमारा ऐसा न करना किसी मसलहतके अन्तर्गत न माना जाये जैसा कि आमतौरपर माना जा रहा है। शुद्धतम धर्मशीलतासे बढ़कर कोई मसलहत हो ही नहीं सकती। ऐसी बहुत-सी बातें हैं जो विधि-सम्मत तो हैं किन्तु उपयुक्त बिलकुल नहीं होतीं। असहयोगका आदर्श ही हमारी विधि है और वह देशके सामने है।

चौथा सवाल स्वराज्यके अर्थके बारेमें है। स्वराज्यकी मेरी सीधी-सादी व्याख्या यह है कि भारत अपना कामकाज बिना किसी बाहरी दखलके कर सके। उसे अपने सेना सम्बन्धी व्यय और राजस्व-प्राप्तिका तरीका अपने ढंगसे इस्तेमाल करनेकी आजादी होनी चाहिए। उसमें अपने सारे सैनिकोंको, वे कहीं भी क्यों न हों, वापस बुलानेकी क्षमता होनी चाहिए। यह काम कैसे होगा या कैसे किया जा सकता है, यह सब देशपर, देशकी जनतापर निर्भर है। जनता द्वारा स्वतन्त्रतापूर्वक चुने हुए भारतके प्रतिनिधियोंको ही इसके अमलका तरीका तय करना चाहिए। अगर एक सालके अन्दर स्वराज्य कायम नहीं किया जा सका और मेरा बस चला तो स्कूल छोड़नेवाला एक भी लड़का लौटकर मदरसे वापस नहीं जायेगा और न वकालत छोड़नेवाला कोई भी वकील फिरसे अदालतमें लौटेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४–५–१९२१

३०. अफगानी हमलेका हौआ

एक पत्र-लेखकने कई सवाल पूछे हैं, जिन्हें पाठकोंके लिए इसी अंकमें दूसरी जगह दिया जा रहा है।[१] उनका सबसे अहम सवाल मौलाना मुहम्मद अलीके भाषणके सम्बन्धमें है जो उन्होंने अफगान हमलेकी आशंकाके सम्बन्धमें दिया था। उन्होंने मौलाना मुहम्मद अलीके जिस भाषणका हवाला दिया है उसे मैंने पढ़ा नहीं है। लेकिन अगर अफगानिस्तानका अमीर ब्रिटिश सरकारसे लड़ाई छेड़ दे तो मौलाना मुहम्मद अली कुछ करें या न करें मैं खुद जो-कुछ करूँगा वह एक तरहसे अमीरकी मदद ही कहलायेगी अर्थात् मैं अपने देशवासियोंसे खुल्लमखुल्ला यह कहूँगा कि जो सरकार देशका विश्वास खो चुकी है उसे सत्तारूढ़ बने रहनेमें मदद देना गुनाह है। दूसरी ओर मैं देशवासियोंसे यह भी नहीं कहूँगा कि वे अमीरकी मददके लिए धन इकट्ठा करें। ऐसा करना अहिंसाकी उस भावनाके विपरीत होगा जिसे हिन्दू और मुसलमान दोनोंने खिलाफत, पंजाब और स्वराज्यकी खातिर सिद्धान्तके रूपमें अपनाया है और मेरा खयाल है कि जो-कुछ मैंने कहा है मौलाना मुहम्मद अलीके भाषणका अभिप्राय उससे अधिक नहीं होगा। जबतक हिन्दू-मुस्लिम समझौता बरकरार है तबतक वे इसके सिवा अन्य कोई बात कह भी नहीं सकते। मुसलमान चाहें तो समझौता तोड़नेके

१. देखिए पिछला शीर्षक।

लिए आजाद हैं। लेकिन गौरसे देखनेपर पता चलेगा कि समझौता टूट नहीं सकता। समझौतेको तोड़नेका अर्थ भारतके ध्येयको मिट्टीमें मिला देना होगा। हिन्दू और मुसलमान मिलकर संयुक्त रूपसे सशस्त्र विद्रोह करें, ऐसी कोई सम्भावना भी मुझे आज दिखाई नहीं देती। और अकेले मुसलमान सशस्त्र विद्रोहकी किसी भी योजनामें सफलता पानेकी उम्मीद नहीं कर सकते।

फिर भी मैं पाठकोंसे यही कहूँगा कि वे अफगानी हमलेके हौएमें जरा भी विश्वास न करें। सैनिक मामलोंके अंग्रेज विशेषज्ञोंकी जुबानी हमें अकसर इस रहस्यका पता चलता रहा है कि इस तरहके दंड-अभियान सैनिकोंको फौजी प्रशिक्षण देनेकी गरजसे अथवा निठल्ले बैठे हुए सिपाहियोंको काम-धन्धेमें लगाये रखनेके लिए ही जान-बूझकर रचाये गये थे। कमजोर, निहत्थे, असहाय और भोले-भाले भारतीयोंकी समझमें [आजतक] यह बात नहीं आ पाई है कि ब्रिटिश सरकार किस जादूके जोरसे उन्हें दासताके बन्धनमें जकड़े हुए हैं। यहाँतक कि आज हममें से कई आला दिमाग लोग सचमुच इस बातपर यकीन करते हैं कि विदेशी हमलोंसे भारतकी रक्षा करनेके लिए ही फौजपर इतना जबरदस्त खर्च किया जाता है। मेरी रायमें तो सिखों, गोरखों, पठानों और राजपूतोंके प्रति अर्थात् हम लोगोंके प्रति विश्वास न होनेकी वजहसे और हमें जबरदस्ती अपना गुलाम बनाये रखनेकी गरजसे ही फौजपर इतना अनाप-शनाप खर्च किया जाता है। मेरा विश्वास है (अगर यह गलत सिद्ध हो तो गलती जरूर सुधार लूँगा) कि सरकारको अमीरके साथ सन्धिकी इतनी फिक्र रखनेका कारण रूसी हमलेका डर उतना नहीं है जितना कि यह अंदेशा है कि भारतीय सैनिकोंका उसपर विश्वास नहीं रहा है। आजकी हालतमें निश्चय ही रूसी हमलेका कोई भी डर नहीं है। बोल्शेविक खतरेपर तो मैंने कभी विश्वास ही नहीं किया। बंगालके कल तकके लाड़लेके प्रिय शब्दोंमें "जनताके व्यापक प्रेमपर आधारित" सरकारको रूसी, बोल्शेविक या किसी भी अन्य खतरेसे डरनेकी जरूरत ही क्या है? भारत सन्तुष्ट और शक्तिशाली रहनेके साथ-साथ यदि इंग्लैंडसे मित्रता भी बनाये रखे तो वह अपने ऊपर किये जानेवाले किसी भी हमलेका कभी भी मुँहतोड़ जवाब दे सकता है। लेकिन इस सरकारने हमें जान-बूझकर पुंसत्वहीन बना दिया है, हमें हमेशा अपने पड़ोसियों और संसार-भरसे डराकर रखा है और हमारे सम्पन्न साधन-स्रोतोंका इस कदर दोहन किया है कि हमारा आत्म-विश्वास इस हदतक डिग गया है कि हम न तो अपने-आपको आत्म-रक्षाके लिए और न निरन्तर बढ़ती हुई गरीबी-जैसी सीधी-सी समस्याका हल करनेके लिए समर्थ मानते हैं। इसलिए मुझे तो पूरी आशा है कि अफगानिस्तानके अमीर इस सरकारसे कभी किसी तरहकी सन्धि नहीं करेंगे। ऐसी कोई भी सन्धि भारत और इस्लामके खिलाफ एक नापाक सौदेबाजी ही होगी। यह सरकार 'आपत्कालीन' उपायके रूपमें ओ'डायरशाहीका पल्ला थामे रहनेके लिए, मुसलमानोंके प्रति अविश्वासी बनी रहनेके लिए (इस मामलेमें मैं भारत सरकार और इंग्लैंडकी शाही सरकारमें कोई भेद करनेको तैयार नहीं), और भारतको उसकी पूरी बुलन्दियोंतक उठनेसे रोके रखनेके लिए अफगानिस्तानसे भारतके खिलाफ हमलावर सन्धि करना चाहती है। मेरे खयालमें तो इस मामलेमें असहयोगियोंकी सिर्फ एक ही राय हो सकती

है: जब हम खुद सरकारसे सहयोग नहीं कर रहे हैं तो यह कैसे चाह सकते हैं कि दूसरे उसके साथ सहयोग करें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४–५–१९२१

३१. गांधी — तब और अब

'टाइम्स ऑफ इण्डिया' ने फिर मुझपर कपट करनेका आरोप लगाया है। उसके पिछले लेखमें भी यही आरोप व्यंजित होता था। मैंने पिछले दिनों उस लेखके बारेमें इन स्तम्भोंमें[1] लिखा था। मेरा लेख काफी संयत था। उसपर किसीको आपत्ति नहीं हो सकती थी। निष्कपटताके बारेमें मेरी एक प्रतिष्ठा बन गई है और मैं निष्कपट होनेका दावा भी करता हूँ, इसलिए मैं अवश्य ही चाहूँगा कि मेरी इस प्रतिष्ठापर कोई आँच न आने पाये। "कुहरा"[2] शीर्षक मेरा लेख आलोचकोंको मेरा जवाब समझा जाना चाहिए। मुझे जितना-कुछ कहना था मैंने उसमें कह दिया है। किसी भी मनुष्यको उसकी मृत्युसे पहले न्यायपूर्ण, निष्कपट या भला करार नहीं दिया जा सकता। लेकिन मैं 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' के लेखककी कुछ गलत बयानियोंको सही रूपमें पेश कर देना चाहता हूँ। मैंने जब सत्याग्रह शुरू करनेका ऐलान किया था तब भी मुझपर आरोप लगाये गये थे। कहा गया था कि मैंने राजनीतिसे अलग रहनेकी, गैर-राजनीतिक बने रहनेकी अपनी आन छोड़ दी है। दक्षिण आफ्रिकामें भी मेरे आलोचकोंने मेरे पिछले कामोंका हवाला देकर ही मेरी आलोचना की थी। अभीतक जितने भी आन्दोलनोंसे मेरा सम्बन्ध रहा है, सभीकी आलोचना हुई है और आलोचकोंने मेरे पिछले कामकी सराहना करते हुए ही मेरे हर नये आन्दोलनकी आलोचना की है। मैं यह तथ्य यह दिखानेके लिए पेश नहीं कर रहा हूँ कि वर्तमान आलोचकका आरोप गलत है बल्कि मैं अनजाने बरते गये कपटाचार और आत्म-प्रवंचनाके आरोपपर विश्वास न करनेके लिए अपने को ही मजबूत बनाना चाहता हूँ। मैंने सत्याग्रह-को मुल्तवी कभी नहीं किया था और न कभी सार्वजनिक जीवनसे संन्यास ही लिया था। हाँ, मैंने सविनय अवज्ञा आन्दोलन मुल्तवी किया था, वह आज भी मुल्तवी ही है। वह मैंने इसलिए किया था कि तब मेरा विश्वास था, और आज भी है, कि देश उसके लिए अभी तैयार नहीं है। मेरी हिमालय-जितनी बड़ी भूल यह थी कि मैंने देशकी तैयारीका गलत अन्दाज लगाया था। जिस ढंगका असहयोग शुरू किया गया है उसमें ऐसा कोई खतरा नहीं है, जैसा कि सविनय अवज्ञामें है। असहयोगकी भाँति, सविनय अवज्ञा सदा ही एक कर्त्तव्य नहीं होता। इसीलिए मैंने कहा है कि मुझे असह-योग करनेकी सलाह देते जाना चाहिए चाहे उससे अराजकता फैलनेका अंदेशा ही

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ५६६-६७।

२. देखिए "कुहरा", २०–४–१९२१।

क्यों न हो। अब मान लीजिए कि अराजकता फैलानेवाले जोर ही पकड़ लें, तो क्या उस सूरतमें मुझे अपने पदक फिरसे धारण करने चाहिए या अपने मित्रोंसे फिर पदकधारी बननेके लिए कहना चाहिए या वकीलोंको फिरसे वकालत शुरू करनेकी सलाह देनी चाहिए? क्या अराजकता फैलनेके भयसे मुझे डायरशाहीमें विश्वास करनेवाली एक बेईमान सरकारके साथ सहयोग करने लगना चाहिए? मैं जानता हूँ कि अराजकतामें निष्ठा एक आसुरी चीज है, लेकिन डायरशाही तो उससे भी बुरी है; क्योंकि वह संवैधानिक सत्ताकी नकाब चढ़ाये हुए अराजकता ही तो है। सत्ताके आदेशपर व्यवस्थित ढंगसे की जानेवाली अराजकता उत्कट विश्वासके आधारपर पनपनेवाली अराजकतासे लाख गुना बुरी है। इस दूसरे प्रकारकी अराजकता भड़कनेपर ही मुझे जन-समुदायकी अराजकतासे अपने-आपको उसी तरह अलग रखना चाहिए जैसे कि मैं सरकार द्वारा की जानेवाली अराजकतासे अपने-आपको अलग रखता आया हूँ। मेरे तईं तो दोनों ही बुरी हैं, उनसे अलग रहना चाहिए। मैंने तो जलियाँवाला हत्याकाण्ड करानेवाले के खिलाफ भी प्रतिहिंसाकी कोई बात नहीं की। मैंने इससे ज्यादा तो कुछ नहीं कहा कि उन अपराधियोंमें से जो अभीतक पदासीन हों उनको नौकरीसे निकाल दिया जाये और जो पेन्शनें पा रहे हैं उनकी पेन्शनें बन्द कर दी जायें। महन्त नारायणदासको पेन्शन देने या उनको पदासीन बनाये रखनेकी सलाह मैंने सिखोंको नहीं दी। हाँ, मैंने सिखोंको यह सलाह जरूर दी है कि हत्यायें करनेवालों को दण्ड न दें, ठीक उसी तरह जैसे कि मैंने हत्याकांड करनेवाले पंजाबके सरकारी अधिकारियोंके अपराध क्षमा कर देनेकी सलाह देशको दी है। अमृतसर और ननकाना दोनोंके बारेमें मेरा आचरण एक-सा रहा है। मैं बार-बार कह चुका हूँ कि सरकारके साथ मेरा बरताव उसी तरहका है जैसा कि अपने प्यारेसे-प्यारे रिश्तेदारके साथ होता है। राजनीतिक क्षेत्रमें असहयोग असलमें घरेलू क्षेत्रमें बरते जानेवाले असहयोगका ही सैद्धान्तिक विस्तार है। वकीलों इत्यादिके साथ मेरे सम्बन्धका हवाला देना शोभा नहीं देता। सच तो यह है कि कांग्रेस संगठनमें चन्द ही ऐसे पदाधिकारी वकील रह गये हैं जो अभीतक वकालत करते हैं।

मैं अपनी इस रायपर कायम हूँ कि जहाँ-कहीं असहयोगियोंका बहुमत हो वहाँ किसी भी ऐसे व्यक्तिको पदाधिकारी नहीं बनाना चाहिए जो पूरा-पूरा असहयोगी न हो। कांग्रेस समितिने इस प्रस्तावको ठुकराया नहीं है। मुझे पता नहीं कि सूरतमें वकालत करनेवाले वकीलोंने मुझे कोई मानपत्र दिया था या नहीं। लेकिन यदि वे भी मुझे मानपत्र दें तो मैं उसे निस्संकोच स्वीकार कर लूँगा, अवश्य ही मुझे यह छूट रहे कि मैं उनको गलत रास्तेसे हटाकर सही रास्तेपर ला सकूँ। अली बन्धुओंके साथ मेरा जो सम्बन्ध है, उसे मैं अपनी खुश-किस्मती समझता हूँ और मुझे उसपर नाज है। परन्तु दक्षिण आफ्रिकामें तो मुझे हत्यारों और चोरोंके साथ काम करना पड़ा था, वे कमसे-कम ऐसे लोग तो थे ही जो हत्या और चोरीके जुर्ममें जेलकी हवा खा चुके थे। हाँ, इतनी बात है कि उन्होंने अहिंसाका पालन उतने ही सम्मानप्रद ढंगसे किया था जितना कि एक सत्याग्रही करता है। मुझे तो तब और अबके गांधीमें कोई अन्तर दिखाई नहीं पड़ता, सिवाय इसके कि आज गांधीकी दृष्टि सत्याग्रहके बारेमें अधिक

स्पष्ट है और वह अहिंसाके सिद्धान्तको पहलेसे कहीं ज्यादा महत्त्वपूर्ण मानने लगा है। और मैं 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के लेखकको आश्वस्त करना चाहता हूँ कि मेरी इस उक्तिमें कोई आत्म-वंचना भी नहीं है। सही कौन है यह तो भविष्य ही बतला सकेगा। वैसे पिछला सारा रिकार्ड तो मेरे ही पक्षमें जाता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४–५–१९२१

३२. भाषण : कपड़वंजकी सार्वजनिक सभामें[1]

४ मई, १९२१

बोहरा कौमको[2] भी स्वराज्यकी और हिन्दुस्तानकी सेवा करनी है। उसे खिलाफतके कार्यमें अपना योगदान देना है। स्वराज्यके काममें मैं धनिकोंकी पूरी-पूरी सहायता प्राप्त करना चाहता हूँ। वे बाहरसे बहुत सारा धन कमा कर लाते हैं। उनके लिए यह जरूरी है कि वे तिलक स्वराज्य-कोषमें अपना पूरा-पूरा हिस्सा दें। "दान" शब्दकी रूढ़ि पड़ गई है, इसलिए मैं दान शब्दका प्रयोग करता हूँ अन्यथा यह प्रयोग व्यर्थ है। कारण तिलक स्वराज्य-कोषमें देना तो व्यापार है, स्वराज्यका सौदा है, तिलक महाराजके प्रति अपना कर्त्तव्य है। सौदेमें धन देना अथवा अपना फर्ज अदा करनेके लिए दिए जानेवाले धनको दान नहीं कहा जा सकता।

× × ×

जिस तरह हमारी जनता गोरी चमड़ीसे डरती है उसी तरह भंगी हमसे डरते हैं। जबतक हम उनके लिए गोरी चमड़ेवाले बने रहेंगे तबतक स्वराज्य भी हमको दूरसे नमस्कार करेगा, ऐसा समझिए। हम उन्हें भंगी मानकर अपनेसे दूर रखते हैं इसीलिए सारी दुनिया हमें भंगी मानती है और पास नहीं फटकने देती। आफ्रिकासे आनेवाले किसी व्यक्तिसे आप पूछिए कि वहाँ शराब पीनेवाले, वेश्यागमन करनेवाले, जुआ खेलनेवाले गोरे भी उसे छूते हैं या नहीं? रेलमें, ट्राममें, फुटपाथपर हम गोरोंके साथ नहीं चल सकते; जिस स्थानपर गोरे व्यापार करते हैं उस स्थानपर हम व्यापार नहीं कर सकते; जहाँसे वे रोटी लेते हैं वहाँसे हम रोटी नहीं ले सकते। सब जगह ऐसा नहीं होता, यह मैं स्वीकार करता हूँ। मैं अंग्रेजोंके साथ अन्याय नहीं करता। मेरा उनके साथ कोई झगड़ा नहीं है। लेकिन मैंने अनेक स्थानोंपर देखा है कि जहाँ गोरे रहते, सोते, पीते अथवा खाते हैं वहाँ हमें रहने आदिकी अनुमति नहीं है। गोरे तो शरीर छू जानेमें बीमारीका भय बताकर आरोग्यके बहाने हमें अपनेसे दूर रखते हैं। आत्माको छूत लगेगी ऐसा वे नहीं समझते। लेकिन हम तो यह मानने लगे हैं कि अन्त्यजके छू जानेसे हमारी आत्मा कलुषित हो जायेगी और हमें ईश्वर सजा देगा।

१. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

२. कपड़वंजके बहुतसे निवासी मुस्लिम बोहरा थे लेकिन वे सभामें शामिल नहीं हुए थे।

ईश्वर तो हमें सजा अभी दे रहा है। अकाल, संकट, प्लेग, हैजा, राज्यके अत्याचार — इन सबसे बढ़कर और क्या क्लेश हो सकता है? इसीलिए मैं हिन्दू-समाजसे अनुरोध करके कहता हूँ कि हिन्दुत्व अस्पृश्यताका पोषण करनेमें नहीं, उससे छुटकारा पानेमें है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८–५–१९२१

३३. भाषण: महिलाओंकी सभा, कठलालमें[1]

४ मई, १९२१

धर्मको बनाए रखना न तो ब्राह्मणोंके हाथमें है और न पुरुषोंके। वह तो स्त्रियों-के ही हाथमें है। समाजका आधार-स्तम्भ घर है और धर्मका विकास घरमें होता है। घरकी गन्ध समस्त समाजमें फैलेगी। किसी भी शहरमें व्यापार चाहे कितने ही जोरों-पर क्यों न हो, उस शहरकी चाहे कितनी ही आबादी क्यों न हो लेकिन अगर वहाँ घर अच्छे न हों तो मैं तुरन्त कहूँगा कि यह नगर अच्छा नहीं है। स्त्रियाँ घरकी देवी हैं। वे यदि धर्मका पालन न करें तो जनताका सत्यानाश हो जाये। श्रीकृष्णने यादव-कुलका संहार किया था। और उसका कारण यही था कि यादवोंकी स्त्रियाँ व्यभिचारिणी हो गई थीं, वे अपने धर्मको भूल गई थीं। इसलिए मैं आपसे पवित्र होकर धर्मका पालन करनेके लिए कहता हूँ और पवित्र होनेपर आपसे यह आशीर्वाद माँगता हूँ कि मुझे तथा मौलाना शौकत अलीको अर्थात् हिन्दुओं और मुसलमानोंको स्वराज्यकी, धर्मकी इस लड़ाईमें यश मिले।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८–५–१९२१

३४. पारसियोंके प्रति मैं क्यों आशावान हूँ?

पारसी जबसे हिन्दुस्तानमें आये हैं तभीसे उन्होंने हिन्दुओंके साथ की गई अपनी शर्तोंका भलमनसाहतके साथ पालन किया है।

जब बम्बईमें सब लोगोंके मुँहपर ताला लगा हुआ था तब पारसियोंने ही मुँह खोला था।

पारसियोंने गुजरातकी जो सेवा की है वह सदैव याद रहेगी।

खबरदार[2] और मलबारी[3]-जैसे पारसियोंने गुजराती भाषाकी भी कम सेवा नहीं की है।

१. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।
२. आर्देशिर फ्रामजी खबरदार (१८८१–१९५४)।
३. बेहरामजी मेरवानजी मलबारी (१८५४–१९१२); कवि, पत्रकार और समाज-सुधारक।

पारसियोंने कभी धार्मिक झगड़ा नहीं किया और अपने धर्मका स्वतन्त्र रहकर पालन कर सकनेमें सन्तोष माना है।

जगत्में पारसियोंकी उदारताके समकक्ष कोई नहीं पहुँचता।

पारसियोंमें दूसरोंकी अच्छाईको परखने और उसे अपनानेकी भी पर्याप्त शक्ति है।

पारसियों-जितनी छोटी किन्तु विख्यात कौम दुनियामें दूसरी नहीं है। इससे मैं अनुमान करता हूँ कि उनके धर्मशास्त्र उच्च कोटिके हैं। वे सरल और ऐसे हैं जिन्हें बच्चा भी समझ सकता है।

लेकिन अगर पारसी कौम अपनी प्राचीन महत्ताकी पूँजीपर निर्भर रहकर संसार-से जूझना चाहे तो भारी भूल करेगी।

अन्य लोगोंके समान ही पारसी भी इस समय पश्चिमकी विषैली हवासे ग्रसित हैं। उन्होंने प्राचीन सादगीको त्यागना आरम्भ कर दिया है। उनमें भोग-विलास बढ़ता जा रहा है। इस कौमके पास बहुत ज्यादा पैसा होनेके कारण कुछ लापरवाही आ गई जान पड़ती है। छोटी कौम नीतिके चरण-चिह्नोंपर चलती हुई जिस तरह शीघ्र उन्नति कर सकती है उसी तरह अगर वह अनीतिका अनुसरण करे तो शीघ्र ही गिर भी सकती है और यदि वह गिरती है तो उसका नाश होनेमें देर नहीं लगती।

मेरे पिताके पास एक पारसी सज्जन आया करते थे। उनसे उनका सम्बन्ध बहुत निकटका था। मैं उस समय बालक था। मैं ईदुलजी सेठको कैसे भूल सकता हूँ? वे जब मेरे पितासे मिलने आया करते थे तब वे सरलताकी ही बात किया करते थे। वे स्वयं बहुत सादे थे। वे राजकोटके ठाकोर साहबके सम्बन्धी भी थे। वे उनके सामने भी बेकार खर्च और आडम्बरके विरुद्ध बात करनेमें हिचकिचाते नहीं थे। वे जितने सादे थे उतने ही साहसी भी थे और उतने ही सज्जन भी। तभीसे मैं यह मानने लगा हूँ कि पारसी कौम चाहे तो बहुत-कुछ कर सकती है, बहुत-कुछ दे सकती है। मेरा विश्वास है कि पारसी कौम इस विषैली हवाके प्रभावसे बच जायेगी। उसका साहस, उसका धर्म उसे बचायेगा। और मुझे भरोसा है कि हिन्दु-स्तानके बाशिन्दोंकी भाँति पहलेके समान ही हिन्दुस्तानकी सेवा करेगी। ईश्वर उसे विवेक, सद्बुद्धि और हिम्मत दे। इस धर्म-युद्धमें पारसियोंका भले ही जो भी योगदान हो लेकिन उनकी सज्जनताको हिन्दुस्तान कभी भुला नहीं सकता।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-५-१९२१

३५. एक पारसी बहनका पुरस्कार

जापानकी राजधानी याकोहामासे मेहरबाई भेसानिया नामक बहनने अत्यन्त प्रेमभरा पत्र लिखा है। वह कुछ दिनोंसे मेरे पास ही पड़ा हुआ है। इसके लिए मैं उस बहनसे क्षमा चाहता हूँ। इस पत्रको मैंने कुछ अर्सेके बाद पढ़ा। बादमें, प्रकाशित करूँ अथवा न करूँ इस दुविधामें तथा अन्य कार्योंमें व्यस्त रहनेके कारण कोई निश्चय न कर सका।

पुरस्कार घोषित करनेसे अच्छे राष्ट्रीय गीत मिल सकते हैं या नहीं, यह बात मुझे विचारणीय प्रतीत हुई। तथापि अन्तमें मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि अत्यन्त शुद्ध भावनासे एक बहनके पत्रको प्रकाशित न करना मेरे लिए उचित नहीं है। इसलिए वह पत्र मैं नीचे दे रहा हूँ। मैंने उसमें से अपनेसे सम्बन्धित कुछ अंश निकाल दिया है, कुछ-एक शब्दोंको सुधारा है और अंग्रेजी वाक्योंका गुजरातीमें अनुवाद किया है। शेष पत्र मैं जैसेका-तैसा प्रकाशित कर रहा हूँ। दूर बैठी एक बहन इस धर्म-युद्धमें इतनी दिलचस्पी लेती है, यह हर्षकी बात है।

पुरस्कारके प्रलोभनसे तो नहीं लेकिन एक बहनने इतनी दूर बैठे हुए जो इच्छा प्रकट की है उसे मान प्रदान करनेकी खातिर अगर किसीको देवी सरस्वती प्रेरणा प्रदान करे और गुजरातके कवि इस दिशामें प्रयत्न करेंगे तो मैं उनका आभारी होऊँगा। सब कविताएँ तीस जूनके अन्ततक मिल जानी चाहिए। यदि एक ही विषयसे सम्बन्धित कोई बहुत अच्छी कविता हुई तो सारा पुरस्कार एक ही व्यक्तिको दे दिया जायेगा। लेकिन यदि एक भी कविता निश्चित स्तरकी न हुई तो पुरस्कार नहीं दिया जायेगा। परीक्षकका नाम मैं फिर प्रकाशित करूँगा।[१]

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–५–१९२१

१. इसके बाद मेहरबाईका पत्र है जो यहाँ उद्धृत नहीं किया गया। इसमें उत्कृष्ट गीतोंके लिए ७५ रुपयेके तीन पुरस्कारोंकी घोषणा की गई थी: पहला गीत वह जिसमें भगवान्‌के वे सब नाम आ जाते हों जिनसे उसे विभिन्न धर्मोंके लोग सम्बोधित करते हों; दूसरा गीत वह जिसमें लोकमान्य तिलकके जीवनसे पाठ ग्रहण करनेकी बात कही गई हो; और तीसरा वह गीत जिसमें असहयोगियोंकी अर्जुनसे तुलना करते हुए उसी तरह अपील की गई हो जिस तरह भगवान् श्रीकृष्णने **भगवद्गीता**में की है।

३६. पत्र : देवचन्द पारेखको

सूरत
५ मई, १९२१

भाईश्री देवचन्दभाई,[1]

आपका तार मिल गया था। मेरा वहाँ आना असम्भव हो गया था। आप चाहें तो काठियावाड़में एक भी घर चरखेके बिना न रहे। लेकिन क्या खुद मरे बिना स्वर्ग जाया जा सकता है? क्या आप स्वयं कातते हैं? बाहर, भीतर केवल खादीका ही प्रयोग करते हैं?

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती पत्र (जी० एन० ५७२८) से।

३७. भाषण : महाराष्ट्र प्रान्तीय सम्मेलन, वसईमें

७ मई, १९२१

आपका प्रेम मुझे यहाँ खींच लाया है। मुझे दुःख है कि आपके बीच मैं अधिक समयतक नहीं रह सकता। अध्यक्ष महोदयकी आज्ञासे मुझे जो-कुछ कहना है, सो मैं संक्षेपमें कहूँगा।

पहले मुझे मूलशी पेटाके[2] सम्बन्धमें ही बोलना चाहिए। मुझे दुःख होता है कि मैं अबतक वहाँ जाकर अपने भाइयोंके कष्टोंको खुद अनुभव नहीं कर सका हूँ। मुझे उसके बारेमें बहुत कम जानकारी है। मैं समाचार-पत्र कदाचित् ही पढ़ पाता हूँ। जिसके बारेमें मैं अधिक नहीं जानता उसके सम्बन्धमें कुछ भी बोलते अथवा लिखते समय हिचकिचाता हूँ; और यह स्वाभाविक भी है। तथापि इसकी गहराईमें उतरे बिना मैंने 'यंग इंडिया' में अपने विचारोंको व्यक्त किया है। मूलशी पेटासे सत्याग्रहियोंके जो प्रतिनिधि आये हैं उनके प्रति मैं अपनी सहानुभूति प्रकट करता हूँ। अपने अधिकारोंके लिए जो लोग लड़ते हैं उनके लिए मेरे मनमें हमेशा सहानुभूति रहती है। मैं समझता हूँ कि मूलशी पेटाके लोग अपनी भूमिके स्वामित्वको कायम रखनेके लिए लड़ रहे हैं। मैं उनके दावेमें उनके साथ हूँ। जो लोग देहका त्याग करके भी अपनी वस्तुकी रक्षा करते हैं, मैं हमेशा उन लोगोंके साथ हूँ। लेकिन सत्यकी खातिर जो मारनेके लिए तैयार होते हैं उनका मैं कभी साथ नहीं

१. गांधीजीके सहपाठी और मित्र।

२. देखिए "टिप्पणियाँ", २७-४-१९२१।

दे सकता। वे सत्यकी खातिर लड़ते हैं या असत्यकी इतना निश्चय कर लेनेपर वे मेरी आवश्यक सहायता प्राप्त कर सकते हैं। मूलशी पेटाके लोग जब सत्याग्रह करनेके सम्बन्धमें मुझसे सलाह लेने आये थे तब मैंने कहा था कि अगर वहाँके लोगोंमें इतनी ताकत है तो यह प्रयोग अवश्य आजमाने योग्य है। और उन्होंने सिद्ध कर दिया है कि वे यह ताकत रखते हैं। वे जितना प्राप्त कर सकते हैं उतना अच्छा है, लेकिन पूरी शान्ति तो उन्हें तभी मिल सकती है जब वे सदैवके लिए भयसे मुक्त हो जायें। जो व्यक्ति अपनी जमीन नहीं छोड़ना चाहता, उससे कानूनकी सहायतासे जबरदस्ती जमीन छुड़वाना हमारे देशकी सभ्यता नहीं है। मेरे पास एक छोटा-सा मुकदमा था। उस व्यक्तिकी जमीन साधारण थी, लेकिन उसे बचानेकी खातिर वह मेरे पीछे पागलोंकी तरह घूमता था। जैसे पिता अपने बालकको बेचनेको तैयार नहीं होता उसी तरह स्वाभाविक रूपसे व्यक्ति भी अपने पिताकी जमीनसे अलग नहीं होना चाहता। यह हमारा प्राचीन स्वभाव है। मुझे उम्मीद है कि हमारी टाटा कम्पनी मूलशी पेटामें सत्याग्रहियोंके विरुद्ध कुछ भी नहीं करेगी। वह लोगोंको खुश करके भले ही [जमीन] मुफ्त ले ले तो कोई बात नहीं है। किन्तु मुझे आशा है कि जबतक एक भी व्यक्ति नाराज हो तबतक वह जमीन लेनेके लिए कोई भी कदम नहीं उठाएगी। भूमि अधिग्रहण अधिनियमके द्वारा जमीन लेना भले ही पाश्चात्य सभ्यता हो, लेकिन जिस सभ्यताको मैं राक्षसी मानता हूँ उससे मुझे कुछ लेना-देना नहीं। लेकिन जबतक मूलशी पेटाके लोग शान्तिपूर्वक अपना संघर्ष चलाते हैं तबतक सारे देशको उनका साथ देना चाहिए।

मैं मूलशी पेटामें लछमनसिंह और दलीपसिंहके जैसी बहादुरी देखना चाहता हूँ। वे दोनों योद्धा एक अँगुली उठाए बिना ननकाना साहबमें महन्त नारायणदासके प्रहारोंके विरुद्ध अडिग रहकर शहीद हो गये। लछमनसिंह और दलीपसिंहके मित्रोंने उस दिन उन्हें मन्दिरमें जानेसे मना किया। [हालाँकि] महन्त नारायणदासने उन्हें मारनेकी तैयारियाँ कर रखी थीं। लेकिन उन्होंने उत्तरमें कहा, "हम गुरु ग्रन्थसाहबके आगे शीश झुकायेंगे और इससे बढ़कर हमारा क्या सौभाग्य हो सकता है कि उस स्थितिमें हम मृत्युको प्राप्त हों।" उनके ये शब्द अक्षरशः सत्य निकले। लछमनसिंह गुरुद्वारेके अन्दर पहुँच गये थे। जब वे गुरु ग्रन्थसाहबके आगे शीश झुका रहे थे तब उनकी हत्या कर दी गई। दलीपसिंह बाहर रह गये थे। नारायणदास उनको कत्ल करनेके लिए बाहर आया। दलीपसिंहने उससे कहा, "तू पागल हो गया है।" दलीपसिंहके पास कृपाण थी, लेकिन उसे उन्होंने म्यानमें ही रखा। उनका शरीर अन्य सिखोंके समान ही कद्दावर था। वे चाहते तो दो-तीन व्यक्तियोंको तो वहीं खत्म कर सकते थे। लेकिन यह उनके सिद्धान्तके विरुद्ध था। वे कांग्रेसकी 'अहिंसा' की आज्ञासे बँधे हुए थे। वे नारायणदासको समझाते हुए उसके ही हाथों मारे गये। तेतीस करोड़ लोगोंमें ऐसे दो व्यक्ति ही पर्याप्त नहीं हैं। सिखोंमें ही नहीं वरन् हिन्दुओं और मुसलमानोंमें भी ऐसे ही वीरोंकी जरूरत है। लछमनसिंह और दलीपसिंहकी ताकत कम न थी। लेकिन उन्होंने तलवारसे किसीपर अत्याचार न करनेका निश्चय किया था। मूलशी पेटाके सम्बन्धमें मैं इससे अधिक कुछ नहीं कहूँगा।

ननकाना साहबमें एक ओर जहाँ इन दो भाइयोंने अत्यन्त सज्जनताका काम किया वहाँ मालेगाँवके निवासियोंने उतनी ही हैवानियत दिखाई है। सब-इन्स्पेक्टरने चाहे जितनी गालियाँ क्यों न दी हों, चाहे जितना उत्तेजित क्यों न किया हो तो भी जो लोग कांग्रेसको मानते हैं वे हत्या करनेका घोर कृत्य कर ही नहीं सकते। कांग्रेसके अनुयायियोंकी दृढ़ प्रतिज्ञा है कि भारतको आजाद करवानेके लिए हम किसीको भी नहीं मारेंगे, बल्कि स्वयं मरेंगे। वहाँ नारायणदासने क्या कम गालियाँ दी थीं? मालेगाँवमें हमारे भाइयोंने मनुष्यताका त्याग किया। इस तरह कोई स्वराज्य नहीं मिलता। मैं एक वकीलके रूपमें नहीं वरन् भारतीयके रूपमें बोल रहा हूँ। ऐसे कृत्योंको बन्द करके जब शान्तिका अपना दावा सिद्ध करेंगे तभी और केवल तभी हम स्वराज्य प्राप्त करेंगे, पंजाबका न्याय प्राप्त करेंगे, खिलाफतका फैसला करायेंगे और आज न्यायके नामपर होनेवाले अत्याचारोंको दूर करेंगे। तब दुनिया देखेगी कि हमारी शान्तिकी ताकतके सामने बड़े-बड़े मन्त्रियोंको अपना कथन रद्द करना पड़ा है, ओ'डायर तथा डायरकी पेन्शन बन्द करनी पड़ी है। तब वह समझेगी कि हमारे जैसी ताकत न तो आयरलैंडमें है, न रूसमें और न मिस्रमें। हमारा और उनका मुकाबिला ही नहीं हो सकता। हमारा आधार छल और गाली नहीं वरन् सचाई है। हम अभी कर देना बन्द क्यों नहीं करते? क्योंकि मालेगाँवके पागलोंके समान दूसरे पागल भी हिन्दुस्तानमें पड़े हुए हैं। जो यह मानते हों कि इस 'शान्ति' से भी उच्च अस्त्र हमारे पास पड़ा हुआ है, उनसे मैं दूर रहनेकी प्रार्थना करता हूँ। कमसे-कम वे इस आन्दोलनकी प्रगतिमें हस्तक्षेप तो न ही करें।

यह महाराष्ट्रकी सभा है। महाराष्ट्रके सम्बन्धमें मुझे क्या-क्या उम्मीदें हैं, यह मैं पहले ही व्यक्त कर चुका हूँ। उसमें मेरी जो श्रद्धा थी वह अब भी कायम है। जब महाराष्ट्रके लोगोंके दिलोंमें इस आन्दोलनके प्रति पूरा विश्वास बैठ जायेगा तभी, मैं जानता हूँ कि, मेरा काम पूरा होगा। जितना त्याग और ज्ञान महाराष्ट्रमें है उतना मैंने कहीं और नहीं देखा। जहाँ ज्ञान और बलिदानका समागम होता है वहाँ यज्ञ सम्पूर्ण होता है। महाराष्ट्रमें जब यह आन्दोलन सच्चे उत्साहके साथ आरम्भ होगा तब इस देश और इस आन्दोलनको मेरे-जैसे साधारण मनुष्योंकी अपेक्षा नहीं रहेगी। जबतक वह जाग्रत नहीं होता तभीतक मेरे लिए कुछ काम है। बहुतसे लोग कहते हैं कि महाराष्ट्र पीछे है। इस समय यह बात सच है। महाराष्ट्रमें जब थोड़ी अधिक श्रद्धा आ जायेगी तब उसकी शक्ति अपने-आप सिद्ध हो जायेगी। सूर्यके उदय होनेका जिस तरह ढिंढोरा नहीं पीटा जाता उसी तरह महाराष्ट्रकी जागृति भी खुद-ब-खुद सामने आ जायेगी। मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि वह महाराष्ट्रको शक्ति दे ताकि वह अपना पूर्ण योगदान दे। लोकमान्यकी आप-जितनी पूजा कोई नहीं करता। वे स्वराज्यके लिए ही जीवित थे, स्वराज्यके लिए ही जेल गये और स्वराज्यका ही कार्य करते हुए उन्होंने देहत्याग किया। और अगर आप अपने-आपको उनका सच्चा वारिस सिद्ध कर दिखायेंगे तो हम इसी वर्ष स्वराज्य ले लेंगे अथवा उसे लेते हुए मर जायेंगे। अगर आप उतना कर सकेंगे तो मैं कहूँगा कि तिलक महाराजने आपके बीच ठीक ही जन्म

लिया था। नहीं तो आप तिलक महाराजके अयोग्य ठहरेंगे ऐसा कहनेकी मैं आपसे अनुमति चाहता हूँ।

अगर आपको इस बातका विश्वास हो जाये कि इन पाँच-छः महीनोंमें हिंदुस्तानने जितनी प्रगति की है उतनी पहले कभी नहीं की थी तो आप इसी वर्ष स्वराज्य ले लेंगे। तभी आप तिलक महाराजकी आत्माको शान्ति प्रदान करेंगे। अभी तो उनकी आत्मा दुःखसे आश्चर्य कर रही होगी कि महाराष्ट्रके लोगोंमें अभीतक ऐसी श्रद्धा क्यों नहीं जागी जिससे वे अपनी तपस्यासे हिन्दुस्तानको उबारें।

मुझे उम्मीद है कि एक भी व्यक्ति इस तपश्चर्याका व्रत लिए बिना यहाँसे घर नहीं जायेगा। आपके हाथ उठा देनेसे मैं मुग्ध नहीं हो जाऊँगा। मैं तो मूर्तिपूजक हूँ। मुझे तो आपके कार्यकी प्रतिमा चाहिए, स्वर्गीय तिलक महाराजकी नहीं। हम स्वराज्यका सौदा करते हैं। मुझसे जब सिन्धी भाइयोंने पूछा कि यदि हम एक करोड़ रुपया इकट्ठा नहीं कर सके तो? मैंने जवाब दिया, "तो आप और मैं साथ-साथ सिन्धु नदीमें डूब मरेंगे।" मैं जानता हूँ कि महाराष्ट्रमें पैसा कम है, लेकिन उसमें शक्ति अधिक है। उस शक्तिसे आप चाहें तो धनकी वर्षा कर सकते हैं। इस मण्डपमें, इसी क्षण आप क्या कर सकते हैं? यदि आपके दिलमें एक भी वस्तुके बारेमें आस्था न हो तो आप स्पष्ट कर दें कि "महाराष्ट्रके हम ज्ञानी लोग बेन्थम[1] और मिलके[2] दर्शनको घोटकर पी जानेके बाद इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि गांधी जो कहता है वह निरा पागलपन है।" मुझे सिर्फ इतना ही दुःख होगा कि असहयोग ज्ञानातीत है; श्रद्धातीत नहीं। लेकिन अपना कर्त्तव्य निश्चित करना आपके हाथमें है। मैं तो इतना ही कहूँगा कि आप जो-कुछ स्वीकार करें उसे हृदयसे स्वीकार करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२–५–१९२१

३८. मालेगाँवका अपराध

मालेगाँवके असहयोगियोंने जो अपराध किया जान पड़ता है उससे प्रत्येक असहयोगीको शर्म आनी चाहिए।[3] मालेगाँवके लोगोंने अपना धर्म छोड़ा, कर्म छोड़ा तथा देश और संघर्षको भारी नुकसान पहुँचाया है। हम सुसभ्य और सुसंस्कृत होनेका दावा न करें यह और बात है। कालेमें काला नजर नहीं आता, लेकिन दूधमें काला तुरन्त दिखाई दे जाता है। उसी तरह जब हम साफ दिल होनेका दावा करके काली करतूतें करते हैं तब सारा जगत् हमपर थूकता है। "हम तो धर्मयुद्धमें जुटे हुए हैं", "हमें खुद ही मरना है", "हमें किसीको मारना नहीं है"—ऐसी-ऐसी प्रतिज्ञाएँ करके हम हत्या

१. जैरमी बेन्थम (१७४८–१८३२); इंग्लैंडके प्रसिद्ध अर्थशास्त्री व लेखक जिनके विचारोंका जॉन स्टुअर्ट मिलने विशद विवेचन किया।

२. जॉन स्टुअर्ट मिल (१८०६–१८६३)।

३. देखिए "टिप्पणियाँ", ४–५–१९२१।

करते हैं तो हम जगत्को, अपनेको और परमेश्वरको धोखा देते हैं। मालेगाँवके लोगोंने ऐसा ही किया जान पड़ता है।

इस अकार्यसे हमारे संघर्षको जरूर धक्का पहुँचा है। और इससे अब स्वराज्य मिलनेमें अवश्य देर होगी। कौन जानता है कि हम महीने-पन्द्रह दिनमें ही स्वराज्य प्राप्त न कर लें? हमने जब आन्दोलन शुरू किया तब उसका जो वेग था उसकी अपेक्षा वह आज इतना बढ़ गया है कि अब हम अपना क़दम कब वापस ले पायेंगे, इसका कोई अन्दाज नहीं लगा सकता। लेकिन हम जितनी भूल करते हैं, स्वराज्य आनेमें उतनी देर तो होती ही है, इतना तो एक बालक भी कह सकता है। जिस तरह हिसाब करते हुए भूल करनेपर फिरसे हिसाब लगाना पड़ता है उसी तरह हमें भी करना होगा।

हमारी प्रतिज्ञा ऐसी है कि अधिकारी लोग हमें चाहे कितना ही उत्तेजित क्यों न करें तो भी हमें उनका विरोध नहीं करना है। हम मार खायेंगे लेकिन हाथ नहीं उठायेंगे और झुकेंगे भी नहीं। ऐसा होनेपर भी लगता है मालेगाँवके असहयोगियोंने एक सब-इन्स्पेक्टर तथा अन्य लोगोंको मार डाला है।

कुछ-एक असहयोगियोंने कानूनका सविनय भंग किया, उन्हें सजा हुई — उन्होंने उस सजाको झेल लिया, तिसपर भी लोगोंने बलपूर्वक उन्हें छुड़वाया। इस प्रकार खिलाफतका बचाव नहीं होता, स्वराज्य नहीं मिलता।

असहयोगका मुख्य और प्रधान स्वरूप शान्ति — अहिंसा — अमन है। जो शान्ति भंग करते हैं वही सरकारके सच्चे सहयोगी हैं। उदार दलकी अपेक्षा अशान्ति पैदा करनेवालोंसे सरकारको अधिक मदद मिलती है। दो-चार अधिकारियोंको खोकर यदि सरकार असहयोगको तोड़ सकती है तो उतने नुकसानको वह सहज ही उठा सकती है।

मैं अनेक बार लिख चुका हूँ कि शान्तिके बिना स्वराज्य अथवा खिलाफतके प्रश्नका निर्णय होना असम्भव है। वकील वकालत न छोड़ें, विद्यार्थी स्कूल न छोड़ें, अन्य लोग खुद अपनेसे सम्बद्ध असहयोग न करें तो काम चल सकता है, लेकिन कोई शान्तिको भंग करे तो बिलकुल काम नहीं चल सकता। हिन्दू-मुस्लिम मित्रता, शान्ति और स्वदेशी अर्थात् चरखा, ये तीन तो अनिवार्य शर्तें हैं, लेकिन इनमें भी शान्ति मुख्य वस्तु है। इक्के-दुक्के लोगोंको छोड़कर अधिकांश लोग खादी पहनने लगें तो हर्ज नहीं; थोड़ेसे हिन्दू और मुसलमान लड़ें, यह भी सहन किया जा सकता है, लेकिन अगर एक भी व्यक्ति शान्ति भंग करके खून-खराबी करता है तो यह असह्य है। इससे देशको भारी नुकसान होता है। शान्तिकी शर्त इतनी सख्त है।

लेकिन समस्त हिन्दुस्तानके लिए कौन उत्तरदायी हो सकता है? यह प्रश्न हमारी दुर्बलताका परिचायक है। लोगोंके लूटपाट करनेपर जिस तरह सरकारमें उन्हें दबानेकी शक्ति है उसी तरह लोगोंको अशान्ति फैलानेसे रोकनेकी शक्ति प्राप्त करनेमें ही स्वराज्य मिलनेकी सम्भावना है। हममें अगर इतनी शक्ति नहीं है कि हम लोगोंको शान्ति बनाये रखनेके लिए प्रेरित कर सकें तो हमें स्वराज्यका विचार छोड़ देना चाहिए। हम लोगोंपर प्रभाव डाल सकते हैं, इसी विश्वासपर हमारे संघर्षकी इमारत

खड़ी है। यदि लोगोंको हम शान्ति बनाये रखनेकी बात न सिखा सकें तो हमें स्वीकार करना होगा कि हम स्वराज्य प्राप्त करनेके योग्य नहीं बने हैं। इसलिए सब स्वयंसेवकोंको इस बातपर सबसे ज्यादा ध्यान देना चाहिए।

शराबी भले शराब न छोड़े, खिताबवाला भले खिताबसे चिपका रहे, अधिकारी भले बदतमीजीसे पेश आये, सिपाही भले हमें मारे, इतना होनेपर भी हम चुपचाप इसे सहन करें और शान्तिका त्याग न करें।

तब हम क्या करें? मालेगाँवके लिए हम क्या प्रायश्चित्त करें? पहले तो मालेगाँवके अपराधियोंको ढूँढ़ निकालें और उन्हें समझायें कि जिन्होंने अपराध किया है वे उसे स्वीकार करें तथा निश्चयपूर्वक फाँसीपर चढ़ें। हम सब अपनी जुबानपर काबू रखें और दूसरोंसे भी वैसा ही करनेके लिए कहें। हम तीखे भाषण देना छोड़ दें, प्रत्येक अवसरपर सभाएँ और हड़तालें करनेकी आदत छोड़ दें, सरकारके दोषोंपर विचार करनेके बदले अपने दोषोंको देखते हुए अपनी कमजोरीको पहचानना सीखें और उसे दूर करनेके उपाय ढूँढ़ें। पण्डित अर्जुनलाल सेठी पकड़े गये। लोगोंकी भीड़ इकट्ठी हो गई और उन्होंने खूब उपद्रव किया, इसे मैं कायरताका लक्षण मानता हूँ। वे जेल नहीं जाना चाहते, वे सेठीजीको भी जेल नहीं जाने देना चाहते। इसीसे जब-जब कोई पकड़ा जाता है तब लोग उपद्रव मचानेकी बातको ही महत्त्वपूर्ण मानते हैं। यदि सेठीजीके जेल जानेसे लोगोंमें सचमुच शौर्य जाग पड़ा हो तो वे अपने कर्त्तव्यको और अधिक समझें। उन्हें जो असहयोग करना है उसे पूरा करें और स्वराज्य प्राप्त करके ही छोड़ें। स्वयं दुर्व्यसनोंको छोड़ें, स्वयं जो विदेशी कपड़े पहनते हों उन्हें फेंक दें, चरखा न चलाते हों तो चरखा चलाना शुरू कर दें। सेठीजीके पकड़े जानेपर जिन्होंने धाँधली मचाई थी उनमें से कितने ही शराबी थे, कितने ही विदेशी वस्त्र पहननेवाले थे और बहुतसे तो चरखा चलानेवाले भी थे —— यह बात ध्यान देने योग्य है। पिताके जीवित रहनेपर जो पुत्र उनके सद्गुणोंका कम अनुकरण करता है लेकिन पिताके मरनेपर उनका सम्पूर्ण रूपसे अनुकरण करता है वह सपूत है; न कि वह जो खूब रोता-धोता और कुहराम मचाता है अथवा बिरादरीको भोज देता है। उपद्रव मचानेसे, उपद्रव करके सेठीजीको छुड़वानेसे स्वराज्य मिल सकता हो सो बात नहीं है। इससे तो स्वराज्य मिलनेमें कुछ विलम्ब ही होगा। लेकिन अगर हम अपने कर्त्तव्यका ज्यादा अच्छी तरहसे पालन करेंगे तो स्वराज्य तो जल्दी मिलेगा ही इसके अतिरिक्त अपने बीच हम सेठीजीका स्वागत करनेकी अधिक शक्ति भी प्राप्त करेंगे। इसलिए मालेगाँवके लिए एकमात्र प्रायश्चित्त यह है कि हम स्वयं अपने मनपर, अपने क्रोधपर अधिक काबू पायें, हम व्यसनोंको छोड़ दें और चरखा चलायें तथा सिर्फ खादी पहनने लगें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८–५–१९२१

३९. टिप्पणियाँ

विचित्र आदेश

"शराबकी दुकानके आसपास तथा गाँवमें शराब पीनेके लिए जानेवाले लोगोंको परेशान न करनेके सम्बन्धमें" बड़ौदा सरकारकी ओरसे एक विज्ञप्ति निकाली गई है जिसे देखकर बहुत दुःख होता है। यह विज्ञप्ति निम्नलिखित है।[1]

शराब पीनेकी यह स्वतन्त्रता कैसी होगी? इसमें शक नहीं कि चोरी करनेवाले-को चोरी करनेका अधिकार है, लेकिन क्या साहूकारको उसे चोरी करनेसे रोकनेका भी अधिकार नहीं? कानून तो लोगोंको चोरको मार भगानेका अधिकार भी देता है। तो फिर चोरकी स्वतन्त्रताकी रक्षा किस तरह हो सकती है? मद्य-निषेध करानेवाले लोग तो शराबीको समझा-बुझाकर रोकते हैं। इसमें स्वतन्त्रता कहाँ भंग हुई? बड़ौदा सरकारकी विज्ञप्तिका स्पष्ट रूपसे यह अर्थ निकलता है कि कदाचित् शराब पीना एक सद्गुण है और शराबकी दुकानका अस्तित्व ही कदाचित् लोगोंके लिए लाभदायक है। शराबीको अथवा मद्य-विक्रेताको कोई गाली दे, कोई उसे मारे अथवा उसपर अन्य प्रकारसे अत्याचार करे तो उसे बड़ौदा सरकार दण्ड दे; उसके विरुद्ध निषेधादेश जारी करे यह तो उचित है। लेकिन शराबकी दुकानोंके आसपास खड़े होकर शराबीको अग्निमें न कूदनेके लिए कहने तथा उसे शर्मिन्दा करनेवाले व्यक्तिको अपराधी मानना, यह तो शराबीको प्रोत्साहित करनेके समान हुआ। मैंने बड़ौदाकी राजनीतिको कमसे-कम इतना लज्जाजनक तो नहीं माना था। मुझे तो अभीतक यही उम्मीद है कि ऐसी विज्ञप्ति विचारपूर्वक नहीं निकाली गई अपितु किसी निरंकुश अधिकारीने अपनी ही जवाबदेहीपर इसे जारी किया है। यदि यह अनुमान सही है तो मैं बड़ौदा सरकारकी ओरसे इसे रद किये जानेका एक अन्य आदेश जारी किये जानेकी उम्मीद रखता हूँ।

शराबसे होनेवाली आय

जनताको यह बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि आज शराब और अफीम आदिसे होनेवाली आयसे हमारे बच्चे शिक्षा पाते हैं। अगर नीति और धर्म सम्बन्धी हमारे विचार मन्द न पड़े हों तो इस विषयकी ओर हम पूरा ध्यान दें तथा अपने बच्चोंको पापकी कमाईसे शिक्षा न दें। चाहे जो हो, स्वराज्य मिलनेपर हमें इस बातसे जल्दसे-जल्द छुटकारा पाना है। शराब आदिका व्यापार हम कदापि न करें। हम जानते हैं कि प्रजा ऐसी स्थितिमें नहीं है कि वह नये करके बोझको सँभाल सके। बल्कि करोंको तो हमें और भी कम करना होगा और तिसपर आज जितने बालकोंको शिक्षा मिलती है उसकी अपेक्षा कहीं अधिक बालकोंको हमें शिक्षा देनी होगी। मैंने जो

१. इसे यहाँ उद्धृत नहीं किया जा रहा है। विज्ञप्तिका आशय यह था कि शराब खरीदनेके लिए जो लोग दुकानमें जाना चाहते हैं उनकी स्वतन्त्रतामें लोग, विशेषतः विद्यार्थी बाधक न बनें।

सुझाव दिया है, यह कार्य उसीके द्वारा सम्भव है। फीस न ली जाये और उत्तम शिक्षा दी जाये, कर ज्यादा न लागू किये जायें। इस तरह चरखा-उद्योग आरम्भ करके हम "एक पन्थ दो काज" कर सकते हैं।

एक पारसी भाई द्वारा अपना बचाव

जलगाँवसे श्री फीरोजशाह तेमुलजी मिस्त्रीने बताया है कि उनकी शराबकी दुकान है। वे बचपनसे ही इस धन्धेमें लगे हुए हैं। उनका बहुत बड़ा परिवार है। उनकी आयु ५१ वर्षकी है। वे बताते हैं कि अगर आज वे दुकान छोड़ दें तो अन्य चार हिन्दू उसे लेनेके लिए तैयार बैठे हैं। ऐसी स्थितिमें अगर वे अपना धन्धा छोड़कर अपना तथा अपने परिवारका निर्वाह करने के अयोग्य बन जायें तो इससे क्या हासिल होगा? इससे क्या शराबका धन्धा बन्द हो जायेगा? ऐसी हैं इन भाईकी दलीलें; इनके प्रति मुझे पूरी सहानुभूति है। उनकी मुश्किलें समझमें आ सकती हैं लेकिन ऐसे धर्म-संकटसे निकल जानेमें ही पुरुषार्थ है। यदि ये भाई शराब पीना अथवा बेचना पाप समझते हैं तो उपर्युक्त दलीलके लिए कोई अवकाश ही नहीं रह जाता। हजारों लोग पापकर्म करते हैं, किन्तु उससे हमें कोई पाप करनेका अधिकार नहीं मिल जाता। और पापकर्म करते हुए ही अगर हम अपने परिवारका पालन-पोषण करते हों तो उसकी अपेक्षा भीख माँगकर निर्वाह करना अधिक अच्छा है। .

इन भाईने अपने पत्रमें और भी बहुत-सी बातें बताई हैं जो जानने योग्य और खेदजनक हैं। वे लिखते हैं कि वे देशी शराब बेचते हैं और स्वयंसेवक उन्हें परेशान करते हैं लेकिन विलायती शराब पीनेवालोंको तो रोकने अथवा कहनेकी भी हिम्मत नहीं होती। इसके अतिरिक्त वे लिखते हैं कि स्वयंसेवक सिर्फ समझाते ही हों सो बात नहीं वे तो दुकानपर घेरा डालते हैं, गाली देते हैं तथा पुराने नौकरोंको धमकी देते हैं। यदि धमकीसे काम नहीं चलता तो मारते भी हैं। दुकानदारोंके हाथसे शराब छीन लेते हैं। जिसके पास शराब होनेका सन्देह हो, उसके घरकी तलाशी तक भी लेते हैं। कोई उसे अपनी दुकानसे चीजें नहीं खरीदने देता, और यदि कोई दुकानसे बाहर निकलता है तो उसका मुँह काला करके उसे गधेपर बिठाकर बाजारमें घुमाया जाता है।

पत्रसे लगता है कि ये सब शिकायतें सच्ची हैं। यदि ऐसा है तो ये तथ्य स्वयं-सेवकोंको शर्मिन्दा करनेवाले हैं। शराब पीनेवालोंको समझाना हमारा जितना फर्ज है हमारा उतना ही फर्ज उनके शरीरकी रक्षा करना भी है। शराबियोंसे शराब छुड़-वानेके लिए यदि हम जोर-जबरदस्ती करेंगे तो इससे वह नहीं छूटेगी; इतना ही नहीं वरन् इससे हमारे संघर्षको धक्का पहुँचेगा। प्रत्येक स्थानके स्वयंसेवकोंको जानना चाहिए कि उन्हें किसीपर जोर-जबरदस्ती करनेका कोई हक नहीं है। उन्हें ठीक तरीकेसे विनम्रता बरतते हुए जो उचित जान पड़ें वही प्रयास करने चाहिए। उदाहरणस्वरूप दुकानोंके समीप खड़े होकर शराब पीनेवालेको विनयपूर्वक समझाना, उनके कुटुम्बियोंको सम-झाना, उनकी जात-बिरादरीको समझाना। इतना करनेके सिवा हमें कुछ भी करनेका कोई अधिकार नहीं है। लोगोंको मार-पीटकर पुण्यवान् न बनायें। जो पापी बनना

चाहें उन्हें पाप करनेका पूरा अधिकार है। पाप करनेकी छूट होनेके बावजूद जो पाप नहीं करते, वही पुण्यवान् कहलाते हैं और उन्हींके द्वारा देशको लाभ होता है। यदि पापको मिटानेके लिए हम जोर-जबरदस्तीका सहारा लेते हैं तो जिस दोषके कारण हम सरकारको राक्षसी मानते हैं, वही दोष हममें भी आ जाता है और हम भी राक्षस बनते हैं।

राष्ट्रीयशाला – चरखाशाला

यदि हम यह मानते हों कि सूतके तागेमें ही स्वराज्य है, और यदि चरखेकी शक्तिके सम्बन्धमें हमें पूरा विश्वास हो, यदि हम मानते हों कि किसी भी अन्य तरीकेसे हिन्दुस्तानकी आर्थिक उन्नति होना असम्भव है, यदि हम समझते हों कि करोड़ों व्यक्ति अन्य धन्धेके अभावमें कम कमाई होनेके कारण हमेशा कर्जदारकी स्थितिमें रहते हैं तो हम तुरन्त समझ जायेंगे कि हमें अपने बच्चोंको सबसे पहले कातनेकी ही शिक्षा देनी चाहिए। उसके दो परिणाम निकलेंगे। एक तो यह कि बालक स्वावलम्बी बनना सीख जायेंगे और जब बच्चोंको स्कूलमें भी कातना सिखाया जायेगा तब कातनेकी प्रवृत्ति बहुत जल्दी व्यापक हो जायेगी। ऐसे व्यक्तियोंको जो बिलकुल हताश हो गये हैं, जिन्हें भिक्षा माँगकर ही पेट भरनेकी आदत पड़ गई है उन्हें चरखा सिखाना जरा कठिन काम है। चरखा कातनेका काम यदि हम उन्हींके लिए ठीक मानें और उसे कंगालोंका ही धन्धा बना देते हैं तो वह कभी व्यापक नहीं होगा, लेकिन जब श्रेष्ठ लोग उसे धर्म समझकर ग्रहण करेंगे तब जल्दी ही सामान्य जनता भी उसे स्वीकार कर लेगी। इसलिए अभी तो बच्चों और वयस्कोंके लिए चरखेके अलावा और कोई महत्वपूर्ण शिक्षा नहीं हो सकती, यह सहज ही समझमें आ सकने योग्य बात है।

सीधा हिसाब

इसका हिसाब भी आसान है। जिस प्रवृत्तिसे हमें जल्दसे-जल्द स्वराज्य मिल सकता हो हम सबको उसीमें लगे रहना चाहिए। ऐसी प्रवृत्ति केवल चरखा ही है, क्योंकि उसीके द्वारा हम इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं और विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करनेका अर्थ ही स्वराज्य प्राप्त करना है। हम अंग्रेजी सम्बन्धी अपने ज्ञानको बढ़ाकर इस वर्ष स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते; सो उसे प्राप्त करनेकी प्रवृत्तिको फिलहाल स्थगित रखना चाहिए। इसी तरह हम बहुत बड़े गणितज्ञ बनकर अथवा बड़े-बड़े आविष्कार करके भी इस वर्ष स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते, इसलिए इन्हें भी फिलहाल स्थगित रखना चाहिए। इसी प्रकार हम पिन या कागज अथवा इस तरहके अन्य कारखानोंकी स्थापना करके भी स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते, अस्तु इस कामको भी फिलहाल स्थगित रखना चाहिए। इसी तरह अन्य कार्योंके बारेमें भी अगर हम स्वयंसे प्रश्न करेंगे तो हमें यही उत्तर मिलेगा। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि हमारी सब शिक्षण संस्थाओं अर्थात् कालेजों, हाईस्कूलों, प्राइमरी स्कूलों तथा अध्यापकोंके लिए ट्रेनिंग स्कूलोंमें सिर्फ एक प्रवृत्तिकी गुंजाइश हो सकती है। आज जो अक्षर-ज्ञान हमें अनिवार्य लगता है सो वह ज्ञान विनोदके समय, हाथोंको आराम देनेके

समय दिया जा सकता है। एक शिक्षित अंग्रेज प्रवृत्तियोंको बदल-बदलकर उनमें से आनन्द और आराम प्राप्त कर लेता था। यदि वह कॉमन्स सभामें थककर निकलता तो वह मक्खियों और चींटियोंकी हरकतोंको देखने बैठ जाता था। इस कार्यसे ऊब जानेपर वह पुस्तकें पढ़ने लग जाता। इस तरह वह अपना आराम और निर्दोष आनन्द विविध प्रवृत्तियोंसे प्राप्त कर सकता था। हम भी अपने विद्यार्थियोंको ऐसी आदत क्यों न डालें? चरखेसे थकनेपर हिन्दी सीखें, इससे मन उचट जानेपर फिर चरखा ले बैठें, ऐसा करनेकी हिम्मत न हो तो संगीत सीखें, और संगीतसे उकतानेपर फिर चरखेका विचार करें, इन सबके बाद भी अगर चरखेमें मन न लगे तो कवायद सीखें। इसके बाद फिर चरखेका चिन्तन करें। ऐसा करनेसे उन्हें चरखेका व्यसन हो जायेगा। इस समय राष्ट्रको यदि किसी व्यसनकी जरूरत है तो वह चरखेके व्यसनकी है। शराब पीनेवाले को एक अक्सीर इलाजके रूपमें मैं चरखेका सुझाव देता हूँ। शराबके नशेसे चरखेका नशा कम नहीं होता। जिसको उसका चस्का लग गया वही उसके प्रभावको जानता है। अन्तर यही है कि एक मारता है, दूसरा जिलाता है।

कार्य-कौशल

कार्यकी निपुणताके अभावमें चरखा नहीं चल सकता। है तो यह एक छोटा-सा हथियार, चलानेमें हलका, कीमत भी अपेक्षाकृत बहुत-कम तथापि वह व्यक्तिके उद्यमकी, उसकी दृढ़ताकी, उसकी ईमानदारीकी, उसकी शान्तिकी समुचित परीक्षा ले लेता है। कातनेका मतलब रुईको चाहे जैसे खींचना नहीं है। कातनेका मतलब तो उसकी अगली क्रियाओंको जानना है। जिन्होंने रामानुजका लेख पढ़ा है वे इस बातको समझ सकेंगे। आन्ध्र देशमें १२० नं० का सूत कातनेवाली स्त्रियाँ कपासकी परीक्षाके विविध रूपोंसे अवगत हैं—वे अपने हाथों कपास तोड़ती हैं, स्वयं ही कपास ओटती हैं, स्वयं ही रुई पींजती हैं और समुद्रके फेनके समान चमचमाती हुई शुभ्र और मुलायम पूनियाँ भी ये स्त्रियाँ खुद अपने हाथों तैयार कर लेती हैं। मुख्य रूपसे इसीमें उनकी कलाका उपयोग होता है, बादमें १२० नं० का सूत कातना उन्हें बच्चोंका खेल जान पड़ता है। कातनेकी क्रिया समय लेती है। इससे पहलेकी क्रियाएँ आसान हैं और थोड़ा समय लेती हैं। सभीको उपर्युक्त आदर्श स्त्रियोंके समकक्ष पहुँचनेकी जरूरत नहीं है, लेकिन सभीके लिए पींजने और पूनी बनानेकी क्रिया जान लेना तो जरूरी ही है। पूनी बनाना एक दिनमें सीखा जा सकता है। पींजना सीखनेके लिए समझ लीजिए कि एक हफ्ता लगता है। प्रत्येक कातनवाले को इतना समय लगाकर पींजना अवश्य जान लेना चाहिए। मिलकी पूनीका उपयोग करनेसे हमारा उद्देश्य पूर्ण नहीं होता और प्रत्येक स्थानपर मिलकी बनी पूनियाँ पहुँचाई भी नहीं जा सकतीं।

पाठकको यह भी जान लेना चाहिए कि पहले रुई पींजना एक धन्धा था, सामाजिक धर्म नहीं। अतएव पिंजारों (धुनियों) को अन्य कारीगरोंके माध्यमसे ही आजीविका प्राप्त होती थी। पिंजारे महीनेमें आसानीसे ४५ रुपये अथवा कमसे-कम तीस रुपये कमा लेते हैं। बम्बईमें कितने ही लोग इससे प्रतिदिन ढाई रुपया कमाते हैं। कातनेवालेको अपने हाथों रुई पींजनेमें इतना कम समय लगता है कि वह यदि जीविका

कमानेके उद्देश्यसे भी इसे करे तो आध सेर सूतके पीछे [अपनी कमाईमें] दो आनेकी वृद्धि कर सकता है। प्रत्येक व्यक्तिको दिन-भरमें कातने लायक रुई पींज लेनेमें बहुत कम समय लगता है।

मेरी भूल

अनुभवके बाद देखता हूँ कि मैंने स्कूलके विद्यार्थीकी चार घंटेकी कमाई एक आना लगाकर भूल की थी। सौभाग्यसे मेरी यह भूल अधिक सावधानी बरतनेकी वजहसे हुई है। अपने अज्ञानके कारण मैंने अत्यन्त सावधानीसे काम लिया। आठ घंटे कातनेवाले की कमाई दो आने ही मानी थी। अब देखता हूँ कि आठ घंटे कातने-वाला व्यक्ति २० तोले नहीं वरन् ४० तोले आसानीसे कात सकता है। यदि हम ४० तोलेका औसत मूल्य चार आने मानें तो आठ घंटे काम करनेवाले को चार आने मिल सकते हैं। सत्याग्रहाश्रमके बालकोंने सत्याग्रह सप्ताहके दौरान केवल कातनेका ही काम किया। कुछ-एकने दस घंटेतक सूत काता। वे सवेरे कोई साढ़े चार बजेसे कातना आरम्भ करते। परिणामस्वरूप एक विद्यार्थीने दस घंटेमें ७० तोले काता। प्रति घंटा सात तोले हुआ। पाँच तोले प्रति घंटा तो बहुत सारे बच्चोंने काता। इन सबमें से किसी भी बच्चेको पाँच महीनेसे ज्यादा तालीम नहीं मिली है, और सो भी लगातार चार-चार घंटे तो किसीने नहीं काता था। इन बच्चोंकी शक्तिने मेरी आँखें खोल दी हैं और मैं देखता हूँ कि हिम्मत रखनेवाले बच्चे प्रति घंटा पाँच तोले सूत कातकर अवश्य दे सकते हैं। इस हिसाबसे चार घंटे काम करनेवाला बालक अपने स्कूलको प्रति घंटा दो पैसे दे सकता है तथा चार घंटेके हिसाबसे पच्चीस दिनके ३ रुपये २ आने दे सकता है। इसे मैं अधिकसे-अधिक आय मानता हूँ। लेकिन यदि स्कूलको हर महीने औसतन दो रुपये पड़ें तो भी २० बच्चोंके महीने[१]-भरमें ४० रुपये हुए। उत्साही बालक एक अच्छे शिक्षकको ६० रुपया मासिक दे सकते हैं। लेकिन यह तो पहली ही भूल हुई।

विशेष अनुभवसे पता चलता है कि रुई पींजने और पूनी बनानेका काम भी बालकोंको ही करना चाहिए। ऐसा होनेसे आधा सेर रुईके पीछे एक आना अतिरिक्त आय होगी। एक सेर रुई पींजने और पूनी बनानेके, मेरे खयालसे, दो आने होने चाहिए। इसमें थोड़ा समय लगेगा इसलिए अगर हम चार घंटेकी अतिरिक्त आयको चार पैसे न मानकर दो पैसे ही मानें तो २५ दिनके ५० पैसे अतिरिक्त होंगे। इसका मतलब यह हुआ कि एक अच्छा बालक ३–२–० रुपये + ०–१२–६ रुपये = ३–१४–६ रुपये देगा। पहले मेरा अनुमान केवल १–९–० रुपये था। मैंने माना था कि रुईकी धुनाई अलगसे करवानी पड़ेगी और यह काम पेशेवर धुनिये ही करेंगे। यह मेरी दूसरी भूल थी।

इसके अतिरिक्त जब स्कूलोंमें कातने-बुननेका आन्दोलन शुरू हो तब कपास आदिका पहलेसे ही प्रबन्ध होना चाहिए और सूतके बाजार भावको देखते हुए कुछ और भी जोड़ा जाना चाहिए। एक सेर सूतके पीछे २ पैसे बढ़ाना मैं कोई ज्यादा

१. मूलमें यहाँ "साल" शब्द है जो स्पष्टतया छपाईकी भूल है।

नहीं मानता। इन सब पैसोंका पूरा-पूरा हिसाब लगानेके बाद राष्ट्रको हर दृष्टिसे कितना लाभ हुआ है, यह तो जो कारखाने चलाते हैं उनसे पूछनेपर ही मालूम होगा। स्कूलोंमें पढ़नेवाले लाखों विद्यार्थियोंको अगर यह धन्धा सिखाया जाये, उनकी मेहनतका मूल्यांकन किया जाये और सूतके बाजारपर जनताका अंकुश रहे तो उससे राष्ट्रको कितना लाभ होगा जब मैं यह विचार करने बैठता हूँ तो मुझे ऐसा लगता है कि यदि लोग इस सीधी-सादी बातको समझ जायें तो थोड़े समयमें ही देशसे भुखमरी दूर हो जाये।

अभी एक चीज बाकी है। जब हम स्कूलोंमें बुननेका काम भी शुरू कर देंगे तो स्कूलोंकी आयके साधन और भी अधिक हो जायेंगे। जब हम एक घंटेकी कताईके दो पैसे मानते हैं तो एक घंटेकी बुनाईका हम बड़ी आसानीसे एक आना मान सकते हैं। लेकिन फिलहाल यदि हम बुनाईके कामको इसमें शामिल न करें तो भी जिस स्कूलका प्रत्येक विद्यार्थी लगभग चार रुपये कमाकर स्कूलको दे अर्थात् प्रति मास चार रुपये फीस दे तो उस स्कूलको सरकारी अनुदान अथवा किसी तरहके दानकी जरूरत नहीं है। वह आत्मनिर्भर बन जायेगा, विद्यार्थियोंको फीस भी नहीं देनी पड़ेगी।

मैंने सूरत नगरपालिकाको इस तरह शिक्षा देनेकी सलाह दी है। सूरत नगरपालिका एक लाख दस हजार रुपयेका अनुदान लेनेसे इनकार कर देनेकी बात सोच रही है। अगर ऐसा करना सम्भव हो तो ज्यादा कर भी नहीं देने पड़ेंगे, विद्यार्थियोंको शिक्षा भी मुफ्त दी जा सकेगी और इससे स्वराज्य आन्दोलनको भी अधिक सहायता मिलेगी — यह इतना अकसीर इलाज है।

इस काममें जो मुश्किलें सामने आयेंगी, वे मेरी नजरसे ओझल नहीं हैं। सबसे बड़ी मुश्किल तो इमारतकी है। लेकिन जहाँ नागरिकोंकी सहायता प्राप्त हो वहाँ ऐसी मुश्किलोंको दूर करना आसान बात होनी चाहिए। चरखोंको इकट्ठा रखनेके लिए महाजनोंके घरों, मन्दिरों और मस्जिदोंका उपयोग किया जाना चाहिए। इस समय स्कूलोंकी इमारतोंमें जितने विद्यार्थियोंके बैठनेकी व्यवस्था है उतने विद्यार्थियोंको उनमें चरखेकी शिक्षा नहीं दी जा सकती। सौभाग्यकी बात है कि चरखा थोड़ी-बहुत जगह अवश्य घेरता है और उसे श्वासोच्छ्वास नहीं लेना पड़ता, इसलिए जगह घेरनेके बावजूद वह हवाको बिगाड़नेके बदले उसे सुधारेगा और इस तरह अपेक्षाकृत कम गन्दी हवा मिलनेसे बालककी मानसिक स्थितिके अलावा शारीरिक स्थितिमें भी सुधार होगा।

चरखेमें स्वराज्य

एक सज्जनने अत्यन्त विनयपूर्वक दलीलें पेश करते हुए चरखेकी स्वराज्य दिलानेकी शक्तिके सम्बन्धमें शंका उठाई है। यद्यपि यह पूराका-पूरा पत्र प्रकाशित करने योग्य है तथापि जगहकी तंगी होनेकी वजहसे मैं उनकी दलीलको ही यहाँ संक्षेपमें उद्धृत करता हूँ। वे कहते हैं: "चरखा हमें स्वावलम्बी बना सकता है, उससे आरामसे पेट भी भरा जा सकता है लेकिन उसके द्वारा हमारे हाथमें राज्यसत्ता किस तरह आयेगी, यह बात मेरी समझमें नहीं आती। क्लाइवके समय भी चरखा मौजूद था

तथापि हम स्वतन्त्रतासे हाथ धो बैठे। इसलिए केवल लंकाशायरके स्वार्थकी समाप्तिसे पूरे इंग्लैंडका स्वार्थ खतम नहीं हो जाता। तात्पर्य यह कि अगर विदेशी कपड़ा बन्द हो जाये तो भी इंग्लैंडका स्वार्थ कायम रहेगा।" उनकी यह शंका सारहीन नहीं है लेकिन 'नवजीवन'के पाठकके लिए इसका उत्तर देना सहल होना चाहिए। तथापि उपर्युक्त मित्रके मनमें, हालाँकि वे 'नवजीवन'के पाठक जान पड़ते हैं, ऐसी शंका उठी मैं इसमें पाठकोंको समझानेकी अपनी शक्तिकी अपूर्णता देखता हूँ। किन्तु मैं आशा करता हूँ कि अगर मैं पाठकोंको यही वस्तु धैर्यपूर्वक अलग-अलग ढंगसे समझाऊँ तो वह पाठकोंके गले अवश्य उतरेगी। क्योंकि मुझे पक्का विश्वास है कि मेरे समझनेमें कोई त्रुटि नहीं है। वस्तुतः मेरी समझानेकी शक्ति ही दोषपूर्ण है। उपर्युक्त पत्रलेखक कमसे-कम यह बात तो मानते जान पड़ते हैं कि चरखेके द्वारा हम विदेशी कपड़ेका बहिष्कार कर सकते हैं। अगर यह सच है तो मेरा कहना है कि जिस शक्तिके द्वारा हम अनेक प्रकारकी विडम्बनाओं तथा सरकार द्वारा पहुँचाई जानेवाली परेशानियोंके बावजूद विदेशी कपड़ेका बहिष्कार कर सकते हैं तो हमारे लिए वही शक्ति सम्पूर्ण राज्यसत्ता प्राप्त करनेके लिए पर्याप्त होनी चाहिए।

आइये, अब हम आँकड़ोंकी जाँच करें। हम विदेशी कपड़ेपर ६० करोड़ रुपया खर्च करते हैं। दूसरे नम्बरपर चीनी आती है, उसमें २३ करोड़ रुपये जाते हैं। तीसरे नम्बरपर लोहा आता है, उसपर १६ करोड़ रुपये खर्च होते हैं और इन सबके बाद उल्लेखनीय वस्तु मशीनरी है जिसपर लगभग साढ़े ९ करोड़ रुपये खर्च होते हैं। और लगभग इतने ही रुपये खनिज तेलमें जाते हैं। अन्य वस्तुएँ अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूर्ण हैं। यदि हम ६० करोड़ रुपये बचानेके महत् कार्यमें सफल हो जायें तो अन्य रकमें बचानेका काम बच्चोंका खेल जान पड़ेगा। तात्पर्य यह कि अगर हम इंग्लैंडकी स्वार्थनीतिके अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भागको रद कर सकते हैं तो अन्य भागोंको बिलकुल खतम करना कोई असम्भव बात नहीं होगी। और जब ऐसी आदर्श स्थिति उत्पन्न हो जायेगी तब इंग्लैंडका कोई भौतिक स्वार्थ नहीं रह जायेगा; अतः वह सेना आदिकी सहायतासे बलपूर्वक सत्ताको बनाये रखनेकी कोशिश न करेगा, ऐसा मेरा निश्चित मत है।

आइये, अब इसी वस्तुकी दूसरे तरीकेसे जाँच करें। स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए ईमानदारी, एकता, दृढ़ता, संगठन-शक्ति, राष्ट्रीय व्यापार-शक्ति, सर्वव्यापक राष्ट्रीयता, वीरता और त्यागकी जरूरत है। जब हम इन सब गुणोंका परिचय देंगे तभी हिन्दुस्तानमें फिरसे चरखेका व्यापक रूपसे प्रचार हो सकेगा। जिस राष्ट्रकी प्रजामें इतने गुण हों उसे कोई भी सत्ता गुलाम बनाकर नहीं रख सकती।

जिस समय हिन्दुस्तान धर्म मानकर विदेशी कपड़ेका त्याग करेगा उस समय हम सरकारको अल्टीमेटम देनेमें समर्थ होंगे, उस समयतक हम इतने तैयार हो चुके होंगे कि अगर सरकार हमारे अल्टीमेटमको स्वीकार नहीं करेगी, हमारी इच्छाका सम्मान नहीं करेगी तो हम लगानबन्दीके लिए तत्पर हो जायेंगे।

यह बात सच है कि क्लाइवके समय भी हम चरखा चलाया करते थे। उस समयतक हम पराधीन नहीं हो गये थे, लेकिन उसकी शुरुआत जरूर हो गई थी और

जैसे-जैसे हम लोग चरखेको छोड़ते गये वैसे-वैसे हम पराधीन होते गये अथवा हमें अपंग बनानेके कार्यमें ईस्ट इंडिया कम्पनीकी दिलचस्पी बढ़ती गई।

आभूषणों आदिका क्या होगा?

यही सज्जन एक अन्य पत्रमें लिखते हैं कि मैं प्रत्येक स्थानसे आभूषण और चन्दा इकट्ठा किया करता हूँ। लोगोंको मुझपर विश्वास है। लेकिन यदि सब लोगों-पर मैं नियन्त्रण न रख सकूँ अथवा इस आन्दोलनके साथ मेरा सम्बन्ध न रहे तो इतने पैसों और आभूषणों आदिका क्या होगा? यह प्रश्न भी उपर्युक्त प्रश्नके समान ही महत्त्व-पूर्ण है। मैं जहाँ-जहाँसे पैसे और आभूषण इकट्ठे करता हूँ उन्हें यदि वहाँकी प्रान्तीय समिति स्थापित हो चुकी है तो उसे सौंप आता हूँ। और मुझे विश्वास है कि वहाँ उसका पूरा हिसाब रखा जाता है। जैसे कि मैंने बंगालमें चन्देकी रकमका पूरा-पूरा हिसाब श्री चित्तरंजन दासको सौंपा, बिहारमें वहाँके मन्त्री बाबू राजेन्द्रप्रसादको,[1] संयुक्त प्रान्तमें पण्डित जवाहरलाल नेहरूको, मध्य प्रान्तमें सेठ जमनालालको,[2] दिल्लीमें डाक्टर अंसारीको,[3] पंजाबमें लाला लाजपतरायको,[4] उत्कलमें श्री गोपबन्धु दासको, आन्ध्र देशमें श्री वेंकटप्पैयाको, मद्रासमें श्री राजगोपालाचारीको,[5] कर्नाटकमें श्री गंगाधरराव देशपाण्डेको,[6] महाराष्ट्रमें श्री नरसोपन्त केलकरको, बम्बईमें श्री शंकरलाल बैंकरको[7] और गुजरातमें श्री वल्लभभाई पटेलको सौंपा है। सिन्धमें सारे प्रान्तके लिए अभी नई समिति नहीं बनी है और प्रान्तके भिन्न-भिन्न भागोंमें परस्पर मेल नहीं है, इसलिए मैं वहाँके चन्देकी रकम अपने साथ ले आया हूँ और कांग्रेस समितिके द्वारा मैं इस रकम-की क्या व्यवस्था की जाये, इस बातपर विचार कर लेना चाहता हूँ। मैंने जहाँ-जहाँ और जिन व्यक्तियोंको आभूषणों और पैसेकी व्यवस्थाका भार सौंपा है वहाँ-वहाँ वे लोग स्वयं प्रतिष्ठित हैं। वे समितिके अध्यक्ष अथवा मन्त्री हैं और उनपर खुद मुझे विश्वास है। चन्दा देनेवालों को मैं बता चुका हूँ कि दानकी रकमकी व्यवस्था किस तरह की जायेगी। प्रत्येक स्थानकी कांग्रेस समिति इन सब पैसोंका हिसाब रखने तथा उसे प्रकाशित करनेके लिए बाध्य है। सब समितियोंपर अखिल भारतीय कांग्रेसका अंकुश है। इसलिए इस पैसेके सम्बन्धमें गड़बड़ी होनेकी सम्भावना बहुत कम है। इससे अधिक

१. १८८४–१९६३; भारतके प्रथम राष्ट्रपति।

२. जमनालाल बजाज (१८८९–१९४२); प्रसिद्ध गांधीवादी उद्योगपति; जिन्होंने गांधीजीकी योजनाओंमें भरपूर सहयोग दिया। गांधीजीके निकटतम साथियों और सलाहकारोंमें से एक।

३. मुख्तार अहमद अंसारी (१८८०–१९३६); राष्ट्रवादी मुस्लिम नेता; इंडियन मुस्लिम लीगके अध्यक्ष, १९२०; भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष, १९२७-२८।

४. १८६५–१९२८; समाज-सुधारक तथा पत्रकार। १९२० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके कलकत्ता अधिवेशनके अध्यक्ष, लोक सेवक समाज (सर्वेन्ट्स ऑफ पीपुल्स सोसाइटी) के संस्थापक।

५. चक्रवर्ती राजगोपालाचारी (जन्म १८७९); वकील, पत्रकार, लेखक और राजनीतिज्ञ; स्वतन्त्र भारतके प्रथम गवर्नर जनरल, १९४८-५०।

६. गंगाधरराव बालकृष्ण देशपाण्डे; कर्नाटकके प्रसिद्ध राजनीतिक कार्यकर्त्ता जो 'कर्नाटक-केसरी' के नामसे प्रसिद्ध हैं।

७. शंकरलाल बैंकर; सामाजिक कार्यकर्त्ता और अहमदाबादके मजदूर-नेता। **यंग इंडिया**के प्रकाशक।

क्या किया जा सकता है? मैं स्वीकार करता हूँ कि अधिकांश पैसा मेरे प्रति जनताके वर्तमान मोहके कारण मिलता है। किन्तु जो कार्य हम करनेवाले हैं उसके प्रति जनताका विश्वास और जिस महान् व्यक्तिकी स्मृतिको हम अमर बनाना चाहते हैं — हमारी वह इच्छा भी इसका कारण है। इस बातकी पूरी-पूरी सावधानी बरती गई है कि पैसेका व्यय ठीक ढंगसे हो। गुजरातमें जो रकम इकट्ठी हुई है उसका हिसाब थोड़े समयमें प्रकाशित होगा और समय-समयपर प्रकाशित होता रहेगा। गुजराती भाई-बहनोंको मेरी यह सलाह है और उनसे निवेदन है कि वे तमाम संस्थाओं-को जाग्रत रखें और स्वयं भी जाग्रत रहें। एक करोड़ रुपया इकट्ठा करने और पूरी ईमानदारीके साथ उसे खर्च करनेकी शक्तिपर ही हमारे भविष्यका आधार निर्भर करता है।

एक अन्त्यजका 'खुला पत्र'

भाई जूठाभाई शिवजीने मुझे एक 'खुला पत्र' लिखा है। उसका सार मैं यहाँ प्रस्तुत करता हूँ। वे कहते हैं कि जो हिन्दू अन्त्यजोंके सम्बन्धमें मेरे भाषण सुनते हैं वे सिर्फ मेरी हाँ-में-हाँ मिलाते हैं। उनकी ऐसी धारणा है कि सभामें जिन लोगोंके अनुपस्थित रहनेकी बातपर मैंने अप्रसन्नता व्यक्त की थी[1] वह अन्त्यजोंके अनुपस्थित रहनेसे सम्बन्धित है और उसका कारण किसी झूठी अफवाहका भय न होकर अन्त्यज भाइयोंका सवर्णोंके प्रति अविश्वास है। भाई जूठाभाई-जैसे विचार रखनेवाले लोगोंको मैं बताना चाहता हूँ कि मैंने जो खेद प्रकट किया था सो अपनेको कट्टर माननेवाले हिन्दुओंकी अनुपस्थितिके कारण किया था। मेरे भाषणमें उनसे अपील की गई थी और इसीलिए मैंने उनकी उपस्थितिकी इच्छा व्यक्त की थी।

लेकिन अगर यह सच है कि अन्त्यज भाई अविश्वासके कारण सभामें कम संख्यामें उपस्थित हुए थे तो यह भी खेदजनक बात है। अन्त्यज परिषद् बुलानेका उद्देश्य समस्त हिन्दू समाजपर प्रभाव डालनेकी अपेक्षा अन्त्यजोंपर प्रभाव डालना अधिक था। इसमें जो प्रस्ताव पास किये गये उनमें से अधिकांश तो आन्तरिक सुधारोंसे सम्बन्धित थे। इसलिए मैं आशा रखता हूँ कि अबसे अन्त्यज भाई गलतफहमीके कारण परिषद्से दूर नहीं रहेंगे।

भाई जूठाभाई आगे लिखते हैं कि स्वराज्य आन्दोलनसे पहले तो अस्पृश्यताके विरुद्ध आन्दोलन किया जाना चाहिए। हिन्दू समाज अन्त्यजोंपर जो राक्षसी शासन चलाता है, सबसे पहले उसे दूर किया जाना चाहिए। इसके बाद ही अंग्रेजी राज्यकी टीका करना उचित माना जायेगा। भाई जूठाभाईकी इस दलीलके प्रति मेरी सहानुभूति है। लेकिन उनकी इस दलीलमें एक बड़ी भारी भूल है। स्वराज्य प्राप्ति तो पापसे मुक्त होनेका आन्दोलन है। आत्मशुद्धि अर्थात् पापसे मुक्ति। जबतक अन्त्यजोंकी अस्पृश्यता दूर नहीं होती तबतक हिन्दू समाजकी अस्पृश्यता दूर नहीं होगी। दोनोंका परस्पर एक-दूसरेसे निकटका सम्बन्ध है। जबतक अन्त्यजोंकी अस्पृश्यताका पाप दूर नहीं होता तबतक स्वराज्य मिल ही कैसे सकता है? फलतः मैं समझता हूँ कि जूठाभाई-

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ५७६-८१।

जैसे विचार रखनेवाले लोगोंका धीरज धरकर स्वराज्य आन्दोलनमें भाग लेना अत्यन्त आवश्यक है। अन्त्यजोंको अन्य हिन्दू स्वराज्य नहीं देंगे, उसे तो उन्हें खुद ही लेना होगा। जो स्वराज्यकी कल्पनाको समझते हैं वे असहयोगकी आवश्यकताको स्पष्ट रूपसे जाने बिना नहीं रह सकते।

कालोलके हिन्दू

गुजरातके अपने अनुभवोंका वर्णन करते समय मैंने कालोलके महाजनोंके हृदयोंमें अन्त्यजोंके प्रति जो अच्छी भावनाएँ हैं, उसके सम्बन्धमें भी एक टिप्पणी लिखी थी। लेकिन बादमें मुझे पता चला कि मेरे अन्त्यजोंकी बस्तीमें जानेसे वे इतने रुष्ट हुए कि मेरे वहाँसे चले आनेपर उन्होंने कटु शब्दोंका प्रयोग किया और बहुतसे महाजनोंने प्रायश्चित्त स्वरूप स्नान भी किया। यह सुनकर मुझे दुःख हुआ। ऐसा कहा जाता है कि उनके क्रोधका कारण यह था कि कुछ लोगोंने मेरे वहाँसे चले आनेके बाद अन्त्यजोंको जबरदस्ती मंडपमें घुसाया। यदि किसीने ऐसा प्रयत्न किया हो तो इसे भी मैं दोष मानता हूँ। हम एक-दूसरेके अच्छे-बुरे विचारोंको सहन करके ही आगे बढ़ सकेंगे। जिन्होंने स्नान किया, जिन्होंने मुझे भला-बुरा कहा उन्हें भी ऐसा करनेका अधिकार था। अन्त्यजोंको स्पर्श करनेको जो पाप मानते हैं उनके साथ जोर-जबरदस्ती करके उनकी भूल नहीं बतानी चाहिए, अपितु धैर्यपूर्वक उन्हें धर्मका रहस्य समझाकर ही अस्पृश्यताके मैलको धोया जा सकेगा। इस घटनासे मैं तो इतना ही सार निकालना चाहता हूँ कि किसीको स्वराज्यके लालचसे अथवा मुझे अच्छा लगे इस लालचसे मौन धारण करने अथवा मनही-मन दुःखी होकर अन्त्यजोंका स्पर्श करनेकी जरूरत नहीं है। जो करना हो उसे विचारपूर्वक सोच-समझकर करनेपर ही हम लाभ उठा सकते हैं। झूठी शरम और भय आदि भी स्वराज्य मिलनेमें बाधा रूप हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८–५–१९२१

४०. भाषण : मानपत्रके उत्तरमें[1]

१० मई, १९२१

आप लोगोंने जिस उत्साहसे मेरा स्वागत किया है उसके वास्ते आप लोगोंको अनेक धन्यवाद। मैं आजके पहले इतनी बार प्रयाग आया हूँ कि मुझे यह अपना घर ही-सा प्रतीत होता है। मेरी हालकी यात्राओंमें मुझे कई नगरपालिकाओंकी ओरसे अभिनन्दन-पत्र दिये गये हैं। अभिनन्दन-पत्र देनेका अर्थ यही होता है कि वे असहयोग आन्दोलनसे सहमत हैं और इस स्वराज्य-संग्राममें हमारे साथ हैं। आपकी नगरपालिकाके

१. यह मानपत्र इलाहाबाद जिला सम्मेलनमें नागरिकोंकी ओरसे भेंट किया गया था जिसे पण्डित मोतीलाल नेहरूने पढ़ा था और मौलाना मुहम्मद अलीने सभाकी अध्यक्षता की थी। सम्मेलनमें प्रतिनिधियों और किसानोंके अतिरिक्त कस्तूरबा, लाला लाजपतराय, मौलाना शौकत अली, पण्डित रामभजदत्त चौधरी, मौलाना हसरत मोहानी, डा० सैफुद्दीन किचलू, स्वामी श्रद्धानन्द, पुरुषोत्तमदास टण्डन, सरोजिनी नायडू और जवाहरलाल नेहरू भी उपस्थित थे।

सदस्योंकी रायमें मेरे राजनीतिज्ञ होनेके कारण नगरपालिका द्वारा मुझे अभिनन्दन-पत्र दिया जाना उचित न होगा। एक प्रकारसे वे ठीक कहते हैं; परन्तु उनके इन विचारोंमें आमूल परिवर्तनकी आवश्यकता है। मेरी इच्छा है कि नगरपालिकाएँ अपनी शक्तिको समझें और केवल बँधे-बँधाये कामोंको पूरा करनेकी मशीनें न बनी रहें। परन्तु लोगोंको यह बिलकुल नहीं सोचना चाहिए कि उन्होंने मेरे प्रति किसी वैमनस्यके कारण अभिनन्दन-पत्र नहीं दिया। अभीतक जो अभिनन्दन-पत्र मुझे या मौलाना शौकत अलीको दिये गये हैं वे प्रयागकी अपेक्षा छोटी नगरपालिकाओं द्वारा दिये गये हैं। बड़ी नगरपालिकाओंको एकाएक अपना ढंग बदलना कठिन हो जाता है।

बहरहाल, हम लोगोंको इस मामलेपर ध्यान नहीं देना चाहिए और कांग्रेस द्वारा निर्धारित काममें जुटे रहना चाहिए। हम लोगोंको इसी वर्ष स्वराज्य लेना और खिलाफत और पंजाबके प्रति किये गये अन्यायका परिमार्जन कराना है। परन्तु यह केवल कान्फ्रेंसों, वक्तृताओं, कविताओं और अभिनन्दन-पत्रोंसे नहीं होगा। यदि इस प्रकार उद्देश्य प्राप्त करना सम्भव होता तो यह काम केवल कांग्रेसके जरिये ही हो जाता। एक समय ऐसा भी था कि सालमें एक बार कांग्रेस और कान्फ्रेंसके द्वारा कुछ माँगें सरकारके सामने पेश कर दी जाती थीं और हम लोग उतने ही से सन्तुष्ट हो जाते थे। यदि साल-भरमें सरकारने उनको पूरा न किया तो अगले सालके वार्षिक अधिवेशनमें फिर विरोधसूचक प्रस्ताव पास कर दिये जाते थे और मामला वहीं खत्म हो जाता था। परन्तु अब समय बदल गया है और लोगोंको अपने ही प्रयत्नोंसे अपने उद्देश्य पूरे करने हैं। कांग्रेसने एक व्यावहारिक कार्यक्रम उनके सामने रख दिया है और अब जनताको अपने उद्देश्य पूरे करनेके लिए उसपर अमल करना है। यदि हम लोग कान्फ्रेंसों, कविताओं और अभिनन्दन-पत्रों इत्यादिको छोड़ दें तो कोई हानि नहीं होगी; परन्तु यदि हम लोग कांग्रेसके कहनेपर नहीं चलेंगे तो कदापि स्वराज्य नहीं मिलेगा।

अपने अभिनन्दन-पत्रमें आप लोगोंने यह भी कहा है कि इलाहाबादका एक नाम और है — फकीराबाद। मेरी हार्दिक इच्छा यही है कि यह नगर पूर्ण रूपसे उस नामके योग्य हो। इस आन्दोलनको सफलीभूत बनानेके वास्ते फकीरों यानी धार्मिक मनुष्योंकी आवश्यकता है और मैं आशा करता हूँ कि इसमें आपका नगर अगुआई करेगा।

कांग्रेस चाहती है कि आप लोग तीन काम करें, अर्थात् कांग्रेसके १ करोड़ सदस्य बनाना; तिलक स्वराज्य-कोषके वास्ते १ करोड़ रुपया इकट्ठा करना; और भारतके घरोंमें २० लाख चरखे चलवाना। मैं यह जानना चाहता हूँ कि आप लोगोंने इनके लिए कितना काम किया है। पहले अंशके सम्बन्धमें मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि जितने लोग यहाँ उपस्थित हैं वे सभी कांग्रेसके सदस्य हैं, परन्तु मैं चाहता हूँ कि आप लोग और अधिक कार्य करें और अपने नगरकी जनसंख्याके अनुसार उचित अंश चन्देमें इकट्ठा करके दें।[1]

१. **पायनियर**के १२–५–१९२१ के अंकमें प्रकाशित विवरणके अनुसार : "उन्होंने जानना चाहा कि इलाहाबाद जिले और नगरके कितने लोग कांग्रेसमें शामिल हो चुके हैं, और उन्होंने अनुरोध किया कि श्रोताओंमें से ऐसे व्यक्ति सम्मेलनकी कार्रवाई समाप्त होनेसे पहले अपने नाम भेज दें।"

मुझे यह जानकर खेद हुआ है कि प्रयागसे तिलक स्वराज्य-कोषमें अभी काफी चन्दा जमा नहीं हुआ है। यदि प्रयाग गरीब है तो मैं यह नहीं चाहता कि सब लोग रुपये-ही-रुपये दें। यदि प्रान्तका हरएक आदमी दो-दो पैसे भी दे तो इलाहाबादका हिस्सा काफी हदतक पूरा हो जायेगा। प्रयाग तीर्थ-स्थान है जहाँ बहुतसे तीर्थ-यात्री आते हैं। आप लोग उनकी सहायतार्थ सेवा-समिति बनाइये और उनकी सहायता करनेके बाद उनसे तिलक स्वराज्य-कोषके वास्ते चन्दा माँगिये। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि इस प्रकार मेहनत की जाये तो आप लोग सुगमतासे यदि अधिक नहीं तो अपने हिस्सेकी रकम इकट्ठी कर ही लेंगे।

फिर २० लाख चरखे चालू कराने हैं। मैं यह नहीं चाहता कि आप लोग चरखोंको अपने घरोंमें रखकर इनकी सिर्फ पूजा करें; आप लोगोंको मौलाना मुहम्मद अलीके शब्दोंमें उनसे वही काम लेना चाहिए जो अंग्रेजी सरकार मशीनगनोंसे लेती है। यदि २० लाख चरखे कमसे-कम ४ घंटे रोज चलें तो मुझे विश्वास है कि थोड़े ही समयमें किसी भी हिन्दुस्तानीको देशका बना कपड़ा पहननेमें लज्जा नहीं आयेगी।

अपने हालके दौरेमें मौलाना शौकत अली और मैंने हिन्दू-मुस्लिम एकताकी आवश्यकता देशको बतलाई है और यदि इतनेपर भी देशने इस आवश्यकताको न समझा हो तो चाहे कितना भी प्रचार किया जाये लोग इसको नहीं समझ सकेंगे। हम लोगोंने यह बात भी अच्छी तरह समझा दी है कि हमारा कार्यक्रम पूर्ण रूपसे अहिंसक है। मुझे यह देखकर खेद हुआ है कि कुछ किसान लोग इस बातको भूल जाते हैं और मैं इसकी निन्दा करता हूँ। आप लोगोंको पूरी तरह समझ लेना चाहिए कि हमें अपने दुश्मनोंके प्रति भी सख्त भाषाका प्रयोग नहीं करना चाहिए। हिंसाका सहारा लेनेके बदले आप लोगोंको कष्ट-सहन और आत्मत्यागकी भावना पैदा करनेके लिए प्रस्तुत रहना चाहिए; और यदि आप लोगोंमें से कुछको जेलखाने भी भेज दिया जाये तो क्रोधित होकर कोई जुलूस वगैरा नहीं निकालना चाहिए, क्योंकि जब आप लोग जेलखाने जानेको तैयार हो जायेंगे तभी स्वराज्यका मार्ग सुगम होगा। मालेगाँवके निवासियोंने बहुत ही बुरा किया है और आप लोगोंको उससे सबक लेना चाहिए ताकि फिर कभी वैसा न होने पावे। यदि मैं या मौलाना शौकत अली या मुहम्मद अली या और कोई नेता गिरफ्तार किये और जेलखाने भेजे जायें तो भी आप लोगोंको किसी थानेदारकी हत्या न करनी चाहिए चाहे वह हमारे कुछ आदमियोंको जानसे भी मार दे। जब आप लोगोंमें इस प्रकारकी भावना आ जायेगी और आपके हृदयसे जेलका, जो मेरे लेखे कार्यकर्त्ताका विश्रामस्थल है, भय निकल जायेगा तब स्वराज्य बहुत समीप आ जायेगा।

मुझे नहीं मालूम कि सरकार मौलाना मुहम्मद अलीको जेलमें बन्द करनेके लिए इतनी उत्सुक क्यों है। मैं भी तो अक्षरशः वही कहता हूँ जो मौलाना कहते हैं। मौलाना मुहम्मद अलीका अपराध यह बतलाया जाता है कि उन्होंने यह कहा है कि यदि अफगान लोग भारतपर आक्रमण करेंगे तो वे उनके पास यह सन्देशा भेजेंगे कि हिन्दुस्तानी लोग धन या जनसे ब्रिटिश सरकारकी सहायता नहीं करेंगे। मैं उनके इस कथनका अक्षरशः समर्थन करता हूँ। मैं अपने हिन्दू भाइयोंसे कहता हूँ कि

वे इस अफ़गानी हौएसे न डरें, क्योंकि कोई भी धर्म यह नहीं सिखाता कि उसके अनुयायी कायर हों। मैं जानता हूँ कि पठान लोग बड़े शक्तिशाली हैं, परन्तु कोई पठान मुझे गोमांस खाने या अपने धर्मके विरुद्ध काम करनेको बाध्य नहीं कर सकता। वर्तमान सरकारपर से हमारा विश्वास उठ गया है और जबतक कि खिलाफत और पंजाबके विषयमें यह सरकार न्याय नहीं करेगी तबतक उसे हिन्दुस्तानियोंसे अफ़गानिस्तान या और किसी शक्तिके मुकाबले सहायताकी आशा नहीं करनी चाहिए। जिस सरकारके विरुद्ध हमने आन्दोलन उठाया है वह जबतक अपनेको सुधार न ले तबतक हम लोगोंसे सहायताकी आशा किस प्रकार कर सकती है। और जिन लोगोंने हम लोगोंको पेटके बल रेंगाया है वे लोग कैसी ही कठिनाई क्यों न पड़े हमसे सहयोगकी आशा नहीं कर सकते। परन्तु हम लोगोंको हर हालतमें अहिंसक और शान्तिप्रिय रहना चाहिए। हम लोगोंको कितना भी भड़काया जाये, हमें किसीकी हत्या नहीं करनी चाहिए, क्योंकि हत्या करनेसे हम स्वराज्य पानेका अपना हक खो देंगे।

अन्तमें, मुझे आपसे यह कहना है कि इस समय देशके हिन्दुओं और मुसलमानों दोनोंका केवल एक धर्म है — पंजाब और खिलाफतके मामलेमें न्याय हासिल करना और देशको गुलामीसे बचाना। यदि आपको अपने देशकी सेवा करनी है तो आपको कांग्रेसके नेतृत्वमें चलना चाहिए और उसके आदेशोंका पालन करना चाहिए, चाहे वे हमारे महती उद्देश्यको देखते हुए कितने ही महत्त्वहीन क्यों न लगें।

अन्तमें, भगवान्से मेरी यही प्रार्थना है कि वह हम लोगोंको कांग्रेसके नेतृत्वमें चलनेकी शक्ति दे।[१]

आज, १२-५-१९२१

४१. टिप्पणियाँ

स्वामी गोविन्दानन्द

तो, स्वामी गोविन्दानन्दको पाँच सालका निर्वासन मिल ही गया। मजबूत आदमी हैं वे! पहले भी सजा काट चुके हैं और वह भी बिना अदालती कार्रवाईके। विभिन्न जेलोंमें जो तकलीफें दी गई थीं उन सारे अनुभवोंको उन्होंने रिहाईके बाद कलमबन्द भी किया है। इस बार मुकदमेका नाटक हुआ और आखिर सजा ठोक दी गई। क्या इस तरह न्यायका नाटक करके निर्वासित करना कोई महत्त्व रखता है? क्या इससे अदालती कार्रवाईके आडम्बरका पर्दा ही फाश नहीं हुआ? तरीका बदल गया मगर भावना वही रही। असल बात है भावनाका बदलना। 'अच्छा वह है जो अच्छा करे।' मैंने स्वामीजीका पूरा भाषण पढ़ा है। भाषा कुछ तीखी और चोट पहुँचानेवाली है, लेकिन असाधारण तो कुछ भी नहीं है। हिंसाको बढ़ावा देनेवाली तो कोई भी बात

१. इस भाषणका मिलान **अमृतबाजार पत्रिका**, १३-५-१९२१ में प्रकाशित विवरणसे भी कर लिया गया है।

उसमें नहीं है। असन्तोष उसमें है। लेकिन अगर असन्तोष व्यक्त करनेके लिए भी सजा दी जानी है तब तो स्वामी गोविन्दानन्दकी तरह मैं भी गुनहगार हूँ। मौजूदा शासन-तन्त्रसे जितना असन्तोष मुझे है उतना शायद ही किसी दूसरेको होगा, क्योंकि हुकूमतके तौर-तरीकोंसे मेरी तरह त्रस्त दूसरा शायद ही कोई मिलेगा। भारतमें राजनैतिक असन्तोष तो एक मानी हुई बात है और इसलिए [कहा गया था] कि अगर भाषणसे हिंसाको उत्तेजन न मिले तो पुलिस भाषणकर्त्तासे नहीं बोलेगी। लेकिन इस सरकारकी सबसे बुरी बात तो यह है कि इसकी कोई निश्चित और स्थिर नीति नहीं है। स्वर्गीय चैम्बरलेन साहब[1] बड़े गर्वसे कहा करते थे कि अंग्रेज अफसरके मुँहसे निकली हुई बात पत्थरकी लकीर होती है। लेकिन हम अपने दुःखद अनुभवोंके बाद इस नतीजेपर पहुँचे हैं कि आज अंग्रेज सरकारकी बातका मोल फूटी कौड़ीके बराबर भी नहीं होता। सर विलियम विन्सेंटने कितनी शान और दिखावेके साथ यह आश्वासन दिया था कि जबतक असहयोगी हिंसाको नहीं भड़काते उनके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की जायेगी। अच्छा ही हुआ कि भारतवासियोंने उनकी चिकनी-चुपड़ी बातोंपर भरोसा नहीं किया। इस आश्वासनका सिर्फ यही मतलब था कि जबतक असहयोग आन्दोलन महज प्रचार रहेगा, जबतक उसका खास असर न होगा तबतक असहयोगियोंके खिलाफ कोई कदम नहीं उठाया जायेगा। अब चूँकि हम खाली जलसे-जुलूस और प्रदर्शनकी स्थितिसे बहुत आगे निकल आये हैं, इसलिए गिरफ्तारियों और सजाओंसे बचे रहनेकी कोई उम्मीद हमें नहीं करनी चाहिए; हमें तो बड़ेसे-बड़े कष्टोंके लिए तैयार रहना चाहिए। हमारा आन्दोलन ज्यों-ज्यों प्रभावशाली होता जायेगा त्यों-त्यों दमन भी उसी हिसाबसे बढ़ता जायेगा। जाहिर है कि पाँच सालके निर्वासनका दण्ड लोगोंके मनमें आतंक पैदा करनेकी गरजसे ही दिया गया है। मैं नहीं कह सकता कि भारतकी जिन्दगीमें वर्तमान पाँच सालोंका अरसा कितने युगोंके बराबर है। अगर भारतने जो कहा है उसे कर दिखाया तो अवधि पूरी होनेके पहले ही अनुचित रूपसे जेलोंमें बन्द किये गए तमाम कैदियोंको रिहा करनेकी ताकत स्वयं देशके हाथमें आ जायेगी। लेकिन वह घड़ी दूर हो या करीब, हमारा कर्त्तव्य स्पष्ट है। किसी भी गिरफ्तारीका जवाब हमें गुस्सेसे नहीं देना है, जैसा कि मालेगाँवमें हुआ। हमें तो शान्त बने रहकर हिम्मत और पक्के इरादेके साथ अन्यायका मुकाबला करना है। अगर हम अपने धर्म और सिद्धान्तके प्रति सच्चे हैं तो हमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके रचनात्मक कार्यक्रमपर ज्यादा जोरोंसे अमल करके उसे हर हालतमें पूरा करना चाहिए। हर गिरफ्तारीपर हमें थोथे या उत्तेजनात्मक प्रदर्शन नहीं करने चाहिए। शेखी बघारना हमारा काम नहीं। हमारा कर्त्तव्य है ठोस काम करते हुए जेल जाना।

मालेगाँवमें दुर्व्यवहार

मालेगाँवमें असहयोगियोंने जो अपराध किया, हम लोग उसकी गम्भीरताको कम करके दिखानेकी कोशिश करते हैं। वहाँके सब-इन्स्पेक्टरने उत्तेजित होनेका कितना ही

१. जोजेफ चैम्बरलेन (१८३६–१९१४); १८९५ से १९०३ तक उपनिवेश-मन्त्री।

बड़ा कारण क्यों न दिया हो, उससे असहयोगियोंकी प्रतिहिंसापूर्ण कार्रवाई उचित तो नहीं ठहराई जा सकती। मैं इस मसलेपर कानूनी दृष्टिसे विचार नहीं करूँगा। मेरी दृष्टि तो असहयोगीकी दृष्टि है और मुझे केवल उसीसे मतलब है। कोई कितना ही क्यों न उकसाये, असहयोगी तो किसी भी सूरतमें बदला न लेने और जवाबी हमला न करनेके अपने प्रणसे बँधा होता है। सरदार लछमनसिंह और सरदार दिलीपसिंह और उनके साथियोंकी शानदार मिसाल हमारे सामने है। अगर हम सच्चे असहयोगी हैं तो हमें अपने अन्दर उनकी तरह मरनेकी ताकत पैदा करनी होगी। अगर मालेगाँव-के असहयोगी जवाबी हमला किये बगैर बहादुरीसे मर जाते तो मुझे खुशी होती और मैं उनके बलिदानकी तारीफ करता। उनके ऐसे वीरतापूर्ण कृत्यसे भारतकी स्वतन्त्रता-का दिन और नजदीक आ जाता। फिर असहयोगीकी दृष्टिसे हमें यह भी देखना होगा कि उत्तेजित होनेका मौका पहले किसने दिया? उन्होंने पुलिसको डराया या नहीं? जैसा कि मैं पहले भी कह चुका हूँ हममें से किसीकी गिरफ्तारीपर जिस तरहके पागलपन भरे प्रदर्शन किये जाते हैं वे गिरफ्तारीसे बचनेकी हमारी भद्दी कोशिशका ही इजहार करते हैं। अपने-आपको परखनेकी जो कसौटी हमने चुन ली है हमें उसीपर कायम रहना चाहिए। तथ्योंकी अबतक की जानकारीके आधारपर मेरी तो अब भी यही राय है कि असहयोगियोंने अहिंसात्मक असहयोगके नीति-नियमोंका बुरी तरह उल्लंघन किया। खिलाफत या स्वराज्यमें दिलचस्पी रखनेवालोंसे मेरा यही कहना है कि चाहे उनका प्यारेसे-प्यारा नेता ही क्यों न गिरफ्तार कर लिया जाये वे किसी भी तरहका विरोध-प्रदर्शन न करें; इसे वे अपना धर्म ही बना लें। मेरी या मौलाना शौकत अलीकी गिरफ्तारीपर अगर जनताने हड़तालें या विरोध सभाएँ कीं तो मैं इसे अपना सम्मान नहीं समझूँगा। हाँ, अगर हमारी गिरफ्तारीपर विदेशी कपड़ोंका पूरा बहिष्कार करें, लोग ज्यादा उमंग और उत्साहसे चरखा चलाने लगें, तिलक स्वराज्य-कोषके लिए खूब पैसा जमा करें और कांग्रेसके सदस्य बननेकी होड़ लग जाये तो मुझे जरूर खुशी होगी और मैं उसकी तारीफ करूँगा। ऐसे समयमें मैं यह उम्मीद करूँगा कि सारे सरकारी स्कूल और कालेज खाली हो जायें और ज्यादासे-ज्यादा वकील अपनी वकालत छोड़ दें। खिलाफत और पंजाबके मामलेमें सरकारने जो अन्याय किया है उसे मिटानेका तरीका अफसरोंकी हत्या और सरकारी इमारतोंको जलाना नहीं है। इससे राष्ट्रका नैतिक अधःपतन होता है और साथ ही बेहद पस्ती भी फैलेगी। इसलिए हमें हमेशा सतर्क रहना चाहिए और कभी एसा मौका नहीं आने देना चाहिए जिससे लोग उत्तेजित हो उठें और अवांछित या अपराधपूर्ण कृत्योंकी ओर प्रेरित हों।

नुक्ताचीनी

अकसर नौजवान लोग नेताओंके आचरणकी अकारण ही आलोचना करते हैं। इस तरहका जो ताजा उदाहरण मेरे देखनेमें आया है वह किसी हदतक उल्लेखनीय है। हालही में जब मैं सिन्धके दौरेपर गया था तो मुझे हैदराबादसे मीरपुर खासतक ले जानेके लिए एक स्पेशल रेलगाड़ीका इन्तजाम करना पड़ा था। एक सज्जनको यह बरदाश्त नहीं हुआ। उन्होंने नतीजा निकाल लिया कि नेतागण राष्ट्रीय धनका दुरुपयोग कर

रहे हैं। मैंने यह पूछनेकी जरूरत नहीं समझी कि स्पेशल रेलगाड़ीका इन्तजाम क्यों करना पड़ा। पत्र-लेखकने सलाह दी है कि मुझे स्पेशल रेलगाड़ीका इस्तेमाल नहीं करना चाहिए था और सिन्धके लिए एक दिन और देकर पैसेकी बचत करनी चाहिए थी। अगर मेरे इस दोस्तने मामलेकी तहतक पहुँचनेकी कोशिश की होती तो उन्हें मालूम हो जाता कि स्पेशल गाड़ी किये बगैर मुझे मीरपुर खास ले जाना नामुमकिन था, दूसरे कार्यक्रमोंमें व्यवधान डाले बिना मैं सिन्धमें एक दिन और नहीं रुक सकता था, मेरा मीरपुर खास जाना जरूरी था और मुझे वहाँ ले जानेमें जो खर्च पड़ा वह तुलनात्मक दृष्टिसे बहुत ही कम था। सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओंकी आलोचना जन-जागृतिका शुभ संकेत है। इसके कारण कार्यकर्त्ता जागरूक और सावधान रहते हैं। कमखर्चीकी माँग करना चन्दा देनेवालों का हक है। आम जलसोंमें बेशक बहुत ज्यादा फिज़ूलखर्ची की जाती है, तड़क-भड़क और कोरे दिखावेमें भी बहुत पैसा फूँका जाता है। अकसर बगैर सोचे-समझे ही खर्च किया जाता है। इसलिए सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओंके आचरण या सार्वजनिक कार्योंके लिए किये जानेवाले खर्चकी यदि निडरतापूर्वक आलोचना की जाती है तो उससे हमारा फायदा ही है। लेकिन इस तरहकी आलोचना पूरी जानकारी हासिल करके और विचारपूर्ण ढंगसे ही की जानी चाहिए। बेकारकी नुक्ताचीनीकी आदत छोड़ देनी चाहिए।

रेलकी यात्राके सवालपर यह तो मुझे कहना ही पड़ेगा कि नेताओंमें तीसरे दर्जेकी यात्रासे कतरानेकी आदत अब भी दिखाई देती है। मुझे अफसोस है कि तन्दुरुस्ती अच्छी न होनेके कारण अब मैं तीसरे दर्जेमें यात्रा नहीं कर सकता, इसलिए तीसरे दर्जेकी रेल-यात्रासे होनेवाले अमूल्य अनुभवोंसे मैं वंचित हो गया हूँ। इस दर्जेमें यात्रा करनेसे देशवासियोंके विचारोंको जाननेका जितना बढ़िया मौका मिलता है वैसा और किसी भी तरह नहीं मिल सकता। इस दर्जेमें यात्रा करके जो सेवा की जा सकती है वह दूसरी किसी भी तरह नहीं की जा सकती। इसलिए मैं सभी कार्यकर्त्ताओंसे अनुरोध करता हूँ कि वे दूसरे दर्जेमें बहुत आवश्यक होनेपर ही यात्रा करें। तीसरे दर्जेकी यात्रामें जो तकलीफ होती है उसे मुझसे ज्यादा शायद ही कोई जानता होगा। ये तकलीफें कुछ तो रेलवेकी बेरहमीकी सीमातक पहुँची हुई बदइन्तजामीके कारण हैं और कुछ लोगोंकी बुरी आदतोंके कारण। हम दूसरेकी सुविधा-असुविधाका कतई खयाल नहीं करते। तीसरे दर्जेमें यात्रा करनेवाले चौकस कार्यकर्त्ता यात्रियोंकी और इन्तजाम दोनोंसे सम्बन्धित लापरवाहियोंको अच्छी तरह दूर करा सकते हैं। इसमें तो शककी कोई गुंजाइश ही नहीं कि दूसरे दर्जेकी यात्रा आम लोगोंके बसके बाहरकी बात है और आम लोगोंको जो सुविधा नहीं है उसका उपयोग राष्ट्रके सेवक भी नहीं कर सकते।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११–५–१९२१

४२. हिन्दू-मुस्लिम एकता

एकतामें बल है, यह कोरा किताबी जुमला नहीं बल्कि जिन्दगीका जीता-जागता नियम है; और हिन्दू-मुस्लिम एकताकी समस्या इसकी सबसे अच्छी मिसाल है। आपसी फूटसे तो हमारी बर्बादी ही है। जबतक हम हिन्दू और मुसलमान आपसमें एक-दूसरेका गला काटनेके लिए तैयार रहेंगे, तीसरी ताकत बड़ी आसानीसे भारतको गुलाम बनाये रखेगी। हिन्दू-मुस्लिम एकताका मतलब हिन्दुओं और मुसलमानोंकी आपसी एकतासे ही नहीं, इसका मतलब है हिन्दको अपना वतन समझनेवाले सभी लोगोंका आपसी मेल, फिर वे किसी भी धर्मको माननेवाले क्यों न हों।

मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि हममें अभीतक उस हदतक एकता नहीं हो पाई है जो शक्ति बन जाये। अभी तो यह एकता नन्हा-सा एक पौधा है, जो रोज बढ़ रहा है और जिसे खास तौरपर पूरी देखभालकी जरूरत है। नेलौरमें जब यह समस्या मेरे सामने स्पष्ट रूपमें आई तो यह बात बिलकुल साफ हो गई।[1] वहाँ दोनों कौमोंके आपसी सम्बन्ध बहुत अच्छे नहीं थे। दो ही साल पहले, मेरे खयालसे एक जरा-सी बातपर दोनों आपसमें झगड़ पड़े। हमेशा वही बात लड़ाईकी जड़ बनती थी। मस्जिदके आगे बाजा बजाते हुए निकलनेके सवालको लेकर दंगा हुआ था। मेरी रायमें हर छोटीसी बातको गहरा मजहबी रंग देना वाजिब नहीं। इससे हमारी शोभा नहीं बढ़ती, बल्कि घटती है। इसलिए हिन्दुओंको मस्जिदके आगेसे बाजा बजाते हुए निकलनेकी बातपर अड़ना नहीं चाहिए। हम मन्दिरके आगे या दूसरे धर्म-स्थानोंके आगे भी बाजा बजाते हैं, ऐसे उदाहरण भी तर्कके रूपमें नहीं देने चाहिए। मस्जिदके आगेसे बाजा बजाते हुए निकलना हमारे लिए ऐसी कोई खास महत्त्वकी बात तो है नहीं। मस्जिद-के आसपास चौबीस घंटे शान्ति बनाये रखनेकी मुसलमानोंकी भावनाका आदर किया जाना चाहिए। हिन्दूके लिए जो चीज अहमियत नहीं रखती वही मुसलमानके लिए अहम हो सकती है। और जो चीज अहमियत नहीं रखती, उसे माँगनेपर मुसलमानोंको दे देनेमें हिन्दुओंको एतराज नहीं होना चाहिए। जरा-जरा सी बातोंके लिए झगड़ना बेवकूफी है, यहाँ तक कि गुनाह है। जो एकता हम चाहते हैं वह तभी टिकेगी जब हम अपनी-अपनी जिदोंको तरह देना और आपसमें एक-दूसरेके साथ उदारताका बरताव करना सीखेंगे। हिन्दूके लिए गाय प्राणोंसे भी प्यारी है, इसलिए मुसलमानको इस मामलेमें अपने हिन्दू भाईकी राजी-खुशी निबाह लेना चाहिए। नमाजके वक्त शान्ति मुसलमानको प्यारी है। हर हिन्दूको अपने मुसलमान भाईकी इस भावनाका हमेशा खयाल रखना चाहिए। भलमनसीका तो यही तकाजा है। मगर हिन्दुओंमें और मुसलमानोंमें भी ऐसे बुरे लोग हैं जो बिना बात झगड़नेपर आमादा रहते हैं। इसके लिए हमें हिन्दू-मुसल-मानोंकी ऐसी मिली-जुली पंचायतें बना देनी चाहिए जिनकी ईमानदारीपर शककी

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ५४५-५० ।

कोई गुंजाइश न हो, और उन पंचायतोंके फैसलोंपर अमल करना दोनोंके लिए लाजिमी बना देना चाहिए। साथ ही हमें ऐसी पंचायतोंके फैसलोंके पक्षमें जनमत भी तैयार करना चाहिए ताकि उनको कोई चुनौती न दे सके।

मैं जानता हूँ कि पारस्परिक विश्वासकी अब भी कमी है, बहुत ज्यादा कमी है। बहुतसे हिन्दू मुसलमानोंकी ईमानदारीपर सन्देह करते हैं। स्वराज्यका मतलब वे मुसलमान राज समझते हैं और उन्हें अन्देशा है कि अंग्रेजोंके यहाँ न रहनेपर भारतके मुसलमान बाहरके मुस्लिम राज्योंकी मददसे यहाँ मुस्लिम सल्तनत कायम कर लेंगे। उधर मुसलमानोंको यह डर है कि तादादमें बहुत ज्यादा होनेके कारण हिन्दू उनका सफाया कर देंगे। इस तरहकी धारणाएँ दोनों ही कौमोंकी निर्बलता और कायरताकी सूचक हैं। शराफतका न सही, दोनोंके अमन-चैनके साथ रहनेकी अभिलाषाका तकाजा तो कमसे-कम है ही कि पारस्परिक विश्वास और सहिष्णुताकी नीतिको अपनाया जाये। दोनों धर्मोंमें से किसी भी धर्ममें ऐसी कोई बात नहीं जो दोनोंको मिलने न दे। जबरन धर्म-परिवर्तनके दिन अब लद चुके हैं। एक गायकी बात छोड़ दें तो हिन्दू मुसलमानोंसे किस बिनापर लड़ेंगे? और मुसलमान गायकी कुर्बानी करें ही, ऐसा तो उनके मजहबमें कहीं लिखा नहीं है। हकीकत यह है कि आजसे पहले पास आने, आपसी मतभेदोंको मिटाने और एक ही धरतीके बेटोंकी तरह आपसमें दोस्त बनकर रहनेकी हमने कभी कोशिश ही नहीं की थी। अब पहली बार हमें अपनी जिन्दगीमें यह मौका मिला है। खिलाफतका मसला अगले सौ बरसोंतक फिर कभी उठनेका नहीं। अगर हिन्दू मुसलमानोंके साथ पायदार दोस्तीका रिश्ता कायम करना चाहते हैं तो उन्हें इस्लामकी इज्जत रखनेके लिए अपने मुसलमान भाइयोंके साथ जानकी बाजी लगा देनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ११-५-१९२१

४३. अकाल-सहायताके लिए कताई

अहमदाबादके पास मीरीमें अकाल पीड़ितोंके बीच कताईके सम्बन्धमें एक प्रयोग किया जा रहा है। उसके बारेमें श्रीमती जाईजी पेटिटने निम्नलिखित टिप्पणियाँ[1] भेजी हैं। मैं उन्हें सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ। प्रयोग एक अंग्रेज महिलाकी देख-रेखमें किया जा रहा है; वहाँ काम कितने सुव्यवस्थित ढंगसे किया जा रहा है, इसपर पाठकोंकी दृष्टि अवश्य जायेगी। व्यवस्था सभी तरहकी कठिनाइयोंको ध्यानमें रखकर की गई है। इस छोटेसे प्रयोगसे भी जाहिर होता है कि अकालमें राहत पहुँचानेके लिए चरखा कितना सशक्त उपकरण है। यदि कताईको ठीक तरहसे सुसंगठित किया जाये तो उससे आश्चर्यजनक परिणाम निकल सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ११-५-१९२१

१. देखिए परिशिष्ट २।

४४. करघेका अधिक प्रयोग

सम्पादक
'यंग इंडिया'

महोदय,

जिन्हें देशकी भलाईका कुछ भी ध्यान है ऐसे सभी भारतीय एक स्वरसे यही कहते हैं कि भारतको अपने कपड़ेकी आवश्यकता खुद पूरी करनी चाहिए, अर्थात् भारतको न तो विदेशी कपड़ा खरीदना चाहिए और न विदेशी सूत। अब प्रश्न यह उठता है कि इस काममें शीघ्रसे-शीघ्र सफलता किस तरह प्राप्त की जा सकती है। कहा गया है कि यह काम चरखेसे सफल हो सकता है। पर हम लोगोंकी धारणा है कि इसके अतिरिक्त और भी तरीके हैं जिनके द्वारा यह काम और भी आसानी, शीघ्रता तथा ज्यादा अच्छी तरहसे सम्पन्न हो सकता है। लोग पूछ सकते हैं कि वे कौनसे तरीके हैं। हम लोग यहाँपर उन्हें ये तरीके बता देना उचित समझते हैं। (१) भारतमें करघोंकी संख्या बढ़ाना, (२) लोगोंमें इस बातका प्रचार करना कि भारतके बने सूतके मोटे और गाढ़े कपड़ोंपर ही सन्तोष करना चाहिए और भारतमें महीन विदेशी सूतसे बने कपड़ेका त्याग कर देना चाहिए। इसका थोड़ा स्पष्टीकरण कर देना जरूरी है। थोड़ी देरके लिए मान लीजिए कि देश सिर्फ मोटा कपड़ा पहननेके लिए तैयार है। ऐसी दशामें ध्यानमें रखनेकी सबसे बड़ी बात यह है कि यदि आज भारतमें चरखेके प्रयोगके बिना कुल जितना सूत और धागा तैयार किया जाता है, यदि उस सबसे वस्त्र तैयार कर दिये जायें तो भारत वस्त्रोंकी अपनी लगभग सारी आवश्यकता पूरी कर सकता है। सचाई तो यह है कि इस देशसे प्रतिवर्ष १४,३०,००,००० पौंड सूत और धागा विदेश जाता है। बस इस सूतके कपड़े बुननेका प्रबन्ध कर दिया जाये तथा देशको मोटा कपड़ा पहननेका थोड़ा बहुत त्याग करनेके लिए तैयार कर लिया जाये तो कपड़ेकी समस्या थोड़े ही अर्सेमें हल हो सकती है। प्रश्न यह उठता है कि क्या हमारे यहाँ जितने शक्ति चालित करघे और हथकरघे हैं वे इतने ज्यादा सूतका कपड़ा बुन सकेंगे? इसका उत्तर सिवा 'नहीं' के और कुछ नहीं हो सकता। ऐसी दशामें क्या करना चाहिए? स्पष्टतः यही उत्तर मिलेगा कि करघोंकी संख्या बढ़ाइये। इसमें भी हाथसे चलनेवाले करघे ही बढ़ाये जा सकते हैं, क्योंकि शक्तिसे चलनेवाले करघे इतनी आसानीसे एकदम नहीं बढ़ाये जा सकते। इसके लिए विदेशोंसे (बुनाईकी) मशीनें मँगानेकी आवश्यकता पड़ेगी। इसमें दो-तीन वर्ष

तो लग ही जायेंगे। और सो भी तब जब हम प्रतिकूल विनिमय दर और इस प्रकारकी मशीनोंपर हालमें लगाये गये ऊँचे आयात करसे उत्पन्न कठिनाइयोंको बिलकुल न देखें। हथकरघोंको बैठाना कठिन काम नहीं है। यहीं भारतमें स्थान-स्थानपर ये बड़ी आसानीसे तैयार किये जा सकते हैं और इनमें खर्च भी अधिक नहीं पड़ेगा। सांख्यकीय विभागके महा निदेशकने जो आँकड़े १९१९ में प्रकाशित किये थे उनके आधारपर हिसाब लगानेसे स्पष्ट हो जाता है कि वर्तमान करघोंकी संख्या दूनी कर देनेसे ही हमारा काम चल सकता है। मैं यहाँ उन आँकड़ोंको पेश करके आपके पाठकोंको उलझनमें नहीं डालना चाहता। मेरी सानुरोध प्रार्थना है कि इस पत्रके पाठक इस मामलेपर गौरसे विचार करें और इसके महत्वको महसूस करते हुए अपनी सारी शक्ति इसे कार्यरूपमें परिणत करनेकी दिशामें लगानेका प्रयत्न करें।

कलकत्ता, — **आपका विश्वस्त,**
१९ अप्रैल — **एस० बी० मित्र**

इस पत्रके लेखकने इस बातपर ध्यान नहीं दिया कि हाथकी कताईके साथ-साथ हाथकी बुनाईका भी प्रचार होगा। यदि हाथका कता सूत करघोंपर नहीं बुना जायेगा तो कपड़ेकी समस्या हल नहीं हो सकेगी। पर केवल हथकरघोंके प्रचारसे यह प्रश्न हल नहीं हो सकता। हाथसे कपड़ा बुननेकी कला अभीतक खत्म नहीं हुई है। इस समय हथकरघोंकी संख्या शक्ति-चालित करघोंकी संख्यासे अधिक है। पर वे अधिकतर विदेशी सूतकी ही बुनाई करते हैं। मैं इस बातका हार्दिक समर्थन करता हूँ कि हमें मोटे कपड़ेसे ही सन्तोष करना चाहिए और जुलाहोंको देशी सूतका प्रयोग करनेके लिए ही प्रेरित किया जाना चाहिए। साथ-ही-साथ इस पत्रके लेखकको "नेताओंसे" भी कहना चाहिए कि वे मिल-मालिकोंसे इस बातके लिए अनुरोध करें कि वे मिलके तैयार सूतको विदेशोंमें भेजनेकी बिलकुल चेष्टा न करें। पर यही कठिन है, क्योंकि जो लाभ उन्हें सूत भेजनेसे होता है उसको छोड़ देना उनके लिए कठिन है। विदेशी वस्त्रोंके पूर्ण बहिष्कारको सफल बनाना केवल मिल-मालिकों और पूँजीपतियोंके हाथमें है। यदि ये दोनों अपना कर्त्तव्य समझ लें और देशकी आवश्यकताकी बात इनके दिमागमें बैठ जाये तो वे इसको अवश्य ही सफल बना सकते हैं। फिर भी हाथकी कताईकी जरूरत तो बनी ही रहती है। विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार कर देनेसे ही काम नहीं बन जायेगा। करोड़ों किसानोंके लिए कोई सहायक पेशा जुटाना भी नितान्त आवश्यक है। पहलेकी भाँति इस समय भी उन्हें अपने अवकाशके समय कृषिके अतिरिक्त किसी सहायक पेशेकी नितान्त आवश्यकता है। उन करोड़ों लोगोंके लिए जो बिना काम-धन्धेके भूखों मर रहे हैं, घर बैठे किसी ऐसे धन्धेकी आवश्यकता है, जिससे उनका निर्वाह हो सके। ऐसा धन्धा हाथकी कताई ही है। इस पत्रके लेखकने जो बात कही है वह काम तो चल ही रहा है। करघोंकी संख्या दिन-दिन बढ़ती जा रही है; जनताकी रुचि भी मोटे कपड़ेकी ओर बढ़ती जा रही है। पर दिन-दिन बढ़ती वर्तमान

दरिद्रताकी समस्याका हल केवल एक है—स्थान-स्थानपर हाथकी कताई। मैं अपने इस विश्वासको और भी जोरदार भाषामें इस प्रकार रखना चाहता हूँ कि भारतवर्ष बिना चरखेके आत्मनिर्भर, निर्भीक तथा स्वावलम्बी नहीं हो सकता। मसूलीपट्टमके श्री कृष्णरावने इसीलिए हाथकताईके कर्त्तव्य (धर्म) को सहज ही धार्मिक कृत्यके रूपमें स्वीकार किया है। जनताने भी अपनी स्पष्ट सूझबूझके सहारे इसी रूपमें इसे स्वीकार किया है। डा० मित्रके विचारोंसे सहमति रखनेवाले सभी लोगोंसे मैं यही अनुरोध करता हूँ कि वे जनताका ध्यान इस मूल तथ्यसे भटकने न दें। हाथकताईमें वे सभी बातें आ जाती हैं जिनका पत्र-लेखकने सुझाव दिया है, बल्कि उसमें कुछ और भी विशेषताएँ हैं। समुद्रमें नदीके लाये हुए तत्त्व तो मौजूद रहते ही हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-५-१९२१

४५. अली भाइयोंकी क्षमा-याचनाका मसविदा[1]

[१४ मई, १९२१ अथवा उसके बाद]

मित्रोंने हमारे कुछ भाषणोंकी ओर हमारा ध्यान दिलाया है जिनके सम्बन्धमें उनकी राय है कि उनमें हिंसाको भड़कानेकी प्रवृत्ति नजर आती है। हम यह कह देना चाहते हैं कि हमारा इरादा कभी हिंसा भड़कानेका नहीं रहा। हमने कभी सोचा भी नहीं था कि हमारे भाषणोंके उन अंशोंसे जो अर्थ निकाला गया है उनका वैसा अर्थ भी हो सकता है।[2] इसलिए हम हृदयसे अफसोस जाहिर करते हैं और इन भाषणोंके कुछ अंशोंकी अनावश्यक उग्रताके लिए खेद व्यक्त करते हैं। हम सार्वजनिक रूपसे यह भी आश्वासन देते हैं और उन सबसे, जो ऐसा वायदा चाहते हैं, वायदा करते हैं कि जबतक असहयोग आन्दोलनसे हमारा सम्बन्ध है तबतक हम फिलहाल या भविष्यमें प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे न तो हिंसाकी वकालत करेंगे और न हिंसाके लिए तैयार रहनेका वातावरण ही बनायेंगे। सचमुच हम इसे उस अहिंसात्मक असहयोगकी भावनाके प्रतिकूल मानते हैं जिसके लिए हम वचनबद्ध हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३०-५-१९२१

१. गांधीजी जब १४ मईको शिमलामें वाइसरायसे मिले थे उस अवसरपर वाइसरायने अली बन्धुओंके कुछ भाषणोंका उल्लेख करके उन्हें हिंसाको उभारनेवाला बताया था। चूँकि उनका वैसा अर्थ निकल सकता था और चूँकि अली भाई असहयोगी होनेके नाते हिंसाका प्रचार करनेकी बात सोच भी नहीं सकते थे इसलिए गांधीजीने उन्हें एक वक्तव्य निकालकर तदर्थ क्षमा माँगनेकी सलाह दी थी। वक्तव्य २९ मई, १९२१ को प्रकाशित हुआ था। देखिए परिशिष्ट ३।

२. अली भाइयोंके वक्तव्यमें यह वाक्य भी जोड़ दिया गया था: "परन्तु हम मानते हैं कि हमारे मित्रोंके तर्क और विवेचनमें वजन है।"

४६. पेचीदा मामला

एक भाई "स्वदेशी" उपनामसे तथा सरल भावसे कुछ प्रश्न पूछते हैं। उन्होंने मेरी जानकारीके लिए अपना नाम भी दिया है। वे सुशिक्षित व्यक्ति हैं। उनके प्रश्न समझने योग्य हैं। वे पूछते हैं:

प्र० : कांग्रेसमें सर्वसम्मतिसे असहयोगका जो प्रस्ताव पास हुआ है उसमें अपना योगदान देनेवाला प्रत्येक प्रतिनिधि क्या उस प्रस्तावके प्रत्येक मुद्देपर धीरे-धीरे नहीं बल्कि तुरन्त ही अमल करनेके लिए नहीं बँधा हुआ है?

उ० : निश्चय ही बँधा हुआ है।

प्र० : यदि वह ऐसा करनेके लिए बँधा हुआ है और ऐसा नहीं करता तो क्या उक्त प्रतिनिधि असहयोगको एक खेल नहीं समझता? ऐसे लोग क्या अपने-आपको और दूसरोंको धोखा नहीं देते?

उ० : अवश्य धोखा देते हैं, इतना ही नहीं बल्कि वे असहयोगके संघर्षको धक्का पहुँचाते हैं। वे अपनी सिपहगरीकी शर्तका पालन नहीं करते। जहाँ सिर्फ पाँच फुट ऊँचे आदमी ही की भरती की जाती हो वहाँ चार फुटका आदमी काम नहीं आता, उसी तरह असहयोगकी सेनामें रहकर जो उसकी शर्तोंका पालन नहीं करते वे असहयोगके कानूनका अविनय भंग करते हैं और गुनहगार बनते हैं।

प्र० : यदि अधिकांश असहयोगी ऐसे ही हुए तो क्या इससे आपको निराशा नहीं होगी? इससे क्या आपका विचित्र आशावाद ढह नहीं जायेगा?

उ० : अभी तो जनताकी कसौटी हो रही है। लेकिन यदि अधिकांश असहयोगी तीस जूनके बाद भी वैसे ही बने रहे तो निस्सन्देह मुझे बहुत दुःख होगा। तथापि इससे मेरा आशावाद ढह नहीं जायेगा। जबतक मैं स्वयं अपने बारेमें आशावान हूँ तबतक मेरा आशावाद टूट नहीं सकता और सबको अपने समान समझनेवाला मैं यही मानता हूँ कि जो मुझे सहज लगता है और जो करने योग्य है उसे सब लोग अवश्य करेंगे। धोखा देनेवाले अपने-आप निकल जायेंगे।

प्र० : क्या ऐसे प्रतिनिधियोंका प्रगट रूपसे तिरस्कार करनेकी जरूरत नहीं है?

उ० : यदि मैं जनरल डायरका तिरस्कार नहीं करता तो फिर मैं दुर्बल प्रतिनिधियोंका तिरस्कार कैसे कर सकता हूँ? यह लड़ाई आत्मशुद्धिकी है और इसमें किसीके तिरस्कारकी कोई गुंजाइश नहीं है। लेकिन ऐसे व्यक्तियोंका निस्सन्देह बहिष्कार किया जाना चाहिए अर्थात् उन्हें प्रतिनिधि न चुना जाये, वे स्वयंसेवक और पदाधिकारी भी न बन सकें। मैं मानता हूँ कि हमारा वातावरण दिन-प्रतिदिन साफ होता जाता है। अब ऐसी समितियाँ बहुत कम रह गई हैं जहाँ वकालत न छोड़नेवाले वकील अभीतक ओहदोंपर हैं। सरकारी स्कूलोंमें पढ़नेवाले विद्यार्थी कदाचित् ही स्वयंसेवक बनते हैं। सभी अपनी-अपनी मर्यादाको समझ गये जान पड़ते हैं।

प्र० : जो न्याय प्रतिनिधियोंपर लागू होता है क्या वही आपके अनुयायियों अथवा आपके सिद्धान्तोंके प्रशंसकोंपर लागू नहीं होता ?

उ० : मेरा तो कोई अनुयायी नहीं है; अथवा वही व्यक्ति मेरा अनुयायी है जो मेरे सिद्धान्तोंको पसन्द करता और उनके अनुसार चलता है। इसलिए अनुयायी सिद्धान्तोंका अनुकरण नहीं करेगा, यह कहना ही अर्थहीन है। मेरे 'अनुयायी' को प्रमाणपत्रकी जरूरत ही नहीं होती। सब उसे पहचान लेते हैं। जो सत्य नहीं बोलता, सत्य आचरण नहीं करता, जो मन, वचन और कर्मसे दयाका पालन करनेके लिए प्रयत्न नहीं करता, जो खादी नहीं पहनता और विदेशी कपड़ेका सर्वथा त्याग नहीं करता, जो भंगीको अपने सगे भाईके समान नहीं मानता, जो परस्त्रीको अपनी माँ-बहन नहीं मानता, जो धर्मकी खातिर, देशकी खातिर, सत्यकी खातिर मरनेके लिए तैयार नहीं होता, जो अपनी तुच्छताको समझकर नम्रभावसे व्यवहार नहीं करता वह मेरा 'अनुयायी' नहीं है। सिद्धान्तोंके प्रशंसकपर भी मैं तो यही कानून लागू करूँगा। कथनी और करनीमें भेद रखने और उसे सहन करनेकी हमें इतनी आदत पड़ गई है कि यह एक रोग बन गया है। जो जैसा बोलते हैं वैसा करनेको तैयार नहीं होते, अगर वे बोलना ही बन्द कर दें तो मैं जानता हूँ कि संसार बहुतसे वितण्डावादसे, व्याख्यानोंसे और फसादोंसे बच जाये।

प्र० : जो ऐसे 'परोपदेशे पांडित्यम्' में कुशल प्रतिनिधियों और प्रशंसकोंके समर्थन-से स्वराज्य मिल जाये तो क्या आप उसे स्वीकार करेंगे? अगर स्वीकार करेंगे तो ऐसा स्वराज्य कबतक टिक सकेगा ?

उ० : स्वराज्यको स्वीकार करना मेरे अधिकारकी बात नहीं है। उसे तो जनता स्वीकार करेगी। जनताके प्रतिनिधिके रूपमें मैं जानता हूँ कि ऐसे मिथ्याचारसे स्वराज्य नहीं मिलता। और अगर मिल जाये तो टिकेगा अथवा नहीं, यह सवाल ही नहीं उठता।

हम सहज ही देख सकते हैं कि इस भाईने बहुत दुःखी होकर ये सारे प्रश्न पूछे हैं। ऐसे ही प्रश्न अनेक सरल स्त्री-पुरुषोंके दिलोंमें उठा करते हैं। प्रत्येक असह-योगीको अपने व्यवहारसे इन प्रश्नोंका समाधान करना चाहिए। स्वराज्य मिलनेमें जो देर लग रही है उसका कारण हम लोग ही हैं।

इस भाईने अपने पत्रकी प्रस्तावनामें कुछ और भी शंकाएँ उठाई हैं। वे विचार करने योग्य हैं इसलिए उन्हें मैं प्रश्नोत्तरके रूपमें प्रस्तुत कर रहा हूँ।

प्र० : आपके कुछ-एक सिद्धान्तोंमें क्या मनुष्य-स्वभावके विरुद्ध विचित्र त्याग करनेकी बात नहीं होती ?

उ० : असहयोगके एक भी सिद्धान्तमें ऐसे कठिन त्यागकी बात नहीं आती। असहयोगके अन्तर्गत त्याग सहल है और लोकस्वभावके विरुद्ध भी नहीं है, इसीसे जनताने उसे सहर्ष स्वीकार कर लिया है, ऐसी मेरी मान्यता है। मुख्य सिद्धान्त तो हिन्दू-मुस्लिम एकता, अशान्तिकी स्थितिमें भी शान्ति बनाये रखना, विदेशी वस्त्रका सर्वथा त्याग, नित्य एक निश्चित समयतक चरखा चलाना, यथाशक्ति दान देना, भंगीको भाई मानना, दारू तथा व्यभिचारका त्याग करना आदि हैं। इनमें मैं कहीं

भी संन्यास नहीं देखता। मैंने ऐसी कोई चीज नहीं माँगी है जो अन्य राष्ट्रोंकी जनताने न की हो। शान्ति कदाचित् नई वस्तु जान पड़ेगी। लेकिन सिखोंने उसकी मर्यादित साधना करके दिखा दी है। अधिक गहराईमें जानेपर दिखाई देगा कि अंग्रेजोंने जब भी चाहा शान्तिका पालन किया है। मैंने तो यहाँतक कहा है कि अगर हम शान्तिका नीतिके रूपमें — एक खास अवसरपर इस्तेमाल किया जानेवाला हथियार समझकर — पालन करेंगे तो भी हम विजय प्राप्त करेंगे। मेरी कल्पनामें शान्ति सबलका — सच्चे क्षत्रियका — हथियार है। लेकिन हम उसे दुर्बलका हथियार मानें तो भी शस्त्र-बलको इस समय असम्भव मानकर हिन्दुस्तान यदि मरनेका ही मन्त्र साधे और मारना छोड़ दे तो आज ही स्वराज्य प्राप्त किया जा सकता है।

प्र० : आप शासकके विरुद्ध असहयोग करवाते हैं तो फिर आप भंगियोंको विधान परिषदोंमें जानेवाले सहकारियोंकी सेवा करनेसे और उनसे असहयोग करनेके लिए कहनेवाले लोगोंको क्यों रोकते हैं?

उ० : हम शासकके विरुद्ध असहयोग नहीं करते, हमारा असहयोग शासकोंकी नीतिके विरुद्ध है। हमारा असहयोग व्यक्तिगत नहीं है। हमने भंगी अथवा कुम्हारको किसी भी अधिकारीकी सेवा करनेसे नहीं रोका है। वैसा करना मैं अभीष्ट भी नहीं मानता। तो फिर हमारे ही जो भाई मतभेदके कारण विधान परिषदों आदिमें जाते हैं भंगियों आदिको उनका काम करनेसे हम कैसे रोक सकते हैं? हम तो सभीको प्रेमके द्वारा जीतनेकी उम्मीद रखते हैं। अगर प्रेमसे न हो तो हम किसीको जोर-जबरदस्तीसे अपनी ओर नहीं लाना चाहते बल्कि हम उसकी बुद्धिको जाग्रत करके, उसे समझा-बुझाकर अपने मतका प्रचार करना चाहते हैं। असहयोगका मूल तिरस्कार नहीं बल्कि प्रेम है; असहयोगका मूल दुर्बलता नहीं अपितु अतुल बल है; असहयोगका मूल असत्य नहीं बल्कि सत्य है; उसका मूल अन्ध-श्रद्धा न होकर ज्ञानमय श्रद्धा, विवेक और बुद्धि आदि है, उसका मूल अधर्म नहीं बल्कि धर्म है, आत्मविश्वास है।

प्र० : आप सिर्फ महात्मा हैं या महात्मा होनेके साथ-साथ राजनीतिज्ञ भी हैं?

उ० : मेरे विचारसे जो महात्मा है उसे राजनीतिज्ञ भी अवश्य होना चाहिए। राजनीतिज्ञ वह है जो राज्य — जनता — की रक्षा व सेवा कर सके। कोई आत्मा उसी हदतक 'महान्' है जिस हदतक वह जन-समाजकी दास बन चुकी है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-५-१९२१

४७. टिप्पणियाँ

देशी राज्योंमें क्या किया जा सकता है?

एक काठियावाड़ी भाई पूछते हैं कि देशी राज्योंमें रहनेवाले भाइयोंको क्या करना चाहिए। जबसे काठियावाड़में परिषद् हुई है तबसे यह सवाल बहुत ज्यादा पूछा जाता है।

देशी राज्योंमें हमें ब्रिटिश साम्राज्यके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं कहना चाहिए और उन्हें विषम स्थितिमें नहीं डालना चाहिए। यह बात कहनेकी देशी राज्योंमें कोई जरूरत नहीं कि कैसी राक्षसी सरकार है। लेकिन देशी राज्योंमें भी हम शराब छोड़ने और छुड़वानेका आन्दोलन जरूर करें, वहाँ हम चरखेका प्रचार करें और सूत कातें, विदेशी कपड़ेका बहिष्कार हम वहाँ भी करें, खादी जरूर पहनें, व्यभिचार और जुए आदिका त्याग करें, कांग्रेसकी बहीमें अपना नाम दर्ज करवायें, तिलक स्वराज्य-कोषमें खूब चन्दा दें। देशी राज्योंमें रहनेवाले सब लोग यदि चाहें तो इतना योगदान दे सकते हैं; और यदि वे इतना करें तो यह स्वराज्यके लिए बहुत माना जायेगा। असहयोगको जिन्होंने आत्मशुद्धिका यज्ञ माना है, उनके लिए तो कोई सवाल पूछनेको ही नहीं रह जाता। देशी राज्योंमें रहनेवाले अगर भंगीको भाई मानें तो इसमें देशी राज्योंके प्रति कोई द्रोह नहीं होता।

देशी राज्य कोई हिन्दुस्तानसे बाहर नहीं हैं। हिन्दुस्तानके सब लोगोंके सामने एक ही प्रश्न है। धर्मयुद्ध सबके सामने उपस्थित है। सबको सत्य, निर्भयता और शान्तिका पाठ पढ़ना है। ब्रिटिश राज्यकी हदमें, ब्रिटिश राज्यके विरुद्ध बोलना इष्ट हो सकता है, लेकिन देशी राज्योंमें हमें ऐसा करनेकी तनिक भी आवश्यकता नहीं है।

टीका अनावश्यक है

लेकिन ब्रिटिश राज्यकी हदमें भी क्या अब ब्रिटिश राज्यकी टीका करनेकी जरूरत है? मुझे तो लगता है कि टीका-मात्र छोड़ देनेमें ही हमारी सभ्यता है। जितनी टीका करनी पड़ती है सो मैं कर लेता हूँ। 'नवजीवन' के पाठकोंको मैं विश्वास दिलाता हूँ कि जहाँ टीका करनेकी जरूरत जान पड़ती है वहाँ मैं टीका करनेसे नहीं चूकता। लेकिन इस साम्राज्यका नाश अथवा सुधार हम टीका करके नहीं कर सकते। यह तो हम अपने कर्त्तव्यका पालन करके, स्वयं अपना सुधार करके ही कर सकेंगे। हमें चरखा कातनेसे, कांग्रेसमें नाम दर्ज करानेसे और तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा करनेके कामसे तनिक भी अवकाश नहीं है। जब हम मुट्ठी-भर काम करनेवाले लोग अपना प्रत्येक क्षण उपर्युक्त कार्योंमें लगायेंगे तभी हम जून मासतक किये जानेवाले कार्यको पूरा कर सकेंगे। तो फिर हम सरकारकी टीका करनेमें क्यों अपना समय बरबाद करें?

मुझे तो स्टेशनोंपर होनेवाली भीड़ और नारोंकी आवाजें भी असह्य जान पड़ती हैं। नारों और भीड़से स्वराज्य मिलनेवाला नहीं है। इनका समय अब लद गया है। जबतक लोगोंमें जागृति नहीं थी तबतक भले ही उसकी जरूरत महसूस होती रही हो। अब तो लोगोंमें जितनी जागृति आनी चाहिए उतनी जागृति आ गई है। नायगराका जलप्रपात ही हमारे हाथ लग गया है। उसका उपयोग भी हम जान गये हैं। इसलिए हमारा कार्य तो चुपचाप उसका उपयोग करना है।

जैसे सरकारकी टीकाकी जरूरत नहीं है वैसे ही सरकारसे सहयोग करनेवालों की भी टीका करनेकी जरूरत नहीं। हमारी सारी टीका हमारे कार्योंमें समाहित है। यह जगत्‌का निजी अनुभव है कि आधी छटाँक-भर आचरणका जितना फल होता है उतना मन-भर भाषणों अथवा लेखोंका नहीं होता। भाषण अनेक बार हमारे आचरणकी खामियोंका दर्पण होता है। बहुत अधिक बोलनेवाला कदाचित् ही अपने कहेका पालन करता है। वचनका पालन करनेवाला कंजूसकी भाँति तोले-तोलकर अपने मुखसे शब्द निकालता है। और आज जब हम सरकारके सामने माँग पेश न करके स्वयं अपनेसे करने लगे हैं तब हमें जो भी टीका करनी हो, जो भी शिकायत हो वह अपने सम्बन्धमें ही होनी चाहिए।

अशान्त असहयोगी

भावनगरकी जैन कन्या-पाठशालाके सम्बन्धमें वहाँके एक सज्जन अपना नाम देते हुए कुछ दुःखजनक बातें लिखते हैं। मेरे पास वह पत्र कुछ अर्सेसे पड़ा हुआ है लेकिन निरन्तर यात्रापर रहनेके कारण मैं सब पत्रोंका जितनी जल्दी चाहता हूँ उतनी जल्दी उत्तर नहीं दे पाता। यद्यपि इन सज्जनने अनुमति दी है तथापि मैं उनका नाम प्रकाशित नहीं कर रहा हूँ क्योंकि मैं उन्हें भावनगरमें अनुचित टीकाका पात्र नहीं बनाना चाहता। मैं जानता हूँ कि हममें अभी परस्पर एक-दूसरेकी टीका — चाहे वह शुद्ध हृदयसे ही क्यों न की गई हो — सहन करनेकी शक्ति नहीं आई है। स्वराज्य-वादी व्यक्तिमें तो विषैली टीका भी सहन करनेकी शक्ति आनी चाहिए। ये भाई लिखते हैं कि छठी अप्रैलके पवित्र दिवसपर भी असहयोगियोंकी टोली वहाँकी कन्या-पाठशालाको बन्द करवानेके लिए पहुँच गई। यदि एक भी व्यक्ति विनयपूर्वक समझानेके लिए गया होता तो कुछ भी कहनेको न रहता लेकिन पत्र-लेखकके कथनानुसार तो पूरी टोली वहाँ पहुँच गई। टोलीके मुखियाने बलपूर्वक उसे बन्द करनेके लिए कहा। प्रधान अध्यापकने कुछ दलीलें पेश कीं, जिनके उत्तरमें पत्थरोंकी वर्षा हुई। एक कन्याका सिर फूट गया, दूसरीको थोड़ी चोट आई। इतनेमें सौभाग्यसे शान्तिके अर्थको समझनेवाला एक असहयोगी आ गया। उसने पत्थरोंकी वर्षा तथा अत्याचारको रोका। इस भाईको मैं बधाई देता हूँ। दूसरोंके सम्बन्धमें तो मैं क्या लिखूँ? यदि उपर्युक्त हकीकत सही है तो उन्होंने छठी तारीखको बदनाम किया, अपनी प्रतिज्ञा भंग की और अपना होश-हवास खो बैठे। बलात् पुण्य करवानेकी अनीतिसे छुटकारा चाहनेवाले हम लोग दूसरोंपर जोर-जबरदस्ती कैसे कर सकते हैं?

उपर्युक्त समाचार देनेवाले भाई लिखते हैं कि पाठशालाके व्यवस्थापकोंने इस उपद्रवके बावजूद पुलिसकी सहायता नहीं माँगी। इस खामोशीके लिए मैं व्यवस्थापकोंको

बधाई देता हूँ। जो शान्तिको भंग करते हैं वे अन्य सब शर्तोंका पालन करनेके बावजूद सहयोगी माने जायेंगे और असहयोगीके तीरोंको सहन करते हुए भी शान्तिका पालन करनेवाले सहयोगीको मैं ऐसा असहयोगी मानता हूँ जो स्वयं नहीं जानता कि वह असहयोगी है।

"ईश्वर भी स्वराज्य भेंटमें नहीं दे सकता"

सत्याग्रह सप्ताहके समय मैंने जो सन्देश दिया था, यह वाक्य उस सन्देशमें से है। भाई रजबअली झीणाभाई लिखते हैं कि इस वाक्यमें निहित रहस्यको बहुत कम लोग समझेंगे और इससे आभास होता है कि मैंने ईश्वरकी शक्तिको भी सीमित कर दिया है तथा यह बात धार्मिक लोगोंके दुःखका कारण भी हो सकती है। मैं स्वयं अपनेको आस्तिक मानता हूँ; ईश्वर-तत्त्वको माननेवाला हूँ। मैंने तो एक स्पष्ट बातको अत्यन्त स्पष्ट शब्दोंमें लिखकर ईश्वरके कानूनको जनताके सम्मुख प्रस्तुत किया है। पापीको स्वर्ग देनेकी बात ईश्वरने अपने हाथमें रखी ही नहीं है। अगर यह कहें कि ईश्वरने कानून बनाकर मानो अपने हाथ ही धो लिए हैं तो अधिक उचित होगा। 'ईश्वर सर्वशक्तिमान् है, इसी कारण उसने अपवादरहित कानूनोंकी रचना की है।' स्वराज्य व्यक्ति और राष्ट्रके अस्तित्वका परिचायक है। जिस तरह उसीकी भूख शान्त होगी जो व्यक्ति खाना खायेगा, उसी तरह वही व्यक्ति स्वतन्त्र होगा जो अपनी पराधीनताको उतार फेंकेगा। हम शराब न छोड़ें, विदेशी कपड़ेका त्याग न करें और हिन्दू और मुसलमान लड़ते रहें तो क्या भगवान् स्वराज्य देगा? क्या वह दे सकता है? लेकिन यदि हम लोकमतके द्वारा विदेशी कपड़े और शराबका परित्याग करें तो क्या हमें स्वराज्य नहीं मिलेगा? ईश्वरीय विधानको भंग करनेके बावजूद कोई ईश्वरसे स्वर्ग-प्राप्तिकी आशा रख सकता है? कदापि नहीं रख सकता। इसीसे हम प्रार्थना करते हैं, सो भी स्वराज्यके लिए नहीं बल्कि स्वराज्यके लिए शक्ति प्राप्त करनेके लिए करते हैं। प्रार्थनाका अर्थ ही यह है कि अमुक वस्तु अथवा स्थितिको प्राप्त करनेकी अपनी तीव्र इच्छाको वाणी देना।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-५-१९२१

४८. भाषण : शिमलाकी सार्वजनिक सभामें[1]

१५ मई, १९२१

श्री गांधीने उत्तर[2] देते हुए कहा :

यहाँ आनेके सम्बन्धमें मुझे यह कहना है कि पण्डित मदनमोहन मालवीयने मेरे पास एक तार भेजा था जिसमें उन्होंने लिखा था — 'आप शिमला आयें। अगर आप न आयेंगे तो स्वास्थ्य खराब होते हुए भी मुझे आपको लिवानेके लिए आपके पास आना पड़ेगा।' तार पहुँचनेके बाद ही मुझे पण्डितजीकी चिट्ठी मिली जिसमें उन्होंने लिखा था कि अगर आप अपने असहयोगी दलकी सारी बात वाइसराय लॉर्ड रीडिंगके सामने रखनेके लिए उनसे मिलना चाहते हों तो आप उनसे मिल सकते हैं। मुझे अपनी बात किसी सरकारी अधिकारीके सम्मुख रखनेमें कोई बुराई नहीं दिखी।

इसलिए जब मैं शिमला पहुँचा तब मैंने वाइसरायको इस आशयकी एक चिट्ठी भेजी कि मैं आपसे मुलाकात करना चाहता हूँ। वाइसरायने मुलाकात करना तुरन्त मंजूर कर लिया और जब मैं उनसे मिला तब उन्होंने मेरी बातोंको काफी देरतक धैर्य और सौजन्यके साथ सुना। किन्तु मैं यह नहीं कह सकता कि मेरी यह भेंट[3] कितनी सफल या असफल हुई। मैंने वाइसरायको बतलाया कि हमारा दल क्या चाहता है और उन्होंने भी शासनकी कठिनाइयाँ ब्यौरेवार बताईं। हमारी यह भेंट सफल भी कही जा सकती है और असफल भी।

. . . [मुझे] कहना यह है कि सब-कुछ इसपर निर्भर करता है कि कांग्रेस, सिख लीग और खिलाफत समितिके सम्मेलनमें गम्भीरतापूर्वक जो निश्चय किये गये हैं उनपर लोग किस हदतक अमल करते हैं।

इस समय तो मैं सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि जबतक हमारा आन्दोलन शान्तिमय है और जबतक हममें आत्मत्यागका भाव मौजूद है और हम इन्हींके बलपर अपने देशके प्रति न्याय प्राप्त करना चाहते हैं, तबतक संसारमें कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो हमें इसी बरसके भीतर-भीतर स्वराज्य लेनेसे रोक सके। हम लोग संसारको यह दिखला देना चाहते हैं कि हमारा उद्देश्य न्याय प्राप्त करना है। हमारी समस्या

१. गांधीजीने ईदगाहके मैदानमें आयोजित एक सभामें भाषण दिया जिसमें लगभग पन्द्रह हजार लोग उपस्थित थे। उनसे प्रार्थना की गई कि वे शिमला आनेका उद्देश्य और वाइसरायके साथ हुई बातचीतका परिणाम बतायें। गांधीजीका यह भाषण **आज**के १६ मईके अंकमें और **बॉम्बे क्रॉनिकल**के १७ और १९ मईके अंकोंमें तथा **नवजीवन**के २९-५-१९२१ के अंकमें प्रकाशित हुआ था। यहाँ **आज**का विवरण **बॉम्बे क्रॉनिकल** और **नवजीवन**के विवरणोंसे मिला लिया गया है।

२. इससे पूर्व दिये गये मानपत्रका उत्तर।

३. देखिए "शिमला-यात्रा", २५-५-१९२१।

केवल उसी हालतमें सुलझ सकती है जब भारतके प्रति न्याय किया जाये, किसी दूसरे उपायसे नहीं। मैं चाहता हूँ कि सब लोग उन लोगोंकी तरह बरताव करें जिन्होंने कि ननकाना साहबमें अपने पवित्र उद्देश्यकी खातिर अपने प्राण न्यौछावर किये हैं, न कि महन्त नारायणदासकी तरह जो दूसरोंकी जान लेनेपर तुला हुआ था। जब हममें अहिंसा और आत्मत्यागकी भावना आ जायेगी तब आधुनिक अस्त्र-शस्त्र भी हमारी स्वतन्त्रतामें बाधक नहीं हो सकेंगे।

हमको बार-बार यह सुनाकर डराया जाता है कि अंग्रेजोंके चले जानेपर हमारे देशपर अफगान लोग आक्रमण कर देंगे। किन्तु जबतक मैं जीवित हूँ तबतक मैं इस देशके किसी भी भागपर किसी विदेशीका प्रभुत्व नहीं होने दूँगा। मेरा विश्वास है कि प्रत्येक भारतीय मुसलमानका भी यही मत है। मेरा हिन्दुओंसे अनुरोध है कि वे इस सम्बन्धमें मुसलमानोंके भावोंके बारेमें कोई सन्देह न करें। मैं चाहता हूँ कि सब धर्मोंके लोग मिलकर स्वतन्त्रताके संघर्षमें उनका साथ दें।

उन्होंने सफलताके लिए आवश्यक तीन बुनियादी बातोंकी विस्तारसे चर्चा की और कहा:

पहली बात यह है कि हम अपने दिलोंसे भय निकाल दें; हिन्दू, मुसलमानों और पठानोंसे तथा मुसलमान हिन्दुओंसे भय न करें और एक-दूसरेपर अविश्वास न करें। अफगानोंका भय एक झूठा हौआ है। मैं अफगानोंके स्वभावको बहुत दिनोंसे जानता हूँ। उनमें चाहे जितनी भी कमजोरियाँ हों किन्तु वे खुदासे डरनेवाले लोग हैं। मुझे विश्वास है कि वे भारतपर हमला करनेकी बात कभी न सोचेंगे। दूसरी ओर मैं स्वतन्त्रताकी लड़ाईमें मदद देनेके लिए अफगानोंको कभी न बुलाऊँगा। इसके विपरीत यदि अफगानोंने हमपर हमला किया तो मैं उनके विरुद्ध भी दृढ़ताके साथ असहयोग करूँगा और जीतेजी मातृभूमिकी एक अंगुल-भर जमीनपर कब्जा न होने दूँगा।

मैं आपसे फिर कहता हूँ कि हिन्दुओं और मुसलमानोंके लिए अपने-अपने मनोंमें से पारस्परिक अविश्वासको निकालना अत्यन्त आवश्यक है। अब मैं दूसरी बुनियादी बातपर आता हूँ। वह है हिन्दू-मुस्लिम एकता। हमने आपसमें जो समझौता किया है वह कोई सौदेबाजीकी भावनासे प्रेरित होकर नहीं किया। हिन्दू मुसलमानोंके मामलेमें इसलिए साथ देते हैं कि वे ऐसा करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं और जानते हैं कि भलाईसे भलाई ही पैदा होती है। इसलिए उनका मुसलमानोंको गोवध बन्द करनेके लिए विवश करना घातक होगा। इस सम्बन्धमें केवल वे ही दोषी नहीं हैं, फिर गोरक्षाका प्रश्न जोर-जबरदस्तीसे कभी तय होनेवाला नहीं है। मुसलमानोंका मुक्त हृदयसे विश्वास करने और उनको जी खोलकर सहयोग देनेसे अन्तमें हर चीज मिल जायेगी। इस्लामका आधार भलमनसाहत है और यदि वह इसे छोड़ देगा तो वह टिक नहीं सकता।

तीसरी बुनियादी बात, जो सबसे महत्त्वपूर्ण भी है, अहिंसा है। इस सम्बन्धमें मैं सिखोंसे सविनय अनुरोध करता हूँ कि वे लक्ष्मणसिंह और दलीपसिंहका अनुकरण करें, जिन्होंने महन्त नारायणदाससे लड़नेमें समर्थ होनेपर भी हिंसाका प्रयोग नहीं किया।

मेरी अन्तिम बात है स्वदेशी। यद्यपि वकीलों और छात्रोंसे अदालतें और स्कूल छोड़नेका अनुरोध करना मैं कभी बन्द न करूँगा, फिर भी वे इसपर अमल न करें तो उसका हमारे संघर्षपर कोई प्रभाव न पड़ेगा बशर्ते कि हम विदेशी मालका बहिष्कार पूरा कर दें। पूर्ण स्वदेशीका अर्थ ही स्वराज्य है।

अन्तमें गांधीजीने कहा कि स्वराज्यकी प्राप्ति निर्भयता, आत्मत्यागकी भावना, अहिंसा, हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य और चरखेके अपनानेपर निर्भर है।

आज, १६–५–१९२१

४९. तार : सिलहट कांग्रेस कमेटीके मन्त्रीको

शिमला
१७ मई, १९२१

मन्त्री
कांग्रेस कमेटी
सिलहट

दु:ख हुआ। मुख्य अधिकारी दास। उन्हें सूचित कर रहा हूँ। तफसील भेजें।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५२६) की फोटो-नकलसे।

५०. तार : चित्तरंजन दासको

शिमला
१७ मई, १९२१

चित्तरंजन दास
रसा रोड
कलकत्ता

तार दें कितनी रकम किस लिए चाहिए।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५२५)की फोटो-नकलसे।

५१. टिप्पणियाँ

हॉर्निमैन और सावरकर बन्धु

दोस्तोंने मुझपर श्री हॉर्निमैनके मामलेमें उदासीनता बरतनेका दोष लगाया है और कुछ दोस्तोंको इसपर भी ताज्जुब है कि मैं सावरकर बन्धुओंके[1] बारेमें इतना कम क्यों लिखता हूँ। वकीलोंमें एक मसल मशहूर है, जो कानूनका पेशा करनेवालोंके लिए करीब-करीब नीतिवाक्य ही बन गई है — टेढ़े मुकदमे कानूनको लांछित कर देते हैं।[2] एक भुक्तभोगीकी हैसियतसे मैं जानता हूँ कि यह मसल कितनी ज्यादा सच है। बहुतसे न्यायाधीशोंको सर्वथा अन्यायपूर्ण फैसले देनेको मजबूर होना पड़ता है, हालाँकि कानूनी दृष्टिसे वे फैसले बिलकुल ठीक होते हैं। कुछ ऐसी ही बात असहयोगके बारेमें भी कही जा सकती है कि असहयोगके लिए पेचीदे मामले अच्छे नहीं होते। छोटेसे अखबारके सम्पादकके रूपमें, मैं केवल उन्हीं मामलोंपर लिख सकता हूँ जिनका सीधा सम्बन्ध देशके सामने उपस्थित मुख्य प्रश्नसे हो। श्री हॉर्निमैन या सावरकर बन्धुओंके बारेमें लिखनेका मेरा उद्देश्य सरकारी फैसलेको प्रभावित करना नहीं, जनताको असहयोगके लिए उत्साहित करना ही हो सकता है। श्री हॉर्निमैन बड़े काबिल और बहादुर दोस्त हैं और अगर वे देशमें लौट सकें तो मुझे खुशी ही होगी। मैं जानता हूँ कि उनका निर्वासन अन्यायपूर्ण है। सावरकर बन्धुओंकी प्रतिभाका उपयोग जन-कल्याणके लिए होना चाहिए। अगर भारत इसी तरह सोया पड़ा रहा तो मुझे डर है कि उसके ये दो निष्ठावान पुत्र सदाके लिए हाथसे चले जायेंगे। एक सावरकर भाईको मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। मुझे लन्दनमें[3] उनसे भेंटका सौभाग्य मिला था। वे बहादुर हैं, चतुर हैं, देशभक्त हैं। वे क्रान्तिकारी हैं और इसे छिपाते नहीं हैं। मौजूदा शासनप्रणालीकी बुराईका सबसे भीषण रूप उन्होंने बहुत पहले, मुझसे भी काफी पहले, देख लिया था। आज भारतको, अपने देशको, दिलोजानसे प्यार करनेके अपराधमें वे कालापानी भोग रहे हैं। अगर सच्ची और न्यायी सरकार होती तो वे किसी ऊँचे शासकीय पदको सुशोभित कर रहे होते। मुझे उनके और उनके भाईके लिए बड़ा दुःख है। अगर असहयोग आन्दोलन न होता तो श्री हॉर्निमैन लौट आते और दोनों सावरकर बन्धु भी कालेपानीसे बहुत पहले छूटकर आ जाते लेकिन अभी तो असहयोग बाधक है। सावरकर बन्धुओंकी और जेलकी सजा भोग रहे दूसरे लोगोंकी रिहाईमें जिनकी दिलचस्पी है और जो चाहते हैं कि श्री हॉर्निमैन

१. विनायक दामोदर सावरकर और गणेश दामोदर सावरकर प्रमुख क्रान्तिकारी जिन्हें आजन्म कारावासकी सजा दी गई थी पर बादमें १९३७ में रिहा कर दिया गया था।

२. हार्ड केसेज मेक बैड लॉ।

३. विनायक दामोदर सावरकरसे गांधीजीकी मुलाकात १९०९ में लन्दनमें विजयादशमीके उपलक्ष्यमें आयोजित एक भोजमें हुई थी।

लौट आयें, उन सभीको स्वराज्यका दिन नजदीक लानेके लिए असहयोग-कार्यक्रमको जल्दीसे-जल्दी पूरा करनेमें जुट जाना चाहिए। और तबतक हमें इन सजाओंको सहना ही नहीं होगा बल्कि सभी उचित, न्यायपूर्ण और शान्तिपूर्ण तरीकोंसे सरकारका विरोध करके खुद भी जेल जाना होगा।

यह सब क्या है?

मैं ये टिप्पणियाँ आनन्द भवनमें[1] बैठकर लिख रहा हूँ। मुझे अभी-अभी एक पर्चा दिखाया गया, जिसे किसानोंके बीच बाँटनेके अपराधमें पाँच नौजवानोंको सजा दी गई है। इस पर्चेमें कहा गया है कि मैंने एक सालके अन्दर स्वराज्य दिलानेका बिना शर्त वायदा किया है। इस बातको पढ़कर मुझे चोट लगी और थोड़ी झुँझलाहट भी हुई लेकिन यह तो ऐसी कोई आपत्तिजनक बात नहीं है। उलटे, पर्चेमें किसानोंको उत्तेजित किये जानेपर भी शान्तिसे काम लेनेकी सलाह दी गई है। मजिस्ट्रेटने इन पर्चोंको राजद्रोहात्मक करार देकर उन नौजवानोंसे इस बातके लिए जमानत तलब की कि वे इन पर्चोंको नहीं बाँटेंगे। जमानत देनेके बदले उन्होंने जेल जाना पसन्द किया। सरकारका विरोध करनेका यह एक अच्छा और सुथरा तरीका है।

इलाहाबाद जिलेके कलक्टर द्वारा जारी किया हुआ एक नोटिस भी मैंने देखा जिसमें सरकारी नौकरोंको गांधी टोपी पहननेसे मना किया गया है। मैं हर एक सरकारी कर्मचारीको सलाह देता हूँ कि वह इन सुन्दर, हलकी-फुलकी और नाकाबिले एतराज टोपियोंको पहनें और बरखास्त हो जायें और जरूरत पड़े तो जेल भी जायें। इलाहाबादमें मुझे यह बात भी बताई गई कि सरकारके कुछ बहुत ही खैरख्वाह कर्मचारी किसानोंको धमकियाँ दे रहे हैं कि अगर उनके घरोंमें चरखे पाये गये तो वे जेल भेज दिये जायेंगे। अगर चरखेको रखना राजद्रोहमें शुमार किया जाये, तो उसे घरमें रखना जेल जानेका बड़ा ही सम्माननीय ढंग हो जायेगा।

जमींदार और रैयत

यह सच है कि संयुक्त प्रान्तकी सरकारने लोगोंको आतंकित करनेके मामलेमें औचित्यकी सभी सीमाएँ पार कर डाली हैं। लेकिन साथ ही यह भी निस्सन्देह सच है कि किसान अपनी नई मिली ताकतका इस्तेमाल कुछ बहुत समझदारीसे नहीं कर रहे हैं। कहा जाता है कि कई जमींदारियोंमें उन्होंने ज्यादतियाँ की हैं, कानूनको बालाए ताक रख दिया है, मनमानी करने लगे हैं और जो उनकी मर्जीके मुताबिक चलनेको तैयार नहीं उसे एक मिनट भी बरदाश्त नहीं कर सकते। वे सामाजिक बहिष्कारका गलत ढंगसे इस्तेमाल कर रहे हैं और उन्होंने उसे हिंसाका एक साधन बना लिया है। यह भी पता चलता है कि उन्होंने कई जगह अपने जमींदारोंका पानी, नाई और धोबी तक बन्द कर दिया है और किसी भी खिदमतगारको उनके यहाँ काम करनेके लिए नहीं जाने देते। कहीं-कहीं तो उन्होंने लगान देना भी बन्द कर दिया है। असहयोगसे किसान आन्दोलनको प्रेरणा और गति तो जरूर मिली, लेकिन उनका यह आन्दोलन असहयोगके पहलेसे चल रहा है और उससे स्वतन्त्र है। समय आनेपर

१. इलाहाबादमें पं० मोतीलाल नेहरूका निवास-स्थान।

हमें किसानोंसे यह कहनेमें जरा भी हिचकिचाहट न होगी कि वे सरकारको लगान देना मुल्तवी कर दें, लेकिन असहयोगके किसी भी दौरमें हम जमींदारोंको उनके लगानसे वंचित करनेकी तो कोई भी बात नहीं सोचते। इसलिए किसान आन्दोलन-को किसानोंकी दशा सुधारने और किसान-जमींदार सम्बन्धोंको बेहतर बनाने तक ही सीमित रखना चाहिए। किसानोंको यह बात समझाई जानी चाहिए कि जमींदारोंके साथ किये गये अपने इकरारनामोंकी शर्तोंका वे ईमानदारीके साथ पूरा-पूरा पालन करें, चाहे वे इकरारनामे लिखित हों या रस्मी। अगर कोई रस्मी या लिखित इकरार-नामा भी बुरा हो और उसे भंग करना जरूरी ही हो जाये तो पहले जमींदारको इत्तिला देकर केवल शान्तिपूर्ण तरीकेसे ही वैसा करना उचित है, हिंसाका सहारा तो कभी नहीं लेना चाहिए। हर हालतमें जमींदारोंके साथ दोस्ताना ढंगसे बातचीत करके समझौतेकी कोई सूरत निकालनी चाहिए। हमारा राष्ट्र दुनियाके सबसे बड़े और प्राचीनतम राष्ट्रोंमें से है; इसलिए इसके जीवनमें एक साथ कई जटिल समस्याओं-का उठ खड़ा होना स्वाभाविक ही है। उन सभी समस्याओंको सरकारकी सहायता या उसके हस्तक्षेपके बिना हल करनेकी हमारी सामर्थ्यपर ही स्वराज्य प्राप्त करनेकी हमारी सामर्थ्य निर्भर करती है।

अनुशासन

अब वह समय आ गया है जब हमें अवश्य ही अनुशासनका पालन करना सीख लेना चाहिए। अब यह बात टाली नहीं जानी चाहिए। स्टेशनोंपर जो प्रदर्शन किये जाते हैं, वे यात्रियोंके लिए काफी तकलीफदेह बनते जा रहे हैं। मुझे बताया गया है कि जो रेल-यात्री स्टेशनपर प्रदर्शन होनेके कुछ समय पहले मेरी तारीफ कर रहे थे वे ही अगले कुछ स्टेशनोंपर दो-एक प्रदर्शनोंके बाद मुझे कोसने लगे। मुझे उनके साथ पूरी सहानुभूति है। इलाहाबाद जाते हुए मेरे एक सहयात्रीको भीड़के कारण बड़ी तक-लीफ हुई। प्लेटफार्मपर भीड़ इस तरह टूट पड़ी कि उन्हें एक प्याली चाय भी न मिल सकी। वे जलपानके लिए बाहर तो जा ही नहीं सके। अगर उन्होंने मुझे एक बवाल समझ लिया तो कोई ताज्जुब नहीं। इलाहाबादसे लौटते हुए कानपुरके प्लेट-फार्मपर तो भीड़ बिलकुल काबूसे बाहर हो गई। हजारों आदमी शोर मचाते, राष्ट्रीय नारे लगाते हुए मेरे डिब्बेपर टूटे पड़ रहे थे। इससे सभीको खासी असुविधा हुई। नेताओंने किसी तरह भीड़को बिठा तो दिया, पर शोर और नारे बन्द न किये जा सके। अन्ततक गुल-गपाड़ा मचता ही रहा। फिर मुझसे कहा गया कि मैं दरवाजेपर आकर लोगोंको दर्शन दूँ। लेकिन मैंने साफ कह दिया कि जबतक शोर-गुल बिलकुल थम नहीं जाता मैं अपनी जगहसे हिलूँगा नहीं। दर्शन देनेका आग्रह करनेवाले दोस्तोंको इससे जरूर निराशा हुई होगी।

इस सारे शोर-गुल और धक्का-मुक्कीकी खास वजह यह है कि पहलेसे सारी बातें सोच-विचारकर ठीकसे इन्तजाम नहीं किया जाता और फिर संगठनकी कमजोरी भी है। अच्छा तो यही होगा कि स्टेशनोंपर प्रदर्शन कतई न किये जायें। रेलके यात्रियों-की सुविधाका खयाल हमें करना ही होगा। अगर स्टेशनोंपर स्वागत करना ही हो

तो राष्ट्रीय नारे कमसे-कम और समझ-बूझकर लगाये जायें और ऐसा इन्तजाम रहे जिससे मुसाफिरोंको चढ़ने-उतरने और प्लेटफार्मपर आने-जानेमें किसी तरहकी दिक्कत न हो। वक्त आ गया है कि जन-आन्दोलनको पूरी गम्भीरता और बाकायदा चलानेकी तमीज और अनुशासन हमारे राष्ट्रमें पैदा हो। इसका मतलब यह हुआ कि स्वयं-सेवकोंको पहलेसे इसकी तालीम दी जाये और जनताको भी अनुशासनका पालन करनेकी बात पहलेसे ही सिखा-समझा दी जाये। मोटी-मोटी बातें सिखलानेमें कुछ ज्यादा दिन भी नहीं लगते। जहाँ-जहाँ लोगोंको पहले समझा दिया गया था, वहाँ उनका बरताव काफी अच्छा रहा। अनुशासनकी तालीमके बिना पता नहीं कब कैसी दुर्घटना हो जाये। अभीतक कोई अनर्थ नहीं हुआ, इसका कारण लोगोंकी सहज भलमनसाहत ही है, नहीं तो ऐसे भीड़-भड़क्केमें उपद्रव होते क्या देर लगती है। अगर ठीक तरीकेसे तालीम दी जाये तो बड़ेसे-बड़े प्रदर्शनोंके बावजूद हम सर्वथा निश्चिन्त और सुरक्षित रह सकते हैं; उससे किसी खतरेका अन्देशा नहीं रह जाता। सभा और जुलूसोंमें पागलोंकी तरह धक्का-मुक्की और शोरगुल हमारे लिए नुकसानदेह है।

सिखोंका रंग

एक मित्रने मेरा ध्यान अभी-अभी सिख लीगके उस प्रस्तावकी ओर खींचा है जिसमें मुझसे अनुरोध किया गया है कि मैं राष्ट्रीय झण्डेमें सिखोंके काले रंगको भी स्थान दूँ। ये मित्र भूल जाते हैं कि सफेद पट्टीमें बाकीके सभी रंग आ जाते हैं। हमें क्षेत्र, प्रान्त या फिरकोंकी संकीर्ण विचारधाराको नहीं अपनाना चाहिए। झण्डेमें हिन्दू और मुसलमान रंगोंको इन दोनों सम्प्रदायोंकी संख्याके कारण ही जगह नहीं दी गई है। बल्कि खास वजह यह है कि दोनों कौमें लम्बे अर्सेसे एक-दूसरेसे अलग रही हैं और इनका आपसी अविश्वास हमारी आजादीके रास्तेका रोड़ा बना हुआ है। इसलिए दोनोंकी एकताके प्रतीकस्वरूप वे रंग रखे गये हैं। सिखोंकी तो हिन्दुओंसे कभी कोई लड़ाई रही नहीं और अगर सिखोंके रंगको जगह दी जाये तो फिर पारसियों, ईसाइयों और यहूदियोंने क्या कसूर किया है; उनके रंगोंको भी क्यों न जगह दी जाये? मुझे आशा है सिख लीगवालोंके ध्यानमें भी यह बात आ जायेगी कि उनका सुझाव कितना अव्यावहारिक है।

प्रस्तावित राष्ट्रीय झण्डेमें तब्दीलियाँ सुझानेवाले पत्रोंका मेरे पास ताँता ही लग गया है। उन सभी पत्रोंको छापना नामुमकिन-सा है। फिर किसी भी पत्रमें कोई खास बात नहीं कही गई है। किसीको इस बातका अफसोस है कि झण्डेमें कलात्मक शोभा नहीं है, तो कुछ उसमें हिन्दू और मुसलमान प्रतीकोंको रखनेकी बात करते हैं। ये सब आलोचक मूल मुद्देकी बात भूल गये हैं। हमारे राष्ट्रीय झण्डेमें धार्मिक प्रतीकोंको जगह नहीं दी जा सकती, उसपर तो कोई ऐसा प्रतीक रहना चाहिए जो सबका हो और सब उसे अपनाकर एक हो सकें। चरखा ऐसा ही निशान है। और ज्यादातर लोग मेरी इस रायसे सहमत हैं कि जबसे चरखा छूटा, हमारी आजादी लुट गई, और चरखेको अपनाकर तथा विदेशी कपड़ोंका पूरा परित्याग करके ही हम अपनी खोई हुई आजादी फिरसे हासिल कर सकते हैं।

तार भेजनेवालों से

फौरी तार भेजनेवाले बहुतसे दोस्त अपने तारोंके जवाब न पाकर मुझे जरूर अशिष्ट समझते होंगे। लेकिन हकीकत यह है कि अहमदाबादके तार-विभागको शायद ऐसी हिदायत दे दी गई है कि मेरे तार देर करके भेजे जायें। सरकारी अधिकारी अगर चाहें तो मेरे काममें इस तरहके रोड़े अटका सकते हैं; उन्हें यह हक हासिल है। ऐसी सूरतमें जो सार्वजनिक महकमे सरकारके कब्जेमें हैं उनका इस्तेमाल किये बगैर स्वतन्त्र रूपसे अपना आन्दोलन चलानेकी सामर्थ्य हममें होनी चाहिए। मैं अपने तार भेजनेवालों को यही सलाह दूँगा कि वे तार भेजनेमें पैसा बर्बाद न करें; जबतक सरकार मेरी डाकपर ऐसी कोई रोक नहीं लगाती और मेरे नामकी चिट्ठी-पत्री मुझे बराबर मिलती रहती है तबतक तो मेरे साथ सारा पत्र-व्यवहार डाकके जरिये ही किया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८–५–१९२१

५२. हमारे पड़ोसी

एण्ड्रयूज साहबने पूछा है, "क्या 'अफगानी हमलेका हौआ'[1] शीर्षक मेरा लेख अफगानोंको भारतीय सीमापर हमला करनेका न्यौता नहीं है और क्या मैं इस तरह हिंसामें प्रत्यक्ष भागीदार नहीं हो जाता?" उक्त लेख भारतीयों और भारत सरकारके लिए लिखा गया था। अफगान इतने बेवकूफ नहीं हैं, कमसे-कम मैं तो नहीं समझता, कि महज़ मेरा लेख पढ़कर वे भारतपर हमला कर देंगे। मगर मैं मंजूर करता हूँ कि एण्ड्रयूज साहबने जिस अर्थकी ओर इशारा किया है उस तरहका अर्थ भी मेरे उस लेखसे निकाला जा सकता है। इसीलिए मैं सभीको बता देना चाहता हूँ कि अफगान या दूसरे कोई भी हमारी मददके लिए आयें, यह मैं कतई नहीं चाहता; उलटे मैं तो हृदयसे यही चाहता हूँ कि वे हमारी मददके लिए कदापि न आयें। हिन्दुस्तान बगैर किसी बाहरी मददके अकेला ही सरकारसे निपट सकता है इसका मुझे पूरा-पूरा विश्वास है। मैं तो यह दिखा देना चाहता हूँ कि सिर्फ अहिंसात्मक उपायोंसे हम अपना ध्येय प्राप्त कर सकते हैं। और इसीलिए अफगानोंको भारतीय सीमासे दूर रखनेमें मैं अपनी पूरी ताकत लगा दूँगा। लेकिन साथ ही यह भी सच है कि अफगानोंको भारतीय सीमासे दूर रखनेके इस काममें मैं सिपाहियों या पैसोंसे सरकारकी कोई मदद नहीं करूँगा।

मैंने अपने उस लेखमें अपनी स्थितिको यथासम्भव स्पष्ट कर दिया था। मौजूदा सरकारको मैं बिलकुल ही नाकाबिले बरदाश्त और हिन्दुस्तानके पौरुषके लिए एक

१. देखिए पृष्ठ ५८-६०।

जबरदस्त खतरा मानता हूँ; और इसको सुधारनेके लिए कोई भी कीमत क्यों न चुकानी पड़े, मैं उसके लिए हमेशा तैयार रहूँगा। इसमें अब मुझे कोई शंका नहीं रही कि यह सरकार ईश्वरसे पराङ्मुख है। और चूँकि कुछ भले अंग्रेज और हिन्दुस्तानी इसे सहयोग दे रहे हैं अतः यह भारतके लिए और भी ज्यादा खतरनाक हो गई है। इसके कारण इसकी जन्मजात बुराइयोंपर भारतवासियोंकी नजरें नहीं पड़ पातीं। मेरी लड़ाई व्यक्तियोंसे नहीं सरकार कही जानेवाली समूची प्रणालीसे है। अच्छेसे-अच्छे वाइसराय भी इस प्रणालीके अन्दरतक भिदे हुए जहरको निकालनेमें कामयाब नहीं हो सके और विवश होकर रह गये। क्योंकि जहरकी नींवपर ही तो इसका सारा महल खड़ा किया गया है। इसलिए मौजूदा तन्त्रको बदलनेपर अगर भारतकी तबाही हो, अधिकसे-अधिक तबाही हो, तो मैं उसमें भी समाधान मान लूँगा।

लेकिन मैं क्या करना चाहूँगा और मैं सचमुच क्या कर सकता हूँ, ये दोनों बातें एक-दूसरेसे बिलकुल ही जुदा-जुदा हैं। मुझे दुःखके साथ इस बातको मंजूर करना पड़ता है कि अभी हमारा आन्दोलन फौजी भाइयोंपर इस हदतक असर नहीं डाल सका है कि वे जरूरतके समय सरकारकी मदद करनेसे इनकार करनेकी हिम्मत कर सकें। जब सारे सैनिक इस बातको समझ जायेंगे कि उनकी जिन्दगी भी राष्ट्रके लिए है और हुक्म पाकर खून बहाना सैनिकके पेशेका मखौल है, तो हिन्दुस्तानकी भौतिक स्वतन्त्रताकी लड़ाई बगैर किसी कोशिशके जीती जा चुकेगी। लेकिन आजकी हालतमें तो आम लोगोंकी तरह ही हिन्दुस्तानी सैनिकके मनमें भी भय समाया हुआ है। वह फौजमें इसलिए भरती होता है क्योंकि उसे गुजर-बसरका दूसरा कोई जरिया नजर ही नहीं आता। सरकारने एक तो तरह-तरहके इनाम-इकरामों द्वारा हत्याके इस पेशेको खासा लुभावना बना दिया है और फिर कुछ इस तरहकी सजाएँ तजवीज कर रखी हैं कि जो एक बार इसमें फँस गया वह बगैर मुसीबत उठाये निकल नहीं सकता। इसलिए मुझे ऐसा कोई भ्रम नहीं है कि अगर अफगान तुरन्त हमला कर बैठें तो सरकार हिन्दुस्तानियोंकी मददसे महरूम हो जायेगी। लेकिन जब खास तौरपर चुनौती दी गई तो मैंने असहयोग आन्दोलनका एक सुसंगत दृष्टिकोण देशके सामने रख देना अपना कर्त्तव्य समझा। साथ ही देशको सावधान करना भी जरूरी हो गया था कि वह अफगानी हौएसे बिलकुल न डरे।

सवालका दूसरा हिस्सा, मेरी रायमें, अहिंसाकी गलत धारणासे उत्पन्न हुआ है। जब दूसरी ताकतें सरकारसे लड़ाई छेड़ें तो ऐसे समय सरकारकी मदद करना अहिंसावादी असहयोगीका कर्त्तव्य नहीं है। अहिंसावादी असहयोगी ऐसी किसी भी लड़ाईको प्रकट या गुप्त रूपसे न तो बढ़ावा ही देता है और न उसमें किसी तरहकी मदद ही करता है; वह प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपमें ऐसी लड़ाईमें हिस्सा नहीं लेता। यह भी उसका काम नहीं है कि वह लड़ाईको खत्म करनेमें सरकारकी कोई मदद करे। वह तो इस सरकारको नष्ट करनेकी कोशिश कर रहा है; वह उसकी हारके लिए प्रार्थना करेगा, जो उसे करनी भी चाहिए। इसलिए जहाँतक मेरे अहिंसा-धर्मका सवाल है मैं जरा भी विचलित हुए बिना पूरी शान्तिके साथ, अफगानी हमलेकी कल्पना कर सकता हूँ और भारतकी सुरक्षाके बारेमें भी मुझे कोई चिन्ता नहीं है। अफगानोंकी भारतसे

कोई लड़ाई नहीं है। वे खुदासे खौफ खानेवाले लोग हैं। कलकत्ता और बम्बईके कुछ हूश पठानोंको देखकर सारी अफगान जातिको वैसा ही समझनेकी भूल असहयोगियोंको कदापि नहीं करनी चाहिए। यह सोचना भी एक तरहका अन्धविश्वास ही है कि अगर सीमापर अंग्रेजी चौकी नहीं रही तो वे भारतमें घुस आयेंगे। हमें यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि अगर वे चाहें तो आज भी उन्हें भारतपर हमला करनेसे कोई रोक नहीं सकता। लेकिन उन्हें भी अपना देश उतना ही प्यारा है जितना हमें अपना देश। सीमापर रहनेवालों की कुछ कठिनाइयाँ जरूर हैं लेकिन उसके बारेमें तो मुझे अलगसे ही एक लेख लिखना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८–५–१९२१

५३. हिन्दुओ सावधान

असहयोगके लिए बिहार कल्पतरुके समान है। बिहारकी हिन्दू-मुस्लिम एकता हमेशासे मशहूर रही है। इसीलिए मुझे यह देखकर बहुत दुःख हुआ कि वहाँ हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच तनाव पैदा हो गया है और तनाव भी इतना ज्यादा कि शायद उनकी एकता उसके सामने छोटी पड़ जाये। हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों ही के जिम्मेदार नेताओंने मुझसे कहा है कि दोनोंमें कोई झगड़ा खड़ा न होने पाये इसके लिए उनको एड़ी चोटीका जोर लगाना पड़ रहा है। वे सभी नेता ऐसे हैं जो आसानी-से होश-हवास नहीं खो सकते। उन्होंने मुझे बतलाया है कि गंगाराम शर्मा, भूतनाथ और विद्यानन्द वगैरह कुछ हिन्दुओंने लोगोंसे कहा था कि मैंने हिन्दुओं और मुसल-मानों दोनों ही के लिए मांस-मछलीकी मनाही कर दी है और उन जरूरतसे ज्यादा जोशीले शाकाहारियोंने लोगोंसे मांस-मछली छीन ली; और इसमें जोर-जबरदस्ती भी की गई थी। मैं जानता हूँ कि कई जगह मेरे नामका इस्तेमाल गैरकानूनी हरकतोंके लिए किया जा रहा है, लेकिन यह मिसाल उन सभीसे अनोखी है। आम तौरपर सभी जानते हैं कि मैं पक्का शाकाहारी हूँ और खाने-पीनेकी आदतोंमें सुधार करनेका हिमायती हूँ। लेकिन सभी लोग आम तौरपर यह नहीं जानते कि अहिंसा पशुओंपर जितनी लागू होती है उतनी ही मनुष्योंपर भी; और मैं मांस खानेवालों के साथ भी बिना किसी परहेजके उठता-बैठता हूँ।

मैं एक गायकी जान बचानेके लिए किसी आदमीकी जान नहीं लूँगा, ठीक उसी तरह जिस तरह कि मैं एक आदमीकी जान बचानेके लिए किसी गायकी जान नहीं लूँगा। फिर चाहे उस आदमीकी जान कितनी ही बेशकीमती क्यों न हो। इसलिए यह बतलानेकी जरूरत नहीं रह जाती कि मैंने किसीको भी असहयोग आन्दोलनके कार्यक्रमके साथ शाकाहारका प्रचार करनेकी अनुमति नहीं दी है। ऊपर जिन लोगोंके नाम गिनाये गये हैं मैं उनको नहीं जानता। मैं इतनी बात पक्की तौरपर जानता हूँ कि यदि किसी भी प्रचारके साथ हिंसा जुड़ गई तो हमारा उद्देश्य विफल हो जायेगा।

हिन्दू लोग मुसलमानोंको मांस और यहाँतक कि गो-मांस छोड़नेके लिए भी विवश नहीं कर सकते। शाकाहारी हिन्दू दूसरे हिन्दुओंको मांस-मछली या बटेर न खानेके लिए मजबूर नहीं कर सकते। मैं तलवारके जोरपर भारतवासियोंको संयमी नहीं बनाऊँगा। हिंसाने देशमें जितनी पस्ती पैदा की है उतनी दूसरी किसीभी चीजने नहीं की। भय हमारे राष्ट्रीय चरित्रका एक हिस्सा बन गया है। यदि असहयोगी हिंसाके जोरसे लोगोंको अपने मतका समर्थक बनाना चाहते हैं तो वह उनकी भयंकर भूल होगी। यदि उन्होंने अपने प्रचार-आन्दोलनके दौरान किसीके साथ जरा भी जोर-जबरदस्ती की तो वह तो सरकारके हाथोंमें खेलना ही होगा।

गोरक्षाका प्रश्न एक बड़ा प्रश्न है। हिन्दुओंके लिए तो वह सबसे बड़ा है। मैं गायकी इज्जत किसीसे भी कम नहीं करता। हिन्दू लोग तबतक अपना धर्म नहीं निभा सकते जबतक वे गोरक्षा करनेकी सामर्थ्य अपनेमें पैदा नहीं करते। ऐसी सामर्थ्य या तो शारीरिक बलसे पैदा हो सकती है या आत्मिक बलसे। हिंसाके जोरपर गोरक्षा करना हिन्दू धर्मको आसुरी धर्म और गोरक्षाके माहात्म्यको एक घटिया काम बना देना होगा। एक मुसलमान मित्रने ठीक ही लिखा है कि इस मामलेमें अगर हिन्दुओंने जोर-जबरदस्ती की तो गो-मांस खाना मुसलमान अपना फर्ज समझने लगेंगे, क्योंकि सिर्फ इस्लाममें उसकी इजाजत है। हिन्दू लोग अपने अन्दर जान देनेकी ताकत, कष्टसहन करनेकी ताकत पैदा करके ही गायकी रक्षा कर सकते हैं। भारतमें कसाईकी छुरीसे गायकी रक्षा करनेका एक ही तरीका हिन्दूके सामने है और वह यह है कि आज इस समय इस्लामके ऊपर जो खतरा मँडरा रहा है उससे इस्लामको बचानेकी कोशिश करे और भरोसा करे कि उसके मुसलमान देशवासी सही रास्तेपर आ जायेंगे, यानी वे अपने हिन्दू देशवासियोंका खयाल करके खुद ही गायकी रक्षा करने लगेंगे। हिन्दुओंको बड़ी सावधानी रखनी चाहिए कि मुसलमानोंके खिलाफ कहीं कोई हिंसा न हो। कष्ट-सहन और पारस्परिक विश्वास — ये दोनों आत्मिक बलके ही गुण हैं। मैंने सुना है कि बड़े-बड़े मेलोंमें किसी मुसलमानके पास लोग यदि गायें या बकरियाँ भी पाते हैं तो कभी-कभी जबरन उनको छीन लेते हैं। जो लोग अपनेको हिन्दू बतलाकर ऐसी हिंसा करते हैं, वे गौ और हिन्दू धर्म दोनों ही के शत्रु हैं। गौको बचानेका सर्वोत्तम और एकमात्र मार्ग यही है कि खिलाफतको बचाया जाये। इसीलिए आशा है कि हरेक असहयोगी गोरक्षा या किसी भी अन्य पशुकी रक्षा करनेमें या दूसरे किसी भी कामके दौरान हिंसाकी किंचित् प्रवृत्तिको भी हर रूपमें रोकनेकी ज्यादासे-ज्यादा कोशिश करेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८–५–१९२१

५४. इश्तिहार[1]

[१९ मई, १९२१]

इश्तिहार सं० १ : स्वराज्य प्राप्त करनेका अर्थ है हर घरमें चरखा लाकर सूत कातना। आज ही अपने घरोंमें चरखे चालू कीजिए। चरखे और रुई प्रिंसेज़ स्ट्रीटके राष्ट्रीय विद्यालयसे प्राप्त किये जा सकते हैं।[2]

इश्तिहार सं० २ : सूतके जरिये स्वराज्य। यदि आप स्वराज्यके युद्धमें अपना भाग अदा करना चाहते हैं तो जितना सूत कात सकें, कातें . . .।

इश्तिहार सं० ३ : सामान्य तौरपर सूत कातना धन्धा नहीं, कर्त्तव्य है। जबतक भारतमें सूत काता जाता था तबतक वह समृद्ध था। भारतको पुनः समृद्ध बनानेके लिए फिरसे कताईका काम शुरू कीजिए . . . ।

इश्तिहार सं० ४ : सूतकी कमी दूर करनेसे भारत जितनी प्रगति करेगा उतनी किसी अन्य उपायसे नहीं . . .।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

५५. एक परिपत्र

भुसावल जाते हुए,
२० मई, [१९२१]

प्रिय मित्र,

परमश्रेष्ठ वाइसरायके साथ मेरी छः मुलाकातें हो चुकी हैं। बातचीतमें कोई भी नया मुद्दा नहीं उठाया गया। मैंने उनके सामने तीन बातें रखीं और उनका हल निकालनेके लिए तीन समितियाँ बनानेका सुझाव रखा। फिलहाल तो वे शायद मेरे सुझावोंपर अमल नहीं करेंगे। लेकिन मैं मानता हूँ कि परिस्थितिको समझनेमें हमें उनकी सहायता करनी चाहिए।

मैंने उनके सामने सुझाव रखा था कि जिस तरह उन्होंने मेरे साथ मुलाकात की है उसी तरह उनको अन्य असहयोगी नेताओंके साथ भी बातचीत करनी चाहिए। उनको यह विचार पसन्द आया और उन्होंने कहा कि जो लोग भी उनसे मिलने की इच्छा प्रकट करेंगे उनको वे बड़ी खुशीसे समय देंगे। लाला लाजपतराय परमश्रेष्ठसे

१. ये इश्तिहार 'महात्मा गांधीका सन्देश' शीर्षकसे देशी भाषाओंमें जारी किये गये थे। यह पाठ बॉम्बे गवर्नमेंट रेकर्डसमें अधिकृत अनुवादसे उद्धृत किया गया है।

२. यह वाक्य प्रत्येक इश्तिहारके अन्तमें दुहराया गया था।

मुलाकात कर भी चुके हैं। लालाजीने आन्दोलनमें अपने शरीक होनेका कारण व्यक्त करते हुए मुख्यतः पंजाबकी समस्याके बारेमें ही बातचीत की। कृपया आप वाइसराय से मुलाकातका समय माँगें और अपने असहयोगी बननेके कारणोंसे उन्हें अवगत करायें। यदि आपका इरादा मुलाकातके लिए लिखनेका हो और अगर आपको ठीक लगे तो आप कह सकते हैं कि मुलाकातकी बात मैंने आपको सुझाई थी और कहा था कि यदि आप मुलाकातकी अनुमतिके लिए लिखें तो वाइसराय बड़ी खुशीसे मुलाकात करेंगे।

मेरे सुझावका मतलब यह नहीं है कि आपको स्वयं ही मुलाकातके लिए जाना चाहिए। आप किसी भी दूसरे व्यक्तिको चुन सकते हैं या अपने नामके साथ एक दूसरा नाम भी लिख सकते हैं। इस पत्रका यह अर्थ भी नहीं लगाया जाना चाहिए कि मैं खुद आपका ही जाना जरूरी मानता हूँ। इसका निर्णय तो आपको, सिर्फ आपको ही, करना है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद

५६. तार : जमनालाल बजाजको

[२० मई, १९२१][1]

जमनालालजी
वर्धा

सुन्दरलालजीको बधाई दीजिये।[2] शायद कल भुसावलके लिए रवाना हो रहा हूँ। फिर तार दूँगा।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ७५२३) से।

१. गांधीजी २१ मईको भुसावलमें थे; देखिए "भाषण : भुसावलमें", २१-५-१९२१। सम्भवतः यह तार एक दिन पहले दिया गया होगा।

२. पण्डित सुन्दरलाल भारतीय दण्ड संहिताकी धारा १२४ ए के अधीन गिरफ्तार किये गये थे और बादमें उन्हें २३ मई, १९२१ को वर्धामें एक सालकी सख्त कैदकी सजा दी गई थी।

५७. भाषण : रेलवे स्टेशनपर[1]

[२१ मई, १९२१][2]

स्टेशनपर आनेवालों को पैसा लेकर ही आना चाहिए। इस वर्ष हमें तीन विपत्तियों-से मुक्त होना है। उसके लिए बेजवाड़ामें उपायोंकी योजना की गई है।[3] ३० जून तक यदि एक करोड़ रुपया इकट्ठा नहीं हुआ तो नाक कट जायेगी और यदि ऐसी नौबत आ गई तो मैं अवश्य कहूँगा कि हमें इस वर्ष स्वराज्य नहीं मिलेगा। स्वदेशी-का चलन जारी है लेकिन तब भी देखता हूँ कि कुछ तो केवल स्वदेशी टोपी पहनकर ही स्वदेशी कहलवाना चाहते हैं। मैं अब स्पष्ट रूपसे कहता हूँ कि जो विदेशी कपड़ोंका त्याग नहीं करना चाहते उनसे मैं मिलना नहीं चाहता। जबतक खादीको प्रतिष्ठित पोशाकका दर्जा नहीं दिया जाता तबतक स्वराज्य नहीं मिलेगा। यदि यह बात सच्ची हो कि यह लड़ाई आत्मशुद्धिकी है तो खादी पहननेके बाद आप मद्य और व्यभिचारका त्याग करें, ईमानदार बनें, मालेगाँवके लोगोंकी भाँति पागल न बनें, भंगी-चमारको अस्पृश्य न मानें, उनकी और ब्राह्मणकी समान सेवा करें। मेरे लिए फूल न लायें; स्वराज्यके लिए पैसा लायें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९–६–१९२१

५८. भाषण : भुसावलमें

२१ मई, १९२१

महात्माजीने कहा कि मैं आपको आजके स्वागतके लिए धन्यवाद देता हूँ। उन्होंने फिर यह बतलाया कि वाइसरायसे उनकी भेंट किस प्रकार हुई। उन्होंने कहा :

मुलाकातमें दोनोंने अपनी-अपनी बातें दिल खोलकर कहीं परन्तु हम लोगोंको उनसे कोई विशेष आशा नहीं करनी चाहिए। मुझे इस भेंटका कोई खेद नहीं है क्योंकि मैंने कोई आशा नहीं की थी। जनता ही स्वराज्य लेगी। कोई व्यक्ति अथवा वाइसराय हमें स्वराज्य नहीं दे सकते। स्वराज्यका अर्थ धर्म-राज्य है और मैंने जो तरीके बतलाये हैं उनसे वह शीघ्र ही मिल जायेगा। आप लोगोंको धार्मिक तथा शुद्ध हृदय होना चाहिए। शराब छोड़ देनी चाहिए और शुद्ध स्वदेशी कपड़े पहननेकी

१. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

२. गांधीजीने इस तारीखको खण्डवासे भुसावलकी यात्राकी और रास्तेमें पड़नेवाले एक स्टेशनपर भाषण भी दिया था।

३. संकेत बेजवाड़ा कांग्रेस प्रस्तावकी ओर है; देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ५०४-५।

दृढ़ प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिए। तब आप लोगोंको धर्म-राज्य मिल जायेगा। आप लोगोंको याद रखना चाहिए कि कोई अशुद्ध हृदयवाला पापात्मा, असहयोगके युद्धमें सफल नहीं हो सकता। लोकमान्यको देखिए।[1] आप लोगोंको लोकमान्यकी पूजा करनी चाहिए। परन्तु केवल एक करोड़ रुपया इकट्ठा करके, जो एक मामूली बात है, आपको इस महान् देशभक्तकी पूजा नहीं करनी है। लोकमान्यने जिसे अपना जीवन समर्पित कर दिया था, एक करोड़ रुपया इकट्ठा करके आप उस स्वराज्यको हासिल करें।[2]

लोकमान्य स्वराज्यकी आत्मा थे। स्वराज्य उनके जीवनका ध्येय था। उनकी आत्मा आपसे जानना चाहती है कि आप स्वराज्यके लिए क्या-कुछ करनेको तैयार हैं। क्या उनकी स्मृतिको अमर बनानेके लिए आप लोग एक करोड़ रुपया इकट्ठा नहीं कर सकते? आप लोग जबतक विदेशी कपड़ा नहीं छोड़ देते, स्वराज्य पास आनेका नाम नहीं लेगा। अगर कोई खादी न पहने, बिना महीन मलमलके अपना काम न चला पाये तो मैं उसके घरमें पाँव न रखूँ। अभीतक मैं सरकारसे यह करो वह करो, कहता रहा। अब मैं लोगोंको उनका कर्त्तव्य बताना चाहता हूँ। मैं उनका दास हूँ; लेकिन कुछ शर्तोंपर। उन [शर्तों] के पालनसे मेरी सेवा मिलेगी। पाँव छूनेमें तो केवल पतन ही है। आप लोगोंको अहिंसात्मक असहयोगके सिद्धान्तोंपर दृढ़ रहना चाहिए। हिंसात्मक कोई भी कार्य अपनी प्रतिज्ञाको तोड़ता है और मालेगाँवकी क्रूरताओंके समान घृणित है। आप लोगोंको हिन्दू-मुस्लिम एकताके महत्त्वको कभी नहीं भूलना चाहिए। और मेरे हिन्दू भाइयोंको चाहिए कि वे इस समय गोरक्षाका प्रश्न अपने मुसलमान भाइयोंकी भलमनसाहतपर छोड़ दें। मुझे आशा है कि वे इस प्रश्नका सन्तोषजनक निपटारा करेंगे। खासकर ऐसी हालतमें जब गोमांस खाना उनके धर्मके अनुसार आवश्यक नहीं है।

बहनोंको महीन कपड़े पहनना छोड़कर खद्दर आरम्भ करना चाहिए। आप लोगोंको जगज्जननी सीताका अनुकरण करना चाहिए। जिन्होंने रावण द्वारा अपने सन्मुख रखे हुए उत्तमोत्तम पदार्थोंको त्याग कर, फलाहारपर जीवन-निर्वाह करना उचित समझा था।

अस्पृश्यताके विषयमें मुझे यह कहना है कि यह वेद विहित नहीं है और हिन्दू धर्मके सिद्धान्तोंके बाहर है परन्तु इस प्रथाके सुधारका अर्थ आपसमें रोटी-बेटी व्यवहार आरम्भ करना नहीं है।

अन्तमें मुझे यह कहना है कि जूनके अन्तमें मेरा यह घूमकर व्याख्यान देना बन्द हो जायेगा। मैं इसी अवधिमें आवश्यक रकम इकट्ठी कर लेनेकी आशा करता हूँ।[3]

आज, २९-५-१९२१

१. सभा-स्थलपर लोकमान्यकी प्रतिमाकी ओर संकेत करते हुए।

२. आगेका अनुच्छेद **नवजीवन**में प्रकाशित गांधीजीके यात्रा-विवरणसे अनूदित है।

३. भाषण समाप्त होनेपर चन्दा एकत्रित किया गया और लगभग ४ हजार रुपया इकट्ठा हुआ। कुछ स्त्रियोंने अपने आभूषण भी दिये।

५९. भाषण: संगमनेरकी सभामें[1]

२२ मई, १९२१

आज हम सबसे बड़े साम्राज्यसे मुकाबला कर रहे हैं। हमें तीन महान् प्रश्नोंको सुलझाना है। लेकिन हम जो स्वाँग करते हैं, लगता है हमसे उस दिशामें कुछ बननेवाला नहीं है। आजके दृश्यको देखकर मेरे मनमें विचार उठा है कि यदि समस्त हिन्दुस्तानमें इसी तरह काम हो रहा है तो फिर हिन्दुस्तान स्वराज्यके योग्य नहीं है। हिन्दुस्तानमें स्थान-स्थानपर मिलनेवाले प्रेमसागरमें मैं निमज्जित हो रहा हूँ। लेकिन जबतक इस सागरसे अग्नि-जैसी शक्ति प्रगट नहीं होती तबतक यह-सब निरर्थक है। मुझे अपनी पूजा नहीं भाती, मुझे चरण-स्पर्श अच्छा नहीं लगता, मुझे तो वह अत्यन्त अप्रिय है। इसमें हिन्दुस्तानका पतन निहित है। हिन्दुस्तान चरण-स्पर्शसे स्वराज्य प्राप्त करनेवाला नहीं है, हिन्दुस्तानको तो मैं सीधा तनकर खड़ा हुआ देखना चाहता हूँ। मुझे न तो गांधी-राज्य चाहिए और न व्यक्ति-राज्य; मुझे तो सिर्फ स्वराज्य चाहिए। इसलिए मुझे चरण-स्पर्श नहीं चाहिए।

× × ×

यूरोपीय सभ्यताके ऊपरी व्यवहारका अनुकरण करनेमें हमने अति कर दी है। इसकी अपेक्षा यदि हम उनमें निहित सुन्दरताका अनुकरण करते तो अधिक अच्छा होता। इस रिबनका उपयोग तो केवल स्त्रियाँ ही करती हैं। यदि आपको इस बातका खयाल नहीं है कि कहाँ किस वस्तुका उपयोग करना चाहिए तो आप उसका उपयोग करते ही क्यों हैं? आपके यह माननेसे कि पुष्पके साथ रिबनकी शोभा बढ़ती है यह प्रगट होता है कि हिन्दुस्तानमें हमारे आचरणमें वर्णसंकरता आ रही है। कांग्रेस महासमिति इससे बचनेका उपाय बताती है। आप जो-कुछ करते हैं वह न तो विवेकपूर्ण है और न विचारपूर्ण ही। क्या आप तिलक महाराजकी पूजा करते हैं? तिलक महाराजने तो एक ही मन्त्र बताया है। इसी मन्त्रका जाप करते हुए उन्होंने देहत्याग किया। तिलक महाराजकी यह विरासत तो समस्त हिन्दुस्तानके लिए है। लेकिन हिन्दुस्तानके अन्य भागोंकी अपेक्षा आपका कर्त्तव्य अधिक है। १ अगस्तके दिन आप उनकी आत्माको क्या उत्तर देंगे? [यदि आप और कुछ नहीं कर सकते तो] कमसे-कम आप पूर्ण स्वदेशी तो बनें। मन्दिरमें विदेशी चीजोंका उपयोग छोड़ दें। पुजारियोंसे मैं कहता हूँ कि आप मुझे विदेशी कपड़ेसे सज्जित मन्दिरोंमें ले जाते हैं, उससे मुझे दुःख होता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९–६–१९२१

१. गांधीजीकी यात्राके विवरणसे उद्धृत।

६०. पाँच सौवीं मंजिल

मैंने शिमलाका नाम सुना था, उसे देखा न था। देखनेकी इच्छा होती थी लेकिन जाते हुए भय होता था। मुझे ऐसा लगा करता था कि शिमलेमें मैं खो जाऊँगा। शिमलेमें मैं अकेला व्यक्ति ही जंगलीके समान दिखाई दूँगा, मुझे ऐसा भी प्रतीत होता।

अब शिमला देखा। मैं अभी भारतभूषण पण्डित मालवीयजीसे मिलकर आया हूँ; उनकी छत्रछायामें हूँ। मकानका नाम "शान्त कुटी" है और यहाँ आसपास मेरे अपने साथी हैं। जलवायु सुन्दर है। प्रकृतिने अपना सौन्दर्य बिखरा देनेमें कुछ उठा नहीं रखा है। ये पहाड़ हिमाचलके अंग हैं। मुझे बाहरी वातावरणसे तनिक भी शान्ति नहीं मिलती; और अगर मेरी [मानसिक] शान्तिका आधार बाहरके वातावरणपर ही निर्भर करता हो तो मुझे यहाँसे भाग जाना पड़ेगा अथवा मैं पागल हो जाऊँगा।

इस नगरका नाम शिमला माताके नामपर पड़ा है। ठीक उसी तरह जिस तरह बम्बईका मुम्बादेवी और कलकत्ताका कालीके नामपर पड़ा है। या तो ये तीनों देवियाँ पाषाण-हृदया हैं अथवा उनके उपासक उन्हें भूल गये हैं। कालीके मन्दिरका विचार करता हूँ तो भय लगता है। इसे मन्दिर ही कैसे कहा जा सकता है। वहाँ प्रतिदिन अक्षरशः रक्तकी नदी बहती है। वहाँ धर्मके नामपर जिन हजारों बकरोंकी बलि दी जाती है वे ईश्वरके दरबारमें कैसी फरियाद करते होंगे, इसकी किसे खबर है? कालीमातामें कितना धीरज है? क्या वही यह राक्षसी भोग माँगती है? भोग चढ़ानेवाले उसे बदनाम करते हैं।

बम्बईमें भी कम अत्याचार नहीं होते। लेकिन वहाँ धर्मके नामपर ऐसी हत्या नहीं होती। शेयर बाजारमें जानेवाले, घुड़दौड़में पानीकी तरह रुपया बहानेवाले लोग पाखण्डको पाखण्डके नामसे ही पहचानते हैं, अपनी दुर्बलताको स्वीकार करते हैं। बम्बईके कसाईखानोंमें जो कत्ल होता है वह पेटकी खातिर होता है, धर्मके नामपर नहीं। इस जानकारीके कारण बम्बईमें रहना असह्य नहीं जान पड़ता।

लेकिन शिमला? दिल्लीको हिन्दुस्तानकी गुलामीकी निशानी नहीं कहा जा सकता। असली राजधानी दिल्ली नहीं है; शासकोंका असली गढ़ तो शिमला है। शिमलाकी नगरपालिकाने माननीय वाइसराय महोदयको बताया कि अधिकारी-वर्ग शिमला पहाड़की शान्ति और उसकी ठंडकमें प्रतिवर्ष अपनी 'पॉलीसी' राज्यनीति गढ़ता है। यह राज्यनीति कैसी है इसका हमने १९१९ की गर्मियोंमें जी-भरकर अनुभव किया। इस राजनीतिके तापका माप हिन्दुस्तानके गरमसे-गरम भागसे ज्यादा है।

शिमला देख लेनेके बाद भी मेरे इन विचारोंमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। शिमलापर राशि-राशि पैसा खर्च किया जाता है। मेरे-जैसे अभिमानी को भी यहाँ नीचा देखना पड़ा। शिमलामें घोड़े अथवा रिक्शेकी सवारी मिलती है। दक्षिण आफ्रिकामें मैं कभी रिक्शेपर नहीं बैठा लेकिन मेरी कमजोरीने यहाँ मुझे उसपर बैठनेके लिए विवश

कर दिया। छोटे-बड़े, स्त्री-पुरुष, सभी रिक्शेमें बैठते हैं। मोटर चलाना मना है; जो उचित भी है। घोड़ागाड़ीका सिर्फ वाइसराय महोदय और एक-दो अन्य अधिकारी ही इस्तेमाल कर सकते हैं; यह भी ठीक लगता है। यहाँकी सड़कें सँकरी हैं। ऊँचे पहाड़ोंपर बनाई गई सड़कें सँकरी ही होती हैं। इन सड़कोंपर गाड़ियोंका आवागमन बहुत नहीं हो सकता।

लेकिन आश्चर्य तो यह है कि रिक्शा यहाँ इतनी आम सवारी हो गई है मानो गाड़ीमें जुतना हमारा सहज धर्म हो। रिक्शा ले जानेवाले भाइयोंसे मैंने पूछा, "तुम यह धन्धा क्यों करते हो?" जवाब मिला, "पेट तो भरना है न?" यह जवाब अपनेमें पूरा नहीं है सो मैं जानता हूँ। और फिर वे शौककी वजहसे जानवर बनते हैं, ऐसा तो कदापि नहीं कहा जा सकता। मेरी शिकायत तो यह है कि हम खुद ही मनुष्यको जानवर बनाते हैं। फिर अगर हम साम्राज्यके बैल बने हुए हैं तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है?

रिक्शाका उपयोग सिर्फ अंग्रेज ही करते हों सो नहीं बल्कि जितने मुक्त-भावसे वे उसका उपयोग करते हैं उतने ही मुक्त-भावसे हम भी करते हैं। दूसरोंको बैल बनानेमें योग देकर हम स्वयं भी बैल बन गये हैं।

एक रिक्शा पीछे चार व्यक्ति होते हैं। इनमें से तीन को प्रति मास १८ रुपये और चौथेको उनका अगुआ होनेके कारण बीस रुपये मिलते हैं। रास्तेमें इतना उतार-चढ़ाव होता है कि चार व्यक्ति होनेके बावजूद वे हाँफ उठते हैं। यह भी सौभाग्यकी बात है कि रिक्शेकी बनावट कुछ ऐसी होती है कि उसमें एक ही व्यक्ति बैठ सकता है।

शिमला ७,५०० फुटकी ऊँचाईपर स्थित है। यदि लोग इतनी ऊँचाईपर से चलनेवाले राजकाजका अर्थ समझ लें तो यह साम्राज्य क्या है, इसका उन्हें पता चल जाये। बम्बईके सारे व्यापारी अगर सबसे ऊपरी मंजिलपर बैठकर व्यापार करें तो ग्राहकोंका क्या हाल होगा? चौथी मंजिल लगभग ६० फुट ऊँची होगी। हिन्दुस्तानका व्यापार चलानेवाले इस सरकार रूपी व्यापारीके तीस करोड़ ग्राहकोंको साठ फुटके बदले साढ़े सात हजार फुट ऊँचे जाना पड़ता है। बम्बईका व्यापार चौथी मंजिलसे नहीं चल सकता, सो हम जानते हैं। "हिन्दुस्तानका व्यापार पाँच सौवीं मंजिलपर चलता है"। फिर अगर हिन्दुस्तान भूखा मरता है तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है? शिमला नगरकी तलहटीमें तीन करोड़ बच्चे भूखसे बिलबिलाते रहते हैं; हमें इसमें अब कुछ आश्चर्यकी बात नहीं जान पड़नी चाहिए।

"जबतक साम्राज्य और हमारे बीच पाँच सौ मंजिलका अंतर है तबतक उस अन्तरको बनाये रखनेके लिए डायरशाहीको अवश्य चलना चाहिए।"

स्वराज्यका कारोबार भी अगर उसी मंजिलसे चलाया जाये तो वह स्वराज्य नहीं हो सकता।

लेकिन कोई समझदार व्यक्ति कहेगा कि मैंने ठीक-ठीक तुलना नहीं की है। भले ही सेठ ७,५०० फुटकी ऊँचाईपर रहे लेकिन वह अपने गुमाश्तेको, पटवारीको, पटेलको और मामलतदारको तो जमीनपर ही रखता है। यदि सेठ अपने खर्चेसे पाँच

सौवीं मंजिलपर रहता हो तो इस दलीलमें कुछ सचाई हो सकती है लेकिन सेठ तो वहाँ ग्राहकके खर्चपर रहता है। सेठ वहाँ रहनेका खर्च लेता है और अपना लाभ भी लेता है। ऐसे व्यापारीके ग्राहकोंका दिवाला निकल जाये, वे भिखारी बन जायें तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है?

यह तो बहँगीमें गंगाजल ले जानेसे भी ज्यादा महँगा हुआ। गंगाजलकी बहँगी रामेश्वरम्तक जाती थी। एक लुटिया-भर गंगाजलका दाम देनेवाला ही जानता है कि वह गंगाजल महँगा था अथवा सस्ता।

शिमलेमें बहुत ज्यादा आबादी हो गई है। सारे घर भर गये हैं। महँगाई तो होगी ही। पानी भी दो-एक हजार फुट नीचेसे आता है। लोटा-भर पानी इस्तेमाल करते हुए भी शरम आती है। जहाँ हम रहते हैं वहाँ पानी तो मिल जाता है पर हमें दिन भर ही उसकी जरूरत पड़ती है इसलिए पानी भरनेवाले को बहुत श्रम उठाना पड़ता है। शिमलेके आसपास झरने नहीं हैं। स्वराज्य प्राप्त करनेका अर्थ यह हुआ कि सरकारको पाँच सौवीं मंजिलसे नीचे जमीनपर लाना और अपने तथा उसके बीच स्वाभाविकता पैदा करना — फिर भले ही वह ब्रिटिश सरकार हो अथवा देशी। भेद काले-गोरेका नहीं है, भेद ऊँच-नीचका है। ब्राह्मण वह है जो भंगी-की सेवा करे, वह नहीं जो भंगीके कन्धोंपर सवारी करे। जो जनता और अपने बीच पाँच सौ मंजिलोंका अन्तर रखता है वह राजा नहीं है। कर्मोंसे हम सुखी अथवा दुःखी, राजा अथवा रंक होकर जन्म लेते हैं। सुखी पुरुषार्थ करके दुखियोंके दुःखको टालता है, राजा पुरुषार्थ करके रंकको अपने समान बनानेका प्रयत्न करता है अर्थात् स्वयं राजा होते हुए भी जान-बूझकर रंक बनता है। ईश्वर दासानुदास बनकर ऐश्वर्य प्राप्त करता है, पतितको पावन करके स्वयं पूजनीय बनता है। शिमलामें मुझे ठीक इसका उलटा दिखाई दिया और मेरा हृदय रो उठा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२–५–१९२१

६१. टिप्पणियाँ

नये वाइसराय

मैं पण्डितजीके अनुरोधपर शिमला गया। उनकी तबीयत ठीक न होनेकी वजहसे मैं जहाँ हूँ वहाँ आनेकी बजाय उन्होंने मुझे बुलाया। मैं उन्हें अपने पास कैसे आने देता? मैं शिमला गया। वहाँ पंडितजीने मुझे बताया कि वाइसराय महोदय मुझसे मिलना चाहते हैं। मैंने वाइसराय महोदयको लिखा कि यदि उनकी मुझसे मिलनेकी इच्छा है तो उनसे मिलने आने और मुझे जो-कुछ कहना है उसे कह सुनानेमें खुशी होगी। उन्होंने मुझे समय लिख भेजा। हमारी मुलाकात लम्बी चली। वाइसराय महोदयने अत्यन्त धैर्यसे, अत्यन्त विनय और ध्यानसे मेरी पूरी बात सुनी। उन्हें जो कहना था सो मैंने सम्मानपूर्वक सुना। हम दोनों परस्पर एक-दूसरेसे कुछ परिचित हो गये।

इस बातचीतके परिणामको मैं नहीं जानता, और जानता भी हूँ। हमें जो चाहिए वह देना उनके वशकी बात नहीं है। यदि वे अच्छे हों, सच्चे हों और हमारी बातको समझ लें तो वे हमारे एक मददगार मित्र साबित हो सकते हैं। बाकी हमें जो-कुछ लेना है सो तो हमारे ही हाथ में है। हममें प्राप्त करनेकी शक्ति होनी चाहिए। यदि लेनेवाला हो तो देनेवाला मिल ही जाता है। सागरके पास प्याला लेकर जानेवाला अगर घड़ाभर पानी न मिलनेकी शिकायत करे तो उसका क्या अर्थ हो सकता है?

इसलिए स्वराज्य लेनेकी, खिलाफत और पंजाबका न्याय प्राप्त करनेकी शक्ति हममें आनी चाहिए। वह अभी नहीं आई है; हाँ, आती जाती है। हमारे मार्गमें मालेगाँव-जैसे विघ्न पड़े हुए हैं। अपने आलस्यके कारण हम निर्धारित वस्तुको प्राप्त नहीं कर पाते और खीज दूसरोंपर उतारते हैं। सारी खीज अपने ऊपर ही उतारना असहयोगका एक लक्षण है।

साथियोंसे

माननीय वाइसराय महोदयसे मुलाकात करनेके बाद मैं साथियोंसे इतना तो कह सकता हूँ कि उन्हें आलस्य, कोरी बातें, तमाशा और भाषण आदिको छोड़कर अपने-अपने कार्योंमें लग जाना चाहिए।

हमारे सम्मुख पाँच कार्य हैं: (१) अस्पृश्यता-निषेध; (२) मद्य-निषेध; (३) कांग्रेसके सदस्य बनाना; (४) तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा उगाहना; और (५) [घर-घरमें] चरखेका प्रचार करना।

इनमें से एक भी कार्यके लिए भाषणकी जरूरत नहीं है।

अस्पृश्यताको मिटानेके लिए हमें भंगी आदिकी सेवा करनी चाहिए, उनके घर जाना और उनकी स्थितिमें सुधार करना चाहिए।

मद्य-निषेधके लिए शराबकी दुकानोंके आगे खड़े होकर जानेवालों को विनयपूर्वक सावधान करना चाहिए और अगर वे इतने पर भी जाना चाहें तो उन्हें जाने देना चाहिए। हर बिरादरीको मद्यपानके विरुद्ध प्रस्ताव पास करना चाहिए और उसको भंग करनेवाले व्यक्तिका बहिष्कार करना चाहिए।

बहिष्कार अर्थात् धोबी, नाई आदिको बन्द करना नहीं। बहिष्कारका अर्थ तो यह है कि उसके यहाँ पानी न पियें, उससे विवाह-सम्बन्ध न रखें, उसके यहाँ खाने-पीनेका व्यवहार न रखें। बहिष्कार दो तरहका है, एक सभ्य और दूसरा असभ्य। सभ्य बहिष्कारका मूल प्रेम है, असभ्यका मूल तिरस्कार है। शान्तिमय असहयोगमें असभ्य बहिष्कार हराम है, त्याज्य है। सभ्य बहिष्कारमें सेवा स्वीकार न करने, साथ न देनेका भाव है। असभ्य बहिष्कारमें दण्ड देनेका, दुःख देनेका भाव है। शराब पीनेवालेको हमें दण्ड न देकर उसका साथ त्यागकर अपना दुःख प्रदर्शित करना है। साथ त्याग करनेका अर्थ हुआ पानी और रोटी-बेटीका व्यवहार छोड़ना लेकिन किसीकी सेवा बन्द करना निर्दयता है। कुँआ और तालाब सबके लिए हैं। हज्जाम, धोबी और

परिवहन आदि सार्वजनिक सेवाएँ अच्छी-बुरी सबके लिए हैं। हज्जाम, धोबी और भिश्ती घर नहीं पूछते। खूनीको भी पानी पीनेका हक है। इस तरह अच्छे-बुरेमें जब हम विवेक करना सीखेंगे तभी स्वराज्य जल्दी मिलेगा। मद्य-निषेधमें मुझे बहिष्कारका इतना ही उपयोग करनेकी आवश्यकता जान पड़ती है। इसीसे बहिष्कारपर इतना विचार किया। अनेक स्थलोंपर असभ्य बहिष्कारका कड़वा फल मिला है। असभ्यता मात्रका त्याग करनेमें ही हमारा बल निहित है। शराबकी आदतसे व्यक्ति उसका इतना अधिक गुलाम हो जाता है कि वह दयाका पात्र बन जाता है। दयासे ही हम उसे सुधार सकते हैं।

शराबकी दुकानवालोंका भी तिरस्कार न करें। उनके लिए अपने लम्बे समयसे चले आ रहे धन्धेको छोड़ना सहल बात नहीं है। उन्हें उसकी एवजमें दूसरा धन्धा सूझना चाहिए, उसकी जानकारी होनी चाहिए। यदि मैं समझा सकूँ तो सब मद्य-विक्रेताओंको पींजनेवाला, कातनेवाला और बुननेवाला बना दूँ। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि उससे उन्हें पूरी आजीविका मिल जायेगी। शराबकी दुकानोंको चलानेके काममें स्त्रियाँ और बच्चे काम नहीं कर सकते, कातने-बुननेमें सब मदद कर सकते हैं। इसलिए किसीको किसीका पेट भरनेकी जरूरत नहीं रहती। सभी थोड़ा-बहुत अपना-अपना योगदान दे सकते हैं।

कांग्रेसके सदस्य बनाने, तिलक महाराजके स्मरणार्थ पैसा इकट्ठा करने और चरखेका प्रचार करनेके लिए सभाकी जरूरत नहीं है, बल्कि अनेक स्वयंसेवकोंको घर-घर जाना चाहिए। यदि इस तरह काम नहीं होता तो जून मास तककी योजना सफल नहीं होगी।

हमें बातें करनेका भी अवकाश नहीं है। मैं तो अपने ही उदाहरणसे समझता हूँ कि अगर एक भी क्षण बातोंमें, दर्शनमें अथवा आलस्यमें जाता है तो वह बादमें हाथ नहीं आता। हमारे पास अभी न तो हर्ष [प्रकट करने]का समय है और न शोकका ही। जिन्होंने कार्य करनेका रस चखा है उनसे तो मैं अवश्य कहना चाहता हूँ कि उन्हें एक क्षण भी खाली नहीं जाने देना चाहिए। कोई भी क्षण हमारा अपना नहीं है, उसे तो हम देशको अर्पित कर चुके हैं।

चरखेका अर्थ

चरखेके प्रचारका अर्थ यह नहीं है कि समस्त परिवारोंमें चरखेको स्थान दिलानेके बाद हम अपने कर्त्तव्यसे मुक्त हो गये। इसका सच्चा अर्थ तो यह है कि चरखा बराबर चलता रहे और परिवारके लोग खादी पहनने लगें। प्रत्येक चरखा कमसे-कम चार घंटे चलना चाहिए, एक घंटेमें कमसे-कम तीन तोला काता जाना चाहिए। हर गाँवमें इसी प्रमाणमें प्रति चरखेके हिसाबसे सूत कतना चाहिए। तभी सच्चे अर्थोंमें चरखा चलनेकी बात कही जायेगी। यह जनता द्वारा आलस्यको छोड़नेकी, प्रत्येक कार्यकर्त्ता द्वारा इस कार्यमें योगदान देनेकी बात है। यह बात चरखा बना लेनेसे ही पूरी होनेवाली नहीं है।

इस तरह जब नियमपूर्वक काम चलेगा तभी स्वराज्य मिलेगा।

मैं एक मित्रके साथ बातचीत कर रहा था। उन्होंने चरखेको प्रधानपद दिया, मेरे द्वारा इसका कारण पूछनेपर उन्होंने कहा कि चरखा हमें आर्थिक स्वतन्त्रता तो देगा ही, लोगोंको स्वावलम्बी भी बनायेगा लेकिन सबसे अधिक सेवा तो उसकी यह होगी कि इससे स्त्री-पुरुष दोनोंको चैनसे विचार करनेका अवसर मिलेगा और सब शान्त तथा पवित्र होंगे। जो निरन्तर चरखा कातेंगे उनपर उसकी इतनी गहरी छाप पड़ेगी जितनी गहरी छाप किसी और चीजकी नहीं पड़ सकती।

कौन शामिल हो सकते हैं?

एक मित्र पूछते हैं कि क्या कांग्रेसमें सहकारवादी भी सदस्य बन सकते हैं? जो कांग्रेसके संविधानको स्वीकार करते हैं वे सहकारवादी होनेके बावजूद सदस्य बन सकते हैं। तथापि मेरे विचारसे वे प्रतिनिधि नहीं हो सकते।

राष्ट्रीय झंडा

वही मित्र कहते हैं कि चरखेके प्रति सबको श्रद्धा नहीं है, अनेक लोगोंको उसकी शक्तिके सम्बन्धमें शंका है, तो फिर क्या भारतीय झंडेपर कोई दूसरा चिह्न नहीं लगाया जा सकता? उन्होंने ओंकार सुझाया है। हकीकत यह है कि प्रत्येक निशानीका कोई-न-कोई तो अवश्य विरोध करेगा। लेकिन करोड़ों हिन्दू और मुसलमान जिसे स्वीकार करें वैसी शक्ति चरखेमें तो है ही। ओंकारमें भले ही अर्धचन्द्र हो तथापि सब मुसलमान तो उसे स्वीकार नहीं कर सकते। मेरा दृढ़ विश्वास है कि राष्ट्रीय झंडेमें किसी धर्म विशेषका प्रतीक नहीं आना चाहिए।

खिलाफत "नोट"

एक मित्रने मुझे उलाहना दिया है कि खिलाफतकी एक रुपयेकी रसीदका उपयोग नोटके रूपमें किया जाता है और उसके सम्बन्धमें मैंने कुछ भी नहीं लिखा। मुझे पता था कि इस सम्बन्धमें खिलाफत समितिने कड़े कदम उठाये थे; इसीलिए मैंने कुछ भी नहीं लिखा। इस सम्बन्धमें मेरे पास यह पहली ही शिकायत आई है। हजारों रुपयेकी रसीदें बेच डाली गई हैं। लेकिन अब बहुत कम लोग इसका उपयोग नोटके रूपमें कर रहे होंगे। शुरू-शुरूमें ऐसी गलत धारणा जरूर थी। इससे समितिको ही नुकसान होने लगा, फलतः समितिने ही कड़ी कार्रवाई की थी।

रामराज्यका अनर्थ

यही मित्र रामराज्यका अक्षरार्थ करते हुए पूछते हैं कि जबतक राम और दशरथ जन्म नहीं लेते तबतक क्या रामराज्य मिल सकता है? हम तो रामराज्यका अर्थ स्वराज्य, धर्मराज्य, लोकराज्य करते हैं। वैसा राज्य तो तभी सम्भव है जब जनता धर्मनिष्ठ और वीर्यवान् बनेगी। कांग्रेस तथा सभी असहयोगी प्रयत्नशील हैं कि जनता धार्मिक बने। यदि कोई राजा स्वयं प्रजाके बन्धन काट दे तो भी प्रजा उसकी गुलाम बनी रहेगी, भले ही वह सद्गुणी हो। हम तो राज्यतन्त्र, राज्यनीतिको बदलनेके लिए प्रयत्न कर रहे हैं; बादमें हमारे सेवकके रूपमें अंग्रेज रहेंगे अथवा भारतीय

हमें इसकी चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी। हम अंग्रेज-जनताको बदलनेका प्रयास भी नहीं करते। हम तो स्वयं अपने-आपको बदलनेका प्रयास कर रहे हैं।

दक्षिण आफ्रिका

वही भाई दक्षिण आफ्रिकाका उदाहरण देकर लिखते हैं कि जैसी दशा वहाँ हुई क्या वैसी ही यहाँ नहीं हो जायेगी? हम वहाँ लड़े और जीते; तथापि हम आज फिर वहींके-वहीं हैं, जहाँसे हम चले थे। यह गलतफहमी है। जिस कानूनको बदलवानेके लिए हम लड़े थे वह तो बदल ही दिया गया। वहाँकी लड़ाई राज्य-पद्धतिको बदलनेकी नहीं थी, वह तो अमुक कानूनके विरुद्ध थी। रौलट अधिनियम रद हो गया होता और अन्य दुःख जैसेके-तैसे रह जाते तो भी वह सत्याग्रहकी विजय ही होती। रौलट अधिनियमपर अमल किया जाना तो बन्द हो ही गया। रौलट अधिनियमको संविधान पुस्तिकासे नहीं हटाया गया इसलिए और इस बीच अन्य बातोंको लेकर हमें लड़ना पड़ा। यदि हम खिलाफत और पंजाबके सम्बन्धमें न्याय प्राप्त कर लेंगे तथा राज्यनीतिको बदल सकेंगे तो कमसे-कम उतना मिला तो माना ही जायेगा। लेकिन सम्भव है कि उसके बाद अन्य दूसरे तथा नये विघ्न आ जायें, लेकिन उससे क्या? शूरोंके सामने लड़ाई लड़नेके अवसर तो आते ही रहते हैं। जब विघ्न सामने आये तब सत्याग्रह रूपी शस्त्र-भण्डार तो तैयार ही है, उस भण्डारमें से जिस शस्त्रकी जरूरत होगी, वह सत्याग्रहीको मिल जायेगा।

सफेद टोपी

सफेद टोपीको गांधी टोपी कहकर संयुक्त प्रान्तके एक कलक्टरने सरकारी नौकरोंको उसे पहननेसे मना किया है। शिमलामें अनेक सरकारी नौकर मुझसे मिलने आये, उनसे मैंने कहा, "आप नौकरीमें रहते हुए भी तिलक स्वराज्य-कोषमें अवश्य चन्दा दे सकते हैं और खादीकी पोशाक पहन सकते हैं। आप विदेशी टोपियोंके बदले खादीकी टोपियाँ पहन सकते हैं।" उन्होंने कहा: "यदि हम खादीकी टोपी और कपड़े पहनेंगे तो हमें नौकरीसे निकाल दिया जायेगा।" इन दुर्बल वचनोंको सुनकर मुझे दुःख हुआ। यदि खादीकी टोपी पहनना अपराध माना जाता है तो वह अपराध करके नौकरी से मुक्त होना ही सर्वथा उचित माना जायेगा। और फिर यदि ज्यादा लोग खादीकी टोपी पहनें तो कोई उन्हें नौकरीसे निकाल भी नहीं सकता और अगर निकाल भी दे तो उन्हें निश्चिन्त रहना चाहिए। क्या प्रजामें इतना भी बल नहीं आया कि वह अपनी इच्छानुसार कपड़े पहननेकी स्वतन्त्रताका परिचय दे सके? मुझे तो यह उम्मीद है कि जनता, सरकारी वर्ग और अन्य वर्गके लोग खादीकी टोपी आदिको सुसंस्कृत पहरावा मानकर अवश्य ही उसका उपयोग करेंगे।

स्थायी अंग

असहयोगका एक अंग अस्थायी है और दूसरा स्थायी। स्थायी अंग तो सभीपर लागू होता है। वह यह कि हम स्वराज्य मिलनेके बाद खादीका त्याग करके विदेशी वस्त्र न पहनें, फिरसे शराब न पीने लगें और स्वराज्य मिलनेके बाद शिक्षा-पद्धतिमें

हम जो फेरफार कर रहे हैं उसे बन्द न करें। स्वराज्य मिलनेपर सरकारी अदालतों और स्कूलोंमें जाना अधर्म न समझें, सरकारकी ओरसे मान प्राप्त करनेमें अपमान न मानें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-५-१९२१

६२. पत्र : न० चि० केलकरको

येवला
२३ मई, १९२१

प्रिय मित्र,[१]

बेजवाड़ाका कार्यक्रम पूरा करनेके लिए मैं अत्यधिक व्यग्र होता जा रहा हूँ। क्या आप कृपया तार या पत्र द्वारा यह सूचित करेंगे कि पत्र या तार भेजनेके दिन तक आपके प्रान्तने तिलक स्मारक [कोष] के लिए कितना धन जमा किया है और ३० जूनसे पहले आप निश्चित रूपसे कितना धन एकत्र होनेकी आशा रखते हैं? इन दोनोंके आँकड़ोंकी सूचना मुझे लैबर्नम रोडके पतेपर रविवार २९ तारीख तक मिल जानी चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि आपने अपना निर्धारित अंश अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको भेज दिया होगा।

मैं २९ को बम्बई पहुँच रहा हूँ, ३०की शामको वहाँसे भड़ौंचके लिए प्रस्थान करूँगा। चार दिन वहाँ रहूँगा, चार दिन अहमदाबादमें या उसीके आसपास बिताऊँगा और फिर बाकी जून बम्बईमें बिताऊँगा, ताकि अधिकसे-अधिक जितना चंदा मैं एकत्र कर सकता हूँ, करूँ। यदि मेरे कार्यक्रमके विषयमें आपको कोई सुझाव देना हो तो कृपया उसके बारेमें भी तार दें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ३११३) की फोटो-नकलसे।

१. नरसिंह चिन्तामण केलकर (१८७२-१९४७); राजनीतिज्ञ और साहित्यिक; तिलकके सहयोगी; भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके मन्त्री रहे; १९२० में कांग्रेस संविधानके संशोधनमें गांधीजीकी सहायता की। स्वराज्यवादी दलके नेता।

६३. भाषण : बरसीमें[1]

२४ मई, १९२१

हमारे भाईने बड़े उल्लासपूर्वक कहा कि बरसी जिला[2] खुशीसे अपने हिस्सेका काम पूरा कर लेगा। मैं भाई सुलाखेको उनके हिसाब लगानेके ढंगपर बधाई नहीं दे सकता। यदि हिन्दुस्तानके प्रत्येक जिले, ताल्लुके और फिरकेके लोग ऐसा उलटा हिसाब करने लगें तब तो हिन्दुस्तानका हर व्यक्ति दो पैसे देकर अपनी जिम्मेदारीसे मुक्त हो जायेगा। लेकिन इन तीस करोड़में से तीन करोड़ तो ऐसे हैं कि जिन्हें एक दिनका पूरा खाना भी नहीं मिलता। ऐसे तीन करोड़ लोगोंसे कौन दो-दो पैसे लेगा? हिन्दुस्तानके अपाहिजोंसे कौन पैसे उगाहेगा? बम्बईवाले कहते हैं कि हमारा हिस्सा पूरा हो गया ऐसा कहकर यदि वे चुपचाप बैठ जायें तो हम कभी अपना काम नहीं कर सकेंगे। ऐसे हिसाब-किताबको छोड़नेपर ही काम चल सकता है। प्रत्येक स्त्री-पुरुषको विचार करना, समझना चाहिए कि हिन्दुस्तानमें एक करोड़ रुपया इकट्ठा करनेके लिए एक व्यक्तिको कितना देना उचित होगा? मैं तो पूछता हूँ कि आपके जिलेके लोगोंकी कितनी शक्ति है? हम तिलक महाराजकी पूजा करते हैं, हमें उनके जीवनसे कुछ-न-कुछ सबक सीखना चाहिए। क्या उन्होंने कभी ऐसा विचार किया था कि जितना प्रत्येक भारतीय देता है मैं भी देशको उतना ही देकर चुपचाप बैठ जाऊँ? उन्होंने तो अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया। मैं आपसे पूछता हूँ कि इस तरह सर्वस्व समर्पित कर देनेवाले कितने लोग हैं? सर्वस्व देनेकी बात तो छोड़ दें, आप जितना दे सकते हैं क्या आप सचमुच उतना दे चुके? परमेश्वर किसीसे शक्तिके बाहर कुछ नहीं माँगता। यदि कोई अपनी सामर्थ्य-भर नहीं देता तो वह देशद्रोही है, अपने गाँवका द्रोही है। आप अपने द्रोही न बनें। मैं यह चाहता हूँ कि आप अपने-आपको धोखा न दें। हमें एक बहुत बड़े साम्राज्यके विरुद्ध लड़ना है। इस साम्राज्यने हमें धोखा दिया है, दगा दिया है और पेटके बल चलाया है। इसे हम दगाबाजीसे अथवा शैतानियतसे नहीं मिटा सकते। दगाबाजीका उपाय कुलीनता है और शैतानियतका सामना ईश-भक्तिसे होगा। आप अपने-आपको धोखा न दें। आप तिलक महाराजकी स्मृतिको कायम रखना चाहते हैं तो मैंने आज आपको जो शस्त्र बताया है उस शस्त्रके द्वारा आप तिलक महाराजकी संवत्सरी आनेसे पहले उस चीजको प्राप्त करें जो आपका जन्मसिद्ध अधिकार है।

जब आपने मुझे यह बताया कि २५ चरखे हैं और उनसे तैयार की गई खादी बम्बई और पूना जाती है तो मेरा हृदय रोने लगा। यहाँसे खादी बाहर जाये इसका अर्थ तो यह है कि आपको महीन कपड़ा चाहिए इसलिए आप यहाँ खादीका उपयोग

१. गांधीजीके यात्रा-विवरणसे उद्धृत ।

२. वस्तुतः महाराष्ट्रके शोलापुर जिलेका एक ताल्लुका ।

नहीं कर सकते और बाहर भेजते हैं। आपका स्वदेशीपन तो यह है कि आप अपनी आवश्यकताओंपर दृष्टिपात करें और बम्बईका विचारतक न करें। मेरा स्वदेशाभिमान कहता है कि मुझे पहले अपने घरको, फिर शहरको और फिर प्रान्तको स्वतन्त्र बनाना चाहिए। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि २५ चरखोंसे आप एक बड़े साम्राज्यका मुकाबला नहीं कर सकेंगे। हम यदि कांग्रेसको मानते हों तो हमें स्वदेशी-तत्त्वको अच्छी तरहसे समझ लेना चाहिए। वकीलोंने वकालत नहीं छोड़ी इसका मुझे दुःख है, लेकिन केवल वकीलोंके धार्मिक अथवा निर्भय बननेसे कोई सारा देश निर्भय अथवा धार्मिक नहीं बन जायेगा। और फिर अच्छे-अच्छे वकीलोंने तो आत्मबलिदान किया है और अपनी कुलीनताका परिचय दिया है। अन्य वकील भी, जो इस समय अश्रद्धासे भरे हुए हैं, जिन्हें कुटुम्बके भरण-पोषणका भय सताता है वे भी भविष्यमें हमारे इस कार्यमें शामिल हो जायेंगे। लेकिन स्वदेशी कपड़ेके लिए तो केवल यही बात है कि जबतक देश उसे ग्रहण नहीं करता तबतक विदेशी कपड़ेका आयात बन्द नहीं होगा। मैं अपने मनको भुलावा नहीं दे सकता। अन्य किसी भी व्यक्तिकी अपेक्षा मैं अधिक भारतीयोंसे मिलता हूँ। लेकिन ३० करोड़ व्यक्तियोंके पास अभीतक मेरी आवाज नहीं पहुँची है। मिलका कपड़ा तो गरीबोंके लिए है जिनतक मेरी आवाज नहीं पहुँच सकती। यदि मिलका कपड़ा केवल गरीबोंके लिए रहे तभी मिल-मालिक कुलीन बनेंगे। जिनतक मेरी आवाज पहुँचती है, उनके लिए सिवाय इसके और कोई उपाय नहीं है कि वे यहीं कपड़ा तैयार करें और उसका उपयोग करें। इसमें द्रव्य-यज्ञ अथवा होशियारीकी जरूरत नहीं है, इसके लिए हृदयगत भावनाओंकी आवश्यकता है।

मौलाना मुहम्मद अलीने कहा है कि चरखा बेचकर हमने गुलामीकी नींव रखी है। यदि गुलामीसे मुक्त होना चाहते हैं तो आप चरखा खरीदें। चरखेके बिना हिन्दुस्तानमें होनेवाले अत्याचार और दरिद्रताको मिटाना असम्भव है। इसीसे मैं कहता हूँ कि आप यह मिथ्याभिमान न करें कि २५ चरखोंसे हमारे अच्छे दिन आ गये हैं। मैं तो यहाँ किसीको भी खादी पहने हुए नहीं देखता। सिर्फ खादीकी टोपी पहनकर ही हम ५० करोड़के व्यापारको बन्द नहीं कर सकते। आपको खादीका भार वहन करना ही होगा।

आपको अगर महीन कपड़ेकी जरूरत हो तो आप अपनी स्त्रीको तथा लड़कीको महीन कातना सिखायें। ३० वर्ष पहले तो हमारे बुजुर्ग लोग महीन कपड़ा पहनते हुए शरमाते थे। मुझे अभीतक अपनी माताकी पवित्र स्मृति है। वे अपनी बहूके लिए महीन लहँगा बनवा देती थीं; किन्तु स्वयं पहनते हुए शरमाती थीं। आप अगर हिन्दकी प्राचीन सादगीको ग्रहण नहीं करते तो आप हिन्दुस्तानकी बारीक मलमलका उद्धार नहीं कर सकते। आप यदि ४,२०० सदस्य बनाकर सन्तोष मान लेंगे तो बिहारके भूखोंको कौन सदस्य बनायेगा? जब आप १,२०,०००की बस्तीमें से ५० हजार सदस्य भरती कर लेंगे तब कुछ काम होनेकी आशा बँधेगी। आप उलटा हिसाब छोड़कर सीधा हिसाब करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९–६–१९२१

६४. टिप्पणियाँ

मौलाना मुहम्मद अली

'इंडियन सोशल रिफॉर्मर'ने मुझे इसलिए आड़े हाथों लिया है कि मैंने मौलाना मुहम्मद अलीके मद्रासवाले भाषणके बारेमें कुछ नहीं कहा और न लाला लाजपतरायके बम्बईवाले भाषणकी आलोचना की। सम्बन्धित अनुच्छेदमें जिन युक्तियों और वक्रोक्तियोंकी भरमार है, उनके बारेमें मैं कुछ नहीं कहूँगा। आलोचक यह नहीं जानते कि किन-किन कठिनाइयोंमें मैं 'यंग इंडिया'का सम्पादन करता हूँ। अखबार तो मैं बहुत ही कम पढ़ पाता हूँ। लगातार यात्रामें रहनेके कारण अखबार मुझे मिल तक नहीं पाते। फिर भी यह आलोचना पढ़नेके बाद मैंने शिमलामें खास तौरपर वह अखबार मँगवाया जिसमें मौलानाका भाषण छपा था। मैंने उसे अभी-अभी पढ़ा है। भाषणके जिस अंशकी आलोचना की गई है, उसे मैंने दो बार पढ़ा और मैं इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि उसमें ऐसा कुछ भी नहीं है जिसे आपत्तिजनक कहा जा सके। इलाहाबादमें पत्रकारोंके साथ अपनी मुलाकातके अवसरपर उन्होंने जो कहा था उससे यह भाषण बेमेल भी नहीं है। मद्रासवाले भाषणमें उन्होंने सिर्फ मुसलमानोंका दृष्टिकोण पेश किया है। मुसलमानोंके आदर्श आचरणके बारेमें मेरे बताये हुए विधि-निषेधोंको उन्होंने अपनी इलाहाबादवाली मुलाकातमें मान लिया था। इसमें तो कोई शक ही नहीं कि अगर मुसलमानोंको हथियार उठाने पड़ें तो वे ऐसा इस्लामकी रक्षाके लिए ही करेंगे। कब्जा करनेका इरादा किये बगैर अफगान महज अंग्रेजोंको हरानेकी गरजसे भारतपर हमला नहीं कर सकते; हमारे ऐसा मान लेनेके कारण ही मुश्किल पेश आती है। अगर बात ऐसी ही है और अगर मुसलमान भारतके प्रति सच्चे हैं तब तो मुमकिन होते हुए भी वे अफगानोंसे हाथ नहीं मिलायेंगे। मुसलमानोंको अपना सच्चा दृष्टिकोण पेश करनेका धार्मिक और सैद्धान्तिक अधिकार है, इससे तो हम इनकार नहीं करेंगे। उलटे इसके लिए हमें उनकी इज्जत करनी चाहिए। अली भाइयोंका सबसे बड़ा गुण है उनकी दिलेरी और ईमानदारी। और मद्रासके भाषणमें इन दो गुणोंके अलावा मुझे और कोई बात ढूँढ़े नहीं मिलती।

लाला लाजपतराय

सबसे पहले तो 'इंडियन सोशल रिफॉर्मर'को यह बता देना उचित होगा कि काम करनेका मेरा तरीका क्या है। लालाजीके भाषणकी कटु आलोचनाका जिक्र करते हुए मेरे सहयोगीने पूछा कि क्या मैं उसके बारेमें कुछ कहना चाहूँगा। मेरे पास न तो उनका भाषण था और न उसकी कोई आलोचना ही मुझे देखनेको मिली थी। तब मैंने जानकारीके लिए लालाजीको लिखा और साथ ही यह सुझाव दिया कि अगर जल्दबाजीमें वे कोई ऐसी-वैसी बात कह गये हों तो उन्हें फौरन माफी माँग लेनी चाहिए। मेरा उनका सम्बन्ध निकटका है, और इसीलिए मुझे यह सौभाग्य प्राप्त है कि मेरे साथ

वे उदारता, क्षमाशीलता और स्पष्टवादिता बरतते हैं। जवाबमें उन्होंने लिखा कि बम्बईवाला भाषण तो खास तौरपर बहुत सोच-विचारकर दिया गया था और उसमें किसी व्यक्तिपर कोई आक्षेप नहीं किया गया था। नरम दलवालोंके बारेमें अपनी राय उन्होंने किसी व्यक्ति विशेषको लक्ष्य करके नहीं बल्कि दलके बारेमें ही प्रकट की थी। मेरी राय जाननेके लिए उन्होंने अपने भाषणकी कतरन भी साथ भेज दी। यह उस समयकी बात है जब मैं सिन्धके दौरेपर था। उस भाषणको पढ़नेका वक्त मुझे नहीं मिला और मैं उसे भूल ही गया था; लेकिन 'रिफॉर्मर' की झिड़कीने सारी बात याद दिला दी। अब जब मैंने लालाजीके भाषणको पढ़ा तो मुझे उसमें कुछ भी आक्षेपपूर्ण या अविनयपूर्ण नहीं लगा। बेशक भाषण लालाजीकी लड़ाकू शैलीमें है; और फिर वह सार्वजनिक नहीं, दल विशेषके सामने दिया हुआ भाषण है। वर्षों विदेशमें रहनेके कारण उन्होंने आलोचनाकी पाश्चात्य शैलीको अपना लिया है। उनका वह भाषण पाश्चात्य शैलीका बढ़िया नमूना है। उसमें अशिष्टता तो कहीं भी नहीं है। उन्होंने जो आरोप लगाये हैं वे नरमदलीय मन्त्रियोंके आचरणको देखते हुए अनुचित नहीं हैं। उनका खास आरोप यह है कि वे नौकरशाहीके साथ घुल-मिल गये हैं। बड़ा संगीन आरोप उन्होंने लगाया, लेकिन साथ ही मिसालें देकर उसे साबित भी कर दिया है। नरम दलवाले चाहें तो जवाबमें कह सकते हैं कि बाहरी आदमी मन्त्रियोंकी मुश्किलोंका अन्दाज नहीं लगा सकता। लेकिन यह बात तो उलटे सरकारसे दोस्ती करनेवाले बड़े नेताओंकी गलतीको ही साबित करती है। ऐसी ही गति होगी, यह बात उन्हें पहले ही मालूम हो जानी चाहिए थी; या अब उन्हें अनुभवसे सीख लेना चाहिए कि सरकारी नीतिपर कारगर नियन्त्रण हुए बिना, खाली मन्त्री बन जानेसे कोई फायदा नहीं। आज भी वैसा ही घोर दमन हो रहा है जैसा पहले होता था। मुकदमोंका नाटक करनेसे उसमें कोई फर्क नहीं पड़ता। दण्ड संहिताकी राजनीतिसे सम्बन्धित धाराएँ ही कुछ इस तरहकी हैं कि असहयोग-विषयक हर भाषणको गुनाह करार दिया जा सकता है। अगर मुझपर ही राजद्रोहका आरोप लगाया जाये तो क्या मैं इनकार कर सकूँगा, कदापि नहीं। मुझे वह मानना ही होगा। वर्तमान सरकारके प्रति अश्रद्धाकी शिक्षा देना तो असहयोगीका कर्त्तव्य है। असहयोगी तो केवल जनताके रोष और उसकी अश्रद्धाको संयत ढंगसे प्रकट करनेका ही काम कर रहे हैं। लालाजीने जो कड़े आरोप लगाये हैं अगर कोई उनका सुविचारित उत्तर दे तो मुझे खुशी होगी। बाकी मेरी विनम्र रायमें लाला लाजपतरायने नाराजी या गुस्सा कहीं जाहिर नहीं किया है, बौखलाहट उसमें कहीं नहीं है। अपने भाषणके अन्तमें देशके नौजवानोंको उन्होंने जो सलाह दी है, उनका पूरा भाषण उससे मेल ही खाता है।

ईश्वरका सन्देश-वाहक

मुझे एक कतरन मिली है जिसमें कहा गया है कि मैं ईश्वरका सन्देश-वाहक हूँ, और साथ ही यह भी पूछा गया है कि क्या मुझे कोई खास इलहाम हुआ है — क्या ईश्वरने मुझे अपना कोई दिव्य सन्देश दिया है। अपनेसे सम्बन्धित चमत्कारोंके बारेमें मैं पहले भी लिख चुका हूँ। अब ईश्वरके दिव्य सन्देशकी जो बात मेरे बारेमें कही

गई है उससे भी मुझे इनकार करना पड़ेगा। मैं हर भले हिन्दूकी तरह प्रार्थना करता हूँ। अगर हम आदमीसे डरना छोड़ दें और ईश्वरीय सत्यकी खोज करें तो मेरा विश्वास है कि हम सभी ईश्वरके सन्देश-वाहक बन सकते हैं। अपने बारेमें मेरा ऐसा विश्वास है कि मैं ईश्वरीय सत्यकी खोजमें लगा हुआ हूँ और आदमीका डर मेरे मनसे पूरी तरह निकल चुका है। इसीलिए मैं अनुभव करता हूँ कि ईश्वर असहयोग आन्दोलनके साथ है। ईश्वरकी इच्छाका मुझे कोई खास इलहाम होता हो, सो बात नहीं है। मेरा ऐसा पक्का विश्वास है कि उसका इलहाम तो हर आदमीको रोज ही होता है, पर हम लोग स्वयं ही अन्दरकी उस 'आवाज' की ओरसे अपने कान बन्द कर लेते हैं। हम अपने सामनेके ज्योति-पुंजकी ओरसे अपनी आँखें मूँद लेते हैं। मुझे तो वह सभीमें समाया हुआ — सर्वव्यापक — दिखाई देता है। और चाहे तो लेखक भी उसे देख सकता है।

एक सिन्धी आलोचक

सिन्धवालोंकी ओरसे की गई आलोचनासे मुझे हमेशा खुशी होती है। उनकी आलोचना हमेशा ही सूक्ष्म और शिष्ट होती है। सिन्ध पाश्चात्य शिक्षाके अतिरेकसे पीड़ित है, इसलिए सिन्धी युवकोंसे मुझे सहज सहानुभूति है। वे पाश्चात्य शिक्षाके तर्कजालमें उलझकर रह गये, इसलिए मैं श्री जेठमलके खुले पत्रका बहुत ही धीरजसे जवाब दूँगा, खास तौरपर इसलिए भी कि वे सत्याग्रहके मेरे शुरूके साथियोंमें रहे हैं और मैं उन्हें एक ऐसे नेताके रूपमें भी जानता हूँ जो उपेक्षित प्रश्नोंको सामने रख देते हैं। मैं आत्मनिर्णयमें विश्वास रखता हूँ। श्री जेठमलको यह नहीं मालूम कि मुसलमान फिलिस्तीनपर तुर्कोंका ऐसा कब्जा नहीं चाहते जिसमें अरबोंको कोई स्थान न हो। वे तो यही चाहते हैं कि जजीरत-उल-अरबपर मुसलमानोंका कब्जा हो। फिलिस्तीन इस द्वीप समूहका सिर्फ एक हिस्सा है। अगर बिना किसी बाहरी हस्तक्षेपके उसे अरबोंके हवाले कर दिया जाये तो उन्हें कोई एतराज न होगा। श्री जेठमलको यह बात मालूम होनी चाहिए कि इस समय फिलिस्तीनमें बहुत बड़ी आबादी मुसलमानोंकी ही है। उन्हें यह बात भी मालूम होनी चाहिए कि अरबोंके कड़े विरोधके बावजूद आज फिलिस्तीन और मेसोपोटामियापर ब्रिटिश संरक्षण थोपा जा रहा है।

श्री जेठमलका तो नहीं मगर मेरा विभिन्न धर्म-ग्रन्थोंकी, उनकी अपनी-अपनी विशिष्टताओंपर पूरा विश्वास है। जिन बातोंमें तर्क-संगति और न्याय-भावनाकी दृष्टिसे परस्पर कोई विरोध न हो, मैं उन बातोंमें मुसलमानोंकी धर्म-ग्रन्थ सम्बन्धी आस्थाके साथ व्यर्थकी खींचतान करनेके पक्षमें नहीं हूँ।

लेकिन दीनकी दुहाई देनेवाले कट्टर मौलवियों और काम बनानेकी गरजसे दिये जानेवाले उनके मौकापरस्त फतवोंका डर श्री जेठमलकी तरह मुझे भी है। मगर मुसलमानोंका दावा फतवोंपर आधारित न होकर कुरानकी हिदायतोंपर अवलम्बित है, जिसे एक बच्चा भी समझ सकता है। और अगर कुरानकी हिदायतोंको छोड़ भी दें तो भी मुसलमानोंका दावा न्यायपर आधारित है। लड़ाईसे पहले जजीरत-उल-अरब मुसलमानोंके अधिकारमें था। आम तौरपर दुनियाके और खास तौरपर हिन्दके मुसल-

मानोंके खिलाफ ईसाइयों और यहूदियोंको उसपर कब्जा करनेका कोई अधिकार नहीं है। ब्रिटिश संरक्षण भारतीय मुसलमानोंके साथ दगा और दुनियाके मुसलमानोंके साथ लुटेरापन है।

हिंसाके मामलेमें श्रीकृष्णके विचारोंसे मतभेदके साहसका जो श्रेय श्री जेठमलने मुझे दे दिया है उसे मैं स्वीकार नहीं कर सकता। मैं तो सिर्फ यही कहनेका साहस करता हूँ कि भगवान् कृष्णने 'गीता' में हिंसाका उपदेश कहीं नहीं दिया। गीताकी मेरी व्याख्या यही है कि उसमें एक ऐतिहासिक प्रसंगको आधार बनाकर धर्मका उपदेश किया गया है; और महाभारतके जिस युद्धका उसमें उल्लेख है वह सांसारिक युद्ध न होकर मनुष्यके कुरुक्षेत्ररूपी मनमें निरन्तर चल रहा आध्यात्मिक संघर्ष है। निर्द्वन्द्वताके उपदेशको मैं और किसी रूपमें समझ ही नहीं सकता। जो व्यक्ति द्वन्द्वातीत हो जाता है वह 'बाइबिल' के पूर्ण पुरुषकी नाईं पृथ्वीके किसी भी प्राणीको हानि नहीं पहुँचा सकता। वह अपने अहम्को इतनी पूर्णताके साथ निःशेष कर देता है कि फिर उसका पुनर्जन्म नहीं होता।

लेकिन किसी असहयोगीके लिए यह जरूरी नहीं कि वह मेरे इस निजी विश्वास-को भी माने। उसे तो भारतके त्रिविध तापको ठीक करनेवाली सच्ची नीतिके रूपमें अहिंसापर विश्वास करना जरूरी है।

अहिंसा यानी अनघतामें सम्पूर्ण आस्था होते हुए भी मैंने खेड़ा जिलेमें फौजी भरतीका काम[1] किया था। मेरी अहिंसा तो मुझे यही सिखाती है कि हथियारोंके जोरसे दुनियाको अपने साथ नहीं ले जाया जा सकता। इस डरसे कि कहीं वे दूसरों-को चोट न पहुँचाएँ, मैं अपने बच्चोंके हाथ तो नहीं काट डालूँगा। सचमुच पाप-रहित वही है जो किसीको हानि पहुँचा सकता हो किन्तु फिर भी वैसा न करे। जबतक उनका हिंसामें विश्वास है भारतीय सैनिकोंको हथियारकी जरूरत भी है। जिनका हिंसामें विश्वास था, मैंने सिर्फ उन्हींसे फौजमें भरती होनेके लिए कहा था। मैंने उनसे कहा कि तुम्हें सरकारसे गिला है, और मैं जानता था कि उन्हें है, तो लड़ाईमें भरती हो जाओ, इससे अलग मत रहो। मैं सरकारसे सौदा करनेके खिलाफ था, क्योंकि सौदेबाजीके मैं हमेशा ही खिलाफ रहा हूँ।[2]

मैं ऐसा तो कभी नहीं सोचता कि भारत या दुनियामें कभी ऐसा भी समय आयेगा जब सभी अहिंसाके अनुयायी हो जायेंगे। पुलिस तो सतयुगमें भी रहेगी। लेकिन भारतमें ऐसे समयकी कल्पना तो मैं करता ही हूँ जब हम निरे शारीरिक बलपर कमसे-कम और आत्मिक बलपर ज्यादासे-ज्यादा निर्भर करने लगेंगे; जब हर वर्णके व्यक्तिके भीतर ब्राह्मणत्व सर्वोपरि होगा।

इतनी व्याख्याके बाद श्री जेठमलकी समझमें यह बात आ जायेगी कि अली बन्धुओंसे मेरी दोस्ती क्यों है। मैं यकीनन जानता हूँ कि वे अपनी बातके पक्के हैं

१. गांधीजीने २९ अप्रैल, १९१८ के युद्ध-सम्मेलनमें दिये गये अपने आश्वासनके अनुसार गुजरातके खेड़ा जिलेका दौरा किया था और प्रथम महायुद्धमें अंग्रेजोंकी सहायताके लिए लोगोंको फौजमें भरती कराया था; देखिए खण्ड १४।

२. देखिए खण्ड १४, पृष्ठ ३५९।

और उनके-जैसे बातके धनी मैंने बहुत थोड़े लोग देखे हैं। मुझे तो सिर्फ यही देखना है कि जबतक वे असहयोग आन्दोलनमें रहें, अहिंसाके प्रणका पालन करते रहें। श्री जेठमल अंग्रेजोंके बदले अफगानोंकी हुकूमत पसन्द नहीं करेंगे, ठीक यही बात अली बन्धुओंके साथ भी है; वे भी अफगानोंकी हुकूमतको कभी बरदाश्त नहीं करेंगे। मेरा विश्वास है कि समय पाकर वे यह समझ जायेंगे कि भारत हिंसासे कमसे-कम एक पीढ़ीमें तो किसी भी तरह मुक्त नहीं हो सकता। लेकिन इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं कि जिस मामूलीसे कार्यक्रमके बारेमें इन पृष्ठोंमें समय-समयपर लिखा जाता रहा है अगर देश उसपर अमल करे तो खिलाफत और भारतकी आजादी दोनों इसी एक बरसमें मिल सकते हैं।

संन्यास

एक वकील साहब, जिन्होंने वकालत छोड़ दी है, पूछते हैं कि क्या हर असहयोगीको संसार त्याग करके संन्यासी बन जाना चाहिए? लोगोंका खयाल है कि मैं संन्यासीकी तरह रहता हूँ। यह सवाल भी शायद इसीलिए पूछा गया है। बोअर-युद्धमें हजारों स्त्री-बच्चोंको और पिछले महायुद्ध [१९१४-१८] में हजारों अंग्रेज, फ्रांसीसी और जर्मन लोगोंको जितना त्याग करना पड़ा, असहयोगका कार्यक्रम तो उसकी तुलनामें बहुत ही कम त्याग चाहता है। इतने थोड़ेसे त्यागके बलपर हमारी ऐसी महान् सफलता केवल इसीलिए सम्भव है कि हमारा कार्यक्रम अहिंसात्मक है, हमारा पक्ष न्यायपूर्ण है और हम संख्यामें इतने अधिक हैं।

प्रतिवादीकी दुर्गति

उन्होंने आगे पूछा है कि अगर किसीपर झूठा मुकदमा दायर किया जाये तो वह क्या करे। करना क्या है, सरकारने झूठे मुकदमे चलाये और कई लोग जेल चले गये। यदि किसीपर झूठा मुकदमा दायर किया जाये, और अगर वादी पंच-फैसलेके लिए राजी न हो तो वकील किये बिना ही अदालतमें बयान दिया जा सकता है और गवाह पेश करके उनसे जिरह भी की जा सकती है। और फैसला भी उसके हकमें हो सकता है। ज्यादासे-ज्यादा यही होगा कि वह हार जाये और दुष्टोंके हाथों तकलीफ भोगनी पड़े। लेकिन काबिलसे-काबिल वकीलों द्वारा मुकदमे लड़े जानेके बावजूद क्या गलत फैसले पहले भी नहीं होते रहे हैं?

देशकी सामर्थ्यपर सन्देह

तीसरा सवाल है: "क्या आप ऐसा मानते हैं कि असहयोग कार्यक्रमका रचनात्मक अंश राष्ट्रीय सरकार बने बिना पूरा हो सकता है?" यह सवाल बेबसीका सूचक है। अपने ध्येयतक पहुँचनेमें हमें जो देर हो रही है उसका एकमात्र कारण बेबसीकी हमारी यह भावना ही है। स्वराज्य तभी तो कायम होगा जब हमें अपने-आपपर भरोसा होगा। राष्ट्रीय सरकारको राष्ट्र ही तो बनाता है, न कि राष्ट्रको सरकार। सरकारकी मददके बिना हम शराब पीना क्यों नहीं छोड़ सकते? सरकारकी मददके बिना हम विदेशी कपड़ेका बहिष्कार क्यों नहीं कर सकते? असहयोग हमें

सिखाता है कि किसी भी महत्त्वपूर्ण बातको हम सरकारपर निर्भर रहे बिना कर सकते हैं। सरकार जनता द्वारा बनाया हुआ एक साधन है। अगर साधन अविश्वसनीय हो जाये तो बनानेवाले को उससे काम न लेनेका पूरा अधिकार है। लेकिन अगर बनानेवाला ही असहाय हो गया तो साधन उसका मालिक बन बैठेगा और वह साधनका गुलाम हो जायेगा। आज हमारी यही हालत है और जैसे भी हो हमें इस हालतसे उबरना ही होगा।

स्थगनका इरादा

उनका आखिरी सवाल है: "अगर देशकी ओरसे कांग्रेसकी पुकारको जैसा चाहिए वैसा जवाब नहीं मिला तो क्या तबतक के लिए स्वराज्यकी लड़ाई मुल्तवी कर दी जायेगी?" मुझे तो इस विचारसे ही डर लगता है। स्वराज्यके आन्दोलनको रोकनेका मतलब है देश और जनतामें अविश्वास। मुझे तो यही लगता है कि समय आनेपर देश आगे आयेगा, जरूर आगे आयेगा। लेकिन यह ऊपरके सवालका सही जवाब नहीं हुआ। सही जवाब तो बेशक यही होगा कि अगर देशने असहयोग कार्यक्रमको ठीकसे नहीं अपनाया तो स्वराज्य हासिल करनेमें उस हदतक देर हो जायेगी।

जुएका अभिशाप

काशी विद्यापीठके कुलपति बाबू भगवानदासजीने[1] जुएकी निन्दामें 'मनुस्मृति'से जो उद्धरण भेजे हैं उन्हें मैं यहाँ दे रहा हूँ:

राजाको अपने राज्यसे द्यूत (जुआ) और समाह्वय (बाजी लगाने) को प्रयत्नपूर्वक दूर रखना चाहिए क्योंकि ये व्यसन राज्य और राजा दोनोंको नष्ट कर डालते हैं। (२२१)

जुआ खेलना और बाजी लगाना निस्सन्देह दिन-दहाड़े डाका डालना है; इन्हें निर्मूल करनेके लिए राजाको सतत प्रयत्नशील रहना चाहिए। (२२२)

द्यूत निर्जीव वस्तुओंसे खेला जाता है और समाह्वयमें प्राणियोंपर बाजी लगाई जाती है। (२२३)

जो इन्हें प्रकट या गुप्त रूपसे स्वयं खेले अथवा दूसरोंको प्रेरित किंवा प्रवृत्त करे उसे राजा अपने विवेकके अनुसार अपने निर्धारित व्यवसायके बदले दूसरोंको छलनेके लिए, छल-व्यवसाय अपनानेवाले धूर्तों और प्रवंचकोंके समान प्राण-दण्डतक दे सकता है; अथवा द्यूतकारों एवं कितवों (बाजी लगानेवालों) को देशसे वैसे ही निष्कासित कर दे जिस प्रकार, संगीत, (नृत्य, गान एवं अभिनय) की ओटमें व्यभिचार (वेश्यावृत्ति) करनेवालों को; अथवा नशीले मद्य बनाने और बेचनेवालों को; निर्दय ठगोंको और दुराचरण फैलानेवालों और पापकर्म करनेवालों को। (२२४–२८)

१. (१८६९–१९५८); सुप्रसिद्ध दार्शनिक और लेखक; उत्तरप्रदेश कांग्रेसके एक प्रमुख नेता; सन् १९५५ में 'भारतरत्न'की उपाधिसे सम्मानित।

सिन्धके चन्देका सही ब्यौरा

मैंने सिन्धके असहयोगके सम्बन्धमें जो टिप्पणी लिखी थी उसमें, वहाँ मेरे दौरेके समय जितना चन्दा जमा किया गया उसकी अनुमित राशि भी दे दी गई थी। अब श्री जयरामदासने[1] ब्यौरेवार हिसाब भेजा है, जो इस तरह है:

	रुपये
कराची (लगभग)	३०,०००
लरकाना	१,३८७
शिकारपुर	१७,२४५
जैकोबाबाद	१,००१
सक्खर	३,६००
रोहड़ी	१,००२
हैदराबाद	७,४३३
मीरपुर खास	४५२
तत्ता	५००
दादू	५००
टांडो अल्लाब्यार	६१५
शहदादपुर	७५
फुटकर	४६५
	६४,२७५

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५–५–१९२१

६५. बाजी लगानेकी लत

आशा है कि एक महिलाकी यह भविष्यवाणी सच निकलेगी और जो लोग भी भारतकी अच्छाई और अपने घरोंकी पवित्रताको महत्त्व देते हैं वे सब घुड़दौड़में बाजी लगाना छोड़ देंगे।[2]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५–५–१९२१

१. जयरामदास दौलतराम।

२. यह "एक महिला" के नामसे लिखे गये निम्नलिखित पत्रके उत्तरमें था:

डेक्कन हेराल्ड अखबारमें यह खबर छपी है कि अब बहिष्कार-आन्दोलनके तहत आगामी घुड़दौड़ोंका भी बहिष्कार किया जानेवाला है और रेसके दिनोंमें हिन्दुस्तानियोंको घुड़दौड़के मैदानमें नहीं जाने दिया जायेगा। अगर सचमुच आपका यही मंशा हो तो भगवान् आपका भला करे।

मेरे पति एक आदर्श पति थे। लेकिन एक बार उनके साहब उनको आग्रहपूर्वक रेसमें ले गये और किस्मत फूटनी थी कि वे चले भी गये। उस दिन दस रुपये लेकर गये और बाजी लगाई तो किस्मतसे

६६. शिमला-यात्रा[1]

बहुतसे लोग पूछ रहे हैं कि मैं महामहिम वाइसरायसे क्यों मिला। कुछ पूछते हैं कि असहयोगके सूत्रधारको वाइसरायसे क्यों मिलना चाहिए और यह तो सभी जानना चाहते हैं कि मुलाकातका नतीजा क्या रहा। असहयोगियोंके बारेमें यह कड़ी छानबीन मुझे पसन्द आई; दूसरोंका हो या न हो पर असहयोगियोंका चरित्र तो निःसन्देह सती सावित्रीकी तरह निष्कलंक होना चाहिए। असहयोगका मतलब है आत्मनिर्भरता — अपने-आपपर भरोसा। हम स्वयं स्वराज्य स्थापित करना चाहते हैं; दूसरोंसे माँगकर नहीं लेना चाहते। फिर किसी भी वाइसरायके पास जानेकी क्या जरूरत है? यह बात अपने-आपमें बहुत अच्छी है। अगर मैं किसीसे स्वराज्य माँगने जाऊँ तो बेशक अपने पक्षका अच्छा नुमाइन्दा नहीं माना जाऊँगा। फिर मैंने तो यहाँतक कहनेका दुःसाहस किया है कि भगवान् भी हमें स्वराज्य नहीं दे सकता। उसे तो हमें खुद ही हासिल करना होगा। स्वराज्य तो चीज ही ऐसी है जिसे कोई दे नहीं सकता।

लेकिन अपनी आजादीकी लड़ाईमें हमें तो सारी दुनियाको साथ रखना है, हम तो सभीकी सद्भावनाएँ चाहते हैं। हम दावा करते हैं कि हमारा पक्ष सोलहों आने न्यायपर आधारित है। कुछ चीजें हैं जिन्हें हम चाहते हैं कि अंग्रेज हमारे सुपुर्द कर दें। इसके लिए आपसमें चर्चा करने और एक-दूसरेको समझनेकी जरूरत है। दुनिया-वालोंकी रायको अपने पक्षमें करनेके लिए असहयोग ही सबसे कारगर तरीका है। जबतक हम विरोध और सहयोग करते रहे तबतक दुनियाकी समझमें नहीं आया कि हम क्या हैं और क्या चाहते हैं। किसी समय बंगाल-केसरीके नामसे प्रसिद्ध सुरेन्द्रनाथ बनर्जी शुरूके दिनोंमें उन अंग्रेजोंकी बात सुनाया करते थे, जो अकसर पूछा करते थे कि अगर हालत वाकई उतनी ही खराब है जितनी आप बताते हैं तो भारतमें कितनोंके सिर फूटे हैं। पक्के अंग्रेजके सोचने-समझनेका बस यही तरीका होता था। और अंग्रेज ही क्यों दुनिया भी तो निःसंदेह यही पूछ रही है कि अगर हालत वाकई इतनी खराब है तो तुम इस बुरी तरह अपना शोषण और अपमान करनेवाली सरकारसे सहयोग क्यों करते हो? हम भले ही पूरी ताकतसे अमल न कर पाये हों लेकिन अब दुनिया हमारी बात समझने लगी है। अब दुनिया जानना चाहती

दाँव सीधा पड़ा और तीन सौ रुपये लेकर घर लौटे। बस, उसके बाद दो बारको छोड़कर फिर कभी नहीं जीते। और अकसर नशेमें धुत घर लौटते हैं।

भगवान् करे आपको अपने प्रयत्नोंमें सफलता मिले।

मेरा विश्वास है कि अपनी बात कहनेका साहस रखनेवाली दूसरी बहुत-सी बहनें इस बातका समर्थन करेंगी।

१. गांधीजीने शिमलामें वाइसरायसे मुलाकात की थी; देखिए "भाषण: शिमलाकी सार्वजनिक सभामें", १५-५-१९२१।

है कि हमारी तकलीफ क्या है। वाइसराय महोदय एक बड़ी ताकतके नुमाइन्दे हैं। वे यह जानना चाहते थे कि मैं, जो सहयोगको अपना परम धर्म समझता था, असहयोगी क्यों हो गया हूँ। या तो सरकारकी समझमें कहीं कोई गलती होनी चाहिए या फिर मैंने ही कोई गलती की होगी।

इसलिए वाइसराय महोदयने मालवीयजी महाराजसे और एन्ड्रयूज साहबसे भी यह ख्वाहिश जाहिर की कि वे मुझसे मिलना और मेरे विचारोंको समझना चाहते हैं। मैं मालवीयजीसे मिलने गया, क्योंकि वे मुझसे मिलना चाहते थे। मैं उनकी इतनी इज्जत करता हूँ और कभी यह गवारा नहीं करूँगा कि वे खुद चलकर मुझसे मिलनेके लिए आयें, चाहे वे स्वस्थ ही हों। फिर इस बार तो वे इतने कमजोर थे कि यात्रा कर ही नहीं सकते थे। इसलिए उनसे मिलने जाना मैंने अपना कर्त्तव्य समझा। वाइसरायसे उनकी जो बात हुई उसका सार जाननेके बाद मैं तुरन्त मुलाकातके लिए राजी हो गया। अगर वाइसराय मेरे विचारोंको जानना चाहते हैं तो उनसे मुलाकातका समय माँगनेके लिए उनकी ओरसे पहल किये जानेकी मैंने कोई जरूरत नहीं समझी। वाइसरायसे मुलाकातका समय माँगनेके बारेमें इतने विस्तारसे लिखनेका उद्देश्य केवल इतना ही है कि असहयोगके अर्थ और उसकी मर्यादाओंका मैं खुलासा कर देना चाहता हूँ।

असहयोग आदमियोंके नहीं बल्कि तरीकोंके खिलाफ है। वह गवर्नरोंके नहीं बल्कि जिस तरीकेसे वे हुकूमत करते हैं उसके खिलाफ है। असहयोगकी नींव घृणापर नहीं रखी गई है; वह अगर प्रेमपर नहीं किन्तु न्यायपर तो आधारित है ही। ग्लैडस्टन[1] बुरे कामों और बुरे आदमियोंके बीच बड़ा फर्क करते थे। एक बार उन्होंने अपने विरोधियोंके तरीकोंके बारेमें काफी कड़े शब्दोंका इस्तेमाल किया तो उनपर अविनयका आरोप लगाया गया। तब अपनी सफाईमें उन्होंने कहा था कि जैसे उनके कारनामे हैं उनको अगर मैं वैसा ही न बताता तो अपने कर्त्तव्यसे च्युत हो जाता, मगर इसका यह मतलब नहीं कि जो कुछ मैंने उनके कारनामोंके बारेमें कहा है वह उनपर व्यक्तिगत रूपसे भी लागू होता है। तरुणाईमें जब मैंने उनकी यह दलील सुनी तो वह मेरी समझमें नहीं आई थी। अब इतने बरसोंके तजुर्बेके बाद और उसपर अमल करके मैंने जाना कि उन्होंने कितना सच कहा था। मैं जानता हूँ कि मेरे कुछ बहुत ही सच्चे दोस्तोंने ऐसे काम भी किये हैं जिनका बिलकुल समर्थन नहीं किया जा सकता। श्री वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रियर-जैसे सच्चे आदमी बहुत ही थोड़े होंगे, मगर उनके काम मुझे हैरानीमें डालनेवाले होते हैं। उनका ऐसा विश्वास हो गया है कि मैं हिन्दुस्तानको रसातलकी ओर लिये जा रहा हूँ, लेकिन इससे मुझपर उनका स्नेह कम हो गया हो, ऐसा मैं नहीं मानता।

और मैं समझता हूँ कि असहयोगके इस महान् आन्दोलनने मेरी ही तरह हजारों लोगोंको यह बात समझा दी है कि हम, लोगोंके कामों और व्यवस्थाओंपर आक्षेप करते हैं न कि व्यक्तियोंपर। वैसा तो हमें कदापि नहीं करना चाहिए। हम खुद अपूर्ण

१. (१८०९-९८); इंग्लैंडके उदारदलीय प्रधान-मन्त्री १८६८-७४, १८८०-८५, १८८६ और १८९२-९४।

हैं, हममें खामियाँ हैं इसलिए दूसरोंके साथ हमें नरमीसे पेश आना चाहिए और किसीके इरादोंपर शुबहा करनेकी जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए।

इसलिए वाइसराय महोदयसे मुलाकातका मौका आते ही मैं तुरन्त उनसे मिलने चला गया और उन्हें बताया कि हमारा आन्दोलन धर्मपरक है जिसका उद्देश्य भारतीय राजनीतिमें व्याप्त भ्रष्टाचार, धोखाधड़ी, आतंकवाद और गोरी जातिकी प्रभुताको मिटाना है।

पाठकोंके लिए व्यर्थका कुतूहल अच्छा नहीं। अखबारोंके तथाकथित समाचारों-पर उन्हें विश्वास नहीं करना चाहिए। वाइसराय महोदय और मेरे बीच जो बातें हुईं उनके ब्यौरेमें जानेकी जरूरत नहीं। अच्छा हो कि उसपर पर्दा पड़ा रहने दिया जाये। लेकिन मैं पाठकोंको इतना विश्वास जरूर दिलाता हूँ कि मैंने अपनी सामर्थ्य-भर वाइसराय महोदयको हमारे तीनों दावों — खिलाफत, पंजाब और स्वराज्यकी बात समझाई और उन्हें असहयोगका मूल कारण भी बताया। उन्होंने मेरी बातको धैर्य, विनम्रता और ध्यानसे सुना। मैंने उन्हें जो उचित है वह करनेके लिए उत्सुक पाया। हमने आजकी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समस्याओंके बारेमें दिल खोलकर चर्चा की। हमने अहिंसाके बारेमें भी चर्चा की और यह हम दोनोंकी समान रुचि और आस्थाका विषय निकला। इसके बारेमें मैं फिर कभी विस्तारसे लिखूँगा।

हम दोनोंने एक-दूसरेको समझा, इससे अधिक भी मुलाकातमें कुछ था, यह मैं नहीं कह सकता। मगर एक-दूसरेको समझ लेना भी अपने-आपमें काफी बड़ा लाभ है; ऐसा मैं मानता हूँ और कुछ लोग इसमें मुझसे जरूर सहमत होंगे। और अगर इस तरह देखा जाये तो यह मुलाकात बहुत कामयाब रही।

लेकिन इतने लम्बे बहस-मुबाहसेके बाद इस बातमें मेरा विश्वास पहलेसे ज्यादा दृढ़ हुआ है कि हमारी मुक्ति खुद अपने ही प्रयत्नोंपर निर्भर करती है। वाइसराय महोदय हमारी मदद कर सकते हैं और बाधा भी पहुँचा सकते हैं। यों मैं उनसे मदद की ही उम्मीद करता हूँ।

मतलब यह कि हमें दूने जोशके साथ अपना कार्यक्रम पूरा करनेमें जुट जाना चाहिए। कार्यक्रम स्पष्ट ही यह है: (१) अस्पृश्यताका निवारण, (२) शराबखोरी-के अभिशापको मिटाना, (३) चरखेका अनवरत प्रचार और विदेशी कपड़ेके सम्पूर्ण बहिष्कारकी सीमातक खादीका निरन्तर उत्पादन, (४) कांग्रेसमें सदस्योंकी भरती और (५) तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा करना।

हिन्दू-मुस्लिम एकताको मजबूत करने तथा अहिंसाका और अधिक वातावरण तैयार करनेके लिए अब उतने जोरदार प्रचारकी आवश्यकता नहीं रही।

अस्पृश्यता-निवारणको मैंने सबसे ऊपर रखा है, क्योंकि इस मामलेमें मुझे कुछ ढिलाई दिखाई देती है। हिन्दू असहयोगियोंको इस ओरसे उदासीन नहीं रहना चाहिए। खिलाफतके मामलेमें जो अन्याय हुआ है उसे हम मिटा सकते हैं, लेकिन राष्ट्र रूपी शरीरके हिन्दू अवयवोंमें भिदे हुए अस्पृश्यताके जहरके रहते हम स्वराज्यकी अपनी मंजिलतक कभी भी नहीं पहुँच सकते। अगर हम भारतकी आबादीके पाँचवें हिस्सेको निरन्तर दबाये रहें और राष्ट्रीय संस्कृतिके अमृत-फलसे उन्हें वंचित किये रहें तो

स्वराज्यका कोई मतलब नहीं रह जाता। शुद्धीकरणके इस महान् आन्दोलनमें हम भगवान्का सहारा खोजते हैं, उसकी सहायताकी याचना करते हैं लेकिन उसीके जिन जनोंको, मानवी अधिकारोंकी सबसे अधिक जरूरत है, उन्हें उक्त अधिकार देनेसे इनकार करते हैं। स्वयं क्रूर बने रहकर दूसरोंकी क्रूरतासे अपने त्राणकी दुहाई हम प्रभुके आगे दे ही कैसे सकते हैं?

शराब-बन्दीको मैंने दूसरे नम्बरपर रखा है, और मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि भगवान्ने बिन माँगे ही हमारे लिए यह आन्दोलन तैयार कर दिया है। इसको लेकर काफी हंगामा मच गया है और इस आन्दोलनके हिंसक रूप धारण कर लेनेका अन्देशा भी कम नहीं है। लेकिन जबतक यह सरकार शराबकी दुकानोंको खुला रखने-पर आमादा है तबतक हमें रात-दिन एक करके गलत रास्तेपर चलनेवाले अपने भाइयोंको समझाना होगा कि वे शराबसे अपना मुँह गन्दा न करें।

चरखेको तीसरे नम्बरपर रखा गया है, हालाँकि मेरे तईं तो वह अस्पृश्यता-निवारण और शराब-बन्दी जितना ही महत्त्वपूर्ण है। अगर हम इस वर्ष विदेशी कपड़ेका कारगर ढंगसे बहिष्कार कर सकें तो उसका मतलब यह होगा कि स्वराज्यकी स्थापना-के लिए आवश्यक लगन, अध्यवसाय, एकाग्रता, तत्परता और राष्ट्रीयताकी भावना हममें प्रचुर मात्रामें मौजूद है।

कांग्रेसके सदस्य बनाना, देशमें घर-घर चरखेके प्रचार और खादीके उत्पादन एवं वितरणके लिए अपेक्षित विशाल संगठनके लिए ही जरूरी नहीं, लोगोंके मनमें पैठे हुए इस भयको निर्मूल करनेके लिए भी जरूरी है कि कांग्रेसका सदस्य बनना सरकार-की निगाहमें गुनाह है।

पाँचवीं चीज है तिलक स्वराज्य-कोष। इसके द्वारा हम स्वराज्यकी आत्मा तिलक महाराजकी स्मृतिको चिरस्थायी बनाते हैं और स्वतन्त्रताकी अपनी लड़ाईके लिए धन प्राप्त करते हैं।

३० जूनतक एक करोड़ रुपया इकट्ठा करने, कांग्रेसके एक करोड़ सदस्य बनाने और बीस लाख घरोंमें चरखा पहुँचानेकी हमने प्रतिज्ञा की है। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी विशाल सभामें पूरी तरहसे बहस-मुबाहसे और सोच-विचारके बाद जो कार्यक्रम निर्धारित किया गया है अगर उसे समयके अन्दर पूरा न कर सके तो हम स्वराज्यके अपने ध्येयतक कदापि न पहुँच सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५–५–१९२१

६७. सीमा-प्रान्तके साथी

सीमा-प्रान्तमें[1] रहनेवाले पंजाबी भाई सारे भारतकी सहानुभूतिके अधिकारी हैं। आसपासके कबाइली उनपर हमले करते हैं। वे अरक्षित हैं और जो समाचार मुझे मिले हैं उनसे पता चलता है कि सरकार उनकी हिफाजतका कोई इन्तजाम नहीं करती। और इधर तो अफसरोंका यह कायदा ही बन गया है कि अगर कोई उनसे शिकायत करता है तो वे शिकायत करनेवाले को सीधा मेरे या अली बन्धुओंके पास भेज देते हैं। अगर सीमा-प्रान्तका इन्तजाम हमारे हाथमें दे दिया जाये तो हम वहाँके लिए बहुत-कुछ कर सकते हैं। उन जिलोंके निहत्थे निवासियोंकी रक्षाके प्रयत्नमें हम मर मिटेंगे। जरूरत हुई तो आत्म-रक्षाके लिए वहाँकी आबादीको हम हथियार भी देंगे। लेकिन जो सबसे बड़ा काम हम करेंगे वह होगा उन कबाइलियोंके मनको जीतना, जिससे लूट-मार करनेवाले गिरोहोंसे बदलकर वे भरोसे लायक पड़ोसी बन जायें। लेकिन आज तो वहाँकी जैसी हालत है उसीको ध्यानमें रखकर हमें विचार करना होगा। मेरा खयाल है कि उस इलाकेके हिन्दू और मुसलमान आपसमें एक-दूसरेके दोस्त हैं और कोई भी मुसलमान अपने हिन्दू भाईके खिलाफ कबाइलियोंकी मदद करनेकी दुष्टता नहीं करता। सीमाके इस ओर बसी हुई मुस्लिम आबादी चाहे तो उनकी बहुत अच्छी तरह मदद कर सकती है।

कबाइलियोंकी ओरसे निराश होना भी जरूरी नहीं। हम उन्हें अक्सर बुरा ही समझते रहे हैं। मगर मेरे खयालमें वे उतने बुरे नहीं हैं। समझानेका उनपर असर हो सकता है। वे खुदासे खौफ खानेवाले लोग हैं। वे सिर्फ मजेकी खातिर लूट-मार नहीं करते। मेरे खयालमें आत्म-शुद्धिके आन्दोलनका असर उनपर भी खुद-ब-खुद होता जा रहा है।

मैं जानता हूँ कि कबाइलियोंको सुधारनेका काम बहुत मुश्किल और समय साध्य है। जिनका माल-मत्ता लूटा जा रहा है, या जिन्हें अपने प्रियजनोंसे बिछुड़ना पड़ रहा है, उन्हें इससे कोई सान्त्वना नहीं मिलती।

इस परेशानीका भी वही कारण है — हमारा डर; हम अंग्रेजोंसे डरते हैं और इस तरह उनके गुलाम हो गये हैं। हम कबाइलियोंसे डरते हैं और अपनी गुलामीमें सन्तुष्ट हैं। हम यही सोचकर खुश हैं कि अंग्रेज हमें कबाइलियोंसे बचाये हुए हैं। जिसमें जरा भी आत्म-सम्मान है उसका अपनी या अपने परिवारकी सुरक्षाके लिए उसपर निर्भर करना जिसे वह अपनेपर अत्याचार करनेवाला समझता हो, इतने बड़े अपमानकी बात है जिससे बड़े अपमानकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकता। अपनी मर्दानगी खोकर सुरक्षा पानेके बजाय मैं अपने सर्वस्व सहित तबाह हो जाना बेहतर समझूँगा। हमारे अन्दर बेबसीकी इस भावनाके पैदा होनेका असली कारण यह है कि

१. पश्चिमोत्तर सीमान्त।

अपनी रोजमर्राकी जिन्दगीमें हमने जान-बूझकर भगवान्‌पर भरोसा करना छोड़ दिया है। हम अपने व्यवहारमें पूरे नास्तिक हो गये हैं। अपनी सुरक्षाके लिए शारीरिक बलपर निर्भर करनेका विश्वास हममें उत्तरोत्तर दृढ़ होता जा रहा है। लेकिन प्राणोंका भय सामने आते ही हम सारा ज्ञान भूल जाते हैं और हमारी सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती है। हमारा दैनिक जीवन ईश्वरसे पराङ्‌मुख हो गया है। अगर भगवान्‌में, यानी कि अपने-आपमें, हमारा जरा-सा भी विश्वास होता तो कबाइलियोंके मामलेमें हमें कोई भी परेशानी न होती। हमला होनेपर हमें अपना माल-मत्ता उन्हें सौंपनेको तैयार रहना होगा और बाज मौकोंपर तो अपनी इज्जतका सौदा करनेके बदले जान देनेपर ही उतारू हो जाना पड़ेगा। हमें इस बातपर विश्वास करनेसे कतई इन्कार कर देना चाहिए कि हमारे ये पड़ोसी इन्सानियतसे शून्य, निरे जंगली हैं।

हमारे आत्म-सम्मानका तकाजा तो यही है कि हम दोमें से कोई एक मार्ग अपनायें, कमजोर होते हुए भी लूट-पाटसे अपनी रक्षा आप करनेके लिए तैयार हो जायें, या अपने पड़ोसियोंकी इन्सानियतमें विश्वास करके उन्हें सुधारनेकी कोशिश करें। मेरा तो खयाल है कि दोनों ही काम हमें एक साथ करने होंगे। तीसरे मार्ग, यानी कि अपनी रक्षाके लिए अंग्रेजोंके गोला-बारूदपर भरोसा करनेके मार्गके बारेमें तो हमें कभी सोचना भी नहीं चाहिए। यह तो खुद अपने हाथों अपने देशका और अपनी जातिका गला घोटना होगा।

अगर कबाइलियोंतक मेरे लेख पहुँच सकें तो मैं उनसे अनुरोध करूँगा कि वे लुटेरेपनकी आदत छोड़ दें। जब भी वे किसी मर्द या औरतको लूटते हैं तो जिस पैगम्बरपर उन्हें इतना नाज़ है और जिसे वे रहमोकरम और इन्साफोअमनके वली अल्लाहतालाका दूत मानते हैं, उसीकी हिदायतोंकी खिलाफवर्जी करते हैं। ऐसे हर मुसलमान और उलेमाका, जिसका थोड़ा-बहुत भी असर इन भोले-भाले लोगोंपर है, उन्हें यह समझाना फर्ज हो जाता है कि जो खतरा सिरपर मँडरा रहा है, उससे इस्लामकी हिफाजत करनेमें अगर वे अपनी ओरसे हाथ बँटाना चाहते हैं, तो इन्हें सबसे पहले अपने पड़ोसियोंको सताना बन्द कर देना चाहिए, क्योंकि उनके पड़ोसी, चाहे हिन्दू हों या मुसलमान, न सिर्फ यह कि उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुँचाते बल्कि इस्लामकी सम्मान-रक्षाके लिए भरपूर कोशिश भी कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५–५–१९२१

६८. मध्य-प्रान्तमें दमन

हर एक सूबेमें दमन अलग-अलग शक्लें अख्तियार करता जा रहा है। संयुक्त-प्रान्त-में[1] आमतौरसे नेताओंको गिरफ्तार नहीं किया जा रहा है। किसानोंके नाम परिपत्रके लेखक पं० मोतीलाल नेहरू तो गिरफ्तार नहीं किये गये, मगर उस पर्चेको बाँटनेवाले नौजवानोंको पकड़कर जेल भेज दिया गया है। उधर मध्य-प्रान्तमें जाने-माने नेता पकड़े जा रहे हैं और सरकारकी मर्जीका खयाल करके चलनेवाले मजिस्ट्रेट उन्हें धड़ाधड़ सजाएँ दे रहे हैं। ताजा उदाहरण श्री सुन्दरलालकी गिरफ्तारी और सजा है। मध्य-प्रान्तके[2] छात्रोंपर जैसा असर उनका है वैसा शायद ही किसी औरका होगा। वहाँ हिंसाको रोके रखनेमें उनका बड़ा हाथ रहा है। लेकिन साथ ही वे बड़े दिलेर हैं और उनके बोलनेका लोगोंपर असर पड़ता है। इसलिए मध्य-प्रान्तकी सरकारने इस दृष्टिसे कि वे कोई नुकसान न पहुँचा पायें, उन्हें अपने रास्तेसे हटा देना ही ठीक समझा। श्री सुन्दरलालपर जो आरोप लगाये गये वे इस प्रकार हैं:

> **१९२१ के मार्च महीनेकी दूसरी तारीखको या उसके आसपास खरगौनमें आपने जो भाषण (लगभग ५,००० लोगोंके सामने) दिया उसका सार यह था कि भारतका शोषण करके उसे पूरी तरह गरीब और लाचार कर देनेकी गरज-से ही यहाँ ब्रिटिश सरकार बेईमानीके साथ चलाई जा रही है; मुल्कको बाकायदा तबाहीकी ओर ले जानेवाली बीमारियों, अकाल, उद्योग-धन्धोंकी बरबादी और दूसरी सारी बुराइयोंके लिए अंग्रेज सरकार ही जिम्मेदार है; इस सरकारने मुसलमानोंसे किये वादोंको तोड़ा और पंजाबमें हद दर्जेका अत्याचार और दमन किया है, इससे लोगोंका इस सरकारपर से बिलकुल विश्वास उठ गया है। इन सारी बुराइयोंको मिटानेका एकमात्र उपाय है अहिंसात्मक असहयोगके हथियारसे भारतमें ब्रिटिश शासनको पूरी तरह खत्म कर देना। ऐसे भाषणसे आपने ब्रिटिश भारतमें कानूनन स्थापित सरकारके प्रति अश्रद्धा पैदा की या करनेकी कोशिश की या राजनैतिक असन्तोष भड़काया या भड़कानेकी कोशिश की और इस तरह भारतीय दण्ड संहिताकी धारा १२४–ए के मातहत दण्डनीय अपराध किया, जो मेरे न्यायाधिकारमें है।**

आरोप बिलकुल साफ है। आरोप यह नहीं है कि हिंसा की या हिंसा करनेका इरादा किया, आरोप सिर्फ अश्रद्धा फैलानेका है। इस आरोपमें ऐसा कुछ भी नहीं है जो पिछले बारह महीनोंमें हजारों सभाओंमें बार-बार न कहा गया हो। वास्तवमें असह-योगीका तो यह धर्म ही है कि वह सरकारके प्रति जनताकी अश्रद्धाको व्यक्त करे,

१. अब उत्तर प्रदेश।
२. अब मध्य प्रदेश।

उसे फैलाये और बढ़ावा दे। अश्रद्धा तो असहयोगका मूल तत्त्व है। हर असहयोगीका विश्वास है कि सरकार यानी शासन-प्रणाली बुरी है, वह भारतके साधन-स्रोतोंका शोषण करती है, और उसने भारतको इतना कंगाल बना दिया है कि अकाल और बीमारियाँ देशपर हावी हो गई हैं। भारतकी असहायावस्थाके लिए यह शासन-प्रणाली ही जिम्मेदार है। ब्रिटिश मन्त्रियोंने मुसलमानोंसे किये हुए वादोंको तोड़ा है, इसमें कोई शक नहीं। प्रत्येक असहयोगी इन और ऐसी दूसरी बहुत-सी बातोंमें विश्वास करता है और इसलिए असहयोग द्वारा इस बुराईको मिटाना चाहता है। मैं श्री सुन्दरलालको उनकी गिरफ्तारीपर बधाई देता हूँ। सच पूछा जाये तो मुझे उनसे ईर्ष्या होती है। मध्य-प्रदेश सरकार चाहे तो दूसरे सभी नेताओंको जेलमें बन्द कर दे, लेकिन इस तरहके पागलपन और अविचारपूर्ण दमनसे जिस अश्रद्धाको वह कुचलना चाहती है वह और भी गहरी और व्यापक ही होगी। जनताका कर्त्तव्य स्पष्ट है। वह अपने रचनात्मक कार्यक्रममें लगी रहे और इस तरह अन्तिम विजयकी तैयारियाँ करती रहे। हमें सरकारकी बौखलाहटके बावजूद अपना आपा नहीं खोना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-५-१९२१

६९. करांचीसे प्रतिवाद

सम्पादक,

'यंग इंडिया'

महोदय,

चार तारीखके[1] 'यंग इंडिया'में आपकी करांचीकी आलोचना पढ़कर कई करांचीवालोंको बड़ा दुःख हुआ। महोदय, हम समझते हैं कि आपने अनजाने ही हमारे शहरके साथ अन्याय किया है। आपने एक राष्ट्रीय स्कूलके हिसाब-किताबके बारेमें स्थानीय तौरपर उठ खड़ी हुई एक बहसके बारेमें टीका की थी। (वह एक ही राष्ट्रीय स्कूलके बारेमें है, कई राष्ट्रीय स्कूलोंके बारेमें नहीं जैसा कि आपने लिखा है)। वह बहस इसलिए उठी थी कि कुछ ईमानदार कार्यकर्त्ताओंको कुछ दूसरे उतने ही ईमानदार, हालाँकि कुछ ज्यादा अनुदार, देश-सेवकोंके बारेमें एक बिलकुल ही बेबुनियाद किस्मकी गलतफहमी हो गई थी; आपकी टिप्पणी पढ़कर बड़ी पीड़ा पहुँची। उसमें कुछ ऐसे खरे और त्यागी व्यक्तियोंकी ईमानदारीपर शक जाहिर किया गया है जिन्होंने मातृभूमिकी बलिवेदीपर अपना सर्वस्व चढ़ा दिया है और जो किसी भी तरहके संदेहसे उतने ही

१. देखिए "टिप्पणियाँ", ४-५-१९२१।

परे हैं जितने कि अली भाइयों-जैसे हमारे बड़े-बड़े नेतागण, जिनके बारेमें कुछ लोगोंने अभी कुछ ही दिन पहले दुर्भावनापूर्ण प्रचार किया था। इस मामलेमें बदनामीके शिकार बननेवाले सज्जनोंने दो बड़ी-बड़ी सार्वजनिक सभाओंमें हिसाब-किताब पेश किया था और कहा था कि जो भी चाहे वह उनके दफ्तरमें आकर हिसाब-किताब देखकर अपनी पूरी तसल्ली कर सकता है। इस मामलेको तभी बिलकुल खत्म हुआ मान लिया गया था। लेकिन आपके पत्रमें उसका हवाला देखकर वह बहस फिर शुरू हो गई है। मुझे भय है कि इससे हमारे विरोधियोंको हमारे आन्दोलनपर पहलेसे कहीं ज्यादा जमकर कीचड़ उछालनेका मौका मिल जायेगा। महोदय, आपको ठीक-ठीक पता नहीं है कि हमारे विरोधीगण आपकी उक्तियों और लेखोंको (और आपके द्वारा अपने अनुयायियोंको दी गई चेतावनियों और झिड़कियोंको) किस तरह तोड़-मरोड़कर एक दूसरी ही शक्लमें पेश करते हैं, और कैसे वे उनमें से कुछ असम्बद्ध, अलग-थलग वाक्य इत्यादि निकालकर असहयोगियोंका मजाक बनाया करते हैं —— ये काम सरकार या एंग्लो-पार्टी नहीं हमारे अपने ही भाई नरम दलके लोग करते हैं; ये लोग इस समय क्रूरताकी सीमाका अतिक्रमण करनेपर तुले हुए हैं। हमारे विरोधी लोग 'हिन्द स्वराज्य' के कुछ वाक्यों, वासनाके सम्बन्धमें आत्म-संयम विषयक आपके लेख, को लेकर, या खालसाजीके नाम आपके या जनता द्वारा हिंसाको अपनानेपर आपकी हिमालय-वासकी धमकीकी बातको लेकर अक्सर आन्दोलन और उसके अनुयायियोंका मजाक उड़ाया ही करते हैं और कराचीके सम्बन्धमें आपकी टीकाने उनके लिए और भी मसाला जुटा दिया है।

आपने गवर्नरकी कराची-यात्राके समय आयोजित हड़तालका समर्थन नहीं किया है और आपने लिखा है कि वे अच्छेसे-अच्छे गवर्नरोंमें से हैं। महोदय, इस सम्बन्धमें मेरा कहना यह है कि हो सकता है उन्होंने बम्बई या गुजरातकी कृतज्ञता पाने लायक कोई काम किया हो या न किया हो पर सिन्धके लिए तो उन्होंने निश्चय ही ऐसा कोई काम नहीं किया कि सिन्धी लोग उनकी भूरि-भूरि प्रशंसामें आपका साथ दें। आज सिन्धमें जितना दमन चल रहा है, उसके साथ जितनी नृशंसता बरती जा रही है या लोगोंको जितना आतंकित किया जा रहा है, वैसा पहले कभी नहीं हुआ था। आपको अपने ऊपर पूरा संयम है, लेकिन यदि आप अपनी सिन्ध-यात्राके चन्द दिनोंमें सन्झूर, नवाबाद और थार गये होते और आपने वहाँ अपने कानोंसे पुलिस और अन्य सरकारी अफसरोंके रोंगटे खड़े कर देनेवाले अत्याचारोंकी कहानियाँ वहाँके लोगोंकी जुबानी सुनी होतीं तो आपके संयमका बाँध टूट जाता। महोदय, मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि आप उसके बाद इन गवर्नर साहबके बारेमें अपनी राय बदल देते। इन्हींके इशारोंपर वहाँ लोगोंपर इतनी मुसीबतें ढाई जा रही हैं। यही

वे गवर्नर हैं जिन्होंने अभी-अभी सत्ताके मदमें चूर होकर जनताकी तुलना नौकरोंसे और सरकारकी तुलना मालिकोंसे की थी और कहा था कि असहयोगियोंको वही करना चाहिए जो नौकरीसे असन्तुष्ट होनेपर नौकर करते हैं; यानी जैसे वे नौकरी छोड़ देते हैं उसी तरह असहयोगियोंको देश छोड़कर चले जाना चाहिए। कहा जाता है कि सिन्धके प्रमुख "सहयोगी" नेताओंकी एक सभामें यह कहा गया था। उनकी अच्छाईका एक ताजा सबूत है हमारे स्वामी गोविन्दानन्दपर मुकदमा चलानेकी मंजूरी देना, जिसके कारण बादमें उनको पाँच वर्षकी कैद हुई। अब हम अत्यन्त सम्मानपूर्वक आपसे पूछते हैं कि महोदय यह बतलाइये ऐसे गवर्नरकी कराची-यात्राके समय उनको यह दिखलानेके लिए हड़ताल करनेमें कौनसा घोर अपराध हो गया कि हम सिन्धके लोग अब पहले-जैसे बेजुबान मवेशी नहीं रहे जिनको विलिंगडनके इशारेपर लॉरेंसने कभी छल-बलसे डरा-धमका दिया था। लोग दिलसे उस प्रदर्शनके पीछे थे, यह इसीसे सिद्ध है कि हड़ताल मुकम्मिल थी, ६ और १३ तारीखकी राष्ट्रव्यापी बड़ी-बड़ी हड़तालोंसे भी ज्यादा मुकम्मिल।

कराची
८ मई, १९२१

आपका,
गिरधारीलाल खूबचन्दानी

मैं बड़ी खुशीसे उपर्युक्त पत्र छाप रहा हूँ। उसमें से सिर्फ वे हिस्से छोड़े गये हैं जिनमें बातको बढ़ा-चढ़ाकर कहा गया था। अगर मेरे द्वारा किसी स्कूलके प्रति अन्याय हो गया हो तो उसके लिए मुझे खेद है। सार्वजनिक संस्थाओंके खिलाफ प्रामाणिक और सच्ची शिकायतें प्रकाशित करना मेरा कर्त्तव्य है। किसी भी भ्रामक कथनसे ईमानदार राष्ट्रीय संस्थानोंका कुछ भी नहीं बिगड़ सकता। जहाँतक बम्बईके गवर्नर साहबका सवाल है, मैंने अपनी राय जाहिर की थी। मेरा अब भी यही खयाल है कि गवर्नर साहब बहादुरको सिन्धके हाकिमोंकी धाँधलीकी कोई जानकारी नहीं है। लेकिन सरकारपर जो आरोप लगाया गया है अगर वह साबित हो भी जाये तो भी मैं इस बातके लिए राजी नहीं कि जब भी कोई बदनाम अफसर कहींका दौरा करे तो हर बार हमें हड़ताल करनी ही चाहिए। गवर्नर साहबके बारेमें जो बात कही गई है, अगर सचमुच उन्होंने वैसा कहा है तो यह बड़े ही दुःखकी बात है। मेरा ऐसा विश्वास रहा है कि बम्बईके गवर्नर बहादुर गम्भीर और चतुर व्यक्ति हैं, इसलिए जल्दबाजीमें कोई अविचारपूर्ण बात कह जानेकी जो शिकायत उनके बारेमें की गई है उसके सच होनेसे मुझे जबरदस्त धक्का लगेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-५-१९२१

७०. नागरिकों द्वारा दिये गये अभिनन्दनपत्रका उत्तर[1]

२६ मई, १९२१

गांधीजीने पहले खड़े होकर भाषण न दे सकनेके लिए क्षमा माँगी और नगरपालिका द्वारा अंग्रेजीमें मानपत्र दिये जानेकी थोड़ी आलोचना की। उन्होंने कहा कि नम्रतापूर्वक ऐसी त्रुटियोंकी ओर ध्यान दिलाना मैं अपना कर्त्तव्य मानता हूँ। यदि यह मानपत्र मराठी या हिन्दीमें दिया गया होता तो वह भारतके वर्तमान मानसके अधिक अनुकूल होता। अब वह समय आ गया है कि जब नगरपालिकाएँ अपनी पहलेकी सीमाओंके बाहर कदम रख रही हैं। नगरपालिकाओंने उन्हें आगे आकर मानपत्र देना शुरू कर दिया है। इस विषयमें पहल बरेली नगरपालिकाने की थी। चाँदीकी जो मंजूषा दी गई थी उसके विषयमें उन्होंने कहा कि अगर शोलापुरके कोई सम्पन्न सज्जन उसे खरीद लें तो अच्छा हो; क्योंकि इस तरह प्राप्त रकम तिलक स्वराज्य-कोषमें दी जा सकेगी। उन्होंने कहा मुझे यह देखकर सन्तोष हुआ है कि शोलापुरकी नगरपालिका अपना कर्त्तव्य कर रही है। नगरपालिकाओंका काम केवल सड़कोंकी सफाई करना है यह धारणा अब समाप्त हो जानी चाहिए और इन्हें राजनीतिके क्षेत्रमें उचित भाग लेना चाहिए। अन्तमें उन्होंने भगवान्‌से प्रार्थना की कि वह शोलापुरकी नगरपालिकाको अपना कर्त्तव्य करनेकी शक्ति और साहस प्रदान करे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७–५–१९२१

१. गांधीजी पण्ढरपुरसे सुबह ३–३० पर शोलापुर पहुँचे थे। उस दिन नगरका सब कारोबार बन्द रहा, जुलूस निकाला गया और ९ बजे सबेरे ही नगरपालिकाने उन्हें मानपत्र भेंट किया।

७१. तार : महादेव देसाईको[1]

बागलकोट
२७ मई, १९२१

महादेव
द्वारा मथुरादास
९३, बाजार गेट
फोर्ट, बम्बई

शुरूमें प्रस्तावित परिवर्धन कर दें किन्तु बादका अनुच्छेद कायम रहे। तुम 'मानते हैं' के पहले 'अब' रख सकते हो। किन्तु जोड़ा गया शब्द 'हृदयसे' के पहले रहे। सलाहके अनुसार समाचारपत्रोंको परिपत्र भेजो। मन्त्रीकी हैसियतसे अपने हस्ताक्षरोंके साथ परिवर्धनोंके बारेमें शिमला तार दो और लिखो कि परिवर्धनों सहित वक्तव्य हस्ताक्षरोंके साथ प्रचारित कर दिया गया है। मोटरसे बीजापुर जा रहा हूँ। निश्चयके अनुसार कल बीजापुर छोड़ रहा हूँ। परिणामकी सूचना तारसे बीजापुर दो।

गांधी

मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५३२) की फोटो-नकलसे।

७२. बीजापुरके अभिनन्दनपत्रोंका उत्तर[2]

२७ मई, १९२१

श्री गुण्डप्पाको बोलनेकी अनुमति दे दी गई,[3] इसकी मुझे खुशी है। अपने विरोधियोंके विचार धैर्यसे सुनना हमारा कर्त्तव्य है। मैं ब्राह्मणेतर लोगोंकी भावनाएँ

१. यह तार महादेव देसाईको उनके २६/२७ मईके तारके जवाबमें भेजा गया था। उनका तार इस प्रकार था: "केवल इस संशोधनके साथ मसविदेपर हस्ताक्षर हो गये हैं: 'किन्तु हम मानते हैं कि हमारे भाषणोंके कुछ अंशोंका यह अर्थ हो सकता है' शब्दोंके स्थानपर 'हमने कभी सोचा भी नहीं था कि हमारे भाषणोंके . . . उन अंशोंका वैसा अर्थ भी हो सकता है' रख दिये गये हैं। "इसलिए हम हृदयसे" शब्दोंसे वाक्य प्रारम्भ होता है। निर्देश, द्वारा मथुरादास एक्सप्रेस तारसे दीजिए।" मूल मसविदेके लिए देखिए "अली भाइयोंकी क्षमा-याचनाका मसविदा", १४-५-१९२१।

२. गांधीजी बागलकोटसे शामको बीजापुर पहुँचे। उन्होंने स्त्रियोंकी एक सभा और बादमें थान-बावड़ीके मैदानमें लगभग १२,००० लोगोंकी एक आम सभामें भाषण दिया। उन्हें नगरपालिका और स्थानीय व्यापारी संघकी ओरसे अभिनन्दनपत्र भेंट किये गये थे।

३. गुण्डप्पा शबाडी नामक एक लिंगायत ब्राह्मणेतर सज्जन जो इससे पहले बोले थे।

जानता हूँ और उनका कारण भी समझता हूँ। मैं ऐसा नहीं कहता कि ब्राह्मणोंका कोई दोप नहीं है। ब्राह्मण भी अपने निर्दोष होनेका दावा नहीं करते। ब्राह्मणोंने अपनी धार्मिक भावनाओंकी उपेक्षा की है और उनका जीवन पवित्र नहीं रह गया है। वे कभी जिस ऊँचाईपर प्रतिष्ठित थे उससे च्युत हो गये और उनके पतनके साथ ही भारतका पतन प्रारम्भ हुआ। मैं ब्राह्मणेतर हूँ और अपने ब्राह्मणेतर मित्रोंसे अपील करता हूँ कि वे आजके ब्राह्मणोंके पतित हो जानेके कारण अपने धर्म और जीवनके आदर्शोंको न भूलें। शायद आप यह न मानें कि ब्राह्मणोंकी बदौलत ही ब्राह्मणेतर अपनी कमजोरियोंके प्रति जागरूक होकर अपने हकोंके लिए आन्दोलन कर रहे हैं। किन्तु फिर भी यह सच है कि अपने पतनके बावजूद आज भी ब्राह्मण राजनीतिक और सामाजिक सभी आन्दोलनोंमें सबसे आगे हैं। दलित वर्गोंकी उन्नतिके लिए अन्य जातियोंकी अपेक्षा ब्राह्मण ही अधिक प्रयत्न कर रहे हैं। लोगोंके सभी वर्ग देशभक्तिके लिए लोकमान्य तिलकका आदर करते हैं। आन्ध्रमें एक ब्राह्मण सज्जनने अछूत-वर्गोंकी सेवाके लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया है। स्वर्गीय श्री गोखले,[1] श्री रानडे[2] और आदरणीय श्री शास्त्री सबने पिछड़े वर्गोंकी उन्नतिके लिए बहुत सुन्दर काम किया है। ये सब ब्राह्मण थे। मेरी समझमें ब्राह्मण हमेशा ही आत्मत्यागके लिए प्रसिद्ध रहे हैं। आप ब्राह्मणशाहीकी बात करते हैं। परन्तु जरा हम इसकी तुलना ब्रिटिशशाहीसे करें। यह सरकार तो "फूट डालो और राज्य करो" की नीतिका अनुसरण करती है और तलवारकी ताकतसे अपनी सत्ता कायम रखती है। ब्राह्मणोंने शस्त्रबलका सहारा कभी नहीं लिया। उन्होंने केवल अपने बुद्धिबल, आत्मत्याग और तपस्या द्वारा अपनी प्रभुता स्थापित की। किसीको भी उनकी प्रभुतासे ईर्ष्या नहीं करनी चाहिए। मैं अपने ब्राह्मणेतर भाइयोंसे अपील करता हूँ कि वे ब्राह्मणोंसे घृणा न करें और नौकरशाहीके जालमें न फँसें।

ब्राह्मणेतर लोग धनी हैं। कृषि और वाणिज्य उनके हाथमें है। यदि वे सार्वजनिक सेवाओंकी आकांक्षा रखते हैं तो असहयोग आन्दोलन द्वारा उसका रास्ता भी उनके लिए खोल दिया गया है। असहयोग तो ब्राह्मण-अब्राह्मण सबकी समान रूपसे भलाईके लिए है। आप कहते हैं कि स्कूलों और कालेजोंके बहिष्कारकी सलाह शिक्षित ब्राह्मणोंको स्वीकार्य हो सकती है परन्तु उन अब्राह्मणोंके लिए वह सलाह जरूर हानिकर होगी जो अभी अशिक्षित हैं। आप यह भी कहते हैं कि मैं आधुनिक शिक्षाकी एक अच्छी देन हूँ। परन्तु मैं आपको इतना अवश्य बतला देना चाहता हूँ कि आधुनिक शिक्षाने हम सबको कायर बना दिया है। हमारी बेबसी और पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेषका कारण यही शिक्षा है। इसने हममें गुलामीकी मनोवृत्तिको बढ़ाया है। आप मुझमें जो गुण बताते हैं, निश्चय ही वे इस शिक्षाके परिणाम नहीं हैं। मैंने बहुत पहले इस शिक्षाके सम्मोहक प्रभावसे अपनेको मुक्त कर लिया था। मैं जो-कुछ हूँ,

१. गोपाल कृष्ण गोखले (१८६६–१९१५); शिक्षा-शास्त्री और राजनीतिज्ञ। भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के संस्थापक।

२. (१८४२–१९०१); समाज-सुधारक और लेखक; कांग्रेसके संस्थापकोंमें से एक।

वह अपने धार्मिक और जीवनके शाश्वत सिद्धान्तोंके चिन्तन और ब्राह्मणों द्वारा संकलित 'भगवद्गीता', 'महाभारत' तथा 'रामरक्षा'-जैसे ग्रन्थोंके अध्ययनसे हूँ। मैं अपने ब्राह्मणेतर मित्रोंसे इन बातोंपर शान्तिसे विचार करनेके लिए कहता हूँ। मुझे पूरा विश्वास है कि ऐसा करनेपर उन्हें मेरे कथनकी सचाईपर विश्वास हो जायेगा।

मैं और अली भाई, भाइयोंकी तरह रहते हैं। और मैं हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियोंसे अपील करता हूँ कि वे इसी तरह भाई बनकर रहें। असहयोग आन्दोलन आत्मशुद्धिका आन्दोलन है। जो बुराइयाँ हमारे समाजके मर्मको खा रही हैं उनसे हमें अवश्यमेव छुटकारा पाना चाहिए। हमें देशकी बलि-वेदीपर अपना जीवन बलिदान करनेके लिए तैयार रहना होगा। हमें हर कीमतपर अहिंसा अपनानी होगी। हमें पंजाबके लछमनसिंह और दलीपसिंहके प्रशंसनीय उदाहरणका अनुकरण करना होगा। यद्यपि वे इतने सशक्त थे कि महन्त नारायणदासको मार सकते थे, तथापि उन्होंने आत्मरक्षाके लिए अँगुली तक नहीं उठाई।

मुझे दुःख है कि यह जिला अकाल-पीड़ित है। अतः आप इस हालतमें तिलक स्वराज्य-कोषमें उदारतापूर्वक दान नहीं दे पा रहे हैं। परन्तु मुझे यह सुनकर खेद हुआ है कि पूरे जिलेमें केवल १,४०० चरखे चल रहे हैं। चरखा तो अकालके विरुद्ध बीमा ही है। कृषिपर निर्भर रहनेवाली ८७ प्रतिशत आबादीके लिए अभावकी स्थितिमें जीवन निर्वाह करनेका इसके सिवा और कोई जरिया नहीं है। इसलिए हमें हर घरमें चरखा जरूर शुरू करना चाहिए। इससे हमारे दो काम सधेंगे। स्वदेशी उद्योग पनपेगा और फलस्वरूप विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण बहिष्कार हो जायेगा। यदि हम अहिंसाका मार्ग अपनाने और ब्राह्मण तथा अब्राह्मणोंके विवादको हल करनेके लिए कृतसंकल्प रहें, यदि हिन्दू-मुसलमान एक दूसरेके साथ भाई-भाईकी तरह प्रेमसे व्यवहार करते रहें, और यदि हर घरमें चरखा चलता रहे तो मैं आपको आश्वासन देता हूँ कि इसी एक बरसके भीतर स्वराज्य स्थापित हो जायेगा।

लोकमान्य तिलकने हमें सिखाया है, स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।[१] इस मन्त्रको साधनेके लिए हमें स्कूलों या परिषदोंमें जानेकी जरूरत नहीं है। हमें स्वराज्य चाहिए और वह स्वराज्य चरखा देगा। ३० जूनसे पहले ही हमको एक करोड़ रुपया जमा करना है। मैं समझता हूँ कि लोकमान्य तिलकके नामपर एक करोड़ रुपया इकट्ठा करना कठिन काम नहीं है।

आपने मेरा जो सम्मान किया और बीजापुरकी नगरपालिका तथा यहाँके व्यापारियोंने स्वागतके लिए जो अभिनन्दनपत्र भेंट किये हैं, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। यदि नगरपालिकाएँ और व्यापारीगण अपने कर्त्तव्योंके प्रति जागरूक हैं तो वे अवश्य ही स्वराज्य हासिल करने और खिलाफत तथा पंजाबके मामलोंमें न्याय प्राप्त करनेके लिए हमारी ठोस मदद कर सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३–६–१९२१

१. "स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं उसे लेकर रहूँगा" यह तिलकका प्रसिद्ध सिद्धान्त-वाक्य था।

७३. पत्र : हसन इमामको

[२७ मई, १९२१ के बाद]

प्रिय मित्र,

आपके पत्र[1] और संलग्न पत्रके[2] लिए धन्यवाद। विश्वास रखिए उत्तेजना दूर करने और दंगे रोकनेके लिए यथाशक्ति सब-कुछ करूँगा। इस महीने किसी भी हालतमें भारतके इस अंचलको छोड़ सकना मुझे कठिन दिखाई देता है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५३७)की फोटो-नकलसे।

७४. सन्देश : गयाकी जनताके नाम[3]

मैंने सुना है कि बिहारमें मेरे नामसे कितने ही लोग हिन्दू और मुसलमानोंको गोश्त-मछली खानेसे रोकते हैं। शान्तिमय असहयोगके युद्धमें किसीको निरामिष भोजन करनेकी बात समझानेका समावेश नहीं होता। जबरदस्तीकी तो बात ही नहीं है।

किसी आदमीको अपनी रुचिके अनुसार खानेसे जबरदस्ती रोकना अहिंसा नहीं है, हिंसा है। मैं तो किसीको दारू पीनेसे भी जबरदस्ती नहीं रोकना चाहता।

बअमन तर्केमवालात (सविनय अवज्ञा) में जबरदस्तीकी मनाही है। जो आदमी किसीको [जबरदस्ती] उसकी रुचिके अनुसार खाने-पीनेसे रोकता है वह सबके प्रति गुनाह करता है। ऐसी जबरदस्तीसे हमारे व्रतको बड़ा नुकसान पहुँचेगा। इसलिए मैं चाहता हूँ कि कोई किसीको मेरे या अहिंसाके नामसे खाने-पीनेमें जबरदस्ती न रोके और किसीके पाससे गोश्त-मछली छीननेकी भी कोशिश न करे।

मेलेमें जबरदस्ती जानवरोंको छीनना भी मना है।

मोहनदास गांधी

आज, २९-५-१९२१

१. हसन इमामने अपने २७ मईके पत्रमें गांधीजीसे गया आनेका आग्रह किया था ताकि वे बकरीदसे पहले स्थिति शान्त बना दें।

२. उपलब्ध नहीं है।

३. यह सन्देश सम्भवतः हसन इमामके पत्रके उत्तरमें गयाकी जिला कांग्रेस कमेटीको भेजा गया था। देखिए पिछला शीर्षक।

७५. गुजरातके धनिक-वर्गसे

जूनकी ३० तारीख समीप आती जाती है। गुजरातमें अभी हम तिलक स्वराज्य-कोषके लिए दो लाख रुपया भी इकट्ठा नहीं कर पाये हैं। उसमें भी वस्तुतः धनिक-वर्गका योगदान बहुत कम है।

क्या धनिक-वर्गको स्वधर्म प्रिय नहीं? और क्या वे हिन्दुस्तानको जगत्के सम्मुख गर्वसे खड़ा हुआ नहीं देखना चाहते? हिन्दुस्तानमें जो तीन करोड़से भी अधिक लोग भूखे मरते हैं क्या उनका पेट भरनेके लिए वे अपना योगदान नहीं देना चाहते? क्या उन्हें हिन्दुस्तानकी कीर्ति प्रिय नहीं है? क्या उन्हें हिन्दुस्तानका गुलामीसे मुक्त होना पसन्द नहीं है? यदि वे चाहें तो गुजरातका बोझा एक दिनमें उठा सकते हैं, क्या यह बात सच नहीं है? यदि सिर्फ अहमदाबादके मिल-मालिक चाहें तो क्या एक ही दिनमें दस लाख रुपया नहीं दे सकते?

वे चाहें तो बहुत-कुछ कर सकते हैं। मैं आशा रखता हूँ कि वे देशमें इस समय प्रचण्ड वेगसे जो आन्दोलन चल रहा है उसमें अपना हिस्सा दिये बिना न रहेंगे।

"यदि हम सहायता करेंगे तो सरकार अड़चनें डालेगी", मुझे उम्मीद है कि धनिक-वर्ग अपने मनसे इस दहशतको निकाल देगा। मनमें ऐसी दहशत रखनेके दिन अब लद गये। और फिर यदि एक ही धनिकके पैसा देनेकी बात हो तो उसे डराया भी जा सकता है लेकिन जहाँ सबकी बात आती है वहाँ यह कैसे सम्भव हो सकता है।

तथापि डर ऐसी चीज है कि यदि किसीकी देनेकी इच्छा हो भी तो पहल करनेकी हिम्मत नहीं होती। इस तरहके भयसे मुक्त होना भी इस जंगी लड़ाईका एक महान् परिणाम होना चाहिए। मुझे उम्मीद है कि धनिक-वर्ग हिम्मतसे राष्ट्रीय उन्नतिमें पूरा-पूरा भाग लेगा।

लेकिन कदाचित् धनिक-वर्गमें से किसी-किसीको निर्भयताके धर्मका पालन करना कठिन जान पड़े तो भी मैं उनसे यह उम्मीद तो करूँगा ही कि वे दयाधर्मका परित्याग नहीं करेंगे। अकालग्रस्त लोगोंके लिए जो मदद दी जानी चाहिए वह तो अवश्य देंगे। जब प्लेगका भीषण प्रकोप था, जब अकाल पड़ा था तब धनिक-वर्गने पैसा देनेमें कोई कसर उठा नहीं रखी थी। अगर वे कुछ भी नहीं कर सकते तो अन्तमें मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वे कमसे-कम अकाल निवारणके दायित्वको अपने कन्धोंपर उठा लें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९-५-१९२१

७६. गुजरातसे बाहर रहनेवाले गुजरातियोंसे

बेजवाड़ाकी माँगके उत्तरमें गुजरातको न केवल अपने हिस्सेका दान देना है बल्कि उसे असमर्थ प्रान्तोंकी सहायताके लिए भी आगे आना होगा और इसीलिए मैंने गुजरातके हिस्सेमें दस लाख रुपयेकी रकम निर्धारित की है। यदि गुजरात इतने भारका वहन नहीं करेगा तो मुझे आशंका है कि तीस जूनसे पहले-पहले हम एक करोड़ रुपया कदापि इकट्ठा नहीं कर सकते।

लेकिन गुजरातको एक तीसरा बोझ और वहन करना है। गुजरातमें कितने ही स्थानोंपर अकाल पड़ा हुआ है वहाँ भी मददकी जरूरत है। मैं इन तीनों बातोंकी ओर गुजरातसे बाहर रहनेवाले गुजरातियोंका ध्यान आकर्षित करता हूँ। वे जिस किसी प्रान्तमें रहते हैं उसके प्रति उन्हें अपने फर्जको पूरा करना चाहिए इस विषयमें तो कोई मतभेद ही नहीं हो सकता। लेकिन गुजरातके प्रति भी उनका उतना ही कर्त्तव्य है। गुजरात अपने हिस्सेकी दस लाख रुपयेकी रकम तभी दे सकता है जब गुजरातसे बाहर रहनेवाले गुजराती अपने मनमें निरन्तर उसका ध्यान रखें। यदि वे ऐसा करें तो गुजरात दस लाख रुपयेकी पूरी रकम दे सकेगा, इतना ही नहीं बल्कि उससे भी अधिक दे सकनेकी स्थितिमें होगा।

पारसी और मुसलमान गुजरातियोंको अगर मैं गुजरातके प्रति उनके कर्त्तव्यका भान करवा सकूँ तो वे अकेले ही एक करोड़ रुपया इकट्ठा करनेमें समर्थ हैं।

मैं गुजरातके विभिन्न भागोंमें पड़े हुए अकालपर ज्यादा जोर देना चाहता हूँ। उड़ीसाके अकालके समय गुजरातियोंने बहुत अच्छी रकम देकर मदद की थी।[1] उस अकालको गुजरातने ही सँभाल लिया था — ऐसा कहें तो अनुचित न होगा। तब अगर गुजरातके अकालको गुजराती सँभालें तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है?

अन्य बातोंको लेकर आजकल देशमें जो आन्दोलन हो रहा है उसके प्रति जिन लोगोंको कोई सहानुभूति नहीं है उनसे भी मैं अकाल-निवारणके लिए धन देनेकी याचना करता हूँ। वे अकाल-कोषमें दो तरहसे पैसा दे सकते हैं। एक तो तिलक स्वराज्य-कोषमें दान देकर और यदि वैसा करनेमें उन्हें कोई दिक्कत महसूस हो तो केवल अकाल-कोषके लिए ही पैसे भेजकर। वस्तुतः देखा जाये तो तीन प्रकारसे पैसा भेजा जा सकता है: (१) तिलक स्वराज्य-कोषमें, बिना किसी शर्तके (२) तिलक स्वराज्य-कोषमें, लेकिन सिर्फ अकाल-निवारणके लिए ही; यह रकम तिलक स्वराज्य-कोषकी मानी जायेगी परन्तु इसका उपयोग अकालके अवसरपर ही किया जायेगा; और (३) सिर्फ अकाल-कोषके लिए और तिलक स्वराज्य-कोषमें शामिल न किये जानेकी शर्तके साथ।

तीसरी शर्तके अनुसार सरकारी कर्मचारी और असहयोगका विरोध करनेवाले भी मुक्तभावसे दान दे सकते हैं और देंगे, मैं ऐसी उम्मीद रखता हूँ। जो रकम हमें

१. देखिए खण्ड १७।

प्राप्त होती है उसका पूरा-पूरा हिसाब प्रकाशित किया जाता है। मान्यवर मन्त्रियों और खजांचियोंके हाथमें सारा काम है। इस कारण गुजरातसे बाहर रहनेवाले गुजरातियों-से मेरी प्रार्थना है कि वे तत्परतापूर्वक बिना किसी शर्तके पैसा भेजें।

दक्षिण तथा पूर्व आफ्रिका अथवा जापान और हिन्दुस्तानसे बाहरके भारतीयोंको यह पत्र देरसे मिलेगा। इसलिए गुजरातमें रहनेवाले जिन लोगोंके सम्बन्धी उपर्युक्त स्थानोंमें रहते हैं उन्हें मैं सलाह देता हूँ कि वे अपने सम्बन्धियोंको इस आशयके तार दें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९–५–१९२१

७७. टिप्पणियाँ

महाराष्ट्रकी यात्रा

लोकमान्य तिलक महाराजकी जन्मभूमिमें जाना —— जहाँ आधुनिक कालमें वीर पुरुषोंका जन्म हुआ, जहाँ शिवाजी हो गये हैं, जहाँ रामदास और तुकारामने गाया है वहाँ जाना —— मेरे लिए तो तीर्थयात्रा करनेके समान ही है। मेरा हमेशासे यह विश्वास रहा है कि महाराष्ट्र चाहे तो सब-कुछ कर सकता है। लेकिन महाराष्ट्रकी अश्रद्धा मुझे हमेशा दुःखी करती रही है। जिस प्रान्तमें सबसे ज्यादा काम हो सकता है उसी प्रान्तमें सबसे कम काम हुआ है, मुझे सदा ऐसा भय रहता है। महाराष्ट्रके कार्यकर्त्ता भी ऐसा ही मानते दीख पड़ते हैं। शिमला छोड़नेके बाद मैं कालका और अम्बाला गया। वहाँसे मध्य-प्रान्तके खंडवाके लिए रवाना हुआ और बादमें भुसावल, संगमनेर और येवला गया। यह टिप्पणी कुर्डूवाड़ी जाते हुए रास्तेमें लिख रहा हूँ। कुर्डूवाड़ी जानेके लिए येवलासे धोंड जाना पड़ता है और धोंडसे गाड़ी बदलनी पड़ती है। धोंड हमारी गाड़ी देरसे पहुँची और इसी कारण जिस गाड़ीमें हमें कुर्डूवाड़ी जाना था वह छूट गई। परिणामतः हमें धोंडका अनुभव भी मिला। मुझे यह एहसास हुआ कि आम जनताकी श्रद्धा सब ओर एक समान है लेकिन काम करनेवाले कम हैं। प्रबन्ध करनेकी शक्ति अल्प है, हड़बड़ी और शोर-गुलका कोई हिसाब नहीं है, लोगोंसे स्टेशन खचाखच भरा हुआ है; लेकिन अगर कामकी ओर देखें तो नहीं के बराबर। मुझे भुसावल, संगमनेर और येवलामें जिन्होंने निमन्त्रित किया था वे लोग अवश्य ही अच्छे कार्यकर्त्ता हैं। तथापि परिणाम अत्यन्त नगण्य दिखाई दिया।

हमारे पास शोर-गुल, जयघोष और चरणस्पर्शके लिए अब समय ही कहाँ रह गया है? यदि हमारे पास स्टेशन जानेका समय है तो क्यों न हम उसे कातनेमें लगायें? उतना समय चन्दा इकट्ठा करनेमें क्यों न बितायें? क्या हमें कांग्रेसके कम सदस्य बनाने हैं? हम दिन-रात लगातार काम करके ही जून मासतक सारा काम कर लेनेके अपने उद्देश्यमें सफल हो सकेंगे। दो महीने बीत गये लेकिन हम

अभीतक दो-तिहाई कार्य भी पूरा नहीं कर पाये हैं — आधा काम भी खत्म नहीं हुआ है।

यदि हम तीस जूनतक कार्य पूरा नहीं कर पाये तो यह माना जायेगा कि हमारी स्वराज्य प्राप्त करनेकी शक्ति अथवा इच्छा कम है।

भुसावल और संगमनेरमें सामान्य तौरपर चन्दा ठीक ही इकट्ठा किया गया है। लेकिन मुझे कहना चाहिए कि येवलामें तो नहींके बराबर चन्दा मिला। येवलामें बहुत पैसा है। वहाँ दो सौ वर्षसे बसे हुए गुजराती व्यापारी हैं तथापि येवलामें तिलक स्वराज्य-कोषके लिए सबसे कम पैसे मिले हैं। यह ठीक है कि येवलाके एक ही सज्जनने राष्ट्रीय स्कूलके लिए बीस हजार रुपये दिये। यह रकम दिये जानेकी बात तो बहुत दिनोंसे चल रही थी। जिन सज्जनने यह रकम दी है वे अपनी दान-शीलताके लिए प्रसिद्ध हैं। तिलक स्वराज्य-कोषके लिए तो जनतासे पैसा इकट्ठा करना था। उसमें स्त्री-पुरुष दोनोंकी ओरसे कुल मिलाकर तीन सौ रुपया ही इकट्ठा हुआ होगा जब कि येवलाके पास एक छोटेसे गाँवने हमारे वहाँसे गुजरनेके कारण तीन सौकी रकम दी।

धर्मसंकट

येवलामें मेरे ऊपर भारी धर्मसंकट आ पड़ा। मुझे वहाँ बीस हजार रुपयेकी रकम ग्रहण करनेके लिए खास तौरसे बुलाया गया था, राष्ट्रीय स्कूलका उद्घाटन भी मुझे ही करना था। हम मोटर द्वारा रातके दस बजे येवला पहुँचे। सार्वजनिक सभा रातके एक बजे हुई ! मैं बहुत ज्यादा थका हुआ था। सारे दिन मोटरोंकी यात्राके बाद यह रतजगा था। इस सभामें मैंने राष्ट्रीय स्कूलकी बात की और इसी सभामें मैंने सुना कि इस स्कूलमें इस वर्ष भी अंग्रेजी सिखाई जायेगी। ऐसे स्कूलका उद्घाटन करके मुझे खुशी तो नहीं होती तथापि अंग्रेजी शिक्षाके सम्बन्धमें अपने उद्गार व्यक्त करनेके बाद स्कूलका उद्घाटन करते हुए मैंने दो शब्द कहे। किसी तरह मैं इस कड़वे घूँटको चुपचाप पी गया। दूसरा दिन मेरे मौनका पवित्र दिन था तथापि मैंने अपना मौन रखते हुए ही स्कूलके उद्घाटनके लिए आनेकी स्वीकृति दे दी थी। इतनेमें मुझे खबर मिली कि इसमें तो अस्पृश्योंका प्रवेश निषिद्ध है। इस वर्ष मैंने अनेक स्कूलोंका उद्घाटन किया था लेकिन किसी ऐसे स्कूलका उद्घाटन नहीं किया था। मुझे विवश होकर व्यवस्थापकोंसे कहना पड़ा कि मैं ऐसे स्कूलका उद्घाटन करनेके लिए नहीं जा सकता और मैं अन्तमें नहीं गया। मुझपर ऐसा ही संकट कराचीमें स्वदेशी भण्डारका उद्घाटन करते समय आ पड़ा था। उस भण्डारमें सब तरहका माल था इसीसे मैंने उसका उद्घाटन करनेसे इनकार कर दिया था। जो-जो कार्य असहयोगके विरुद्ध हैं अथवा जो मेरे अपने निश्चित विचारोंके विरुद्ध हों उन कार्योंमें भाग लेनेके लिए मुझसे नहीं कहना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९–५–१९२१

७८. भाषण : बम्बईकी सार्वजनिक सभामें[1]

२९ मई, १९२१

महात्मा गांधीने भाषणके आरम्भमें कहा :

मुझे अत्यन्त खेद है कि आप महानुभावोंको चार बजेसे अबतक यहाँ बैठना पड़ा, परन्तु इसमें दोष मेरा नहीं है। मुझे ७–३० बजे शामका ही समय दिया गया था। मेरा सम्पूर्ण समय आपके ही लिए है और मैं उसमें से अपने लिए कुछ नहीं रखता।

सज्जनो, अब इस देशमें सभाएँ करनेका समय नहीं रहा। अब तो ठोस काम कर दिखानेका समय आ पहुँचा है। आप लोगोंको मालूम होगा कि मैं शिमलेमें ६ दिनतक रहा और मैंने माननीय वाइसराय महोदय लॉर्ड रीडिंगसे मुलाकात भी की; परन्तु मैं वहाँ कुछ लेनेकी आशासे बिलकुल नहीं गया था। श्री पण्डित मालवीयजीका आदेश था कि मैं शिमला जाऊँ और मेरे मित्र श्री एन्ड्रचूजने भी मुझे सूचना दी थी कि वाइसराय महोदय मुझसे मुलाकात करना चाहते हैं। मैं वहाँ गया और वाइसराय महोदयसे मिला। मुझे वाइसराय महोदयसे जो-कुछ कहना था सो विस्तारसे कहा और उन्होंने भी उसे अत्यन्त प्रेम, धैर्य और शान्तिके साथ सुना। वहाँ जो-कुछ हुआ उसका ब्यौरेवार विवरण मैं 'यंग इंडिया' में पहले ही प्रकाशित कर चुका हूँ।[2] अब इस मुलाकातके बाद वाइसराय महोदय और मैं एक-दूसरेको अधिक अच्छी तरह जानने लगे हैं। अब वे समझ गये हैं कि असहयोगके द्वारा मैं क्या प्राप्त करना चाहता हूँ।

भारतका भविष्य स्वयं हमारे ही हाथमें है। हमको एक स्पष्ट और सादेसे कर्त्तव्यका पालन करना है। हमको अहिंसक रहना है और हिन्दुओं एवं मुसलमानोंको एकताकी ग्रन्थिमें बँध जाना है। हमें देशमें बीस लाख चरखे चलवाने हैं। हमें राष्ट्रीय महासभा [कांग्रेस] के लिए एक करोड़ सभासद बनाने है और तिलक स्वराज्य-कोषमें एक करोड़ रुपया एकत्र करना है। हमें यह सब ३० जूनके पूर्व ही कर लेना है। अत्यन्त खेदकी बात है कि इन दो महीनोंमें जितना-कुछ किये जानेकी आशा की जा रही थी उतना हम नहीं कर पाये हैं। और इसके दोषी हम स्वयं हैं। हमारे ही प्रयत्नोंके अभावके कारण हमारा प्रचार-कार्य बहुत आगे नहीं बढ़ पाया। यदि हम लोग उतना कार्य भी नहीं कर सकते जितना करनेका कांग्रेसका आदेश है तो हम स्वराज्य कैसे प्राप्त कर सकते हैं? या खिलाफत और पंजाबके अन्यायोंका निराकरण कैसे

१. इस सभाका आयोजन उत्तरी बम्बईके उपनगर माटुंगामें सायं ७–३० पर स्थानीय वार्ड कांग्रेस कमेटी और माटुंगा नागरिक संघके तत्त्वावधानमें किया गया था। इसका विवरण **बॉम्बे क्रॉनिकल,** ३०–५–१९२१ तथा **गुजराती,** ५–६–१९२१ में भी प्रकाशित हुआ था तथा उनसे इसका मिलान कर लिया गया है।

२. देखिए "शिमला-यात्रा", २५–५–१९२१।

करा सकते हैं? मुझे पूर्ण आशा है कि आप अपने कर्त्तव्यसे मुँह न मोड़ेंगे और ईश्वरसे प्रार्थना है कि वह आपको मातृभूमिके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करनेके लिए पर्याप्त शक्ति प्रदान करे।

आपसे इस समय मैं जो चाहता हूँ वह केवल यही है कि आप सब लोग, भाई और बहनें, कांग्रेसके सदस्य बनें। यदि आप भय अथवा किसी स्वार्थके कारण सदस्य न बनेंगे तो आप स्वराज्यके योग्य कदापि नहीं हो सकते। यदि हम स्वराज्यके हेतु एक करोड़ रुपया एकत्र करनेको तैयार नहीं हैं तो स्वराज्य कभी प्राप्त नहीं हो सकता। यदि हम स्वराज्यकी खातिर एक करोड़ रुपये जमा नहीं कर सकते तो हम स्वराज्य पानेकी योग्यता कैसे प्राप्त करेंगे। अगर हम इतनी रकम इकट्ठी न कर पाये तो हमें स्वराज्य नहीं मिल सकता। मिलना भी नहीं चाहिए क्योंकि हम उसके अयोग्य हैं। क्षण-भरके लिए विचार कीजिए कि इस नगरमें नाटकों, तमाशों और अन्य आमोद-प्रमोदोंमें कितना धन नष्ट किया जाता है और इस विशाल देशमें मद्य-पानमें कितना। लगभग सत्तर करोड़ रुपया मद्यपानमें इसी वर्ष व्यय हुआ है। यदि हम अपने दुर्गुणोंपर इतना रुपया खर्च कर सकते हैं तो स्वराज्यके लिए एक करोड़ रुपया क्यों नहीं दे सकते? मुझे इतनेसे ही सन्तोष न होगा कि प्रत्येक व्यक्ति अपना भाग, जो केवल दो पैसे होता है, दे दे। हमें एक करोड़ रुपया एकत्र करना है और इस रकमको पूरा करना हमारा परम कर्त्तव्य है। मुझे विश्वास है कि केवल बम्बई ही इस रकमको पूरा करनेमें समर्थ है।

मुझे मॉरीशसके व्यापारी भाइयोंकी ओरसे अभी २३१ रुपये प्राप्त हुए हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि इतनी दूरीपर बसे हुए हमारे ये भाई हमारी स्वराज्यकी माँगमें हमारे साथ हैं। आज ही मेरे एक मित्र रुस्तमजी घोरखोदूने[1] इस देशमें चरखे-के प्रचारार्थ १२,००० रुपये भेजे हैं। आपके सम्मुख यह एक अच्छा उदाहरण है जिसका अनुकरण करना सर्वथा उचित है। केवल एक मास शेष रह गया है जिसमें [आप चाहें तो] देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा कर सकते हैं। मेरी अपील बम्बई-निवासियोंसे है, जो इस देशमें चलाये गए प्रत्येक आन्दोलनमें सबसे आगे रहे हैं। जलियाँवाला बाग-कोषमें उसने सबसे अधिक धन दिया था और अब वह तिलक स्वराज्य-कोषके लिए भी बड़ी रकम दे सकता है। लोकमान्य तिलकने ही बतलाया था कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और उसको हमें प्राप्त करना है। यदि हम तीस करोड़ मनुष्य स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए कृत संकल्प हैं तो हमें कौन रोक सकता है? हमारे लिए एक करोड़ रुपया इकट्ठा करना असम्भव नहीं है।

आप माटुंगाके लोग स्वराज्य-कोषमें केवल ५,००० रुपयें जमा कर पाये, इससे मुझे बहुत दुःख हुआ। क्या आप इतनी छोटी रकम एकत्र करके ही अपना कर्त्तव्य पूरा हुआ मान बैठे हैं। ऐसा मानना अपनेको तथा देशको धोखा देना है? याद रखें जूनके अन्तमें हमारी कर्त्तव्यपरायणताकी परीक्षा होनेवाली है। मुझे आशा है कि आप

१. पारसी रुस्तमजी; नेटालके एक भारतीय व्यापारी जिन्होंने दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके सत्याग्रह आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया था।

इसमें अनुत्तीर्ण न होंगे। मैं माटुंगावासियोंसे स्वराज्य-कोषमें यथाशक्ति दान देनेका अनुरोध करता हूँ।

आप यह तो कह ही नहीं सकते कि आपके पास देनेके लिए धन नहीं है। क्या आप अपने पुत्रों और पुत्रियोंके विवाहोंमें रुपया पानीकी तरह नहीं बहाते? अथवा स्वयं अपने लिए किसी वस्तुकी आवश्यकता होनेपर मनमाना खर्च नहीं करते? आज तो भारतका विवाह रचा जा रहा है। आपको उसमें खुले हाथों सहायता देनी चाहिए। यह सोचनेकी आवश्यकता नहीं कि हमें कितना रुपया इकट्ठा करना है। केवल यही ध्यानमें रखें कि आप स्वराज्यके निमित्त जितना दे सकें उतना अवश्य दें।

इस समय किसी भी स्त्रीको धार्मिक रीतियोंका पालन करनेके विचारसे जो आभूषण धारण करना आवश्यक है उससे अधिक धारण करनेका अधिकार नहीं है। स्त्रियोंको सीताका अनुकरण करना चाहिए। सीताने श्रीरामचन्द्रजीके साथ वन जाते समय सब आभूषण उतार दिये थे। भारतीय स्त्री-वर्गको आज ऐसा ही करना चाहिए। बहनो, यदि आप रामराज्य चाहती हैं तो आप स्वराज्य-कोषमें अपने आभूषणोंको दे डालें। स्त्रियाँ विशेष रूपसे ऐसे आन्दोलनोंके योग्य होती हैं; वे पुरुषोंसे भी अधिक काम कर सकती हैं; इसीलिए मैं उनसे यह अनुरोध कर रहा हूँ। यदि स्त्रियोंका अनुराग विदेशी कपड़ों, आभूषणों, फ्रांसीसी और जापानी रेशम एवं मैनचेस्टरके सूती कपड़ोंके प्रति बना रहेगा तो स्वराज्य कैसे प्राप्त हो सकता है। बहनो, क्या आप देशके इस महान् यज्ञमें ऐसे बाहरी आडम्बरोंकी आहुति नहीं दे सकतीं और सादा खद्दर नहीं पहन सकतीं? हमारे देशमें अनेक भाई और बहनें अधनंगे फिरते हैं। उन्हें भी पूरा कपड़ा मिल सके यह मेरी इच्छा है। इसलिए आप खद्दरको ही सबसे अच्छा और सबसे पवित्र पहनावा मानें। आप प्रत्येक घरमें सूत कातनेकी एक मिल खोल दें, परन्तु प्रत्येक घरमें चरखा पहुँचाये बिना यह सम्भव नहीं है। मुझे उन बड़ी-बड़ी मिलोंकी दरकार नहीं है जो हमारे पुरुषों और स्त्रियोंका सत निकाल लें। विदेशी कपड़ा पहनना भारतीयोंके नजदीक एक पाप और अत्यन्त अनुचित कर्म होना चाहिए। जबतक खद्दरकी पवित्रता आपके मनमें नहीं समाती तबतक स्वराज्य दूर ही रहेगा। महीन स्वदेशी कपड़ोंके अभावमें खद्दरपर ही सब्र कर लेना होगा। अपने भाइयों और बहनोंके हाथके कते हुए सूतसे बुना हुआ खद्दर सबसे अधिक अच्छा, दर्शनीय तथा पवित्र है। हमें खिलाफत और पंजाबके अन्यायोंका निराकरण करानेके लिए यह सब करना होगा।

मुझे विश्वास है कि इस नगरीसे धर्मका लोप नहीं हो गया है। मेरा खयाल है कि बम्बई-निवासी ऐशो-आरामकी चीजें पसन्द करते हैं, विलासमय और आरामका जीवन बितानेके शौकीन हैं और उन्हें संसारकी बढ़िया-बढ़िया चीजें चाहिए परन्तु उनके हृदय पापमय नहीं हैं। अब स्वराज्यकी खातिर उन्हें इन सबका त्याग करना पड़ेगा। आपको सिनेमाओं, नाटकघरों और शराबखानोंको तिलांजलि देनी होगी और सम्पूर्ण दुर्गुणोंका परित्याग करना होगा। आपको व्यभिचार छोड़ना होगा। 'मातृवत् परदारेषु' यह सबका भाव होना चाहिए। परमेश्वर आपको इतना बल और साहस दे कि आप देशके इस आड़े समय उसके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन कर सकें। श्रीमती

सरोजिनी नायडूका भाषण सुननेसे पहले आप लोग तिलक स्वराज्य-कोषमें उदारतासे धन देनेकी कृपा करें।

आज, ६–६–१९२१

७९. टिप्पणियाँ

अफगानी खतरा

कुछ स्वार्थ-साधकोंको अफगानोंके बारेमें नाहक चिल्ल-पों मचाते देखकर श्री विपिनचन्द्र पाल[1] जिस तरह आतंकित हो उठे हैं उसपर, मेरी ही तरह, दूसरे भी कई लोगोंको अचरज हुआ होगा। वे तो पूर्ण स्वराज्यमें विश्वास करते हैं, इसलिए मैं उनसे कहना चाहूँगा कि अपने-आपको लाचार माननेकी भावनासे मुक्त किये बिना हम भारतमें स्वराज्य स्थापित नहीं कर सकते। स्वराज्यका मतलब ही है अफगानी हमले और देशके अन्दर-बाहरके हर खतरेसे निपटनेकी हमारी तैयारी। असहयोगकी समूची रूपरेखाका आधार ही है — दूसरे लोगोंपर विश्वास करना; और अगर वे अविश्वसनीय साबित हों तो स्वयं कष्ट उठाकर उनके छल-कपटका सामना करनेके लिए तैयार हो जाना। इलाहाबादकी हिन्दू-मुस्लिम कान्फ्रेंसमें स्वयं पाल महाशयने डा० सप्रूको[2] जवाब देते हुए जो बात कही थी, मैं उनको उसीकी याद दिलाना चाहता हूँ। उन्होंने बिलकुल सच कहा था कि मेल-मिलाप, सूझ-बूझ और कष्ट सहनेकी जो शक्ति वर्तमान दासताका अन्त करेगी वही हमें इस तरहकी दूसरी सभी बुराइयोंसे निपटनेके योग्य भी बना देगी।

अखिल-इस्लामवादके जिस सिद्धान्तसे पाल महाशय इतना डरते हैं, वह इस मानीमें तो बहुत अच्छा सिद्धान्त है कि एक मुसलमान दुनियाके सभी मुसलमान राज्योंके बीच एकता और भाईचारा चाहता है। लेकिन अगर उसका मंशा तमाम मुसलमान राज्योंको जोड़-बटोरकर दुनियाका शोषण या जबरदस्ती इस्लामका प्रचार करना हो तो वह जरूर एक खतरनाक सिद्धान्त है। बहुतसे समझदार मुसलमान मेरे परिचित हैं और मैं जानता हूँ कि उनमें से कोई भी दुनियाका शोषण या जबरदस्ती इस्लामका प्रचार करनेकी बात नहीं सोचता। निरे भौतिक बलके आधिपत्यसे दुनिया तंग आती जा रही है।

मैं पाल महाशयको यह भी विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैं किसी कौम, फिरके या भावनाओंकी ठकुरसुहाती नहीं करता। मैं गलत भावनाओंको अमान्य करता हूँ और अच्छी भावनाओंको अपनाता हूँ। मैं इस बातमें तनिक भी विश्वास नहीं करता कि संजीदा किस्मके मुसलमान अफगानोंकी हुकूमतको खुशी-खुशी मंजूर कर लेंगे। इस मामलेमें उनका रवैया ठीक संजीदा किस्मके हिन्दुओं-जैसा ही होगा।

१. विपिनचन्द्र पाल (१८५८–१९३२); बंगालके शिक्षाविद्, पत्रकार, वक्ता और राजनीतिक नेता।

२. सर तेजबहादुर अम्बिकाप्रसाद सप्रू (१८७५–१९४९); राजनीतिज्ञ और वकील।

"अफगानी हमलेका हौआ"पर लेख लिखते समय मेरे मनमें केवल दो बातें थीं : एक तो अपने साथीके सही खयालोंका समर्थन करना और दूसरे, स्वार्थ-साधकोंकी चिल्ल-पोंके डरसे देशवासियोंको आगाह करना।

मैं पाल महाशयकी इस बातको बिलकुल नहीं मान सकता कि अफगानोंने हमला कर दिया या उनके हमलेकी महज अफवाह ही उड़ा दी गई तो हमारी मुसलमान आबादीका काफी बड़ा हिस्सा, अगर 'बागी' न हुआ तो कमसे-कम गैरकानूनी हरकतें तो करने ही लगेगा। उलटे मेरा तो यह पक्का विश्वास है कि हिन्दुस्तानका मुसलमान इस बातको बहुत अच्छी तरह जानता है कि आज अगर उसने इस तरहकी कोई बेवकूफी की तो उसका दीनो-ईमान खतरेमें पड़ जायेगा। जैसा कि मौलाना शौकत अली अक्सर कहते रहे हैं, मुसलमान इतने बेवकूफ नहीं हैं कि अहिंसाकी आड़में हिंसा करने लगें। पाल महाशयने यह कहकर कि "हिन्दुओंकी काफी बड़ी संख्या मुसलमानोंसे अपना हिसाब चुकता कर लेना चाहती है" हिन्दुओंके साथ घोर अन्याय किया है। मैं दावेके साथ कह सकता हूँ कि उन्होंने हिन्दुओंके विचारोंको समझनेमें सरासर गलती की है। हिन्दुओंको गायकी रक्षाकी उतनी ही फिक्र है जितनी कि मुसलमानोंको खिला-फतकी। और हिन्दू इस बातको भी बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि गोरक्षाकी उनकी चिर अभीप्सित आकांक्षा मुसलमानोंकी सहायताके बिना कभी पूरी नहीं हो सकती। मैं दावेके साथ कह सकता हूँ कि जिस प्रकार मुसलमानोंको गोरक्षाके मामले-में मदद करते देख हिन्दू उनकी सभी पुरानी गलतियों और गुनाहोंको भूल जायेंगे ठीक उसी तरह हिन्दुओंको इस्लामकी सम्मान-रक्षामें खुशी-खुशी हाथ बँटाते देखकर मुसलमान भी उनके हमेशाके लिए शुक्रगुजार हो जायेंगे।

श्री विपिनचन्द्र पालकी इस धारणाको माननेके लिए मैं कदापि तैयार नहीं हूँ कि मुसलमान और हिन्दू अफगानोंके हमलेका स्वागत करेंगे। मौलाना मुहम्मद अलीके कल्पित इरादोंका जैसा विरोध हुआ है उससे तो हर किसीको यह विश्वास हो जाना चाहिए कि भारत कभी अफगानी हमलेको बरदाश्त नहीं करेगा।

पाल महाशयका ऐसा विचार है कि अगर अमीरने हमला किया और हमने सरकारकी मदद नहीं की तो यहाँ क्रांति हो जायेगी। मेरा खयाल कुछ दूसरा है। अगर असहयोग-रत भारतने मदद नहीं की तो सरकार यहाँ की जनतासे समझौता कर लेगी। मैं अंग्रेजोंको इतना नासमझ और बिना सूझबूझवाला नहीं मानता कि वे खिलाफत और पंजाबके घाव भरकर भारतसे समझौता करनेके बदले इसे छोड़कर चले जायेंगे। मगर मैं इस बातको भी बहुत अच्छी तरह जानता हूँ कि अभी भारत उतनी ताकत अपनेमें पैदा नहीं कर पाया है कि दूसरोंको उसकी बातपर ध्यान देना ही पड़े। मैंने तो सिर्फ एक सम्भावनाकी ओर इशारा किया है।

पाल महाशयको लालाजीकी[1] और मेरी शिमलावाली घोषणा और उससे पहले-वाली घोषणाओंमें फर्क दिखाई देता है। लेकिन मुझे तो दोनोंमें कोई फर्क नजर नहीं आता; मैंने अथवा लालाजीने कभी यह नहीं कहा कि हम अफगानी हमलेका स्वागत

१. लाला लाजपतराय।

करते हैं। तो मैं एक बार फिर अपने दृष्टिकोणको बहुत स्पष्ट शब्दोंमें रख देना उचित समझता हूँ :

(१) मैं नहीं मानता कि अफगान भारतपर हमला करना चाहते हैं।

(२) मैं मानता हूँ कि सरकार अफगानी हमलेका मुकाबला करनेके लिए पूरी तरह तैयार है।

(३) मैं दुःखके साथ मंजूर करता हूँ कि अगर भारतपर अफगानोंने हमला किया तो सभी राजा-महाराजा सरकारकी बिना शर्त मदद करेंगे।

(४) मैं यह भी मानता हूँ कि हम लोगोंमें अभीतक इतनी पस्ती, आत्मविश्वास-की इतनी कमी, अफगानोंके इरादोंके बारेमें इतने सन्देह और हिन्दू-मुसलमानोंमें पारस्परिक अविश्वास इतना अधिक है कि बहुत-से लोग तो मारे डर और घबराहटके ही सरकारकी मदद करनेको दौड़ पड़ेंगे और इस तरह देशकी गुलामीकी जंजीरोंको और भी कस देंगे।

(५) सैद्धान्तिक रूपसे तो भारतपर होनेवाले हमले और खिलाफतकी खातिर ब्रिटिश सरकारपर किये जानेवाले हमलेमें भेद किया जा सकता है; पर व्यावहारिक रूपसे मैं इस बातको नहीं मानता कि अफगान लोग सरकारको तंग करनेके इरादेसे भारतपर हमला करेंगे और फतह मिल जानेपर यहाँ अपनी हुकूमत कायम करनेका लोभ नहीं करेंगे।

(६) अपनी इस मान्यताके बावजूद मैं मानता हूँ कि असहयोगी जिस सरकार-को मिटाना या सुधारना चाहता है उसकी बिना शर्त सहायता उसके धर्मके विप-रीत है।

(७) निष्ठापूर्वक युद्धका विरोध करनेवाले गिने-चुने लोग चाहे तत्कालीन घटनाक्रमको प्रभावित न कर सकें, परन्तु वे बहादुर भारतके फलने-फूलनेका बीज तो बो ही देंगे।

(८) अफगान लोगोंके हाथों भारत तबाह हो जाये, यह मुझे मंजूर है; लेकिन अफगानी हमलावरोंसे इज्जत देकर आजादीका सौदा किया जाये, यह मुझे कभी बरदाश्त न होगा। जिस सरकारको खिलाफत और पंजाबके रिसते घाव कुरेदते रहनेका जरा भी पछतावा नहीं है उससे भारतकी रक्षा करवाना, भारतकी इज्जत बचना है।

(९) फिर भी अंग्रेज जातिमें मेरी इतनी आस्था जरूर है कि हमारे द्वारा आव-श्यक मात्रामें संकल्प-बलका प्रदर्शन और प्रचुर परिमाणमें आत्म-बलिदान किये जानेका उनपर ठीक प्रभाव होगा; उनकी प्रतिक्रिया अनुकूल होगी। इतिहासके अपने ज्ञानके आधारपर मैं जानता हूँ कि शुद्ध न्यायकी बिलकुल सीधी-सादी बातका उनपर कोई असर नहीं होता। उनको वह कोई हवाई-खयाल सा लगता है। लेकिन जब उसी न्यायकी बातके पीछे शक्ति भी होती है तब उनकी दूरदर्शिता काम करने लगती है। शक्ति होनी चाहिए; फिर वह निरी भौतिक शक्ति है या आत्मिक शक्ति, इसमें वे कोई अन्तर नहीं करते।

(१०) अफगानोंको यह जतला देना हर असहयोगीका कर्त्तव्य है कि उसका पक्का विश्वास है कि असहयोग खिलाफतको युद्धके पहलेका उसका दर्जा दिलानेमें सर्वथा समर्थ है और यह भी कि भारत उनका सशस्त्र हस्तक्षेप नहीं चाहता। अफगानोंको यह भी जतला दिया जाना चाहिए कि ब्रिटिश सरकारके साथ भारतको गुलामीमें रखनेवाले करारसे इनकार करनेपर असहयोगी उनकी सराहना करेंगे और यह भी कि अपने पड़ोसियोंके प्रति भारतका मैत्रीको छोड़ और कोई भाव नहीं है।

अंग्रेजीकी पढ़ाई

पाठक अन्यत्र देखेंगे मैंने डा० ठाकुर[1] द्वारा की गई असहयोगकी टीकाका जवाब[2] देनेकी विनम्र कोशिश की है। उसके बाद शान्तिनिकेतनके व्यवस्थापकके नाम लिखा उनका पत्र मुझे पढ़नेको मिला। मुझे यह देखकर दुःख हुआ कि वह पत्र तथ्योंको जाने बिना गुस्सेमें लिखा गया है। लन्दनमें कुछ विद्यार्थियोंने श्री पियर्सन[3], जो बहुत अच्छे और सच्चे अंग्रेज हैं, की बात सुननेसे इनकार कर दिया, यह जानकर कवि रोषमें आ गये। और उसी प्रकार इस बातपर भी वे रुष्ट हुए हैं कि मैंने महिलाओं को अंग्रेजीकी पढ़ाई बन्द करनेकी सलाह दी है। अंग्रेजीकी पढ़ाई बन्द करनेके मैंने जो कारण दिये हैं कविने उन्हें अपने लिए मान लिया।

क्या ही अच्छा होता कि वे विद्यार्थियोंकी अभद्रताको असहयोगके मत्थे न मढ़ते। कविको भूलना नहीं चाहिए था कि असहयोगी एन्ड्रचूज साहबको श्रद्धेय मानते हैं, स्टोक्सकी इज्जत करते हैं और उन्होंने नागपुरमें वैजवुड, बैन स्पूर और हॉल्फोर्ड नाइट आदिके भाषण पूरे आदर-मानके साथ सुने थे; जब एक अंग्रेज हाकिमने मौलाना मुहम्मद अलीको दोस्ताना तौरपर चायकी दावत दी तो उन्होंने उसे मंजूर किया और हकीम अजमलखाँ[4]-जैसे कट्टर असहयोगीने अपने तिब्बिया कालेजमें लॉर्ड और लेडी हार्डिंगके चित्रोंका अनावरण-समारोह किया तथा उसमें कई अंग्रेज दोस्तोंको बुलाया। कितना अच्छा होता अगर कविने अपने मनमें वर्तमान आन्दोलनके सही और धार्मिक स्वरूपके बारेमें सन्देहके दैत्यको एक क्षणके भी लिए न उभरने दिया होता; और काश उन्होंने विश्वास किया होता कि यह आन्दोलन राष्ट्रीयता और देशभक्ति-जैसे पुराने शब्दोंको नई अर्थ-गरिमासे मंडित कर उनके भाव-क्षेत्रको कितना विस्तृत कर रहा है।

अगर वे कवि-कल्पनासे काम लेते तो स्वयं देख लेते कि भारतीय नारियोंके मनको कुंठित करनेकी बात तो मैं कभी सोच ही नहीं सकता और न मैं अपने-आपमें अंग्रेजी पढ़ने-लिखनेका ही विरोधी हूँ; और उन्हें यह बात भी अवश्य याद आ जाती

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुर (१८६१–१९४१)।

२. देखिए अगला शीर्षक।

३. विलियम विंस्टेनली पियर्सन; सी० एफ० एन्ड्रचूजके सहयोगी, जिन्होंने बंगालमें मिशनरीके रूपमें काम किया था; वे कुछ समयतक शान्तिनिकेतनमें अध्यापक भी रहे थे।

४. १८६५–१९२७; प्रसिद्ध हकीम और राजनीतिज्ञ जिन्होंने खिलाफत आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया; १९२१–२२ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष।

कि मैं तो जीवन-भर नारियोंकी पूर्ण मुक्तिके लिए लड़ता रहा हूँ; और तब वे मेरे साथ ऐसा अन्याय न करते जैसा कि, मैं जानता हूँ. वे जान-बूझकर तो अपने बड़ेसे-बड़े शत्रुके साथ भी नहीं करेंगे। कविको शायद यह मालूम नहीं है कि आज अंग्रेजी सिर्फ अपने व्यापारिक और तथाकथित राजनैतिक महत्त्वके कारण ही पढ़ी जाती है। हमारे लड़के-बच्चे बिलकुल ठीक ही सोचते हैं कि आजकी परिस्थितियोंमें अंग्रेजी पढ़े बिना उन्हें सरकारी नौकरियाँ नहीं मिल सकतीं। लड़कियोंको शादीके परवानेके तौरपर अंग्रेजी पढ़ाई जाती है। मै ऐसी बहुत-सी औरतोंको जानता हूँ जो सिर्फ अंग्रेजोंसे बात करनेके ही लिए उसे सीखना चाहती हैं। मैं ऐसे पतियोंको भी जानता हूँ जिन्हें इस बातका मलाल है कि उनकी बीवियाँ उनसे और उनके दोस्तोंसे अंग्रेजीमें बात नहीं कर पातीं। मैं ऐसे परिवारोंको भी जानता हूँ जहाँ अंग्रेजीको मातृभाषा बनाया जा रहा है। सैकड़ों नौजवानोंका ऐसा विश्वास है कि अंग्रेजीके ज्ञानके बिना भारत स्वतन्त्र हो ही नहीं सकता। यह बीमारी समाजमें इतनी गहरी पैठ चुकी है कि आम तौरपर शिक्षाका मतलब अंग्रेजीके ज्ञानसे ही लगाया जाता है। मैं इन सब बातोंको हमारी गुलामी और अधःपतनका लक्षण मानता हूँ। देशी भाषाओंका इस तरह कुचला, दबाया और वंचित रखा जाना मैं बरदाश्त नहीं कर सकता। न मैं यही बरदाश्त कर सकता हूँ कि माता-पिता अपने बच्चोंको या पति अपनी पत्नियोंको अपनी भाषाको छोड़कर अंग्रेजीमें पत्र लिखें। मैं अपने-आपको खुली हवाका उतना ही बड़ा उपासक मानता हूँ जितना कि कवि स्वयंको समझते हैं। मैं अपने घरको चारों ओरसे दीवारोंसे घेर नहीं लेना चाहता और न खिड़कियोंको बन्द कर रखना चाहता हूँ। मैं तो चाहता हूँ कि सब देशोंकी संस्कृतियाँ मेरे घरके चारों ओर अधिकसे-अधिक निर्बाध रूपसे प्रवाहित हो सकें। अलबत्ता मैं यह कभी नहीं चाहूँगा कि उनके तेज झोके मेरे पाँव ही उखाड़ दें। मैं किसी दूसरेके घरमें एक अवांछनीय मेहमान, भिखारी या गुलामके रूपमें रहना भी बरदाश्त नहीं करूँगा। मैं अपनी बहनोंपर झूठी शान और सन्दिग्ध सामाजिक लाभके लिए अंग्रेजीकी पढ़ाईका बोझा लादनेको बिलकुल तैयार नहीं हूँ। साहित्यमें रुचि रखनेवाले हमारे युवक और युवतियाँ खुशीसे अंग्रेजी और विश्वकी अन्य भाषाएँ सीखें और बसु, राय अथवा स्वयं कविकी भाँति अपने ज्ञानसे भारत और विश्वको लाभान्वित करें। मुझे इससे अपार प्रसन्नता ही होगी। लेकिन मैं इसे कभी ठीक नहीं मान सकता कि हिन्दुस्तानी अपनी मातृभाषाको भुला दे, उसकी उपेक्षा करे, उसके लिए लज्जित हो या यह महसूस करे कि वह अपन उत्कृष्ट विचारोंको अपनी भाषामें व्यक्त नहीं कर सकता। मेरा धर्म जेलकी तंग कोठरी-जैसा संकुचित और अनुदार नहीं है। इसमें तो भगवान्‌की सारी सृष्टिके लिए स्थान है। लेकिन अविनय, जाति, धर्म अथवा वर्ण-गत अहंकारके लिए यहाँ कोई स्थान नहीं है। मुझे इस बातका हार्दिक दुःख है कि कविने सुधार, शुद्धीकरण और मानवतामें प्रतिफलित होनेवाली देशभक्तिके इस महान् आन्दोलनके अभिप्रायको गलत समझ लिया। अगर वे धीरज रखें तो वे देखेंगे कि उन्हें अपने देशवासियोंके कारण लज्जित या दुःखित नहीं होना पड़ा है। मैं विनयपूर्वक कविको सचेत किया चाहता हूँ कि वे आन्दोलनकी विकृतियोंको ही आन्दोलन समझनेकी भूल न करें। लन्दनमें विद्यार्थियोंके

अशोभन आचरण और भारतमें मालेगाँवकी अशुभ घटनासे असहयोगकी नाप-जोख करना उतना ही गलत है जितना कि डायरों या ओ'डायरोंके पैमानेसे समूची अंग्रेज जातिकी।

अली बन्धुओंकी सफाई

अपने कुछ भाषणोंके बारेमें अली बन्धुओंने जो छोटा-सा बयान दिया है, मैं जानता हूँ कि उसकी सार्वजनिक रूपसे चाहे प्रतिकूल आलोचना न हो पर आपसी चर्चाओंमें तो जरूर ही होगी। इसलिए उनकी सफाईको अच्छी तरह समझ लेना जरूरी है। शुरूसे सारी बातको तो मैं अभी नहीं उठा सकता, सिर्फ इतना कह सकता हूँ कि जब दो-चार दोस्तोंने उनके भाषणोंके कुछ हिस्सोंकी ओर मेरा ध्यान खींचा तो मैंने महसूस किया कि उनमें उग्रता है और उससे हिंसाको भड़कानेवाला मतलब भी निकाला जा सकता है। उनके गिरफ्तार किये जानेकी अफवाह भी काफी गरम थी। गलत समस्याको उठाकर और खास तौरपर अपने मत यानी अहिंसाका खण्डन करके किसी भी असहयोगीका जेल जाना अनुचित है। मैंने तुरन्त ही उनका ध्यान भाषणोंके आपत्तिजनक माने जानेवाले उन हिस्सोंकी ओर खींचा और यह सलाह दी कि अपने दृष्टिकोणका स्पष्टीकरण करते हुए उन्हें फौरन बयान देना चाहिए। क्षणिक जोशमें आकर आदमी जिस भाषाका इस्तेमाल कर बैठता है उससे ऐसा मतलब भी निकल सकता है, जो कभी उसका मंशा न रहा हो। जब आदमी कानूनके डरकी परवाह नहीं करता और सिर्फ अपनी अन्तरात्मासे डरता है, तब तो उसे दुहरी सावधानी बरतनी चाहिए। लेकिन पूरी तरह सावधान रहनेके बावजूद कई बार आदमी चूक जाता है। अली बन्धुओंके कन्धोंपर कम बोझा नहीं है। इस्लामकी प्रतिष्ठाका सवाल उनकी सबसे बड़ी जिम्मेवारी है। व्यवहारमें सचाई और ईमानदारी तथा आचरणमें अत्यधिक विनम्रता और उच्च कोटिके साहसको पूरी तरह अपना कर ही वे अपनी इस जिम्मेदारीको ठीक-ठीक निभा सकते हैं। मुझे उनकी ईमानदारी, सचाई, निडरता, साहस और विनम्रतापर पूरा भरोसा है और हमारी दोस्तीका, जिसे कि गठबन्धनके नामसे पुकारा जाता है, आधार भी उनके ये गुण ही हैं। आज देशमें सबसे अधिक निन्दा भी इन्हीं कारणोंसे की जाती है। उनकी नीयतपर हर तरहके सन्देह किये जाते हैं; उनके इरादोंको दुर्भावनापूर्ण बताया जाता है। यहाँतक कहा जाता है कि उन्होंने मुझे अपनी कठपुतली बना रखा है। मुझे विश्वास है कि ऐसे मिथ्या आरोप देर तक टिके नहीं रह सकते; आगे-पीछे झूठ क्या है और सच क्या, यह साबित हो ही जायेगा। लेकिन जरूरी था कि जल्दबाजीमें बगैर सोचे-समझे वे जो-कुछ कह गये हैं उसका उपयोग उनकी प्रतिष्ठा और सदाशयताको क्षति पहुँचानेके लिए न करने दिया जाये। आत्मसम्मानी व्यक्तिके लिए उसकी नीयतपर सन्देह करनेसे अधिक चोट पहुँचानेवाली बात और कोई नहीं हो सकती। अपनेको लांछित होनेसे बचाना खुद उनके अपने हाथमें है, इसलिए मैंने उन्हें वह बयान देनेकी सलाह दी जो अभी-अभी छपा है। मेरी रायमें उनके इस बयानसे खिलाफतकी जिस लड़ाईकी वे रहनुमाई कर रहे हैं उसका दर्जा और रुतबा ऊँचा ही हुआ है। दूसरे कार्यकर्त्ताओंके लिए उन्होंने एक मिसाल

पेश की है। महज वाहवाही लूटनेके लिए हमें जेल नहीं जाना है। यदि कोई ऋजुताको सींखचोंमें बन्द करे तो जेल मुक्ति और प्रतिष्ठाका सिंहद्वार बन जाता है। अली बन्धुओंका बयान हम सब लोगोंके लिए, जो सत्य और स्वतन्त्रताकी लड़ाई लड़ रहे हैं, इस बातकी चेतावनी है कि हमारी भाषा बिलकुल नपी-तुली और दुरुस्त होनी चाहिए। अच्छा तो यही होगा कि हम लिखित भाषण पढ़ें अथवा भाषण ही न दें। बहुत ही ऊँचे विचारोंके एक मुसलमान सज्जन हैं, जिन्होंने अपने-आपपर इस तरहकी बन्दिश लगा ली है। वे हैं मौलाना अब्दुल बारी साहब।[1] वे बड़े भावुक हैं और भाषण करते समय जोशमें आकर ऐसी भाषाका इस्तेमाल कर जाते हैं, अन्यथा जिसके उपयोग करनेकी बात वे कभी सोच भी नहीं सकते। इसलिए दोस्तोंके कहनेपर उन्होंने अपने लिए नियम बना लिया है कि किसी सार्वजनिक सभामें भाषण नहीं देंगे। इस शानदार मिसालका जिक्र मैं इसलिए कर रहा हूँ कि हम सब भी वैसा ही करें। अली बन्धुओंने अपने स्पष्टवादी, सीधे-सच्चे बयानसे हमें रास्ता दिखा दिया है। अच्छा तो यही होगा कि हम भाषण न दें; और देना ही पड़े तो हर शब्द तोल-तोलकर मुँहसे निकालें, ताकि कहीं कोई ऐसी बात न कह जायें जो हम कहना न चाहते हों और जिससे हमारे काम और हमारे आन्दोलनको नुकसान पहुँचे।

पारसियोंकी दानशीलताकी एक और मिसाल

दक्षिण आफ्रिकाके श्री रुस्तमजी जीवनजी घोरखोदूने गुजरातके अकाल-ग्रस्त लोगोंमें चरखे बाँटनेके लिए तारसे बारह हजार रुपये मेरे पास भेजे हैं। पाठकोंको याद होगा कि इससे पहले मदरसोंके लिए वे चालीस हजार रुपयेका शानदार दान दे चुके हैं। यह बारह हजार रुपया ठीक मौकेपर आया है, क्योंकि अकाल-समितिको पैसोंकी बड़ी जरूरत थी। जो लोग तिलक स्वराज्य-कोषमें राजनीतिक कारणोंसे चन्दा नहीं दे सकते, मैं उम्मीद करता हूँ कि वे श्री रुस्तमजीकी शानदार मिसालसे प्रेरणा लेंगे और बिना हिचकिचाहटके अकाल सुरक्षा-कोषमें मदद करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १–६–१९२१

१. १८३८–१९२६; लखनऊके एक राष्ट्रवादी मुसलमान; जिन्होंने खिलाफत आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया और अपने अनुयायियोंसे गो-हत्या न करनेका अनुरोध किया। १९२१ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष।

८०. कविवरकी चिन्ता

लॉर्ड हार्डिंगने डाक्टर रवीन्द्रनाथ ठाकुरको एशियाका महाकवि कहा था। पर अब श्री रवीन्द्रबाबू न सिर्फ एशियाके बल्कि संसार-भरके महाकवियोंमें गिने जा रहे हैं। यदि अभी नहीं तो बहुत जल्द उनका नाम संसार-भरके महाकवियोंमें गिना जाने लगेगा। दिनपर-दिन उनकी प्रतिष्ठा बढ़नेसे उनकी जिम्मेदारी भी बढ़ती जा रही है। समूचे संसारके लिए भारतके पास जो सन्देश है उसकी कवित्वपूर्ण व्याख्या करके भारतकी उन्होंने सबसे बड़ी सेवा की है। इसीलिए रवीन्द्रबाबूको सच्चे हृदयसे इस बातकी चिन्ता है कि भारतवासी भारतमाताके नामसे कोई झूठा या सारहीन सन्देश संसारको न सुनायें। हमारे देशका नाम न डूबने पाये, इस बातकी चिन्ता करना रवीन्द्रबाबूके लिए स्वाभाविक ही है। उन्होंने लिखा है, "मैंने इस आन्दोलनके स्वरके साथ अपना स्वर मिलानेकी भरसक कोशिश की पर खेदके साथ स्वीकार करना पड़ता है कि इसमें मुझे निराश होना पड़ा।" उन्होंने स्वीकार किया है कि वे इस गुत्थीमें उलझकर रह गये हैं। उन्होंने यह भी लिखा है कि असहयोग आन्दोलनके शोरगुल में उनको अपनी हृदय-वीणाके योग्य कोई स्वर नहीं मिल सका। तीन जोरदार पत्रोंमें[1] उन्होंने इस आन्दोलनके सम्बन्धमें अपने सन्देह प्रकट किये हैं। अन्तमें वे इस नतीजेपर पहुँचे हैं कि असहयोगका आन्दोलन इतना गम्भीर और गौरवपूर्ण नहीं है कि वह उस भारतवर्षके योग्य हो सके जिसे वे अपनी कल्पनाका आदर्श समझे हुए हैं। उनका मत है कि असहयोगका सिद्धान्त मात्र नकारात्मकता और नैराश्यका सिद्धान्त है। रवीन्द्रबाबूकी समझमें यह सिद्धान्त अलगाव, भेदभाव और अनुदारतासे भरा हुआ है।

रवीन्द्रबाबूके हृदयमें भारतवर्षकी प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिए जो चिन्ता है उसपर हर हिन्दुस्तानीको गर्व होना चाहिए। यह बहुत अच्छा हुआ कि उन्होंने अपना सन्देश ऐसी सुन्दर और सरल भाषामें प्रकट करके हमारे पास भेजा है।

मैं रवीन्द्रबाबूके सन्देहोंका उत्तर बड़ी नम्रताके साथ देनेका प्रयत्न करूँगा। मैं रवीन्द्रबाबू या उन लोगोंको जिनके हृदयपर रवीन्द्रबाबूकी कवित्वपूर्ण भाषाका प्रभाव पड़ा है शायद विश्वास न दिला सकूँ पर मैं उनको और कुल भारतवर्षको यह विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि असहयोगकी संकल्पनामें वैसा कुछ भी नहीं जिसकी उनको आशंका है। मैं उन्हें यह विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि यदि उनके देशने असहयोगके सिद्धान्तको स्वीकार किया है तो इसमें उनके लिए लज्जाकी कोई बात नहीं है। अगर अमल करनेपर अन्ततः यह सिद्धान्त असफल सिद्ध हो जाये तो यह सिद्धान्तका दोष नहीं कहा जायेगा, क्योंकि अगर सचाईको अमली रूप देनेवाले सफल न हों तो इसमें सचाईका कोई दोष नहीं। यह अवश्य हो सकता है कि असहयोग आन्दोलन अपने उचित समयके पहले ही शुरू हो गया हो। तब हिन्दुस्तान और संसार दोनोंको उस

१. देखिए परिशिष्ट ४।

उचित समयकी प्रतीक्षा करनी चाहिए। पर हिन्दुस्तानके सामने हिंसा और असहयोग इन दोमें से किसी एकको चुननेके अलावा कोई मार्ग नहीं रह गया था।

रवीन्द्रबाबूको इस बातकी भी शंका नहीं करनी चाहिए कि असहयोग आन्दोलन भारतवर्ष तथा यूरोपके बीच एक बड़ी दीवार खड़ी करना चाहता है। इसके विरुद्ध असहयोग आन्दोलनका मन्शा यह है कि पारस्परिक सम्मान और विश्वासकी बुनियाद-पर बिना किसी दबावके सच्चे, स्वैच्छिक तथा सम्मानपूर्ण सहयोगके लिए जमीन तैयार की जाये। वर्तमान संघर्ष विवशतापूर्ण सहयोग, एकतरफा गठजोड़ और सभ्यताके नामपर किये जा रहे शोषणके आधुनिक तरीकोंको सशस्त्र ढंगसे थोपनेके विरुद्ध चलाया जा रहा है।

असहयोग आन्दोलन इस बातके विरोधमें किया गया है कि बिना हमारी इच्छा और जानकारीके हमसे बुराईमें सहयोग कराया जा रहा है।

रवीन्द्रबाबूको अधिकतर चिन्ता विद्यार्थियोंके बारेमें है। उनका मत है कि जबतक दूसरे स्कूल न खुल जायें तबतक उनसे सरकारी स्कूल छोड़नेको न कहा जाये। इस बातपर मेरा उनसे मतभेद है। मैंने कोरी साहित्यकी शिक्षाको कभी परम आवश्यक नहीं समझा है। अनुभवसे मुझे यह मालूम हो गया है कि अकेली साहित्य-शिक्षासे मनुष्यके चरित्रकी रत्ती-भर भी उन्नति नहीं होती और चरित्र-निर्माणसे साहित्यकी शिक्षाका कोई सम्बन्ध नहीं है। मेरा पक्का विश्वास है कि सरकारी स्कूलोंने हमें बुजदिल, लाचार और अविश्वासी बना दिया है। जिसके सबबसे हमारे हृदयमें असन्तोष तो उत्पन्न हो गया है पर उस असन्तोषको दूर करनेके लिए कोई दवा हमें नहीं बतलाई गई। इससे हमारे हृदयोंमें निराशाने घर कर लिया है। सरकारी स्कूलोंका उद्देश्य हमें क्लर्क और दुभाषिया बनाना था और वह उद्देश्य पूरा हुआ है। किसी सरकारकी प्रतिष्ठा तभी कायम रहती है जब प्रजा स्वयं अपनी इच्छासे उस सरकारसे सहयोग करती है। अगर सरकार हमें गुलाम बनाये हुए है और ऐसी सरकारके साथ सहयोग करना और उसे सहायता देना अनुचित है तो हमारे लिए यह जरूरी है कि हम उन संस्थाओंसे अपना नाता तोड़ लें जिनमें हम स्वयं अपनी इच्छासे अबतक सहयोग देते रहे हैं। राष्ट्रकी आशाका आधार उसके नौजवान ही होते हैं। मेरा मत है, अगर हमें इस बातका पता लग गया है कि यह सरकार पूरी तरहसे या मुख्यतः बुराईसे भरी हुई है तो अपने लड़कोंको उसके स्कूलों और कालेजोंमें भेजना हमारे लिए पाप होगा।

मैंने जो प्रस्ताव रखा है उसका खण्डन इस बातसे नहीं होता कि अधिकतर विद्यार्थी प्रारम्भिक जोश ठण्डा होते ही अपने स्कूलोंमें फिर वापस चले गये। उनका अपनी बातसे टल जाना इस बातका सबूत नहीं है कि हमारा यह प्रस्ताव गलत है, बल्कि वह इस बातका सबूत है कि हम किस कदर गिर गये हैं। अनुभव यह बताता है कि राष्ट्रीय स्कूलोंके खुलनेपर बहुत ज्यादा विद्यार्थी उनमें भरती नहीं हुए। जो विद्यार्थी सच्चे और अपने विश्वासके पक्के थे वे बिना कोई राष्ट्रीय स्कूल खुले सरकारी स्कूलोंसे बाहर निकल आये। मेरा पक्का विश्वास है कि जिन विद्यार्थियोंने पहले-पहल स्कूल-कालेज छोड़े हैं उन्होंने देशकी बहुत बड़ी सेवा की है।

वास्तवमें रवीन्द्रबाबू मूलतः असहयोग-सिद्धान्तके विरुद्ध हैं। ऐसी हालतमें अगर उन्होंने स्कूल और कालेजोंसे विद्यार्थियोंके निकलनेका विरोध किया तो कोई बड़ी बात नहीं है। उनका ऐसा करना स्वाभाविक ही है। रवीन्द्रबाबूके हृदयको ऐसी हरएक वस्तुसे धक्का पहुँचता है जिसका उद्देश्य खण्डन करना हो। उनकी आत्मा धर्मकी उन आज्ञाओंके विरोधमें उठ खड़ी होती है जो हमें किसी वस्तुका खण्डन करनेके लिए कहती हैं। मैं उनका मत उन्हींके अनूठे शब्दोंमें आपके सामने रखता हूँ: "एक महाशयने वर्तमान आन्दोलनके पक्षमें मुझसे कई बार यह कहा है कि प्रारम्भमें किसी उद्देश्यको स्वीकार करनेकी अपेक्षा उसे अस्वीकार करनेका भाव ही व्यक्तिमें अधिक प्रबल रहता है। यद्यपि मैं यह मानता हूँ कि वास्तवमें बात ऐसी ही है, पर मैं इसे सचाई नहीं मान सकता . . भारतवर्षमें ब्रह्मविद्याका उद्देश्य मुक्ति या मोक्ष है पर बौद्ध-धर्मका उद्देश्य निर्वाण प्राप्त करना है। मुक्ति हमारा ध्यान सत्यके मण्डनात्मक पक्षकी ओर और निर्वाण उसके खण्डनात्मक पक्षकी ओर खींचता है। इसीलिए बुद्धने इस बातपर जोर दिया कि संसार दुःखमय है तथा उससे छुटकारा पाना हमारा धर्म है, और ब्रह्मविद्याने इस बातपर जोर दिया कि संसार आनन्दमय है और उस आनन्दको प्राप्त करना हमारा परम कर्त्तव्य है।" इन वाक्यों और इसी तरहके दूसरे वाक्योंसे पाठकगण रवीन्द्रबाबूकी मानसिक वृत्तिका पता लगा सकते हैं। मेरी विनम्र रायमें किसी बातको अस्वीकार करना उतना ही बड़ा आदर्श हो सकता है जितना किसी बातको स्वीकार करना। असत्यको अस्वीकार करना भी उतना ही जरूरी है जितना कि सत्यको स्वीकार करना। सभी धर्म हमें यही शिक्षा देते हैं कि दो विरोधी शक्तियाँ हमपर अपना प्रभाव डालती रहती हैं, और मनुष्य जीवनके प्रयत्नोंकी सार्थकता इसी बातमें है कि वह जो वस्तुएँ स्वीकार करने योग्य हैं उन्हें स्वीकार करता रहे और जो अस्वीकार करने योग्य हैं उन्हें अस्वीकार करता रहे। बुराईके प्रति असहयोग करना हमारा उतना ही बड़ा कर्त्तव्य है जितना कि भलाईके साथ सहयोग करना। मैं साहसपूर्वक कह सकता हूँ कि रवीन्द्रबाबूने निर्वाणको केवल एक खण्डनात्मक या अभावसूचक दशा बतलाकर बौद्धधर्मके साथ अनजाने ही बड़ा अन्याय किया है। मैं साहसके साथ यह भी कह सकता हूँ कि जिस हदतक निर्वाण एक अभावात्मक दशा है उसी हदतक मुक्ति भी अभावकी सूचक अवस्था है। शरीरके बन्धनसे छुटकारा पाना या उस बन्धनका बिलकुल नाश कर देना आनन्द प्राप्त करना है। मैं अपनी दलीलके इस हिस्सेको खत्म करते हुए इस बातकी ओर ध्यान खींचना चाहता हूँ कि उपनिषदोंके रचयिताओंने ब्रह्मका सबसे अच्छा वर्णन 'नेति-नेति' कहकर ही किया है।

इसलिए मेरी समझमें रवीन्द्रबाबूको असहयोग आन्दोलनके अभावात्मक या खण्डनात्मक पक्षसे चौंकनेकी कोई जरूरत न थी। हम लोगोंने 'नहीं' कहनेकी शक्ति बिलकुल गँवा दी है। सरकारके किसी काममें 'नहीं' कहना पाप और अभक्ति गिना जाने लगा था। बोनेके पहले निराई करना बहुत जरूरी होता है, जान-बूझकर पक्के इरादेके साथ असहयोग करना वैसा ही है। खेतीके लिए बुआई जितनी जरूरी है उतनी ही निराई भी। हर एक किसान जानता है कि फसलके बढ़ते रहनेकी अवधिमें भी खुरपीका उपयोग करते रहना जरूरी है। इस असहयोग आन्दोलनके रूपमें राष्ट्रकी ओरसे सरकार-

को इस बातका निमन्त्रण दिया गया है कि वह राष्ट्रके साथ राष्ट्रकी अपनी शर्तोंपर सहयोग करे, जो कि हर राष्ट्रका अधिकार और हर सरकारका कर्त्तव्य है। असहयोग आन्दोलन राष्ट्रकी ओरसे इस बातकी पूर्व-सूचना है कि वह अब और ज्यादा दिनोंतक दूसरोंके संरक्षणमें रहकर सन्तोष नहीं करेगा। हिन्दुस्तानने तलवार या मारकाटके अस्वाभाविक और अधार्मिक सिद्धान्तके स्थानपर असहयोगके निर्दोष, स्वाभाविक और धार्मिक सिद्धान्तको ग्रहण किया है। अगर हिन्दुस्तान कभी उस स्वराज्यको प्राप्त करेगा, जिसका स्वप्न रवीन्द्रबाबू देख रहे हैं, तो वह सिर्फ अहिंसापूर्ण असहयोग आन्दोलनके द्वारा ही प्राप्त करेगा। वे संसारको अपना शान्तिका सन्देश सुनायें और इस बातका भरोसा रखें कि हिन्दुस्तान अगर अपनी बातका धनी बना रहा तो अपने असहयोग द्वारा उनके सन्देशको अवश्य सच्चा साबित करेगा। रवीन्द्रबाबू जिस देशभक्तिके लिए उत्सुक हैं उसे अमली रूप देनेके लिए ही यह आन्दोलन खड़ा किया गया है। यूरोपके पैरोंके नीचे पड़ा हुआ भारत संसारको कोई आशा नहीं बँधा सकता। स्वतन्त्र और जाग्रत भारत ही दुःखी संसारको शान्ति और सुखका सन्देशा सुना सकता है। असहयोग आन्दोलन एक ऐसा मंच तैयार करनेके लिए ही चलाया गया है जिसपर खड़े होकर भारत अपना सन्देश सारे संसारको सुना सके।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १–६–१९२१

८१. खिलाफत और अहिंसा

'सर्वेंट ऑफ इंडिया' के श्री वाज़ने अपने साप्ताहिक पत्रके पिछली ५ मईके अंकमें प्रकाशित श्री जकरियाके एक लेखकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित करते हुए मुझसे कहा है कि मैं उस लेखकके दृष्टिकोणसे खिलाफतके सवालपर विचार करूँ। श्री जकरियाने अपने उस विस्तृत लेखमें प्रश्नको इस तरह पेश किया है:

> **अहिंसाके सिद्धान्तका कोई भी प्रचारक अहिंसाके सर्वथा विरोधी खिलाफतके सिद्धान्तका समर्थन कैसे कर सकता है? मुझे इस बातसे कतई मतलब नहीं कि खिलाफतके या अहिंसाके सिद्धान्तमें कितनी सच्चाई है। पर मैं तो यह कहता हूँ कि ये दोनों एक-दूसरेका खण्डन करते हैं; और मैं अगर पूरी ईमानदारीसे कुछ चाहता हूँ तो सिर्फ यही कि सभी पक्ष इस समस्याके बारेमें अपने विचार स्पष्ट रखें। मानवताको हालमें जिस विपत्तिका सामना करना पड़ा है उसका सबसे बड़ा कारण यही अस्पष्ट और उलझी हुई विचार-पद्धति और उसके फलस्वरूप सिद्धान्तोंके साथ समझौते करनेकी प्रवृत्ति ही है।**

आगे लेखकने भूतपूर्व प्रेसीडेंट विल्सनके पतनका उदाहरण पेश करते हुए कहा है:

> **क्या पूर्वी जगत्का महान् सत्याग्रही इस चेतावनीपर कान देगा? क्या वह अपने समूचे जीवनके सिद्धान्तके प्रति सच्चा रहेगा? . . . क्या वह अपने**

सिद्धान्तके प्रति सच्चा रहनेके बजाये दूसरे सिद्धान्तोंके साथ समझौता कर लेगा? निःसन्देह हिन्दू-मुस्लिम मैत्री एक बेशकीमत चीज है लेकिन क्या इसकी खातिर वह अपने सिद्धान्तके एक सर्वथा विरोधी सिद्धान्त -- खिलाफतके -- सिद्धान्तके साथ समझौता कर लेगा?

लेखककी इस उत्कट अपीलको देखते हुए, मुझे खिलाफतके प्रश्नके सम्बन्धमें अपना दृष्टिकोण फिरसे स्पष्ट कर देना चाहिए। मैं अहिंसाके सिद्धान्तकी पैरवी करता हूँ। यही मेरे समूचे जीवनका सिद्धान्त रहा है। और अब यदि मैं दूसरे किसी विचारसे, चाहे वह हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित करनेके लिए ही क्यों न हो, अहिंसाके इस सिद्धान्तका आंशिक त्याग करके कोई ऐसा समझौता करता हूँ तो मैं अपने समूचे जीवनको झुठला दूँगा। मैंने हिन्दू-मुस्लिम एकताका काम अपने हाथमें तभी लिया जब मैंने परख लिया कि मुसलमानोंकी माँगें हर दृष्टिसे उचित हैं। मेरे लिए तो वह जीवनका एक महान् क्षण था। मैंने महसूस किया कि अगर मैं अपने मुसलमान देश-वासियोंकी इस संकटकी घड़ीमें उनके प्रति अपनी वफादारी सिद्ध कर दूँ तो दोनों सम्प्रदायोंमें चिरस्थायी मैत्री स्थापित कर सकता हूँ। जो भी हो, मुझे यही लगा कि ऐसा प्रयत्न किया जाना चाहिए। दोनों सम्प्रदायोंके बीच सच्ची मित्रताके बिना मैं स्वतन्त्र भारतकी स्थापनाकी सम्भावनाकी कल्पनातक नहीं कर पाता।

पर श्री जकरिया कहते हैं कि खिलाफतकी बुनियाद जोर-जबरदस्तीपर है। खिलाफत इस संसारमें इस्लामका प्रतिनिधित्व करती है, और वह तलवारके बलपर भी इस्लामकी रक्षा करनेके लिए वचन-बद्ध है। और मैं अहिंसामें विश्वास करते हुए किसी भी ऐसी संस्थाको बनाये रखनेके लिए कैसे संघर्ष कर सकता हूँ जो अपनी रक्षाके लिए भौतिक बलका प्रयोग करनेके लिए स्वतन्त्र है?

श्री जकरियाकी खिलाफतकी परिभाषा बिलकुल सही है। पर अहिंसाको मानने-वालोंका क्या कर्त्तव्य है, इस मामलेमें उनका निष्कर्ष गलत है। अहिंसाको माननेवाला किसी भी चीजकी रक्षा करनेके लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपमें हिंसा या भौतिक बलका प्रयोग न करनेके लिए वचन-बद्ध है, लेकिन अहिंसाका समर्थन न करनेवाले व्यक्तियों या संस्थाओंकी सहायता करनेकी तो उसे कोई मनाही नहीं है। यदि बात इसकी उलटी होती तो, उदाहरणके तौरपर, मुझे भारतको स्वराज्य प्राप्त करनेमें सहायता नहीं देनी चाहिए क्यों कि मैं जानता हूँ कि स्वराज्यके बाद बननेवाली भारतीय संसद निश्चय ही कुछ सेना और पुलिसकी शक्ति तो रखेगी ही; या अगर घरेलू किस्मकी मिसाल ली जाये तो अहिंसामें विश्वास न रखनेवाले अपने पुत्रको मुझे न्याय हासिल करनेमें सहायता नहीं देनी चाहिए।

यदि श्री जकरियाकी बात ठीक मान ली जाये तो अहिंसामें विश्वास करनेवाला व्यक्ति कोई भी व्यापार-धन्धा नहीं कर सकेगा। और ऐसे आदमियोंकी भी कमी नहीं जो पूर्ण अहिंसाका मतलब सभी काम-धन्धे बिलकुल बन्द कर देना समझते हैं

पर मेरा अहिंसाका सिद्धान्त ऐसा नहीं है। अहिंसावादी होनेके नाते मेरा अपना कर्त्तव्य यही है कि मैं स्वयं हिंसासे बिलकुल दूर रहूँ और भगवान्के बनाये जितने भी

प्राणियोंको समझा-बुझाकर तथा सेवाके जरिये अहिंसामें विश्वास और इसपर अमल करनेके लिए प्रेरित कर सकूँ, करूँ। लेकिन यदि मैं अहिंसाके सिद्धान्तमें पूर्णतः विश्वास न करनेवाले किसी व्यक्तिको या प्रवृत्तिमें, जहाँतक उसका उद्देश्य न्यायोचित है, यदि सहायता न दूँ तो मैं अपनी आस्थाके साथ विश्वासघात करूँगा। यह जानकर भी कि मुसलमानोंकी माँग उचित है यदि इस्लामकी इज्जतके खिलाफ साजिश करनेवालोंके विरुद्ध लड़नेमें मुसलमानोंकी सहायता बिलकुल अहिंसक ढंगसे न करूँ तो वह मेरे लिए हिंसाको बढ़ावा देना ही होगा। जहाँ दोनों ही पक्ष हिंसामें विश्वास करते हैं, उन मामलोंमें भी न्याय अक्सर किसी एक पक्षकी ओर होता है। डाकेजनी-का शिकार बननेवाले आदमीके पक्षमें न्याय होता है, चाहे वह हिंसाके सहारे ही अपना माल लौटा लेनेकी कोशिश कर रहा हो। हाँ, अगर उस पीड़ित व्यक्तिको उसका माल लौटा लेनेके लिए खुले लड़ाई-झगड़ेके बजाय सत्याग्रहके तरीकों, अर्थात् प्रेम या आत्मिक बलका सहारा लेनेके लिए तैयार किया जा सके तो वह अहिंसाकी एक बड़ी जीत मानी जायेगी।

मैंने यहाँ जितनी मर्यादाएँ बतलाई हैं, उनको देखते हुए श्री जकरिया कह सकते हैं कि मैं अहिंसाके सिद्धान्तका पुजारी नहीं हूँ; मेरा वैसा दावा गलत है। इसपर मैं सिर्फ यही कहूँगा कि जीवन एक बड़ी पेचीदा-सी चीज है और सत्य तथा अहिंसा हमारे सामने ऐसी कई समस्याएँ पेश करते हैं जिनका बहुधा कोई विश्लेषण नहीं किया जा सकता और न जिनपर कोई फतवा दिया जा सकता है। सत्य और उसपर आचरण करनेके उचित साधनों — अर्थात् सत्याग्रह और आत्मिक बल — की समझ आदमी अर्सेतक सतत प्रयत्न और मन-ही-मन प्रार्थना करके ही अपने अन्दर पैदा कर पाता है। मैं तो अपने मित्रोंको इतना ही आश्वस्त कर सकता हूँ कि मैं सत्यका मार्ग टटोल रहा हूँ और इसमें अपनी ओरसे कोई कसर नहीं होने देता, और सत्यान्वेषियोंके इस बहुत ही थकानेवाले मगर बड़े ही सुन्दर मार्गपर मेरे दो ही अत्यन्त विश्वस्त साथी हैं — विनम्रतापूर्ण सतत प्रयत्न और मन-ही-मन भगवान्से प्रार्थना। यही दोनों सदा मेरे साथ रहते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १–६–१९२१

८२. भाषण: गुजरात राजनीतिक परिषद्, भड़ौंचमें[1]

१ जून, १९२१

यह एक ऐसा प्रस्ताव है जिसे कोई भी सीधा-सादा बालक अथवा बालिका समझ सकती है। इस प्रस्तावके पूरे होनेपर हिन्दुस्तानका स्वराज्य निर्भर है, खिलाफतके प्रश्नका समाधान इसपर निर्भर करता है और पंजाबके न्यायकी आधारशिला भी यही है। गुजरातके भाई-बहनोंको मैं पिछले वर्षकी याद दिलाता हूँ। पिछले साल जब कांग्रेस-ने असहयोगका प्रस्ताव पास नहीं किया था तब भी हमने असहयोगका प्रस्ताव पास किया था। जब पंजाबके न्याय और स्वराज्यकी बाततक भी न थी तब हमने, गुजरातके हिन्दुओं और मुसलमानोंने, सोच लिया था कि खिलाफतके प्रश्नका निर्णय हम अपनी सात्विक सत्ताके बलपर करेंगे। भले ही सारा भारत यह न समझे कि पंजाब और स्वराज्यके प्रश्नका निबटारा खिलाफत-प्रश्नके निर्णयके अन्तर्गत ही आता है तब भी हम गुजरातियोंने अपने सर्वस्वकी बलि देकर खिलाफतके प्रश्नका समाधान कर लेनेका निश्चय किया था। उस समय गुजरातने जिस श्रद्धा-भावनाका परिचय दिया था उसकी मैं आपको याद दिला देना चाहता हूँ। श्री विट्ठलभाईने हमपर आक्षेप लगाया है कि हमने अपना कर्त्तव्य पूरा नहीं किया, हमने पूरा-पूरा चन्दा नहीं दिया। यदि हम अपने कर्त्तव्यको पूरा नहीं करेंगे तो इसी आक्षेपके योग्य ठहरेंगे। लेकिन यदि हम निश्चय करेंगे तो अपने कर्त्तव्यको पूरा करके हम तीस दिनोंमें ही आक्षेपके इस धब्बेको धो सकेंगे। इस परिषद्में आये हुए भाई-बहन, सारा हिन्दुस्तान क्या करेगा, इसका विचार न करके अगर सोते, खाते, बैठते गुजरातके प्रति अपने कर्त्तव्यको याद रखेंगे तो दस लाख रुपया, एक लाख चरखे और तीन लाख सदस्य जरूर बना सकेंगे।

चरखेसे यह सरकार किस तरह हट जायेगी, यह प्रश्न पूछा गया है। उसका जवाब यह है कि सरकार चरखेको देखकर नहीं चली जायेगी बल्कि निर्धारित अवधिके बीच बीस लाख चरखोंको चलाना शुरू करके आप दुनियाके सम्मुख जिस श्रद्धा, विश्वासका परिचय देंगे उसे देखकर यह सरकार हमारी शरण आयेगी। यह हमारी शक्तिका मापदण्ड है। जब आप इतना कर दिखायेंगे उस समय संसार जान लेगा, सरकार समझ जायेगी कि आप श्रद्धालु हैं, आप सचमुच स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं। उस समय हमें सिपाहियोंसे हथियार छोड़ देने अथवा जनतासे कर न देनेकी बात कहनेकी जरूरत न रहेगी। जबतक हिन्दुस्तानमें यह श्रद्धा नहीं आती तबतक चरखा जितनी आसान चीज है उतनी ही मुश्किल भी है। जब घर-घरमें लोग चरखा चलाने लगेंगे तब हिन्दुस्तानमें एक भी व्यक्ति भूखों नहीं मरेगा, औरतोंको आजीविका कमानेके

१. बेजवाड़ामें हुए कांग्रेस अधिवेशनमें जो कार्यक्रम निश्चित किया गया था उसे तीस जूनसे पहले-पहले खत्म करनेके लिए और भी ज्यादा प्रयत्न करनेके सम्बन्धमें इस परिषद्में एक और प्रस्ताव पेश किया गया था। गांधीजीने यह भाषण उसी अवसरपर दिया था।

लिए अपने शीलका सौदा नहीं करना पड़ेगा; उस समय हिन्दुस्तानमें धर्मराज्य होगा, रामराज्य होगा, खुदाका राज्य होगा।

एक लाख चरखे चालू करना, [कांग्रेसके] तीन लाख सदस्य बनाना और दस लाख रुपया इकट्ठा करना — यह सब गुजरातकी शक्तिका मापदण्ड है। यह सवाल भी पूछा गया है कि यद्यपि गुजरातके हिस्सेमें तीन लाख रुपया आता है तथापि उस-पर दस लाख रुपया इकट्ठा करनेका बोझ क्यों लादा गया है? गुजरातको हमने इस संघर्षका आधारस्तम्भ बनाया है और आधारस्तम्भको ही सबसे अधिक भार वहन करना पड़ता है, इसे कौन नहीं जानता? और इसीलिए इसका भाग भी अन्य प्रान्तोंकी अपेक्षा ज्यादा है। हम सबमें अगर श्रद्धा हो तो दस लाख रुपया इकट्ठा करना कोई मुश्किल काम नहीं है। यदि हम गुजरातमें इस आन्दोलनके प्रति इतनी श्रद्धा भी नहीं दिखला सकते तो मैं बम्बई जाकर व्यापारियोंके सम्मुख बात कैसे कर सकूँगा? बेजवाड़ामें निश्चित किये गये कार्यक्रमको समयपर पूरा करनेके लिए हमें प्राण तक त्याग देने चाहिए। तीस जूनतक अगर यह कार्य पूरा न हो तो हमारे लिए मर जाना ही बेहतर है। यही स्वराज्यकी कुंजी है। हिन्दुस्तानने इस कुंजीको पा लिया है, यह सरकार जिस क्षण इस बातको समझ जायेगी उसी क्षण या तो वह भाग जायेगी अथवा जनताकी सेवक बनकर रहेगी।

कलकत्तामें किसी व्यक्तिने मौलाना मुहम्मद अलीसे पूछा, अनेक लोगोंका कहना है कि चरखेसे स्वराज्य प्राप्त करनेकी बात चमत्कार प्रतीत होती है। मौलानाने कहा, होती होगी, लेकिन छः हजार मीलसे चलकर आये हुए मुट्ठी-भर गोरे तीस करोड़ व्यक्तियोंपर शासन कर रहे हैं यह बात अधिक चमत्कारपूर्ण है या कि चरखेसे स्वराज्य प्राप्त करनेकी बात? स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए हममें आत्मविश्वास पैदा होना चाहिए, हमें परस्पर एक हो जाना चाहिए। हिन्दुस्तान-जैसे महान् मन्दिरमें — जिसमें मुसलमानोंकी मस्जिदें हैं, हिन्दुओंके मन्दिर हैं, सिखोंके गुरुद्वारे हैं, पारसियोंके देवालय हैं — पूजा करनेके लिए गुजरातियों-जैसे पुजारी अगर दस लाख रुपया देते हैं तो हम निःसन्देह स्वराज्यके योग्य ठहरते हैं। अगर गुजरात अकेले ही इस कार्यका बीड़ा उठा लेनेको तैयार हो जाता है तो हमारे लिए वही काफी है। यदि हम इतनी योजना-शक्तिका परिचय नहीं देते, इतना बलिदान करनेके लिए तैयार नहीं होते तो हमें स्वराज्यकी बात छोड़ देनी चाहिए। इतने-भरमें गरीब बनने जैसी कोई बात नहीं है। यदि सिर्फ गुजराती बहनें ही इस बातका निश्चय कर लें तो कल ही गुजरातसे दस लाख रुपया इकट्ठा करके दे सकेंगी। आज जब कि हिन्दुस्तानकी हालत असहाय विधवा-जैसी है ऐसे समय हमें आभूषण पहनने अथवा शृंगार करनेका क्या अधिकार है? जब हजारों व्यक्ति भूखों मर रहे हों उस समय सोने-चाँदीके आभूषण पहने ही कैसे जा सकते हैं? आप सब बहनें सौभाग्यसूचक आभूषणोंको छोड़कर अगर बाकीके आभूषण दे दें तो दस लाख रुपया घड़ी-भरमें इकट्ठा हो जाये। गुजराती बहनोंमें जब यह भावना प्रकट होगी उसी दिन इसे देखनेके लिए देवता आकाशसे उतरेंगे। गुजराती बहनोंको स्वराज्यके, स्वधर्मके इस मन्त्रको जान लेना चाहिए कि आज आभूषणोंका त्याग करनेपर ही उनके शीलकी रक्षा हो सकेगी।

हमें अपने-आपपर अविश्वास है; कितने ही लोगोंको मुझपर आवश्यकतासे अधिक विश्वास है। उन्हें लगता है कि गांधी चाहे किसी भी स्थानसे क्यों न हो तीस जूनसे पहले-पहले एक करोड़ रुपया लाकर पूरा कर देगा। लेकिन मैं कहता हूँ कि उनकी यह मान्यता सर्वथा भूलसे भरी है। गांधीमें यदि ऐसा बल हो भी तो इस तरह गांधीके बल-बूतेपर मिला हुआ राज्य गांधीराज्य होगा, स्वराज्य नहीं। गांधीराज्यको आप राक्षसी राज्य समझना। गांधीकी तो यह इच्छा है कि उसके जितना बल, उसके जितना आत्म-विश्वास आप सबमें भी आये। मैं केवल यह चाहता हूँ कि मुझमें जो दोष है, जो पाखण्ड है वह आपमें न आने पाये। मुझे अपने राज्यकी इच्छा नहीं है; मैं तो स्वराज्य चाहता हूँ। मेरी कामना है, हम तीन भाइयोंमें[1] जो शौर्य और एक दिली है वह आप सबमें भी आये।

मैंने ऐसे व्यक्ति भी देखे हैं जिन्होंने अपनी धर्मपत्नीको विवेकपूर्वक समझा-बुझा-कर देशके निमित्त उससे उसके आभूषण ले लिये हैं। आप सब पुरुष इसपर विचार करें। अपनी बहनों, अपनी पत्नियोंको समझा-बुझाकर उनसे आभूषण ले लेनेका निश्चय करें। शुरुआत हमेशा घरसे ही करें। जो-जो अच्छे काम हैं उनकी शुरुआत परि-वारसे ही होनी चाहिए। जबतक हम परिवारको बचाकर अलग रखते रहेंगे तबतक काम नहीं हो सकेगा। मैं इन प्रतिनिधि भाइयोंसे कहता हूँ कि आप फकीर बनें। एक लँगोटीसे गुजारा करें, दस लाख इकट्ठा करनेके लिए रात-दिन मेहनत करें और उसके बाद कहें कि दस लाख रुपये इकट्ठे नहीं हो सके। जब ऐसी घड़ी आयेगी तब अमीर खुद-ब-खुद शरमिन्दा हो जायेंगे। हममें फकीरकी-सी श्रद्धा आनी चाहिए।

मैं आपको हमेशाके लिए फकीर बननेको नहीं कहता। अंग्रेज स्त्री-पुरुषोंने गत विश्वयुद्धमें जो बलिदान दिये, दक्षिण आफ्रिकामें जंगली माने जानेवाले बोअरोंने जो आत्मत्याग किया, अरबोंने जो बलिदान दिये उनकी अपेक्षा मैं आपसे बहुत कम बलिदान माँगता हूँ। अरबोंने स्वदेशकी खातिर अपने प्रिय प्राणोंकी बलि दी। उन्होंने अंग्रेजोंसे कह दिया कि हमें तुम्हारी ट्राम, मोटर और रेल नहीं चाहिए; हमें तो हमारा देश प्यारा है। इन अरबोंने जिस उत्साहसे आत्म-यज्ञ किया आप भी उसी उत्साहसे, मैं आपसे जो माँग रहा हूँ और जो इन अरबोंके बलिदानसे बहुत कम है, मुझे दें।

स्वराज्य मिलनेपर आप हीरे-मोती, आभूषण सब पहनना। उस समय मुझे आपपर क्रोध न होगा। इस समय तो मुझे क्रोध आता है। हालाँकि मैं द्वेष-भावसे बहुत ज्यादा मुक्त हो गया हूँ फिर भी इस समय जब कि हिन्दुस्तानकी हालत इतनी गिरी हुई है तब यदि किसीको मैं अपने पास शृंगार किये तथा आभूषण पहने देखता हूँ तो मुझे बुरा लगता है। मन-ही-मन सोचने लगता हूँ कि ये लोग अभीतक क्यों नहीं समझते? यह काम आप आज रातसे ही शुरू कर दें। नर्मदाके पवित्र तटसे यदि आप इस रंगमें रँगकर जायें तो [मेरे लिए यही] बहुत होगा। हिन्दू और मुसलमान दोनोंके हितके लिए काम करनेमें, धर्मकी रक्षा करनेमें कदापि पीछे न हटें। मन्दिर बनवाने तथा लड़के-लड़कीके विवाहमें आप जितना धन खर्च करते हैं उतना ही धन

१. गांधीजीका आशय अपने और अली भाइयोंसे है।

यदि इस महान् देवालयके निर्माणमें, विवाहकी अपेक्षा कहीं अधिक इस मंगल-कार्यमें देंगे तो दस लाख रुपया इकट्ठा करना कोई मुश्किल बात न होगी। गरीब व्यक्तियोंके पास पैसे न हों तो उनकी ओरसे स्वयं चार आने देकर उनका नाम कांग्रेसकी बहीमें दर्ज करायें। चरखेके लिए अगर हम बढ़इयों और लुहारोंको जुटा लें तो चरखा-कार्यक्रम भी बच्चोंका खेल हो जाए। मेरा तो कहना है कि अगर अकेली बहनें ही तीस दिन काम करनेके लिए निकल पड़ें तो भी पैसा इकट्ठा करना खेल है। भाषण कर-करके अब मैं थक गया हूँ, लेकिन मेरे मनसे गुजरातकी बहनोंके प्रति विश्वास नहीं गया है। उनमें इतनी निर्मलता, इतनी श्रद्धा है कि धर्मराज्यकी बात सुनते ही वे पिघल जाती हैं। उनकी ओरसे आभूषणोंकी जो बरसात हुई है उसीसे मेरे मनमें श्रद्धा जाग उठी है।

श्रद्धा तो मुझे बहनों और भंगियोंसे प्राप्त हुई है। अभी थोड़े दिन पूर्व ही एक पारसी भाईने मुझे फिर बारह हजार रुपये भेजे हैं। ये पारसी दक्षिण आफ्रिका-वाले भाई रुस्तमजी हैं। ये टाटाकी अपेक्षा कम पैसेवाले हैं, लेकिन इनके पास टाटाकी अपेक्षा अधिक विशाल हृदय है। उन्हें प्राप्ति-सूचना तक भेजनेका मुझे समय नहीं मिल पाया है। ऐसे लोगोंसे ही मुझे श्रद्धा मिली है।

हमें शिमलासे स्वराज्य प्राप्त नहीं होगा। यहाँ लाल, हरे और सफेद रंगका जो झण्डा फहरा रहा है और जिसपर चरखेका चित्र अंकित है, उस झण्डेके लिए अगर आप मरनेको तैयार हो जायें तो उसी दिन स्वराज्य है। आपकी बात सुननेके लिए जो अंग्रेज आपको बुलाते हैं उन्हें आप अपनी बात भले ही सुनायें-समझायें, लेकिन इतना आप समझ लें कि स्वराज्य तो आपको अपने बलपर ही मिलेगा। यह अत्युत्तम मुहूर्त है। यदि यह शुभ मुहूर्त टल गया तो जैसे लक्ष्मीके आनेपर मुँह धोनेके लिए जानेवाले व्यक्तिको हम मूर्ख कहते हैं उसी तरह हिन्दुस्तानको भी मूर्ख समझा जायेगा। इस परिषद्को शुभ मुहूर्त मानकर आप इसका उपयोग करें। यदि हम दृढ़ प्रतिज्ञ होकर काम करेंगे, मरनेके लिए तैयार रहेंगे तो पंजाबके प्रति न्याय, खिलाफतके प्रति इन्साफ और स्वराज्य इन तीनोंको मिला ही मानें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–६–१९२१

८३. भाषण: भड़ौंचमें अहिंसा-प्रस्तावपर[1]

१ जून, १९२१

जैसे-जैसे हम आगे बढ़ते जायेंगे वैसे-वैसे हमारा सरकारको आवेदनपत्र देना खत्म होता जायेगा। तब हम सरकारसे नहीं स्वयं अपने-आपसे प्रार्थना करेंगे। अपने संकल्प निभानेमें अगर हम कच्चे निकले तो हमारी स्वराज्यकी रोटी कच्ची रह जायेगी और अगर हम पक्के निकले तो स्वराज्यकी रोटी अच्छी तरह पक जायेगी। पैसा, चरखा और सदस्य तो आँखोंसे देखे जा सकते हैं लेकिन शान्ति तो भीतरकी, दिलकी चीज है। वह आँखसे देखनेकी चीज नहीं है। हमें जीवित रहनेके लिए श्वासकी जितनी जरूरत है उतनी ही इस लड़ाईके लिए शान्तिकी जरूरत है; यह बात हिन्दुस्तानको समझ लेनी चाहिए। हमें पाषाणकी-सी शान्तिकी आवश्यकता नहीं कि जो ठुकराये जानेपर भी शान्त रहे; हमें जानवरोंकी-सी, उदाहरणार्थ कुत्ते-जैसी, शान्तिकी भी आवश्यकता नहीं जो किसीके मारनेपर उसे काटनेको दौड़े अथवा उसपर भौंकने लगे। हमें तो सरदार लछमनसिंह और दलीपसिंहने जिस शान्तिका परिचय दिया, वैसी शान्तिकी जरूरत है। भाई शौकत अलीके शब्दोंमें कहूँ तो हमें ठंडी ताकतकी जरूरत है। जबतक हम इसे प्राप्त नहीं कर लेते तबतक हम स्वराज्यके योग्य नहीं ठहरते। हवाई जहाजोंके बलपर स्वराज्य प्राप्त करनेकी इच्छा करेंगे तो वह सौ सालतक भी नहीं मिलेगा। मालेगाँवके किस्सेसे स्वराज्यकी सुई पीछे खिसक गई। यह सच है कि इससे हम कोई स्वराज्य नहीं खो देंगे। किन्तु इससे हमें पीछे तो हटना ही पड़ा है। सरकारके शान्त रहनेपर ही हम शान्ति रखें, यह हमारी शर्त नहीं है। यह तो सरकारके साथ सहयोग हुआ। हम तो शान्तिमय असहयोग करने बैठे हैं। सरकारकी ओरसे गोलीबारी हो अथवा सिरपर हवाई जहाजसे बम-वर्षा हो तब भी शान्तिपूर्वक हम अपना कार्य करते रहें और कलक्टरको मारने न दौड़ें, डाकघरको न जलायें तभी सच्ची शान्ति कहलायेगी। जब हम इस शान्तिको प्राप्त कर लेंगे तब हमें 'अंग्रेज जायेंगे तो पठान आयेंगे' ऐसा भय नहीं रहेगा। हममें जबतक शान्तिकी ताकत होगी तबतक हमें कोई नहीं जीत सकेगा।

हमें जो पाठ सीख लेने चाहिए उनमें से एक पाठ शान्तिका है और दूसरा पाठ हिन्दू-मुस्लिम एकताका है। हम यदि परस्पर लड़ते रहेंगे तो हमारी लड़ाई इसीमें खत्म होकर रह जायेगी। हमें तो शूरवीरोंके शौर्यकी जरूरत है, कायरताकी नहीं। हमें वीरोंकी शान्ति चाहिए। ऐसी शान्ति मुझ जैसे [शरीरसे] दुर्बल व्यक्ति और मुझ जैसे पाँच व्यक्तियोंको जेबमें रख लेनेवाले [शरीरसे सबल] व्यक्ति दोनोंमें ही हो सकती है। मैं जब दस-बारह वर्षका था तब मुझे भूतसे डर लगा करता था। उस समय मेरी धाय रम्भाने मुझसे कहा था कि बेटा भूत आये तब रामका नाम लेना। इस तरह

१. गुजरात राजनीतिक परिषद्में; देखिए पिछला शीर्षक।

मैं "रामरक्षा" का पाठ करता और भूत-प्रेतको कोठरीसे निकाल सकनेमें सफल होता। हिन्दुस्तानमें जिस शान्तिकी जरूरत है वह शान्ति, प्राण जानेपर भी आत्मसमर्पण न करनेवाले अरब लड़केकी-सी है, वह प्रह्लाद-जैसी शान्ति है। मुसलमानोंसे मैं कहता रहा हूँ कि आप अरब लड़केका आदर्श अपने ध्यानमें रखें और हिन्दुओंसे कहता रहा हूँ कि प्रह्लादका आदर्श अपने ध्यानमें रखें तथा उनके जैसी शान्ति, धीरज और धैर्यका विकास करें।

प्रस्तावमें मालेगाँवका जो जिक्र किया गया है उसका कारण यह है कि इस घटनाको हमें भूल जाना है। और दलीपसिंह और लछमनसिंहकी शान्तिको — उनके आत्म-बलिदानको — याद रखना है। यदि ऐसी शान्तिका विकास करनेके लिए आप यहाँ अपना मत देंगे तो उसका अर्थ यह होगा कि आप आदमीके भयसे मुक्त हो गये हैं और मात्र ईश्वरसे ही भय खानेवाले व्यक्ति बन गये हैं। जबतक हम मानवमात्रके भयको छोड़कर खुदासे डरनेवाले नहीं बन जाते तबतक जगत् हमें डराता है, और डराता रहेगा। यह शक्ति हमें गुजरातकी मार्फत हिन्दुस्तानको देनी है। गुजरातकी मार्फत सरकारको कर देनेका काम बन्द करना है। लेकिन यह काम तभी हो सकता है जब हममें शान्तिकी वह ताकत आ जाये। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि हे ईश्वर! तू सब भाइयोंको यह ताकत दे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–६–१९२१

८४. प्रस्ताव[1]

१ जून, १९२१

(१) यह सभा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके नागपुर अधिवेशनमें पास किये गये अहिंसात्मक असहयोगसे सम्बन्धित प्रस्तावका हार्दिक समर्थन करती है और सभी वर्गोंके लोगोंका आह्वान करती है कि वे प्रस्तावपर पूरी तरह अमल करनेके लिए अधिक उत्साहपूर्वक और अधिक संगठित ढंगसे काम करें, विशेष रूपसे इसलिए कि गुजरातमें उक्त प्रस्तावपर जिस रफ्तारसे अमल किया जा रहा है सभाका विश्वास है कि वह इसी वर्षके अन्दर स्वराज्य प्राप्त करनेकी आशा दिलानेके लिए पर्याप्त नहीं है।

(२) इस सभाके विचारानुसार गुजरातका कर्त्तव्य है कि वह कांग्रेस समितियोंके तीन लाख सदस्य बनाये, तिलक स्वराज्य-कोषमें दस लाख रुपये जमा करे और एक लाख चरखे चालू करे तथा बेजवाड़ामें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा निर्धारित कार्यक्रमके अनुसार गाँवों, ताल्लुकों और जिलोंके सभी कार्यकर्त्ताओंसे अपील करे कि वे ३० जूनसे पहले यथाशक्ति चन्दा दें।

१. अनुमानतः गुजरात राजनीतिक परिषद्में पारित इन प्रस्तावोंका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था।

(३) मनसा-वाचा-कर्मणा अहिंसा असहयोग योजनाका जरूरी अंग है और अहिंसा के सिद्धान्तका पालन करनेपर ही योजनाकी सफलता निर्भर करती है, इसलिए यह सभा सबसे अनुरोध करती है कि सरकारी अधिकारियों द्वारा अभियोग लगाये जाने या उत्तेजित किये जानेपर भी पूर्ण शान्ति कायम रखें, और द्वेषपूर्ण भाषण न दें और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा सुझाये कार्यमें पूरी तरह जुट जायें। गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके विशेष आदेशके बगैर हड़ताल करना बन्द कर दें और सरकार द्वारा की जानेवाली नेताओंकी गिरफ्तारीपर सभी तरहके विरोधी प्रदर्शन बन्द कर दें।

(अ) यह सभा सरकारकी दमनकारी नीतिके बावजूद समूचे देशने जो शान्ति रखी उसपर सन्तोष व्यक्त करती है और मालेगाँवमें सरकारी अधिकारियों और प्रमुख सहयोगियोंके विरुद्ध किये गये हिंसापूर्ण कार्योंके लिए कड़े शब्दोंमें खेद तथा निराशा व्यक्त करती है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-६-१९२१

८५. भाषण : अन्त्यज परिषद्, वेजलपुरमें[1]

१ जून, १९२१

अन्त्यजोंके अतिरिक्त जो भाई यहाँ आये हैं उन्हें मैं मुबारकबाद देता हूँ और हिन्दुओंको तो मैं पवित्र हुआ मानता हूँ। मुझे तो मानपत्र भेंट करनेकी जरूरत ही न थी। अब यदि कोई मुझसे पूछता है तो मैं कहता हूँ कि मैं अन्त्यज हूँ। यह धन्धा पवित्र है। इसके बिना गुजारा नहीं हो सकता। पाखाना साफ करनेवाले न हों तो हैजे-से हम मृत्युकी शरण ही चले जायें। आप लोग मुझे मानपत्र देना भूलकर पुरुषार्थ करें। अपना उद्धार करें, दारू छोड़ें और चमड़ेके लिए पशुओंके प्राण न लें। मरे हुए पशुओंकी चमड़ी उतारें। अपना धन्धा करनेके बाद नहा-धोकर स्वच्छ हो जानेपर बाहर निकलें। जूठे भोजनकी भीख न माँगें और किसीकी भी जूठन स्वीकार न करें। विनयपूर्वक उसे लेनेसे इनकार कर दें। विवेककी रक्षा करते हुए जो मिले उसे ही स्वीकार कर लें।

काँचसे जड़े विदेशी सन्दूकमें मानपत्र देकर आपने मेरा अपमान किया है। आपको केवल अपने हाथकी कारीगरीसे बना हुआ मानपत्र ही देना चाहिए था। विदेशी वस्तुएँ आपके लिए नहीं हैं।

अहमदाबादका केलिको कपड़ा कंगालोंके लिए है। आपको तो कुलीनताकी परिचायक खादी चाहिए। उसी तरह आपको कपड़ा बनाना, पहनना और बेचना

१. गुजरातके भड़ौंच जिलेमें। यह भाषण सभामें दिये गये मानपत्रका प्रत्युत्तर देते हुए दिया गया था।

चाहिए। आपके उद्धारके दो साधन हैं: दारूत्याग तथा बुनाईका काम। उनके द्वारा ही आपका उद्धार होगा।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १२-६-१९२१

८६. भाषण: भड़ौंचकी खिलाफत सभामें

२ जून, १९२१

श्री गांधीने सातवाँ प्रस्ताव रखते हुए कहा: मैं जानता हूँ कि आप जल्दी घर जाना चाहते हैं। इसलिए मैं विस्तारसे नहीं बोलूँगा। बन्नू कहाँ है सो आप जानते हैं। सीमान्तके सवालपर मेरे विचारोंको अध्यक्ष अच्छी तरह जानते हैं और इसीलिए मुझसे तत्सम्बन्धी प्रस्ताव रखनेको कहा गया है। बन्नूके मुसलमान डंडों और अन्य शस्त्रोंसे लैस हैं। वे खुदासे डरनेवाले लोग हैं और खिलाफतके मसलेको समझते हैं। बन्नूके मुसलमानोंपर जितना अत्याचार हुआ अगर उतना हमपर होता तो मैं निश्चित रूपसे जानता हूँ कि हम सब तत्काल वहाँसे भाग जाते। उनमें से कुछ बैरिस्टर और सुविख्यात लोग हैं। उन्होंने अब आपको सन्देश भेजा है कि आप सत्यके आधारपर अपना आन्दोलन जारी रखें।

हम सरकारकी उत्तेजनात्मक कार्रवाइयोंको कहाँतक सहन करते हैं, ईश्वर इसे लेकर हमारी परीक्षा लेता रहा है। आपके सामने तीन रास्ते हैं जबकि मेरे सामने केवल एक है और वह है जिहाद। यदि मुसलमानोंने हिंसाका सहारा लिया तो मैं उनके खिलाफ जिहादका रास्ता ही अपनाऊँगा। सम्भव है कि वे तलवारका उपयोग करें, परन्तु मैं नहीं करूँगा। यदि किसी मुसलमानने तलवार बाहर निकाली तो वह भयानक भूल करेगा। इस समय मैं विशेष रूपसे खिलाफतके बारेमें बोल रहा हूँ, स्वराज्यके बारेमें नहीं। हमने पहले ही सरकारको चेतावनी दे दी है कि वह न तो जनताको उत्तेजित करे और न उसका दमन करे। अली भाई सरकार द्वारा दिये जानेवाले किसी भी कष्टको झेलनेके लिए तैयार हैं किन्तु वे हर हालतमें अहिंसात्मक असहयोगके मार्गको ही अपनायेंगे। हमें सरकारको कर नहीं देने चाहिए और असहयोग आन्दोलनको बल देनेके लिए अधिकसे-अधिक चेष्टा करनी चाहिए। मुसलमानोंको रमजानमें अपना राष्ट्रीय कार्य अवश्य जारी रखना चाहिए। कल कुछ हिन्दू मुझे बता रहे थे कि मुसलमान गायकी कुरबानी करनेकी बात कर रहे थे और कह रहे थे कि वैसा न करना बहुत बड़ा पाप होगा। आपके लिए जिस तरह मक्का शरीफ पवित्र स्थान है उसी तरह हिन्दुओंके लिए गाय पवित्र पशु है। गोवध करनेसे पहले आपको अली भाइयोंसे अवश्य सलाह लेनी चाहिए। मुझे विश्वास है कि मुसलमान

ऐसा नहीं करेंगे। मुसलमान हमेशा ही हिन्दुओंके समान माने जायेंगे। आपको वे सारे अधिकार दिये जायेंगे जो हिन्दुओंको प्राप्त हैं। आपको मुझमें और मेरे महान् आन्दोलनमें ईमान और विश्वास अवश्य होना चाहिए। मैं अन्तमें ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको [मुसलमानोंको] राष्ट्रीय कार्यके लिए सफलतापूर्वक और शान्तिसे आगे बढ़नेकी पर्याप्त शक्ति दे।[1]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ६–६–१९२१

८७. वाइसरायका भाषण

मैंने वाइसराय महोदयका भाषण पढ़ा। वह ठीक है, ऐसा मैं मानता हूँ। तथापि उससे शिमलाकी गन्ध आती है। हमें उसकी फिक्र नहीं। यदि ये महोदय अपने काम-काजमें "जैसा कहो वैसा करो" वाली बातको चरितार्थ करना चाहते हैं तो उन्हें ऐसा करके बताना होगा।

भोजनके बाद भाषण करनेकी आदत ही बुरी है। खाकर व्यक्ति आलसी बन जाता है। खानेके तुरन्त बाद व्यक्ति ठोस विचार करने लायक नहीं रह जाता और सो भी ऐसे आडम्बरपूर्ण वातावरणमें दिये गये भोजके बाद जिसका कि समाचारपत्रोंमें विशेष विवरण प्रकाशित किया जाता हो। इसीलिए वाइसरायके भाषणोंमें जो गाम्भीर्य होना चाहिए वह नहीं होता।

हिन्दुस्तानको फिलहाल गाम्भीर्यकी जरूरत है। हिन्दुस्तान घायल है; उसका घाव अभी भरा नहीं है। इतना ही नहीं बल्कि वह घाव गहरा होता जाता है। उससे अभी खून बहता रहता है। वह मरहम-पट्टीसे ठीक हो जानेवाला नहीं है। उसके लिए तो अभी ऐसे कुशल शल्य-चिकित्सककी आवश्यकता है जिसमें दक्षताके साथ धैर्य भी हो। अच्छे शल्य-चिकित्सकोंको मैंने खतरनाक आपरेशन करते समय भूखे पेट रहते देखा है। किसी-किसी श्रद्धालु शल्य-चिकित्सकको मैंने आपरेशनके समय भगवान्का नाम लेते हुए भी देखा है।

वाइसराय महोदय, अली भाइयोंके पत्रको भी ऐसा-वैसा पत्र न समझें। यह पत्र उनकी खातिर नहीं लिखा गया। यह पत्र तो मित्रोंकी खातिर लिखा गया है। वाइसराय महोदयने अली भाइयोंके भाषणोंका जो जिक्र किया सो ठीक किया। कोई शत्रु भी अगर भूलकी ओर निर्देश करे तो उसे स्वीकार कर लेना सज्जनताकी निशानी है। अली भाइयोंके किसी-किसी भाषणमें कुछ-एक वाक्य ऐसे थे जिनके दो अर्थ निकल सकते हैं। अली भाइयोंके वक्तव्यका यही मतलब है कि अपनेको, धर्मको और देशको बचानेका प्रयत्न करनेवाले व्यक्तियोंको भी अपने मुखसे जाने-अनजाने द्विअर्थक शब्द नहीं निकालने चाहिए। उन्होंने अपनी सज्जनताका परिचय देते हुए मेरे-जैसे मित्रों-

१. प्रस्तावका अनुमोदन हयात साहबने और उसका समर्थन फैजुल्लाखाँने किया था। मत लेनेके बाद प्रस्ताव पास कर दिया गया।

की सलाह मानी है। और उन्होंने अपनी जिह्वापर और भी अधिक काबू रखनेकी शुद्ध और पवित्र प्रतिज्ञा की है।

वाइसराय महोदयको अभी अनुभवकी जरूरत है। उन्हें इस अभूतपूर्व प्रवृत्तिका अध्ययन करना है। उनका भाषण प्राथमिक अध्ययनको ही सूचित करता है। उनके भाषणमें सावधानी बरतनेकी कोशिश की गई है, लेकिन वे अपनी इस कोशिशमें पूरी तरहसे कामयाब नहीं हुए हैं। उन्होंने असहयोगीको रिझानेका प्रयत्न किया है। असहयोगी भाषणोंसे रीझनेवाले नहीं हैं। वे भाषणोंका उलटा अर्थ नहीं लगाते, लेकिन उसकी कसौटी तो वे कामसे ही करते हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–६–१९२१

८८. गुजरातका निश्चय

भड़ौंचमें जो परिषद् हुई उसके बारेमें मैं बहुत-कुछ लिखना चाहता था। लेकिन मैं थका-हारा मध्य रात्रिमें अब थोड़ा ही लिखूंगा।

इस मासके अन्ततक गुजरातको दस लाख रुपया इकट्ठा करना है, कांग्रेसके लिए तीन लाख सदस्य बनाने हैं तथा एक लाख चरखे चालू करवाने हैं। यह गुजरातके लिए जितना कठिन है उतना ही आसान भी है।

कार्यकर्त्ताओंके अभावमें यह कार्य कठिन जान पड़ता है। यदि असंख्य व्यक्ति — स्त्री और पुरुष — काम करनेके लिए निकल पड़ें तो यह काम आसान है। इन तीनों कामोंमें जो कच्चे असहयोगी हैं, जिन्हें असहयोगके प्रति कोई श्रद्धा नहीं है वे भी मदद कर सकते हैं। केवल वही लोग ये काम नहीं कर सकते जो असहयोगको पाप मानते हैं। मुझे विश्वास है कि गुजरातमें असहयोगको पाप माननेवाले लोग अँगुलियोंपर गिने जा सकने योग्य भी नहीं मिलेंगे।

इतना पैसा किस तरह इकट्ठा हो? (१) यदि स्त्रियाँ अपने आभूषणोंको उतार फेंके, (२) यदि धनाढ्य अपनी सम्पत्तिका अमुक प्रतिशत दें, (३) यदि सब लोग अपनी कमाईका अमुक भाग दें, (४) यदि शराब पीनेवाले अपने शराबके खर्चका अमुक हिस्सा दें, (५) यदि कुछ-एक अमीर लोग अपना सर्वस्व अर्पण करें, — ऐसे बहुत सारे "यदि" लगे हुए हैं। इन शर्तोंको पूरा करके हमें अपना काम सम्पन्न कर डालना है।

भड़ौंच परिषद्में की गई प्रतिज्ञा अगर पूरी न हो तो गुजरातकी नाक कट जायेगी; इस वर्ष स्वराज्य प्राप्त करनेमें विघ्न पड़ेगा। जो चरखा नहीं चला सकते वे सदस्य बनायें। सब कोई अपने-अपने कर्त्तव्यका पालन करें।

हे ईश्वर! गुजरातकी लाज रखना।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–६–१९२१

८९. टिप्पणियाँ

सदस्योंका धर्म

मुझसे निम्नलिखित प्रश्न पूछा गया है :

जिस तरह आपने प्रतिनिधि कैसे चुने जाने चाहिए इसके बारेमें लिखा है उसी तरह अगर आप सदस्य किन व्यक्तियोंको बनाया जाना चाहिए, इसकी जानकारी भी दें तो अच्छा होगा।

यह स्पष्ट है कि जो लोग असहयोगके प्रस्तावको पसन्द करते हैं वे लोग उन्हीं व्यक्तियोंको अपना प्रतिनिधि चुनेंगे जो इस प्रस्तावका समर्थन करनेवाले हों। मतलब यह कि प्रतिनिधिको वकील नहीं होना चाहिए, खिताबयाफ्ता नहीं होना चाहिए, खादी पहननेवाला होना चाहिए और ऐसा होना चाहिए जो अन्त्यजोंका तिरस्कार न करता हो आदि। सदस्यके लिए तो जो शर्तें रखी गई हैं वे निम्नलिखित हैं :

१. उसकी आयु २१ वर्षकी अथवा उससे ज्यादा होनी चाहिए।

२. वह प्रतिवर्ष चार आना चन्दा देगा।

३. स्वराज्यको हिन्दुस्तानका ध्येय मानेगा।

४. स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए शान्ति और सत्य, इन्हीं दो साधनोंको स्वीकार करेगा।

इतनी शर्तोंका पालन करनेवाला व्यक्ति भले ही सरकारसे सहयोग करनेवाला हो, खिताबयाफ्ता हो, वकील हो, विलायती कपड़े पहनता हो तथापि वह कांग्रेसका सदस्य बन सकता है। कांग्रेस एक ही पक्षका प्रतिनिधित्व नहीं करती और इसीसे इसका सदस्य बननेके लिए कमसे-कम प्रतिबन्ध ही होने चाहिए। जो सर्वमान्य प्रतिबन्ध हैं उन्हीं प्रतिबन्धोंको रखा गया है। यह तो हुआ कांग्रेसकी नियमावलीका अर्थ।

मुझे निजी तौरसे निस्सन्देह यह उम्मीद है कि अब असहयोग भी इतना व्यापक बन गया है कि सभी असहयोगी ही होंगे। लेकिन देशकी भावनाको पढ़नेमें मुझसे भूल भी हो सकती है अथवा यह भी हो सकता है कि देश जो मानता है उसे आज करनेके लिए तैयार नहीं है। हाँ, असहयोगी होनेका दावा करनेवाले व्यक्तिसे मैं अवश्य ही असहयोगकी शर्तोंका पालन करनेकी अपेक्षा करता हूँ। लेकिन अगर कांग्रेसके सदस्य अधिक संख्यामें असहयोगी बन जायें तो वे आगामी [अधिवेशनमें] कांग्रेसके विचारोंको बदल भी सकते हैं। दिन-प्रतिदिन मामला शुद्ध होता जाता है, साध्य और साधन स्पष्ट होते जाते हैं। "कठिन समयमें (जो टिका रहे वही) मर्द" इस कहावतके अनुसार हम देशमें 'मर्द'की तलाश करते रहते हैं। इस मर्दकी तलाश करनेमें कांग्रेस एक साधन है।

अली बन्धुओंकी प्रतिज्ञा

मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना शौकत अलीने अपने हस्ताक्षरों सहित जो स्पष्टीकरण प्रकाशित किया है वह नीचे दिया जा रहा है।[1]

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५–६–१९२१

९०. टिप्पणियाँ

वक्तकी पुकार

यह महीना खत्म होनेसे पहले अगर हमने बेजवाड़ा-कार्यक्रम पूरा नहीं किया तो यह एक दुःखद घटना ही होगी। इन टिप्पणियोंके प्रकाशित होते-होते इस महीनेके सात दिन निकल जायेंगे। बेकार खोनेके लिए अब एक मिनटका समय भी नहीं है। हम अबतक मुश्किलसे बीस लाख रुपये ही जमा कर पाये हैं। अगले तीन हफ्तोंमें अस्सी लाख इकट्ठा करना असम्भव-सा ही लगता है। लेकिन हम काममें जुट जायें और रात-दिन एक कर दें तो असम्भव भी सम्भव हो सकता है। इक्कीस सूबे हैं और अगर हर सूबा अपनी हैसियत और काबिलियतके मुताबिक दे तो बाकीकी रकम आसानीसे मिल सकती है। बेजवाड़ा-जैसा ठोस कार्यक्रम देशके सामने पहली बार रखा गया है। अगर लोग साथ दें और काफी कार्यकर्त्ता निकल पड़ें तो तीस करोड़ लोगोंसे स्वराज्य-जैसे महान् उद्देश्यके लिए और लोकमान्यकी स्मृति-रक्षा-जैसे ऊँचे कामके लिए एक करोड़ रुपया जमा कर लेना कोई बड़ी बात नहीं। चाहें तो हमारे देशकी महिलाएँ ही अपने गहनोंके रूपमें इतना रुपया दे सकती हैं; और चाहें तो शराब पीनेवाले अपनी शराबकी मदसे ही इतनी रकम जमा कर सकते हैं। स्वदेशी आन्दोलनसे सबसे ज्यादा फायदा उठाया है मिल-मालिकोंने; वे चाहें तो एक दिनमें अस्सी लाख रुपया दे सकते हैं। अकेले मारवाड़ी अपनी पूँजीको छुए बिना ही इतनी रकम जमा कर दे सकते हैं; और यही बात भाटियों, मेमनों, पारसियों और बनियोंके बारेमें भी है। ये सब मालदार तबके हैं और हमेशा सार्वजनिक कार्योंमें कमोबेश मदद करते रहे हैं। चाहें तो सिन्धी भी इतनी रकम दे सकते हैं। अगर देशके मजदूर अपनी सालाना कमाईका सिर्फ बारहवाँ हिस्सा देनेको तैयार हो जायें तो इतनी रकम निकल आयेगी। मैंने कई दोस्तोंसे सलाह ली है कि हिन्दुस्तानके अलग-अलग तबकोंमें कौन कितना दे सकता है। नीचे एक काम-चलाऊ आधार प्रस्तुत किया जाता है:

(१) नौकरीपेशा लोग अपनी माहवारी तनख्वाहका दसवाँ हिस्सा दें।

(२) वकील, डाक्टर, व्यापारी और इसी तरहके दूसरे लोग पिछले मई महीनेको आधार मानकर अपनी सालाना आमदनीका बारहवाँ हिस्सा दें।

१. देखिए "अली भाइयोंकी क्षमा-याचनाका मसविदा", २१–५–१९२१।

(३) धनवान अपनी जायदादकी कीमतका ढाई सैकड़ा दें।

(४) बाकी सारे लोग कमसे-कम चार-चार आने दें।

अगर सब लोग इस हिसाबसे दें तो कई करोड़ रुपए हो जायेंगे। लेकिन असहयोग करनेवालों और असहयोगसे सहानुभूति रखनेवालों में तो सभी तबकोंके लोग हैं, और कोई तबका इस हदतक पूरा-पूरा असहयोगी नहीं हो पाया है कि चन्दा देनेकी अपनी जिम्मेदारी महसूस करे। तो इस तरह चन्दा देनेका सवाल हम सबकी ईमानदारी, तत्परता और क्षमताकी कसौटी है। उम्मीद की जाती है कि इस महीने की ३० तारीखको हम इस कसौटीपर खरे उतरेंगे।

एक सवाल बार-बार पूछा जाता है कि इतनी भारी रकमकी जरूरत किस लिए है। जवाब सीधा-सादा है। स्वराज्य-कोषमें पैसा देना निजी फायदेके लिए न सही, सार्वजनिक लाभकी बात है। यह रकम खास तौरपर चरखे बाँटने और राष्ट्रीय शिक्षण संस्थाओंको चलानेमें खर्च की जायेगी। अगर उजड़ी-उखड़ी गृहस्थियोंको भी परिवार-का नाम दिया जा सके तो हमारे यहाँ लगभग छः करोड़ परिवार हैं। इन परिवारोंको चरखे देकर इन्हें सच्ची और खुशहाल गृहस्थियाँ बनाना है। इसके लिए कमसे-कम एक करोड़ रुपया तो चाहिए ही; इससे कममें कताईको घर-घर नहीं पहुँचाया जा सकता। उसी तरह अपनी शिक्षा-प्रणालीके पुनर्निर्माणके लिए भी हमें एक करोड़से ज्यादा ही रुपयेकी जरूरत होगी।

दूसरा सवाल यह पूछा जाता है कि यह-सब पैसा खर्चने और उसका हिसाब रखनेमें ईमानदारी बरती ही जायेगी इस बातकी क्या गारंटी है? इसके जवाबमें पहली बात तो यह कि हमारे पास सर्वश्री छोटानी और जमनालाल-जैसे प्रामाणिक कोषाध्यक्ष हैं, जिनकी ईमानदारीमें सन्देह किया ही नहीं जा सकता। दूसरे, हमारे पास पण्डित मोतीलाल नेहरू-जैसे बहुत काबिल, तजुर्बेकार और उतने ही खरे एवं ईमानदार मन्त्री हैं। और तीसरे यह कि हमारे पास देशके पन्द्रह प्रतिनिधियोंकी एक सदा चौकस कार्य-समिति है, जिसकी कांग्रेसकी कार्रवाइयोंका कारगर ढंगसे नियन्त्रण करनेके लिए महीनेमें कमसे-कम एक बार बैठक होती है। यह तो हुई अखिल भारतीय पैमानेपर हिसाब-किताबकी बात। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी कुल कोषका सिर्फ चौथाई हिस्सा खर्च कर सकती है। बाकी तीन चौथाई हिस्सा प्रान्तीय (प्रादेशिक) कमेटियोंके पास उनकी अपनी जरूरतोंके लिए छोड़ दिया जाता है। और हर प्रान्त-से यह उम्मीद की जाती है कि वह अपने आय-व्ययका ठीक ब्यौरा रखेगा और पैसे-पैसेको समझ-बूझकर खर्च करेगा। फिर केन्द्र और प्रान्तके आय-व्ययके पूरे हिसाबकी जाँचके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी लेखा-परीक्षक नियुक्त करेगी।

जैसी व्यवस्था रुपए-पैसेके लिए है, ठीक वैसी ही सदस्योंकी भरती और चरखोंके निर्माण एवं वितरणके बारेमें भी है। ये तीनों चीजें हमारी रचनात्मक सामर्थ्यकी सीधी और कारगर कसौटियाँ हैं।

कांग्रेस और खिलाफतके कार्यकर्त्ताओंको मेरा यह सुझाव है कि वे महीनेके आखिरी दस दिनोंको कांग्रेस-दिवसोंके रूपमें मनायें और बेजवाड़ा-कार्यक्रम पूरा करनेके लिए अपनी पूरी ताकत लगा दें। न भाषण देनेकी जरूरत है और न सभाएँ करनेकी।

जो काम हमारे सामने है और जिसे हमें पूरा करना है उसके लिए चुपचाप घर-घर जाना और एक-एक आदमीको समझाकर राजी करना भाषणों और सभाओंसे कहीं अधिक प्रभावोत्पादक है।

गुजरातका संकल्प

गुजरातने अपना प्रादेशिक सम्मेलन और खिलाफत सम्मेलन भड़ौंचके ऐतिहासिक नगरमें किया। दोनों सम्मेलन नर्मदाके सुरम्य तटपर किये गये। खद्दर और चरखेकी एक प्रदर्शनी भी वहाँ की गई। उसमें कई तरहके चरखे प्रदर्शित किये गये, जो इस बातके प्रमाण थे कि भारतीयोंकी खोज-बुद्धिका कितना लाभकारी उपयोग किया जा सकता है। लेकिन इससे पाठकोंको यह नहीं समझ बैठना चाहिए कि वहाँ कोई ऐसा चरखा भी प्रदर्शित किया गया था जिसमें कई तकुए थे और जो अपेक्षाकृत बहुत ज्यादा सूत कात सकता था। स्वागत-समितिके अध्यक्ष और सम्मेलनके सभापति दोनोंके भाषण अत्यन्त संक्षिप्त और सारगर्भित थे। स्वागताध्यक्ष श्री हरिभाई अमीनने अपना स्वागत भाषण सिर्फ पन्द्रह मिनटमें पढ़कर सुना दिया। सभापति श्री वल्लभभाई पटेलने भी अपना पूरा भाषण पढ़नेमें तीस मिनटसे ज्यादा वक्त नहीं लिया। उनका यह भाषण एकदम सरल, संक्षिप्त, प्रसंगानुकूल और सौजन्यसे परिपूर्ण था। मैं अपने सभी पाठकोंको यह भाषण पढ़नेकी सलाह देता हूँ। असहयोगके विरोधियोंके बारेमें इसमें कहीं भी कटु शब्दोंका प्रयोग नहीं किया गया है। सरकारकी आलोचना भी बड़े संयत ढंगसे की गई है। इस भाषणमें ज्यादातर तो असहयोगके रचनात्मक हिस्सेके ही बारेमें कहा गया है।

लेकिन इस सम्मेलनकी सबसे महत्त्वपूर्ण बात वह प्रस्ताव है जिसमें बेजवाड़ा-कार्यक्रममें गुजरात क्या करेगा यह तय किया गया है। इस प्रस्तावके अनुसार, तिलक स्वराज्य-कोषके लिए जो राशि निश्चित की गई थी गुजरात उससे तीन गुनी राशि यानी दस लाख रुपये इकट्ठे करेगा, पूरे-पूरे यानी तीन लाख सदस्य भरती करेगा और एक लाख यानी मूल राशिके लगभग दूने चरखे तैयार करके बाँटेगा। मैं यह तो नहीं कहता कि अगर इतना काम पूरा कर दिया गया तो यह गुजरातके लिए कोई गर्व करने लायक काम होगा; मगर इतना जरूर कहूँगा कि अगर ३० जूनसे पहले यह-सब हो गया तो बुरा नहीं कहा जायेगा। दस लाख रुपया चन्दा जमा करनेके लिए अलग-अलग जिलोंका अपना-अपना हिस्सा तय कर दिया गया है, ताकि ढंगसे पैसा इकट्ठा किया जा सके। अभी गुजरातमें कांग्रेसके ४०, ५१४ सदस्य हैं। १,४०,१४९ रुपया चंदा किया जा चुका है, और उसमें से ३५ हजार रुपये अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको भेजे गये हैं। चरखोंकी तादाद २०,०५८ है।

राष्ट्रीय शिक्षाके मामलेमें गुजरात सबसे आगे, मगर वकालत छोड़नेके मामलेमें सबसे कमजोर है; अभीतक सिर्फ आधा दर्जन वकीलोंने अपनी वकालत छोड़ी है। राष्ट्रीय शिक्षामें गुजरातकी प्रगतिके विषयमें विवरणमें कहा गया है:

> **गुजरातमें राष्ट्रीय शिक्षाका काम करनेवाली २४५ संस्थाएँ हैं, जिनमें सब मिलाकर ३२,१०२ विद्यार्थी हैं। इस वृद्धिका आंशिक कारण अहमदाबाद नगरपालिकाके स्कूलोंको भी इसमें मिला लेना है।**

गुजरात विद्यापीठकी विभिन्न परीक्षाओंमें सम्मिलित होनेवाले विद्यार्थियोंकी संख्या इस प्रकार है — बी० ए० में ४६, बी० एससी० में ४, इंटरमीडिएट आर्ट्समें ९६, इंटर विज्ञानमें ४६ और मैट्रिक परीक्षामें ५४८। उत्तीर्ण परीक्षार्थियोंकी संख्या क्रमशः ३९, २, ६५, ९ और ३७४ रही।

पंजाब आगे बढ़ रहा है

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके महामन्त्रीको पंजाबमें असहयोगके कामका जो विवरण दिया गया, उसे मैंने भी देखा। पाठकोंकी जानकारीके लिए उक्त रिपोर्टसे कुछ उत्साहवर्धक आँकड़े मैं नीचे उद्धृत कर रहा हूँ। विवरण तैयार किये जानेकी तिथि यानी ३० अप्रैलतक कुल २,०९,०८१ रुपये, १३ आने चन्दा जमा हुआ। जिस मुस्तैदीसे वहाँ चन्दा जमा किया गया उसके बारेमें मैं पहले लिख चुका हूँ। पंजाब सब सूबोंसे आगे है और इसके लिए उसे बधाई दी जानी चाहिए। अन्य किसी सूबेने भी अबतक दो लाख जमा किये हैं, यह मुझे नहीं मालूम। लेकिन जैसा कि कायदा है, ज्यादा देनेवालों से और भी ज्यादाकी उम्मीद की जाती है, इसलिए मैं आशा करता हूँ कि निर्धारित समयके इस आखिरी महीनेमें पंजाब और भी जोर लगायेगा और सम्भव हुआ तो जितना कर चुका है उससे ज्यादा इकट्ठा करके अपने प्रथम स्थानको अक्षुण्ण बनाये रहेगा। मैंने सम्भव शब्दका प्रयोग इसलिए किया कि यद्यपि बम्बईका सूबा अभीतक बिलकुल सोया पड़ा है, लेकिन दूसरा कोई भी सूबा उसे मात दे सके ऐसी सम्भावना मुझे दिखाई नहीं देती। लेकिन पंजाबकी सामर्थ्य मैं जानता हूँ और यदि वह पक्के इरादेसे जुट जाये तो चाहे प्रथम न रह सके पर उसका दूसरा नम्बर तो कहीं जा नहीं सकता। मैं चन्दा माँगनेके मामलेमें मालवीयजी महाराजके बाद लालाजीका[1] ही नम्बर समझता हूँ। आर्यसमाजकी हलचलोंके कारण पंजाबका मध्यम वर्ग राजनैतिक आन्दोलनोंके लिए खुले हाथों पैसा देनेका अभ्यस्त हो गया है। बाकीकी रकम अकेले अमृतसरके व्यापारी ही पूरी कर सकते हैं। और एक हिसाबसे अमृतसरको बाकी रकम पूरी करनी भी चाहिए। फिर जालन्धर, लायलपुर, रावलपिंडी, मुलतान, गुजराँवाला, स्यालकोट, हाफिजाबाद आदि भी हैं, जिनमें से हरेक काफी बड़ी रकम दे सकता है। लाहौर खासमें भी बहुत-से धनी व्यापारी हैं, मगर मुश्किल यह है कि हममें आत्मविश्वासकी कमी है, वरना पंजाब और बम्बई दोनों ही मिलकर सारी कसर पूरी कर सकते हैं। और कमसे-कम पंजाबसे तो हमें यह आशा करनी ही चाहिए।

शिक्षाके मामलेमें भी पंजाबका काम बुरा नहीं है। हालाँकि मार्शल लॉके दिनोंमें पंजाबके कालेजों और स्कूलोंके विद्यार्थियोंको जितना कुछ भुगतना पड़ा है, उसे देखते हुए वहाँ इस दिशामें और भी ज्यादा काम होना चाहिए था। ३५० से ज्यादा विद्यार्थी हमेशाके लिए कालेज छोड़ चुके हैं। इनमें से ८५ के करीब जो सबसे प्रतिभासम्पन्न छात्र थे, वे राष्ट्रकी सेवामें लग गये हैं। राष्ट्रीय शिक्षाका एक मण्डल भी वहाँ बन गया है। गुजराँवाला के ‘गुरु नानक खालसा कालेज’ ने वहाँके विश्वविद्यालयसे अपना सम्बन्ध-

१. लाला लाजपतराय।

विच्छेद कर लिया है। कांग्रेसकी प्रादेशिक समितिने लाहौरमें एक नेशनल कालेज खोल दिया है। पुराने आठ स्कूलोंने, जिनमें कुछ तो काफी प्रतिष्ठित हैं, अपनेको राष्ट्रीय शिक्षण संस्थामें परिवर्तित कर लिया है और पन्द्रह नये राष्ट्रीय स्कूल और भी खोले गये हैं। अगर श्री सन्थानम् (मन्त्री) इन राष्ट्रीय संस्थाओंमें शिक्षा पा रहे विद्यार्थियोंकी ठीक-ठीक संख्या बता सकते तो बहुत अच्छा होता। कुछ स्कूलोंको देखनेका मुझे मौका मिला है, उसके आधारपर मैं कह सकता हूँ कि सब मिलाकर पाँच हजार-से कम विद्यार्थी तो नहीं ही होंगे। करीब २५ शिक्षकोंने सरकारी नौकरी छोड़ दी है। ४१ वकीलोंने प्रैक्टिस बन्द कर दी है। इनमें से १३ वकील प्रादेशिक समितिसे गुजारा पा रहे हैं। ८० स्थानोंमें पंचायतें कायम हो गई हैं। अप्रैल महीनेके अन्तमें पंजाबमें २५८ कांग्रेस कमेटियाँ थीं। हर कमेटीकी औसत सदस्य संख्या ७५ है। रोहतक जिलेका नम्बर पहला है, वहाँ ४७ कमेटियाँ हैं।

चरखेके मामलेमें तो पंजाबको भारतका दूसरा कोई भी सूबा मात नहीं दे सकता। रिपोर्टमें यह बात बड़े गर्वके साथ कही गई है कि शायद ही ऐसा कोई घर होगा जहाँ चरखा न मिले। "कुछ ही दिन पहलेतक लोग हाथपर-हाथ धरे बैठे रहते थे, लेकिन पिछले दो महीनेसे सभी घरोंमें चरखा चलानेकी पुरानी बात रूढ़ होती जा रही है।" पंजाबमें चरखेका आम रिवाज होनेके बावजूद, यह कितने दुःखकी बात है कि पंजाबी लोग आसानीसे पसीना सोखनेवाली सुन्दर, मुलायम और टिकाऊ खादीके बदले मिलका भड़कीला, भोंड़ा, कड़ा और कलफदार कपड़ा पहनते हैं, जो हमारे देशके मौसमके जरा भी अनुकूल नहीं। इसलिए रिपोर्टमें यह पढ़कर कि "खाते-पीते मालदार तबकोंमें खद्दर पहननेका चलन दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है" मुझे बहुत खुशी हुई। पंजाबमें जुलाहोंकी भारी कमी महसूस की जा रही है। बहुतसे लोगोंको यह नहीं मालूम कि भरती-एजेंटोंकी धूर्ततापूर्ण, चिकनी-चुपड़ी और सब्ज बाग दिखानेवाली बातोंमें फँसकर पंजाबी जुलाहे अपना पेशा छोड़कर फौजका, हत्या करनेका पेशा अपनाते जा रहे हैं। किसी जमानेमें पंजाबमें जुलाहोंकी संख्या सारे भारतकी तुलना-में, वहाँकी आबादीके लिहाजसे, काफी ज्यादा थी। अब चूँकि बुनाईका धन्धा दिनोंदिन इज्जत और अच्छी कमाईका धन्धा होता जा रहा है, यह आशा की जाती है कि तथाकथित सिपहगरीके बदनाम धन्धेके बदले पंजाबी लोग इस नायाब पेशेको ज्यादासे-ज्यादा अपनायेंगे।

इस तरह असहयोगके मामलेमें पंजाबके आँकड़े कुल मिलाकर अच्छे ही कहे जायेंगे।

असमिया कुली

मैंने इस झगड़ेके बारेमें जान-बूझकर ही नहीं लिखा, वैसे श्री एन्ड्रयूज और दूसरे लोगोंसे जो मौकेपर पहुँचकर मामलेको सुलझानेकी कोशिश कर रहे हैं, मैं सम्पर्क बनाये हुए हूँ। वहाँ झगड़ा कैसे शुरू हुआ, इसके बारेमें मुझे कुछ भी नहीं मालूम। अगर मेरा नाम लेकर किसीने मजदूरोंसे मालिकोंको छोड़ जानेकी बात कही हो तो मुझे उसके लिए सख्त अफसोस है। जाहिरा तौरपर यह मालिकों और मजदूरोंका झगड़ा

मालूम पड़ता है। यह बात भी मंजूर की गई है कि मालिकोंने मजदूरीकी दरें कम कर दी हैं। श्री दास और श्री एन्ड्रयूज दोनोंका यही कहना है कि झगड़ा शुद्ध रूपसे आर्थिक है और सचमुच कुलियोंकी कई शिकायतें भी हैं। यह भी मानना ही होगा कि पुनर्गठित सरकार इस मसलेको हल करनेमें नाकामयाब रही है। यह बात भी मेरे देखनेमें आई है कि 'टाइम्स आफ इंडिया' अखबारने इस झगड़ेका बहुत ही बेजा इस्तेमाल किया, और भारतमें ब्रिटिश व्यावसायिक हितोंसे दुश्मनीका आरोप इसके मत्थे मढ़ दिया है। असहयोगियोंपर नफरतका मनगढ़न्त आरोप लगानेका तो जैसे रिवाज ही हो गया है। मैं इस सचाईपर पूरा जोर देना चाहता हूँ कि एक असहयोगने ही जातियोंके आपसी झगड़ों और दंगोंको रोका है और आम जनताके गुस्सेको उचित दिशामें मोड़ा है। जाति-विशेषसे सम्बन्धित होनेके ही कारण किसीके हितको हानि पहुँचाना असहयोगका उद्देश्य नहीं है। उसका उद्देश्य है हर एक निहित स्वार्थको उसके हानिकारक और अपवित्र तत्त्वोंसे मुक्त करना। अन्याय या पशुबलपर आधारित, या भारतके विकासके प्रतिकूल हर ब्रिटिश या भारतीय हित आज बिला शक खतरेमें है। सार्वजनिक सद्भावनाके बदले महज पशुबलपर आधारित कोई भी हित आज असहयोगकी आँचसे बचा नहीं रह सकता। असमके बागानोंके मालिक अगर भारतीय मजदूरोंके शोषणपर पोषित नहीं हैं तो उन्हें डरनेकी कोई जरूरत नहीं। समय आ रहा है जब अनाप-शनाप मुनाफा किसी भी तरह नहीं कमाया जा सकेगा। बड़े कारबारके मुनाफों और वहाँके मजदूरोंकी तनख्वाहोंमें जमीन-आसमान-का अन्तर नहीं होना चाहिए। मैं ये दो टूक बातें इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि मैं विश्वासपूर्वक जानता हूँ कि असहयोगको संगीनोंसे दबाया नहीं जा सकता। उसने भारतीयोंके दिलोंमें अपना सुरक्षित स्थान बना लिया है। मेरे जैसे कार्यकर्त्ता अपना समय आनेपर चले जायेंगे लेकिन असहयोग तो फिर भी रहेगा। मैं समझता हूँ कि अभीतक भारतीय मजदूरवर्ग इतना प्रबुद्ध नहीं हो पाया है कि पूँजी और श्रमके पारस्परिक रिश्तेको न्यायपर आधारित करके उसे निभा सके। लेकिन वह समय आ रहा है — हमारी कल्पनासे कहीं तेज गतिसे आ रहा है। मैं आशा करता हूँ कि पूँजीपति, चाहे वे यूरोपीय हों या भारतीय, इस नई जागृति और नई शक्तिको जो हमारे बीचमें उभर रही है परखेंगे-समझेंगे।

मंजूरीके काबिल नहीं

कुछ अखबारोंने अली बन्धुओंकी सफाईको जेलकी तकलीफोंसे जान बचानेवाले कमजोर आदमीका माफीनामा समझनेकी भूल की है, इसलिए उन्होंने यह सुझाव दिया है कि जेलकी सजा काट रहे दूसरे राजनैतिक बन्दियोंसे भी सरकारको इसी तरहका वचन लेकर उन्हें रिहा कर देना चाहिए। कोई भी सच्चा असहयोगी सरकारको किसी भी तरहका वचन देकर जेलसे नहीं छूट सकता और न छूटना चाहेगा। प्रायः सभी राजनीतिक बन्दियोंने हिंसाके इरादेसे इनकार करते हुए अपने-आपको निर्दोष बतलाया है। अली बन्धु दण्डित हो जानेपर भी अपना यह बयान तो जरूर ही देते, इस बयानसे उनका जेल जाना रुक नहीं सकता था। इस तरहका

अस्वीकार्य सुझाव देनेवाले लोग भी इतना तो जानते ही हैं कि अधिकतर सजाएँ अश्रद्धा फैलाने या भाषण न करनेकी जमानत देनेसे इनकार करनेपर ही दी गई हैं। वर्तमान सरकारके प्रति अश्रद्धा फैलाना, देशको सविनय अवज्ञाके लिए तैयार करना और ऊपर बताये हुए ढंगकी जमानतें देनेसे इनकार करना हर असहयोगीका कर्त्तव्य है। अली बन्धुओंने ऐसा कोई वचन नहीं दिया है कि वे अश्रद्धा नहीं फैलायेंगे या देशको सविनय अवज्ञाके लिए तैयार नहीं करेंगे। इसलिए अगर सरकार हिंसाके उकसावेको ही दण्डनीय अपराध मानती है तो उसे इधर हालमें गिरफ्तार किये हुए करीब-करीब सभी राजबन्दियोंको, उनसे कोई भी वचन लिये बिना, बिना शर्त रिहा कर देना चाहिए। जहाँतक असहयोगियोंका सवाल है उन्हें इस मामलेमें सर्वथा उदासीन रहना चाहिए। उनमें से अधिकांशको जेलकी जिन्दगीको ही सामान्य जिन्दगी समझना चाहिए। बहुत-से लोग वचन देकर छूटनेके बदले खुशी-खुशी जेल जा रहे हैं। उन सबके नाम पढ़कर मुझे बड़ी प्रसन्नता होती है। अपना प्रण न टूटे इसकी पूरी सावधानी बरतते हुए, असहयोगीको चाहिए कि वह किसीको किसी भी तरहका वचन न दे।

विध्वंसात्मक कार्यक्रम

'लीडर' अखबारने इस कार्यक्रमका सारा श्रेय मुझे अनायास ही दे डाला है और साथ ही यह कहकर मेरी हँसी उड़ाई है कि मैंने देशको असहयोगका विध्वंसात्मक पक्ष अपनानेकी सलाह दी है। उस अखबारके एक संवाददाताने तो मुझसे अनुरोध भी किया है कि कार्यक्रमके विध्वंसात्मक भागको मुझे वापस ले ही लेना चाहिए। सबसे पहले तो मैं 'लीडर' और उसके संवाददाताको यह बता देना अपना फर्ज समझता हूँ कि अगर मैं चाहूँ तब भी ऐसा नहीं कर सकता। वह अधिकार तो सिर्फ कांग्रेस और केन्द्रीय खिलाफत समितिको ही है। और कार्यक्रमके विध्वंसात्मक अंशमें मेरा सतत विश्वास होनेके कारण, अगर कांग्रेस और केन्द्रीय खिलाफत समितिने कभी उसे वापस ले भी लिया तो भी मैं उसपर अमल करना बन्द नहीं कर सकूँगा। अहिंसामें उनका सम्पूर्ण विश्वास नहीं भी हो सकता, एक संस्थाका तो नहीं ही है। लेकिन मेरे निकट तो अहिंसा ही सारी बीमारियोंका एकमात्र और रामबाण इलाज है। इसलिए मैं न तो वकीलोंको फिरसे वकालत शुरू करनेकी सलाह दे सकता हूँ और न विद्यार्थियोंको सरकारी स्कूलोंमें लौट जानेकी; और न ही मैं वकीलों तथा सरकारी स्कूल-कालेजोंके विद्यार्थियोंसे कांग्रेसके तत्त्वावधानमें, जबतक वह असहयोग-पर आमादा है, सरकारी पद-ग्रहण करनेकी बात ही कह सकता हूँ।

असहयोगके प्रथम चरणमें विध्वंसात्मक अंशके मौखिक प्रचारका काम पूरा हो चुका है। खिताबों, अदालतों, स्कूलों और कौंसिलोंके सम्बन्धमें हमें अपनी ठीक-ठीक स्थिति मालूम हो गई है। और मेरे खयालसे असहयोगियोंको इस बातका सन्तोष है कि इन संस्थाओंकी अब वह पहलेवाली धाक और प्रतिष्ठा नहीं रही। विरोधियोंको जरूर इस बातकी खुशी हो सकती है कि लोगोंने बहुत बड़ी संख्यामें इसमें हिस्सा नहीं लिया। फिर भी जिन लोगोंने इस आह्वानको सुना वे संख्यामें भले ही बहुत नहीं हैं

और उनके कामका शोर भी नहीं मचा, परन्तु उसका काफी कारगर प्रचारात्मक असर तो हुआ ही। और एक बात तो बिलकुल साफ है। जबतक कांग्रेसकी तीनों शर्तें पूरी नहीं हो जातीं, सहयोग करनेकी बात सोची भी नहीं जा सकती।

मैं मंजूर करता हूँ कि अकेला 'बेजवाड़ा-प्रस्ताव' अपने-आपमें स्वराज्य कायम करनेके लिए काफी नहीं है। लेकिन मैं उसे स्वराज्यकी दिशामें एक काफी अच्छा कदम मानता हूँ। कार्यक्रमकी पूर्ति राष्ट्रमें आत्मविश्वास पैदा करेगी और उसे इस योग्य बना देगी कि आवश्यकता पड़नेपर वह दूसरे कदम उठा सके। कांग्रेसके सदस्य राष्ट्रकी विभिन्न सभा-समितियोंके लिए राष्ट्रीय प्रतिनिधियोंका निर्वाचन करते हैं, इसलिए कांग्रेसके एक करोड़ सदस्य बनानेका मतलब है एक करोड़ निर्वाचक, जो स्वराज्यमें सच्चे निर्वाचक-मण्डलका बीजकेन्द्र होंगे। बीस लाख चरखे चलते रहनेका मतलब है कि भारत गरीबीको मार भगाने, आत्मनिर्भर बनने और आर्थिक स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिए कृत-संकल्प है। एक करोड़ रुपया इकट्ठा करना इस बातका जीता-जागता प्रमाण है कि देशने अपने भाग्यको सँवारनेका पक्का फैसला कर लिया है।

दूसरे मुल्कोंके इतिहास हमारे मन-मस्तिष्कपर इस तरह छाये हुए हैं कि हम किसी भी तरह इस बातपर विश्वास नहीं कर पाते कि यहाँ भी तीस या सौ वर्षों-तक चलनेवाली लड़ाइयोंकी पुनरावृत्ति हुए बिना और इसीलिए अच्छी सैनिक शिक्षा और काफी अस्त्र-शस्त्रोंके बिना हम स्वतन्त्र हो सकते हैं। अपने इतिहासकी ओर हम आँख उठाकर भी नहीं देखते और सर्वथा भूल जाते हैं कि इस महान् देशमें सम्राट् और राजाधिराज आये और चले गये, राजवंश बने और बिगड़े पर देश और जनता उनसे अछूती ही रही, उसपर कोई असर नहीं हुआ। यहाँतक कि पिछले महायुद्धका यह ताजा सबक भी हम याद नहीं रखना चाहते कि हमें फौजी तैयारियों-की इतनी जरूरत नहीं है जितनी कि भारतके भविष्यके बारेमें अपना दृष्टिकोण बदलनेकी। गुलामीकी आदतके कारण हमारे मनमें यह धारणा बद्धमूल हो गई है कि हम कुछ नहीं हैं, इसीलिए करोड़ोंकी संख्यामें होते हुए भी हम अपने-आपको लाख-दो लाख अंग्रेजोंके मुकाबले हेय समझते हैं, जब कि सारेके-सारे अंग्रेज शासक भी नहीं हैं। जिस दिन हम अपनेको दीन-हीन समझना छोड़ देंगे और ब्रिटिश राज्यका भय अपने अन्दरसे निकाल फेंकेंगे उसी दिन स्वतन्त्र भी हो जायेंगे। यह वैचारिक क्रान्ति इसी सालके दौरान की जा सकती है, इसमें मुझे जरा भी सन्देह नहीं है। और मैं यह आशा करता हूँ कि भारत निर्धारित समयपर तैयार हो जायेगा। अभीतक हमने प्रतिज्ञाएँ तो बहुत कीं परन्तु उनमें से पूरी एक भी नहीं की। अगर हम कांग्रेसके पिछले दो साल पुराने प्रस्तावोंको निकालकर देखें तो पता चलेगा कि जिन प्रार्थनापत्रोंको भेजनेका हमने फैसला किया था उन तकको नहीं भेजा। अभीतक हम हर बातके लिए सरकारका मुँह ताकते रहे हैं, जब कि उसने हमारे लिए किसी भी मामलेमें कुछ भी नहीं किया है। इसीलिए हमारे अन्दर गहरी निराशा घर कर गई है। न हमें अपने-आपपर विश्वास रह गया है, न सरकारपर ही। वर्तमान आन्दोलन, निराशाकी काली रातको आशा और विश्वासकी सुनहरी किरणमें बदलनेकी कोशिश है। जब हम अपने-आपपर विश्वास करने लग जायेंगे तो मैं दावेके साथ कहता हूँ

कि अंग्रेज लोग भी हमपर विश्वास करने लगेंगे। केवल तभी हमारे और सरकारके बीच किसी तरहके सहयोगकी आशा की जा सकती है। विश्लेषण करनेपर यही पता चलेगा कि वर्तमान सरकार और उसका सारा तन्त्र हमारी खामियों और कमजोरियों-के वैज्ञानिक अध्ययनपर आधारित है और हमारी कमजोरियोंको कम करनेके बजाय वह उलटा उन्हें बढ़ाती ही है। इसलिए असहयोग जहाँ हमारी अपनी कमजोरियोंका विरोध है वहीं वह वर्तमान शासन-प्रणालीमें भिदे हुए भ्रष्टाचारका भी विरोध है। अंग्रेज हों या भारतीय, इस प्रणालीसे सम्बन्धित होते ही हम भ्रष्ट और पतित हो जाते हैं। इनमें से किसी एक पक्षके हटते ही दोनों शुद्ध और पवित्र हो जाते हैं। मैं तो सन्देहवादियोंसे भी यही कहता हूँ कि परीक्षणकी खातिर ही सही, वे एक बार असहयोगके कार्यक्रमको अपनाकर तो देखें; और मैं वादा करता हूँ कि यदि कार्य-क्रमका सांगोपांग पूरा किया गया तो एक सालके अन्दर भारतमें स्वराज्य जरूर कायम हो जायेगा।

स्वराज्यका मतलब है आत्मनिर्भरता

वाइसरायसे मेरी भेंटका जिक्र करते हुए एक आदरणीय मित्र लिखते हैं:

मेरी विनम्र रायमें, आजकी परिस्थितियोंमें असहयोगी नेताओंकी ऐसी मुलाकातें राजनीतिक गलती है, और हमारे आन्दोलनके लिए इसका परिणाम अनिष्टकारी हो सकता है। पंजाब और खिलाफतके अन्यायोंके पीछे स्वराज्यका प्रश्न है; और भारतके स्वराज्यका मतलब है साम्राज्यकी मौत। दूसरे शब्दोंमें और अच्छे वातावरणमें इस मौतका मतलब होगा राष्ट्र-मण्डलके रूपमें साम्राज्य-का पुनर्जन्म। लेकिन विश्व-राजनीतिकी उन्मुक्त और उदार दृष्टिसे सम्पन्न ऐसा राजनीतिज्ञ आज है कहाँ जो ब्रिटिश हितोंसे ऊपर उठकर मानवताके आधार-भूत मूल्योंपर ध्यान दे सके? स्वराज्यके आन्दोलनकी जीतका मतलब मैं यह नहीं लगाता कि लॉर्ड रीडिंगसे[1] कुछ सुविधाएँ हथिया ली जायेंगी; मेरे निकट उसका मतलब है आत्मनिर्भरता। मेरी समझमें तो इस तरहकी उलझनों और गड़बड़ियोंको रोकनेका एक ही उपाय है और वह है समूचे राष्ट्रका समग्र रूपसे सरकारसे बातचीत बन्द करके कष्टसहनके निश्चयपर दृढ़तासे जमे रहना। सूलीपर लटका हुआ भारत ही स्वतन्त्र और मुक्त भारत होगा।

मैं लेखकसे इस बातपर तो सहमत नहीं हूँ कि मुलाकातें करना राजनीतिक भूल है; परन्तु हमारे दृष्टिकोणके बारेमें उनका बयान सोलहों आने ठीक है। हमें फिक्र इस बातकी नहीं होनी चाहिए कि अंग्रेज-नेता और राजनीतिज्ञोंको क्या करना चाहिए और क्या नहीं। हमारी सारी फिक्र और कोशिश तो अपने-आपको सही रास्ते-पर बनाये रखनेकी ही होनी चाहिए। हमारे अलगावका मतलब यह नहीं होना चाहिए कि हम घमण्डी और उद्धत बन जायें, या कि हम विरोधियोंको अपना दृष्टिकोण भी

१. १८६०–१९३५; भारतके वाइसराय और गवर्नर-जनरल, १९२१–२६।

समझानेको राजी न हों। अगर हममें अपने ध्येयके प्रति निष्ठा और दृढ़ता है तो हमें सारी दुनियाके पास जाकर अपनी बात समझानेके लिए तैयार रहना चाहिए। लेकिन यह आपत्ति भी कि इस तरहकी मुलाकातें खतरेसे खाली नहीं हुआ करतीं, मुझे काफी सारपूर्ण लगती है। अपनी कमसे-कम माँगपर अन्ततक डटे रहनेकी आदत न होनेके कारण आसानीसे फिसल जानेका डर तो रहता ही है।

कांग्रेसका सदस्य कौन बन सकता है?

एक मित्र पूछते हैं कि क्या वेश्याएँ कांग्रेसकी सदस्यायें बन सकती हैं और क्या वे लोग जो कांग्रेसके सिद्धान्तोंको नहीं मानते सिर्फ चार आने देकर ही सदस्य बन सकते हैं। उन अभागी बहनोंको कांग्रेसकी सदस्यायें बननेसे किसी भी तरह रोका नहीं जा सकता, अगर वे विधानकी बाकी सारी शर्तें पूरी करती हों। अगर चोर भी सदस्यताकी शर्तोंको पूरा करते हों तो उन्हें भी कांग्रेसमें शामिल होनेका अधिकार है और वे इसकी माँग कर सकते हैं। अगर समाजके पतित और गलित हिस्सोंमें कांग्रेसके सदस्य बननेकी उमंग पैदा होती है तो उसे भावी नव-निर्माणका एक शुभ संकेत ही समझना चाहिए। लेकिन सिर्फ तादाद बढ़ानेके ही लिए हम लोगोंको सदस्य बनायें या सदस्य बननेके लिए कहें, यह तो कदापि उचित नहीं। फिर यह बात भी बिलकुल साफ है, कमसे-कम मेरे निकट तो है ही, कि जो कांग्रेसके सिद्धान्तोंको मंजूर नहीं करता और उसके प्रतिज्ञा-पत्रपर दस्तखत नहीं करता वह सदस्य नहीं बन सकता। सदस्य बननेकी यह कसौटी वैसे है तो बहुत आसानपर साथ ही निहायत जरूरी भी है:

१. पूरे इक्कीस वर्षकी उम्र।
२. शान्त और वैध उपायोंसे स्वराज्य प्राप्त करनेकी अभिलाषा और उसके लिए प्रयत्न।
३. वार्षिक चार आना चन्दा।

कोई भी स्त्री-पुरुष, सहयोगी या असहयोगी, अगर ये आसान शर्तें पूरी करता है तो उसे बिना ज्यादा पूछताछके सदस्य बनाया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८–६–१९२१

९१. वाइसरायका भाषण

वाइसराय महोदयने शफी साहबके भाषणको 'भोजनके बाद की वक्तृता' कहा है। जो बात उन्होंने शफी साहबके भाषणके बारेमें कही है ठीक वही उनके अपने भाषणके बारेमें भी कही जा सकती है। मेरे विद्यार्थी-कालमें इंग्लैंडके विभिन्न प्रधान मन्त्रियोंके जो तथाकथित ऐतिहासिक भाषण मैन्शनहाउसमें हुआ करते थे, मैं उनका काफी बारीकीसे अध्ययन किया करता था। वे भाषण हमेशा ही मुझे कुछ अवास्तविकतापूर्ण लगा करते थे। और वाइसराय महोदयके भाषणको ध्यानसे पढ़नेके बाद मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि उसमें भी वैसी ही अवास्तविकता दिखाई देती है। इसका यह मतलब नहीं कि लॉर्ड रीडिंगने जान-बूझकर अपने उस भाषणमें अवास्तविकताका पुट दिया है। इसके विपरीत उन्होंने तो आस लगाये बैठे भारतको एक सच्चा सन्देश देनेकी ही कोशिश की है, जो उनके भाषणसे साफ झलकता है। लेकिन मेरी विनम्र रायमें उन्हें सफलता नहीं मिली, क्योंकि वाइसरायके पदपर आसीन होनेके कारण उनकी कुछ अपनी सीमाएँ हैं। उदाहरणार्थ वे भी अपने पूर्ववर्तियोंके समान इस परम्परागत दावेसे ऊपर नहीं उठ सके कि ब्रिटिश शासक कभी गलती कर ही नहीं सकता। उन्होंने यह मत प्रतिपादित कर दिया कि "निःसन्देह भारतमें रंगगत असमानताका कोई भी चिह्न नहीं हो सकता और न होना चाहिए"। भारतीयोंको ऐसा मत वास्तविकतासे कितना परे लगता है यह कहनेकी जरूरत नहीं; हमारा दीर्घकालीन अनुभव तो इसकी ठीक उलटी बात ही जाहिर करता है। औसत अंग्रेजके लिए जातीय श्रेष्ठता मनका एक आवेग, बल्कि कहना चाहिए कि धर्म बन गया है। और वह इसे छिपानेकी कोई कोशिश भी नहीं करता। अन्य उपनिवेशोंकी तरह भारतमें भी अंग्रेज अपनी इस वृत्तिको हमारे ऊपर थोपे रहता है। यहाँतक कि कानूनमें भी इस जातीय श्रेष्ठताको स्थान दिया गया है। पहलेकी बहुत-सी असफलताओंको वाइसरायने अपने भाषणमें कहीं भी खुले दिलसे स्वीकार नहीं किया है। इसीलिए उसमें नया अध्याय आरम्भ करनेकी, नये सिरेसे काम करनेकी सहज आकांक्षाका अभाव दिखाई देता है।

मेरी विनम्र रायमें, वाइसराय महोदयने 'ब्रिटिश राज्यके बुनियादी सिद्धान्त' के बारेमें जैसी अनुपयुक्त बात कही है लेकिन उससे भी कहीं गई-बीती बात उन्होंने मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना शौकत अलीके बारेमें कही है। मैं इस बातको मंजूर करता हूँ कि अपने भाषणमें उन्होंने सावधानी तो बहुत ही ज्यादा बरती है। किसीकी भावनाओंको चोट न पहुँचे, इसकी उन्होंने पूरी कोशिश की है। लेकिन वास्तवमें देखा जाय तो भावनाओंको चोट पहुँचानेका कोई प्रश्न ही नहीं है। यदि अली बन्धुओंने गलती की होती तो उनको माफ करनेकी कोई जरूरत नहीं थी। अली बन्धुओंसे वह बयान तो मैंने दिलवाया था; केवल मेरी ही प्रेरणासे वह दिया गया था। वह सफाई दोस्तोंको दी गई है, सरकारको नहीं। और उस बयानका मंशा दण्डसे

बचना नहीं, अपनी आत्मा और अपने दोस्तोंके सम्मुख अपनी स्थितिका स्पष्टीकरण करना ही है। ऐसी सूरतमें उन्हें यह आश्वासन देना कि जबतक वे अपने वचनका पालन करते रहेंगे, उन्हें गिरफ्तार नहीं किया जायेगा, यदि आपत्तिजनक न भी माना जाये तो उनपर एहसानका बेकार बोझ लादना ही हुआ। लॉर्ड रीडिंगकी सरकार अली बन्धुओंपर जब उसका जी चाहे मुकदमा चलानेके लिए आजाद है।

असहयोगके इस आन्दोलनमें छिपे या खुले तौरपर कहीं भी कूटनीतिकी गुंजाइश नहीं है। यहाँ तो सिर्फ एक ही कूटनीति है और वह है सत्य कहना और हर कीमत-पर उसका पालन करना। वाइसरायने मुझे अली बन्धुओंके भाषण दिखाये थे; मुझे उनमें से कुछ अंश पढ़नेमें ठीक नहीं लगे। उनसे हिंसाको भड़कानेवाला अर्थ निकाला जा सकता था। इसके लिए अली बन्धुओंकी गिरफ्तारी हो सकती है या नहीं, इसकी जरा भी चिन्ता किये बगैर मैंने मन-ही-मन पक्का फैसला कर लिया कि उन्हें अपनी सफाई देनी ही चाहिए और यही सलाह मैंने उन्हें दी। वाइसराय महोदयसे भी मैंने यही कहा था कि अगर वे असहयोगियोंके सन्देहों और अविश्वासोंको मिटाना चाहते हैं तो कूटनीति छोड़कर बिलकुल सीधा और खरा व्यवहार करें। असहयोगीको रक्षा या शरणकी जरा भी जरूरत नहीं है; वैसी सूरतमें वाइसराय महोदयको भी पारस्परिक विश्वास पैदा करनेके लिए शासक-वर्गके अपराधियोंको पनाह नहीं देनी चाहिए।

शासक-वर्गोंके लिए सचमुच न तो वर्तमान भारतमें कोई स्थान है और न भावी भारतमें रहेगा। इसलिए अगर वाइसराय महोदय अपने इस विश्वाससे चिपटे रहे कि "न्यायपूर्ण शासन करनेके हमारे इरादोंका भारतीय दिल खोलकर स्वागत करेंगे" तो उन्हें अपने इस कथनकी गलती भी मालूम हो जायेगी। मैं भविष्यवाणी कर सकता हूँ कि भारतके भविष्यके लिए इस बातका कोई मूल्य नहीं रहेगा कि अंग्रेजोंके इरादे क्या हैं, उसके लिए तो जिस चीजका मूल्य होगा वह है भारतीयोंका अपना इरादा। भारतीयोंका इरादा बिलकुल उजागर है। अपनी मर्जीके मुताबिक अपना राज-काज खुद करनेकी हम भारतीयोंकी माँग दिनोंदिन जोर पकड़ती जा रही है। हम भारतवासी इस बातको बहुत अच्छी तरह समझ गये हैं कि कोई भी अच्छीसे-अच्छी सरकार अपनी सरकारका, स्वराज्यका स्थान नहीं ले सकती।

तो वाइसराय महोदयके इरादोंके बारेमें हमें कोई सन्देह, कोई आशंका नहीं है, क्योंकि मुझे विश्वास है कि उनके इरादे नेक हैं; जो भी भय और आशंका है वह उस आदर्शके बारेमें है जिसपर वे चल रहे हैं। वे आज नहीं; भविष्यमें पता नहीं कब भारतके ऊँचे भविष्यकी बात सोचते हैं। इसके विपरीत, असहयोगियोंका ऐसा खयाल है कि वर्तमान शासन-प्रणाली भारतके ऊँचे भवितव्यका आज ही गला घोट देनेपर उतारू है। वह शासन-प्रणाली भारतको अगर हमेशाके लिए न सही तो कमसे-कम काफी लम्बे अर्सेतक गुलाम बनाकर रखनेके लिए ईजाद की गई है। कभी-कभी छोटे-मोटे अन्तर या मतभेदके पीछे मूलभूत आदर्शोंका मतभेद या अन्तर होता है। इसलिए जब कोई यह सोचता है कि भारतका भावी लक्ष्य भले ही स्वतन्त्रता हो किन्तु आज तो उसे किसीके आश्रयमें ही रहना चाहिए, तो मुझे कहना होगा कि

उसका आदर्श भारतके आदर्शसे सर्वथा भिन्न है। स्वर्गीय लोकमान्य तिलकने बिलकुल ठीक कहा था —— स्वराज्य भारतका जन्मसिद्ध अधिकार है। इतने लम्बे समयतक भारतको उसके इस जन्मसिद्ध अधिकारसे वंचित रखा गया है। इसलिए अब यदि वह व्यग्र हो उठे तो इसमें आश्चर्य ही क्या!

लॉर्ड रीडिंगने इस मन्तव्यको पढ़ा और सुना ही होगा और अब वे इसकी सचाईके भी कायल हो जायेंगे कि सरकारका कोई भी काम, दिखनेमें कितना ही अच्छा क्यों न हो, अगर उससे हालतमें पूरा सुधार नहीं होता तो कमसे-कम असहयोगी तो उसपर बुरी नीयतका आरोप लगायेंगे ही और यही कहेंगे कि वह काम भारतकी गुलामीको काफी लम्बे अर्सेतक बनाये रखनेके लिए ही किया गया है। आज ब्रिटिश राज कलंकित हो गया है, उसपर सन्देह किया जाने लगा है। जलियाँवालाके बेगुनाह लोगोंके खूनसे उसके हाथ रँगे हुए हैं और इस्लामके प्रति विश्वासघातके कलंकका टीका उसके माथेपर लगा हुआ है। जिस प्रकार जहरके कटोरेमें भरे शुद्ध दूधको भी हर समझदार आदमी जहर ही समझता है, उसी तरह ब्रिटिश सरकारके हर कामको उसके पहले किये हुए कामोंकी रोशनीमें ही देखा-परखा जायेगा। भारतकी बेचैनीको मिटानेका सिर्फ एक ही तरीका है, बेचैनीके कारणोंको मिटाइए। पद या सुविधाओंकी मिठाससे कड़वाहटको ढँकनेसे कुछ न होगा। पद और सुविधायें लुभावने हो सकते हैं पर हैं बेमतलब ही, अगर उनसे बेचैनीके मूल कारणोंको कारगर ढंगसे मिटाया नहीं जा सकता।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८–६–१९२१

९२. पत्र : नरमदलीय भाइयोंको

प्रिय मित्रो,

मैंने जिन लोगोंसे काम करनेकी शिक्षा पाई है, वे 'माडरेट' या नरमदलीय ही माने जाते हैं। मैं उन्हींकी संगतिमें रहा हूँ। इसलिए अब यह देखकर मेरे मनको बड़ा सन्ताप होता है कि मेरे विचार आप 'माडरेट' भाइयोंसे भिन्न पड़ने लगे हैं। कुछ तो परिस्थितियोंके कारण और कुछ अपने स्वभावके कारण, मैं देशके किसी भी बड़े दलमें कभी शामिल नहीं रहा। पर मेरे जीवनको गरम दलके लोगोंकी अपेक्षा नरम दलके लोगोंने ही अधिक प्रभावित किया है। दादाभाई नौरोजी, गोखले, बदरुद्दीन तैयबजी,[1] फीरोजशाह मेहता[2] —— सभी नाम देशके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

१. १८४४–१९०६; न्यायाधीश, विधान सभाके सदस्य; १८८७ में मद्रास कांग्रेस अधिवेशनके अध्यक्ष।

२. १८४५–१९१५; सन् १८६८ में बैरिस्टरीकी परीक्षा पास करनेवाले प्रथम पारसी भारतीय। सन् १८७२ से १९१५ तक बम्बई कारपोरेशनके सदस्य; ३० सालतक बम्बई विधान परिषद्के सदस्य; कांग्रेसके जन्मसे ही उससे सम्बद्ध; १८९० और १९०९ में कांग्रेसके अध्यक्ष।

देशके प्रति उनकी सेवाओंको भुलाया नहीं जा सकता। उन्होंने देश-भरमें मेरे जैसे अनेक व्यक्तियोंको प्रेरणा दी है। मुझे आपमें से अनेक भाइयोंके सम्पर्कमें रहनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है और उसकी सुखद स्मृतियाँ मेरे साथ हैं। फिर वह कौनसी चीज है जिसने मुझे आप लोगोंसे दूर करके राष्ट्रवादी दल (नेशनलिस्ट पार्टी)की पाँतमें ला खड़ा किया? मेरे विचार आप लोगोंके मुकाबले 'नेशनलिस्टों'के विचारोंसे ही क्यों ज्यादा मिलते हैं? यह तो मैं मान नहीं सकता कि आपका देश-प्रेम 'नेशनलिस्टों' से घटकर है। मैं नहीं मान सकता कि आप देशकी भलाईके लिए 'नेशनलिस्टों' के मुकाबले कुछ कम त्याग करनेके लिए तैयार हैं। और 'माडरेट' दलके पास बुद्धि, निष्ठा और योग्यता भी यदि अधिक नहीं तो कमसे-कम उतनी तो अवश्य है जितनी कि 'नेशनलस्टिों'के पास। इसलिए अन्तर दोनोंके अपने-अपने आदर्शोंका ही है।

मैं यहाँ विभिन्न आदर्शोंकी बहस छेड़कर आपको उबाना नहीं चाहता। अभी इस समय तो मैं असहयोग आन्दोलनके रचनात्मक कार्यक्रमकी कुछ बातोंकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करूँगा। आपको शायद यह शब्द ही पसन्द न आये। हो सकता है कि आप इस कार्यक्रमकी कई बातोंको सख्त नापसन्द करें; मैं जानता हूँ कि आप नापसन्द करते ही हैं। पर यदि आप इतना मान लें कि असहयोगी भी देशसे उतना ही प्रेम करते हैं जितना कि आप लोग, तो क्या उसके बाद भी आप कार्यक्रमकी उन बातोंको ठीक नहीं समझेंगे जिनके बारेमें कोई मतभेद नहीं हो सकता? मेरा इशारा शराबबन्दीकी तरफ है। मेरा अनुरोध है कि आप इसके बारेमें मेरे कथनको ही प्रमाण मान लें। मैं कहता हूँ कि समूचा देश शराबके अभिशापसे पीड़ित है। जिन अभागोंको इसकी लत लग गई है, हमें उनकी मदद करनी चाहिए। इस लतको छोड़नेमें हमें उनकी सहायता करनी चाहिए। शराबखोरीके खिलाफ जनताकी भावनाएँ उमड़ पड़ी हैं। मेरा अनुरोध है कि आप इसका लाभ उठायें। शराबखोरीके खिलाफ यह आन्दोलन अपने-आप चल पड़ा है। विश्वास रखिये कि इस आन्दोलनके सिलसिलेमें इस बातका कोई महत्त्व ही नहीं कि शराबकी चुंगीसे होनेवाली सरकारी आमदनीसे सरकार वंचित हो जायेगी। देश तो बस यही चाहता है कि इस बुराईको जितनी जल्द खत्म किया जा सके, कर दिया जाये। आज हमारे देशमें इस बुराईके खिलाफ जनता जितनी एकता और प्रबुद्धताके साथ खड़ी हुई है, इतनी यदि संसारके अन्य किसी देशमें हो गई होती तो वहाँ शराबका बचे रहना नामुमकिन हो जाता। नागपुरमें जन-समुदायने गलतियाँ या ज्यादतियाँ जो भी की हों, पर उसका उद्देश्य सर्वथा उचित और न्यायपूर्ण था। जनता इसपर तुली हुई थी कि जीवनकी शक्ति और स्फूर्तिमें घुन लगानेवाले इस अभिशापसे पिण्ड छुड़ाया जाये। एक बड़ी वजनी-सी दलील इस सिलसिलेमें दी जाती है कि हिन्दुस्तानको जबरदस्ती संयमित या होशो-हवास बनाये रखनेकी, मार-मारकर हकीम बनानेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए और जो शराब पीकर होशो-हवास खोना चाहते हैं उनको पीनेकी सुविधा होनी चाहिए। आप इस दलीलके चक्करमें नहीं आयेंगे। राज्यका काम लोगोंकी बुराइयोंके लिए सहूलियत जुटाना नहीं होता। हम वेश्यावृत्तिको कायदेसे चलाने और लाइसेंसशुदा बनानेकी कोशिश तो नहीं करते। हम

चोरोंको चोरी करनेकी सुविधाएँ तो नहीं जुटाते। मैं शराबखोरीको चोरी और यहाँ-तक कि वेश्यावृत्तिसे भी ज्यादा निन्दनीय मानता हूँ। क्या शराबखोरी अक्सर ही इन दोनों बुराइयोंको पैदा नहीं करती? मेरा अनुरोध है कि आप शराबकी चुंगीसे होनेवाली आमदनी और शराबके ठेकोंका नामनिशान मिटानेमें देशकी जनताका साथ दें। यदि उनका दिया हुआ रुपया-पैसा लौटा दिया जाये तो ऐसे कई शराब-विक्रेता हैं जो खुशी-खुशी अपनी दूकानें बन्द कर देंगे।

सवाल उठ सकता है कि 'बच्चोंकी पढ़ाई-लिखाईका क्या होगा?' मैं आपसे यह कहनेकी धृष्टता करता हूँ कि शराबकी चुंगीसे मिलनेवाले धनसे देशके बच्चोंकी पढ़ाई-लिखाईका इन्तजाम करना हमारे लिए बड़ा ही शर्मनाक है। आगे आनेवाली पीढ़ियाँ हमको कोसेंगी, और बिलकुल ठीक कोसेंगी। अगर हम यह फैसला करनेकी बुद्धिमानी नहीं करते कि हम शराबखोरीको खत्म करके रहेंगे, चाहे फिर अपने बच्चोंकी शिक्षाका इन्तजाम न कर पायें। लेकिन इसकी नौबत नहीं आयेगी। हम स्कूल-कालेजोंमें कताई शुरू करवाकर शिक्षाको खर्चके मामलेमें आत्मनिर्भर बना सकते हैं। मैं जानता हूँ कि आपमें से कई भाई मेरे इस ख्यालको मजाकमें उड़ा देते हैं। पर मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि शिक्षाकी समस्याका इससे अच्छा हल कोई दूसरा नहीं। देश अब और ज्यादा करोंका भार बरदाश्त नहीं कर सकता। मौजूदा कर भी बहुत भारी पड़ते हैं। अगर निकट भविष्यमें जनताकी दिन-दिन बढ़ती गरीबीको रोकना हो और उसमें काफी कमी करनी हो तो हमें अफीम और शराबकी चुंगीसे होनेवाली आमदनी ही नहीं अन्य करोंकी आमदनी भी छोड़ देनी पड़ेगी।

इसी सिलसिलेमें सवाल उठता है मौजूदा शासन-पद्धतिका। 'सुधार' जनतामें और अधिक गरीबी लाये हैं। शासनका सालाना खर्च बढ़ गया है। मौजूदा शासन-पद्धतिका गहराईसे अध्ययन करनेपर मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है कि इसमें थोड़ी-बहुत तब्दीलियाँ करने, पैबन्द लगानेसे काम नहीं चलेगा। आज समयकी सबसे बड़ी माँग है — क्रान्ति, एक व्यापक क्रान्ति। क्रान्ति शब्दसे आप नाराज होंगे। पर मैं जिस क्रान्तिकी बात करता हूँ वह खून-खराबीवाली क्रान्ति नहीं है, वह विचार-जगत्की क्रान्ति है, जो देशके उच्चतर उद्देश्योंकी दृष्टिसे हमें जीवनके माप-दण्डोंमें आमूल-चूल परिवर्तन करनेको विवश कर दे। मैं आपको बिना किसी लाग-लपेटके बतला देना चाहता हूँ कि सिविल सर्विसके ऊँचे-ऊँचे अफसरोंके वेतनोंमें दिन-दिन जैसी वृद्धि होती जा रही है उसे देखकर मुझे बड़ा डर लगने लगा है, और उम्मीद है कि आपको भी डर ही लगता होगा। शासन करनेवाले जिस ढंगका जीवन जी रहे हैं उसमें और उनके पैरों तले कराहनेवाले करोड़ों शासितों या प्रजाके जीवनमें कहीं भी कोई सम्बन्ध दीखता है? गरीब जनताके नंगे और छिले-झुलसे हुए से बदन मेरे इस कथनकी सचाईका प्रमाण हैं। अब आप लोग शासक-वर्गमें आ गये हैं। लोगोंको अपने बारेमें तो यह कहनेका मौका न दीजिए कि आपके जूतोंके नीचे भी आपसे पहलेके शासकों या सहयोगियोंके मुकाबले जनता किसी कदर कम नहीं कुचली जा रही है। क्या जरूरी है कि आप भी शिमलासे ही शासन चलायें? क्या यह भी जरूरी है कि आप भी उसी नीतिपर चलें जिसकी आप अभी एक वर्ष पहले सख्त आलोचना किया

करते थे? यह आप ही के शासनमें हुआ है कि एक आदमीको अपनी निश्चित राय रखनेके अपराधमें कालेपानीकी सजा मिली। अब आप यह दलील तो दे नहीं सकते कि वह लोगोंको हिंसाके लिए भड़का रहा था, क्योंकि आप अभी कुछ ही दिन पहलेतक ऐसी दलीलोंको स्वयं ठुकराते रहे हैं। अली भाइयोंने अपनी सफाई पेश कर दी है और उनके भाषणोंमें हिंसाका पुट तक होनेका सन्देह भी नहीं किया जा सकता। अब यदि आप सोचें कि उन्होंने दण्डके भयसे सफाई दी है, तो वह देशके प्रति आपका अन्याय, निर्दयतापूर्ण अन्याय होगा। देशमें एक नयी भावनाका संचार हुआ है। बाहरके किसी भी न्यायाधीशके मुकाबले, अपने अन्दर बैठे न्यायाधीशका भय कहीं ज्यादा बड़ा होता है। क्या आप जानते हैं कि पिछले छः महीनोंके दौरान आप ही के देशवासी, अनेक उत्साही नौजवान सिर्फ इसलिए जेल गये हैं कि वे जमानतें देना अपमानजनक मानते हैं, और इसलिए उन्होंने अपनी जमानतें देनेके बदले जेल जाना कहीं अच्छा समझा। और आप ही के शासनमें बिलकुल ही बेगुनाह मोपला[१] लोगोंपर तरह-तरहकी ज्यादतियाँ करके उनके धैर्यकी कड़ी परीक्षा ली गई है और मोपलाओंने अभीतक धैर्यको अपने हाथसे छूटने नहीं दिया है। मुझे यह सोचकर बड़ी सान्त्वना मिलती है, और सचमुच मेरा यही विश्वास है कि अमन और इन्साफके नामपर आजकल जो अत्याचार किये जा रहे हैं उनके पीछे आपका हाथ नहीं है। परन्तु आप जनताको या मुझे यह भी नहीं कहने देते कि ब्रिटिश सरकार आपकी आड़में अपना उल्लू सीधा कर रही है और जिन बातोंमें वह आपकी आड़ नहीं लेती उनमें आप लाचारीके मारे कुछ नहीं कर पाते। लेकिन इसपर बहस करनेके लिए जरूरी होगा कि हम दोनोंके अपने-अपने आदर्शोंकी चर्चा उठाई जाये जिसे मैं इस समय ठीक नहीं समझता। पर यदि आप देशकी जनताकी शराबबन्दीके काममें ही मदद करें, तो भी वह आपका एक बड़ा योगदान होगा और आपकी पिछली अनेक सेवाओंमें एक यह सेवा और जुड़ जायेगी; और सम्भव है कि यही एक काम हाथमें लेनेपर आपको अन्य कई उपयोगी काम या सेवाएँ नजर आने लगें।

सदैव आपका,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८–६–१९२१

१. दक्षिण भारतके मलाबार प्रदेशके निवासी मुसलमान।

९३. गौओंको बचाओ !

प्रोफेसर वासवाणीने गो-रक्षाका झंडा उठा लिया है। मुझे इस खतरेके आनेकी आशंका थी; किन्तु खतरा समयसे पहले ही सामने आ गया है। मैंने सोचा था कि यह काम उस समय उठाया जायेगा जब भारत इससे शान्तिसे निबटनेकी स्थितिमें होगा। मेरी नम्र सम्मतिमें प्रोफेसर वासवाणीको यह आन्दोलन किसी बेहतर साइतमें शुरू करना चाहिए था। मुसलमानोंके पूरे सहयोगके बिना गो-रक्षाके लिए हिन्दू जो भी आन्दोलन शुरू करेंगे उसका विफल होना निश्चित है।

गो-रक्षाका सबसे बड़ा और अच्छा आन्दोलन यही है कि हिन्दू खिलाफत आन्दोलनमें शामिल हों। इसीलिए खिलाफतको मैंने कामधेनु बताया है।

हिन्दुओंके लिए जीवन-मरणके इस सवालपर उनकी भावनाका आदर करनेके लिए मुसलमान भरसक कोशिश कर रहे हैं। मुस्लिम लीगने हकीम श्री अजमलखाँकी अध्यक्षतामें अमृतसरमें अभी दो साल पहले गो-रक्षाके बारेमें एक प्रस्ताव पास किया। मौलाना अब्दुल बारीने इसपर लेख लिखे हैं। अपने हिन्दू भाइयोंका खयाल करके अली बन्धुओंने अपने घरमें गो-मांसका प्रयोग बन्द कर दिया है। मियाँ छोटानीने पिछली बकरीदपर अकेले बम्बईमें सैकड़ों गौओंकी जान बचाई। अतः इस सम्बन्धमें हम यह नहीं कह सकते कि मुसलमान हाथपर-हाथ धरे बैठे रहे हैं।

अगर हमने गो-रक्षाके लिए मुसलमानोंको राजी करनेकी जल्दी मचाई तो निश्चित मानिए कि इसका मतलब अपने उद्देश्यको विफल करनेका सामान जुटाना होगा। मुसलमान अपना वचन नहीं निबाहते, ऐसा कुछ मैंने तो नहीं देखा। लेकिन पूर्वग्रहोंके मिटनेमें समय तो लगता ही है, और यही बात मुसलमानोंके पूर्वग्रहोंके सम्बन्धमें भी लागू होती है। प्रबुद्ध मुसलमानोंका मत हमारे पक्षमें है। आम लोगोंपर उसका असर होनेमें कुछ समय तो लगेगा ही। इसलिए हिन्दुओंको धीरज रखना चाहिए।

शिकारपुरके हिन्दुओंने एकमत होकर गो-वध रोकनेके पक्षमें मत दिया। लेकिन इसमें आश्चर्य क्या है? क्या कोई ऐसा हिन्दू भी हो सकता है जो इसके विपक्षमें मत दे? अगर इस सर्वसम्मत विचारका उपयोग मुसलमानोंका विरोध तोड़नेके लिए किया जाता है तो इससे उनका विरोध बढ़ेगा ही। हिन्दू सदस्योंको इस सवालपर मुसलमानोंकी भावना जाननी चाहिए थी, उसका पता लगाना चाहिए था। और जब-तक वे मुसलमानोंका मत अपने विपक्षमें पाते तबतक उन्हें इस सवालपर मतदान नहीं कराना चाहिए था।

हमें हमेशा इस बातको याद रखना चाहिए कि एक ऐसा पक्ष है जो अपने स्वार्थके लिए हम हिन्दू-मुसलमानोंको अलग-अलग रखनेके लिए बराबर प्रयत्नशील है। यह पक्ष इस मामलेमें कभी हिन्दुओंकी भावनाओंका सम्मान करनेका भी दिखावा कर सकता है। मैं तो उससे बराबर सावधान ही रहूँगा और कभी उसका विश्वास

नहीं करूँगा। इसलिए मैं अपने शिकारपुरवासी मित्रोंको पूरे आग्रहके साथ सलाह दूँगा कि अभी वे मुसलमान भाइयोंकी सहमतिका इन्तजार करें।

हाँ, अगर उनसे बने तो वे इस बीच मांसाहारका पूरी तरह त्याग करके दिखायें, ताकि उनके मुसलमान भाइयोंको दूसरे मांस गो-मांसकी तुलनामें सस्ते दामोंपर मिल सकें। वे यह दिखायें कि किसी गाय या गायकी सन्तानको कष्टमें पाकर, या स्वयं हिन्दुओंके हाथों दुर्व्यवहार सहते देखकर उन्हें सचमुच लज्जाका अनुभव होता है। वे अपनी गोशालाओंको ऐसा रूप देकर दिखायें कि वे बूढ़े और कमजोर गोधनके लिए आश्रय-स्थल होनेके साथ-साथ आदर्श दुग्धशालाओंका भी काम करें। वे अपनी गोशालाओंमें अच्छीसे-अच्छी नस्लके पशु तैयार करके दिखायें। अगर वे ऐसा करें तो वह गोमाताकी सच्ची सेवा होगी। शिकारपुरवासियोंका कर्त्तव्य यह है कि उनमें से एक-एक व्यक्ति सच्चा असहयोगी बन जाये, ताकि खिलाफतके प्रति किये गये अन्यायका परिशोधन जल्दी हो सके। विश्वास कीजिए, अगर वे खिलाफतकी रक्षाके लिए अपनी सामर्थ्य-भर प्रयत्न करके दिखायेंगे तो उसका मतलब यह होगा कि उन्होंने गायकी रक्षा भी कर ली।

हर हिन्दूको यह बात एक आन्तरिक विश्वासकी तरह माननी चाहिए कि गायकी रक्षा सिर्फ मुसलमानोंके सौहार्दसे ही हो सकती है। हमें स्पष्ट रूपसे स्वीकार करना चाहिए कि गायकी सम्पूर्ण रक्षा पूरी तरह मुसलमानोंकी सद्भावनापर निर्भर है। जैसे मुसलमान हमें अपनी मर्जीके मुताबिक नहीं झुका सकते वैसे ही हम भी उन्हें अपनी मर्जीके मुताबिक नहीं झुका सकते। हम लोग समान और स्वतन्त्र साझेदारीके सिद्धान्तका विकास कर रहे हैं। हम डायरशाहीके विरुद्ध, भय और आतंकके विरुद्ध लड़ रहे हैं।

गो-रक्षा हर हिन्दूके हृदयकी सबसे प्यारी कामना है। यह एक संहत विश्वास है और सभी हिन्दुओंमें समान रूपसे व्याप्त है। जिसका गो-रक्षामें विश्वास नहीं है, वह हिन्दू नहीं हो सकता। यह एक उदात्त विश्वास है। प्रोफेसर वासवाणीने गायकी प्रशंसामें जो-कुछ कहा है, मैं उसके एक-एक शब्दसे सहमत हूँ। मेरे विचारसे गायकी पूजा निरीहता और भोलेपनकी पूजा है, और गो-रक्षाका मतलब है दीनों और असहायोंकी रक्षा करना। प्रोफेसर वासवाणीने ठीक ही कहा है कि गो-रक्षाका अर्थ है मनुष्य और पशुके बीच बन्धु-भाव। यह एक श्रेष्ठ और उदात्त भावना है, जिसका विकास अथक परिश्रम और तपस्याके बलपर किया जा सकता है। यह किसीपर जबरदस्ती थोपी नहीं जा सकती। जोर-जबरदस्तीसे गो-रक्षाका प्रयत्न करना गो-रक्षा शब्दका दुरुपयोग करना है। कहते हैं, प्राचीन कालमें ऋषिगण गायके कल्याणके लिए तपस्या करते थे। हमें भी उन ऋषियोंके चरण-चिह्नोंपर चलकर तपस्या करनी चाहिए; जिससे हम इतने पवित्र हो जायें कि गो-रक्षा और गो-रक्षासे जिन बातोंका बोध होता है सो सब हम कर सकें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८–६–१९२१

९४. कताई बनाम बुनाई

सेवामें
सम्पादक
'यंग इंडिया'

११ मईके पत्रमें डा० एस० बी० मित्रका पत्र और उसपर आपकी टिप्पणी,[1] दोनोंको मैंने बड़े ध्यानसे पढ़ा। टिप्पणीमें आप कहते हैं कि "हाथ-कताईमें वे सभी बातें आ जाती हैं जिनका पत्र-लेखकने सुझाव दिया है बल्कि उसमें कुछ और भी विशेषताएँ हैं।" मानो आपका मतलब यह है कि हाथ-कताईमें हाथबुनाई तथा और भी कुछ चीजें शामिल हैं।

लेकिन मेरा तो खयाल है कि अधिकांश लोगोंके लिए कताईका मतलब सिर्फ कताई है, और चूँकि आपका सारा जोर चरखे और कताईपर रहा है; और बुनाई तथा हाथकरघेपर स्पष्ट रूपसे आपने कोई जोर नहीं दिया है, इस-लिए करघे और बुनाईकी बात लोगोंके खयालसे उतर गई है। चरखेकी शिक्षा और कताई-प्रतियोगिताके बारेमें तो हम बहुत सुनते हैं, लेकिन ऐसा सुननेको नहीं मिलता कि अमुक स्थानमें, नये करघे बैठानेकी बात तो दूर बिलकुल ही पुराने ढंगके करघे क्यों न हों, हजारोंकी तादादमें बैठाये गये हैं। हर दस नये चरखोंको चालू करनेके साथ-साथ तत्काल एक करघा भी अवश्य चालू करना चाहिए — फिर चाहे वह खोड़ियोंवाला हो या उससे कुछ बेहतर ढंगका या उड़न फिरकीवाला। अगर ऐसा नहीं किया गया तो मौजूदा करघोंपर बहुत दबाव पड़ेगा और हर बुनकरके घर सैकड़ों मन हाथ-कते सूतका ढेर लग जायेगा, क्योंकि बुननेमें आसान होनेके कारण वह तो मिलका सूत बुनना ही ज्यादा पसन्द करता है। अभी पिछले सालतक देशमें विदेशी या देशी मिलोंका जितना सूत रहता था, उसके अनुपातमें करघोंकी संख्या भी ठीक थी; लेकिन अब देशमें हाथकते सूतका उत्पादन बहुत बढ़ जानेके कारण वह बात नहीं रह गई है, और इस स्थितिको सुधारनेका एकमात्र उपाय है उसी अनुपातमें करघोंकी संख्या बढ़ाना — अर्थात् मोटे तौरपर हर दस चरखोंपर एक करघेकी व्यवस्था करना। काठियावाड़में खादीके उत्पादनके लिए काम करनेवाले एक विनम्र कार्यकर्ताके नाते मुझे कहना चाहिए कि नये चरखे तो हजारोंकी तादादमें चालू कर दिये गये हैं, किन्तु करघोंका यह हाल है कि दो-चार दर्जन नये करघे भी नहीं बनाये जा रहे हैं। परिणाम यह हुआ है कि मिलके

१. देखिए "करघेका अधिक प्रयोग", ११-५-१९२१।

सूतसे बुननेवालों और हाथ-कते सूतकी बुनाई करनेवालों के बीच बड़ी जबरदस्त प्रतियोगिता चल पड़ी है, जिससे बुनाईका खर्च बहुत बढ़ गया है।

इस अवसरपर मैं इतना और बता देना चाहूँगा कि कुछ महीने पहले चरखेकी उपयोगिता और सफलताकी सम्भावनाओंके बारेमें मेरे मनमें बड़ी शंकाएँ थीं। मुझे गाँवकी अर्थ-व्यवस्थाका कोई ज्ञान नहीं था, इसलिए बहुत-से सैद्धान्तिक अर्थ-शास्त्रियोंकी तरह मेरे मनमें भी यह सन्देह था कि दो या तीन आनोंकी दैनिक आय भी क्या एक व्यक्तिके गुजारेके लिए पर्याप्त है। इसलिए मुझे लगता था कि हाथ-कताईकी बात क्या एक अव्यावहारिक कल्पना नहीं है। लेकिन अब यह भ्रम दूर हो गया है। मैं हर रोज देखता हूँ कि हर खादी उत्पादन केन्द्रमें कताईका काम करनेको उत्सुक बीसियों औरतें आती हैं। चूँकि उन क्षेत्रोंमें बुनकरोंकी कमीके कारण मैं काम बढ़ा नहीं सकता, इसलिए उन औरतोंको निराश लौटा दिया जाता है; किन्तु इससे बड़े पैमानेपर हाथ-कताई शुरू करनेके आपने जो लाभ बताये हैं वे समझ में आ जाते हैं। लेकिन मैं चाहता हूँ कि बुनाईके महत्त्वपर भी आप कुछ जोर अवश्य दें -- भले ही उतना जोर न दें जितना कि हाथ-कताईपर देते हैं। देशको कपड़ा और अधभूखे किसानोंको सहायक उद्योग देनेकी दृष्टिसे करघा चरखेसे किसी भी तरह कम महत्त्व नहीं रखता।

अमरेली, काठियावाड़ **अ० वि० ठक्कर**
२०-५-१९२१

मैं नहीं समझता कि हाथ-बुनाईके हाथ-कताईसे पिछड़ जानेका कोई खतरा है। इसके अतिरिक्त, जिन मौजूदा करघोंपर विदेशी सूत बुना जा रहा है, उन्हें उससे मुक्त करना है। सच तो यह है कि हममें अब भी उतना हाथ-कता सूत तैयार करनेकी क्षमता नहीं आई है, जितना तैयार करना चाहिए। अब समस्या है इस हाथ-कते सूतको मामूली बुनकरों द्वारा आसानीसे बुनवा सकनेकी। जहाँतक अतिरिक्त सूतकी बात है, मेरा सुझाव यह है कि इससे रस्सियाँ, फीते, पट्टियाँ आदि बहुत सारी चीजें बनाई जा सकती हैं। हाथ-बुनाईको सब लोग उतनी आसानीसे नहीं सीख सकते जितनी आसानीसे कताई सीख सकते हैं। लेकिन इससे कोई यह न समझे कि मैं कहता हूँ, हाथ-बुनाईके लिए विशेष प्रयत्न करनेकी जरूरत ही नहीं है। मेरे कहनेका मतलब तो यही है कि यह काम भी यथासम्भव तेजीसे चल रहा है। बुनकरोंकी मजदूरी इसी-लिए बढ़ गई है कि स्वदेशीके प्रति लोगोंका अधिक चाव हो गया है। मजदूरी बढ़नी भी चाहिए थी। बढ़ईको बुनकरोंसे ज्यादा मजदूरी मिलती है, लेकिन बुनकरोंका काम किसी भी तरह बढ़ईके कामसे कम महत्त्वपूर्ण नहीं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ८-६-१९२१

९५. पत्र-लेखकोंसे[1]

हमारे पास हर तरहकी पूछताछके इतने पत्र आया करते हैं और हमारे लिए डाकसे उनके उत्तर अलग-अलग भेजना रोज-ब-रोज कठिन होता जा रहा है। इसलिए हम उस पूछताछका उत्तर यथासम्भव इस स्तम्भ द्वारा देना चाहते हैं।

के० एस० सुब्बियाहिएर: सौ नम्बरका सूत कातनेके लिए बहुत सावधानी रखने और ध्यान देनेकी जरूरत है। यदि इस कलामें आपकी रुचि है तो आपको गंजाम जिलेका दौरा करना चाहिए और कत्तिनोंको सूत कातते समय ध्यानसे देखना चाहिए। हमें खेद है कि इतने बारीक सूतकी धोतियाँ अभी इतनी अधिक तादादमें उपलब्ध नहीं हैं। इसलिए उनकी खपतके लिए खास एजेन्ट रखनेकी जरूरत नहीं है।

के० एस० वेंकटरमन: श्री रेवाशंकर झवेरीने जैसा चरखा बनानेके लिए पुरस्कार घोषित किया है यदि वैसे चरखेका आविष्कार आपने कर लिया है तो आप सत्याग्रह आश्रमके व्यवस्थापकको पत्र लिखें। साथमें चरखेके नक्शे भेज दें और एक घंटेमें काते जा सकनेवाले सूतकी मात्रा भी लिखें।

मुहम्मद अनवरुद्दीन, पानीपत: सरौतेका पता नहीं लग रहा है। यदि आपके पास रसीदकी नकल रखी हो और आप उसे हमारे पास भेज दें तो हम फिर पूछताछ करेंगे। हम ऐसी चीजोंकी समालोचना नहीं छापते और न विज्ञापन ही लेते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८–६–१९२१

९६. हमारी कसौटी

हिन्दुस्तानने दो मास पूर्व बेजवाड़ामें अपने-अपने प्रतिनिधियोंकी मार्फत वाद-विवाद करनेके बाद विचारपूर्वक प्रतिज्ञा की कि तीस जून तक:

१. हम तिलक स्वराज्य-कोषके लिए कमसे-कम एक करोड़ रुपया इकट्ठा करेंगे और उसका उपयोग स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए करेंगे।

२. हम कांग्रेसके दफ्तरमें कमसे-कम एक करोड़ ऐसे स्त्री-पुरुषोंके नाम दर्ज करायेंगे जिनकी अवस्था २१ वर्षसे ऊपर होगी।

३. हम हिन्दुस्तानमें कमसे-कम बीस लाख चरखे चालू करेंगे।

इनमें से अगर एक कार्य भी हम पूरा न कर सकें तो इसमें हिन्दुस्तानकी, पाठकोंकी और मेरी भी लाज जायेगी। फिलहाल तो मैं पैसेकी बात करना चाहता हूँ। अगर मेरे पास पैसा हो तो इस लाजको रखनेके लिए, चाहे मुझे भिखारी ही क्यों न

१. यह सम्भवतः गांधीजीका लिखा है।

बनना पड़े, मुझे एक करोड़ रुपया दानमें दे देना चाहिए। पाठकोंको भी ऐसा ही करना चाहिए। लाख रुपयोंकी अपेक्षा मनुष्यको अपनी लाज अधिक प्रिय होनी चाहिए। स्वराज्य प्राप्त करनेका अर्थ है कि हम हिन्दुस्तानकी लाजको अपनी लाज समझें, हिन्दुस्तानके दु:खको अपना निजी दु:ख मानें।

सारे हिन्दुस्तानमें अभी हम बीस लाख रुपयेसे ज्यादा धन एकत्रित नहीं कर पाये हैं। अभी हमें अस्सी लाख रुपये और जमा करने हैं। उतना पैसा जमा करनेके लिए हमारे पास आजसे कुल चौबीस दिन ही रह गये हैं। हमने अभीतक जिस गतिसे काम किया है अगर आगे भी उसी गतिसे काम करते रहें तो चौबीस दिन कोई चीज ही नहीं हैं। अपनी गतिको अगर हम नया वेग प्रदान करेंगे तो चौबीस दिन बहुत हैं।

गुजरात अगर चाहे तो अकेले ही इस मासके अन्ततक अस्सी लाख रुपया इकट्ठा कर सकता है। लेकिन गुजरातको अपने-आपमें इतना विश्वास नहीं है। इसलिए गुजरातने कंजूसकी भाँति अपनी शक्तिको दस लाख रुपयेतक निश्चित किया है। भड़ौंचमें हुई परिषद्में गुजरातके प्रतिनिधियोंने विचारपूर्वक प्रतिज्ञा की कि हिन्दुस्तानके प्रति अपने कर्त्तव्यके रूपमें गुजरात :

१. दस लाख रुपया देगा,

२. तीन लाख सदस्य बनायेगा, और

३. एक लाख चरखे चालू करेगा।

इस पत्रिकाका मुख्य उद्देश्य तो यह बताना है कि दस लाख रुपया इकट्ठा करनेका फर्ज किस तरह निभाया जाये।

अधिकसे-अधिक कितनी रकम दी जा सकती है, यह बात तो मैंने बता दी, लेकिन ऐसे देनेवाले संख्यामें अधिक नहीं होते। अनेक लोगोंके लिए कुछ आधार अथवा नियमोंका होना जरूरी है। मित्रोंके साथ सलाह-मशविरा करनेके बाद मैं निम्नलिखित नियमोंका सुझाव देता हूँ :

१. जिन लोगोंको वेतन मिलता है वे अपने मासिक वेतनका कमसे-कम दसवाँ भाग दें।

२. स्वतन्त्र धन्धा करनेवाले लोग जैसे व्यापारी, वकील, डाक्टर आदि पिछले बारह महीनोंमें हुई अपनी गाढ़ी कमाईका कमसे-कम बारहवाँ भाग दें।

३. जिसके पास स्थावर सम्पत्ति अथवा नकद रुपया है उसे अपनी स्थावर सम्पत्ति-के किराये अथवा पूंजीपर मिलनेवाले ब्याजसे और अगर उसने अपनी सम्पत्ति गिरवी रख दी है तो गिरवीकी रकमको छोड़कर बाकी रकमपर कमसे-कम ढाई प्रतिशत देना चाहिए।

अगर उपर्युक्त नियमोंके अनुसार सब लोग धन दें तो हमें एक करोड़ रुपया आसानीसे मिल सकता है।

पाठकवृन्द! आप हिन्दू हों अथवा मुसलमान, पारसी, ईसाई अथवा यहूदी, आप स्त्री हों अथवा पुरुष, आप मिल-मालिक हों अथवा मजदूर, आप नौकर हों अथवा

स्वतन्त्र धन्धा करनेवाले, दूसरोंकी चिन्ता न करके, किसीके साथ अपनी तुलना न करके, किसी चन्दा उगाहनेवाले की प्रतीक्षा न करके चन्दा लेनेके जो केन्द्र स्थापित किये गये हैं वहाँ आज ही अपनी शक्ति-भर पैसा देकर अपने कर्त्तव्यको पूरा करें।

जहाँ आप पैसा दें वहाँसे रसीद अवश्य लें।

आप अपने सगे-सम्बन्धियोंको, मित्रोंको यह पुस्तिका पढ़नेके लिए दें और उनसे भी चन्दा उगाहकर तिलक स्वराज्य-कोषमें जमा करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९-६-१९२१

९७. भाषण: सार्वजनिक सभा, बढवानमें[1]

९ जून, १९२१

कितने ही लोग कहते हैं कि मैं काठियावाड़को भूल गया हूँ। ऐसी बहुत सारी चीजें होती हैं जिन्हें भूल जाना ही बेहतर होता है। मैं काठियावाड़से अलग रहता हूँ सो ठीक है। मैं ब्रिटिश भारतमें जो कार्य कर रहा हूँ उसमें काठियावाड़के प्रति मेरी सेवा भी आ जाती है। फिलहाल तो मैं तिलक स्वराज्य-कोषके लिए आपसे भिक्षा माँगता हूँ। मुझे हर रोजके पचास हजार रुपये इकट्ठे करने हैं। यदि तीस जूनतक भारत अपनी प्रतिज्ञाका पालन नहीं करता तो निर्धारित फल-प्राप्ति कर सकना ही मुश्किल है। मुझे ईश्वरमें श्रद्धा है। मैं क्षण-क्षण उसके चमत्कारका अनुभव करता हूँ और हमारी प्रतिज्ञाके पूर्ण होनेका मुझे भरोसा है।

अमृतसर कांग्रेसमें मैंने सरकारके साथ सहयोग करनेकी बात कही थी, क्योंकि मुझे सम्राट्के घोषणापत्रके प्रति विश्वास था। मुझे उसमें सरकारके पश्चात्तापकी झलक दिखाई दी थी। लॉर्ड सिन्हाकी[2] भाषाकी ओर भी मेरा ध्यान गया था। श्री मॉन्टेग्युकी इच्छा भी स्पष्ट दीख पड़ती थी। लेकिन बादके अनुभवसे यह स्पष्ट हो गया कि इस सरकारके साथ सहयोग करनेका अर्थ पापमें भागी होना है जबकि असहयोग-का तात्पर्य पाखण्डसे बचना, दगाबाज न बनना और अन्याय न करना है। इस राज्यमें सबके लिए समान न्याय नहीं है। कदाचित् ही किसी भारतीयको यहाँ न्याय मिलता है। गोरे और कालोंके बीच बहुत भेदभाव बरता जाता है।

हमने अपने देशमें विदेशी कपड़ेको आने दिया इससे हमारी बहनोंकी लाज लुटी, पंजाबको पेटके बल रेंगना पड़ा। तीन करोड़ व्यक्तियोंको अन्न नसीब नहीं होता। जहाँ जगन्नाथजी विराजते हैं वहाँ भी लोगोंकी पसलियाँ दिखाई पड़ती हैं — जगन्नाथजी

१. यह सभा लिम्बडीके महाराजाके निवास स्थानपर हुई थी।

२. सत्येन्द्रप्रसन्न सिन्हा (१८६४-१९२८); वकील, राजनयिक और भारत सरकारके प्रथम भारतीय मन्त्री। १९२०-२१ में बिहार और उड़ीसाके गवर्नर। १९१५ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके बम्बई अधिवेशनके अध्यक्ष।

भी रूठ गये हैं। हमें विदेशी व्यापारने लूट लिया है। भारतको सचाईसे प्यार है। ऐसा कहा जाता है कि अहमदाबादमें पाखण्ड भरा हुआ है। नवलरामने[1] लिखा है कि काठियावाड़के लोग "शहदसे भी मीठे" होते हैं। हम एक जमानेमें दम्भी थे। लेकिन जब हम विवेकको हृदयंगम करेंगे तो उसका अर्थ होगा कि हम [सरकारसे] असहयोग कर रहे हैं।

काठियावाड़ हिन्दको अभयदान दे सकता है। मैं नहीं मानता कि काठियावाड़ भिखारी है, काठी और मियाणा-जैसी लड़ाकू जातियोंका देश भिखारी हो ही नहीं सकता। कुदरतकी सहायतासे मजबूत और साहसी प्रदेशमें गरीबी अथवा नामर्दानगी असम्भव है। काठियावाड़ चाहे तो समस्त हिन्दुस्तानको अभयदान दे सकता है। आपके मनमें अगर श्रद्धा हो तो आप अपना सर्वस्व दे सकते हैं।

स्त्रियाँ जितनी गहनोंपर निर्भर रहती हैं अगर वे उतनी प्रभुपर निर्भर रहें तो कभी दु:खी न हों। सुदामा और श्रीकृष्णकी भूमिके बालकोंको कायर कैसे माना जा सकता है? चरखा लोगोंको खानेके लिए देगा, विधवाओंका पोषण करेगा, लेकिन लड़कीके विवाहमें व्यर्थकी धूमधामके लिए पैसे नहीं देगा।

काठियावाड़को चाहिए कि वह मुझे वचन दे कि जब मेरी इच्छा हो तब मैं काठियावाड़के नाम हुंडी लिख सकूँ। काठियावाड़ चाहे तो एक वर्षमें विलायती कपड़ेका सम्पूर्ण बहिष्कार कर सकता है। खादी संन्यासियोंकी पोशाक नहीं है। मैं संन्यासी नहीं हूँ। मेरे पुत्र, स्त्री, बहन सब कोई है। उनसे मैं स्नेह करता हूँ, उनकी सेवाको स्वीकार करता हूँ। मैं एक मूढ़ गृहस्थ हो सकता हूँ, लेकिन मैं संन्यासी होनेका दावा नहीं करता। खादी कुलीनताकी परिचायक है। मैं वेश्याओंसे निरन्तर कह रहा हूँ कि आप खादी पहनें। साध्वियोंसे भी कहता हूँ कि मैं खादीविहीन शरीरको मलिन समझता हूँ। सीताने रावणके भेजे सुन्दर वस्त्रोंको पत्तोंसे भी तुच्छ समझा। उसी तरह हम सबको भी विदेशी कपड़ेको खादीसे हलका मानना चाहिए।

स्त्रियोंके गलोंमें यह सोनेकी माला कैसी? अभी तो सूतकी अथवा तुलसीकी माला ही सुशोभित हो सकती है। एक स्थानपर एक बालाने सारेके-सारे गहने दे डाले। मैंने कहा कि तुम्हें तुम्हारे माँ-बाप डाँटेंगे। उसने कहा कि मैं स्वराज्यसे पहले दूसरे गहनोंकी माँग नहीं करूँगी। मैंने कहा कि अभी तुम्हारा विवाह होना है। उसने उत्तर दिया, "आज जब कि हिन्दुस्तानकी हालत असहाय विधवा-जैसी है तब मैं अपना विवाह कैसे रचा सकती हूँ?" यह सतयुगकी झाँकी नहीं तो और क्या है?

[गुजरातीसे]

गुजराती, १९–६–१९२१

१. १९ वीं शताब्दीके एक गुजराती कवि।

१८. गुजरातका कर्त्तव्य

किसी भी कार्यको आरम्भ न करना यह बुद्धिमानीकी सबसे पहली निशानी है, लेकिन जिस कार्यको आरम्भ कर दिया उसे पूरा करना अत्यन्त आवश्यक है। गुजरात [राजनीतिक] परिषद्ने नर्मदाके तटपर निर्णय किया था कि गुजरात इसी मासके अन्ततक तिलक स्वराज्य-कोषके लिए दस लाख रुपया इकट्ठा करेगा, कांग्रेसके तीन लाख सदस्य बनायेगा और एक लाख चरखे देगा। अगर परिषद्को इतना कार्य करनेके सम्बन्धमें विश्वास नहीं था तो परिषद् उस प्रस्तावसे इनकार कर सकती थी। इसके विपरीत उसने प्रस्तावका स्वागत किया। परिषद् अर्थात् गुजरात-काठियावाड़से आये सदस्यगण। उन्होंने जान-बूझकर यह प्रतिज्ञा की थी कि वे जूनकी तीस तारीखसे पहले-पहल उपर्युक्त तीनों कार्योंको पूरा करेंगे। अगर यह प्रतिज्ञा पूरी नहीं होती तो हम स्वराज्यके लिए लगभग अयोग्य ठहरेंगे और फिर गुजरातकी मार्फत स्वराज्य प्राप्त करनेका प्रयत्न करना भी कठिन हो जायेगा। मैंने परिषद्में जो कहा था उसे आज भी मानता हूँ। मैंने कहा था कि यदि हिन्दुस्तानका एक भी प्रान्त सम्पूर्ण असहकार करनेके लिए तैयार हो तो स्वराज्य मिल जाये। इस प्रवृत्तिका गुण ही समकोण जैसा है। जिस तरह एक चौरस आकृतिके एक कोणके समकोण होनेपर अन्य तीन कोण भी समकोण ही होते हैं उसी तरह यदि एक प्रान्त तैयार हो जाये तो अन्य प्रान्त भी स्वयमेव तैयार हो जायेंगे। बात सिर्फ लोगोंको भयसे छुटकारा दिलानेकी है। सिंह माने जानेवाले किसी ऐसे व्यक्तिकी दुर्बलताओंको जाननेवाले पाँच-सात व्यक्ति भी अगर डर छोड़कर उससे खेलना शुरू कर दें तो दूसरे भी तुरन्त वैसा करने लगें। एकका अनुभव दूसरोंको ज्ञान प्रदान करनेके लिए काफी है। यही बात स्वराज्यपर लागू होती है। किसी एक बड़े समुदायको अपनी शक्तिका परिचय देना है।

लेकिन यदि गुजरात [स्वराज्यका] ककहरा ही नहीं पढ़ सकता तो फिर वह उसकी अन्तिम परीक्षामें किस तरह उत्तीर्ण हो सकता है? परिषद्ने जो कार्यक्रम निर्धारित किया है वह स्वराज्यके ककहरेकी परीक्षा है। इस प्राथमिक परीक्षामें यदि हम उत्तीर्ण नहीं होते तो हमारे दिलोंमें अपने ही प्रति अश्रद्धा उत्पन्न होती जायेगी।

इस लेखके प्रकाशित होने तक लगभग आधा महीना बीत चुका होगा। यदि हम परिषद्में ली हुई प्रतिज्ञाको पूरा करना चाहते हैं तो सभीको अपना कार्य समझकर अपना दायित्व सँभाल लेना चाहिए। यदि असंख्य व्यक्ति यथाशक्ति दें अथवा थोड़ेसे व्यक्ति जानपर खेलकर अपना सब-कुछ अर्पण कर दें तो हम अपने कार्यको पूरा कर सकेंगे।

यदि सभी अपने-अपने कर्त्तव्यका पालन करें तो हम बिना-किसी मुश्किलके अपना काम पूरा कर लेंगे।

गुजरातकी दान करनेकी क्षमताको देखते हुए दस लाख पर्याप्त नहीं हैं। गुजरातने आजतक सार्वजनिक प्रवृत्तियोंमें पैसा देनेकी रुचि प्रकट नहीं की और

इसीलिए पैसा दिया भी नहीं। उसकी नजर हमेशा बम्बईकी ओर रही है और इसीसे गुजरातको अपनेपर विश्वास नहीं है। वीरमगाँव सिर्फ बारह हजार देकर ही कैसे सन्तोष मान सकता है? बढवान सिर्फ छः-सात हजार देकर ही कैसे सन्तुष्ट रह सकता है? यह सब सार्वजनिक कार्योंके प्रति हमारी कंजूसीकी निशानी है। तथापि एक समय ऐसा था कि जब बढवान अथवा वीरमगाँवमें इतना पैसा इकट्ठा करना भी मुश्किल था। वीरमगाँव तथा बढवानमें अगर इतना मिला है तो और भी मिलेगा; और इसी तरह अन्य स्थानोंसे भी मिलेगा। प्रत्येक बड़े शहरको दान देनेकी अपनी क्षमताकी जाँच करके चन्दा उगाहना चाहिए। मित्रवर्गकी सलाह लेकर मैंने जो नियम निर्धारित किये हैं उन्हें तो लागू कर ही दिया जाना चाहिए।[1] वेतनभोगी कोई भी व्यक्ति अपने मासिक वेतनका दस प्रतिशतसे कदापि कम न दे। अधिक वेतन पानेवाला अपनी ओरसे अधिक रकम देकर कम वेतन पानेवालोंकी मदद करे। व्यापारी, वकील, डाक्टर आदि अपनी कमाईके बारहवें भागसे कम न दें। और फिर प्रथम कोटिके डाक्टर, वकील आदिके लिए ये आँकड़े किस कामके? कोई वकील यदि वर्षके ६०,००० रुपये कमाता है तो क्या वह अपने हिस्सेके पाँच हजार रुपये देकर ही सन्तोष मान ले? श्री दास[2] सार्वजनिक कार्योंमें अपनी कमाईका आधा भाग देनेमें आगा-पीछा नहीं देखते थे। जब वकीलोंके धन्धा छोड़नेकी बात उठी तब उन्होंने खुशी-खुशी अपनी कमाईका आधा भाग देनेकी घोषणा की थी। तात्पर्य यह कि ऐसे वकील स्वयं बहुत सारी रकम देकर मनसे कमजोर अपने दूसरे भाइयोंकी, जो उनकी अपेक्षा कम समर्थ हैं, मदद करें। ब्याजपर ही निर्वाह करनेवाला साहूकार अगर अपनी सम्पत्तिका ढाई प्रतिशत दे तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है? जिस व्यक्तिके पास एक लाख रुपयेका मकान है अगर वह ढाई हजार रुपया दे तो उसमें वह कौन ज्यादा रकम देता है? सैकड़े पीछे ढाई रुपया देना तो ज्यादासे-ज्यादा छः महीनेका ब्याज हुआ। अनेक लोग तो सौ रुपयेकी सम्पत्तिका भाड़ा अथवा ब्याज वार्षिक पाँच प्रतिशत न लेकर बारह प्रतिशत लेते हैं। उनके लिए ढाई रुपये तो ढाई महीनेका ही ब्याज हुआ। इस तरह विचार करनेपर हम गुजरातके शहरोंसे ही तीस जूनसे पहले-पहले सहज ही दस लाख रुपया इकट्ठा कर सकते हैं। शक्ति, इच्छा और कार्यदक्षताकी त्रिवेणी मिल जाये तो गुजरात बहुत ज्यादा प्रयत्न किये बिना ही अपनी प्रतिज्ञाको पूरा कर सकेगा। भगवान् गुजरातकी सहायता करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२–६–१९२१

१. देखिए "टिप्पणियाँ", ८–६–१९२१।

२. चितरंजन दास।

९९. टिप्पणियाँ

जंग लगी तोपें

दक्षिणके प्रवासके बारेमें मेरा बहुत ज्यादा लिखनेका विचार था लेकिन उसके बादके अनुभवोंके सम्बन्धमें तो इतना अधिक लिखना है कि मुझे कुछ महत्त्वपूर्ण संस्मरणोंका संक्षेपमें जिक्र करके ही सन्तोष मानना होगा। मैं देखता हूँ कि जहाँ-जहाँ तनिक भी श्रद्धा है, कार्यकर्त्ता हैं, वहाँ-वहाँ लोग उदारताके साथ दान देते हैं। इस प्रवासके दौरान ऐसे अनुभवोंके दृष्टान्त प्रस्तुत करनेका मेरे पास समय नहीं है। बार्शी, कुर्डूवाड़ी, पंढरपुर और शोलापुरकी यात्रामें मुझे ये अनुभव हुए। बार्शीमें एक ही मिल है। भावनगरके देसाई परिवारके भाई यशवन्तप्रसाद हरिप्रसाद उस मिलके मालिक हैं। मिल-मालिक होनेके बावजूद वे प्रत्येक सार्वजनिक कार्यमें भाग लेते हैं और उसमें अपना योगदान देते हैं। वे स्वयं जिस तरहसे रहते हैं वह सब मिल-मालिकोंके लिए अनुकरणीय है। उन्होंने अपने रहनेके लिए मजदूरोंके समान एक झोंपड़ी बनवाई है। उन्होंने, उनके कार्यकर्त्ताओंने और मिलके अधिकारियोंने मिलकर तिलक स्वराज्य-कोषमें चन्दा दिया है। वहाँके मजदूर मुझे सुखी प्रतीत हुए। भाई यशवन्तप्रसादकी चरखेमें अटल श्रद्धा है और वे खुद ही चरखेका प्रचार कर रहे हैं। स्वयं खादी पहनते हैं और दूसरोंको भी खादी पहननेको कहते हैं। बार्शीमें और भी बहुत सारे व्यापारी हैं तथापि उनके पूरी-पूरी मदद न करनेके कारण हमें जितना चन्दा मिलनेकी उम्मीद थी उतना चन्दा न मिल सका।

कुर्डूवाड़ी तो एक साधारण रेलवे जंकशन ही है। यद्यपि वहाँकी आबादी सिर्फ दो हजार है तथापि वहाँसे लगभग दो हजार रुपये मिले। इसके लिए हम एक कच्छी-भाई सेठ रायमलके आभारी हैं जिनके उत्साहके कारण यह सम्भव हुआ। पंढरपुर दक्षिणकी काशी है, इसके बावजूद वहाँ अपेक्षाकृत निराशा ही हाथ लगी। फिर भी पंढरपुर एक ऐसा स्थान है जिसके लिए एक अलग प्रकरण ही लिखा जाना चाहिए। प्राचीन कालमें महाराष्ट्रके बहुत सारे सन्त और ज्ञानी वहाँ आकर रहे थे। शोलापुरके लिए भी एक अलग प्रकरणकी जरूरत है। वह महाराष्ट्रमें व्यापारका एक बड़ा केन्द्र माना जाता है। वहाँपर एक तालाबके मध्यमें लिंगायत सम्प्रदायका सिद्धेश्वर नामक सुन्दर देवालय है। शोलापुरमें कपड़ेकी मिलें हैं। किन्तु वहाँ अन्य वस्तुओंका व्यापार भी काफी है। वहाँ दस हजारसे ऊपर रुपया इकट्ठा हुआ लेकिन वहाँके व्यापारको देखते हुए यह रकम बहुत ही थोड़ी कही जायेगी।

शोलापुरके बाद हमने कर्नाटकमें प्रवेश किया, बागल्कोट और बीजापुर गये। दोनों स्थानोंपर बहुत उत्साह था, रकम भी अच्छी-खासी मिली, हालाँकि वहाँ अकालकी-सी हालत है। वहाँ कौजलगीका[1] राज्य है। उनके नाम तो वहाँके मजिस्ट्रेट महोदयने

१. हनुमन्तराव कौजलगी, कर्नाटकके एक कांग्रेसी नेता।

नोटिस जारी करनेकी मेहरबानी भी की है। बीजापुर मुस्लिम साम्राज्यके इतिहासमें प्रसिद्ध है। वहाँ अनेक प्राचीन भवन, मस्जिदें और दरगाहें हैं। मैं सुलतान मुहम्मदका मकबरा और वहाँकी जुमा मस्जिद देखने जा सका। मुसलमान बादशाहोंने मकबरे बनानेमें जितना रुपया खर्च किया है उतना रुपया संसारमें किसीने भी खर्च नहीं किया होगा। ताजमहल एक रत्नजड़ित मकबरा ही है।

मुझे बताया गया कि बीजापुरके मकबरेका "गोल गुम्बज" जगत् प्रसिद्ध है। यह गुम्बज लगभग दो सौ फीट ऊँचा है। गुम्बजके अन्दर चारों ओर एक वीथी है। वहाँतक पहुँचनेके लिए डेढ़ सौ सीढ़ियाँ हैं। वीथीका व्यास सवा सौ फुट होगा। दोनों ओर खड़े हुए व्यक्ति अगर दीवारकी ओर मुँह करके धीमे स्वरमें बात कहें तो वह सुन सकते हैं। बीजापुरकी जुमा मस्जिद भी भव्य है। वहाँ मैंने हाथसे लिखी हुई, बेल-बूटोंसे सजी हुई ऐसी 'कुरान शरीफ' भी देखी जिसे जेबमें रखा जा सकता था।

लेकिन मुझे जिनके बारेमें लिखना है वे हैं जंग लगी तोपें और ढहते हुए किले। जो तोपें कभी बादशाहतकी निशानी समझी जाती थीं, लोगोंके लिए भयका कारण थीं उन तोपोंको आज मैंने जीर्णावस्थामें देखा और देखा हिन्दू-मुस्लिम बच्चोंको उनपर "घोड़ा-घोड़ा" खेलते हुए। आसपासके कोटको मैंने खंडहर होते हुए देखा और मुझे कोलाबाकी तोपोंके सम्बन्धमें लिखी हुई अपनी पंक्तियाँ याद आ गई। "मेरी मान्यता है कि अगर भारत शान्तिमय असहयोगके कार्यक्रमको पूरी तरह लागू करेगा तो ब्रिटिश तोपोंमें भी जंग लग जायेगी, उनपर घास उग आयेगी और उनपर तथा भारतमें ब्रिटिश सरकारके बनाये हुए किलोंमें हमारे बच्चे गिल्ली डंडा खेलेंगे।" मेरे इस कथन-पर बहुत थोड़े लोगोंने विश्वास किया, कुछ-एकने मेरा उपहास किया है और कुछ-एकको मेरे भोलेपनपर तरस आया है। इसके बावजूद मेरी यह मान्यता दिन-प्रतिदिन दृढ़ होती जाती है। दिल्लीके लाल किलेको देखकर क्या कोई कह सकता था कि मुगल-साम्राज्य कभी नष्ट हो जायेगा? उस समय ऐसा सोचनेवाले व्यक्तिकी क्या लोगोंने हँसी नहीं उड़ाई होगी? तथापि मेरी धारणा है कि मुगल-साम्राज्यके पतनकी जितनी सम्भावना थी उससे कहीं अधिक सम्भावना इस साम्राज्यके पतनकी है। लोगोंकी तीव्र अनिच्छाके सामने कोई भी साम्राज्य नहीं टिक सकता। जो डरते हैं उन्हें ही दूसरे लोग डराते हैं। हिन्दुस्तानमें मैं अनेक अपंगोंको सरेआम रास्तेमें पड़ा हुआ देखता हूँ। उन्हें कोई भी भयभीत नहीं करता, क्योंकि वे स्वयं निर्भय हो गये हैं। उनको विश्वास है कि उनका कोई कुछ बिगाड़नेवाला नहीं है। हजारों चलनेवाले लोगोंको उनकी उपस्थितिसे असुविधा होती है तो भी वे लोग उसे बरदाश्त कर लेते हैं। उसी तरह यदि हम उपर्युक्त अपंगोंकी भाँति निर्भय बन जायें तो कोलाबाकी तोपें अथवा किले हमें डराने-धमकानेके बदले डंकरहित लगेंगे।

निर्दोष टोपी

इसे लिखते-लिखते ही मैंने समाचारपत्रमें पढ़ा कि श्री कौजलगी अदालतमें सफेद टोपी पहनकर गये, इसलिए अदालतने उन्हें उस टोपीको उतारनेका आदेश दिया।

उन्होंने वैसा करनेसे इनकार कर दिया जिसके फलस्वरूप अदालतने उनपर दो सौ रुपये जुर्माना किया और एक घंटेके लिए अदालतसे बाहर भेज दिया। एक घंटे बाद वे फिर उसी निर्दोष टोपीको पहनकर अदालतमें आये, जिसपर उन्हें फिरसे टोपी उतार देनेका आदेश हुआ और उन्होंने फिर वैसा करनेसे इनकार कर दिया और उनपर फिर दो सौ रुपये जुर्माना किया गया। तब मजिस्ट्रेटने उन्हें दूसरे मजिस्ट्रेटके सामने जानेका हुक्म दिया। जहाँ इतना अन्धेर चल सकता है वहाँ वकील वकालत करनेके लिए तैयार हैं! लेकिन वकील चाहे जो करें, इतना जाननेके बाद भी अगर लोग विदेशी टोपीसे चिपके रहे तो इसके समान शर्मकी और क्या बात हो सकती है? निर्दोषको जब ऐसे दोषी करार दिया जाता है तब समझना चाहिए कि स्वराज्यकी नौबत बजने लगी है। लेकिन निर्दोषको जब ऐसे दोषी ठहराया जाता है और जब लोग इससे डरने लगते हैं तो गुलामीकी जंजीरें और भी जोरसे झनझनाने लगती हैं। मैंने पुराने कैदियोंको अपनी बेड़ियाँ साफ करते समय उनकी झनझनाहटसे खुश होते हुए देखा है। असहयोगीपर जैसे-जैसे अत्याचार होता जाये वैसे-वैसे हमें असहयोग-को और भी बढ़ाना चाहिए, हमारे पास गुलामीके बन्धनको तोड़नेका यही एकमात्र रास्ता है। अगर बीजापुरकी सभी अदालतोंमें सभी सफेद टोपी पहने हुए दिखाई दें तो मजिस्ट्रेट किसपर जुर्माना करेगा और कैसे वसूल करेगा?

गुजरात परिषद्

इस परिषद्के विषयमें भी मुझे संक्षेपमें ही लिखना होगा। इस परिषद्को आगामी कांग्रेसकी तैयारीके रूपमें लेना चाहिए और इस दृष्टिसे परिषद्ने सराहनीय कार्य किया है।

परिषद्की सजावट सादी और अधिकांशतया स्वदेशी सामग्रीसे की गई थी। परि-षद्में भूमिपर ही बैठनेका पूरा इन्तजाम किया गया था। प्रमुख नेता और कुछ अन्य लोग मंचपर गद्दियोंपर बैठे थे; झण्डियाँ अधिकतर खादीकी थीं। स्वराज्यका झण्डा मंडपके प्रवेश स्थलपर फहरा रहा था। लोग शोरगुल नहीं मचा रहे थे। जगहकी कोई तंगी न थी। स्त्रियोंके लिए बैठनेका बहुत अच्छा प्रबन्ध किया गया था। स्वागत-समितिके प्रमुखका भाषण संक्षिप्त और सुन्दर गुजरातीमें था। उन्होंने अपना भाषण पढ़नेमें सिर्फ पन्द्रह मिनट लिये। अध्यक्षका भाषण भी संक्षिप्त, सादा और विनययुक्त था। वह जितना विवेकपूर्ण था उतना ही उत्साहसे भरा हुआ भी था। लेकिन हम बहुधा यह मानकर चलते हैं कि हिम्मत अथवा शौर्यके साथ तीखे और कटु विशेषणोंका होना लाजिमी है। श्री वल्लभभाई पटेलने बता दिया है कि शुद्ध बलके साथ तो शुद्ध सभ्यता ही हो सकती है। उन्हें अपना भाषण पढ़नेमें कुल तीस मिनट लगे। इस तरह इन दोनों और अधिकांश भाषणोंके संक्षिप्त होनेके कारण जनताका समय बच गया, किसीको थकावट महसूस न हुई और दो दिनोंमें काफी काम हो सका। परिषद्की बैठक सबेरे और साँझको रखी गई थी, इस योजनासे लोग धूपसे बच गये। हमें सबेरे सभाओंका आयोजन करनेके रिवाजको अधिक लोकप्रिय बनानेकी जरूरत है। विशेष रूपसे गर्मियोंके दिनोंमें तो सभाएँ सुबह-सुबह ही बुलाई जानी चाहिए।

मेरे-जैसे रोगीके लिए कुर्सीकी व्यवस्था की जाती है। इसे बदलकर हमें प्राचीन चौकीको अपनाना चाहिए। जहाँ सब लोग जमीन अथवा मंचपर बैठे हों वहाँ सबके बीच एक कुर्सी तनिक भी शोभा नहीं देती। हमें यह सिद्ध कर देना चाहिए कि कुर्सी सम्मानकी द्योतक नहीं है। एक स्थानपर कुर्सीके कारण कुछ गलतफहमी हो गई थी। वहाँ दो ही कुर्सियाँ थीं, एक वक्ताके — मेरे लिए और दूसरी अध्यक्षके लिए। सभा शुरू होनेके थोड़ी देर बाद एक अपरिचित सज्जन सभामें आये। सब नीचे ही बैठे हुए थे लेकिन इन सज्जनको लगा कि अगर वे जमीनपर बैठेंगे तो अपना अपमान स्वयं ही करेंगे। मैं समझ गया। उनके नीचे बैठनेमें अपमानकी कोई बात नहीं, इस बातको समझाना मुझे व्यर्थ जान पड़ा। मैं तुरन्त मेजपर बैठ गया और मैंने अपनी कुर्सी खाली कर दी। यदि मेरे लिए भी चौकी होती तो उपर्युक्त दिक्कत सामने ही न आती। बात छोटी-सी है लेकिन है सारगर्भित।

स्वयंसेवकोंने व्यवस्था आदि ठीक ही की थी। भाई पुराणीकी शिक्षाका प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता था। तथापि उनमें अभी और अधिक कार्यदक्षताकी आवश्यकता है, ऐसा मुझे जान पड़ा। उनमें शोरगुलको बन्द करवानेकी समझ कम थी। दल बाँध-कर खड़े होनेकी आदत भी दिखाई पड़ी। वे बालकोंके प्रति कदाचित् कम विनयशील थे। जिस राष्ट्रके लोग अपने बच्चोंका, अपनी स्त्रियोंका और अपने सेवकोंका सम्मान नहीं करते उस राष्ट्रकी सभ्यता नष्ट हो जाती है। जनताकी सेवा करनेवालों को तो धर्म मानकर दुर्बलकी रक्षा करनी चाहिए, उन्हें मान सहित सम्बोधित करना चाहिए और उनके लिए उचित व्यवस्था करनी चाहिए।

स्वयंसेवक तो खादीके अलावा कोई और कपड़ा नहीं पहन सकते। परिषद्में आये हुए बहुतेरे प्रतिनिधियोंने विदेशी वस्त्र पहने हुए थे। यह दृश्य खेदजनक था। अब तो स्वदेशीकी प्रतिज्ञाको नौ मास हो गये हैं, तथापि प्रतिनिधि भी विदेशी कपड़ेके मोहको न छोड़ें, खादीके बोझसे घबराएँ अथवा उसमें शर्म महसूस करें तो यह नदीमें आग लगनेके समान हुआ। उसे कौन बुझाये? मैं जानता हूँ कि पगड़ी और धोतीके बारेमें बड़ी मुश्किलें दिखाई देती हैं। लेकिन विचारपूर्वक इन दोनों बातोंमें परिवर्तन किया जा सकता है। महीन धोती पाँच गजकी होनी चाहिए। मोटी धोती साढ़े तीन गजकी भी चल सकती है। महीन ५४ इंच पनेकी होनी चाहिए तथा मोटी पैंतालीस इंच पनेकी। खादीको रँगवाकर उससे पगड़ी बनाना कोई मुश्किल बात नहीं है। लेकिन अगर ऐसी पगड़ी बोझीली जान पड़े तो जबतक महीन खादी तैयार नहीं होती तबतक खादीकी टोपीसे ही गुजारा करना चाहिए।

आगामी कांग्रेसके समय गुजरातमें खादीके अलावा और कोई चीज नजर न आये, यह हमारे लिए स्पृहणीय है। उससे क्या गुजरात कुछ खोयेगा? बल्कि उससे तो गुजरातके गरीबोंके घर सम्पन्न होंगे। जो व्यक्ति एक गज़ खादी खरीदता है वह गरीबके घरमें कमसे-कम तीन आने देता है। जहाँ खादीमें इतनी अधिक शक्ति निहित है वहाँ कोई भी व्यक्ति खादी पहने बिना कैसे रह सकता है? खादीमें कितना स्वदेशाभिमान समाया हुआ है यह तो सोच-समझकर खादी पहननेवाला व्यक्ति ही जानता है।

बहनोंका बलिदान

जब मैंने पैसोंकी माँग की तब जो दृश्य दिखाई दिया वह अविस्मरणीय है। एकके बाद एक बहनोंका ताँता ही बँध गया। उन्होंने आभूषणों और रुपयोंकी झड़ी लगा दी। पुरुष भी पीछे न रहे और उन्होंने भी खासी रकम दानमें दी। जहाँ एक ओर स्त्री-पुरुषोंने इतनी उदारताका परिचय दिया वहाँ दूसरी ओर मैंने सुना कि दो बहनोंने अपने आभूषण दानमें दे दिये, इसपर उनके पतियोंने उन्हें डाँटा। आभूषण स्त्री-धन है। उसपर पुरुषोंका कोई अधिकार नहीं है। मेरी यह नम्र राय है कि अगर स्त्रियाँ अपने गहनोंका सत्कार्यके लिए उपयोग करती हैं तो पुरुषोंको उसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

लेकिन मुझे स्वीकार करना चाहिए कि स्त्रियोंकी उदारतासे मुझे जितना सुख और सन्तोष हुआ उतना ही दुःख और असन्तोष मुझे उनकी पोशाकको देखकर हुआ। विलायती, जापानी और फ्रांसीसी साड़ियोंने जिस संख्यामें गुजरातमें प्रवेश किया है उस संख्यामें भारतके किसी अन्य भागमें कदाचित् ही किया हो।

इस विषयपर बहनोंको विचार करना चाहिए। हिन्दुस्तानकी खातिर, हिन्दुस्तानकी गरीब स्त्रियोंकी पवित्रताकी रक्षा करनेकी खातिर गुजरातकी बहनोंको निश्चयपूर्वक खादीकी साड़ीके भारको वहन कर लेना चाहिए।

प्रदर्शनी

परिषद्के अन्तर्गत खादीका, चरखेका और रुई पींजनेके यन्त्रोंका प्रदर्शन भी किया गया था। चरखोंमें कोई खास नवीनता न थी लेकिन वे अलग-अलग सुविधाओंसे युक्त थे। कोई चरखा सफरके लिए हल्का और पेटीमें रखने योग्य था तो कोई सुन्दरतासे परिपूर्ण था, तो कोई मजबूतीकी दृष्टिसे बखान करने योग्य था। अनेक स्थानोंपर कारीगर आजकल चरखा बनानेमें कला-कौशलका जितना प्रयोग कर रहे हैं उतना सम्भवतः किसी दूसरी वस्तुको बनानेमें नहीं किया जा रहा है। मेरी भगवान्से प्रार्थना है कि हम आगामी कांग्रेस और उसके अन्तर्गत होनेवाली खादी और चरखा प्रदर्शनीको आदर्श बना सकें।

सरखेज और साणंद

जहाँ पहलेसे ही कार्य किया गया हो, जहाँ थोड़े ही लेकिन दिलसे काम करनेवाले कार्यकर्त्ता हों उसमें और जहाँ पहलेसे काम न किया गया हो उसमें क्या फर्क होता है उसका अनुभव सरखेज और साणंदमें हुआ। सरखेजमें लगभग दो हजारकी आबादीसे एक घंटेमें करीब १,२०० रुपये इकट्ठे हुए और साणंद जहाँ पाँच हजारकी बस्ती है तथा जहाँ अच्छा व्यापार है वहाँ सिर्फ पाँच सौ रुपये ही इकट्ठे हुए। सरखेजमें राष्ट्रीय स्कूल है। सरखेजकी सभामें अत्यन्त शान्ति थी, स्त्री और पुरुष समान संख्यामें उपस्थित थे और दोनोंके लिए एक ही सभासे काम चल सका। साणंदमें दो अलग-अलग सभाएँ की गईं। दोनोंमें शोरगुल और अव्यवस्थाकी सीमा न थी। सरखेजकी

सभामें अन्त्यजोंको भी आनेकी अनुमति थी। उनके बीस घर हैं और उन्होंने तिलक स्वराज्य-कोषके लिए बत्तीस रुपये इकट्ठे किये थे। साणंदमें अन्त्यजोंसे अलग भेंट करनी पड़ी और वहाँसे सात-एक रुपये मिले।

यह कहकर मैं साणंदके दोष नहीं बताना चाहता। मुझे विश्वास है कि यदि साणंदमें थोड़ेसे चरित्रवान स्वयंसेवक काम करें और वे थोड़ेसे स्थानीय लोगोंके दिलोंमें इस कार्यके प्रति दिलचस्पी उत्पन्न कर सकें तो साणंद सरखेजके साथ खड़ा हो सकता है। मुझे उम्मीद है कि साणंदमें कोई-न-कोई स्वयंसेवक पहुँच ही जायेगा और वहाँ आवश्यक जागृति आ ही जायेगी। साणंद-निवासियोंको मैं सलाह देता हूँ कि वे तुरन्त अपने सार्वजनिक कार्यको व्यवस्थित रूप देकर साणंदमें जो शक्ति है उसके अनुरूप उक्त कार्यको शोभान्वित करें।

विदेशोंको नुकसान पहुँचाना

विदेशोंको नुकसान पहुँचाकर हिन्दुस्तानको लाभ पहुँचानेका अपराध मैं नहीं करूँगा, मेरे इस आशयके लेखको दृष्टिमें रखते हुए एक नवयुवकने पूछा है कि चरखे और असहयोगसे इंग्लैंडको जो भारी नुकसान पहुँचेगा उसके सम्बन्धमें मेरा क्या कहना है? ऐसे प्रश्न उठा ही करते हैं। बालकी खाल निकालनेवाले प्रश्न वैसे तो अच्छे होते हैं लेकिन अगर मानसिक चरखा कातनेवाले लोग वास्तविक चरखा कातने लगें तो उनके मनकी गुत्थियाँ स्वयमेव सुलझ जायेंगी। चरखे अथवा असहयोगसे इंग्लैंडको कुछ नुकसान होगा ऐसा मैं कतई नहीं मानता। ये दोनों आत्मशुद्धिके साधन हैं, वे हमें और उसी तरह इंग्लैंडको पावन बनानेवाले हैं। शराबकी दूकानोंको बन्द करनेसे शराब पीनेवालों और बेचनेवालोंको जैसे नुकसान होता है ठीक वही बात हम चरखे और असहयोगके सम्बन्धमें भी कह सकते हैं। और फिर मैं अपना घर फूँककर तमाशा नहीं देखना चाहता। जैसे मैं विदेशका नुकसान नहीं करूँगा वैसे ही मैं अपने देशका नुकसान भी नहीं होने दूँगा। जैसे मैनचेस्टरके व्यापारने हिन्दका नुकसान किया, इससे मैं उसे त्याज्य समझता हूँ, वैसे ही हिन्दुस्तानका चीनके साथ अफीमका व्यापार चीनके लिए हानिकारक होनेके कारण मैं उसे भी त्याज्य समझता हूँ। कोई हमसे अनुचित लाभ उठाता हो और अगर हम शान्तिपूर्ण ढंगसे उसका प्रतिकार करते हैं तो इसमें उस व्यक्तिका नुकसान होनेकी कोई बात ही नहीं उठती।

हिन्दू-मुस्लिम एकता

यही भाई अभीतक हिन्दू-मुस्लिम एकताके सम्बन्धमें दुविधामें पड़े हुए हैं। वे लिखते हैं कि जबतक हिन्दुस्तानका एक भी मूक प्राणी मुसलमानके हाथों मारा जाता है और जबतक वे ताबूतमें 'गिरगिट' लटकाते हैं तबतक एकता असम्भव है। इसमें मुझे बहुत अज्ञान दिखाई देता है। करोड़ों हिन्दू दूसरे जानवरोंको मारते हैं, गिरगिटके समान करोड़ों अन्य प्राणियोंको धर्मके बहाने लटकाते हैं, वैसा होनेपर भी उनके साथ कोई विवाद नहीं करता तो हम मुसलमानोंके साथ कैसे कर सकते हैं? सहिष्णुता हिन्दू धर्मका और सभी धर्मोंका गुण रहा है। मुसलमान हिन्दुओंके सम्मानके

लिए, प्रेमके लिए गायकी रक्षा कर रहे हैं, इसे मैं उनका उपकार मानता हूँ और सब हिन्दुओंको मानना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२-६-१९२१

१००. भाषण : अहमदाबादकी सार्वजनिक सभामें[1]

१३ जून, १९२१

मौलाना मुहम्मद अली आज पहली बार अहमदाबाद आये हैं। आपने इनका स्वागत किया और आप इनका भाषण सुनना चाहते हैं। मेरा इरादा उनके और आपके बीच अधिक देरतक खड़े रहनेका नहीं था। लेकिन जब मैं यहाँ आया तब मैंने जो सुना उससे मुझे ऐसा लगा मानो मेरे दिलमें खंजर भोंक दिया गया हो। इसलिए अब मैं दो-चार मिनटमें ही समाप्त नहीं करूँगा। मैंने साबरमतीमें जब सुना कि मौलाना साहब आ गये हैं तब मैं प्रसन्न हो उठा और सीधे यहाँ चला आया। लेकिन यहाँ आते ही मैंने क्या सुना? मैंने सुना कि मजदूर आज कामपर नहीं गये। वे मिलमें गये और चले आये। ऐसा करके हिन्दू और मुसलमान मजदूरोंने अपनी नाक खुद काट ली है, अनसूयाबेनकी[2] नाक काटी है, बैंकरकी नाक काटी है। इसमें नाक कटनेकी क्या बात है, यह आप स्वयं सोचें, लेकिन मेरी नाक तो आपने काट ही दी है।

मजदूर मुझसे गलत काम नहीं ले सकते। मैं तो मानता हूँ कि हिन्दुस्तानमें कोई भी नहीं ले सकता। मैं हिन्दुस्तानको गुलामीके शिकंजेसे निकालनेका प्रयत्न कर रहा हूँ; तो फिर मैं मजदूरोंकी गुलामीमें कैसे पड़ सकता हूँ। आप सम्भवतः यह सोचते होंगे कि अनसूयाबेन तो महिला है, उसे धोखा दिया जा सकता है। गांधी तो अत्यन्त वृद्ध हो गया है और हिन्दुस्तान-भरमें घूमता रहता है, उसको भी भ्रमित किया जा सकता है। लेकिन आप ऐसा नहीं कर सकते। आपने अभी भाई अख्तरसे एक अत्याचारीके सम्बन्धमें एक कविता सुनी। एक अत्याचारीकी गुलामीसे छूटनेकी इच्छा करनेवाला व्यक्ति दूसरेकी गुलामीमें नहीं पड़ सकता। मौलाना शौकत अली और मौलाना मुहम्मद अलीको आप मिलमें काम करके ही अच्छेसे-अच्छा सम्मान दे सकते थे। ईदके त्योहारके लिए आपने तीन दिनकी छुट्टी मनाई। कलकी बातको भी मैं जैसे-तैसे पी गया।[3] लेकिन आजकी बातको पी जाना असम्भव है।

आप मनमें ऐसा सोचते हैं कि गांधी हिंसा तो करना चाहता है लेकिन 'बड़ा' आदमी होनेके कारण प्रकट रूपसे ऐसा नहीं कह सकता। इसलिए जब वह कहे कि

१. गांधीजीकी अध्यक्षतामें आयोजित इस सभामें मौलाना मुहम्मद अलीने भाषण दिया था।

२. अनसूयाबेन साराभाई, अहमदाबादके एक प्रमुख मिल-मालिक सेठ अम्बालाल साराभाईकी बहन। गांधीजीके स्वदेशी आन्दोलनकी समर्थक।

३. मौलाना शौकत अलीका भाषण सुननेके लिए मजदूरोंने छुट्टी की थी।

हिंसा मत करो तो उसका अर्थ होता है हिंसा करो। आपको ऐसा उलटा अर्थ नहीं लगाना चाहिए। आपने ऐसा गलत अर्थ लगाकर अप्रैल १९१९ में दो निर्दोष व्यक्तियोंका खून किया। आप कदापि ऐसा अर्थ न करें कि गांधी तो 'बड़ा' व्यक्ति है, इसलिए जब वह कहे कि मकानोंमें आग मत लगाओ तब आग लगाना और जब वह कहे तलवार मत चलाओ तब तलवार चलाना ही आपका काम है। याद रखिए, अगर आपसे फिर ऐसी भूल हुई तो आपको अपनी तलवारें गांधीकी गर्दनपर चलानी होंगी। जो गांधी आपको अपना सगा मानता है वह आपसे कहता है कि मैं जो-कुछ कहता हूँ उसका अगर आप गलत अर्थ लगायेंगे तो मेरी गर्दनपर आपकी छुरी चलेगी। आपकी ऐसी भूलोंके विचार-मात्रसे मैं काँप जाता हूँ। आप मिल छोड़कर बाहर आये ही कैसे? दो-चार व्यक्तियोंने आपपर दबाव डाला, आपसे कुछ कहा और आप निकल पड़े? अपने-आपको मिलसे ऐसे छुड़ाकर भागनेमें आपने जवाँमर्दी नहीं दिखाई। यदि मुसलमान खिलाफतकी, हिन्दू हिन्दू धर्मकी और ये दोनों हिन्दुस्तानकी रक्षा करना चाहते हैं तो आपको सिंह बनना होगा, भेड़ नहीं। हमें चालाकी नहीं करनी है। हम धर्मको और इस्लामको चालाकीसे नहीं बचाना चाहते। हमें तो जवाँ-मर्दी दिखानी है। हमें विश्वासघातका मुकाबला विश्वासघातसे नहीं करना, खूनीको मारना नहीं बल्कि स्वयं मरना है। यह बात आप जान लें और अच्छी तरहसे समझ लें। आज मजदूरोंने अपने कामसे मेरी नाक काट दी है, मौलाना साहबका अपमान किया है। खिलाफतके, स्वराज्यके, हिन्दुस्तानके काममें विघ्न डाल दिया; इस कामसे स्वराज्यका चाँद ओटमें हो गया, उसे आज ग्रहण लग गया। मेरे जैसे व्यक्तिको, जो आज एक ही काममें तल्लीन है, आप हतोत्साहित कैसे कर सकते हैं? मुझे मज-दूरोंपर इतना अधिक विश्वास था कि जिन भले मजदूरोंने २३ दिनतक लगातार एक पेड़के नीचे बैठकर[1] ईश्वरके सम्मुख प्रतिज्ञा ली थी, वे ईश्वरको नहीं भूलेंगे। आज आप खिलाफत, हिन्दू धर्म और हिंन्दुस्तानको भूल गये हैं।

इसके प्रायश्चित्तके रूपमें आप मिल-मालिकोंसे माफी माँगेंगे और जितने घंटे कामसे दूर रहे हैं उतने घंटोंकी क्षतिपूर्ति करेंगे। ऐसा करनेमें भलमनसाहत है। आप डरते हैं कि मिल-मालिक आपको रौंद देंगे। ऐसा भय तो भेड़ोंको होता है। जिनमें शक्ति होगी वे इस तरहसे नहीं डरेंगे; ऐसे लोगोंको कोई नहीं दबा सकता। जिनमें शक्तिका अभाव होगा उन्हें सारी दुनिया डरायेगी। तर्क-मवालातका मतलब ही यह है कि इन्सानियतको जानें और उसका विकास करें।

हमसे अगर आप काम करवाना चाहते हैं तो हम जो कहें उसका आप उलटा अर्थ न लगायें। अब मैं किस मुँहसे मिल-मालिकोंके पास खिलाफत और स्वराज्यके लिए मदद माँगने जा सकता हूँ? वे मुझसे कहेंगे कि आप जो काम कर रहे हैं उससे तो हिन्दुस्तानका नाश ही होनेवाला है। अगर हम करोड़पति बन गये हैं तो हमने मजदूरोंको भी तो कुछ दिया है, हम उनको जो पैसा देते हैं वे उसका कमसे-

१. यह जिक्र अहमदाबादमें उस बबूलके वृक्षका है जिसके तले बैठकर गांधीजी हड़ताली मजदूरोंके सामने भाषण दिया करते थे। देखिए खण्ड १४।

कम सदुपयोग तो करें। अभी तो वे जिस तरहसे पैसेका उपयोग कर रहे हैं अगर वैसे ही करते रहे तो हिन्दुस्तान बिलकुल बैठ जायेगा। मैं ऐसा नहीं चाहता। लेकिन आप तो ऐसा ही रास्ता अपनाये बैठे हैं। मैं स्वयं मिल-मालिक होता तो आपको बता देता कि आप मुझे कभी गुलाम नहीं बना सकते। अभी तो वे आपके सामने बकरी बन गये हैं। आप दोनों ऐसे अवसरकी तलाशमें हैं जब आप दोनों परस्पर एक-दूसरेको कुचल सकें। आप दोनों वर्ग एक दूसरेसे डरते हैं और इसीसे आप नहीं चाहते कि आप मिल-मालिकोंसे माफी माँगें और उन्हें सिर उठानेका अवसर मिल जाये।

अली भाइयोंने जो क्षमा माँगी मैं आपसे उसके बारेमें बात करना चाहता हूँ। उन्होंने क्या यह क्षमा जेल न जानेकी खातिर माँगी है? अली भाई कोई जेल जानेसे नहीं डरते। हम तीनों जने इस वर्ष फाँसीपर चढ़नेकी बात कह रहे हैं। तब क्या यह क्षमा उन्होंने अपने लिए माँगी? नहीं, यह क्षमा उन्होंने खिलाफतके प्रति न्यायकी खातिर माँगी है, भलमनसाहतसे काम करनेवालों के लिए माँगी है। मैंने उनसे कहा था कि आपके भाषणमें कटुता है। आपके भाषणका कोई यह अर्थ भी लगा सकता है कि आप हिंसा करवाना चाहते हैं। उन्होंने मेरी नम्र सलाह मानी और उन्होंने शुद्ध हृदयसे सारे हिन्दुस्तानको बता दिया कि हम हिंसा नहीं चाहते। ये दोनों भाई जानते हैं कि अमन और तलवारके बीच कोई मेल नहीं हो सकता। वे कहते हैं कि तर्के-मवालातसे अगर खिलाफतके प्रश्नका सन्तोषजनक हल नहीं निकलता तो हम तल-वार खींचकर या तो खुद मर जायेंगे या दुश्मनकी हत्या कर देंगे और इस तरह खिलाफतके प्रश्नका निर्णय करेंगे। मेरा अपना धर्म मुझे तलवार खींचनेसे मना करता है। मैं किसीकी हत्या नहीं करना चाहता। हिन्दू धर्मको बचाते हुए मैं मर भले ही जाऊँ लेकिन किसीको मारूँगा नहीं। मेरे और अली भाइयोंके बीच इतना फर्क होनेके बावजूद मैं उन्हें यह समझा सका हूँ कि अभी तलवार न खींचना हमारा कर्त्तव्य है। इन्होंने माफी माँगी है सो जेलसे बचनेके लिए नहीं। दिलपर अंकुश न रखकर जेल जाना पाप है। हम पवित्र बनें, बलिदान करें और फिर यदि अत्याचारी हमें जेल भेजे तो दुनिया उसपर थूकेगी। जो पवित्र व्यक्तिको फाँसीपर चढ़ाता है वह सारी दुनियाके तिरस्कारका पात्र होता है। हम तो चाहते हैं कि हम सरकारके हाथोंमें जायें और सर-कार हमें फाँसीपर चढ़ाये। अली भाइयोंकी इस माफी माँगनेका अगर अहमदाबादमें दूसरा अर्थ किया जाता है, हिन्दुस्तानमें दूसरा अर्थ किया जाता है तो अहमदाबाद भूलता है, हिन्दुस्तान भूलता है। दिन-ब-दिन हममें भलमनसाहत जड़ पकड़ती जाती है। आप शिक्षित बनें, सज्जन बनें। कोई बात अगर आपको अच्छी नहीं लगती और अपनी नापसन्दगी जाहिर करनेके लिए अगर आप उसका विरोध करते हैं तो यह एक जुदा बात है। लेकिन अगर आप सीनाजोरी करते हैं तो यह बात कैसे सहन की जा सकती है। इस न्यायको अगर आप सीख लें तो खिलाफत और पंजाबके प्रति न्याय तथा स्वराज्य आपके हाथमें है।

मजदूरोंके लिए आज एक पत्रिका वितरित की गई है। तिलक स्वराज्य-कोषमें चन्दा देना, कांग्रेसके रजिस्टरमें अपना नाम दर्ज कराना और अपने घरोंमें चरखा चालू

करना मजदूरोंका फर्ज है। घरमें चरखा दाखिल करनेका अर्थ यह हुआ कि आपने अकालके विरुद्ध बीमा करवा लिया है। मजदूरोंको मिलका कपड़ा नहीं पहनना चाहिए और उन्हें समझ लेना चाहिए कि मिलका कपड़ा तो कंगाल व्यक्तियोंके लिए है।

मैं अपने और अली भाइयोंके सम्बन्धमें दो शब्द कहना चाहता हूँ। हमारा सम्बन्ध एक माँसे जन्मे भाइयोंसे तनिक भी कम नहीं है। मैं १९१५ में जब दिल्ली गया तभीसे उनके सम्पर्कमें आया। उस दिनसे मैंने उनका साथ नहीं छोड़ा और वे भी मेरे आँचलको पकड़े रहे हैं। वे कट्टर मुसलमान हैं, मैं कट्टर हिन्दू होनेका दावा करता हूँ। वे नहीं चाहते कि मैं अपने धर्मसे विचलित होऊँ और मैं भी नहीं चाहता कि वे अपने धर्मको बिगाड़ें। अपने-अपने धर्मका पालन करते हुए भी हम ऐसी स्थिति-में पहुँच गये हैं कि हम एक साथ फाँसीपर चढ़ने और मर मिटनेको तैयार हैं। हिन्दू धर्म और इस्लाम, दोनोंमें इतनी सज्जनता जरूर है।

अब मैं मौलाना साहबसे प्रार्थना करता हूँ कि वे आपको जो सन्देश देना चाहते हैं स्वयं अपने मुखसे दें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १६–६–१९२१

१०१. पत्र : रणछोड़दास पटवारीको[1]

१३ जून, १९२१

आदरणीय भाई रणछोड़दास,

आप अन्त्यजों सम्बन्धी मेरे विचारोंसे भले ही सहमत न हों लेकिन अगर आप चरखेके प्रसार और शिक्षाके अर्थ तिलक स्वराज्य-कोषमें चन्दा दें और दूसरोंसे भी देनेके लिए कहें तो अच्छा होगा। आपसे तो बहुत आशाएँ रखता हूँ। आपने जो लेख लिखा है, चिरंजीव छगनलालने वह मुझे दिखाया था, लेकिन मैं उसे पढ़ नहीं पाया हूँ। अवकाश मिलनेपर पढ़ूँगा।

मोहनदासके प्रणाम

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २७९७)की फोटो-नकल तथा (जी० एन० ४११५ से भी। सौजन्य : पटवारी परिवार

१. गोंडलके दीवान।

१०२. पत्र: प्रभाशंकर पट्टणीको[1]

अहमदाबाद
१३ जून, १९२१

सुज्ञ भाई,

भावनगरसे लिखनेवालों ने मुझे खबर दी है कि आप मेरी प्रवृत्तियोंके एकदम विरुद्ध नहीं हैं। मैं चरखे और शिक्षाके सम्बन्धमें आपकी और अन्य सभी लोगोंकी सहायताकी अपेक्षा रखता हूँ। यह रकम इन्हीं कार्योंके लिए दी जा रही है, इस बातका स्पष्ट रूपसे उल्लेख करते हुए आप तिलक स्वराज्य-कोषमें चन्दा दें और लोगोंसे दिलवायें।

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१७७) की फोटो-नकल और (एस० एन० २७७६९) तथा (जी० एन० ५८६४) से भी।

१०३. बहनोंसे

सत्याग्रह आश्रम
ज्येष्ठ सुदी ९, संवत् १९७७ [१४ जून, १९२१]

यह मेरी अन्तिम पत्रिका है। पत्रिकाओंका जनतापर आजतक क्या प्रभाव हुआ है, सो मैं नहीं जानता। जिस-जिस वर्गको सम्बोधित करके मैंने पत्रिका लिखी है उनमें से अगर एक वर्ग भी तदनुसार पूरी तरह चले तो जून मासके अन्ततक दस लाख रुपया अवश्य एकत्रित हो जाये।

समस्त भारतवर्षमें बहनोंने जिस जागृतिका परिचय दिया है वैसी जागृति किसी दूसरे वर्गने नहीं दिखाई है। इससे पहले महिलाओंने राष्ट्रीय सभाओंमें इतनी बड़ी संख्यामें भाग नहीं लिया था; लेकिन अब वे सब स्थानोंपर हजारोंकी संख्यामें आने लगी हैं। यह तो मेरे जैसे श्रद्धालुके लिए शुभ चिह्न है। यही मुझे बताता है कि अब धर्मराज्य हमारे समीप आता जा रहा है।

अगर दूसरे वर्ग भारतकी लाज न रखें तो भी भारतकी महिलाएँ उसकी लाजको अक्षुण्ण रख सकती हैं। स्त्रियोंने हमेशा धर्मकी रक्षा की है। धर्मके लिए स्त्रियोंने अपने प्राण उत्सर्ग कर दिये हैं। धर्मके लिए सीता-दमयन्तीने हजारों दुःख उठाये हैं।

१. सर प्रभाशंकर दलपतराम पट्टणी (१८६२–१९३७); भावनगर रियासतके दीवान; इंडिया कौंसिलके सदस्य, १९१७–१९१९।

स्त्रियोंने अपनी उदारताके वशीभूत हो सैंकड़ों तरहके अन्धविश्वास और ढोंगको भी प्रश्रय दिया है। वही स्त्रियाँ जब राष्ट्रकार्यके मर्मको समझ जायेंगी तो शेष क्या रह जायेगा? फिर तो राष्ट्रका खजाना खाली नहीं रहना चाहिए।

स्त्रियाँ स्वर्गीय लोकमान्य तिलकके नामसे अपरिचित नहीं हैं। उनकी स्मृति उन्हें कोई कम प्रिय नहीं है। उनके चारित्र्य बलसे हिन्दुस्तान दीप्त हो रहा है। उनके आत्मत्यागसे हिन्दुस्तान स्पन्दित हो रहा है। उनकी स्मृतिको चिरस्थायी बनाने तथा स्वराज्यकी स्थापना करनेके लिए गुजरातको दस लाख रुपया चन्दा देना है। इस कोषमें बहनें रुपया और आभूषण दे सकती हैं। आज बहनें आभूषणोंका क्या उपयोग करेंगी? जब हिन्दुस्तानके करोड़ों व्यक्तियोंको भरपेट खाना नहीं मिलता, जब हिन्दुस्तानमें अत्याचारका बोलबाला है तब बहनें आभूषण कैसे पहन सकती हैं? अशोक वाटिकामें सीताजी क्या आभूषण पहनती थीं? दमयन्ती जब वनमें विलाप करती फिर रही थी तब क्या उसके अंगपर आभूषण थे? तारामती जब हरिश्चन्द्रके साथ भटक रही थी तब क्या वह हीरे-मोतीके हार पहने हुए थी? अधर्मके इस युगमें आभूषण पहनना मुझे तो अनुचित जान पड़ता है।

जो बहनें यह सोचकर अपने आभूषणोंको सँजोकर रखती हैं कि दुःखके समय वे काम आयेंगे तो उनसे मैं इतना ही कहूँगा कि यदि आप ईश्वरपर विश्वास रखती हैं तो आभूषणोंकी अपेक्षा वह विश्वास आपके अधिक काम आयेगा। याद रखें कि हिन्दुस्तानमें करोड़ों स्त्रियाँ ऐसी हैं जिनके पास एक हलकी-सी अँगूठी भी नहीं है और जिनके सिरपर आकाश और नीचे धरती ही है। उन्हें भी ईश्वर खानेको दे रहा है। आप भी अगर परिश्रम करनेमें न शरमायें तो आपके पवित्र हाथ-पैर आभूषणोंकी अपेक्षा आपको अधिक प्रतिफल देंगे। भगवान्ने जिसे दाँत दिये हैं वह उसे दाने भी देगा। मेहनती और ईमानदार व्यक्तिको आजतक भूखा नहीं मरना पड़ा है। आलसीको ही आभूषणोंपर निर्भर रहना पड़ता है। बहनें आलस्य छोड़ें और गहनोंका भी त्याग करें।

बहनें जो पैसा देंगी उसका उपयोग ही आभूषणोंकी आवश्यकताकी पूर्ति करेगा, क्योंकि वह पैसा गरीब बहनोंको चरखा दिलाने और हमारे बच्चोंको अच्छी शिक्षा देनेमें खर्च होगा। तात्पर्य यह कि बहनें जो पैसा अथवा आभूषण दान देंगी उसका लाभ वस्तुतः उन्हें ही मिलेगा। जो व्यक्ति अपनी कमाई अपने पास रखकर अपने ऐश-आरामके लिए उसका उपयोग करता है वह व्यक्ति कुटुम्बघाती माना जाता है, स्वार्थी कहलाता है। जो अपनी कमाई परिवारकी गोलकमें डालता है वह भी अपनी कमाईका उतना ही उपयोग कर सकता है जितना कि पहला व्यक्ति करता है तथापि वह कुटुम्बका सेवक माना जाता है, निस्स्वार्थी समझा जाता है। देश-सेवाका अर्थ है देशको अपना कुटुम्ब समझना। देशकी गोलकमें हम जो पैसा डालेंगे उसका हमें पूरा लाभ मिलेगा। जिस तरह हमारे पैसेका लाभ औरोंको मिलता है वैसे ही औरोंके पैसेका लाभ हमें मिलता है। इस तरह जो बहनें पैसे अथवा आभूषण देंगी वे कुछ भी नहीं खोयेंगी।

बहनें अपने परिवार और पतिको भी इस कार्यकी ओर प्रेरित कर सकती हैं। अनेक बार स्त्रियोंके खर्चके कारण पुरुष जितना चाहते हैं उतना देशको नहीं दे पाते।

कभी-कभी स्त्री अपने पतिको दान देनेसे रोकती भी है। इसके बजाय मैं उनसे पुरुष-वर्गको प्रोत्साहन देनेकी प्रार्थना करता हूँ। यह बात भी मेरी जानकारीसे बाहर नहीं है कि अनेक स्त्रियाँ पुरुष-वर्गको अधिक देनेके लिए प्रेरित करती हैं और उसमें सफल होती हैं। अन्य बहनें भी इनका अनुकरण करें।

मेरी प्रार्थना है कि जो बहनें इस पत्रिकाको पढ़ें वे दूसरोंको भी पढ़ायें। मुझे उम्मीद है कि बहनें स्वयं देकर ही सन्तुष्ट न रहेंगी बल्कि अपनी अन्य बहनोंको भी देनेके लिए प्रेरित करेंगी।

जहाँ पैसा दें, वहाँसे रसीद अवश्य लें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १६-६-१९२१

१०४. टिप्पणियाँ

अली बन्धुओंकी वह सफाई[1]

अली बन्धुओंने अपनी सफाईमें जो वक्तव्य दिया था, उसे लेकर अभीतक लोगोंके मनमें शंकायें उठती रहती हैं। अब भी मेरे पास इस बातके उलाहनेसे भरे हुए पत्र आ रहे हैं कि मैं वाइसरायसे मिलनेके लिए गया ही क्यों। कुछ लोगोंका ऐसा खयाल है कि मैंने सारा मामला बिगाड़ दिया; कुछ अन्य लोग अली बन्धुओंपर यह आरोप लगाते हैं कि आखिर एक बार उन्होंने भी कमजोरी दिखाई है, और वह भी मेरे प्रति उनकी भावनाके कारण। मैं जानता हूँ कि यह सारा तूफान जल्दी ही शान्त हो जायेगा। क्योंकि मैंने इस प्रसंगमें जो-कुछ सुना और पढ़ा है, उसके बावजूद, मुझे यही लगता है कि वाइसरायकी इच्छा जानकर अपने विचारोंसे उन्हें अवगत करानेके लिए उनसे मिलकर मैंने कोई गलती नहीं की। गलती तो तब होती जब मैं उनसे लिखित निमन्त्रण पानेके लिए बैठा रहता। मुझे यह भी लगता है कि अली बन्धुओंने जो वक्तव्य जारी किया, उन्हें वह वक्तव्य जारी करनेकी सलाह देकर मैंने खिलाफत और भारतके हकमें जो सर्वोत्तम था वही किया। यह वक्तव्य देकर अली बन्धुओंने विनम्रता और उच्च कोटिका साहस ही दिखाया है। उन्होंने दिखा दिया है कि अपने देश और अपने धर्मके लिए वे अपना अभिमान और अपना सभी कुछ खुशी-खुशी बलिदान कर सकते हैं। अगर वे वक्तव्य देनेसे इनकार कर देते तो उससे हमारे पक्षको हानि ही पहुँचती, इसलिए उन्होंने वक्तव्य देकर हमारे पक्षको मजबूत किया है।

एक एतराज

लेकिन इस बातका पूरा-पूरा एहसास होनेके बावजूद इसपर मुझे कोई आश्चर्य नहीं है कि मेरे पास अली बन्धुओंके बयानपर एतराज भरे पत्र आ रहे हैं। उन एतराजोंसे केवल यही प्रकट होता है कि हम जिन तरीकोंपर चल रहे हैं वे नये हैं, देश

१. देखिए "अली भाइयोंकी क्षमा-याचनाका मसविदा", १४-५-१९२१।

अपनी उचित माँगोंमें जरा-सी भी कमी करनेको तैयार नहीं है, और उन माँगोंको पूरा करानेके लिए जनता सिर्फ अपनी ही ताकतपर निर्भर रहना चाहती है।

मेरी इस सलाहकी और अली बन्धुओं द्वारा उसे स्वीकार करनेकी भर्त्सनामें प्राप्त सबसे जोरदार दलीलवाले पत्रके कुछ सम्बद्ध अंश यहाँ दिये जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त यह पत्र एक बहुत बड़े असहयोगी नेताने लिखा है। यह पत्र प्रकाशनके लिए नहीं भेजा गया है। लेकिन मैं जानता हूँ कि उसे यहाँ छापनेमें लेखकको कोई खास आपत्ति भी न होगी; क्योंकि मुझे मालूम है कि ऐसे विचार अकेले उन्हींके नहीं और भी कई विचारशील असहयोगियोंके हैं। इस प्रसंगको लेकर जो सवाल पैदा हो गये हैं, उनपर और असहयोगके फलितार्थोंपर विचार करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। शान्तिसे अपनी बात कहकर ही मैं असहयोगकी सचाई, खूबी और औचित्यको समझानेकी आशा कर सकता हूँ। तो उस पत्रके कुछ अंश इस प्रकार हैं:

> अली बन्धुओंके वक्तव्यको अगर पूर्व-परिस्थितियोंसे अलग करके पढ़ा जाये तो अपने-आपमें वह एक शानदार वक्तव्य है। किसी क्षण जोशमें आकर अगर वे ऐसी बातें कह गये हों, जिनके बारेमें बादमें उन्हें लगता है कि इनमें किसीको हिंसा भड़कानेवाली प्रवृत्तिका आभास मिल सकता है, तो उसके लिए खेद प्रकट करके उन्होंने अपने स्तरके सार्वजनिक नेताओंके सम्मानके योग्य ही कार्य किया है। भविष्यके लिए उन्होंने जो आश्वासन दिया है, उसे भी मैं सर्वथा उचित समझता, यदि यह आश्वासन उन्होंने अपने उन सहकर्मियोंको दिया होता, जो उनके विपरीत, किसी भी स्थितिमें हिंसामें विश्वास नहीं करते हैं। लेकिन उन्होंने जिस शब्दावलीका प्रयोग किया है, वह इस प्रकार है: "जो ऐसा चाहते हैं उन सभीको सार्वजनिक रूपसे आश्वासन और वचन" आदि। सभीपर लागू होनेवाली ऐसी गोलमोल शब्दावलीके प्रयोगसे इस बातके सम्बन्धमें किसीको भी कोई भ्रम नहीं हो सकता कि वास्तवमें किस पक्ष-विशेषको ऐसे "आश्वासन और वचन" की आवश्यकता थी और किसके आदेशपर यह आश्वासन और वचन दिया गया है। वाइसरायके भाषणसे तो रहा-सहा सन्देह भी पूरी तरह जाता रहा और हमें यह बात निर्विवाद रूपसे मालूम हो गई कि असहयोग आन्दोलनका नेता सरकारसे बातचीत चला रहा था और उसीने अली बन्धुओंको सार्वजनिक रूपसे सफाई और आश्वासन देनेके लिए प्रेरित करके उन्हें गिरफ्तारीसे बचाया।
>
> मैं इस मामलेको किसी और दृष्टिसे देख नहीं पा रहा हूँ और इस दृष्टिसे देखनेपर तो समूचे आन्दोलनसे सम्बन्धित कई अन्य गम्भीर प्रश्न विचारार्थ उपस्थित हो जाते हैं। दरअसल मुझे तो लगता है कि असहयोगके पूरे सिद्धान्तको ही तिलांजलि दे दी गई है।
>
> मैं न तो उन लोगोंमें से हूँ जो सरकारके नामसे ही कतराते हैं, और न उन लोगोंमें से ही जो हमारी सारी शिकायतोंका एकमात्र हल और स्वराज्य-

प्राप्तिका एकमात्र उपाय अन्तमें सरकारसे समझौता कर लेना ही मानते हैं। मेरा तो आपकी इस सीखमें विश्वास है कि स्वराज्य प्राप्त करना पूरी तरह और सर्वथा हमपर ही निर्भर है। लेकिन साथ ही अभीष्ट परिस्थितियोंमें सरकारसे समझौतेकी सम्भावनाको भी मैं रद नहीं करता, और जहाँतक मैं जानता हूँ, स्वयं आप भी नहीं करते। लेकिन ऐसे समझौते सिर्फ सिद्धान्तोंके आधारपर ही हो सकते हैं, व्यक्तियोंकी सुविधा या सुरक्षाको सोचकर नहीं। जिस आन्दोलनमें बहुतसे कार्यकर्त्ता मिल-जुलकर काम करते हों, उसमें आप व्यक्ति-व्यक्तिमें कोई भेदभाव नहीं कर सकते; उसमें तो छोटेसे-छोटा कार्यकर्त्ता भी नेताओंसे उतनी ही सुरक्षा पानेका अधिकारी है जितना कि बड़ेसे-बड़ा और प्रमुखतम व्यक्ति। अली बन्धुओंसे कहीं नरम भाषाका उपयोग करनेके अपराधमें हमारे सैकड़ों नहीं तो, अवश्य ही बीसियों कार्यकर्त्ता खुशी-खुशी जेल गये हैं। इसी तरहकी सफाई और आश्वासन देकर उनमें से कुछको तो जेल जानेसे बचाया ही जा सकता था, लेकिन किसीको उन्हें वैसी सलाह देनेका खयाल नहीं आया। उल्टे जेल जानेके लिए नेताओं और असहयोगसे सम्बन्धित सारे अखबारोंने उनकी तारीफ ही की। ऐसे लोगोंमें मुझे इस समय हमीद अहमदका सबसे ज्यादा खयाल आ रहा है, जिन्हें हालमें ही इलाहाबादमें आजीवन कालेपानीकी सजा दी गई है और जिनकी सारी सम्पत्ति जब्त कर ली गई है। क्या कोई खास कारण है, जिसकी वजहसे इस आदमीको बचाया नहीं जाना चाहिए? मौलाना मुहम्मद अलीने ३० मईके अपने बम्बईवाले भाषणमें हमीदकी खूब तारीफ की है। मैं नहीं कह सकता कि जिस व्यक्तिकी स्थिति ठीक हमीद अहमदकी सी थी, उसकी प्रशंसासे, हमीद अहमदको क्या कोई सान्त्वना मिल सकती है जब कि स्वयं उस व्यक्तिने सफाई और आश्वासन देकर अपने-आपको बचा लिया हो। जेलोंमें और भी बहुत-से लोग सड़ रहे हैं, जिन्होंने कोई अपराध नहीं किया है; और फिर उससे भी कहीं ज्यादा लोगोंके प्रति सरकार वैसा ही करने जा रही है। अपने निरापद स्थानसे उन सबकी तारीफ कर देना और अपनी शुभाकांक्षाएँ पहुँचा देना ही क्या हमारे लिए काफी है?

वाइसरायके भाषणसे स्पष्ट हो गया है कि उनसे आपके बार-बार मिलनेका जो सिर्फ एक निश्चित परिणाम निकला, वह है अली बन्धुओंकी सफाई और आश्वासन। बादके अपने भाषणोंमें आपने भी इस बातको बिलकुल स्पष्ट कर दिया है कि हमारा आन्दोलन बिना रुके चलता रहेगा। ऐसा लगता है कि किसी सैद्धान्तिक प्रश्नपर कोई समझौता नहीं हुआ है, और जिस प्रश्नपर समझौता हुआ यानी हिंसाको न भड़कानेके प्रश्नपर, उसके लिए दोनों पक्षोंकी ओरसे बातचीतकी कोई भी आवश्यकता नहीं थी। मैं यह नहीं कहता कि

आजकी परिस्थितिमें सरकारसे बातचीत करनी ही नहीं चाहिए थी, यद्यपि न करनेके पक्षमें भी बहुत-कुछ कहा जा सकता है। जब दोनों पक्षोंने यह समझ लिया था कि इस खेलको अन्ततक खेलना ही है, तो आप और लॉर्ड रीडिंग जैसे ईमानदार और खरे प्रतिद्वन्द्वियोंके लिए यह बहुत जरूरी और उचित था कि इस खेलके नियम तय कर लेते, ताकि किसी भी पक्षकी ओरसे बेईमानी नहीं की जाती। और बेशक इन नियमोंका लाभ थोड़ेसे कृपापात्र व्यक्तियोंको नहीं, बल्कि इस खेलमें शामिल सभी लोगोंको प्राप्त होना चाहिए था। सबसे जरूरी चीज तो यह थी कि इस विषयपर सहमति हो जाती कि किन हथियारोंका प्रयोग किया जाना है। कुछ प्रान्तीय सरकारें ऐसी हैं जो कहनेको तो कहती हैं कि प्रचारका मुकाबला प्रचारसे किया जायेगा, लेकिन दरअसल वे घोर दमनकी कार्रवाइयाँ कर रही हैं। मेरे विचारसे मुख्य सवालपर कोई सहमति न हो सकनेपर भी इस और ऐसे ही दूसरे अनेक मुद्दोंपर बातचीत करना उचित और उपयोगी हो सकता है।

आशा है कि आप मुझे गलत नहीं समझेंगे। अली बन्धुओंके त्यागके लिए मेरे मनमें किसीसे भी कम आदरका भाव नहीं है और उनकी मैत्रीको मैं अपना परम सौभाग्य मानता हूँ। जिस विचारसे इधर कुछ दिनोंसे मेरा मन परेशान रहा है वह यह है कि हम लोग, जो अपने कार्यकर्त्ताओंके जेल जाने और तरह-तरहके कष्ट उठानेका मुख्य कारण हैं; स्वयं सारी आपदाओंसे अछूते बचे हुए हैं। उदाहरणके लिए सरकारने पत्रक बाँटनेके अपराधमें निर्दोष बालकोंको जेल भेज दिया है, लेकिन उन पत्रकोंके लेखकोंको मुक्त रहने दिया है। हममें से कुछ लोगोंको गहरा मानसिक कष्ट पहुँचानेका इससे ज्यादा बढ़िया कोई और उपाय वह सोच ही नहीं सकती थी। फिर भी मेरी रायमें वह समय आ गया है, जब नेताओंको जेलके कष्ट भोगनेके अवसरका स्वागत और बच निकलनेके प्रस्तावोंको दृढ़तासे अस्वीकार करना चाहिए। मैंने अली बन्धुओंके आचरणपर जो आपत्ति की है, वह मामलेको इसी दृष्टिकोणसे देखते हुए की है। व्यक्तिगत रूपमें तो मैं उनसे स्नेह ही करता हूँ।

गलत धारणा

पत्र उच्चाशयता और साहससे ओत-प्रोत है। और इन्हीं गुणोंके कारण परिस्थितिको ठीक रूपसे समझनेमें भूल हुई है। इस गलत धारणाका मुख्य कारण वाइसरायके दुर्भाग्यपूर्ण कथनको ही समझना चाहिए।

अली बन्धुओंने सफाई सरकारको नहीं दी। वह उन मित्रोंके लिए है, जिन्होंने उनके भाषणोंकी ओर उनका ध्यान दिलाया। इतना तो निश्चित ही है कि यह सफाई "वाइसरायके आदेशपर" नहीं दी गई। मेरे इस कथनको कि उन्होंने तो इस ओर इशारा भी नहीं किया था, आपसी चर्चाको जाहिर करनेका गुनाह न समझ

लिया जाये। अली बन्धुओंके भाषणोंको देखते ही उनकी प्रामाणिकता और आन्दोलनके अहिंसात्मक रूपको साबित करनेकी गरजसे मैंने खुद ही कहा कि मैं उन्हें बयान देनेकी सलाह दूँगा। उनकी आजादीके लिए सौदेबाजी करनेका कोई सवाल ही नहीं था। उनके भाषणोंकी ओर मेरा ध्यान दिलाये जानेके बाद मैं उन्हें (अगर मुझसे बनता तो) हिंसा भड़कानेके स्पष्ट आरोपके आधारपर तो कभी जेल जाने नहीं दे सकता था। जिन लोगोंपर ऐसा आरोप लगाया गया है, उनमें से सभीको मैंने यही सलाह दी है और कहा है कि अगर उनके भाषण हिंसात्मक हों तो उन्हें जरूर अफसोस जाहिर करना चाहिए। असहयोगी इसके सिवा दूसरा कुछ कर भी नहीं सकता। अदालतमें अली बन्धुओंपर मुकदमा चलनेकी सूरतमें मैं उन्हें अपने भाषणोंके उन अंशोंके लिए अदालतसे माफी माँगनेकी सलाह देता जो मेरे विचारसे ऐसे हैं जिनके बारेमें यह सोचा जा सकता है कि इनके पीछे हिंसा भड़कानेका मंशा था। हिंसाका मंशा न रखना ही असहयोगीके लिए काफी नहीं होता बल्कि यह भी जरूरी है कि कोई भी समझदार आदमी उसके भाषणका वैसा मतलब न लगा सके। हमारा व्यवहार ऐसा होना चाहिए कि हमारे ऊपर कोई अँगुली न उठा सके। इस आन्दोलनकी सारी सफलता इस बातपर निर्भर करती है कि वह सर्वथा निष्कलंक बना रहे। इसलिए पत्र-लेखक और उनकी तरह सोचनेवाले दूसरे लोगोंसे मैं यही कहूँगा कि असहयोगके पूरे सिद्धान्तको, जैसा कि उनका खयाल है, "तिलांजलि नहीं दी गई है" बल्कि अली बन्धुओंकी सफाईसे उसके अहिंसात्मक रूपकी पुष्टि ही हुई है और इस तरह हमारा पक्ष ज्यादा मजबूत हो गया है।

आजाद कौन है?

लेकिन लेखकको असल दुःख इस बातका है कि जहाँ अली बन्धु आजाद हैं, वहाँ दूसरे सामान्य कार्यकर्त्ता उनसे कहीं कम कड़ी बातें कहनेके लिए जेलोंमें पड़े हुए हैं।

एक इसी बातसे असहयोगके असली स्वरूपका पता चल जाता है। असहयोगी अपनी सुरक्षाके लिए सौदेबाजी नहीं कर सकता, न उसे करनी चाहिए। मैं दूसरोंकी मुक्तिके लिए सौदेबाजी करनेके लिए स्वतन्त्र था। लेकिन अगर ऐसा करता तब तो असहयोग जिन सिद्धान्तोंकी नींवपर खड़ा है मैंने उन्हींका त्याग कर दिया होता। इसलिए मैंने अली बन्धुओंतक की मुक्तिके लिए सौदेबाजी नहीं की। बिलकुल साफ-साफ शब्दोंमें मैंने यही कहा कि सरकार जो चाहे करे, मेरा कर्त्तव्य तो अली बन्धुओंसे मिलने पर उन्हें यही सलाह देना होगा कि अपनी प्रतिष्ठाकी, अपनी प्रामाणिकताकी रक्षाके लिए वे वक्तव्य दें।

हर हालतमें ईमानदारी

हमें तो इस खेलको सचमुच खेलकी भावनासे ईमानदारीसे खेलना ही है, चाहे सरकार उसी भावसे इसमें भाग ले या न ले। और सच बात तो यह है कि सरकार ऐसा करेगी, इसकी मुझे कोई उम्मीद भी नहीं है। जब मैं इस नतीजेपर पहुँचा कि सरकारमें ईमान नहीं है, तभी मैंने असहयोग किया। लॉर्ड रीडिंगकी सचाई और न्यायपर चलनेकी इच्छा हो सकती है और है भी; मगर उन्हें चलने नहीं दिया

जायेगा। अगर सरकारमें ईमानदारी होती तो अली बन्धुओंपर मुकदमा न चलानेका फैसला करते ही दूसरे सब कैदियोंको भी वह छोड़ देती। अगर सरकार ईमानदार होती तो पंडित मोतीलाल नेहरू-जैसे प्रमुख अपराधीको आजाद छोड़कर जवानोंको जेलमें बन्द न करती। अगर सरकार ईमानदार होती तो वह नकली अमन सभाओं (लीग्ज़ आॉफ़ पीस) को बढ़ावा न देती। अगर सरकार ईमानदार होती तो जिस तरह अमृतसर, कसूर, वीरमगाँव, अहमदाबाद और अभी हालमें मालेगाँवमें अपने लोगों द्वारा किये गये गुनाहके लिए हमने पश्चात्ताप किया, उसी तरह वह भी बहुत पहले ही अपने नृशंस और घृणित कृत्योंपर पश्चात्ताप करती। इस सरकारके बारेमें मुझे किसी भी तरहकी झूठी आशा या भ्रान्ति नहीं है। सरकार चाहे तो कल अली बन्धुओंको गिरफ्तार कर ले; मैं तो फिर भी उनकी सफाईको वाजिब ही मानता रहूँगा। उन्होंने ईमानदारीका बरताव किया है और हम सबको भी वैसा ही करना चाहिए। सच तो यह है कि सरकार जो लोगोंको अराजभक्तिके लिए गिरफ्तार कर रही है, वह अली बन्धुओंको ही गिरफ्तार करने-जैसा है।

पत्र-लेखक महोदयके इस कथनके बारेमें भी कि जेलमें बन्द असहयोगी बाहर रहनेवाले असहयोगियोंसे कम भाग्यवान हैं मुझे यही कहना पड़ेगा कि असहयोगके बारेमें उनकी समझ सही नहीं है। अगर मैं असहयोगके नियमोंको किसी तरह भंग न करूँ और निजी या सार्वजनिक नैतिक मूल्योंको भी भंग न करूँ और फिर भी काल-कोठरीमें बन्द कर दिया जाऊँ, तो इस सजाको मैं आजादी मानूँगा। जैसे गुलाम-के लिए उसके मालिकका घर कैदखाना है, उसी तरह मेरी नजरोंमें तो सारा भारत एक कैदखाना है। गुलाम अगर आजाद होना चाहता है तो उसे अपनी गुलामीके खिलाफ बराबर बगावत करते रहना पड़ेगा और बागी होनेके कारण मालिककी काल-कोठरीमें बन्द भी रहना पड़ेगा। काल-कोठरीका दरवाजा तो आजादीका राजद्वार है। जो लोग सरकारकी जेलोंमें तकलीफें उठा रहे हैं, उनपर मुझे तरस नहीं आता। अन्यायी सरकारके राज्यमें निर्दोष लोगोंको तो बराबर सूलीपर ही सुख मानना चाहिए। मेरी सलाह माननेसे इनकार करके जेलमें अपने साथियोंके बीच जा बैठना तो अली बन्धुओंके लिए सबसे आसान काम था। यहाँ मैं पाठकोंको यह भी बता दूँ कि दक्षिण आफ्रिकाकी लड़ाईके आखिरी दौरमें जब मैं पकड़ा गया[1] तो मेरी पत्नी और दूसरे सभी दोस्तोंने छुटकारेकी साँस ली। दक्षिण आफ्रिकाकी जेलोंमें ही मुझे लड़ाई और आन्दोलनसे फुर्सत मिल पाती थी।

अब यह बात साफ हो गई होगी कि असहयोगमें पकड़े जानेवालोंको जेलसे छुटकारा पानेके लिए बयान क्यों नहीं देना चाहिए।

अराजभक्ति एक सद्गुण

वर्तमान शासन-प्रणालीकी बेईमानीकी दो बहुत बढ़िया मिसालें मेरे सामने हैं। गुजरात विद्यापीठके उपकुलपति प्रोफेसर गिडवानीने दो महीने पहले बेजवाड़ामें एक

१. यह बात नवम्बर १९१३ की है; देखिए खण्ड १२।

भाषण दिया था। उस सिलसिलेमें मद्राससे अराजभक्तिके आरोपका जवाब देनेके लिए उनके नाम एक सम्मन आया हुआ है। उसमें हिंसाको भड़कानेकी कोई बात नहीं है, जैसा कि उनपर लगाये गये आरोपको पढ़नेसे साफ हो जायेगा। दफा १२४-ए जिसके मातहत उनपर आरोप लगाया गया है इस प्रकार है: "... जो भी सम्राट्के या ब्रिटिश भारतमें कानूनसे स्थापित सरकारके प्रति नफरत या हिकारत पैदा करनेकी कोशिश करेगा या अपरागको बढ़ावा देगा या देनेकी कोशिश करेगा, वह सजाका भागी समझा जायेगा। ..." सम्राट्के प्रति घृणा या अराजभक्ति कोई नहीं फैलाता। श्री गिडवानीने अपने भाषणके द्वारा जिस प्रकारका अपराग फैलाया होगा, उस तरहकी अराजभक्ति तो अली बन्धु रोज ही उभारते और फैलाते रहते हैं। और इस सरकारके प्रति मुझसे ज्यादा अपराग रखने और अपराग फैलानेवाला तो दूसरा शायद ही कोई होगा। मैं तो हर भले आदमीका यह परम कर्त्तव्य मानता हूँ कि अगर वह असहयोगियोंके समान मौजूदा सरकारको एक बुराई समझता है तो इसके प्रति उसका भाव अपरागका ही होना चाहिए। उचित तो यही होता कि अली बन्धुओंपर मुकदमा न चलानेका फैसला कर चुकनेके बाद सरकारको एक हिंसाके अलावा और किसी भी मामलेके सम्बन्धमें किसीपर मुकदमा नहीं चलाना चाहिए था। मगर सरकारका मौजूदा तन्त्र जैसा है, उसमें अपने वातावरणसे रिश्ता तोड़े बिना और एक भ्रष्ट तन्त्रकी भ्रष्ट परम्पराओंकी पूरी तरह अवहेलना किये बिना इंग्लैंडके भूतपूर्व प्रधान न्यायाधीश (लॉर्ड चीफ ऑफ जस्टिस) भी कथनी और करनीके इस घोर अन्तरको मिटा नहीं सकते।

सताया हुआ सिन्ध

एक दोस्तने सिन्धमें दमनकारी कार्रवाइयोंका जो विस्तृत ब्यौरा भेजा है, वह इस प्रकार है:

> सिन्धके कमिश्नरने तमाम मुख्तियारकारोंको एक गुप्त गश्ती पत्र भेजकर असहयोग आन्दोलनके खिलाफ जवाबी आन्दोलन शुरू करनेकी हिदायत दी है। कई जगहके मुख्तियारकार असहयोग आन्दोलनको रोकनेके लिए बड़े ही विचित्र कदम उठा रहे हैं। उनमें एक तो है असहयोग-विरोधी समितियाँ बनाना, जो कि खुला और साफ तरीका है और जिससे किसीको एतराज नहीं हो सकता। लेकिन इसके साथ ही कई स्थानोंपर लोगोंसे यह भी कहा गया है कि वे असहयोग आन्दोलनके प्रचारकोंको अपने घरोंमें न ठहरायें और पंचायतोंपर जोर डाला गया है कि वे लोगोंको उनकी सभाओं और भाषणोंमें जानेसे रोकें। और वास्तवमें कहीं-कहीं ऐसा हुआ भी है कि ठहरे हुए प्रचारकोंसे मेजबानने (उदाहरणके लिए बदीनमें) घर छोड़कर चले जानेके लिए कहा गया। थरपारकर जिलेके खिपरो कस्बेकी खबर है कि बस्तीसे कुछ दूर एक भाषणकर्त्तापर किसी नकाबपोशने हमला कर दिया; उसे ऊँटपर से नीचे घसीट लिया और लाठीसे पीटा, मगर रुपये-पैसेको हाथ नहीं लगाया। हमलावर उसका स्वराजी झंडा और शाल

लेकर चम्पत हो गया, मगर उसकी घड़ी और पैसोंको छुआ भी नहीं। सारे जिलेके लोग जानते हैं कि यह हमला एक जाने-माने अफसरकी शह पाकर किया गया, लेकिन इस हलकेमें पुलिसका ऐसा आतंक है कि कोई बयान या गवाही देनेके लिए तैयार नहीं होता। सक्खर जिलेकी हालत तो और भी खराब है। कोई तीन हफ्ते पहले रेलवे स्टेशनसे दस-एक मील दूर उबावरोमें सक्खर जिला कान्फ्रेंसका जलसा किया गया। हलकेके डिप्टी कलक्टरने गाड़ीवालोंको कह रखा था कि वे गांधी टोपीवालोंको अपनी गाड़ियाँ न दें। गाड़ीवालोंकी डिप्टी कलक्टरको नाराज करनेकी हिम्मत न हुई, वे डर गये और उन्होंने उनकी बात मान ली। जब जलसेके सदर श्री वीरुमल बेगराज, सक्खरके असहयोगी वकील श्री मूलचन्द और अन्य लोग सक्खरवाली ट्रेनसे स्टेशनपर उतरे तो उन्हें कोई गाड़ी नहीं मिली। एक गाड़ीवान किसी तरह राजी भी हुआ तो पुलिसके जमादारने उसकी पिटाई कर दी और तब उसने भी जानेसे इनकार कर दिया। अध्यक्ष और दूसरे लोग तेज धूपमें करीब एक मीलका फासला तय करके पासके एक गाँवमें पहुँचे। वहाँकी पंचायतने उनके लिए सवारीका इन्तजाम किया और तब कहीं धूपमें तपते हुए वे उबावरो पहुँच सके। उबावरोमें लोगोंको डरा दिया गया था कि अगर वे जलसेमें गये तो यहाँ उनके घर लूट लिये जायेंगे। इसलिए वे हिचकिचाने लगे। इसपर कान्फ्रेंसके स्वयंसेवकोंने उनके घरोंपर पहरा देनेका इन्तजाम किया और तब लोग जलसेमें आये। जलसेमें सी० आई० डी०का गुर्गा एक मुसलमान भाषण देनेकी जिद करने लगा। पूछनेपर भी उसने यह नहीं बताया कि वह किस विषयपर बोलेगा। आखिरमें इजाजत मिल जानेपर वह वहाँ मौजूद कार्यकर्त्ताओंमें से एकको भद्दी जबानमें बुरा-भला कहने लगा, मगर लोगोंने इसे भी बरदाश्त कर लिया। थोड़ी देर बाद पुलिसका दूसरा गुर्गा बिना किसी वजहके दो स्वयंसेवकोंपर टूट पड़ा और उसने उन्हें और आसपासके दो-चार आदमियोंको घूसों और जूतोंसे पीटा। लेकिन मार खानेवालोंने उलटकर जवाब नहीं दिया। सारे जलसेके दौरान जलसेका आयोजन करनेवालोंको यह अन्देशा बना रहा कि कहीं हिंसा न भड़क उठे; लेकिन अधिकारियोंके गुर्गे जी-तोड़ कोशिश करनेपर भी हिंसा नहीं भड़का सके। गाड़ीवाले कान्फ्रेंसके प्रतिनिधियोंको वापस ले जानेके लिए भी तैयार न हुए। मीरपुर माथेलोमें, जहाँ कार्यकर्त्ता और प्रतिनिधि उतरे थे, जलसेमें मौजूद कुछ अफसरोंने मौलवी ताज मुहम्मदकी खुलेआम तौहीन की, मगर मौलवी साहब और दूसरे लोगोंने भी सब-कुछ बरदाश्त किया और उनके साथ न तो मारपीट की और न उन्हें कड़ी बातें ही कहीं। जलसेके बादसे जिलेकी हालत दिनोंदिन बिगड़ती जा रही है। उधर ये मुख्तियारकार मुसलमानोंकी सभाएँ करते रहे हैं और उन्हें भड़काते रहे हैं कि हिन्दू तुम्हारे साथ दगा और फरेब कर रहे हैं। इसलिए

मुसलमान हिन्दुओंको खुलेआम धमकाने लगे हैं कि अगर तुमने असहयोगियोंको अपने यहाँ ठहराया तो हम तुम्हारे यहाँ चोरी करवा देंगे। एक गाँवमें कांग्रेसका जत्था वहाँके मन्दिरमें आकर ठहरा। बात-की-बातमें तीस-एक मुसलमान लाठियाँ लिये हुए आ पहुँचे और कहने लगे : "हम भाषण देनेवालोंको पीटेंगे।" अन्तमें, पुजारीने बड़ी मुश्किलसे जत्थेवालोंको दूसरे दरवाजेसे निकल जानेके लिए राजी किया। सक्खर कांग्रेस कमेटीके नौजवान मन्त्री श्री चोइथराम वलेछाको घोटकी नामके गाँवमें कोई तीस-चालीस लाठीधारी मुसलमानोंने घेर लिया। वे शान्तिसे मार खानेके लिए तैयार हो गये। यह देखकर कई नौजवान हिन्दू वहाँ आ गये और श्री वलेछाको घेरकर चुपचाप बैठ गये। वहाँकी हिन्दू पंचायतको जब यह बात मालूम हुई तो उसने आदमी भेजकर श्री वलेछा और उनके साथके तीन या चार स्वयंसेवकोंको बुलवा भेजा। जब वे पंचायतमें गये तो ३० या ४० हथियारबन्द मुसलमानोंने वहाँ भी उनका पीछा किया और पंचायतकी सभामें जा बैठे और कहने लगे कि हम वलेछाको मारेंगे। पंचायतने श्री वलेछासे कस्बा छोड़कर चले जानेकी दर्ख्वास्त की। उन्होंने साफ कह दिया कि मैं जिस कामके लिए आया हूँ उसे पूरा किये बिना यहाँसे जानेका नहीं। तब पंचायतने मुसलमानोंसे जानेकी दर्ख्वास्त की, ताकि पंचायत अपना काम कर सके। मुसलमान सिर्फ़ हँस दिये और उन्होंने पंचायतकी बैठकसे जानेसे इनकार कर दिया। एक घंटेतक इन्तजार करनेके बाद भी जब कोई नतीजा नहीं निकला तो लाचार होकर पंचायतने श्री वलेछासे ही दर्ख्वास्त की कि वे गाँव छोड़कर चले जायें। तब कोई चालीस हिन्दुओंके संरक्षणमें वे स्टेशन चले गये। जहाँतक हमें मालूम है, जिन लोगोंने इस तरह आतंक, जोर-जबरदस्ती, मार-पीट और मार-पीटके लिए धमकियाँ देनेके तरीकोंसे गाँवोंमें कांग्रेसके प्रचारको रोकनेकी कोशिश की, उनके खिलाफ उच्च अधिकारियोंने अभीतक तो कोई कार्रवाई की नहीं है। क्या इन्हीं तरीकोंसे लॉर्ड रीडिंग और सर जॉर्ज लॉयड[1] आन्दोलनका मुकाबला करना चाहते हैं?

अन्तिम वाक्यमें मुझपर मीठी मार की गई है। मैंने लॉर्ड रीडिंग और सर जॉर्ज लॉयडकी तारीफमें पहले कुछ कहा है, उसीकी ओर यह इशारा है। मैंने जो तारीफ की, वह इस पत्रमें बताई गई घटनाओंके बावजूद अपनी जगह ठीक है। उससे तो मेरे आरोपका यह सार ही साबित होता है कि हुकूमतके इस बुरे तन्त्रमें भलेसे-भला हाकिम भी कोई अच्छा काम नहीं कर सकता। मेरे खयालमें तो सर जॉर्जका सिन्धके कमिश्नरपर उससे ज्यादा असर नहीं है, जितना कि गलियोंमें घूमनेवाले किसी शोहदेपर। बल्कि सच तो यह है कि वे चाहें तो उस शोहदेको डरा भी सकते हैं, मगर कमिश्नरसे तो उन्हें खुद ही डरना है। और लॉर्ड रीडिंगका सबसे बड़ा

१. बम्बई और सिन्धके तत्कालीन गवर्नर; सिन्ध तब बम्बई प्रान्तका ही हिस्सा था।

काम यह है कि उन्होंने पंजाबमें अपने कार्योंके लिए विख्यात श्री टॉमसनको और भी बड़ा पद दिया और उसे मंजूर फरमानेके लिए उन्हें राजी कर लिया। सर जॉर्ज लॉयडको जहाँ खुद देख-भाल करनी होती है, वहाँ वे आम तौरपर चतुराई और विनम्रतासे पेश आते हैं। लॉर्ड रीडिंग, जैसा कि अभी ऊपर बताया, उस तरह दिलासा देनेका काम कर सकते हैं। लेकिन चूँकि सिन्धका कमिश्नर उनकी परवाह नहीं करता और अपने-आपको उनसे कम नहीं समझता इसलिए सर जॉर्ज लॉयड इस्तीफा तो नहीं देंगे। न लॉर्ड रीडिंग ही इस बातपर इस्तीफा देंगे कि हाकिम लोग न्याय करनेके उनके इरादोंका मखौल उड़ाते हैं। दोनों ही पूरी ईमानदारीसे ऐसा सोचते हैं कि उनके बगैर तो हालतें और भी खराब हो जायेंगी। असहयोग आन्दोलन यही दिखानेके लिए आया है कि बुराईसे सम्बन्ध रखकर कोई अच्छा काम नहीं कर सकता। जब बुनियाद ही बुरी हो तो उसपर बनाये अच्छाईके महलसे फायदा कुछ भी नहीं होता, उलटे बुराईका जोर ही बढ़ता है। असफलताके लिए ऐसे अच्छे हाकिमोंको दोष देना बेकार है, क्योंकि भलाई करनेके अपने नेक इरादोंके बावजूद वे ऐसा नहीं कर पाते और असफल हो जाते हैं। सभी हाकिम बुरे नहीं हैं, इसलिए अगर हम हुकूमत और हाकिमोंमें, इस तन्त्र और उसके प्रशासकोंमें इसी तरह फर्क करें तो हमारा असहयोग इस तन्त्रमें गहराईतक पैठी हुई बुराइयोंके प्रति उनकी आँखें खोल देगा।

मगर प्रशासकोंके गुण, दोषोंके बारेमें इस सारी सैद्धान्तिक बहससे सिन्धकी तकलीफोंमें तो कोई कमी होती नहीं। आजकी बुरी हालतोंमें वे जो बहादुरी और धैर्य दिखा रहे हैं उसके लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ। अगर वे धीरज और बहादुरीसे डटे रहे तो यह बेलगाम और विवेकहीन दमन उलटे हमारे लिए ही अपने लक्ष्यतक पहुँचनेमें सहायक सिद्ध होगा। सारे कष्टोंको धीरजके साथ सहकर हमें अपने गुमराह भाइयोंका मन जीतना चाहिए जो आसानीसे अविचारी अफसरोंके हाथकी कठपुतली बन जाते हैं। भारतके दूसरे हिस्सोंकी तरह सिन्धके ग्रामीण भी जल्दी ही अफसरोंसे डरना छोड़ देंगे और कांग्रेस तथा खिलाफतके कार्यकर्त्ताओंको अपना सच्चा दोस्त और मुक्तिदाता समझकर उनका स्वागत करने लगेंगे। अगर हममें आस्था है तो शीघ्र ही मुसलमानोंको हिन्दुओंके और हिन्दुओंको मुसलमानोंके खिलाफ भड़काना नामुमकिन हो जायेगा।

मन्दिरोंमें खादी

विदेशी कपड़ा हमारी जिन्दगीमें इस तरह छा गया है कि पवित्र कार्योंमें भी हम उसीका इस्तेमाल करते हैं। पुरी, अयोध्या और दूसरी जगहके जिन मन्दिरोंमें भी मैं गया, करीब-करीब सर्वत्र देव-मूर्तियोंको विदेशी कपड़ेमें सजा हुआ पाया। यहाँतक कि जनेऊ भी हमेशा हाथ-कते सूतसे नहीं बनाया जाता। ऐसी स्थितिमें जब संवाददातासे यह समाचार मिला कि गुजरात विद्यापीठके आचार्य गिडवानीने[1] अपनी हालकी सिन्ध-यात्रामें 'ग्रन्थ साहब' के लिए विदेशी रेशमके बदले खादीका वेष्टन पेश किया तो

१. चोइथराम गिडवानी।

मुझे बहुत अच्छा लगा। गिडवानी साहब इस तरहकी तारीफके लायक मिसाल पेश करनेवाले पहले शख्स हैं। और मुझे उम्मीद है कि दूसरे भक्त भी उनका अनुकरण करेंगे और मन्दिरोंमें खादी विदेशी कपड़ेकी जगह लेगी।

माता-पिताका कर्त्तव्य

> **इस साल २१ बरसके मेरे तीसरे बेटेने ऑनर्सके साथ बी० ए०का इम्तहान पास किया। उसकी पढ़ाईपर बहुत ज्यादा खर्च हुआ। लेकिन वह सरकारी नौकरी नहीं करना चाहता, सिर्फ देशकी सेवा करना चाहता है। मेरे परिवारमें बारह आदमी हैं। पाँच लड़कोंकी पढ़ाई अभी बाकी है। कुछ जायदाद थी, जिसे कर्ज चुकानेके लिए दो हजार रुपयेमें बेच देना पड़ा। अपने तीन बेटोंकी पढ़ाईपर मैंने अपनी जिन्दगीकी सारी कमाई खर्च कर दी। मुझे उम्मीद थी कि तीसरा बेटा युनिवर्सिटीकी ऊँचीसे-ऊँची डिग्री हासिल करके मेरी खोई हुई श्री-सम्पदाको वापस ला देनेकी कोशिश करेगा; मैंने उम्मीद लगा रखी थी कि वह पढ़-लिखकर घरका सारा भार खुद उठा लेगा। लेकिन अब तो ऐसा लगता है कि समूचा परिवार ही तबाह हो जायेगा। एक तरफ कर्त्तव्य है और दूसरी तरफ मनकी अभिलाषाएँ; और दोनोंमें द्वन्द्व छिड़ा हुआ है। मैं इस मामलेमें आपकी राय और सलाह चाहता हूँ।**

यह पत्र केवल एक नमूना है; शिक्षाकी यह हालत आम है। इसी रवैयेके कारण मैं कुछ वर्षों पूर्व शिक्षाके मौजूदा ढंगके खिलाफ हो गया था और अपने तथा गैरोंके लड़कोंकी पढ़ाई-लिखाईके ढंगमें मैंने कुछ परिवर्तन कर दिये, और (मेरी रायमें) इनका नतीजा बहुत अच्छा निकला। हैसियत और रुतबेकी दौड़में बहुतसे परिवार तबाह हो गये और बहुतसे सादगी और सदाचारके रास्तेसे भटक गये हैं। सभी जानते हैं कि अपने बच्चोंकी पढ़ाई-लिखाईके लिए पैसा जुटानेमें उनके अभिभावकोंने कौनसे सुकर्म-कुकर्म करना अपना फर्ज नहीं माना है। मुझे तो यकीन हो गया है कि अगर हमने शिक्षाका सारा तरीका नहीं बदला तो हमारी हालत और भी ज्यादा खराब हो जायेगी। बच्चोंकी शिक्षाके मामलेमें हमने अभीतक जो-कुछ किया है, वह समुद्रमें सिर्फ एक बूंदकी तरह है। ज्यादातर बच्चे अशिक्षित हैं, और इसकी वजह इच्छाकी कमी नहीं, माता-पिताओंका अज्ञान और अक्षमता ही है। जब माता-पिताको अपने बड़े-बड़े बच्चोंका भरण-पोषण करना पड़े, उन्हें भारी खर्चका बोझ उठाकर महँगी शिक्षा देनी पड़े और बदलेमें तत्काल कोई लाभ न मिले तो मानना पड़ेगा कि व्यवस्थामें कहीं-न-कहीं कोई गहरी बुराई घुसी हुई है। विशेषकर भारत-जैसे गरीब मुल्कमें इन बातोंका होना तो और भी अनुचित है। बच्चे शुरूसे ही काम करके अपनी पढ़ाई-लिखाईका खर्च निकालने लगें, इसमें मुझे तो कोई बुराई दिखाई नहीं देती। कताई और उससे पहले धुनाई और पूनी बनाना आदि बेशक सभीके लिए उपयुक्त एक बहुत ही आसान हुनर है और आज सारे देशको उसकी जरूरत है। अगर हम इस हुनरको अपनी शिक्षण संस्थाओंमें जारी करते हैं तो एक साथ तीन बड़े काम हो

जाते हैं : शिक्षाका सारा खर्च निकल आता है; बच्चोंको दिमागी और शारीरिक दोनों तरहका प्रशिक्षण मिलता है, और विदेशी सूत और कपड़ेके सम्पूर्ण बहिष्कारका रास्ता साफ हो जाता है। फिर जिन बच्चोंको इस तरीकेसे शिक्षा दी जायेगी वे अपने-आपपर भरोसा करनेवाले और आत्मनिर्भर भी होंगे। मैं तो पत्र-लेखकको यही सलाह दूँगा कि वे अपने परिवारके हर सदस्यको कताई और बुनाईके द्वारा परिवारके भरण-पोषणमें मदद देनेके लिए तैयार करें। शिक्षाकी मेरी योजनामें तो जो लड़का एक खास मात्रामें सूत नहीं कातता उसे शिक्षा पानेका भी कोई अधिकार नहीं। जो परिवार ऐसा करेंगे, उनकी आत्मनिर्भरता और आत्मसम्मान और इस लिहाजसे उनका रुतबा भी इतना बढ़ जायेगा जितना उन्होंने कभी सोचा तक नहीं होगा। इस योजनामें उच्च और बहुमुखी शिक्षाके लिए स्थान ही न हो, ऐसी बात नहीं है; उलटे यह पद्धति हर लड़के-लड़कीके लिए उच्च और व्यापक शिक्षा सुलभ कर देती है। इसके अन्तर्गत साहित्यकी शिक्षाको उसका असली गौरव हासिल होता है, क्योंकि साहित्य-शिक्षाको इसमें मुख्यतः मानसिक और नैतिक संस्कार देनेका साधन बना दिया गया है, और रोजी कमाना इसका गौण और अप्रत्यक्ष उद्देश्य माना गया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-६-१९२१

१०५. असमका सबक

मनुष्यताके नामपर, मैं बंगालकी सरकारपर यह आरोप लगाता हूँ कि उसने गरीबोंको सताया। जहाँ दयाकी जरूरत थी वहाँ उसने हिंसाका सहारा लिया; जहाँ नर्मीकी जरूरत थी वहाँ उसने अपने गुरखा सिपाहियोंको झोंक दिया; जहाँ इन्सानियत चिल्ला-चिल्लाकर हमदर्दी और रहम माँग रही थी वहाँ इस सरकारने ऐसा किया कि अपने-आपको इन्सान कहलानेके काबिल नहीं रखा। और इतना ही नहीं, ये क्रूर अत्याचार करनेके बाद उसने अपने सूचनाधिकारियोंसे दैनिक अखबारोंमें उनको वाजिब ठहरानेके लिए लेख आदि लिखनेको कहकर जलेपर नमक छिड़का है।

× × ×

आज सिर्फ बंगालमें ही नहीं, सारे देशमें हालत यह है कि न सिर्फ बंगालकी बल्कि सारे हिन्दुस्तानकी सरकार गरीबों और मजलूमोंके खिलाफ, निहित स्वार्थों, पूँजीपतियों, अमीरों और ताकतवरोंका ज्यादासे-ज्यादा साथ देने लगी है। यह बड़ा संगीन आरोप है। और यही वजह है कि यहाँके सभी गरीब लोग मुल्कके सबसे गरीब और गरीबोंकी मुसीबतोंको समझनेवाले महात्मा गांधीके झण्डे तले आ जुड़े हैं। यही वजह है कि सरकार अब भी जो-कुछ मदद दे सकती

> है उस तकको लेनेसे मुल्कके गरीब और जरूरतमन्द इनकार करने लगे हैं। आजके संकटपूर्ण समयका उस घटनासे ज्यादा गम्भीर प्रमाण और कुछ नहीं हो सकता, जिसका आँखों देखा हाल एक आदमीने मुझे बताया है। असमसे चले आ रहे गरीब मजदूर सचमुच भूखों मर रहे थे। उनके आगे गरमागरम भात परोसा गया। लेकिन जब उन्हें पता लगा कि यह चावल सरकारकी ओरसे दिया जा रहा है तो उन्होंने खानेसे साफ इनकार कर दिया। वे डर गये कि कहीं यह उन्हें बागानोंको लौटा ले जानेकी कोई चाल न हो! लेकिन जब सेवा समितिवालों ने जनतासे माँग-जाँचकर उन्हें चावल दिया तो वे मारे भूखके उसे कच्चा ही चबाने लग गये।
>
> यह भारतमें अंग्रेजी राज्यके इतिहासमें एकदम नई और अमंगलकारी घटना है। वे लोग जो हमारी आँखोंके ठीक आगे होनेवाले इस इन्कलाबके बीच नहीं हैं और दफ्तरोंमें फाइलें खोले बैठे हैं उन सबके लिए समझदारीका तकाजा यही है कि वे समय रहते सचेत हो जायें। सबके फैसलेका दिन आ गया है। अब तो सिर्फ एक ही अहम सवाल है, जिसका सरकारको जवाब देना होगा; 'आप किसके साथ हैं — अमीरके या गरीबके, लक्ष्मीपतिके या दीनदयालुके?'

श्री एन्ड्रयूजने असमसे लौटकर वहाँकी उन दुःखद घटनाओंके बारेमें, जिनका सिलसिला अब भी समाप्त नहीं हुआ है, एक लिखित विचारपूर्ण भाषण कलकत्तामें दिया था। उनका वह भाषण आँखोंमें आँसू ला देनेवाला था। अगर पाठकोंने उसे पढ़ा है तो उन्हें ऊपरके अंशोंको पहचानते देर न लगेगी। श्री एन्ड्रयूज जो सोचते हैं वही लिखते और बोलते हैं। सत्यको वे न अपनेसे छिपाते हैं और न दूसरोंसे। वे निरन्तर मानवताकी सेवा करते रहनेमें अपने शरीरका भी खयाल नहीं करते। अपनी गलतियोंको वे उसी तत्परतासे माननेको तैयार रहते हैं जितनी तत्परतासे, अगर सच हुए तो, दूसरोंपर आरोप लगानेको — फिर चाहे वह व्यक्ति कितने ही ऊँचे पदपर क्यों न हो। और चूँकि वे सच्चे, दृढ़ और निडर हैं इसलिए कुछ अखबारवाले या तो उनकी निन्दा करते हैं या अवहेलना, लेकिन एन्ड्रयूज साहबके फीजी, दक्षिण आफ्रिका, पूर्व आफ्रिका, सीलोन और पंजाबके बारेमें दिये हुए वक्तव्य आज भी उतने ही सही हैं, जितने कि वे दिये जानेके समय थे। उन वक्तव्योंमें से कइयोंकी सत्यताको सम्बन्धित अधिकारियोंने मंजूर भी किया है। इनमें से हर मामलेमें गरीबों और जरूरतमंदोंकी मदद करनेमें उन्हें कामयाबी मिली है। उनपर कितना ही कीचड़ क्यों न उछाला जाये, उनकी प्रतिष्ठाको कोई आँच न आयेगी।

लेकिन ये पंक्तियाँ एन्ड्रयूजका बचाव करनेके इरादेसे नहीं लिखी जा रही हैं। असमके दुःखद वाक्योंका उल्लेख करनेमें मेरा उद्देश्य अपनी आत्मापर पड़े बोझको हलका करना और उनसे सबक लेना है। कुलियोंके काम बन्द करते ही मुझे तार द्वारा उस स्थानपर पहुँचनेका निमंत्रण मिला जहाँ ये वाकये, जिन्होंने एक राष्ट्रीय विपत्तिका रूप धारण कर लिया है, हो रहे थे लेकिन हाथमें लिया हुआ काम

छोड़कर जानेकी हिम्मत नहीं हुई। यहींसे मैंने उन सभीको तार और पत्र भेजे, जिन्हें भेजनेकी मैंने जरूरत समझी। हाथमें लिया हुआ काम चाहे कितना भी छोटा क्यों न हो, उसे छोड़कर दूसरे किसी भी कामके लिए, चाहे वह बहुत बड़ा ही क्यों न हो, जाना किसी भी आदमीके लिए उचित नहीं है; हाँ, कोई साफ रास्ता निकल आये तो बात दूसरी है। मेरे सामने ऐसा कोई रास्ता नहीं था, इसलिए मैं हाथमें लिये हुए कामको छोड़कर वहाँ नहीं जा सका। अगर यह मेरी गलती थी तो भगवान् और बेजबान मजदूर भाई मुझे माफ कर दें। मैं तो ऐसा ही समझता हूँ कि बेजवाड़ा-कार्यक्रमको पूरा करनेमें लगे रहकर मैं मजदूरोंकी पूरी सेवा कर रहा हूँ। मुझे अपनी मजबूरीका अफसोस इसलिए और भी ज्यादा है कि मजदूरोंका, किसी भी वजहसे हो, ऐसा खयाल बन गया है कि उनकी विपत्तिके समय जब और जहाँ उन्हें मेरी जरूरत होगी मैं उनके पास पहुँच जाऊँगा। मैं नम्रतापूर्वक अपनी सीमाएँ स्वीकार करता हूँ। मैं जानता हूँ कि बहुतसे मामलोंमें तो मैं अपनी हार्दिक सहानुभूति और प्रार्थनाओंके अतिरिक्त उन्हें कुछ भी नहीं दे सकता। जी तो बहुत चाहता है, लेकिन शरीर साथ नहीं दे पाता। मैं सुनता हूँ, मैं महसूस करता हूँ और मदद न कर पानेकी अपनी मजबूरीपर तड़पकर रह जाता हूँ।

मगर आदमी जितना असमर्थ है, भगवान् उतना ही समर्थ है। उसकी कृपा अपरम्पार है और वह हजार हाथोंसे मदद करता है। एन्ड्रयूज और दास साहब-जैसे सज्जनोंको जरूरतके समय वह न जाने कहाँसे भेज ही देता है। मैं इस विश्वाससे सन्तोष प्राप्त करता हूँ कि भगवान् किसी भी दुःखको अनसुना नहीं करता, दुःखी-दर्दीकी कातर पुकार सुनकर कुछ-न-कुछ मदद कर ही देता है। ऐसी हालतमें हमारे लिए उसने जो काम निर्धारित कर दिया है उसे विनम्र श्रद्धा और पूरी सतर्कतासे करते जाना ही उचित है, क्योंकि इसके सिवा हम और कुछ कर भी नहीं सकते।

असमकी दुःखद घटनाओंने भी एन्ड्रयूजको भारतीय सरकारपर संगीन आरोप लगानेका मौका दिया है। थोड़ी देरके लिए मान भी लिया जाये कि वे गलतीपर थे, फिर भी मजदूरोंकी तात्कालिक आवश्यकताओंके प्रति, तटस्थताके नामपर, जो क्रूरतापूर्ण उपेक्षा बरती गई और बिलकुल निहत्थे लोगोंपर हथियारबन्द गोरखे छोड़कर उसे जिस घिसे-पिटे तरीकेसे वाजिब ठहरानेकी कोशिश की गई, उस सबसे तो इस सरकारकी बर्बरता ही जाहिर होती है और यह किसी भी इज्जतके काबिल नहीं रह जाती। कुलियोंपर गोरखे छोड़े ही क्यों गये? फौजमें कुछ लोगोंको सिर्फ उजड्डता और क्रूरता ही सिखाई जाती है, इसे कौन नहीं जानता? निहत्थे नागरिकोंके बीच फौज उतारनेका मतलब जनता समझती है। सभी जानते हैं कि फौजमें भरती होनेवालों में मानव समाजका घटियासे-घटिया अंश भी होता है। लड़ाईके लिए ऐसे लोग अच्छे हो सकते हैं, मगर हड़ताली कुलियोंके खिलाफ उनका इस्तेमाल करना तो साफ तौरपर मालदारों और ताकतवरोंकी मदद करना है। हर महत्त्वपूर्ण मामले-में, सुधारोंकी योजना विफल हो रही है। अब तो कोई शक ही नहीं रह गया है कि अगले कुछ महीनोंमें या तो सरकारके तन्त्रमें इतना परिवर्तन हो जायेगा जिसकी

वजहसे ऊँच-नीचका भेद ही नहीं रहेगा या फिर ऐसा संघर्ष छिड़ेगा जैसा संघर्ष दुनियाने पहले कभी नहीं देखा होगा। सरकारका दिया भात खानेसे इनकार करनेका मतलब ही अपमानित करनेवाले हाथकी मददसे जिन्दा रहनेसे इनकार करना है। और जब सारे देशमें मूक साहस और त्यागकी यह भावना भर जायेगी, उस दिन इस सरकारकी किस्मतका फैसला हो जायेगा। हम हिंसाका हुनर सीखें, यह कतई जरूरी नहीं है; जरूरी है हिंसाको बरदाश्त करनेका, मर जानेका हुनर सीखनेकी। हिंसाके जरिये सफलता पानेका मतलब होगा एक राक्षसी सरकारकी जगह दूसरी राक्षसी सरकारको बिठाना, जिसके अधीन गरीब और निरीह लोग आजकी तरह ही तबाह होते रहेंगे।

कुलियोंकी सहानुभूतिमें जहाजी कर्मचारियोंने जो हड़ताल की उसके लिए एन्ड्रयूज साहबने अफसोस जाहिर किया है। उन्हें हड़तालके लिए उकसानेवालों ने मजदूरोंका अनिष्ट ही किया है। हम अपने देशमें राजनैतिक हड़ताल नहीं चाहते। अभी हममें उसके लिए अपेक्षित समझदारी नहीं है। राजनैतिक हड़तालोंसे हमारी आजादीका पक्ष कमजोर ही होता है। गड़बड़ी और हंगामेका वातावरण हम नहीं चाहते। ये चीजें हमारे आखिरी मंजिलतक पहुँचनेके रास्तेमें रुकावटें हैं। पागल होकर मार-धाड़ मचानेवाला सिपाही फौजमें रहनेके काबिल नहीं। गड़बड़ी मचानेवाले उच्छृंखल तत्त्वोंपर हमें कड़ा नियन्त्रण रखना चाहिए, या फिर उन्हें सरकारकी ही तरह अलग-अलग कर देना चाहिए। इसलिए हड़तालियोंको हम एक ही तरहसे मदद दे सकते हैं; अर्थात् जब वे अपनी सच्ची शिकायतोंको दूर करानेके लिए हड़ताल करें तो उन्हें मदद दें और उनके लिए रोटी-कपड़ेकी व्यवस्था करें। दूसरी हड़तालें रोकनेकी हमें जी-तोड़ कोशिश करनी चाहिए। हम पूँजी या पूँजीपतियोंको खतम करना नहीं चाहते, पूँजीपतियों और मजदूरोंके आपसी रिश्तोंको सुधारना चाहते हैं। हम पूँजीपतियोंको अपने साथ, अपने पक्षमें करना चाहते हैं। ऐसी सूरतमें सहानुभूतिमें की जानेवाली हड़तालोंको बढ़ावा देना बेवकूफी ही होगी।

असमके गरीब कुलियोंको अपने-अपने घर पहुँचानेके लिए एन्ड्रयूज साहबने फण्डकी अपील की है। यह अपील इस बातकी कसौटी है कि देशके भूखों और नंगोंके लिए यानी स्वराज्यके लिए हमारे दिलमें कितनी जगह है, और हम कितना कर सकते हैं। मैं आशा करता हूँ कि दीनबन्धुने[1] दीनोंके लिए जो झोली फैलाई है, कलकत्तेने उसे लबालब भर भी दिया होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५–६–१९२१

१. भारतीयोंके लिए किये गये सेवा-कार्यके कारण एन्ड्रयूज इस नामसे प्रसिद्ध थे।

१०६. मजिस्ट्रेटकी धाँधली

लाहौरके जिला मजिस्ट्रेटने लाहौर नगर कांग्रेस कमेटीकी सभापर पाबन्दी लगा दी। राजद्रोहात्मक सभा कानूनके अन्तर्गत, सार्वजनिक सभाएँ वे सभाएँ हैं जिनमें प्रवेशके नियमोंके अनुसार, प्रत्येक जनसाधारण सम्मिलित होनेकी माँग कर सकता है, बाकी सब सभाएँ असार्वजनिक और घरेलू किस्मकी होती हैं। लाहौर कांग्रेस कमेटीकी वह सभा सिर्फ कमेटीके सदस्योंके लिए ही विज्ञापित की गई थी। लेकिन मजिस्ट्रेट साहबको इससे इतमीनान नहीं हुआ। उन्होंने कमेटीके मंत्रीको तलब किया कि खुद आकर उन्हें इतमीनान करायें। लाला अमीरचन्दने स्वभावत: मजिस्ट्रेटकी ऐसी दरबारदारी करनेसे इनकार कर दिया और विनम्रतासे सूचित किया कि यह एक खास मकसदसे बुलाई गई सिर्फ घरेलू किस्मकी बैठक है। मजिस्ट्रेट साहबने फिर भी उस सभापर पाबन्दी लगा ही दी। मन्त्रीने विरोध किया कि हुक्म गैर-कानूनी है, मगर साथ ही यह भी सूचित कर दिया कि फिलहाल वे इस गैर-कानूनी हुक्मको मान लेते हैं। इससे जाहिर होता है कि सरकारी अफसर असहयोगियोंको सविनय अवज्ञाके लिए मजबूर कर रहे हैं, उसके लिए चुनौती दे रहे हैं। अगर इसी तरहके कुछ और हुक्म जारी हुए तो मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि यह चुनौती मंजूर की जायेगी। अभीतक हम अपनी कमजोरीकी वजहसे ऐसे हुक्मोंको मानते रहे। अब हम ताकतकी वजहसे मान रहे हैं और हमारी यह ताकत दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। देशमें जहाँ-जहाँ ऐसे हुक्म दिये गये हैं वहाँ सभी जगह सविनय अवज्ञाकी इच्छा जोर पकड़ती जा रही है। अनुकरणीय आत्मसंयम और आत्म-अनुशासनके ही कारण कार्यकर्त्ता अपने-आपको इस तरहके हुक्मों और पाबन्दियोंकी विनयपूर्वक अवज्ञा करनेसे रोके हुए हैं। लोग जितना आत्मसंयम तथा आत्म-अनुशासन दिखायेंगे उससे देशको उतना ही फायदा होगा। सविनय अवज्ञाके काबिल होनेके लिए हमें अपने भीतर इन दोनों गुणोंको अभी बहुत ज्यादा विकसित करना होगा। पूरी विनयके साथ अवज्ञा करने-का मतलब है कहीं जरा-सा भी हंगामा या किसी तरहकी हिंसा न होने पाये। अराज-कताकी इसमें कोई गुंजाइश नहीं। सविनय अवज्ञा करनेवाला स्वयं आगे बढ़कर कारा-वासको निमन्त्रित करता है। इसलिए गिरफ्तारीपर प्रदर्शन करना गलत है। गिरफ्तारी-पर तो वैसी ही खुशी मनानी चाहिए जैसी किसीकी दिली इच्छा पूरी हो जानेपर मनाई जाती है। अगर सविनय अवज्ञाको निर्धारित कानून और व्यवस्थातक ही सीमित रखनेकी हमारी पक्की तैयारी हो, और अगर हमें पूरा इतमीनान हो कि नेताओं-की गिरफ्तारीपर लोग किसी तरह हिंसा-उपद्रव नहीं करेंगे तो यह कल ही शुरू किया जा सकता है। असहयोगमें जो जगह अहिंसाकी है वही अवज्ञामें विनयकी है। अवज्ञा असहयोगका उग्रतम रूप है—यह करबन्दीसे भी ज्यादा उग्र है। सविनय अवज्ञा करनेवाला आदमी स्वयं ही कानूनका मूर्तिमन्त स्वरूप हो जाता है। सविनय अवज्ञाका आचरण करनेके लिए उच्च कोटिके साहस और सदसद् विवेककी जरूरत है।

सविनय अवज्ञाका मतलब सरकारके हुकूमत करनेके अधिकारको आचरणके द्वारा पूरी तरह नामंजूर करना है, इसकी इजाजत तभी दी जा सकती है जब सरकार इतनी भ्रष्ट हो जाये कि उसे किसी भी तरह सुधारा न जा सके। मेरी बेवकूफी ही सही, मगर हमारी इस सरकारको अपने कुकृत्यों और लोगोंको हिंसाके लिए भड़कानेका कोई पछतावा हो, इसका जरा-सा भी संकेत मुझे कहीं दिखाई नहीं देता। उलटे उसका इरादा हिंसाकी बिनापर डायरशाहीकी पुनरावृत्तिको उचित ठहरानेका लगता है। पंजाबके अन्यायके परिशोधनका केवल एक ही तरीका है और उस तरीकेसे उसका परिशोधन करनेसे इनकार करनेका मतलब यह है कि अमृतसरकी तरह लोगोंके क्रोधसे पागल हो उठनेपर उनके अपराधोंके लिए दोषी और निर्दोष दोनोंको समान रूपसे दण्डित किया जायेगा और इस तरह अमृतसरके उस एक अधिकारीके इस कथनको चरितार्थ किया जायेगा कि मौजूदा पीढ़ीके गुनाहोंकी सजा आनेवाली पीढ़ियोंको भुगतनी पड़ेगी।

जबरदस्तीसे लादा हुआ ब्रिटिश जुआ असहनीय भी है और अपमानजनक भी। यह जाति जो अपने आत्मसम्मानके प्रति सजग हो गई है कष्टोंकी भट्टीमें तपेगी और उसे तपना भी चाहिए। वह गुलामीके जुएको उतार फेंकनेके प्रयासके क्रममें जितनी भी तकलीफें आयें, बरदाश्त करेगी; बरदाश्त करनी ही चाहिए। अंग्रेज हिन्दुस्तानमें सिर्फ बराबरीके रिश्तेपर और दोस्त बनकर ही रह सकते हैं। अगर वे सेवा करना चाहते हैं तो उन्हें अपने मालिकोंकी इच्छाओंका पूरी पाबन्दीसे पालन करनेवाले सच्चे सेवक बनना चाहिए। अंग्रेज पूंजीपतियोंको सुविधाएँ दी जायें और भारतीय मजदूरोंका शोषण हो, यह चल नहीं सकता। हममें से छोटेसे-छोटेके साथ भी उन्हें बराबरीका सलूक करना होगा। इस बातसे कोई इनकार नहीं करता कि उनकी संगठन करनेकी प्रतिभा, उनके अध्यवसाय और उनकी सूझबूझकी हमें जरूरत है। मगर उनकी बन्दूक और उनके कोड़ेका आतंक हमेशा-हमेशाके लिए खत्म हो जाना चाहिए। लेकिन पंजाबके अन्यायका परिशोधन करने और मुस्लिम जनमतको सन्तुष्ट करनेसे इनकार करते देखकर तो यही लगता है कि उस आतंकको मिटानेका उनका कोई इरादा नहीं है। ऐसे रवैयेसे हमारा कोई समझौता नहीं हो सकता। कमजोर हों या ताकतवर, इसकी परवाह किये बिना हमें तो अन्ततक लड़ना ही चाहिए, फिर चाहे जो भी कीमत क्यों न चुकानी पड़े। इसलिए जैसे ही सविनय अवज्ञाके उपयुक्त निरापद वातावरण तैयार हो जाये, हमें उसे शुरू कर देना चाहिए। मगर तबतक ऐसे विवेकशून्य आदेशोंको भी, जैसा कि लाहौरके जिला मजिस्ट्रेटने दिया, सहते जाना होगा। अगर आज हम अपनी इच्छासे नियमों और आदेशोंका पालन करते हैं तो कल निश्चय ही हममें अधिकारपूर्ण अवज्ञाकी शक्ति आयेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-६-१९२१

१०७. फिर श्री पालके बारेमें

श्री पालने[1] 'इंगलिशमैन' को जो पत्र लिखा था और जिसे अखबारोंने उद्धृत किया है, उसका पूरा उत्तर देना जरूरी है। स्पष्ट है कि अनेक बातोंके बारेमें श्री पालको गलत जानकारी मिली है, जिसके कारण वे ऐसी बातें कहनेका लोभ संवरण नहीं कर सके हैं जो सही जानकारी होनेपर वे कभी न कहते।

मेरी शिमला-यात्रा और अली बन्धुओंके बारेमें जो गलतफहमी पैदा हुई है, उसके लिए सरकारी विज्ञप्ति, वाइसरायका भाषण और अखबारोंके प्रतिनिधियों द्वारा शिमला-यात्राका काल्पनिक विवरण जिम्मेदार है।

जिस समय मैं शिमला गया, मुझे इस बातका गुमान भी नहीं था कि मैं परम-श्रेष्ठसे भेंट करूँगा। मुझे मालूम था कि पण्डित मालवीयजी और श्री एन्ड्रयूज इस बातके लिए बड़े उत्सुक हैं कि मैं लॉर्ड रीडिंगसे भेंट करूँ। लेकिन शिमला मैं केवल पण्डित मालवीयजीसे मिलने गया था, कारण यह था कि चूँकि मैं बराबर दौरेपर था और उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं था, इसलिए उनका मुझसे आकर मिलना मुश्किल था। यात्राओंके दौरान वे मुझे पकड़ सकनेमें असमर्थ थे। पंडितजीकी बातें सुननेके बाद ही मैंने वाइसरायके सचिवको यह लिखनेका[2] निश्चय किया कि यदि परमश्रेष्ठ इस आन्दोलनके बारेमें मेरे विचार जानना चाहें तो मैं सहर्ष उनसे भेंट कर सकता हूँ। उनसे मैंने भेंट की, लेकिन अली बन्धुओंकी गिरफ्तारीका निर्णय बदलवानेके लिए नहीं वरन् वाइसरायको यह बतानेके लिए कि मैं असहयोगी क्यों बना। पहली और सबसे लम्बी मुलाकातमें तो अली बन्धुओंके आसन्न मुकदमेका जिक्र तक नहीं आया। अली बन्धुओंका प्रश्न तो बिलकुल स्वाभाविक रूपसे अहिंसा विषयक हमारी इस चर्चाके दौरान उठा कि उसका पालन कहाँतक किया जा रहा है। जब परमश्रेष्ठने मुझे भाषणोंके कुछ उद्धरण दिखाये तो मैंने यह पाया कि उनका वह अर्थ लगाया जा सकता है जो लगानेकी कोशिश की जा रही है। इसलिए मैंने परमश्रेष्ठको बता दिया कि अली बन्धुओंसे भेंट होते ही मैं उनको यह सलाह दूँगा कि सरकार उनके मुकदमेके सम्बन्धमें चाहे कुछ करे, उन्हें स्थिति स्पष्ट करते हुए एक वक्तव्य दे देना चाहिए। ऐसी कोई शर्त नहीं थी कि सरकारके अपना निर्णय बदलनेको राजी होनेपर ही वे वक्तव्य देंगे। इस वक्तव्यके आधारपर सरकारने अपना निर्णय बदल दिया, सो उसका बुद्धिमत्तापूर्ण और स्वाभाविक कार्य था। मैं यह मानता हूँ कि इससे मुझे राहत मिली है। परन्तु श्री पालकी तरह मैं यह नहीं समझता कि अली बन्धुओंकी गिरफ्तारीके फलस्वरूप खून-खराबी लाजमी थी। अली बन्धु मेरी ही तरह समझ-बूझकर अपराग फैलानेसे सम्बन्धित कानूनको निरन्तर तोड़ते आ रहे हैं, और इस तरह गिरफ्तारीको

१. विपिनचन्द्र पाल; देखिए "टिप्पणियाँ", १–६–१९२१।

२. पत्र उपलब्ध नहीं है।

भी न्यौता देते आ रहे हैं। यदि हम देशको अपने साथ लेकर चल पाये तो जल्दी हो या देरमें, लेकिन इसी वर्ष हम ऐसी हालत अवश्य ही पैदा कर देंगे, जिसमें सरकारको या तो हमें गिरफ्तार करनेके लिए बाध्य होना पड़ेगा अथवा उसे जनताकी माँगे स्वीकार कर लेनी होंगी। अली बन्धुओंके वक्तव्यका मन्शा एक ऐसे गलत आधारपर गिरफ्तारीसे बचनेकी कोशिश है, जिसको किसी भी तरह उचित नहीं ठहराया जा सकता।

इसलिए जहाँ मैं अली बन्धुओंको हिंसाके लिए उकसानेके आरोपपर मुकदमेसे बचानेके लिए उत्सुक हूँ, वहाँ मैं उनपर और स्वयं अपने आपपर इस आरोपमें मुकदमा चलाये जानेका स्वागत करूँगा कि हम कानूनसे स्थापित सरकारके प्रति अपराग फैलाते हैं। हम सभीको लगा कि जो-कुछ घट रहा है, उसे जानते हुए भी वक्तव्य न देना अपने लक्ष्यके प्रति अन्याय करना और दुश्मनके हाथका खिलौना बन जाना है।

श्री पालका यह विचार सही है कि जो मसले बहुत अधिक महत्त्वके नहीं हैं, मैं उनके आपसी विचार-विमर्श और समझौते द्वारा निबटारेकी आशा करता हूँ। परन्तु मैंने वाइसरायसे समझौतेकी शर्तोंके बारेमें चर्चा नहीं की; यह काम तो जनताके मान्य प्रतिनिधियोंके करनेका है। मैं श्री पालको यह विश्वास दिलाता हूँ कि ऐसी आशंका रखनेका कोई कारण नहीं है कि मैं लोगोंकी उपेक्षा करके अपनी मर्जीके मुताबिक किसीसे समझौता कर लूँगा। इसी तरह अगर किसी समझौतेकी शर्तोंपर चर्चा हुई तो उसे भी गुप्त नहीं रखा जायेगा। हाँ, जब दो अजनबी व्यक्ति मैत्रीपूर्ण चर्चाके लिए और एक-दूसरेका दृष्टिकोण समझनेके लिए आपसमें मिलते हैं, तब इस हदतक उनकी मुलाकातको गुप्त रखना ही पड़ेगा। और हम केवल एक-दूसरेका दृष्टिकोण समझनेके विचारसे ही मिले थे। परन्तु इसके साथ ही, मैं यह बताकर पाठकोंके मनपर से बोझा उतार देना चाहता हूँ कि उन्हें यह आशा नहीं करनी चाहिए कि इस भेंटके फलस्वरूप शीघ्र ही कोई समझौता हो सकेगा — भले ही इसके न होनेका कारण सिर्फ यह हो कि जनता अभी इसके लिए अपने-आपको अच्छी तरह तैयार नहीं कर पाई है। इसके अलावा वाइसरायके बारेमें तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि वे दो सर्वथा भिन्न दृष्टिकोणोंके बीच सामंजस्य स्थापित करनेकी कोशिश कर रहे हैं, जो असम्भव है। वे पुरानी बोतलोंमें नई शराब नहीं भर सकते। वे खिलाफत और पंजाबके घावोंका इलाज किये बिना भारतको सुखी और सन्तुष्ट नहीं बना सकते।

श्री पालका यह कथन बिलकुल ठीक है कि यदि पंजाब और खिलाफत सम्बन्धी अन्यायोंका परिशोधन हो जाये तो स्वराज्यके लिए आन्दोलन जारी रखनेका काम मुझे अन्य नेताओंपर छोड़ देना चाहिए; इसका कारण सिर्फ इतना ही है कि इन दो बड़े प्रश्नोंके बारेमें जब भारत इस बातका पूरा एहसास करा देगा कि उसकी ताकत कितनी है तो स्वराज्य उसे माँगते ही मिल जायेगा। स्वराज्यको मैं हर अन्यायका परिशोधन कराने, डायरशाही और लॉयड जॉर्जशाहीको रोक सकनेकी जनताकी शक्तिसे अलग नहीं मानता। सर माइकेल ओ'डायरका रास्ता आतंकवादका रास्ता है और श्री लॉयड जॉर्जका विश्वासघातका। श्री पालसे मैं यही कहूँगा कि यदि हमने इन दोनों दैत्योंको पछाड़ दिया तो उसका अर्थ यही होगा कि हम अपना शासन सँभालनेके लिए तैयार

हैं। बंगालके मेरे अनुयायी यदि वाइसरायसे मेरी मुलाकातसे नाखुश नहीं हैं तो इसका कारण यही है कि वे जानते हैं कि जबतक इन दोनों अन्यायोंका परिशोधन नहीं होता तबतक मैं कोई समझौता नहीं कर सकता, और वे यह भी जानते हैं कि स्वराज्यकी योजनाओंपर विचार-विनिमय करनेका समय तभी आ सकेगा जब समझौतेकी हर योजनाकी राहके ये दोनों रोड़े हटा दिये जायेंगे। यदि इन दोनों बाधाओंको दूर नहीं किया गया तो भारतके लिए पूर्ण स्वाधीनताके अलावा कोई चारा नहीं होगा। बारीसाल सम्मेलनमें भाग लेनेवाले बंगाली श्री पालकी चर्चासे इस कारण नाखुश हुए कि मेरे ख्यालसे वे समझते हैं कि अभी यह चर्चा छेड़नेका समय नहीं आया है और इससे स्वराज्यकी सही भावनाके विकासमें बाधा पड़ेगी। श्री पालका काम उस कारीगरकी तरहका था जो इमारतकी पक्की नींव तैयार करनेसे पहले ही सबसे ऊपरकी मंजिल बनाना शुरू कर दे। श्री पालसे मेरा यह निवेदन है कि वे देशको स्वराज्यकी योजनाओं-पर असामयिक चर्चामें न लगा दें और मेरा यह आश्वासन स्वीकार करें कि जहाँतक मेरा सम्बन्ध है मैं जनताके प्रतिनिधियोंसे खुला परामर्श किये बिना स्वराज्यकी किसी भी योजनाके बारेमें कोई कार्रवाई नहीं करूँगा। खिलाफत और पंजाबके बारेमें परामर्श करनेका तो कहीं प्रश्न ही नहीं है, क्योंकि उसके सम्बन्धमें न्यूनतम शर्तोंको तो भली प्रकार समझ-बूझ लिया गया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५–६–१९२१

१०८. भाषण : घाटकोपरमें[1]

१५ जून, १९२१

महात्मा गांधीने पहले घाटकोपरके निवासियोंको मानपत्रके लिए धन्यवाद दिया। उसके बाद उन्होंने कहा : मैं इन ४०,००० रुपयोंको जिन्हें आपने तिलक स्वराज्य-कोषके लिए इकट्ठा किया है स्वीकार करता हूँ। किन्तु मेरा ऐसा करना एक शर्तके साथ है। यदि आपके द्वारा इकट्ठी की गई यह रकम यहाँके उन बहुतसे निवासियोंके, जो बम्बईमें व्यापार करते हैं, अधिकतम प्रयत्नका फल है तब मैं तत्काल कहूँगा कि हमें स्वराज्य इस वर्ष कदापि नहीं मिल सकता। यदि आपने थोड़ा-सा भी त्याग किया

१. बम्बईके इस उपनगरके नागरिकोंने एक समारोहमें गांधीजीका स्वागत किया था। इस समारोहमें अन्य व्यक्तियोंके अलावा श्री वि० झ० पटेल, हकीम अजमलखाँ, सरोजिनी नायडू, डाक्टर मु० अ० अन्सारी, डाक्टर बी० एस० मुंजे, नृ० चि० केलकर, अली बन्धु, मौ० अब्दुल बारी, मौ० अबुल कलाम आजाद, जमनालाल बजाज और श्री शंकरलाल बैंकर भी उपस्थित थे, जो वहाँ कांग्रेस महासमितिकी बैठकमें भाग लेनेके लिए आये हुए थे। घाटकोपरके व्यापारियोंकी ओरसे तिलक स्वराज्य-कोषके लिए ४०,००० रुपयेकी थैली भेंट की गई थी। सभामें गांधीजी शौकत अलीके भाषणके बाद बोले थे। गांधीजीके भाषणका विवरण २०–६–१९२१ के **हिन्दू**में भी छपा था।

होता तो मुझे सन्तोष हो जाता; किन्तु आपने तो तनिक भी त्याग नहीं किया है। मैं अपने भाइयों और बहनोंसे फिर प्रार्थना कर रहा हूँ कि आप इस कोषमें जो भी दे सकें दें। आपने कबूल किया है कि घाटकोपर ऐसी जगह है जहाँ बम्बईके धनी भारतीय व्यापारी रहते हैं। उस बातको ध्यानमें रखते हुए आपके द्वारा इकट्ठी की गई रकम इतनी थोड़ी है कि इससे मुझे निराशा हो रही है। इस कोषके लिए अकेला मैं ही रुपया इकट्ठा नहीं कर रहा हूँ। अली भाई मंचपर मौजूद हैं; उनके सम्बन्धमें कहा गया है कि मैं उनके इशारेपर चला करता हूँ। यह सच नहीं है। अली भाइयोंको अपने धर्मसे प्रेम है और मुझे भी अपना धर्म प्यारा है। हम दोनों ही अपने-अपने धर्मोंका त्याग करनेवाले व्यक्ति नहीं हैं। हममें से हर एकका अपना एक धर्म है और हमें उसका पालन पूरी तौरपर करना है, फिर उसका परिणाम कुछ भी निकले। इसके अलावा यहाँ महान् व्यक्ति हकीम अजमलखाँ साहब आये हुए हैं। ये कोई मामूली आदमी नहीं हैं जो घाटकोपर यों ही चले आये हों। उनकी फीस बहुत ऊँची है। हकीम साहब कहीं जानेका एक दिनका एक हजार रुपया लेते हैं। ये वे डाक्टर नहीं हैं जिन्होंने पाश्चात्य चिकित्सा-विज्ञान पढ़ा हो; इनको कुछ रामबाण नुस्खे मालूम हैं जिन्हें और लोग नहीं जानते। फिर यहाँ डाक्टर अन्सारी भी आये हुए हैं। ये पाश्चात्य चिकित्सा-विज्ञानके विशेषज्ञ हैं। इन्हें लोगोंको मार डालनेकी सनद मिली हुई है, (हँसी) क्योंकि अगर कोई डाक्टर किसी आदमीके प्राण हर ले तो हम उसके विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं कर सकते। (हँसी) इनके अलावा यहाँ एक महान् व्यक्ति मौलाना अबुल कलाम आजाद भी मौजूद हैं। इस्लाम धर्म और इस्लामी कानूनके मामलोंमें इनकी बात बहुत प्रामाणिक मानी जाती है। ये सब बड़े-बड़े लोग घाटकोपर क्यों आये हैं? आपके सामने भाषण देनेके लिए नहीं। यह समय भाषण देनेका नहीं बल्कि काम करनेका — देशके लिए ठोस काम करनेका — है।

घाटकोपरके निवासियोंने मुझ अकेलेको ४०,००० रुपये दिये हैं; किन्तु वे हकीम अजमलखाँ और डाक्टर अन्सारी-जैसे अन्य अतिथियोंको क्या देंगे? आपको सेठ जमनालाल बजाज, शंकरलाल तथा यहाँ आये हुए दूसरे कार्यकर्त्ताओंको भी कुछ देना है। आप लोगोंने पूर्ण रूपसे अनुभव नहीं किया है कि यह वह अवसर है जब इस देशका सच्चा गौरव परखा जानेवाला है। यह असम्भव है कि ऐसे संकटके समय इस देशके निवासी अपने देशके गौरवके प्रति उदासीन रहें। अभी हमें ४० लाख रुपये भी नहीं मिले हैं। हम अभीतक २० लाख ही इकट्ठे कर पाये हैं। बम्बई नगरका यह कर्त्तव्य है कि वह शेष ६० लाख रुपये दे और इस बारेमें मुझे कोई सन्देह नहीं कि आप मुझे इतना रुपया दे सकते हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि बम्बई नगर कांग्रेसको इतनी रकम दे देगा। इस नगरमें रहनेवाले चार बड़े-बड़े समाजों — भाटिया, मेमन, मारवाड़ी और पारसीपर मुझे विश्वास है। पारसी लोग मुझे क्या देंगे यह मैं नहीं

जानता और मुझे यह भी नहीं मालूम कि मैं उनसे कितना रुपया लेनेकी आशा कर सकता हूँ। दो पारसी व्यापारियोंने, जिनका नाम श्री बोमनजी और श्री रुस्तमजी घोरखोदू है, १,५२,००० रुपये दिये हैं, इसलिए अब मेरी आशा शेष दो समाजों, मारवाड़ी और भाटिया व्यापारियों से है। मैं उनको इस सभामें बैठा देख रहा हूँ। यदि आप यह मानते हों कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है तो आपका यह परम कर्त्तव्य है कि आप उसको प्राप्त करनेके लिए अपनी पूरी शक्ति लगा दें। इस सम्बन्धमें मैं आपसे यह भी कहना चाहता हूँ कि यदि हम खिलाफतके प्रश्नको पूर्ण सन्तोषजनक ढंगसे हल नहीं करते तो हम गो-रक्षाकी समस्याको भी सन्तोषजनक रूपसे कभी हल न कर सकेंगे।

जो मानपत्र मुझे दिया गया है उसमें लिखा है कि घाटकोपरमें बम्बईके बड़े-बड़े व्यापारी रहते हैं। यदि ये बड़े-बड़े व्यापारी चाहते तो इस सभामें मुझसे यह वादा करके मुझे यहाँसे भेजते कि ज्यादा नहीं तो कमसे-कम ४० लाख रुपये तो वे मुझे देंगे ही। आपने जो उद्देश्य अपने सामने रखे हैं उन्हें पूरा करनेका ऐसा दृढ़ संकल्प कर लेना था कि किसी भी प्रकारका त्याग करनेके अवसरका स्वागत करते न कि ऐसे संकटके समय आप भारतमाताकी पुकार अनसुनी कर देते। यह समय ऐसा है जब हमें बहुत-सा धन इकट्ठा करना है, ज्यादा बातें नहीं करनी हैं। मुझे इस बातका पूरा भरोसा है कि यदि शहरके अन्य वर्ग अपने कर्त्तव्यका पालन न भी करें फिर भी भाटिया और मारवाड़ी ये दो वर्ग, इस संकल्पके साथ कि हम ब्रिटिश सरकारकी गुलामीमें हरगिज न रहेंगे, नियत की गई रकम मुहैया कर देंगे। इसी कारण आपको अपना धन उदारतासे देना है। हमें अगले कुछ महीनोंमें स्वराज्यकी स्थापना करनी है और उसके लिए हमें बड़े-बड़े त्याग करने होंगे। आपको विदेशोंका बना कीमती विलासिताका सामान और विलायती कपड़े छोड़ने हैं। इस शहरमें स्त्रियोंकी सभा करनेके लिए मेरे पास अतिया बेगम आई हुई हैं, किन्तु उनके साथ एक ऐसी महिला हैं जो पश्चिमी ढंगकी ठाट-बाटकी पोशाक पहने हुए हैं; इसलिए मैंने उनसे कहा है कि यदि बम्बईकी स्त्रियाँ केवल इतना ही करें कि खद्दर पहनने लगें तो मैं उनका बिन दामोंका गुलाम बननेको तैयार हूँ। यह समय कीमती जेवर या कीमती वस्त्र पहननेका नहीं है; आपको इन सब शान-शौकतकी चीजोंको छोड़ना है। आपको दत्त-चित्त होकर चरखेके प्रचारमें लग जाना है और आपके लिए खद्दर पहनना निहायत जरूरी है। जबतक आप ऐसा न करेंगी तबतक स्त्रियोंकी सभामें आनेसे क्या फायदा है? क्या आप जानती हैं कि हमारे देशके करोड़ों स्त्री-पुरुष अन्न-वस्त्रके अभावमें भूखों मर रहे हैं और अधनंगे रह रहे हैं। तब आप इन विदेशी चमक-दमककी चीजोंको, जिनका आपके मनपर इतना बड़ा प्रभाव है, काममें लानेकी निष्ठुरता कैसे कर सकती हैं? जब हमारे देशके इतने लोग कष्ट भोग रहे हैं तब हम ऐसे ऐशोआरामका जीवन कैसे बिता सकते हैं? हर स्त्रीका यह पवित्र कर्त्तव्य है कि वह खद्दर पहने।

जिन लोगोंने मुझे घाटकोपरमें बुलाया है वे सबसे पहले अपना धर्म ठीक तरहसे समझ लें। लोगोंको स्वराज्य देना मेरे हाथमें नहीं है; यह अली बन्धुओंके भी बसकी बात नहीं है। स्वराज्य तो लोगोंको खुद ही लेना है; यह काम उनको स्वयं ही करना है। यदि लोग जो भी काबुली या अंग्रेज उनके पास आये उन सभीसे डर जायें तो उनके लिए स्वराज्य प्राप्त करना कैसे सम्भव है? मेरी समझमें यह बात नहीं आती कि भारतीयोंको काबुलियों या यूरोपीयोंसे क्यों डरना चाहिए। वे हम भारतीयोंके भाई ही हैं। हम अपनी रक्षा करनेमें पूरी तौरपर समर्थ हैं; और यदि आवश्यक हो तो हम उनसे असहयोग भी कर सकते हैं। फिर हिन्दू लोग मुसलमानोंसे क्यों डरें और मुसलमान हिन्दुओंसे क्यों भयभीत रहें? यदि हम लोग ईश्वरसे डरते हैं और यदि हममें एकता है तो हम एक-दूसरेसे क्यों डरें? जबतक हममें आवश्यक उत्साह, सामर्थ्य और बल नहीं आता तबतक हम स्वराज्य नहीं ले सकते और न उसकी रक्षा ही कर सकते हैं। स्वराज्य और संसद या विधान सभाएँ एक बात नहीं हैं; हमें उनको अपने मनमें एक न मान लेना चाहिए। यदि हम अपने अधिकारोंकी रक्षा स्वयं नहीं कर सकते तो हमको वे अधिकार मिल ही नहीं सकते।

दुःखकी बात है कि बहुतसे हिन्दुओंने अपना धर्म छोड़ दिया है। मेरा पालन-पोषण एक वैष्णव परिवारमें हुआ था और अहिंसा मेरे रक्तमें समाई हुई है। दया और अहिंसा मेरे मनमें बसी हैं और मैं उन्हें कभी त्याग नहीं सकूँगा। इस सम्बन्धमें मुझे वैष्णवोंने कई धमकीभरे पत्र लिखे हैं। इसका कारण यह है कि मेरा सम्बन्ध दलित-वर्गोंसे है। चूँकि मैंने अन्त्यजोंका साथ देना शुरू किया है इसलिए वैष्णवोंने मुझे इस आशयका पत्र लिखा है कि महीने दो महीनेमें तुम्हारे साथ बहुत भयंकर घटनाएँ घटेंगी। इन लोगोंसे मैं साफ-साफ कहना चाहता हूँ कि यदि वैष्णव लोग अस्पृश्योंसे कोई सम्बन्ध रखना नहीं चाहते तो वे सच्चे वैष्णव नहीं हैं, बल्कि केवल अधर्मी और पापी लोग हैं। सच्चे वैष्णवका आदर्श यह नहीं है। जो लोग अस्पृश्योंको ऊँचा उठाना नहीं चाहते वे अधर्मी ही कहे जा सकते हैं। वैष्णव धर्ममें यह नहीं कहा गया कि हम किसीके प्राण ले लें या किसीको चोट पहुँचाएँ; वह तो दूसरोंके प्रति प्रेम और सहानुभूतिसे भरा पड़ा है। यही बात श्रावकोंके सम्बन्धमें भी कही जा सकती है। ये लोग बेजुबान जानवरोंको खिलाने-पिलानेके लिए बिलकुल तैयार रहते हैं किन्तु अपने साथी मानवोंको, जो दुर्भाग्यसे भूखे मर रहे हैं, भोजन देना नहीं चाहते। इन श्रावकोंमें पशुओंके प्रति तो गहरा दयाभाव है किन्तु मनुष्योंके प्रति नहीं। क्या आप इसे धर्म कहते हैं? यदि वैष्णव धर्म अपने साथी मनुष्योंसे घृणा करना सिखाता है तो मैं उसे धर्म नहीं कह सकता, अलबत्ता धर्मकी भयंकर विकृति कह सकता हूँ। मैं वैष्णवोंसे हार्दिक अनुरोध करता हूँ कि उनके मनमें अस्पृश्योंके प्रति इस प्रकारका जो घृणाभाव है उसे वे निकाल फेंकें। मैं आपसे यह नहीं कहूँगा कि आप ढेढ़ों या भंगियोंके हाथका खाना खाने लगें। आपको यह समझ लेना चाहिए कि

वर्णाश्रम धर्मका सार यह है कि हम गरीबों, अन्त्यजों और दलितोंके प्रति सहानुभूति रखें। हमारा सच्चा धर्म क्या है यह 'श्रीमद्भगवद्गीता' में बताया गया है। उसमें छुआछूतकी भावनाका समर्थन नहीं है। गरीबोंके प्रति प्रेम और दयाका भाव रखना कर्त्तव्य बताया गया है और जबतक हममें ये गुण प्रचुर रूपसे नहीं आते तबतक हम अपने-आपको सच्चा वैष्णव नहीं कह सकते। क्योंकि जिस धर्ममें पीड़ितों और दलितोंके प्रति प्रेम न हो वह धर्म कैसा? वह तो केवल अधर्म और धर्मका विकृत रूप है।

चरखेकी बात उठाते हुए गांधीजीने कहा : चरखेसे समस्त भारतमें नये जीवनका संचार हुआ है और वह खिलाफतके अन्यायको दूर करवानेका उपाय भी है। मैं आपसे यह नहीं कहता कि आप अस्पृश्योंके हाथका भोजन करें। आप घाटकोपरके लोग इस बातको एक ओर छोड़ दें और स्वराज्यके अन्य मार्गोंका अवलम्बन करें। चरखेमें इतनी शक्ति है कि उससे खिलाफत और पंजाबके अन्यायोंका निराकरण हो जायेगा और साथ ही उससे हमें स्वराज्य भी मिल जायेगा। उन लोगोंसे मेरा अनुरोध है कि वे अपना ध्यान कांग्रेसके कार्यक्रमपर केन्द्रित करें। वह कार्यक्रम क्या है, यह आप सभी जानते हैं। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह हमें इतनी शक्ति दे जिससे हम देशके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन कर सकें और ठीक राहपर चलकर स्वराज्यके लक्ष्यतक पहुँच सकें। (भारी हर्षध्वनि)

इसके बाद गांधीजीने श्रोताओंसे, जिनमें स्त्री और पुरुष सभी थे, तिलक स्वराज्य-कोषके लिए यथाशक्ति धन देनेका अनुरोध किया। उन्होंने कहा : आप जो-कुछ दें स्वयंसेवकोंको दें। साथ ही साथ मैं चाहता हूँ कि आप दान श्रद्धापूर्वक करें। म यह नहीं चाहता कि आप अपने देशके लिए अनिच्छासे धन दें। जिन श्रावकों और वैष्णवों-ने इस कोषमें धन दिया है, वे उसे वापस लेनेके लिए सर्वथा स्वतन्त्र हैं, क्योंकि मुझे ऐसा अनिच्छापूर्वक दिया हुआ धन नहीं चाहिए; मुझे तो वही रुपया चाहिए जो श्रद्धापूर्वक दिया गया हो। जो लोग अपना रुपया वापस लेना चाहें वे खुशीसे ले सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-६-१९२१

१०९. पत्र : मणिबेन पटेलको

बम्बई

गुरुवार [१६ जून, १९२१][1]

चि० मणि,[2]

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने काका विट्ठलभाईको[3] उससे पहले ही बता दिया था कि हमें मिलना है। वे पूना जा रहे हैं। हम जरूर ही मिलेंगे। मिलनेके बाद जो होगा वह लिखूँगा। बम्बईमें क्या अनाचार तुमने देखा है, वह मुझे बताना। तुम निश्चिन्त रहना। मैं काकासे पूरी बातें करनेवाला हूँ।

तुम दोनों भाई[4]-बहन देशकार्यमें पूरी तरह लग जाना। और तुम्हारे पूरी तरह लग जानेका अर्थ यह है कि कातने और पींजनेका काम यहाँ तक जान लो कि उसमें तुम्हें कोई मात न दे सके। और सब काम अस्थायी हैं। यह काम स्थायी है, ऐसा मानना। हमारी सारी शक्ति इसीमें से आयेगी।

भाई महादेव[5] कल बम्बई आ गये हैं। कहना चाहिए कि उन्होंने खूब चन्दा इकट्ठा किया।

यहाँ बरसात अच्छी हो रही है। कल लगभग ५५,००० रुपये घाटकोपरमें मिले हैं।

मैं पत्र लिखूँ या न लिखूँ, परन्तु तुम तो लिखती ही रहना।

बापूके आशीर्वाद

मणिबेन
द्वारा/श्री वल्लभभाई पटेल
भद्र, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो : मणिबहेन पटेलने

१. घाटकोपरमें १५ जूनको भेंट की गई राशिके उल्लेखसे लगता है कि यह पत्र इसी तारीखको लिखा गया होगा।

२. सरदार वल्लभभाईकी पुत्री।

३. माननीय विट्ठलभाई पटेल (१८७३–१९३३); वल्लभभाईके बड़े भाई। १९०३ में वकालत पास की; बम्बई विधान परिषद् तथा शाही परिषद्के सदस्य; भारतीय विधान सभाके प्रथम निर्वाचित अध्यक्ष, १९२५-३०।

४. डाह्याभाई पटेल।

५. महादेव देसाई।

११०. तार: चित्तरंजन दासको

[साबरमती
१७ जून, १९२१ या उसके पश्चात्][1]

मोतीलालजीको तार भेज रहा हूँ।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५७३) की फोटो-नकलसे।

१११. भाषण: बम्बईमें असहयोगपर[2]

१८ जून, १९२१

महात्मा गांधीने कहा: पारसी जाति और हिन्दू जातिमें सदासे ही बड़ी मित्रता रहती आई है। पारसियोंने जिस देशको अपना देश बना लिया है उसके प्रति उन्होंने प्रेम और मित्रताका भाव भी व्यक्त किया है। बचपनसे ही पारसियोंसे मेरा निजी सम्बन्ध रहा है और जीवन-भर मैं उनके निकट सम्पर्कमें आया हूँ; मैंने उनके गुणोंकी सराहना की है। मैं स्पष्ट रूपसे कह देना चाहता हूँ कि मैं यहाँ पारसी जातिकी झूठी प्रशंसा करनेके उद्देश्यसे नहीं आया हूँ; मैं अपनी अन्तरात्मामें जिस बातको सच्ची मानता हूँ वही कह रहा हूँ। आवश्यकता होगी तो मैं आपके दोषोंकी आलोचना करनेमें भी नहीं हिचकूँगा। मेरे मनमें पारसियोंके प्रति अत्यधिक प्रेम और सम्मान है और मैंने जितने सार्वजनिक काम हाथमें लिये उन सबमें मैं उनके सम्पर्कमें आया हूँ। समस्त संसारमें इतनी छोटी अन्य कोई जाति नहीं है जिसने अपनी दानशीलता और धार्मिकतासे इतना काम कर दिखाया हो। हिन्दू धर्म और पारसी धर्ममें अधिक अन्तर नहीं है, क्योंकि दोनोंमें सत्यको प्रथम और सर्वोच्च स्थान दिया गया है। मैं पूरी तरह

१. यह चित्तरंजन दासके १७ जून, १९२१ के निम्नलिखित तारके उत्तरमें भेजा गया था: "पूर्वी बंगालमें कुलियोंसे सम्बन्धित हलचलोंके कारण अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके लिए बंगालके प्रतिनिधियोंका चुनाव १५ जुलाईसे पहले सम्भव नहीं, तदनुसार कार्य-समितिके एक सदस्यकी हैसियतसे प्रबन्ध कर रहा हूँ। यदि कांग्रेस संविधानके उन्नीसवें अनुच्छेदके बारेमें और मंजूरी जरूरी हो तो कृपया पत्रके जरिये या अन्य प्रकारसे प्राप्त कीजिए। स्वराज्य-कोषमें करीब तीन लाख। ठीक-ठीक आंकड़ोंके लिए कलकत्ता तार दे रहा हूँ। माधुरीपुर तार भेजिए। कृपया मोतीलाल नेहरूको सूचित कीजिए।" — पूर्वी बंगालमें रेलवे और जहाजोंके मजदूरोंकी हड़तालें हुई थीं और सी० एफ० एन्ड्रयूजके अनुरोधपर गांधीजीने भी वहाँका दौरा किया था।

२. गांधीजीने शनिवारको दोपहर बाद केन्द्रीय पारसी संघकी परिषद्‌की बैठकमें भाषण दिया था। बैठककी अध्यक्षता होरमसजी अदनवालाने की थी।

स्वीकार करता हूँ कि जो आन्दोलन इस समय चल रहा है उसमें भाग लेनेके लिए आपकी अन्तरात्मा जबतक गवाही न दे तबतक आपका उससे अलग रहना ही उचित होगा। और यदि चंद पारसी ही दृढ़ संकल्प होकर तथा इस उद्देश्यके औचित्यमें विश्वास रखते हुए आन्दोलनमें भाग लें तो मुझे पूरा सन्तोष हो। इसलिए मैं पारसियोंसे अनुरोध करता हूँ कि वे समस्त स्थितिपर उचित रूपसे विचार करें और दृढ़ निश्चय करके आन्दोलनमें भाग लें। श्रद्धाकी जितनी कमी हिन्दुओं और मुसलमानोंमें है उतनी ही पारसियोंमें भी है, और उनसे मेरी प्रार्थना है कि वे स्थितिके अनुकूल और प्रतिकूल दोनों प्रकारके पहलुओंको समझनेके अनन्तर ही संघर्षमें भाग लें। जब काठियावाड़में पोलिटिकल एजेंटसे मेरा झगड़ा[1] हो गया था और जब मैंने उसके विरुद्ध कार्रवाई करनी चाही तो वे एक पारसी सज्जन, सर फीरोजशाह मेहता ही थे जिन्होंने मुझसे कहा था कि ऐसे मामलेमें न्यायकी आशा करना व्यर्थ है। मैंने एक पारसीसे यह पहला पाठ पढ़ा था और तबसे मैंने अपने जीवनमें इतने अधिक अपमान सहे हैं कि मेरे खयालसे इस सभामें तफसीलके साथ उनका जिक्र करना लाभदायक न होगा।

असहयोग आन्दोलन एक आध्यात्मिक आन्दोलन है; यह हमारे जीवनकी आध्यात्मिक अवस्था है। सभी धर्मोंमें यह बताया गया है कि हमें बुराईसे दूर भागना चाहिए। उससे बिलकुल अलग रहना चाहिए। मैं डायरको निभानेके लिए तैयार हूँ परन्तु डायरशाहीको नहीं। मैं पूरी तरह मानता हूँ कि अनेक भारतीयों और पारसियोंको अंग्रेजी राज्यसे लाभ हुआ है और वे करोड़पति हो गये हैं एवं सब तरहसे सुखमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं; किन्तु इस राज्यसे सामान्य भारतीय समाजको कोई लाभ नहीं पहुँचा है। अंग्रेजोंसे हमारा सम्बन्ध जनसाधारणके लिए बिलकुल ही लाभदायक नहीं हुआ है और इसका सबसे अच्छा प्रमाण हमें दादाभाई नौरोजीकी लिखी पुस्तकों[2] और गोखलेकी साक्षीसे मिलता है। मणिपुरके मामलेमें जब बातचीत की जा रही थी तो सर जॉन गर्स्टने ही कहा था कि समाजके प्रमुखोंको समाप्त कर देना ब्रिटिश सरकारकी नीति है। मेरी आँखें इससे पहले नहीं खुलीं, यह मेरा दुर्भाग्य है। मेरा कहना यह है कि अंग्रेजी राज्यसे जहाँ कुछ लोगोंको शायद लाभ पहुँचा हो, वहाँ बहुत बड़े जनसमुदायको और अधिकांश जनताको आर्थिक या नैतिक अथवा शारीरिक दृष्टिसे जरा भी लाभ नहीं पहुँचा है। आज भारतकी अवस्था जितनी खराब है उससे ज्यादा खराब पहले कभी नहीं रही। मुझे हिन्दुओं, पारसियों और मेमनोंने खानगी तौरपर कहा है कि वे मेरे आन्दोलनमें गुप्त रूपसे सहायता देनेके लिए बिलकुल तैयार हैं, किन्तु वे खुली सहायता नहीं दे सकते, क्योंकि उनके निहित स्वार्थ हैं और वे व्यापार तथा ऐसे ही अन्य कामोंमें लगे हुए हैं।

१. गांधीजीने अपने भाई लक्ष्मीदाससे सम्बन्धित एक मामलेमें एजेंटसे हस्तक्षेप करनेकी प्रार्थना की थी और इसपर उस एजेंटने उन्हें अपने कमरेसे निकलवा दिया था। देखिए **आत्मकथा,** भाग २, अध्याय ४।

२. इनमें मुख्य है **पावर्टी ऐंड अन-ब्रिटिश रूल इन इंडिया।**

मुझे यह स्वीकार करनेमें तनिक भी संकोच नहीं हो रहा है कि मुगलोंके राज्यमें दमन और अत्याचार होता था; किन्तु भारतीयोंका जितना पतन आज हुआ है उतना उस जमानेमें नहीं हो पाया था। जहाँतक मेरा सवाल है वहाँतक मैं इस बातसे सहमत नहीं कि हमारी कौंसिलोंमें सदस्योंकी संख्या बढ़ाने और ऐसे ही दूसरे कदम उठानेके बादसे हमारी राजनैतिक स्थिति बहुत अधिक सुधरी है। मैं नहीं मानता कि सुधारोंसे भारतको कोई भी अधिकार मिला है और यदि मुझे कोई यह विश्वास करा दे कि ऐसा नहीं है तो मैंने नरमदलीय लोगोंको जो पत्र लिखा है उसे वापस लेनेके लिए मैं बिलकुल तैयार हूँ। यदि इन सुधारोंमें वास्तविकता और क्षमता है तो ब्रिटिश सरकारको लोगोंके विरुद्ध कोई गैरकानूनी कार्रवाई न कर सकनी चाहिए, किन्तु स्थिति ऐसी नहीं है। कुछ दिन पहले मुझे एक सज्जनका एक पत्र मिला था। उसमें उन्होंने कहा था कि उनपर पुलिसकी इमारतोंमें आग लगानेका आरोप लगाया गया है और वे इन मामलोंमें बिलकुल ही निर्दोष हैं। देशमें आज इस सम्बन्धमें इसी तरहकी बहुत-सी दूसरी बातें भी हो रही हैं। लाला हरकिशनलाल पंजाबके एक नरमदलीय नेता हैं। उस प्रान्तमें उन जैसा नरमदलीय नेता दूसरा नहीं है और वे समस्त राजनैतिक आन्दोलनोंसे अलग रहे हैं। किन्तु मार्शल लॉके दिनोंमें वे गिरफ्तार कर लिये गये और उनको सजा दे दी गई।[1] लाला दुनीचन्द और कुछ अन्य लोगोंके साथ भी ऐसा ही किया गया था। इस समय भी बिहार प्रान्तमें, जहाँ लॉर्ड सिन्हा गवर्नर हैं, इतना दमन चल रहा है जितना भारतके अन्य किसी भागमें नहीं चल रहा। लॉर्ड सिन्हा ऐसे आदमी नहीं हैं जो ऐसी बातोंको सहन कर लें, किन्तु वे अपने अधीनस्थ सिविल सर्विसके अधिकारियोंको अपने नियन्त्रणमें रखनेमें असमर्थ हैं, क्योंकि वे भारतीय हैं और अधिकारी अंग्रेज हैं। यदि लॉर्ड सिन्हाकी जगहपर सर एडवर्ड गेट[2] गवर्नर होते तो वे इन अधिकारियोंको झिड़कते; किन्तु लॉर्ड सिन्हा उन्हें नहीं झिड़क सकते। मुझे निश्चय है कि यदि लॉर्ड सिन्हा अपने इन अधीनस्थ अधिकारियोंको अंकुशमें रखनेका प्रयत्न भी करें तो वे ऐसा कदापि नहीं कर पायेंगे। बिहार प्रान्तमें मजहरुल हक[3] और उनके जैसे दूसरे बड़े-बड़े नेता हैं। श्री एन्ड्रयूज ऐसे आदमी नहीं हैं जो गोरखोंके अत्याचारके सम्बन्धमें झूठी बातें लिखें। हम अच्छी तरह जानते हैं कि चाँदपुरमें मजूरोंके साथ क्या किया गया है।[4] किन्तु सरकारने लोगोंको बताया है कि वहाँपर सैनिकोंने उतना ही बलप्रयोग किया है जितना आवश्यक था, उससे ज्यादा या कम नहीं। ऐसी ही

१. देखिए खण्ड १५।

२. १९१७ में हुए चम्पारन सत्याग्रहके समय बिहार और उड़ीसाके लेफ्टिनेंट गवर्नर।

३. (१८६६–१९३०); वकील और राजनीतिज्ञ; मुस्लिम लीगके जन्मदाताओंमें से एक। बादमें उसके सभापति; चम्पारनमें गांधीजीके मददगार।

४. यहाँ असमके मजदूरोंसे सम्बन्धित घटनाका उल्लेख किया गया है। जिसकी जाँच एन्ड्रयूजने की थी।

बातें जनरल डायरने कही थीं। मैं आपसे वही बात कह रहा हूँ जिसे मेरा अन्तः-करण सत्य बताता है, अन्य कुछ नहीं। जब अली बन्धुओंने भूल की थी तब मैंने उनका ध्यान उसकी ओर खींचा था और उन्होंने तत्काल अपना रवैया सुधार लिया था।

असहयोग आन्दोलनकी सफलताकी चर्चा करते हुए श्री गांधीने कहा: लोग इस आन्दोलनकी जितनी सफलताकी आशा कर रहे थे वह उससे अधिक सफल हुआ है। उससे लोगोंके दिमागोंमें से अधिकारियोंका और कष्टोंका सब भय निकल गया है तथा देशके लिए त्याग और काम करनेसे वे अब बिलकुल नहीं डरते। लोग अपने देशके लिए कुछ भी करनेको तैयार हैं। यद्यपि पारसी जाति संख्याकी दृष्टिसे बहुत छोटी है, फिर भी उसमें दादाभाई और मेहता-जैसे लोग पैदा हुए हैं और उन्होंने इस देशकी महान् सेवा की है। पारसी अपनी श्रद्धा, दानशीलता और त्यागवृत्तिसे भारतकी बहुमूल्य सेवा कर सकते हैं। श्री मेहता बम्बईके शेर कहे जाते हैं और मुझे आशा है कि पारसी लोग ऐसा काम करेंगे जिससे वे भारतके शेर कहे जायें। पारसी दानी विचारशील हैं और धनी हैं; उनमें बड़े-बड़े व्यापारी हैं; उनमें देशके लिए अत्यधिक त्याग करनेकी क्षमता भी है। यदि वे आवश्यक त्याग करके भारतके लिए काम कर सकें तो वे सहज ही भारतके नेता बन सकते हैं। मैं तो पारसियोंसे बड़े-बड़े कामोंकी आशा करता हूँ।

श्री एच० पी० मोदीके प्रश्नोंके उत्तरमें महात्माजीने कहा: स्वराज्य लेनेके लिए अब हमारे पास केवल तीन महीने शेष रह गये हैं। मुझे स्वराज्य मिलनेका विश्वास है भी और नहीं भी है। मुझे विश्वास इसलिए नहीं है कि हमने बेजवाड़ामें जो कार्यक्रम स्वीकार किया था और देशके सम्मुख रखा था वह अभीतक पूरा नहीं किया गया है। लेकिन मेरा ईश्वरमें बहुत विश्वास है और मुझे निश्चय है कि भारतको स्वराज्य अवश्य मिलेगा। असहयोग आन्दोलन आरम्भ करनेका उद्देश्य देशके लोगोंकी मनो-वृत्तिको पूर्णतया बदल देना है। दुर्भाग्यका विषय है कि लोगोंने अभीतक बेजवाड़ामें रखा गया कार्यक्रम पूरा नहीं किया है और इसीलिए मुझे सितम्बरके[1] महीनेमें स्वराज्य मिलनेके सम्बन्धमें कभी-कभी सन्देह होने लगता है।

चरखेकी उपयोगिताके प्रश्नपर बोलते हुए गांधीजीने कहा: चरखेमें मेरा बहुत अधिक विश्वास है और मेरा खयाल है कि उसमें देशका हित करनेकी क्षमता बहुत है। खाद्य-समस्याके बाद जनसाधारणके सामने तन ढाँकनेकी समस्या आती है। हम अभी जनताको पूरा कपड़ा नहीं दे सकते; इसके लिए हमें जापान, इंग्लैंड और दूसरे देशोंकी सहायता लेनी होती है। मैं यह चाहता हूँ कि भारत दूसरे देशोंकी तनिक भी सहायता लिये बिना अपने लोगोंको पूरा कपड़ा दे सके। यदि हमारे कारखाने एक छटाँक भी सूत या एक गज भी कपड़ा बाहर न भेजें तो भी वे जनसाधारणकी जरूरतके लायक कपड़ा तैयार नहीं कर सकते। देशमें लगभग ३ करोड़ लोग ऐसे हैं जिन्हें ठीक तरहसे

१. गांधीजीने सितम्बर १९२० में कहा था कि स्वराज्य एक वर्षमें मिल जायेगा। देखिए खण्ड १८।

न तो खाना मिलता है और न वस्त्र। यह बात मैं इस देशके अपने निजी अनुभवके आधारपर कह रहा हूँ और मैंने स्वयं उड़ीसा तथा अन्य प्रान्तोंमें जो-कुछ देखा है केवल वही बता रहा हूँ। इन जगहोंमें लोग अधनंगे रहते हैं और आधा पेट खाकर जिन्दा हैं। मुझसे धनी लोग गरीबोंके लिए सदाव्रत खोलनेकी बात कहेंगे, किन्तु मैं उनसे कहता हूँ कि इस तरहकी चीजोंमें मेरा विश्वास नहीं है। मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक मनुष्य स्वतन्त्र हो और अपना गुजारा अपनी ही मेहनतसे करे। मैंने भंगीका काम किया है, इसलिए मुझे इन बातोंके सम्बन्धमें कुछ जानकारी है और मैं यह भी जानता हूँ कि मजदूरीमें थोड़ी-सी बढ़ोतरी होनेका क्या अर्थ होता है। अमृतलाल ठक्करने 'सर्वेंट्स ऑफ इंडिया' नामक पत्रमें एक बहुत ही मनोरंजक लेख लिखा है। इसमें उन्होंने बताया है कि काठियावाड़में गरीब लोगोंको चरखा कातनेसे कितनी मदद मिल रही है।

उन्होंने काठियावाड़में ढेढ़ोंमें चरखेका प्रचार किया है और उससे उन लोगोंका बहुत हित हो सकता है। भारतके विशिष्ट जलवायुमें हमें अपने व्यवहारके लिए खादी ही चाहिए जो एक सुन्दर चीज है और मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप सब लोग इसीका व्यवहार करें। जब देश-भरके भारतीय चरखा चलाना सीख लेंगे तब वे बिलकुल स्वतन्त्र, निर्भय और स्वावलम्बी हो जायेंगे। भारतीय इतने गरीब हैं कि गरीबीसे मजबूर होकर बहुतेरी औरतें पत्थर तोड़ती और ऐसे ही दूसरे काम करती हैं। मैं अपने अनुभवसे जानता हूँ कि इन गरीब स्त्रियोंको किस तरह अपने सतीत्व एवं शीलसे हाथ धोना पड़ता है। किन्तु यदि वे चरखा चलायेंगी तो वे अपने घरोंमें ही बनी रहकर अपनी आजीविका कमा सकेंगी। इसीलिए मैं कहता हूँ कि चरखेमें स्वतन्त्रता और पवित्रताका समावेश है।

सरकारी आँकड़ोंके अनुसार प्रत्येक भारतीयकी औसत आमदनी दो रुपये, चार आने प्रति मास है। इसमेंसे करोड़पतिकी आमदनी घटा देनेपर एक आदमीकी आमदनी दो रुपये प्रति मास रह जायेगी; इतनी आमदनीसे एक साधारण आदमी अपना गुजारा कैसे कर सकता है? इसलिए यदि परिवारकी आमदनीमें थोड़ी-बहुत वृद्धि हो तो उसका स्वागत किया जायेगा और उसके कष्टोंमें कुछ कमी होगी।

शिक्षाके प्रश्नपर बोलते हुए श्री गांधीने कहा : भारतमें अनिवार्य शिक्षाकी व्यवस्था करना लगभग असम्भव है, क्योंकि ऐसी शिक्षापर भारी खर्च आता है; किन्तु यदि लोग चरखा चलायेंगे तो उनके लिए अपने बच्चोंको शिक्षित करना सम्भव हो जायेगा। इस प्रकार चरखा उनके आर्थिक पुनरुत्थान, सम्पत्ति और स्वतन्त्रताका साधन बन जायेगा और सच तो यह है कि हमारा छुटकारा चरखा चलानेसे ही होगा। हमें एक करोड़ रुपये जमा करने हैं। मैं मानता हूँ कि अभीतक मैं उतनी राशि इकट्ठी नहीं कर पाया हूँ, किन्तु आशा है कि हो जायेगी। श्री गांधीने हाथ-बनी चीजोंका प्रश्न फिर उठाते हुए कहा कि इंग्लैंडमें भी जहाँ सब लोग यन्त्रोंका उपयोग करते हैं हाथ-

बनी चीजें सर्वोत्तम और यन्त्रोंकी बनी चीजोंकी अपेक्षा ज्यादा अच्छी समझी जाती हैं। नवसारीमें पारसी लोग भी ऐसा ही समझते हैं और भारतीयोंको भी हाथ-बनी चीजोंको मूल्यवान समझना चाहिए। इंग्लैंडमें भी लोग हाथकी बनी चीजोंको व्यवहारमें लाना पसन्द करते हैं क्योंकि वे उन्हें सर्वोत्तम समझते हैं, और मेरी समझमें नहीं आता कि हम भारतीय भी उन्हें सर्वोत्तम क्यों न मानें। पारसियोंने मुझे अधिक रुपये नहीं दिये हैं; अधिक रुपये मेमनोंने भी नहीं दिये हैं। मेरे मित्र पारसी रुस्तमजीने[1] मुझे बड़ी-बड़ी रकमें दी हैं और मेरे ऊपर उनका इतना अधिक विश्वास है कि यदि मैं इस प्रकारकी इच्छा प्रकट-भर कर दूँ तो वे मुझे अपना समस्त धन दे डालेंगे। सभाओंमें आनेवाले लोग विश्वास रखें कि जो रुपया इकट्ठा किया गया है उसका ईमानदारीके साथ अच्छेसे-अच्छा उपयोग किया जायेगा, क्योंकि हमें इस कामके लिए श्री मोतीलाल नेहरू, श्री जमनालाल बजाज, शंकरलाल बैंकर और उमर सोबानी तथा छोटानीसे अच्छे व्यक्ति नहीं मिल सकते।

> एक पारसी सज्जनने कहा: मैं जानना चाहता हूँ कि हम अपनी शक्ति केवल खद्दर बनानेतक ही क्यों सीमित रखें और रेशम और दूसरी उपयोगी वस्तुएँ क्यों न बनायें? मैं जापान गया था; वहाँ मैंने देखा कि देहातके लोग अपने-अपने घरोंमें छोटीसे-छोटी चीजें बनाते हैं और उससे अच्छी खासी आजीविका कमा लेते हैं। वे करघोंपर बढ़ियासे-बढ़िया रेशमी कपड़े बुन लेते हैं। मैं पूछता हूँ कि क्या हमारे देशके लोग शहरोंमें ही संघ और समितियाँ बनाकर उनकी सहायतासे ऐसे काम नहीं कर सकते और इस प्रकार देशके बढ़ते हुए उद्योगोंको प्रोत्साहन नहीं दे सकते। यदि इन उद्योगोंमें कुछ नुकसान हो तो ये संघ और समितियाँ उसको पूरा करें और अभी हालमें खड़े किये गये उद्योगोंको प्रोत्साहन दें।

गांधीजीने कहा, जापान एक छोटा-सा द्वीप है, और भारत एक महाद्वीप है। हमें भारतकी इस ३० करोड़ आबादीका खयाल रखना पड़ता है और इसलिए भारतके लोग ऐसी अत्यन्त सामान्य वस्तुएँ ही बना सकते हैं जिनका उपयोग देशके सभी लोग करते हैं। भारतीय चरखा चलानेके अभ्यस्त हैं और वे अपने घरोंमें आसानीसे खादी तैयार कर सकते हैं। मैं यह नहीं कहता कि हमें सदा खद्दरका ही व्यवहार करना चाहिए। मुझे आशा है कि हम मलमल, जिसके लिए ढाका प्रसिद्ध था, और बारीक रेशमी कपड़ा भी बना सकेंगे। दुर्भाग्यसे इस समय हमें बढ़िया किस्मका कपड़ा बनानेके लिए समस्त बारीक सूत बाहरसे मँगाना पड़ता है। हम कुछ ही समयमें बढ़िया सूत तैयार करने योग्य हो जायेंगे, परन्तु जबतक ऐसा नहीं होता तबतक हमें खद्दरसे ही सन्तोष करना होगा।

१. नेटालके प्रमुख भारतीय व्यापारी, जिन्होंने दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहमें खास हिस्सा लिया था।

श्री विमदलाल और श्री दुमसियाने गांधीजीसे पूछा, आप जो स्वराज्य चाहते हैं वह किस किस्मका होगा और उसमें हमारे वर्तमान शासकोंके लिए कोई स्थान रहेगा या नहीं?

गांधीजीने कहा, मैं चाहता हूँ कि सेना, पुलिस, कानून और राजस्वपर भारतीयोंका पूरा नियन्त्रण रहे और वे अपना धन स्वयं खर्च कर सकें। इस समय हम अपना प्रधान सेनापति नियुक्त नहीं कर सकते । यदि सैनिक भारतसे बाहर भेजे जानेको तैयार हैं तो हम उनमेंसे एकको भी बाहर जानेसे नहीं रोक सकते। मैंने जो-कुछ कहा है वह मैं वोटों अथवा उसी प्रकारकी अन्य बातोंके बारेमें नहीं कहूँगा। यदि इस समय ये बातें हमारे नियन्त्रणमें आ जायेंगी तो हम धीरे-धीरे आगे बढ़ते जायेंगे। यदि हम अपनी जरूरतका पूरा कपड़ा बना सकें तो भारत स्वावलम्बी देश हो जायेगा; किन्तु हम अभी दूसरे देशोंके मोहताज हैं। जबतक हमें सरकारको उससे प्राप्त प्रत्येक अदना चीज तकके लिए धन्यवाद देना पड़ता है तबतक हम बहुत सफलता प्राप्त नहीं कर सकते। हमें ऐसी स्थितिमें आ जाना चाहिए कि हम दूसरे लोगोंकी सहायताके बिना काम चला सकें। मेरा खयाल है कि असहयोगके कारण लोगोंकी मनोवृत्ति बहुत-कुछ बदलती है, उदाहरणार्थ मलाबारके मोपला लोग, जो बड़े जोशीले हैं, असहयोगके प्रभावसे अनुशासन-प्रिय हो गये हैं।

गांधीजीने एक अन्य प्रश्नके उत्तरमें कहा कि मैं औपनिवेशिक स्वराज्यसे सन्तुष्ट हो जाऊँगा। वाइसरायकी राय है कि वह हमें धीरे-धीरे दिया जाये; किन्तु मेरी राय है कि तत्काल दिया जाये। जो लोग यह कहते हैं कि अभी हम शासन-भार सँभालनेके योग्य नहीं हैं, उनसे मैं कहूँगा कि ऐसा इस कारण है कि हमें हमारे उचित अधिकारसे वंचित रखा गया है। मैं नहीं मानता कि भारतमें अपना शासन स्वयं करनेकी क्षमता नहीं है। हमारी शासन व्यवस्थामें मन्त्रिगण भारतीय हों या अंग्रेज, इसकी चिन्ता नहीं। मैं तो यही चाहता हूँ कि हम जब चाहें तब उनको नियुक्त कर सकें और जब चाहें तब हटा सकें। मैं यह नहीं चाहता कि किसी व्यक्तिको उसके रंगके कारण ही हटा दिया जाये; बल्कि तभी हटाया जाये जब उसे अयोग्य पाया जाये। मन्त्रियोंको कमिश्नरों और कलक्टरोंसे ऊँचा माना जाना चाहिए। भारतीय लोग सैनिक विभागके प्रशासनके अयोग्य हैं, ऐसा मैं नहीं मान सकता।

एक सज्जनने कहा, आप हिन्दुओं और मुसलमानोंकी एकताकी बात तो करते हैं, परन्तु इसमें पारसी लोग कहाँ आते हैं, यह मैं नहीं जानता। हिन्दू और मुसलमान अपने-अपने लोगोंको नियुक्त करेंगे और पारसियोंको कोई नहीं पूछेगा।

श्री एन० एम० दुमसियाने कहा, श्रीकृष्ण गुप्त ने हमें बताया है कि जबतक हम अपना बचाव स्वयं करने योग्य नहीं हैं तबतक स्वराज्य लेनेसे

कोई लाभ नहीं है। हमें पहले विदेशी सरकारसे अपना बचाव स्वयं करनेके योग्य बनना चाहिए।

श्री एच० पी० मोदीने कहा कि हम लोग बहुत सालोंसे बाबूगीरी करते आये हैं और हमें फौजी काम करने और वैदेशिक सम्बन्धोंका संचालन करनेका अभ्यास नहीं है। हम इन कामोंको अंग्रेजोंके नियन्त्रणमें चलाते रहे हैं; इसलिए हम भारतीय इनको स्वतन्त्र रूपसे संचालित करनेमें अनभ्यस्त हैं।

गांधीजीने कहा, मेरा खयाल यह है कि अंग्रेज फिलहाल भारत छोड़ जानेके लिए तैयार नहीं हैं; वे यहाँ रहेंगे, किन्तु मैं चाहता हूँ कि वे ऐसा अपनी शर्तोंपर नहीं, भारतीयोंकी शर्तोंपर करें। इसी समय भारतको छोड़कर चले जानेमें अंग्रेजोंको शर्म लगेगी। दूसरी बात यह है कि मैं नहीं मानता कि यदि हमें कल ही स्वराज्य मिल जाये तो हमें दूसरी सभी विदेशी सरकारोंसे एक बार लड़ना होगा। किन्तु यदि हमें किसी दूसरे देशकी सरकारसे लड़ना भी पड़े तो हम उससे लड़ेंगे और जबतक हमारी जीत नहीं होगी तबतक लड़ते ही रहेंगे। मैं आपकी समझमें यह पैठा देना चाहता हूँ कि भारतीय अपने उद्देश्योंकी पूर्ति केवल अपनी शक्तिसे ही कर सकते हैं, दूसरोंकी चतुराई भरी चालोंसे या वक्रनीतिसे नहीं कर सकते। हम अपने अधिकारोंको तभी कायम रख सकते हैं जब हममें उनकी रक्षा करनेकी योग्यता होगी; न कि संसद या विधान परिषदोंकी मददसे।

श्री दुनसियाने कहा कि सामान्यतया बड़ा राष्ट्र छोटे राष्ट्रको धर दबाया करता है। संसारमें युद्ध या संग्रामके बिना कोई भी बड़े महत्त्वका काम सम्पन्न नहीं हुआ है। राष्ट्रमें सही भावना उत्पन्न करनेमें वर्षों लग जाया करते हैं और राष्ट्रोंके जीवनमें वर्ष क्षणोंके समान हुआ करते हैं। इसलिए हमसे कहा गया कि ऐसे मत चलो कि रपट जाओ। डायरशाही और ओ'डायरशाही दोनोंसे पारसियोंको उतनी ही घृणा है जितनी कि अन्य किसीको। पारसी समाज सदासे ही शासकोंके प्रति राजभक्त रहा है, फिर वे चाहे हिन्दू हों, चाहे अंग्रेज। हम अंग्रेजोंसे यह कहनेके लिए तैयार नहीं हैं कि वे इस देशसे अपना बँधना-बोरिया लेकर चले जायें। हम बादशाह जॉर्जके साम्राज्यसे निकलना भी नहीं चाहते। हम ऐसे सभी आन्दोलनोंका पूरा समर्थन करेंगे जिनमें ये दोनों बातें मौजूद होंगी। यदि गांधीजी वैधानिक तरीकोंसे आगे बढ़ना चाहें, और दूसरे तरीके काममें न लायें तो हम पूरी तरह उनके साथ हैं। हम अपने बादशाह और अपने देशकी खातिर त्याग करने और हर तरहकी सेवा करनेको तैयार हैं।

अन्य प्रश्नोंका उत्तर देते हुए महात्मा गांधीने कहा, मेरा आन्दोलन बोल्शेविक-वादके विरुद्ध एक बड़ा मोर्चा है। भारतीय यह नहीं चाहते कि इस देशमें अराजकता और आतंक फैल जाये। लोगोंके मस्तिष्क असहयोगके फलस्वरूप बहुत अधिक शुद्ध हो गये हैं। उदाहरणार्थ सिन्ध, हैदराबाद और खेड़ामें लोग नैतिक दृष्टिसे

बहुत-कुछ ऊँचे उठ गये हैं। इस आन्दोलनसे उनके दिलोंसे घृणा जाती रही है; यदि इससे दूसरे समाजोंके प्रति घृणा बढ़ रही होती तो मैं असहयोग आन्दोलनसे अलग हो गया होता।

श्री एन० एम० मुखियाने कहा, मैंने स्वयं देखा है कि नगरोंमें पारसियोंको हिन्दुओं और मुसलमानों दोनोंने ही दबाया है। मैंने १८८६ में मालेगाँवमें भी यही बात देखी थी। यदि पारसी यह देखेंगे कि यह आन्दोलन उनके लिए हितकर है तो वे उसमें भाग लेंगे, अन्यथा वे उससे अलग ही रहेंगे।

श्री गांधीने कहा, अंग्रेज भारतमें आजसे कोई १५० साल पहले आये थे। उससे पहले पारसी लोग मुसलमानों और हिन्दुओंके ही साथ रहते थे; अतः वे स्वयं ही यह तय कर सकते हैं कि तब उनकी अवस्था अबसे अच्छी थी या बुरी। हम हिन्दुओं और मुसलमानोंकी एकताकी बात इसलिए करते हैं कि उनमें एकता पहले थी ही नहीं और इस एकतामें दूसरी छोटी-छोटी सब जातियोंकी जैसे यहूदियों, ईसाइयों, पारसियों आदिकी एकता आ जाती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि हमारी मित्रता दूसरी जातियोंसे नहीं रहेगी और केवल हिन्दू-मुसलमान ही परस्पर मित्र रहेंगे। कांग्रेसमें इतने दिनोंसे पारसियोंका बोलबाला है और वे उसमें बहुतसे प्रमुख पदोंपर आसीन रहे हैं। कांग्रेस सभीके हितोंकी बराबर देखभाल करती है और मैं नहीं समझता कि भविष्यमें पारसी हिन्दू और मुसलमान दोनों बड़ी जातियोंके बीचमें पड़कर पिस जायेंगे। यदि पारसी लोग यह समझते हों कि असहयोग आन्दोलनमें भाग लेनेसे उनको लाभ न होगा तो वे उससे अलग रह सकते हैं; यह उनकी मर्जीकी बात है। मेरा कहना तो यही है कि वे आन्दोलनमें केवल तभी भाग लें जब वे इस परिणामपर पहुँचें कि उससे उनका हित ही सधेगा; अन्यथा वे इसमें भाग न लें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १९–६–१९२१

११२. पत्र : सी० विजयराघवाचार्यको[1]

[१८ जून, १९२१ को या उसके पश्चात्]

प्रिय श्री आचार्य

आपका तार[2] मिला। कमेटीने पंजाब कांग्रेसको लिख दिया है कि जबतक अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी इस मामलेमें फैसला नहीं दे देती तबतक वे आदेशोंका पालन करते रहें। अ० भा० कां० कमेटीकी बैठक २२ जुलाईको सवेरे लखनऊमें होगी।

१ व २. (१८५२–१९४३); तमिलनाडके कांग्रेसी नेता। सन् १९२० की नागपुर कांग्रेसके अध्यक्ष। विजयराघवाचार्यने १८ जूनको कोडाइकनालसे यह तार भेजा था: "आशा है कार्य-समिति प्रस्तुत तीव्र संकटके सम्बन्धमें पंजाबको अपना सुविचारित निर्देश भेज रही है। मालवीयजी चाहते हैं वाइसरायके सम्मुख तत्काल ही व्यवहार्य योजना रखी जाये।"

योजना बनानेके प्रश्नपर उसी बैठकमें विचार किया जा सकता है। मेरी रायमें अभी उसके लिए उपयुक्त समय नहीं आया है।

आपका विश्वस्त,

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ७५४८) की फोटो-नकलसे।

११३. भाषण : बम्बईमें स्वराज्यपर[1]

१९ जून, १९२१

श्री गांधीने कहा कि घंटे-भरसे अधिक हो गया आप लोग मंडपमें बैठे हुए हैं। इस पंडालको तैयार करनेमें स्थानीय गरीब-अमीर सभीने योग दिया है; इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। निश्चय ही इस तरह मिलकर काम करनेमें मुझे स्वराज्यकी पक्की बुनियाद दिखाई देती है। मेरे स्वागतमें आपने जो-कुछ किया है उस सबके लिए भी मैं आपका आभारी हूँ। मुझे यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई है कि कोषके लिए चन्दा करनेमें सभी वर्गों और जातियोंने — हिन्दुओं, मुसलमानों और पारसियोंने — हिस्सा लिया है। यही स्वराज्यकी कुंजी है। मैं अपने भाइयों और बहनोंसे अपील करता हूँ कि कोषके लिए आप लोग और भी जो-कुछ देना चाहें, मुझे दें। भारत एक धर्मराज्य और नीतिराज्यकी स्थापनाके लिए प्रयत्नशील है। भारतके लोगोंने ईमानदारीसे सही रास्तेपर चलनेका संकल्प कर लिया है। मुझे बहुत खेद है कि मैं सभामें बहुत देरसे आया। मेरी मोटर रास्तेमें बिगड़ गई थी; इसके अतिरिक्त मुझे मांडवी वार्डकी ओरके श्री वेलजी लखमसी नापूसे ६०,००० रुपये भी लेने थे। आशा है कि विले पार्लेके निवासी भी तिलक कोषके लिए इतनी ही रकम देंगे।

इसके बाद गांधीजीने पारसियोंकी सभाका जिक्र करते हुए वहाँ पूछे गये प्रश्नोंका उल्लेख करते हुए कहा कि मैं यहाँ कई मुद्दोंको अधिक विस्तारसे समझाऊँगा। मुझे बताया गया है कि २३ करोड़ हिन्दुओं और सात करोड़ मुसलमानोंमें एकता है; किन्तु उनके बीच रहनेवाले ८०,००० पारसियोंकी हालत खराब रहेगी। जो जातियाँ बहुसंख्यक हैं उनका कर्त्तव्य है कि अल्पसंख्यकोंके हितोंकी रक्षा करें, और उनका संरक्षण करें। स्वराज्यका पहला सिद्धान्त यही है। इसे आपको ध्यानमें रखना है। बहुसंख्यक लोगोंको अल्पसंख्यकोंके हितोंकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। एक बोहरा सज्जनने मुझे लिखा है कि मैं केवल मेमन लोगोंका नाम ले रहा हूँ, बोहरोंका नहीं। उन्होंने मुझसे पूछा है कि क्या मैं बोहरा लोगोंपर सन्देह करता हूँ। इसके बारेमें मैं इतना ही कहूँगा कि मेरा यह मतलब हरगिज न था। मैंने मेमन शब्दका प्रयोग समस्त मुस्लिम समाजके लिए किया था न कि किसी वर्ग विशेषके लिए। मैं इसी

१. उत्तरी बम्बईके एक उपनगर विले पार्लेमें, जहाँ गांधीजीको तिलक स्वराज्य-कोषके लिए एक थैली भेंट की गई थी।

सिलसिलेमें आप लोगोंसे कहना चाहता हूँ कि एक बोहरा सज्जन मुझे अपने घर ले गये थे और वहाँ उन्होंने मुझे कोषके लिए १,००० रुपये दिये। जो भी हो मैं एक-दूसरेके प्रति इस प्रकारके अविश्वास और शंकाओंको नापसन्द करता हूँ। जबतक अपने साथ रहनेवाले समाजोंके प्रति आप इस तरहकी भावना बनाये रखेंगे, आप स्वराज्य नहीं पा सकते।

कलकी सभामें मुझसे पूछा गया था कि क्या हमें मिलका बना कपड़ा नहीं पहनना चाहिए। इस प्रश्नका उत्तर मैंने यही दिया था कि मिलका बना कपड़ा मुख्यतः गरीब लोगोंके लिए है; अमीर और खुशहाल लोगोंको तो खद्दर ही पहनना चाहिए। यदि आप यह नहीं कर सकते तो आपको स्वराज्य मिलना सम्भव नहीं है। एक दूसरे पारसी सज्जनने मुझसे पूछा है कि यदि जापान और अन्य राष्ट्रोंने हमारे देशपर आक्रमण किया तो आप क्या करेंगे। मैंने जवाब दिया, चूँकि मनुष्य स्वार्थी जीव है इसलिए यदि जापानियोंने देखा कि वे अपना माल भारतीयोंमें नहीं खपा सकते हैं और भारतीय उन चीजोंको कदापि इस्तेमाल नहीं करेंगे तो भारत उनके लिए किसी कामका नहीं होगा। यदि भारतीय विदेशोंमें बनी चीजोंका प्रयोग करनेके प्रति उदासीन रहें तो जापानियोंके लिए भारत किस कामका?

इसके बाद उन्होंने मौलाना अबुल कलाम आजादका परिचय कराते हुए कहा कि ये मुसलमानोंमें एक महान् व्यक्ति हैं। मुसलमानोंपर उनका बहुत असर है। ये सज्जन दोनों जातियोंका बहुत ज्यादा हित-साधन कर सकते हैं और मैं आशा करता हूँ कि चन्दा जमा हो चुकनेके बाद आप इनके विचार ध्यानसे सुनेंगे।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २०–६–१९२१

११४. तार : जितेन्द्रलाल बनर्जीको[1]

[१९ जून, १९२१ को या उसके पश्चात्]

बेजवाड़ाका कार्यक्रम पूरा करनेमें व्यस्त। इतनी दूरसे राय देना असम्भव। पत्र लिख रहा हूँ।[2]

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५४७) की फोटो-नकलसे।

१. कलकत्ताके एक कांग्रेसी जितेन्द्रलाल बनर्जीके १९ जूनके तारके जवाबमें यह तार भेजा गया था। तार इस प्रकार था: "बंगालकी परिस्थितिमें आपकी मौजूदगी और रायकी तत्काल जरूरत है। श्री दास हड़तालोंको और अधिक समयतक बढ़ाकर जारी रखना चाहते हैं, परन्तु मेरी और यहांके कई एक सच्चे असहयोगियोंकी दृढ़ धारणा है कि हड़तालें करना असहयोगके सिद्धान्तसे हटना है और वे बेजवाड़ाके कार्यक्रमकी सफलतामें बाधा डाल रही हैं। यदि आ सकना असम्भव है तो परिस्थितिपर पूरी तरहसे विचार करके तारसे राय दीजिए।"

२. गांधीजीका पत्र उपलब्ध नहीं है।

११५. समाचारपत्र-प्रतिनिधिके प्रश्नका उत्तर

एक समाचार प्रतिनिधि द्वारा यह प्रश्न किये जानेपर कि क्या आप मिलीटरी रिक्वायरमेंट कमेटीके सामने, जिसके लिए आपको आमन्त्रित किया गया है, एक गवाहके रूपमें उपस्थित होंगे। श्री गांधीने जवाब दिया कि मैंने समितिको उसके सामने उपस्थित होनेके सम्बन्धमें अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए पहले ही पत्र लिख दिया है क्योंकि एक असहयोगी होनेके नाते मैं समितिकी कार्रवाइयोंमें भाग नहीं ले सकता।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २०–६–१९२१

११६. पत्र : कुँवरजी आनन्दजीको

बम्बई
२१ जून, १९२१

भाईश्री ५ कुँवरजी आनन्दजी,

तिलक स्वराज्य-कोषके लिए भावनगरने अभीतक कुछ नहीं किया है अर्थात् आपने अभीतक कुछ नहीं किया है। आपकी सुस्तीपर मुझे दुःख होता है। आप सब-कुछ जानते हैं, आपके पास धन है। यह कार्य कैसा है, उसमें देशकी उन्नति किस प्रकार निहित है, यह सब आपको मालूम है, फिर भी इसमें आप पूरा-पूरा धन नहीं देते। मैं तो आपकी बुद्धि, आपका हृदय, आपका समय और आपका पैसा, यह सब चाहता हूँ। ऐसा समय फिर आनेवाला नहीं है। मेरी आकांक्षा है कि आप हमारी मदद करें।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

११७. पत्र : मंगलदास पारेखको

बम्बई
२१ जून, १९२१

सुज्ञ भाईश्री,[1]

भाई वल्लभभाई लिखते हैं कि मिलोंसे जो चन्दा मिलनेवाला था वह अभीतक नहीं मिला है। देशका कारोबार इस तरह कैसे चल सकता है? यदि यह आन्दोलन अच्छा है तो उसका पोषण किया जाना चाहिए और यदि वह बुरा है तो फिर उसे नष्ट कर दिया जाना चाहिए। लेकिन आपके काम तो ऐसे ही चलते हैं। मिल-मालिकोंको क्या गुजरातकी लाज भी प्यारी नहीं है? गुजरातके हिस्सेका थोड़ा-सा चन्दा भी क्या वे आसानीसे पूरा नहीं कर सकते? मुझे उम्मीद है कि अब आप ढिलाई नहीं बरतेंगे। मैं आपसे यही माँगता हूँ कि आप क्या देंगे, सो साफ बता दें। आप एक साथ ही सारी रकम न दें तो कोई हर्ज नहीं लेकिन पूरी रकम मिलोंके खातेमें जमा हो जानी चाहिए। और वह भी इस तरहसे कि उसका ब्याज भी प्रान्तीय समितिको मिले। जब जरूरत पड़े तब हुंडी लिखकर देनेकी अनुमति भी मिलनी चाहिए। मैं कमसे-कम पाँच लाखकी आशा अवश्य करता हूँ। हर जगह मुझसे पूछा जाता है कि मिलें क्या कर रही है, वे मिलें जिन्होंने इस आन्दोलनसे इतना कमाया है।

मोहनदास गांधीका जय श्रीकृष्ण

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

११८. टिप्पणियाँ

तोला-भर काम

अली बन्धुओंकी क्षमा-याचनाके बारेमें 'सर्वेन्ट ऑफ इंडिया' की टिप्पणियोंने मेरे सामने इस कथनकी सत्यता बहुत ही स्पष्ट रूपसे सिद्ध कर दी है कि तोला-भर कामका मन-भर भाषणोंसे कहीं ज्यादा महत्त्व है। इस बातकी तो मैं कल्पना ही नहीं कर सकता कि 'सर्वेन्ट ऑफ इंडिया' जान-बूझकर इस क्षमा-याचनाका गलत अर्थ पेश करेगा अथवा उसे स्वयं ठीक ढंगसे नहीं समझ पायेगा। फिर भी इसके बारेमें उसने

१. अहमदाबादके उद्योगपति; जिन्होंने अहमदाबादमें आश्रमकी स्थापनाके समय गांधीजीकी आर्थिक सहायता की थी।

तीन पैरे लिख मारे हैं और उससे जाहिर होता है कि उसने इसे बिलकुल उलटा समझा है। मैंने तो उसे असहयोगका अमलमें क्या स्वरूप होता है इसका पदार्थ पाठ माना था और आज भी, जब उसे लेकर इतना विवाद खड़ा हो गया है, मेरा यही खयाल बना हुआ है। यह कदम एक ध्रुवतारा है जो असहयोगकी राहसे भटकनेवाले लोगोंको हमेशा रास्ता दिखाता रहेगा। विरोधियोंकी उपस्थितिमें और इस बातका खतरा उठाकर भी कि उनके आचरणको कमजोरीका लक्षण समझा जा सकता है, असहयोगियोंको निरन्तर अपनी शुद्धि करते चलना है। अपनेको सुधारनेकी प्रक्रियामें उनको इस बातका खयाल नहीं करना चाहिए कि उसकी उनको क्या कीमत चुकानी पड़ती है। सत्यके लिए सत्यके पालनका यही अर्थ होता है। तात्कालिक परिणाम चाहे कितना ही अन्धकारमय क्यों न दिखाई दे, सत्यकी खोजमें लगे हुए व्यक्तिको दृढ़ताके साथ वही करते रहना चाहिए जिसे वह सत्य समझता हो। मुहम्मद साहबने यदि सत्यको ही अपना एकमात्र और परम कवच न माना होता तो कई बार उनके कदम भी डगमगा गये होते। यदि यह बात मान ली जाये कि अली बन्धुओंको यह परामर्श मैंने अपने आत्मबलके कारण दिया था और उन्होंने अपने आत्मबलके कारण उसको समझकर स्वीकार कर लिया तो यह स्पष्ट हो जायेगा, जैसे मेरे सामने बिलकुल स्पष्ट है, कि इस सफाईने इस्लाम और देशका बड़ा कल्याण किया है। इसलिए यदि 'यंग इंडिया'का पिछला अंक[1] भी सब शंकाओंका समाधान न कर पाया हो तो फिर यह काम समयपर ही छोड़ देना पड़ेगा।

अभिव्यक्तिकी असमर्थता

नरम दलवालोंके नाम मेरे पत्रके[2] बारेमें भी कुछ इसी प्रकारकी गलतफहमी, भले ही वह इतना महत्त्व नहीं रखती, उठ खड़ी हुई है; मैं अपने विचारोंको अकसर ठीक-ठीक अभिव्यक्त करनेमें चूक जाता हूँ, इसकी मुझे ग्लानि है। ऐसी कोई बात नहीं है कि मैं जो-कुछ लिखता हूँ, सोच-समझकर और अपने तईं ठीकसे नहीं लिखता। मैं पूरी कोशिश करता हूँ कि बिलकुल सही और साफ ढंगसे लिखूँ। इसके बावजूद 'सर्वेन्ट ऑफ इंडिया' के 'एक समालोचक' के मनमें मेरे लिखनेसे यह धारणा बन गई है कि मैं धरना देनेमें नरम दलवालोंसे यह आशा करता हूँ कि वे असहयोग आन्दोलनकारियोंका साथ देंगे। मेरे मनमें ऐसी कोई बात नहीं है। यह हो सकता है कि सहयोग करनेवाले लोगोंको धरना देनेका तरीका भोंडा और बहुत नाकाफी लगे और इसलिए वह उन्हें पसन्द न आये। लेकिन मेरा खयाल है कि वे अपने ढंगसे नशाबन्दीके काममें सहायता अवश्य पहुँचायेंगे, अर्थात् शराबकी दुकानोंको फौरन खत्म करा देंगे। देशके प्रति कमसे-कम इतना कर्त्तव्य तो उनका है ही। धरना देनेके आन्दोलनकी सरगर्मी दिन-दिन जैसे-जैसे बढ़ती जा रही है वैसे-वैसे धरना देनेवालोंपर शराबकी दुकानोंके मालिकों और उनके ग्राहकोंकी मेहरबानी भी बढ़ती जा रही है। मेरा खयाल है कि अहमदाबादमें

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १५-६-१९२१।
२. देखिए "पत्र: नरमदलीय भाइयोंको", ८-६-१९२१।

दो धरना देनेवालों पर गुण्डोंने हमला किया और उनके सिर फोड़ दिये। ये दोनों वीर अपने सिरोंपर पट्टियाँ बाँधे रोज अपने मोर्चेपर डटे रहते हैं। बम्बईमें एक भीड़के सामने एक स्वयंसेवकके गालपर चाँटा मारा गया लेकिन वह मजबूतीसे अपनी जगह डटा रहा और उसने बदला लेनेकी कोशिश नहीं की। शराब वगैरा बेचनेवालोंको जैसे-जैसे धरनोंके असरका अहसास होता जायेगा वैसे-वैसे ऐसी घटनाएँ बढ़ती जायेंगी। इस सुधार-कार्यको बन्द कर देना सम्भव नहीं है, भले ही अपना कर्त्तव्य पूरा करनेमें धरना देनेवालोंको अपनी जान ही क्यों न गँवानी पड़े। जबतक धरना देनेका काम करनेके लिए पर्याप्त स्त्री-पुरुष मिलते रहेंगे, और जबतक वे बदला लेनेकी कोशिश किये बिना अपनी जानपर खेलनेको राजी होंगे तबतक यह काम चलता रहेगा। इसी खतरेकी आशंकासे मैंने नरम दलवाले लोगोंसे देश-प्रेमके नामपर, एक ही बारमें शराबकी दुकानें समाप्त करानेकी अपील की थी ताकि युवक और युवतियोंके चोट खाने या जानसे हाथ धोनेकी नौबत न आये। इसलिए पत्र द्वारा अपनी बात ठीक ढंगसे स्पष्ट न कर सकनेका मुझे बड़ा दुःख है। मैं जानता हूँ कि भविष्यमें किसी-न-किसी दिन नशाबन्दी होकर रहेगी। लेकिन जिसका घर जल रहा हो उसे यह जानकर क्या राहत मिल सकती है कि आग बुझानेके यन्त्र बनाये जा रहे हैं।

ब्रिटिश सरकार बनाम अन्य सरकारें

'टाइम्स ऑफ इंडिया' में किसी 'प्रेक्षक' ने इस आन्दोलनके बारेमें मुझसे कुछ प्रश्न पूछे हैं। मुझे खेद है कि मैं इससे पहले उत्तर नहीं दे सका। एक मित्र यदि इनकी कतरन मुझे न भेजते तो शायद वे मेरी नजरसे गुजरते ही नहीं। 'प्रेक्षक' ने पूछा है कि 'क्या ब्रिटिश शासन मुगल और मराठा शासनसे बेहतर नहीं है।' मुझे यह कहनेकी जुर्रत करनी ही पड़ेगी कि मुगल और मराठा शासन ब्रिटिश शासनसे बेहतर थे, क्योंकि उस समय साराका-सारा राष्ट्र उतना निर्बल अथवा दीन-हीन नहीं था जितना आज है। मुगल अथवा मराठा साम्राज्यमें हम परिया[1] नहीं थे; बहिष्कृत नहीं थे। ब्रिटिश साम्राज्यमें हम परिया हैं, बहिष्कृत हैं।

पारसी क्या करें

'प्रेक्षक' आगे पूछता है:

कि क्या पारसियोंसे इस बातकी आशा की जाती है कि वे उस सूरतमें भी अपने बच्चोंको सरकारी अथवा सहायता प्राप्त शालाओंसे निकाल आनेको कहें जब कि पारसियोंकी विशिष्ट आवश्यकताओंको ध्यानमें रखकर राष्ट्रीय शालाओंकी कोई व्यवस्था नहीं है। क्या पारसी वकीलोंको अदालतोंका बहिष्कार करके अपने परिवारोंको भूखों मरने देना चाहिए? क्या पारसियोंको अपने अच्छी कमाईवाले धंधोंको छोड़कर सूत कातने और सिर्फ तीन आने रोज कमानेमें ही लग जाना चाहिए? प्रतिदिन तीन आने कमाकर तो वे कोरे सोडा वाटरकी एक बोतल

१. दक्षिण भारतकी एक दलित जाति।

भी नहीं पी सकते, व्हिस्की और सोडा मिलाकर पीनेकी बात तो दूर रही। और क्या पारसियोंको अपनी मौजूदा पोशाक, जो एशियाई ढंगके बनिस्बत यूरोपीय ढंगकी अधिक है, छोड़कर अपने पूर्वजोंकी पोशाक, अर्थात् ऐसे पाजामे पहनने चाहिए जिनके पायँचोंका घेर इतना होता है कि एक-एकमें दर्जन-भर मुर्गीके बच्चे समा जायें? इस तरह जमानेको ढकेलकर बिल्कुल पीछे ले जाना क्या सम्भव है? क्या श्री गांधी इन सवालोंका ऐसे जवाब देनेकी कृपा करेंगे जो लोगोंको सही लगें?

शिक्षाके मामलेमें पारसी सबसे आगे रहे हैं। उन्हें मौजूदा स्कूलोंसे अपने एक भी बच्चेको निकालनेकी जरूरत नहीं है। जरूरत सिर्फ इस बातकी है कि वे डिग्रियोंके व्यामोहसे अपने-आपको मुक्त करें, वे चाहें तो अपने सभी स्कूलोंका सम्बन्ध आज ही सरकारसे तोड़ सकते हैं। उनके पास इतना पैसा है कि वे अपनी विशेष शिक्षाका व्यय स्वयं ही वहन कर सकते हैं। और अगर पारसी वकील वकालत छोड़ दें और राष्ट्रकी सेवा करनेमें हाथ न बँटाना चाहें तो मैं जानता हूँ कि उनमें इतनी सूझ-बूझ है कि वे व्यापार-व्यवसायमें आसानीसे लग सकते हैं, जो कि उनके हाथकी बात है। सुयोग्य पारसी वकीलोंके त्यागसे स्वयं पारसियोंका भी कल्याण होगा और राष्ट्रका भी। ऐसी आशा तो किसीसे नहीं की जाती, और खासकर पारसीसे तो कदापि नहीं, कि वह अपना अच्छी खासी कमाईका ऐसा धन्धा भी छोड़ दे जो किसी भी तरह सरकारकी प्रतिष्ठा कायम रखनेमें सहायक नहीं है और बदलेमें कताईका काम शुरू करे। लेकिन जिस किसी पारसी स्त्री या पुरुषके पास अवकाश है, उसे राष्ट्रके कल्याणके लिए उस अवकाशका उपयोग कताईके काममें करना चाहिए। इस तरह पारसियोंको अपने सोडेसे वंचित रहनेकी बात ही नहीं उठती। लेकिन जो शराब वगैरह पीते हैं, वे अगर पूरी तरह उसका त्याग कर दें तो इससे उनकी भी भलाई होगी और राष्ट्रकी भी। पारसियोंको अपनी मौजूदा पोशाकें भी नहीं छोड़नी हैं। सिर्फ इतना ही ध्यान रखना है कि वे पोशाकें हाथ-कते सूतसे हाथ-बुने कपड़ेकी बनी हों। लेकिन अगर वे अपने पूर्वजोंकी सादगीको फिरसे अपना लें तो उससे उनका कुछ नुकसान नहीं होगा। पुरानी पारसी पोशाक ऐसी थी जो भारतीय जलवायुको दृष्टिमें रखकर बनाई गई थी। यूरोपीय पोशाक भद्दी और भारतीय आबोहवाकी दृष्टिसे नितान्त अनुपयुक्त है। अंग्रेज भारतमें भी अपनी अलग-थलग बने रहनेकी प्रवृत्ति और कल्पना-शक्तिके अभावके कारण वही पोशाक अपनाये हुए हैं — यद्यपि वे स्वीकार करते हैं कि भारतीय जलवायुकी दृष्टिसे यह जरा भी आरामदेह नहीं है। मैं तो कहूँगा कि बिना सोचे-समझे नकल करना प्रगतिकी निशानी नहीं है। और न पुरानी आदतोंको फिरसे अपनानेका मतलब हर बार "जमानेको ढकेलकर पीछे ले जाना" ही होता है। अगर जल्द-बाजीमें या भूलसे कोई गलत कदम उठा लिया गया हो तो उसे वापस ले लेना निश्चय ही प्रगतिकी निशानी है। और लोगोंका खयाल है कि पिछले सौ बरसोंमें हमने बहुत-से गलत कदम उठाये हैं। इसलिए आगे बढ़नेसे पहले सही रास्तेपर आनेके लिए हमें कई कदम पीछे हटना पड़ेगा। हम रास्ता भूल गये हैं, और मैं 'प्रेक्षक' तथा

अन्य सभी पारसी भाइयोंसे निवेदन करता हूँ कि उन्होंने जहाँसे गलत रास्ता पकड़ा था वहाँ जल्दीसे-जल्दी वापस लौट जायें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-६-१९२१

११९. जुएका अभिशाप

सम्पादक
'यंग इंडिया'

महोदय,

यह बड़ी प्रसन्नताकी बात है कि 'यंग इंडिया' और इसके सम्पादक महोदयने जुएकी बुराइयोंका सवाल उठाया है। लेकिन मुझे लगता है कि यों कभी-कभी 'यंग इंडिया' में इक्के-दुक्के लेख लिख देनेसे पश्चिमसे आई इस बुराईका जड़-मूलसे नाश नहीं किया जा सकता। यह तो अब निठल्ले बैठे रहनेवाले धनी लोगोंसे बढ़ते-बढ़ते व्यापारी-वर्ग, मध्यम-वर्ग, कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरों और स्कूलोंके छात्रों तकमें फैल गई है। हर सप्ताह नियमित रूपसे घुड़दौड़ोंमें जाकर बाजी लगानेवाले हजारों-हजार लोगोंके अलावा, हजारोंकी तादादमें ऐसे लोग भी हैं जो बीच शहरमें खुलेआम सट्टेकी दुकानोंमें सट्टेबाजीके रूपमें जुआ खेलते हैं। सरकारने इन दुकानोंको बन्द करानेके सवालपर विचार करनेके लिए एक समिति नियुक्त की है, और अगले सत्रमें वह इस सम्बन्धमें कोई कानून भी पास करेगी। लेकिन यह पर्याप्त नहीं है। इस बुराईके विरुद्ध जनमत तैयार करना चाहिए और निश्चित रूपसे यह सिद्ध कर देना चाहिए कि घुड़दौड़ोंमें दाँव लगाना और सट्टा खेलना भी शराबखोरी और वेश्यागमन-जैसा ही बुरा काम है। इसके लिए एक प्रबल आन्दोलनकी जरूरत है, और मुझे आशा है कि 'यंग इंडिया' के पाठक इसमें साथ देंगे।

बम्बई
२६-५-१९२१

आपका,
सत्य

जैसा कि मैं कह चुका हूँ, दुर्भाग्यवश घुड़दौड़ और घुड़दौड़ोंके सिलसिलेमें जुआ खेलना फैशनकी चीजें हो गई हैं। ये चीजें लोगोंमें लज्जाकी वह भावना नहीं जगातीं जो शराबखोरी जगाती है। इसलिए शराबखोरीकी तुलनामें घुड़दौड़की कुटेवसे निबटना ज्यादा मुश्किल है। 'सत्य' महोदयको घुड़दौड़की बुराइयोंका खास ज्ञान है। मैं तो

उनसे कहूँगा कि खुले तौरपर आगे आयें और समाजकी नैतिकताकी जड़ोंको खोखली बनाती जा रही इस बुराईको दूर करनेका काम हाथमें लें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-६-१९२१

१२०. तिलक स्मारक-कोष

किसी व्यक्तिकी स्मृतिका सच्चा आदर इसीमें है कि उसके जीवनके उद्देश्यको पूरा किया जाये। जिन्हें लोकमान्य कहनेमें भारतको पहले भी बड़ी खुशी होती थी और अब भी बड़ा हर्ष होता है, उन बाल गंगाधर तिलककी स्मृतिका सच्चा आदर इसीमें होगा कि स्वराज्यकी स्थापना करके उनकी स्मृतिको अमर बना दिया जाये। यदि हम उनकी पहली पुण्य-तिथिपर ही स्वराज्यकी स्थापना कर सकें तो कितना अच्छा, कितना महान् कार्य होगा? और अभी हमारे पास जो चालीस दिन बाकी हैं, उनमें यह काम कर दिखाना असम्भव भी नहीं है। लेकिन मेरा आशावादी स्वभाव भी अगले अगस्तकी पहली तारीखतक स्वराज्यकी स्थापनाकी कल्पना नहीं कर सकता। हाँ, कठोर परिश्रम करके आगामी अक्तूबरकी पहली तारीखतक स्वराज्यकी स्थापना निश्चय ही सम्भव है। लेकिन अगर आगामी ३१ दिसम्बर या उसके पहले स्वराज्य स्थापित न हुआ तो कांग्रेसकी मौत ही समझिए। और यदि हम एक करोड़ रुपये जमा करनेका बेजवाड़ाका अपना संकल्प पूरा नहीं कर सके तो यह काम किसी हालतमें पूरा नहीं हो सकता। ये पंक्तियाँ इस महीनेकी २२ तारीखको प्रकाशित होंगी। इसलिए पाठकोंको इस बातपर विचार करना होगा कि आठ दिनमें एक करोड़ रुपये कैसे जमा किये जायें।

आइए, अब देखें कि हम हैं कहाँ। यदि सारा काम बदस्तूर चलता रहा तो यह आसानीसे माना जा सकता है कि उक्त तारीखतक चालीस लाख रुपये बम्बईसे बाहर-बाहर जमा हो चुके होंगे। इसका अर्थ यह हुआ, मैं ब्योरा दूँ, कि कमसे-कम तीन लाख बंगालमें, चार पंजाबमें, तीन सिन्धमें, तीन आन्ध्रमें, तीन मध्य प्रान्तमें, चार बिहारमें और दस गुजरातमें जमा होंगे। ये हुए तीस लाख। बाकीके प्रान्तोंके लिए दस लाखका अनुमान किसी प्रकार भी बहुत ज्यादा नहीं है। तो हम यह मान लें कि बम्बईको छोड़कर अन्य सभी प्रान्त मिलकर चालीस लाख रुपये जमा कर लेंगे।

तब सवाल यह है कि बाकीके साठ लाख रुपये बम्बईसे कैसे जमा किये जायें? ३० जूनसे पहले-पहले यदि हमें एक करोड़ रुपयेकी कुल रकम जमा करनी है तो यह मुख्यत: बम्बई और कलकत्तेके ऐसे धनाढच लोगोंसे ही लेनी होगी, जो देनेको तत्पर हों, अर्थात् उनसे जिनकी इस आन्दोलनमें सहानुभूति और उसमें विश्वास हो।

भारतके सारे अमीर लोग यदि यह बात समझ लें कि उनकी हिफाजत मौजूदा शासनसे डरनेमें नहीं वरन् निर्भय होकर आन्दोलनकी मदद करनेमें ही है, तो न

केवल एक करोड़ रुपये जमा करनेमें कोई परेशानी नहीं होगी, वरन् एक महीनेके भीतर स्वराज्य लेना भी सुनिश्चित हो जाये। आज यदि वे करोड़ों रुपये कमा रहे हैं तो अरबों देशसे बाहर भी भेज रहे हैं; अर्थात् वे अपने गरीब और बहुतसे भूखों मरते देश-भाइयोंके मुँहका ग्रास छीनकर खुद करोड़ों रुपये जमा कर रहे हैं, और अरबों रुपये देशसे बाहर भेजनेमें सहायक सिद्ध हो रहे हैं। मोटी-मोटी तनख्वाहें पानेवाले उच्चाधिकारियोंके भारसे दबा यह शासन इस खयालमें कि और कोई उपाय न रहनेपर, डायरशाही और ओ'डायरशाहीके बलपर भारतको कब्जेमें रखा जा सकता है, सेनापर कमरतोड़ खर्च किया जा रहा है, और जिस वर्गसे आज इस शासनको सबसे अधिक सहारा मिल रहा है, वह इन्हीं धनिकोंका वर्ग है।

परन्तु जैसी वस्तुस्थिति हो, हमें उसे उसी रूपमें लेना चाहिए। धनी लोग कलक्टरों और कमिश्नरोंको नाखुश करनेसे डरते हैं। कुछ लोग वास्तवमें असहयोग आन्दोलनकी सफलतासे डरते हैं। वे समझते हैं कि यदि यह सफल हो गया तो कमसे-कम कुछ समयके लिए तो अराजकता फैल ही जायेगी और जान-मालकी हानि होगी। हमें उनके हृदयपर विजय पानी है और इसका तरीका यही है कि हम अत्यन्त धैर्यपूर्वक काम करते जायें और इस तरह ऐसा वातावरण तैयार करें कि कोई भी व्यक्ति मन, कर्म या वचन किसी भी प्रकारसे हिंसा न करे।

इस बीच, हमें यह समझ लेना है कि यदि इस कसरको पूरा करना है तो जो थोड़े-से धनी और बहुत-से अच्छे खाते-पीते लोग हमारे साथ हैं, उन्हें साधारणसे अधिक कुर्बानी करनी पड़ेगी। बम्बईमें इस दृष्टिसे बड़े अच्छे ढंगसे काम शुरू हुआ है। वहाँ बड़े ही ईमानदार कार्यकर्त्ता, जो स्वयं धन-सम्पन्न हैं, रात-दिन एक करके बड़ी-बड़ी रकमें जमा कर रहे हैं। उन्हें बड़े-बड़े उतार-चढ़ावोंका सामना करना पड़ रहा है। लेकिन वे अदम्य उत्साहसे अपने सीधे रास्तेपर आगे बढ़ते जा रहे हैं।

हमें किसीके कहे बिना काम न करनेकी आदत छोड़ देनी चाहिए। बम्बईके धनी लोग स्वेच्छासे अपनी सहायता और भेंट क्यों नहीं भेजते? वे इस बातका इन्तजार क्यों करते रहते हैं कि पहल कोई और करे?

और उनका क्या होगा जो स्वयं लाख-लाख अथवा हजार-हजार रुपये नहीं दे सकते? वे थोड़ेसे धनवान व्यक्तियोंका बोझ कम करनेके लिए काफी-कुछ कर सकते हैं। उन्हें तो समाजके आह्वानकी राह नहीं देखनी चाहिए। प्रत्येक समूह, प्रत्येक जाति और प्रत्येक व्यापारिक संगठनको अपने-आप धन जमा करने और जमा हुए धनको प्रान्तीय केन्द्रोंको भेजनेका काम शुरू कर देना चाहिए। जिन लोगोंमें धन जमा कर सकनेकी कुछ भी योग्यता है, उन्हें बाकीके दिनोंमें अन्य कोई काम न करके सारे समयका उपयोग इसी कामके लिए करना चाहिए।

यह बड़े शर्मकी बात है कि सब प्रान्तोंसे कुल मिलाकर चालीस लाख रुपयेसे अधिक धन जमा करना सम्भव नहीं है परन्तु यदि प्रत्येक प्रान्त उस गौरवपूर्ण और सौभाग्यपूर्ण सप्ताहमें ऐसे निःस्वार्थ-भावसे काम करनेवाले कार्यकर्त्ता तैयार कर सके जो धन जमा करनेमें अपनी पूरी शक्ति लगा दें तो अब भी इस कलंकको धो सकनेका समय है।

तमाम धनवान व्यक्ति अभी चन्दा नहीं दे रहे हैं और हम जन-साधारणसे चन्दा जमा करनेका काम संगठित करनेमें भी सफल नहीं हुए हैं, इसका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि कुछ लोगोंको अपना सब-कुछ दे देना होगा। मैं ऐसे चार गुजरातियोंको जानता हूँ, जो स्वयं जाने-माने और योग्य कार्यकर्त्ता भी हैं, जिन्होंने अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया है। एकका स्वर्गवास हुआ तो वे अपनी कुल जमा-पूँजी, २५,००० रुपयेसे अधिक, स्वराज्य-कोषके लिए छोड़ गये। मुझे आशा है कि इन चार दृष्टान्तोंका बड़ी संख्यामें अनुकरण किया जायेगा। स्वतन्त्रताके यज्ञमें आहुति डालनेसे किसीकी कुछ हानि थोड़े ही होती है।

हमें यदि इसी वर्षके दौरान स्वराज्य प्राप्त करना है तो इसके लिए कमसे-कम बेजवाड़ा कार्यक्रमको नियत समयके भीतर अवश्य पूरा कर लेना होगा। एक करोड़ रुपयोंका संग्रह उसकी पूर्तिका सबसे प्रत्यक्ष प्रमाण होगा।

सदस्यता और चरखेका महत्त्व भी कम नहीं। मेरा यह सुझाव है कि केवल कांग्रेसकी नीति और सिद्धान्तोंकी व्याख्या करनेके लिए इक्कीस सालसे अधिक उम्रके हर स्त्री-पुरुषको किसी एक मूल कांग्रेस कमेटीका सदस्य बननेकी बात कहनेके लिए रविवार, २६ तारीखको और ३० जूनको यथासम्भव प्रत्येक गाँव अथवा केन्द्रमें सभाएँ की जायें। इन सभाओंमें सदस्य बनाने और सदस्यताका शुल्क जमा करनेके अलावा और कोई काम न किया जाये। इन दिनों ऐसे सभी स्थानोंपर फार्म भी जमा कराये जा सकते हैं जहाँ जिम्मेदार लोग सदस्य बनानेके लिए प्रचार-कार्य प्रारम्भ करनेके लिए तैयार हों।

चरखोंकी कोई गिनती तो हमारे पास नहीं है, लेकिन मुझे जो विवरण मिले हैं, उनसे प्रकट होता है कि शायद जनसाधारणके बीच चरखेका इतना अधिक प्रचलन हो गया है कि भारत-भरमें बीस लाख चरखोंपर, येन-केन ही सही, कताईका काम चल रहा है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-६-१९२१

१२१. युद्धोन्मुख डा० पॉलेन

डा० जॉन पॉलेनकी खुली चिट्ठी मुझे मिल गई है। यहाँ मैं उसे इसलिए नहीं दे रहा हूँ कि वह समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हो चुकी है। चिट्ठी हर तरहसे डा० पॉलेनके अनुरूप है। उन्होंने असहयोग आन्दोलनका अध्ययन करने, उसे समझनेकी थोड़ी भी तकलीफ गवारा नहीं की। लेकिन असहयोगके बारेमें कुछ न जानते हुए भी उसे खरी-खोटी सुनानेमें उन्होंने कोई हिचक महसूस नहीं की। उनका आग्रह है कि मैं अपने खुदके अनुभवको एक तरफ रखकर उनके ही शब्दोंको ठीक मान लूँ। यह अफसोसकी बात है कि डा० पॉलेनकी चिट्ठीमें भी हमें आम अंग्रेजों-जैसा ही रुख दिखाई पड़ता है; अर्थात् वे प्रश्नके दूसरे पहलूको जानने-समझनेकी तकलीफ नहीं

उठाते और सर्वविज्ञताका अहंकार रखते हैं और फलस्वरूप अपने मतके बारेमें आश्वस्त बने रहते हैं। इस तरहके लोगोंपर केवल दो ही बातें असर पैदा कर सकती हैं — हिंसा या असहयोग। यदि हत्या हो जाती है तो वे परेशान होकर दौड़धूप करने लगेंगे; और यदि आप बोल-चाल बन्द कर दें तो वे पूछने लगेंगे कि बात क्या है। हत्यासे उत्पन्न मानसिक आघात आदमीको सक्रिय तो बना सकता है, पर उससे उसका विवेक तो शायद ही कभी जागता हो। उससे कटुता पैदा होती है और आतंकवादी कृत्योंकी प्रवृत्ति भी पैदा हो सकती है। इससे कुछ राहत मिली-सी महसूस हो सकती है, लेकिन बहुधा वह राहत मूल विषमता या रोगसे भी अधिक खतरनाक साबित होती है। दूसरी ओर बुराईके साथ कोई भी सरोकार रखने, बातचीतका रिश्ता रखने, उसमें हाथ बँटाने, आत्मपतनमें किसी भी तरहकी कोई सहायता देने और गलत काम करनेवाले के साथ सहयोगसे इनकार किया जाये तो व्यक्तिको आत्मिक बल मिलता है, गलत काम करनेवाले का विवेक जागता है और वह उसके मनको शुद्ध बनाता है। हिन्दुस्तानने यही मार्ग अपनाया है और यह सदैव अन्य सभी मार्गोंसे बढ़कर होगा। डा० पॉलेनमें दिमागी काहिली इतनी है कि वे इतना समझनेकी भी कोशिश नहीं करते कि असहयोग तो हिंसाके खिलाफ सबसे बड़ी गारंटी है, इसलिए हिंसाको असम्भव बनाना उसमें अनिवार्यतः शामिल है। वह हिंसाको जड़-मूलसे उखाड़नेका प्रयास है। असहयोगने कमसे-कम इतना तो किया ही है कि हिंसाकी सम्भावनाको कुछ समयके लिये टाल दिया है, और अगर लम्बे अर्सेतक इसपर अमल करें तो उससे जनतामें एक ऐसी शक्ति पैदा हो जायेगी कि उनको हिंसा बिलकुल ही बेमतलब, गैर-जरूरी लगने लगेगी। असहयोग एक ऐसी चिकित्सा-पद्धति है जो रक्तके विकारको दूर करके शरीरको चंगा करती है। वह बिना ऑपरेशनकी चिकित्सा है।

डा० पॉलेनको इतना तो मालूम होना ही चाहिए था कि मैं ब्रिटिश मालके बहिष्कारका आज भी उतना ही विरोधी हूँ जितना कि पहले कभी था। मैं जो आज कह रहा हूँ वही सदासे कहता आया हूँ कि सर्वदा विदेशी वस्त्रोंका पूरा-पूरा बहिष्कार किया जाना चाहिए और उन सब वस्तुओंका भी बहिष्कार होना चाहिए जिनको हिन्दुस्तानमें अच्छी तरहसे तैयार किया जा सकता है। मैंने जिस स्वदेशीकी कल्पना की है, उसमें किसीको दण्ड देने या किसीसे बदला लेनेके भावकी कोई गुंजाइश नहीं। उसका मतलब है अपनी मदद आप करना, अपना काम खुद करना और इस नैसर्गिक नियमको स्वीकार करना कि मानवताकी सर्वोत्तम सेवा अपने बिलकुल निकटके मानव-समाजकी सहायता करना ही है। हिन्दुस्तान यदि अपने पैरोंपर खड़ा हो जायेगा तो वह सारे संसारके लिए सहायक सिद्ध होगा; और यदि वह असहाय बना रहेगा, मैनचेस्टर और जापानके वस्त्रोंपर निर्भर रहेगा, तो वह अपने लिए और मैनचेस्टर तथा जापानके लिए भी हानिकारक सिद्ध होगा।

डा० पॉलेनने तारीखें भी गलत-सलत लिखी हैं। मैंने वाइसरायको असहयोग आन्दोलनके काफी पहले लिखा था,[1] जब कि उनका कहना है कि मैंने उसके बाद

१. देखिए खण्ड १४, पृष्ठ ३५७-६०।

लिखा था। तब मुझे ब्रिटिश सरकारपर भरोसा था। मैंने ब्रिटिश शासनकी निन्दा करना वाइसरायके नाम अपनी खुली चिट्ठीके दो वर्ष बाद शुरू किया था।

मैं डा० पॉलेनको इतना और बता देना चाहता हूँ कि आज मैं उसी ब्रिटिश शासन-पद्धतिका सबसे कट्टर शत्रु हूँ जिसे मैं कभी अज्ञानवश अपना मित्र समझता था। पर ब्रिटिश शासन-पद्धतिका सबसे कट्टर शत्रु होते हुए भी, मैं अपने-आपको ब्रिटिश जनताका मित्र मानता हूँ। मेरा धर्म कहता है कि न मित्र रखो, न शत्रु। मैं इसीलिए डा० पॉलेनको आश्वस्त करता हूँ कि ब्रिटिश जनताके प्रति मेरा भाव सदा वही रहेगा जो भाइयोंका भाइयोंके प्रति होता है और मैं उनके प्रति उसी भावनासे प्रेरित होकर कार्य कर रहा हूँ जिस भावनासे अपने सगे भाइयोंके लिए सक्रिय होता हूँ।

मैंने शासन-व्यवस्थाके लिए जिन विशेषणोंका प्रयोग किया है, जिनका प्रयोग करना मैंने अपना कर्त्तव्य माना है, मुझे उनपर दृढ़ रहना चाहिए; और मेरा कर्त्तव्य है कि मैं बुरी चीजको बुरी कहते हुए भी, बुराई करनेवालों के प्रति जनताके घटिया आवेगोंको भड़कनेसे रोकूँ, अर्थात् उनको प्रतिहिंसक बननेसे रोकूँ। किसी भी रोगको इस डरसे छिपाना या अनदेखा करना तो ठीक नहीं होगा कि मरीज उसकी जानकारी पाकर पीड़ा और दुश्चिन्ताओंसे पागल हो जायेगा। रोगके बारेमें उसे आगाह तो कर ही देना चाहिए और साथ ही उसका कोई माकूल इलाज भी तजवीज करना चाहिए।

डा० पॉलेनके पत्रमें इस अज्ञानभरी प्रस्तावनाके बाद फिर उन सभी स्थापनाओंका खण्डन किया गया है जिनमें मैं और मेरे देशवासी विश्वास करते हैं। पर उन्होंने अपने खण्डन-मण्डनके पक्षमें कोई प्रमाण नहीं जुटाया है। हमारी ये स्थापनाएँ हैं:

(१) हिन्दुस्तानका प्रशासन संसार-भरमें सबसे अधिक खर्चीला है।

(२) हिन्दुस्तान आज जितना गरीब है उतना पहले कभी नहीं रहा।

(३) शराबखोरीका जितना जोर आज है उतना पहले कभी नहीं रहा (यह तो कोई कहता ही नहीं कि अंग्रेजोंके आनेसे पहले हमारे यहाँ शराबखोरी बिलकुल नहीं थी।)

(४) कोई और उपाय न देखकर हिन्दुस्तानमें अब आतंकपूर्ण कार्रवाइयोंके बलपर शासन कायम रखा जा रहा है।

डा० पॉलेनने इन सभी जानी-मानी सचाइयोंको गलत कहनेके साथ यह आग्रह भी किया है कि यहाँका प्रशासन संसार-भरमें सबसे कम खर्चीला है। वे भूल जाते हैं कि 'इंडियन सिविल सर्विसवालों' को संसार-भरमें सबसे ऊँचा वेतन मिलता है और सरकारको जितना राजस्व मिलता है उसका एक-तिहाईसे भी ज्यादा भाग सेनापर खर्च किया जाता है। अब जरा एक ऐसे परिवारकी कल्पना तो कीजिए जिसे अपनी कुल आमदनीका एक-तिहाई भाग अपनी चौकीदारी करानेपर खर्च करना पड़ता हो।

डा० पॉलेन काफी जोर देकर कहते हैं कि हिन्दुस्तान 'सचमुच एक बड़ा ही समृद्ध देश है जिसमें अधिकांश व्यक्ति किसान हैं जो अपेक्षाकृत निर्धन और जाहिल हैं'। वे कहते हैं कि २७ रुपये प्रति व्यक्तिकी सालाना औसत आमदनीका पाँच गुना कर

देनेसे १३५ रुपयेकी आमदनी ठहरती है और उससे पाँच आदमियोंके एक परिवारकी आसानीसे गुजर-बसर हो सकती है। उनसे मेरा कहना है कि सवा दो रुपये प्रति महीनेमें एक आदमीका खाना-कपड़ा और मकान नहीं चल सकता, गरीबसे-गरीबका भी नहीं। और चूँकि इस औसत आमदनीमें लाखों करोड़पतियोंकी आमदनी भी लेखी गई है, इसलिए गरीब जनताकी वास्तविक आय और भी कम बैठती है। इसलिए गरीबोंकी औसत आमदनी हमारे देशकी गरीबी ही नहीं बल्कि लगभग भुखमरीकी दशाका एक अकाट्य प्रमाण है।

डा० पॉलेनने शराबकी चुंगीसे होनेवाली राजस्वकी दिन-दिन बढ़ती आमदनीका स्पष्ट प्रमाण होते हुए भी यह कहनेकी धृष्टता की है कि वर्तमान सरकार बहुत ज्यादा शराबखोरीको बढ़ावा नहीं देती।

और अन्तमें, डा० पॉलेन सरकारकी दमन और आतंक-नीतिसे इनकार करना तो दूर, उलटे यह दावा करते हैं कि 'वे लोग (हम लोग) उतने ही स्वतन्त्र हैं जितने कि स्काट और वेल्स और डोमीनियनोंकी जनता, यहाँतक कि स्वयं अंग्रेज लोग हैं'।

इस घोर अज्ञानको केवल असहयोग आन्दोलन ही दूर कर सकता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२–६–१९२१

१२२. हमारी खामियाँ

अज्ञान और दम्भपूर्ण धारणाओंके कारण डा० पॉलेनकी आलोचना मनमें सद्भावनाके बजाय केवल क्षोभ उत्पन्न करती है, इसके विपरीत मद्रासके एक अंग्रेजने, 'जॉन बुल' नामसे नीचे लिखी बड़ी ही सहायक और खरी आलोचना भेजी है:

> मैं एक अंग्रेज हूँ और आपके कार्य और जीवनके बारेमें प्रशंसाके कुछ शब्द और अपनी सफाईमें कुछ शब्द प्रस्तुत करना चाहता हूँ। ऐसा करनेकी प्रेरणा मुझे लॉर्ड रीडिंगके भाषणके बारेमें 'यंग इंडिया' में आपकी टिप्पणी[1] पढ़नेसे मिली। मुझे ऐसा लगता है कि सीधे-सादे सत्यको देखकर उसे कह सकनेकी अमूल्य क्षमता आजके अन्य किसी भी राजनीतिज्ञकी अपेक्षा आपमें कहीं अधिक है। आपकी निगाहमें भारतके विक्षोभकी जड़ यह है कि भारतमें यूरोपके लोग भारतीयोंको अपनेसे तुच्छ मानते हैं। मेरा भी यही खयाल है। लेकिन मैं चाहता हूँ कि आप दो बातोंपर विचार करें: पहली, "इसमें कसूर किसका है?" और दूसरी, "इसमें सुधार कैसे किया जाये?"
>
> क्या भारतस्थित अंग्रेजके लिए यह सम्भव है कि वह भारतीय जन-साधारणको अपनी जातिसे तुच्छ समझनेसे बच सके? हममें से जो लोग वस्तुस्थितिको यथार्थ रूपमें देखना चाहते हैं वे क्या देखते हैं? हम देखते हैं कि नौकर

१. देखिए "वाइसरायका भाषण", ८–६–१९२१।

अथवा कर्मचारीके रूपमें हिन्दुस्तानी अंग्रेजोंकी तुलनामें घटिया होते हैं। वह कम ईमानदार और विवेकशील है, वह ज्यादा छुट्टियाँ लेता है और उसपर नजर रखना जरूरी होता है। हम यह देखते हैं कि मालिक अथवा कामपर रखने-वाले के रूपमें वह अंग्रेजोंसे घटिया है, उसमें न्यायशीलता और उदारता भी कम है। हम यह भी देखते हैं कि शारीरिक दृष्टिसे भी वह घटिया है, ज्यादातर भारतीय तो थके-माँदे बूढ़े आदमियों जैसे-ही हैं। वह (यदि उच्च वर्गका हुआ तो) आम तौरपर व्यायाम और श्रमसे जी चुराता है, और अपनी ऐन जवानीमें भी वह अक्सर थका-हारा बूढ़ा-सा लगने लगता है। उसके बच्चे पटापट मरते हैं। यहाँ मद्रासमें जितने बच्चे पैदा होते हैं, उनके आधे पाँच बरसके होते-होते मर जाते हैं। नागरिकके रूपमें वह घटिया है; और यह बहुत ही कम देखा जाता है कि वह घूस देने-लेनेका विरोध करे। वह क्योंकि जानवरोंको मार नहीं डालता, अपनी मानवीयताका डंका पीटता है, लेकिन गायोंको भी भूखों मरने देता है; घोड़ों तथा बैलोंके साथ जैसा बुरा बरताव भारतमें होता है वैसा किसी भी सभ्य देशमें नहीं किया जाता। विवाहित जीवनकी पवित्रता कायम रखनेके लिए उसने किशोरावस्थासे भी पहले विवाह कर देनेकी और फिर स्थायी वैधव्यकी परिपाटी बना दी है; इतना होनेपर यौन-रोग भारतमें इंग्लैंडसे कहीं अधिक पाये जाते हैं और धर्मके नामपर छोटी-छोटी लड़कियोंको वेश्यावृत्ति सिखाई जाती है। (केवल एक ही उदाहरण लें तो) जिस प्रकार आज अंग्रेज स्त्री-पुरुष उन देशोंमें सेवा-कार्यमें लगे हुए हैं जो युद्ध-कालमें ब्रिटेनके दुश्मन थे उस प्रकार भारत अभारतीयोंकी सेवा करनेका क्या एक भी दृष्टान्त प्रस्तुत कर सकता है? यदि पूर्ण स्वराज्य प्राप्त कर चुकनेपर वह खतरेमें पड़ जाये तो क्या भारतकी आबादीके हर साढ़े चार करोड़में से पचास लाख लोग स्वेच्छासे उसकी फौजमें नाम लिखा लेंगे?

अपनी विशाल आबादीमें से भारतने कितने थोड़े महान् व्यक्ति पैदा किये हैं? जीवित लोगोंमें से सिर्फ तीन ही ऐसे हैं — टैगोर, बोस और गांधी। भारत-जैसे देशके लिए यह संख्या कितनी शानदार है! महारानी एलिजाबेथके जमानेमें इंग्लैंडकी जनसंख्या आजके मैसूरकी आबादीसे ज्यादा नहीं थी।

ये सभी बातें आपको एकतरफा और गलत लग सकती हैं। शायद ऐसा है भी। लेकिन कोई भी अंग्रेज अंग्रेजों और भारतीयोंके बीच जो फर्क है, उसे इसी दृष्टिसे देखे बगैर कैसे रह सकता है?

यदि स्थिति ऐसी हो तो उसका उपचार भारतीयोंके हाथोंमें है, हमारे हाथोंमें नहीं। आपने राह दिखाना शुरू भी कर दिया है। मुझे आपका "असह-योग" शब्द पसन्द नहीं है, और न इससे आपका प्रयोजन स्पष्ट होता प्रतीत होता है। मैं उसके स्थानपर "स्वतन्त्र कार्रवाई" शब्दको ज्यादा पसन्द करूँगा।

भारतीय छुआछूतको खत्म करके दिखायें; वैवाहिक सम्बन्धोंमें संयम बरतकर दिखायें और शैशव कालमें ही काल कवलित हो जानेवाले अन्धाधुन्ध करोड़ों बच्चे न पैदा करें; ब्राह्मण पाठशालाओंमें सूत कातना और कपड़े बुनना सीखकर बतायें और शारीरिक श्रमको हीन कार्य समझना छोड़ दें; और स्थानीय बोलियोंमें से चाहे जितनी बोलियोंको कायम रहने दिया जाये, लेकिन भारत अपनी कोई ऐसी भाषा अवश्य ही अपनाकर बताये जिसे कश्मीरसे कन्याकुमारी तक बोला और समझा जा सके। जब कोई भी काम करना हो तो भारतीयोंको, "सरकार यह करे, सरकार वह करे" कहनेके स्थानपर स्वयं आगे बढ़कर उसे पूरा करनेमें जुट जाना चाहिए। आप ये सभी बातें कह चुके हैं, और यदि वे सभी लोग जो 'गांधीजीकी जय'के नारे लगाते हैं, ये काम करने लगें तो अंग्रेज जल्दी ही भारतीयोंकी उससे अधिक इज्जत करने लगेंगे जितनी अब करते हैं। ये काम पूरे करनेके बाद और भी बहुतसा काम करना होगा। इनमें ऐसी प्राचीन परम्पराओंके आतंकके खिलाफ विद्रोहका कार्य शायद सबसे महत्त्वका होगा, जिनका औचित्य अथवा उपयोग न रहा हो। आप निस्सन्देह नये-नये कार्य कराते जानेमें समर्थ होंगे। इस बीच, हम देखेंगे कि क्या होता है। क्या एक करोड़ रुपये जमा हो जायेंगे? क्या बीस लाख चरखे उपलब्ध हो सकेंगे और यदि उपलब्ध हो जायेंगे तो उनसे काम भी लिया जायेगा या नहीं? क्या असहयोग आन्दोलनकारी आत्म-अनुशासन कायम रखकर दंगे-फसादसे बचे रह सकेंगे? क्या गांधी ऐसे व्यक्तियोंकी सरकारको शैतानी शासन कहना बन्द कर देंगे जो भारतकी सेवाके लिए कुर्बानी देनेको आमतौरपर औसत भारतीयोंसे कहीं अधिक तत्पर हैं? क्या नशाबन्दी आन्दोलनका निर्बाध अवैध शराबखोरीसे भी अच्छा कोई परिणाम निकल सकेगा?

काश, हमें इन सवालोंका जवाब 'हाँ'में मिल सकता! काश . . . परन्तु क्या मिल सकेगा?

यदि सम्मान पाने योग्य काम किया जाये तो अंग्रेज सम्मान देनेके लिए तैयार रहते हैं। यह शिकायत नहीं होनी चाहिए कि अंग्रेज हिन्दुस्तानियोंका आदर नहीं करते; शिकायत यह होनी चाहिए कि हिन्दुस्तानी ऐसा काम नहीं करते कि उनका सम्मान किया जा सके।

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मेरा यह विश्वास है कि आप बड़े-बड़े काम कर रहे हैं और आगे भी करेंगे। "प्रशंसा, आशा और प्रेम ही मनुष्यका जीवनाधार है।" इन्हींके आधारपर महान् राष्ट्रोंका निर्माण होता है। मेरी कामना है कि भारत भी उनमें एक हो।

'जॉन बुल'के पत्रसे ऐसा लगता है कि उसके लेखकने इस आन्दोलनको समझनेकी कोशिश की है। उनकी अधिकांश आलोचना सर्वथा अकारण और निराधार

नहीं है। 'जॉन बुल' ने औसत अंग्रेजके अनुभवकी बात कही है। लेकिन उन्होंने अपने अनुभवोंको जिस तरह सभी भारतीयोंपर लागू कर दिया है, वह सचाईकी कसौटीपर ठीक नहीं उतरेगा। उनका अनुभव छावनियोंमें रहनेवाले उन मुट्ठी-भर हिन्दुस्तानियों तक ही सीमित है जो लोभवश फौजमें भरती होते हैं और किसी अर्थमें भी भारतके जनसाधारणके प्रतिनिधि नहीं माने जा सकते। दोनों ही जातियोंके व्यापक अनुभवके आधारपर मेरा विचार यह है कि जहाँतक इन्सानसे इन्सानकी तुलनाका प्रश्न है, महत्त्वकी सभी बातोंके मामलेमें हिन्दुस्तानी दुनियाकी किसी भी जातिसे घटकर नहीं हैं। हाँ, यह मानना होगा कि शारीरिक दृष्टिसे हम अंग्रेजोंसे घटकर हैं। लेकिन ऐसा अन्य सभी बातोंकी अपेक्षा जलवायुके कारण है। मेरा खयाल है कि जानवरों-की ओर उपेक्षाका आरोप भी आसानीसे सही सिद्ध किया जा सकता है। लेकिन मैं यह नहीं मानता कि हममें अन्य जातियोंकी तुलनामें यौन-रोग अधिक पाये जाते हैं। हाँ, बड़े शहरोंकी बात और है। वेश्यावृत्तिके लिए लड़कियोंको देवार्पित कर देना निश्चय ही हमारी संस्कृतिपर एक कलंक है। यदि हिन्दुस्तानियोंको अंग्रेजोंकी तरह तैयार किया जाता और भारतकी स्थिति भी इंग्लैंड-जैसी ही होती तो वह भी अच्छा काम करके दिखा सकता था। लेकिन हमारी संस्कृति भिन्न प्रकारकी है, जिसे मेरे ख्यालसे हम अनन्त कालतक कायम रखेंगे। भारतका स्वभाव युद्धप्रिय नहीं है। वह साथी इन्सानोंको मारनेके लिए अपने लाखों लोगोंको लड़ाईकी खन्दकोंमें भेजनेमें कोई महानता नहीं समझेगा, भले ही विपक्षी गलतीपर क्यों न हो। मेरे विचारसे अपनी मुसलमान आबादी समेत पूरा भारत दूसरोंको कष्ट पहुँचानेकी बजाय स्वत: कष्ट उठानेमें अधिक सक्षम है। इसी विश्वासके कारण मैंने इस देशकी अनेक व्याधियोंके उपचारके रूपमें असहयोगका प्रस्ताव करनेका साहस किया है। इसके सम्बन्धमें उसकी सही प्रतिक्रिया होती है या नहीं, यह तो आगे देखना है। यदि इसे केवल बदला लेनेकी भावनासे अपनाया गया होगा तो यह नाकाम रहेगा। यदि, जैसा मेरा विश्वास है, इसे आत्मशुद्धि और आत्मबलिदानके लिए अपनाया गया होगा तो इसकी सफलता अनिवार्य है। और भारत कायरोंका राष्ट्र नहीं है, यह बात इसके लड़ाकू लोगोंने —— चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान, सिख हों या गुरखे —— अपने व्यक्तिगत शौर्य और साहससे सिद्ध कर दी है। मेरा कहना यह है कि यह देश निरा मिट्टीका लोंदा नहीं है और शायद उसे विश्वके विकासमें उच्चतर स्तरकी भूमिका निभानी है। यह केवल समय ही बतायेगा कि उसके भाग्यमें क्या है।

लेकिन 'जॉन बुल' को यह समझनेका पूरा हक है कि उनकी बातोंके जवाबमें जो-कुछ मैंने कहा है, वह अपने पक्षकी वकालत-भर है। मैं यह चाहूँगा कि इस प्रकारकी आलोचनाओंको हम मैत्रीपूर्ण चेतावनियोंके रूपमें लें और अपनी हर तरहकी खामियों-को दूर करना आरम्भ कर दें। मैं 'जॉन बुल' की इस बातसे सहमत हूँ कि इस बातकी शिकायत करते रहनेसे कि कोई हमारी इज्जत नहीं करता, ऐसा काम करना कहीं अच्छा है जिससे लोग हमारी इज्जत करने पर मजबूर हो जायें। और वास्तवमें यही कारण है कि भारतने असहयोगका तरीका अपनाया है। इस पत्रके लेखकको यह शब्द पसन्द नहीं है। यदि मुझे उससे बेहतर शब्द मिले तो मैं आज ही उसे छोड़ दूँ।

लेकिन यही एक शब्द है जो इस कामके लिए ठीक ठहरता है। हम काफी दिन अपने ही अधःपतनमें सहयोग कर चुके। अब आगे और सहयोग करनेसे इनकार कर देना हमारा कर्त्तव्य है। अब तो किसीको इस बातका हिसाब लगानेकी भी जरूरत नहीं है कि किसका कितना दोष है। वस्तुस्थिति यह है, और 'जॉन बुल' भी इसे भली प्रकार स्वीकार कर चुके हैं, कि औसत अंग्रेजके मनमें हमारे लिए जरा-सी भी इज्जत नहीं है। इसलिए हमें तबतक के लिए उनसे अलग हट जाना चाहिए जबतक हम और वे यह न समझने लगें कि दोनोंका दर्जा बराबरीका है।

परन्तु 'जॉन बुल' के तर्कोंका एक दूसरा पहलू भी है। उनके रुखसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उनको इस जातिसे ही घृणा है। यदि यह मान भी लिया जाये कि वे सब कमियाँ उसी रूपमें मौजूद हैं जिस रूपमें इस पत्रके लेखकने बयान की हैं, तब भी क्या यही कारण भारतीयोंको अपनेसे हीन समझनेके लिए काफी है? अथवा क्या समताके सिद्धान्तका यह तकाजा नहीं है कि एकसे गुण हों या नहीं, परन्तु एक-दूसरेका आदर करना चाहिए? क्या 'जॉन बुल' स्वयं वही गलती नहीं कर रहे, जो बहुतसे हिन्दू 'अछूतों' के सम्बन्धमें करते हैं? यदि मेरा छुआछूतकी भावनाको दानवी प्रवृत्ति कहना सच है तो क्या अंग्रेजोंको अपने-आपको श्रेष्ठ समझनेकी भावनाको उसी नामसे पुकारना कुछ कम सच होगा? क्या अंग्रेज अपनेसे कुछ कम भाग्यशाली अंग्रेजोंसे वैसा ही बरताव करते हैं, जैसे वे हिन्दुस्तानियोंके प्रति करते हैं? जैसे हिन्दुत्वके बारेमें कहा जाता है कि उसने अछूतोंके भाग्यमें सदा-सदाके लिए अधीन रहना लिख दिया है, वैसे ही क्या अंग्रेज यह नहीं समझते कि वे शासन करनेके लिए पैदा हुए हैं और हिन्दुस्तानी हुक्म बजानेके लिए। मेरी सम्पूर्ण आत्मा मौजूदा शासनके प्रति विद्रोही हो गई है, क्योंकि मेरा विश्वास है कि जबतक अंग्रेज अपनी जातीय श्रेष्ठताका पूर्वाग्रह नहीं छोड़ते तबतक उनसे सम्बन्ध रखते हुए भारतको वास्तविक स्वतन्त्रता नहीं मिल सकती। अंग्रेजोंके इसी दृष्टिकोणने योग्यसे-योग्य हिन्दुस्तानीको अपनी शक्तियोंका पूर्ण विकास कर सकनेके अवसरसे वंचित कर दिया है, इसलिए और व्यक्तिगत रूपसे अंग्रेज प्रशासकोंके नेक इरादे रखनेके बावजूद हम स्वयं अपनी निगाहमें इतने नीचे गिर गये हैं कि खुद हममें बहुत-से लोग यह मानने लगे हैं कि हमारे लिए काफी समयतक अंग्रेजोंसे प्रशिक्षण लेना जरूरी है; जब कि मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि हम आज भी अपना शासन चलानेमें पूरी तरह सक्षम हैं और इसीलिए हमें दृढ़तापूर्वक इन सुधारोंको, जो पूर्ण स्वायत्तशासनसे बहुत कम ठहरते हैं, लागू करनेमें उनके साथ सहयोग नहीं करना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि हमसे गलतियाँ होंगी; हो सकता है आजकी तुलनामें उस समय ज्यादा गलतियाँ हों। लेकिन हम अपनी गलतियोंसे ही सीखेंगे, गलतियाँ करनेके अवसरको बलात् रोके रहनेसे नहीं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-६-१९२१

१२३. पत्र-लेखकोंसे

आर० शर्मा: जहाँ-कहीं जरूरत पड़ी है, स्थानीय कार्यकर्त्ता असहयोग आन्दोलनमें जेल जानेवालों के परिवारोंकी देखभाल कर रहे हैं।

एल० एन० दास: प्रतियोगिताके लिए बनाये गये चरखे सत्याग्रहाश्रम साबरमतीको अपने खर्चेपर भेजे जा सकते हैं। जिस चरखेसे आठ घंटेमें कमसे-कम तीन पौंड एकसा और अच्छी बटवाला सूत काता जा सके उस चरखेके अन्वेषकको ५,००० रु० का पारितोषिक दिया जायेगा। इसके पुर्जे भारतमें बन सकने चाहिए और कीमत ५० रु० से अधिक हरगिज नहीं होनी चाहिए।

बी० नारायण: जिन वकीलोंने वकालत तो छोड़ दी है परन्तु जो असहयोगके अन्य कर्त्तव्योंका पालन नहीं करते या जो आन्दोलनमें विश्वास ही नहीं रखते, केवल वकालत बन्द कर देनेसे ही वे असहयोगी नहीं माने जा सकते। ऐसा भी हो सकता है कि कोई वकील आन्दोलनको समाप्त करनेमें अपना समय लगानेके उद्देश्यसे वकालतका पेशा बन्द करे। अमुक काम ठीक है या गलत इसका निर्णय कामके उद्देश्यको देखकर किया जा सकता है।

वी० वी० साठे: आपका पत्र प्रकाशित करनेकी जरूरत नहीं है। जो लोग अज्ञानसे, द्वेष-भावनासे या विश्वासकी कमीके कारण असहयोगका विरोध करते हों, उन्हें सही ज्ञान, प्रेम और निष्ठासे धीरे-धीरे अपना बनाना चाहिए।

टी० एम०: राष्ट्रीय कार्योंके लिए ऋणके बतौर कोई कोष-संग्रह करनेका विचार बुरा नहीं है। परन्तु आप कोषके मुख्य उद्देश्यको जो स्वर्गीय लोकमान्यकी स्मृतिको अमर बनाना है, नजर-अन्दाज कर रहे हैं। हमें हाथमें लिया काम अवश्य पूरा करना चाहिए। यदि हमें और रुपयोंकी जरूरत है तो हम ऋणकी बात सोच सकते हैं। स्मारक-कोषका स्थान कर्ज नहीं ले सकता। स्मारक-कोषमें तो दान दी गई रकमें ही हो सकती हैं।

आर० सी० माथुर: छुआछूतकी भावनाके बिलकुल मिट जानेपर यह अन्देशा नहीं होगा कि भंगी, यदि उन्हें ठीक पैसा दिया गया और उनके साथ अच्छा बरताव किया गया तो, सफाईका काम करनेसे इनकार करेंगे। संसारके अन्य भागोंमें सफाईका काम, यदि यहाँसे बेहतर नहीं तो, भी काफी अच्छी तरह किया जाता है। परन्तु मान लें कि छुआछूतका प्रतिबन्ध हट जानेपर भंगी गन्दगी साफ करनेसे इनकार कर देंगे; उस हालतमें हमें खुद सफाई करनेको तैयार रहना चाहिए। अस्पृश्यताको मिटा देनेका अर्थ यह भी है कि दूसरोंके मलमूत्रकी सफाई करनेमें उसी प्रकार कोई पाप या शर्मकी बात नहीं है जिस प्रकार माँके लिए बच्चेका मैला साफ करने या वैतनिक परिचारिका (नर्स) या परिचारकके लिए अपने मरीजका मैला साफ करनेमें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-६-१९२१

१२४. भाषण: बम्बईमें स्कूलके उद्घाटनपर[१]

२२ जून, १९२१

अपने भाषणके दौरान महात्मा गांधीने श्रोताओंसे जोर देकर कहा कि जिस एक-मात्र उद्देश्यको हमेशा सामने रखना चाहिए वह है स्वराज्य। उसीकी पूर्तिके निमित्त आप अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाइए। केवल वही शिक्षा उपयोगी है जो आपके बच्चोंमें मातृभूमिके प्रति प्रेम जाग्रत कर सके, उन्हें देशभक्त बना सके और उन्हें प्राणोंकी आहुति देकर भी वर्ष समाप्त होनेसे पहले स्वराज्य हासिल करनेके कर्त्तव्यका भान करा सके, ऐसी ही शिक्षा उन्हें दी जानी चाहिए। आपको चरखा चलाना और खद्दर पहनना चाहिए। आपको खिलाफत तथा पंजाबके सम्बन्धमें किये गये अन्यायोंका निराकरण भी करवाना है। कुमारी कृष्णाबाई और कुमारी जसलक्ष्मी यहाँ पैसेके लिए नहीं आईं वरन् अपने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य निभानेके लिए आई हैं।

महात्मा गांधीने कहा कि मुझे स्कूलका उद्घाटन करनेको बुलाया गया है। यद्यपि इस समय में किसी स्कूलका उद्घाटन नहीं करना चाह रहा था। मैं पहले कई स्कूलोंका उद्घाटन कर चुका हूँ और आप जानते हैं कि इस विषयमें मेरे क्या विचार हैं। उन्हें दोहरानेसे कोई लाभ नहीं। भारतके भाग्य-चक्रकी इस नाजुक घड़ीमें इस तरहके स्कूल खोलनेका उद्देश्य केवल एक होना चाहिए और वह है स्वराज्य प्राप्त करना; इतना ही नहीं, इसी वर्षके भीतर प्राप्त करना। और फिर आपको खिलाफतका सवाल निपटाना है; और पंजाबमें किये गये अन्यायका निराकरण भी करवाना है। आप इन दोनों मसलोंको नजरअन्दाज नहीं कर सकते। यदि आप इसी बरसके भीतर स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए कृतसंकल्प हैं तो आपको सोचना होगा कि उसे हासिल करनेके लिए आपको क्या करना चाहिए। आप लोगोंको अपना सारा ध्यान स्वराज्य हासिल करनेके महत्त्वपूर्ण प्रश्नपर लगा देना चाहिए और उसीके अनुसार कदम उठाने चाहिए। मैं तो ऐसा नहीं मानता कि यदि आपके बच्चे किसी तरहकी शिक्षा पाये बिना रह गये तो उनकी बहुत बड़ी क्षति हो जायेगी। आज भारत भीषण कष्ट सहन कर रहा है और हम उसके कष्टको दूर करनेके लिए स्वराज्य चाहते हैं। पहले तो आपमें अपने बच्चोंकी रक्षा करनेके लिए पूरी सामर्थ्य उत्पन्न होनी चाहिए और मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि भारतीयोंमें उनकी रक्षा करनेकी सामर्थ्य नहीं है। इस कामके लिए उन्हें अपनी आन्तरिक शक्ति पहचाननी होगी। भारतीय लोग अपनी काम करनेकी क्षमताको पूरी तरह नहीं पहचान सके हैं, वे अभीतक यह नहीं जान पाये

१. गांधीजीने गांधर्व महाविद्यालयमें लोकमान्य राष्ट्रीय कन्या शालाका उद्घाटन किया। बम्बई नगरकी यह प्रथम राष्ट्रीय कन्या पाठशाला थी।

हैं कि वे क्या-क्या काम कर सकते हैं। जिस क्षण लोग अपने कर्त्तव्य-पालनमें अपने प्राणतक न्यौछावर करनेको उद्यत हो जाते हैं तब वे महानतम योद्धा, महानतम पुरुष कहलाते हैं।

जिस देशमें आपने जन्म लिया है, उसके प्रति कर्त्तव्य-पालन करनेसे बढ़कर संसारमें कोई दूसरा काम है ही नहीं। इस नाजुक समयमें भारतीयोंको चाहिए कि वे अपने बच्चोंको अपने देशके प्रति कर्त्तव्य निभानेकी शिक्षा दें। मैं तो उन्हें अपना कर्त्तव्य करते हुए देशके लिए मर जानेको भी कहूँगा। इस कन्या शालाको खोलनेका प्रमुख उद्देश्य यही है। यदि आपने अपने सामने सदा यह उद्देश्य रखा तो आप प्रशंसाके पात्र होंगे। परन्तु यदि आप इस स्कूलमें केवल वही विषय पढ़ाना चाहें जो सरकारी और नगरपालिकाके स्कूलोंमें पढ़ाये जाते हैं तो मैं आपसे कहता हूँ कि इस तरह इस सालके भीतर स्वराज्य पा सकना असम्भव है। हम लोगोंका प्रथम उद्देश्य इसी साल स्वराज्य पा लेना है। और इसी उद्देश्यको ध्यानमें रखते हुए आपको अपने बच्चोंको शिक्षा देनी चाहिए। आपको अपने बच्चोंके दिमागमें अपने देशके लिए स्वराज्य प्राप्त करनेका महत्व अंकित कर देना है और देशकी जरूरतोंके प्रति उन्हें जागरूक बनाना है।

इसलिए मैं कहता हूँ कि आपको इस विद्यालयमें सूत कातना सिखाना चाहिए। जबतक आपमें से प्रत्येक व्यक्ति खद्दर नहीं पहनता तबतक मेरी समझमें नहीं आता कि आपको स्वराज्य कैसे मिल सकता है। यदि आप इस वर्षका अन्त होनेसे पहले सभी विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार कर सकें तो स्वराज्य लेनेमें और उसे कायम रख सकनेमें जरा भी कठिनाई उपस्थित नहीं होगी। इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए आपको पुरुषों, स्त्रियों और बालकोंकी सहानुभूति प्राप्त करनी होगी और इसमें उनकी शक्तियोंका उपयोग करना होगा। हमें इन सबको प्राप्य उद्देश्यकी महत्ता समझानी है। हम भारतवासियोंको चाहिए कि अपने बच्चोंके दिलोंमें देशभक्तिकी भावना भरें। जिस स्कूलका मैं आज उद्घाटन कर रहा हूँ यदि वह ऐसा करे तो मैं सभी अभिभावकोंसे कहूँगा कि वे अपने बच्चोंको इस संस्थामें पढ़नेके लिए भेजें क्योंकि वे ऐसा करके न केवल अपना ही बल्कि अपने देशका भी भला करेंगे।

अभिभावकगण अपने बच्चोंको देशप्रेम सिखाएँ और उन्हें स्वराज्य हासिल करनेका रास्ता भी दिखायें। यदि लड़कोंके माँ-बाप अभीतक यह नहीं पहचान पाये हैं कि देशके प्रति उनका कर्त्तव्य क्या है तो बच्चोंसे यह आशा करना कि वे अपना कर्त्तव्य निभायेंगे, बेकार है। अभिभावकोंसे अपने बेटे-बेटियाँ वहाँ भेजनेको कहनेमें मेरा उद्देश्य यह है कि लड़के-लड़कियाँ खद्दर पहनें और अभिभावकोंको भी खद्दर पहननेके लिए प्रेरित करें। शायद कुछ लोग यह कहें कि गांधी मूर्ख है जो उनसे खद्दर पहनने-को कहता है। इस अवसरपर हर आदमीको देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करना है। आपमें से हर व्यक्तिको खद्दर पहनना है और मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि

आज सुबह मैंने जिस संस्थाका उद्घाटन किया है, उसपर वह अपनी कृपाकी वर्षा करे, उसे समुन्नत करे और सफल बनाये।[1]

महात्मा गांधीने कहा कि मैं आपसे एक बात कहना भूल गया था। श्री बैंकरने[2] मुझे उसकी याद दिलाई है। पहले हमारा इरादा उस समयतक इस तरहके स्कूल खोलनेका नहीं था जबतक कि हमें हमारी जरूरतके लायक शिक्षक न मिल जायें। किन्तु अब हमें श्रीमती कृष्णाबाई और श्रीमती जसलक्ष्मीकी सेवाएँ सुलभ हो गई हैं। श्रीमती कृष्णाबाई इलाहाबादमें क्रास्थवेट गर्ल्स स्कूलकी प्रधानाध्यापिका थीं और जब मैं वहाँ गया था तब उनसे मिला भी था। उस अवसरपर मैंने उनसे तथा वहाँकी महिला शिक्षिकाओंसे असहयोगके बारेमें बातचीत की थी। और कुमारी कृष्णाबाईने मुझसे कहा था कि मैं आपके काममें हाथ बँटानेके उद्देश्यसे बम्बई आ जानेको तैयार हूँ। ये महाराष्ट्रकी हैं और इन्हें इलाहाबादमें रहना पसन्द न था; अपनी शिक्षाके सम्बन्धमें वे अमेरिका हो आई हैं और उन्होंने ऊँची शिक्षा पाई है। वे बम्बई धनोपार्जनकी दृष्टिसे नहीं वरन् अपने देशकी सेवा करने आई हैं। कुमारी कृष्णाबाईके लिए अकेले यह काम कर पाना असम्भव था। वे एक मराठी महिला हैं और हमें गुजराती लड़कियोंकी देखभालके लिए किसी व्यक्तिकी जरूरत थी। इस कामके लिए हमें कुमारी जसलक्ष्मी दलपतराम कवि मिल गई हैं। ये बहन अहमदाबादमें महालक्ष्मी ट्रेनिंग कालेजमें प्रथम सहायिकाका काम कर रही थीं। इस स्कूलको प्रारम्भ करनेसे पहले ही वे अपने पदको त्याग चुकी थीं और अहमदाबादमें आश्रममें रह रही थीं। यद्यपि वे बम्बई-जैसे बड़े शहरमें रहना नापसन्द करती हैं, फिर भी वे देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करने बम्बई आई हैं। किन्तु उन्हें एक कर्त्तव्य पूरा करना है और वह है गुजराती लड़कियोंकी देखभाल। भारतीय पूरा भरोसा रखकर इस स्कूलमें अपने बच्चे भेज सकते हैं और उन्हें इन दो योग्य महिलाओंको सुपुर्द कर सकते हैं।

इसके बाद तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा किया गया और कुछ आभूषण तथा बहुत-सा धन इकट्ठा हो गया। एक पारसी लड़कीने अपनी सोनेकी चूड़ी दी और एक पारसी सज्जनने एक चेक भेंट किया।

श्री गांधीने कहा, बहुतसे लोग मुझसे कहते हैं कि पारसी समाज कोषके लिए कुछ पैसा नहीं दे रहा है। मैं उन्हें बताना चाहता हूँ कि यह सही नहीं है। मुझे पहले भी उनसे मदद मिल चुकी है, अब भी मिल रही है और मुझे पूरा विश्वास है कि आगे भी मिलेगी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३–६–१९२१

१. सरोजिनी नायडूके बोल चुकनेपर गांधीजीने फिर कुछ शब्द कहे।

२. शंकरलाल घेलाभाई बैंकर।

१२५. संदेश : बम्बईमें आयोजित स्त्रियोंकी सभाको[1]

२२ जून, १९२१

श्रीमती मोतीवालाने महात्मा गांधीका एक सन्देश पढ़ा जिसमें उन्होंने लिखा था कि यदि मैं सभामें शरीक न हो सकूँ तो आप लोग मुझे क्षमा कर दें। मैं कई बार अपनी बम्बईकी बहनोंसे मिल चुका हूँ और उनसे बार-बार कहनेको मेरे पास क्या है? मेरा मन भारतको आजाद और निष्कलंक देखनेको छटपटा रहा है। और ईश्वरसे मेरी यही प्रार्थना है कि भारतीय स्त्रियोंमें पवित्रता, निर्भीकता और सादगीका संचार हो। स्त्रियोंके आशीर्वादके बिना इस देशमें धर्मराज्य स्थापित नहीं किया जा सकता। हमें इसी सालके अन्दर विदेशी वस्त्रोंका इस्तेमाल छोड़ देना है और इसके लिए मुझे अपनी बहनोंकी मददकी जरूरत है। स्त्रियाँ चरखा चलाना और खद्दर पहनना अपना धार्मिक कर्त्तव्य समझें। इसके लिए चाहे उन्हें बहुत असुविधा क्यों न उठानी पड़े। उन्हें केवल वही वस्त्र पहनने चाहिए जो उनके अपने हाथके बनाये हुए हों। उन्हें विदेशी वस्त्रोंको इस्तेमाल करना पाप समझना चाहिए। मिलोंमें बना कपड़ा केवल गरीब लोग ही इस्तेमाल करें। मुझे अपने कामके लिए बहुत धनकी जरूरत है और इसके लिए मुझे स्त्रियोंकी मदद चाहिए। यदि वे केवल तिलक स्वराज्य-कोषके लिए समय दे सकें तो मुझे पूरा इतमीनान है कि वे बहुत अधिक धन आसानीसे इकट्ठा कर सकेंगी। मैं अपनी पारसी, हिन्दू और मुसलमान बहनोंको जब इस कामको पूरा करनेमें सचेष्ट पाता हूँ तब मुझे हर्ष होता है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३–६–१९२१

१. यह सभा मारवाड़ी विद्यालय हॉलमें राष्ट्रीय स्त्री-समाजके तत्त्वावधानमें हुई थी जिसकी अध्यक्षता बेगम रफिया सुलतानाने की थी। इस सभामें अली भाइयोंने भी भाषण दिये। सरोजिनी नायडू तथा अन्य लोगोंने स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा किया।

१२६. पत्र : एस० आर० हिगनेलको

लैबर्नम रोड
गामदेवी
बम्बई
२४ जून [१९२१]

प्रिय श्री हिगनेल[१],

मैंने कई बार परमश्रेष्ठके भाषण और अली भाइयोंके बारेमें [प्रकाशित] प्रेस-विज्ञप्तिके सम्बन्धमें पत्र लिखनेका विचार किया। परन्तु जान-बूझकर रुका रहा कि मैं कहीं जल्दबाजीमें कोई कदम न उठा बैठूँ या बिना सोचे कुछ न लिख दूँ। मैं परमश्रेष्ठको सूचित कर देना चाहता हूँ कि उस प्रेस विज्ञप्ति और वाइसराय महोदयके भाषणसे मुझे बहुत ही दुःख हुआ है। मेरे खयालके अनुसार उक्त विज्ञप्ति और भाषण दोनोंसे उस स्थितिपर सही प्रकाश नहीं पड़ता जो मेरी समझमें मेरे शिमलासे रवाना होते समय थी। हमारी मुलाकातोंके विषयमें बहुत प्रश्न पूछे जा रहे हैं। निवेदन है कि या तो भेंटोंका ऐसा सार देते हुए, जिसके मजमूनके विषयमें हम दोनों सहमत हों, एक वक्तव्य प्रकाशित किया जाये या मुझे भेंटोंके बारेमें गोपनीयता बनाये रखनेके उत्तरदायित्वसे मुक्त कर दिया जाये। यह कहना जरूरी नहीं है कि अपनी हदतक मैंने भेंटोंमें जो-कुछ भी परमश्रेष्ठसे कहा है उसे गोपनीय रखनेकी मेरी कोई इच्छा नहीं है।

आशा है कि आप परमश्रेष्ठका निर्णय तार द्वारा सूचित करेंगे। ३० जून तक मेरा पता रहेगा लैबर्नम रोड . . .।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ७५५९) की फोटो-नकलसे।

१२७. भाषण : शिक्षकोंके कर्त्तव्यपर[२]

२५ जून, १९२१

श्री गांधीने कहा कि जब मुझे आपकी ओरसे निमन्त्रण मिला तब अच्छी तरह यह जानते हुए भी कि आप लोग मुझे अधिक न दे सकेंगे, मैंने आपका निमन्त्रण बड़े हर्षके साथ स्वीकार किया, क्योंकि एक अनुभवी शिक्षकके रूपमें मैं महसूस करता हूँ

१. वाइसरायके निजी सचिव।

२. बम्बईके प्राथमिक विद्यालयोंके शिक्षकों और विद्यार्थियोंकी एक सभा माण्डवीमें हुई थी, जिसका आयोजन गांधीजीको तिलक स्वराज्य-कोषके लिए एक थैली भेंट करनेके लिए किया गया था। यह भाषण गांधीजीने इसी अवसरपर दिया था।

कि भारतकी स्वतन्त्रताकी कुंजी शिक्षकोंके ही हाथोंमें है। अपनी भारत-यात्राके दौरान मैं शिक्षकोंसे बराबर यह कहता आया हूँ कि स्वतन्त्रताकी कुंजी और खिलाफत सम्बन्धी अन्याय और पंजाब सम्बन्धी शिकायतोंके निराकरणके उपाय अध्यापकों और अध्यापिकाओंके ही हाथोंमें हैं। मैं स्वीकार करता हूँ कि भारतकी महिलाओंने देशके प्रति अपने कर्त्तव्यको सच्ची भावनाके साथ निभाया है। अगर भारतीय गरीब हैं और दुनियाकी विभिन्न जातियोंकी तुलनामें इतनी गिरी हुई अवस्थामें हैं तो हमारी इस स्थितिके लिए आप भी उतने ही जिम्मेदार हैं जितने कि हमारे शासक। क्योंकि अगर यथा राजा तथा प्रजा कहना सही है तो यथा प्रजा तथा राजा कहना भी गलत नहीं है। इसके साथ ही मैं यह भी कहना चाहूँगा कि लोगोंको वैसे ही अध्यापक भी मिलते हैं जैसे अध्यापकोंके वे पात्र होते हैं। 'भगवद्‌गीता' में कहा गया है कि महत् जन जो कार्य करते हैं शेष लोग भी वही करते हैं। विद्वज्जन और शासक जो काम करते हैं, शेष व्यक्ति भी वही करते हैं। कांग्रेसने एक प्रस्ताव पास किया है जिसमें अध्यापकोंसे भी देशके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करनेका उतना ही अनुरोध किया गया है जितना वकीलोंसे और मुझे पूरा विश्वास है कि जो अध्यापक देशकी सेवा करना चाहते हैं, उन्हें कभी भूखों नहीं मरना पड़ेगा।

जब मैं बहुत बड़ी तादादमें विद्यार्थियोंको स्कूलोंमें पढ़ते देखता हूँ, जब मैं प्रशिक्षण-कालेजोंमें इतने सारे शिक्षकोंको प्रशिक्षण प्राप्त करते देखता हूँ तब मुझे अपने देशके लिए बड़ा दुःख होता है, क्योंकि मुझे पूरा यकीन है कि जो शिक्षक इन कालेजोंसे निकलेंगे वे इस देशकी नई पीढ़ीके शिक्षण-प्रशिक्षणका दायित्व सँभालनेकी दृष्टिसे योग्यतम व्यक्ति नहीं हैं। इन कालेजोंमें इतनी ज्यादा गुलामी है कि अपने देशके भविष्यके प्रति मेरा मन निराशासे भर जाता है। बम्बईके नेशनल गर्ल्स स्कूलकी अध्यापिका श्रीमती जसलक्ष्मीने मुझे अपने अनुभव सुनाये हैं। उनका प्रशिक्षण सरकारी कालेजमें हुआ है। उन्हें मजबूरन उस कालेजको छोड़ना पड़ा, क्योंकि उन्होंने महसूस किया कि जबतक वे इस कालेजमें सरकारकी सेवा करती रहेंगी तबतक आत्मसम्मान और स्वतन्त्रताको सुरक्षित रखना असम्भव है। एक शिक्षित और सम्माननीय महिलाने जब यह बात कही है तब आप अवश्य ही यह अनुभव करेंगे कि सरकारी स्कूलोंमें नौकरी करनेका मतलब सचमुच क्या होता है। संसारके राष्ट्रोंकी तुलनामें भारतके इतना नीचा होनेका एक कारण यह भी है। मुझे आपसे यह कहनेमें कोई संकोच नहीं है कि अन्य लोगोंकी भाँति अध्यापकोंने भी अध्यापनके धन्धेको इसलिए अपनाया है कि इसके द्वारा वे अपनी जीविका अर्जित करना चाहते हैं, इसलिए नहीं कि यह सुन्दर और सौम्य धन्धा है और इससे वे देशका भला कर रहे हैं। जिस तरह वकीलों और डाक्टरोंने अपने-अपने पेशे कमाईके धन्धेके रूपमें अपनाये हैं उसी तरह अध्यापकोंने भी अध्यापन कार्य सिर्फ पैसा कमानेके लिए ही अपनाया है और उसके पीछे अन्य कोई भाव नहीं है। स्वयं मैं भी वकील बनकर भारतसे बाहर चला गया,

क्योंकि मेरे घरवालों ने सोचा कि इस तरह मैं ज्यादा पैसा कमाऊँगा। उस समय मेरे मनमें मातृभूमिकी सेवा करनेका कोई विचार नहीं था। लेकिन बादमें मैंने यह अनुभव किया कि अपने देशकी सेवा करना सबसे अच्छी चीज है। इसलिए मैंने उन सब वस्तुओंको त्याग दिया और अब मैं आप लोगोंसे भी अपील करता हूँ कि आज देश जो महान् बलिदान कर रहा है उसमें आप भी हाथ बँटायें।

नेक और ईमानदार बनना आप लोगोंका कर्त्तव्य है। आपको चाहिए कि बालकोंको नेक, निर्भय और सत्यवादी बननेकी शिक्षा दें। अपने विद्यार्थियोंको ब्रह्मचर्यका पालन करना सिखायें। मैं भारतमें व्याप्त भ्रष्टाचारसे भयभीत हो उठा हूँ और मुझे आशंका है कि अगर हमेशा यही हालत बनी रही तो हम कभी स्वराज्यके योग्य नहीं बन पायेंगे। इन मामलोंमें किसी और देशका अनुकरण करना हमारा काम नहीं है। यह अध्यापकोंका कर्त्तव्य है कि वे अपने विद्यार्थियोंको वीर और सत्यवादी बनायें। हम जिस स्वराज्यकी स्थापना करने जा रहे हैं वह सत्य और न्यायपर आधारित होगा, अन्यायपर नहीं। हम धर्मराज्यकी स्थापना करने जा रहे हैं और ऐसा हम बल-पूर्वक अथवा किसी अन्य उपायसे नहीं करना चाहते। जब हजारों मुसलमान मारनेके लिए नहीं बल्कि मरनेके लिए तैयार रहेंगे, जब हजारों हिन्दू दूसरोंके प्राण लेनेके लिए नहीं बल्कि अपने प्राणोंकी बलि देनेके लिए तैयार होंगे तब आप यह निश्चित मान सकते हैं कि स्वराज्य आपका है। खिलाफतके प्रश्नके साथ-साथ गो-रक्षाका प्रश्न भी हल हो जायेगा।

श्री गांधीने विद्यार्थियोंसे एक बार फिर ब्रह्मचर्यका पालन करनेका अनुरोध किया, क्योंकि इसपर जितना जोर हिन्दू धर्ममें दिया गया है उतना किसी और धर्ममें नहीं दिया गया। भारतीयोंको भ्रष्टाचार भी छोड़ देना चाहिए। हमें अपनी पत्नीके अतिरिक्त सभी स्त्रियोंको माँ, बेटी अथवा बहन समझना चाहिए। जब मैं इस देशमें इतना पाप होते देखता हूँ तब मैं इस बातकी ओरसे निराश हो जाता हूँ कि हमारा स्वराज्य धर्मपर आधारित हो सकेगा। अगर हम धर्मराज्य स्थापित करनेके लिए कृत-संकल्प हों तो हमारे अध्यापकोंको तुरन्त इस बातका एहसास हो जाना चाहिए कि उन्हें विद्यार्थियोंको उचित भावनाके साथ प्रशिक्षित करना है। जब हम लड़के और लड़कियोंके मस्तिष्कमें सही बातें उतार सकेंगे तभी हमारे देशको अच्छे नागरिक प्राप्त हो सकेंगे। अपने धर्मराज्यके लिए हम सत्य और न्यायमें निष्ठा रखनेवाले पुरुष और स्त्री चाहते हैं। लेकिन अगर अध्यापक अपने उच्चाधिकारियोंसे झूठ बोलते हैं तो वे बालकोंसे सच बोलनेकी कैसे अपेक्षा कर सकते हैं। विद्यार्थी अपने अध्यापकोंसे ही सबक सीखेंगे। इसलिए उन्हें व्यक्तिगत उदाहरणके द्वारा सिखाना होगा। हमें स्वयंको अपने पापोंसे मुक्त करना चाहिए, हमें उन वस्तुओंसे मुक्त होना चाहिए और अनाचारका गुलाम नहीं बनना चाहिए।

जबतक भारतके स्त्री-पुरुष देशके प्रति अपने कर्त्तव्यको नहीं पहचानते और खद्दरके स्थानपर महीन विदेशी कपड़ेका प्रयोग करते रहेंगे तबतक वे स्वराज्य प्राप्त

नहीं कर सकेंगे। अगर आप लोग विदेशी कपड़ेका पूर्णतया त्याग नहीं करते तो आप इस वर्ष स्वराज्य कतई हासिल नहीं कर सकेंगे। आपको यह नहीं समझना चाहिए कि चूँकि आपने एक करोड़ रुपया इकट्ठा कर लिया इसलिए आप आसानीसे स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे। स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए आपको और भी बहुतसे काम करने पड़ेंगे। आप जो पैसा इकट्ठा करेंगे, वह स्कूल और कालेज खोलने तथा अन्य बहुतसे कार्योंमें लगाया जायेगा। लेकिन अभी और भी बहुत काम करने हैं। इसलिए मैं अध्यापकों — स्त्री और पुरुष दोनों वर्गों — से अनुरोध करूँगा कि आप अपने शरीरको यत्नपूर्वक पवित्र तथा शुद्ध रखें। उसकी उतनी ही सार-सँभाल करें जितनी कि आप अपने मनकी करते हैं। आपको अपने शरीरको भी उसी तरह पवित्र रखना चाहिए जिस तरह आप अपनी आत्माको रखते हैं। आपको ऐसा करना ही होगा। आपको विदेशी कपड़ेका प्रयोग करना छोड़ना है और विद्यार्थियोंको सिखाना है कि वे अपने तनपर विदेशी कपड़ेका एक टुकड़ा भी न रखें और सिर्फ खद्दर ही पहनें। जबतक भारतीय वैसा नहीं करेंगे तबतक देशकी गरीबी कभी दूर नहीं होगी। भारतीयोंके लिए ऐसा करना जरूरी है, सो इसलिए कि इस तरह उनकी स्त्रियोंके शीलकी रक्षा हो सकेगी क्योंकि तब उन्हें पत्थर तोड़नेके लिए अपने घरोंसे बाहर सड़कोंपर नहीं जाना पड़ेगा। आपको हर घरमें चरखेका चलन कराना चाहिए और गरीब तथा अमीर स्त्रियाँ सभी कातनेका काम अपनायें। अमीर स्त्रियाँ कहानियाँ आदि पढ़नेमें अपना समय गँवाकर देशका क्या भला करेंगी? आज भारतमें जिस वस्तुकी जरूरत है वह है स्वदेशी कपड़ेका सर्वव्यापी प्रयोग और यह आप सिर्फ चरखेके द्वारा ही कर सकते हैं।

अगर सब अपने-अपने कर्त्तव्यका पालन करें तो मुझे पूरा विश्वास है कि हम इस वर्ष सरलतासे स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं। अपने उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए हमारे देशको स्वदेशी, असहयोग और मद्यत्यागकी समान रूपसे आवश्यकता है। आपको अपने समाजको शराबके व्यसनसे मुक्त कराना है और उसके लिए आपको शराबकी दुकानों-पर यह संकल्प लेकर जाना चाहिए कि आप अपने देशभाइयोंको शराब न पीनेके लिए समझाते हुए प्राण तक दे देंगे। जब आप इन स्थानोंपर जायें तब आप मृत्युके लिए भी तैयार रहें। शराबकी दुकानोंपर पहरा देती हुई पुलिस अथवा दुकानदारोंके हाथों आपमें से कुछ व्यक्ति मारे भी जायें तो स्वराज्य और पास आ जायेगा। आपको शराबके व्यापारियोंके हितोंकी रक्षा करनेवाले व्यक्तियोंके हाथों मरनेके लिए तैयार रहना चाहिए। आज ही मैंने आर्थर रोडपर हुई वारदातके बारेमें पढ़ा है और मुझे दुःख है कि वार सहनेके लिए मैं वहाँ नहीं हुआ।

शिक्षकोंसे मैं एक बात और कहना चाहूँगा। आपको हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियोंके बच्चोंको परस्पर एक-दूसरेके प्रति पूर्ण मैत्री-भाव रखना सिखाना चाहिए। हमें उन सबको दोनों जातियोंके बीच पूरी एकता बनाये रखनेकी सीख देनी है। जब-

तक दोनों अपने-अपने धर्मोंसे प्यार नहीं करते और ठीक तरहसे उनका पालन नहीं करते तबतक इन दोनोंके बीच पूर्ण एकता होना असम्भव है। यह अभिप्रेत नहीं है कि अपने-अपने धर्मोंको त्यागकर हिन्दू मुसलमान और मुसलमान हिन्दू बन जायें।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आपको अपने दलित वर्गों, ढेढ़ों और भंगियोंका उत्थान करना है। जबतक आप इन्हें दलित रखेंगे तबतक समाजके उच्च-वर्ग स्वयं भी ढेढ़ और भंगी बने रहेंगे। क्योंकि उन्हें नीचे रखकर आप स्वयं अपनेको उनके नीचे गिराते हैं। मैं आपसे भंगियोंके साथ रोटी-बेटीका व्यवहार करनेके लिए नहीं कहता। मैं तो सिर्फ यही चाहता हूँ कि आप इनके साथ भाइयोंका, मानवोंका-सा व्यवहार करें। जबतक ये लोग दलित रहेंगे तबतक स्वराज्य प्राप्त करना असम्भव है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७–६–१९२१

१२८. भाषण : बम्बईके स्वागत-समारोहमें[1]

[२६ जून, १९२१ के पूर्व]

दूसरे स्थानकी तो मैं नहीं जानता परन्तु यहाँ मैं पैसेके लोभसे नहीं आया हूँ। आपके आमन्त्रणको मैंने तुरन्त स्वीकार कर लिया क्योंकि अस्पृश्य भाइयोंकी विडम्बनाओंसे मैं परिचित हूँ। आपके दुःखको मैं जानता हूँ। इस वर्ष मैं हिन्दू धर्मके कलंक — अस्पृश्यता — को दूर करनेके लिए जुटा हुआ हूँ। स्वराज्यमें अनन्त शक्ति है, अगर उसमें अस्पृश्यता दूर नहीं होती तो वह धर्मराज्य — स्वराज्य — नहीं है। गन्दा, मैला, दुराचारी अथवा चाहे जैसा भी व्यक्ति धर्मके सिद्धान्तसे तो अस्पृश्य नहीं माना जाता, दयाके सिद्धान्तसे भी कदापि नहीं। अस्पृश्यसे दूषित होनेके सिद्धान्तको मैं हिन्दू धर्मका अंग नहीं मानता। जिसमें सत्य और अहिंसा न हो वह धर्म नहीं है। उच्च कौम आपको बिना-किसी शर्तके स्पृश्य मानने लगे उसके लिए आपका क्या कर्त्तव्य है? किसीने कहा कि आप शुद्धि कीजिए लेकिन आपमें किसी प्रकारकी अशुद्धि हो ही नहीं सकती। मद्य और मांसका सेवन करनेवाले को तो कोई अस्पृश्य नहीं मानता। फिर भी आपको मद्यमांस आदिका त्याग करना चाहिए। कोई ब्राह्मण अगर मद्यमांसका सेवन करता हो तो मैं उसके यहाँ न जाऊँ, आपसे भी मैं कमसे-कम इतनी स्वच्छताकी अपेक्षा अवश्य करता हूँ। मेरी खातिर ही नहीं, स्वयं अपनी खातिर भी आपको स्वच्छता [के नियमों] का पालन करना चाहिए।

ब्राह्मण चाहे जो करे उससे आपको क्या? आप स्वयं खुशहाल बनें। एकने मुझसे पूछा कि मैं आपको असहयोग क्यों नहीं सिखाता? अब यदि स्वयं हम आपसमें अत्याचार करते हों तो हम सरकारको अत्याचारी कैसे कह सकते हैं? असहयोगका बहाना

१. अन्त्यजों द्वारा आयोजित इस स्वागत-समारोहमें गांधीजीको अभिनन्दन-पत्र भेंट किया गया था।

लेकर कोई ढोंग नहीं रचा जाना चाहिए। मेरे साथी दम्भी हों तो मैं उनको भी छोड़ दूँ। आपमें से जबतक कुछ-एक अच्छे व्यक्ति नहीं हो जाते तबतक आप असहयोग नहीं कर सकते। लोगों के और आपके बीच मैं एलची बना हुआ हूँ। मैं एक शुद्ध हिन्दूके रूपमें ही आपसे यह कहता हूँ। गांधी आपको [असहयोगके लिए] तैयार करनेके लिए जब चाहेगा तब चला आयेगा। आप शुद्ध बननेका काम करें। हमें शुद्ध बलिदान देना है। और मैं अपना काम करूँगा।

बहनो! मैं आपके हाथोंमें चरखे और करघे देखना चाहता हूँ। आपको तो सबको ढकना है। भाई शंकरलाल दाँतमें दर्द होनेकी वजहसे नहीं आ सके। हम आये हैं सो कोई घर जाकर नहानेके लिए नहीं। कवि दलपतराम डाह्याभाईकी[1] पौत्री जसलक्ष्मी यहाँ आई है। वह आपके लिए मददगार साबित होगी।

[गुजरातीसे]

गुजराती, २६-६-१९२१

१२९. गुजरातमें आत्मत्याग

गुजरातने राष्ट्रके कार्यके लिए कोई बड़ा आत्मत्याग किया है, सो मैं नहीं जानता। भड़ौंच परिषद्के समय लोगोंने जिस आत्मत्यागका परिचय दिया उसे मैं गुजरातका आत्मत्याग नहीं मानता। वह तो गुजरातमें किया गया त्याग है, जब गुजरातमें अनेक स्त्री-पुरुष देश-कार्यके लिए सर्वस्व अर्पण करेंगे तभी हम गुजरातके आत्मत्यागकी बात कर सकेंगे।

लेकिन जिन भाइयोंने भड़ौंच परिषद्के समय अपना सर्वस्व देनेका निश्चय किया था उन भाइयोंका आत्मत्याग गुजरातकी प्रतिज्ञाका पालन करनेमें कितना सहायक हुआ सो तो हम कभी न जान सकेंगे। लेकिन मेरे जैसे श्रद्धालु इतना तो जरूर मानेंगे कि यदि गुजरात तीस तारीखको अपनी परीक्षामें उत्तीर्ण हुआ तो उसका मुख्य कारण भड़ौंचमें किया गया आत्मत्याग होगा।

चाहे जो भी हो, अगर गुजरात इसी वर्षके अन्दर-अन्दर स्वराज्य प्राप्त करना चाहता हो तो उसे सर्वस्व-त्यागी कार्यकर्त्ताओं — सेवकों — की सख्त जरूरत है। हिन्दुस्तानमें हम चाहे किसी ओर दृष्टिपात करें, हम यही देखेंगे कि आजतक गुजरातने सब प्रान्तोंकी अपेक्षा कमसे-कम त्याग किया है। महाराष्ट्र सबसे ऊपर आता है। बंगालके त्यागको मैं सनकसे भरा मानता हूँ। बंगालियोंने सर्वस्व दे देनेसे इनकार नहीं किया है। पंजाबमें भी लोगोंने कुछ कम त्याग नहीं किया। आर्यसमाजकी रचनामें त्यागवृत्ति निहित है। सिखोंके त्यागको भी कम नहीं कहा जा सकता।

लेकिन यह बात हम गुजरातके लिए नहीं कह सकते। दो नवयुवकोंके 'भारत सेवक समाज' में शामिल होनेपर ही गुजरात आश्चर्यचकित हो गया था। सूरतके दो

१. दलपतराम डाह्याभाई त्रिवेदी (१८२०–१८९२); प्रसिद्ध गुजराती कवि।

सज्जन कमाई छोड़कर आश्रम चलाने लगे, तो हमें यह बहुत बड़ा त्याग जान पड़ा। पंजाबके एक प्रोफेसरसे जब मैंने यह बात कही तब वे हँसे और मुझसे कहने लगे "मैं तो इसे त्याग ही नहीं मानता। उन्होंने कौनसा सर्वस्व अर्पण कर दिया है? वे क्या कष्ट उठाते हैं? क्या उन्हें इस बातकी फिक्र है कि कल रोटी मिलेगी या नहीं?"

इस बातको वर्षों बीत गये हैं। उक्त प्रोफेसरने इसके बाद जेलयात्रा भी की और तब उनके पास फूटी कौड़ी भी न थी।

सर्वस्व-त्याग करनेवाले जब असंख्य नवयुवक तैयार होंगे तभी गुजरात अपना मस्तक ऊँचा कर सकेगा। तभी गुजरात स्वराज्यमें अपना पूरा योगदान दे सकेगा। प्रत्येक प्रान्तका कर्त्तव्य है कि वह स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए पूर्ण प्रयत्न करे। यदि इस वर्ष स्वराज्य नहीं मिलता तो यह बात प्रत्येक प्रान्तकी नाक कटनेके समान होगी। कोई प्रान्त दूसरेको दोष नहीं दे सकता। जो प्रान्त सम्पूर्ण योग्यता प्राप्त कर लेगा वह स्वयं स्वराज्य लेगा और दूसरे प्रान्तोंको तत्क्षण तैयार करेगा। स्वराज्य लेनेका अर्थ हिन्दुस्तानके अविश्वासको दूर करना और उसमें आत्मश्रद्धा जाग्रत करना है। अपनेको भेड़ माननेवाले सिंहोंमें से अगर एकको भी वास्तविक स्थितिका ज्ञान हो जाये तो अन्य लोगोंको भी अपने सिंहत्वका ज्ञान होनेमें देर नहीं लगेगी। एकमें भी स्वराज्यकी शक्ति आई कि खिलाफत और पंजाबका फैसला हुआ ही समझो। इस शक्तिके बारेमें मैं किसी और समय लिखनेका विचार रखता हूँ। अभी तो मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि असहयोगके लिए आवश्यक शक्ति प्राप्त करनेके लिए अनेक युवकों और महिलाओंको सम्पूर्ण त्याग करना चाहिए।

सब दे दें तो खायें क्या? भीख माँगकर खाने और सेवा करनेकी अपेक्षा तो सेवाका विचार छोड़कर कुटुम्बका पेट भरना ही उचित है। 'भीख' माँगकर सेवा करनी हो तो उपर्युक्त विचार ही उचित है। लेकिन प्रत्येक मजदूर अपनी मजदूरी पानेके लायक है और मैं जिस सेवाका विचार कर रहा हूँ वह सेवा लोगोंका नेतृत्व करनेकी नहीं बल्कि सच्चे अर्थोंमें लोगोंकी सेवा करनेकी है। सच्चा स्वयंसेवक वही है जो वैतनिक सेवककी अपेक्षा अधिक परिश्रमी, अधिक ईमानदार और अधिक शक्ति-सम्पन्न हो, जो अधिक नम्र और अधिक आज्ञाकारी हो। ऐसे स्वयंसेवकको सिर्फ पेट भरने योग्य वेतन दिया जाता है। यह भिक्षापर गुजारा करना नहीं वरन् देशकी सच्ची सेवा है। वह अधिक देता है और कम लेता है। जो अपने पास धन जमा करके देशकी मुफ्त सेवा करनेका दावा करता है वह सर्वस्व प्रदान करनेवाले स्वयंसेवकसे कम उतरता है। यदि सामान्य अनुभव इससे उलटा हो तो उसका अर्थ यह है कि सर्वस्व अर्पण करनेवाले ने चोरी की है। तात्पर्य यह कि उसने अपना धन तो दिया लेकिन अपना मन और अपना शरीर नहीं दिया। इतना ही नहीं; प्रायः सर्वस्व अर्पण करनेका दावा करनेवाला व्यक्ति अधिक लेता है और कम देता है। यदि मैं अपने पाससे एक लाख रुपया देकर देशको लाखों रुपयोंके खर्चमें डाल देता हूँ और उसके काममें अपना पूरा समय और मन नहीं लगाता तो मैं अवश्य भिखारी बन जाऊँगा बल्कि मेरी स्थिति भिखारीसे भी दयनीय हो जायेगी। मैं ऐसे [अधूरे] आत्मत्यागका

वर्णन नहीं कर रहा हूँ। मैं जिस आत्मत्यागकी माँग कर रहा हूँ उसमें भिखारीपनको अवकाश ही नहीं है। यह आत्मत्याग छिपानेसे छिप नहीं सकता और जबतक देशमें ऐसी स्थिति उत्पन्न नहीं हो जाती तबतक स्वराज्यका विचार करना निरर्थक है। जब कुछ-एक स्त्री-पुरुष सर्वस्व होमनेके लिए तैयार होंगे तभी स्वराज्यकी सेना उठ खड़ी होगी, तभी उसके लिए सामान्य त्याग करनेवाले निकलेंगे और उनसे स्वराज्यकी शोभा होगी।

यह समय ऐसे त्यागका है। [गुजरात] प्रान्तीय समितिने स्वयंसेवकोंकी माँग की है। जिनके पास शक्ति नहीं है, जिन्हें और कोई धन्धा नहीं सूझता भले ही वे लोग सरकारके पास अर्जी भेजें लेकिन मुझे ऐसे लोगोंकी तलाश है जो अपना सर्वस्व अर्पण करें। देश उन्हें जितना दे उतनेमें अपना निर्वाह करें और उसमें गौरव मानें। जिन्हें और कुछ नहीं सूझता, यदि ऐसे लोग स्वराज्यके सेवक बनें तो उनके द्वारा हमें धर्मके इस महायुद्धमें विजय मिलनेवाली नहीं है। इससे मैं उम्मीद करता हूँ कि जिन भाइयोंने त्याग किया है उनकी छूत और लोगोंको भी लगेगी और मुझे गुजरातमें किये गये त्यागका वर्णन करनेके बदले गुजरातके त्यागका वर्णन करनेका शुभ प्रसंग प्राप्त होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६–६–१९२१

१३०. माधुरी और पुष्पा

माधुरी और पुष्पा दोनों छः या सात वर्षकी लड़कियाँ है। तिलक स्वराज्य-कोषमें दान लेनेके लोभसे मैं एक परिवारमें पहुँच गया।

परिवारके स्नेही स्त्री-पुरुषोंसे मैं घिरा हुआ बैठा था। इस बीच माधुरी धीरे-धीरे वहाँ आ पहुँची। मैंने उसे पास बुलाया। दुर्भाग्यसे मुझे कुर्सीपर बिठाया गया था। इस परिवारमें मेज कुर्सीका इस्तेमाल एक सामान्य बात थी। कुर्सीपर बैठा हुआ मैं माधुरीको गोदमें तो कैसे ले सकता था? मैंने उसे अपने निकट खींच लिया और उसके सिरको अपनी गोदमें रख लिया। माधुरी धीमे स्वरमें बोली:

"मैंने आपके साथ छल किया है।"

"मुझे तो बड़े लोग छलते हैं, बच्चे कभी नहीं छलते। तू मेरे साथ कदापि छल नहीं कर सकती।"

इस तरह मैंने हँसकर उत्तर दिया। मैं माधुरीकी मुखमुद्राको ध्यानसे देख रहा था।

"मैंने सचमुच आपको छला है, मैंने आपको सिर्फ डेढ़ रुपया ही दिया," माधुरीने हिम्मत करके उत्तर दिया।

"तब तो मैं सचमुच छला गया। तू तो इतने सारे गहने पहने हुए है और मुझे केवल डेढ़ रुपया ही दिया?"

यह कहकर मैंने माधुरीके नन्हेंसे हाथको अपने हाथमें ले लिया। उसकी चूड़ी मेरे हाथमें नाचने लगी। मैंने कहा :

"अब तो तुझे प्रायश्चित्त करना ही चाहिए। नन्हें बच्चे बिलकुल निर्दोष होते हैं, वे किसीको छलते नहीं। प्रायश्चित्त करना अर्थात् पाप धोना, मैल साफ करना। अब तो तुझे मैल अवश्य साफ करना चाहिए।"

"यह मैल अब कैसे धुल सकता है? सच तो यह है कि मैंने आपको छला है।"

"मैल साफ करनेका सहज उपाय है। तू यह तो समझ ही गई है कि तुझे असलमें गहने देने चाहिए थे इसीसे तूने कहा कि तूने मेरे साथ छल किया है। अब तो तू मुझे सारे गहने दे दे तो तेरा पाप धुल जायेगा।"

अभीतक तो माधुरीका मुख चमक रहा था, वह अब कुछ मलिन पड़ गया। मैं समझ गया और मैंने कहा :

"बच्चोंको गहनोंसे क्या लेना-देना? हम तो अपने कामके द्वारा ही शोभा पा सकते हैं? गहने तो खो भी जाते हैं। बेहतर तो यह है कि उन्हें अच्छे कामके लिए दे दें। तू तो बहुत समझदार लड़की जान पड़ती है। इसके अतिरिक्त तू अपने गुनाह-को भी स्वीकार करती है। तुझे खुशी-खुशी सब गहने दे देने चाहिए। उनसे मैं गरीबोंको चरखे दूँगा। तेरे जैसे बच्चोंको पढ़ाऊँगा। तेरी जैसी अन्य लड़कियोंने भी अपने गहने दिये हैं।" मैं रुका।

माधुरीके कानोंमें छोटे माणिककी दो लौंगें थीं। हाथमें सोनेकी दो चूड़ियाँ और एक काँचकी चूड़ी थी। वह धीमे स्वरमें बोली :

"मैं यह काँचकी चूड़ी दूँ तो क्या ठीक होगा?"

इस बच्चेको क्या उत्तर दूँ? इसे अपने साथ ले जाकर इसे अपनी बेटी बना लूँ? लेकिन मेरी तो ऐसी कितनी ही बेटियाँ हैं। फिलहाल तो मैं केवल कृपण बनिया हूँ, लेना ही जानता हूँ; इसलिए मैंने कहा :

"तेरी काँचकी चूड़ीको भी मैं पैसेमें बदल दूँगा; लेकिन मुझे तो तेरे सारे गहने चाहिए। उन्हें देनेमें कौन-सी बड़ी बात है? एक तो तेरा पाप धुल जायेगा और मुझ जैसेका काम बन जायेगा। तेरे गहने स्वराज्य प्राप्त करनेमें हमारे काम आयेंगे। क्या मुझे सब गहने नहीं देगी?"

"मैं अपनी सोनेकी चूड़ियाँ तो कतई नहीं दूँगी। लेकिन क्या आप (लौंगोंकी और संकेत करते हुए) यह लेंगे?"

"यह तो तूने ठीक कहा। लेकिन अगर तू मुझे अपनी चूड़ियाँ भी दे दे तो कितना अच्छा हो?"

माधुरी कुछ मुरझा-सी गई। मैंने उसे चूमा और कहा — "अच्छा ठीक है, मुझे अपनी लौंगें ही दे दे।"

माधुरी दौड़ी गई। एक मिनट बाद वापस आई। लौंगें उतारनी शुरू कीं, इस बीच मैं बोला : "तूने माँसे अनुमति ले ली है?"

"हाँ, माँने अनुमति दे दी है।"

लौंगें उतारकर मेरे हाथमें धर दीं, एक लौंग गिर गई, माधुरीने ध्यानपूर्वक उसे ढूँढ़कर मुझे दे दिया।

लेकिन मेरा लोभ किसी तरह न जाता था। मेरी नजर चूड़ियोंसे हटती ही न थी। मैं अभीतक इस बच्चीका नाम नहीं जानता था। यह भी नहीं जानता था कि वह किसकी लड़की है। मैंने अब उसका नाम जान लिया और उसके लायक पिताको भी पहचान लिया और बोला :

"ओ माधुरी! इस चूड़ीमें इतना क्या लोभ? तेरी जैसी निर्दोष लड़कीको गहनोंसे क्या काम? क्या तू अपनी चूड़ियाँ भी न देगी?"

माधुरी पिघली। उसने अपने हाथसे ही चूड़ी उतारकर मेरे हाथमें धर दी। मुझे लगा कि मैं जीत गया।

लेकिन जीत तो माधुरीकी ही हुई। इस बालिकाने मेरे मनको हर लिया। मुझे मन-ही-मन उसके माता-पितासे ईर्षा हुई। मैंने परमात्मासे प्रार्थना की कि "हर माता-पिताके ऐसे बच्चे हों।" स्वराज्य प्राप्तिके विषयमें मेरा विश्वास और भी दृढ़ हो गया। मैंने माधुरीसे कहा :

"तूने कमाल ही कर दिया। अब अगर तू दूसरी चूड़ी देगी भी तो नहीं लूँगा। लेकिन तूने इतना जो दिया है सो क्या खुश होकर ही दिया है? तुझे वापस लेना हो तो ले ले।"

ऐसा कह मैंने गहने उसके आगे रख दिये।

"यह तो मैंने आपको खुशी-खुशी दिये हैं। वे मुझे वापस नहीं चाहिए।"

मेरा सवा सेर खून बढ़ गया।

मैं बहनोंके दर्शन करनेके लिए दूसरी कोठरीमें गया। मेरे और माधुरीके संलापको दूसरे बच्चे भी सुन रहे थे।

(२)

पुष्पाने, जो पड़ोसीकी लड़की थी, अपनी चूड़ी उतारकर मेरे हाथमें रख दी।

"तूने माँसे आज्ञा ले ली है?"

"हाँ जी, मुझे माँने आज्ञा दी इसीसे मैं यह चूड़ी दे रही हूँ।"

"इन सब गहनोंको लेनेकी मेरी जो शर्त है, क्या तू उसे जानती है? जो लड़कियाँ मुझे गहने देंगी वे जबतक स्वराज्य नहीं मिल जाता तबतक अपने पितासे वैसे ही नये गहनोंकी माँग नहीं कर सकेंगी। उसी तरहके और गहने हों और अगर पहननेका मन करे तो पहन सकती हैं। लेकिन फिलहाल नये नहीं बनवाये जा सकते।"

"मेरे पास ऐसी दूसरी चूड़ी है। मैं नई नहीं बनवाऊँगी। मैंने खुशीके साथ अपनी चूड़ी दी है।"

माधुरी देख रही थी। माँके साथ कुछ बात भी कर रही थी। उसने तो उपर्युक्त काँचकी और सोनेकी चूड़ियाँ भी उतारकर मेरे हाथमें धर दीं!

"यह काँचकी तो ले लेता हूँ। लेकिन मैंने कहा था कि अगर तू दे तो भी मैं सोनेकी चूड़ी नहीं लूँगा। इसलिए यह तू मुझे मत दे। तूने तो, बहन, बहुत दिया है।"

"मैं तो आपको दे चुकी हूँ। मुझे यह नहीं चाहिए। मैंने आपको खुशीसे दी है; इसे आप रखें।"

माधुरीने मुझे पराजित कर दिया। मैंने अपना वचन भंग किया। उपर्युक्त चूड़ी मेरे हाथमें देकर, खाली हाथ और खाली कानवाली माधुरी मुझे तो और भी ज्यादा सुन्दर लगी। मैंने उसे अपने हृदयसे लगा लिया।

मैं हर्षसे पुलकित हो उठा, मैंने ईश्वरको धन्यवाद दिया।

इसके बाद माधुरी 'काम' में लग गई। उसने दूसरी लड़कियोंके हाथोंको खाली कराना शुरू कर दिया। उसमें उसे अतिशय सफलता मिली।

लेकिन क्या उसकी सफलता-असफलतापर ईश्वर उसका मूल्यांकन करनेवाला है? उसका वचन तो यह है कि "तू कर्म कर; फल तो मेरे ही हाथमें रहने दे।"

माधुरीने तो अपने 'कर्म' को भली-भाँति निभाया। संसारको दिखानेके लिए नहीं बल्कि अपने छोटेसे शरीरमें वास करनेवाली विशाल आत्माको प्रसन्न रखनेके लिए।

माधुरी और पुष्पाको खादी पहनने और चरखा चलानेकी सलाह दे और परिवारकी स्त्रियोंसे खादी और चरखेके सम्बन्धमें वचन ले, माधुरी और पुष्पाकी प्रशंसा करता हुआ मैं वहाँसे विदा हुआ।

ऐसे बच्चोंके निर्दोष यज्ञसे भी यदि हमें इसी वर्ष स्वराज्य नहीं मिलता तो हमारे तथाकथित बुजुर्गोंके पापका पुंज कितना विशाल होगा?

भगवन्! निर्दोष माधुरी और पुष्पा-जैसे बच्चोंको इस भूमिपर सदैव भेजते रहो। हम सब स्त्री-पुरुष ऐसे बच्चोंकी पवित्र आत्माको प्रणाम करें और उनसे कुछ सीखें।

माधुरी और अपने बीच हुए इस संवादको मैंने तीस घंटे बाद लिखा है और जहाँतक मुझे याद पड़ता है मैंने उसे अक्षरशः यहाँ प्रस्तुत किया है। भाषा भी बच्चोंकी होनेके कारण मैंने उसे बिना किसी आडम्बरके लिखा है और मैं देख रहा था कि बच्चोंकी भाषा अत्यन्त शुद्ध थी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६–६–१९२१

१३१. इन चार दिनोंमें हमारा कर्त्तव्य

३० जून, बृहस्पतिवार समीप आ रहा है। 'नवजीवन' पाठकोंके हाथमें शनिवारको आयेगा। बृहस्पतिवारको गुजरातकी तथा हिन्दुस्तानकी प्रतिज्ञा पूरी होगी।

१. लोकमान्य तिलक महाराजकी स्मृतिमें स्वराज्यके लिए गुजरातको दस लाख रुपया इकट्ठा करना चाहिए।

२. कांग्रेसमें तीन लाख सदस्योंकी भरती करना चाहिए।

३. एक लाख चरखोंका इन्तजाम करना चाहिए।

हम अगर निश्चय करें तो चार दिनमें बाकी बचे सारे कामको पूरा कर सकते हैं।

'नवजीवन' का प्रत्येक पाठक, चन्दा उगाहनेके लिए किसीकी राह देखे बिना, समीपके किसी निश्चित स्थानपर अपनी सामर्थ्य-भर पैसा दे और रसीद ले आये।

प्रत्येक पाठक अपने साथीसे चन्दा देनेका आग्रह करे।

प्रत्येक पाठकको, अगर उसकी आयु २१ वर्षकी हो चुकी हो और वह अभी-तक कांग्रेसका सदस्य न बना हो तो, तनिक भी विलम्ब किये बिना सदस्य बन जाना चाहिए तथा दूसरोंसे वैसा करनेके लिए कहना चाहिए।

प्रत्येक पाठक, अगर अभी तक चरखा न खरीदा हो तो, खरीद ले और कातना सीख ले।

ये चार दिन अमूल्य हैं, वे फिर नहीं आनेवाले, ऐसा समझकर प्रत्येक पाठक जो समय बचे वह सारा समय सार्वजनिक कार्यमें ही दे।

प्रत्येक पाठक राष्ट्रीय कार्यको अपना कार्य समझ उसे तेजीके साथ करे।

कोई यह न समझ ले कि अब चार दिनोंमें क्या हो सकता है?

चार दिनोंमें हजारों व्यक्ति जन्म लेंगे और हजारों मौतकी गोदमें सो जायेंगे।

एक ही रातमें रामचन्द्र-जैसेका भविष्य बदल गया, एक ही दिनमें हरिश्चन्द्रने सत्यकी खातिर फकीरी ली, एक ही दिनमें युधिष्ठिर राज्य हार गये। मनुष्य जीवन — लोकजीवन — में एक दिनका मूल्य कम नहीं होता तो फिर चार दिनोंका तो कहना ही क्या? यदि गुजरात अपने पराक्रमसे स्वराज्य — धर्मराज्य — प्राप्त करना चाहता हो तो गुजरातको इस प्रथम परीक्षामें पूरे अंक प्राप्त करने चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६–६–१९२१

१३२. काठियावाड़ियोंसे

जैसे-जैसे जूनकी अन्तिम तारीख समीप आती जाती है वैसे-वैसे मेरी दृष्टि काठियावाड़की ओर जा रही है। अभी तो मैं केवल काठियावाड़की पैसे-सम्बन्धी स्थितिके बारेमें ही लिखना चाहता हूँ। अन्य विषयोंके सम्बन्धमें बाद में लिखनेकी उम्मीद करता हूँ।

स्वराज्यका कार्य समस्त भारतवर्षका कार्य है। इसमें देशी राज्योंका स्वार्थ भी कोई कम नहीं है। देशी राज्याधिकारी जानते हैं कि स्वराज्य आन्दोलनसे उनका बल बढ़ गया है। देशी राज्योंकी रैयत जानती है कि उसका बल बढ़ गया है।

यह आन्दोलन राजा, सत्ता अथवा धनके नाश करनेका नहीं बल्कि इन सबको स्वच्छ करनेका आन्दोलन है। जिस अंशतक पाखण्ड घटेगा उस हदतक स्वराज्यकी नलीका पारा चढ़ेगा। यह प्रवृत्ति पाखण्ड, अत्याचार और अधर्मका नाश करनेवाली है।

इस प्रकारकी इस प्रवृत्तिमें काठियावाड़के राजा और प्रजा क्या योगदान देंगे? अभी तो कुछ नहीं दिया है। काठियावाड़ चाहे तो करोड़ रुपया होनेमें जो कमी रह गई है उसे पूरा कर दे। काठियावाड़के साहसी लोग व्यापारकी खातिर अनेक स्थानोंपर फैल गये हैं। वे जहाँ हैं वहाँ पैसा दे रहे हैं। मेरी इच्छा है कि वे और भी अधिक दें। तथापि उनका यह योगदान एक भारतीयके रूपमें है। लेकिन काठियावाड़ी गुजरातीके रूपमें वे काठियावाड़से क्या भेजेंगे? गुजरातके दस लाख चन्देमें क्या देंगे? अथवा हिम्मत करके क्या वे गुजरातके चन्देको दूना नहीं कर सकते?

पोरबन्दर, राणावाव, कुतियाणा, बाँटवा, जेतपुर तथा धोराजीके मेमन अगर चाहें तो अपने बीचमें से ही करोड़ रुपया इकट्ठा कर सकते हैं। जामनगरका एक ही मेमन चाहे तो साठ लाखकी कमी पूरी कर सकता है।

काठियावाड़का एक ही राजा चरखेको धर्मको समझ ले तो सिर्फ उसके निमित ही स्वराज्य-कोषमें करोड़ रुपया दे सकता है।

लेकिन मैं जानता हूँ कि मुझे ऐसी आशा नहीं रखनी चाहिए। राजाओंमें अथवा मेमनोंमें ऐसी श्रद्धा नहीं उपजी है। इस बारका चन्दा सबकी श्रद्धाका माप-दण्ड है।

अपने रोगके उपचारके लिए हम कितना पैसा देते हैं? हिन्दुस्तानके रोगको अपना माननेवाले हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई अथवा यहूदी कितने हैं? कितने राजा और रंक हैं? हिन्दुस्तानके भयंकर क्षय रोगके लिए सब कितना देनेको तैयार हैं? यह हम सबकी कसौटी हो रही है। तीस जूनतक प्रत्येक भारतवासीको उत्तर देना है। प्रत्येक काठियावाड़ीको अपने कर्त्तव्यका पालन करना है।

हिन्दुस्तानको क्षय हो गया है। जो लोग यह नहीं मानते और जो यह समझते हैं कि चालू प्रवृत्तिसे इस क्षयका आंशिक रूपसे भी निवारण होनेवाला नहीं है, वे लोग निःसन्देह इस कोषमें दान न दें। लेकिन ऐसे अश्रद्धालु काठियावाड़ी मैंने कम ही देखे हैं। इसलिए मुझे काठियावाड़से बड़ी आशा है।

बढवान और वीरमगाँवके लोगोंने मेरी उम्मीदोंको बढ़ा दिया है। झालावाड़ अपनी गरीबी और कंजूसीके लिए कुख्यात है, इसी झालावाड़ने मुझे आश्चर्यचकित कर दिया है। अगर अकेला झालावाड़ ही २५,००० रुपयेसे अधिक दे सके तो हालार, सोरठ और गोहिलवाड़ क्या देंगे? भावनगर क्या देगा? भावनगर तो इस समय काठियावाड़का सबसे बड़ा बन्दरगाह है। उसका व्यापार सबसे बढ़ा-चढ़ा है। वहाँकी प्रजा अपेक्षाकृत सुखी है। उसका हिस्सा कहाँ है?

हाँ, झालावाड़की बहनोंसे मुझे कुछ निराशा अवश्य हुई। मुझे बहनें बहुत ज्यादा दिखाई दीं। लेकिन खेदकी बात है कि समस्त भारतके मेरे अनुभवोंमें बढवानकी दो सभाओंमें उपस्थित बहनोंने मुझे कमसे-कम चन्दा दिया। क्या यह सम्भव है कि इन बहनोंने स्वराज्य — धर्मराज्य — का नाम ही न सुना हो? अथवा इसमें पुरुष-वर्गका दोष था? उन्होंने इस धर्मकार्यके लिए बहनोंको तनिक भी तैयार नहीं किया? कुछ भी हो, काठियावाड़की बहनोंसे मुझे तो बहुत आशा है। उन्हें चरखा पसन्द आया है। सैकड़ों गरीब बहनें उससे अपनी आजीविका अर्जित कर रही हैं और भारतमाताकी सेवा कर रही हैं। क्या अमीर बहनें अपने आभूषण अथवा पैसा नहीं देंगी?

काठियावाड़ी मुझे बिलकुल अपना मानते हैं। उस प्रेमकी अब कसौटी होनेवाली है। यदि काठियावाड़का मेरे प्रति विशेष प्रेम होनेके बावजूद मैं काठियावाड़को न समझा सकूँ तो अन्य भारतवासियोंको कैसे समझा सकता हूँ? काठियावाड़ यदि मेरे सन्देशको समझ गया हो तो मुझे उम्मीद है कि काठियावाड़के चन्देकी रकम सबसे अधिक होगी।

ईश्वर हमारी यह आशा पूरी करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६–६–१९२१

१३३. भाषण : बम्बईकी सभामें[1]

२६ जून, १९२१

महात्मा गांधीने कहा, मैं सान्ता क्रूजके लोगोंका बड़ा आभारी हूँ कि उन्होंने ३०,००० रुपयेसे भी अधिक एकत्र किये; हालाँकि आपको सिर्फ १५,००० रुपये ही एकत्र करने थे। मुझे सान्ता क्रूजपर गर्व है, क्योंकि मैं पहले अक्सर यहाँ ठहरा करता था[2] और मुझे खुशी है कि सान्ता क्रूजके लोग मुझे अभी भूले नहीं हैं। बम्बई और शेष भारतके लोगोंने मेरे प्रति जितना ज्यादा प्रेम और विश्वास दिखाया है, लोगोंके प्रति मेरा उत्तर-दायित्व भी उतना ज्यादा बढ़ गया है, मेरे कन्धोंपर उतना ही बोझ आ पड़ा है।

१. इस सभाका आयोजन तिलक स्वराज्य-कोषके निमित्त गांधीजीको एक थैली भेंट करनेके लिए किया गया था।

२. यह बात १९०१-२ की है, जब गांधीजी बम्बईमें वकालत कर रहे थे।

क्या जाने वर्षके अन्ततक इस सबका क्या परिणाम होता है? आपके प्रयत्नोंका चाहे जो भी परिणाम निकले, मुझे विश्वास है कि आपके ये प्रयत्न कभी निष्फल नहीं जायेंगे और आपको इससे बहुत ज्यादा लाभ होगा। तथापि मेरा अन्तर्तम मुझे इस बातका पूरा यकीन दिलाता है कि आपको इस वर्षके अन्ततक स्वराज्य मिल जायेगा। सान्ता क्रूजकी स्त्रियों और बच्चोंको यह नहीं समझना चाहिए कि सिर्फ उन्होंने ही इस महान् उद्देश्यके लिए बहुत काम किया है; आपको याद रखना चाहिए कि समस्त भारतके बच्चों और स्त्रियोंने भी यही किया है। समस्त भारतके पुरुषों, स्त्रियों और बच्चोंने तथा गरीब लोगोंने भी स्वराज्य-कोषमें अपना हिस्सा दिया है। मेरे ख्यालसे, गरीबोंने जो-कुछ दिया है उसकी तुलनामें, अमीर लोगोंने अपना पूरा हिस्सा नहीं दिया। तुलनात्मक दृष्टिसे, गरीबोंने अमीरोंसे ज्यादा दिया है और उन्होंने देशके प्रति अपने कर्त्तव्यको निभाया है। बोहरों, पारसियों और ईसाइयोंने भी ऐसा ही किया है। पारसी समाजके प्रति मेरे मनमें कोई शंका नहीं रही है। उनकी आबादी तथा उन्होंने जो दिया है उसको देखते हुए मैं कहूँगा कि उन्होंने अपने हिस्सेसे — इस देशके अन्य सभी समुदायोंके लोगोंसे — ज्यादा काम किया है। और आज, इस समय भी मुझे विश्वास है कि अन्य लोगोंकी अपेक्षा पारसियोंसे अधिक पैसा मिलेगा। अगर मुझे आज नहीं मिला तो कल अवश्य मिलेगा। मुझे यकीन है कि पारसी हमारे साथ हैं, हमारे विरुद्ध नहीं; और वे अपने-आपको भारतके अन्य समुदायोंसे अलहदा नहीं रखेंगे।

हमें स्वराज्य अन्य लोग नहीं देंगे, इसे तो हमें स्वयं ही प्राप्त करना होगा। मैं अपने मित्रोंसे कहूँगा कि जबतक वे खिलाफतके प्रश्नका हल नहीं ढूंढ़ लेते और पंजाबमें किये गये अत्याचारोंके विरुद्ध न्याय प्राप्त नहीं कर लेते तबतक वे स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते। ये दोनों बातें स्वराज्यसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। इन्हें हमें अपने कार्यक्रममें सबसे प्रमुख स्थान देना है। हमारे शासक हमें और चाहे जो भी रियायतें दें, हम उनसे कभी सन्तुष्ट नहीं होंगे। ये दो चीजें हमारे समाज-तन्त्रमें जहर-के समान हैं और हमें इस जहरको निकाल बाहर करना है। जबतक लोगोंको यह महसूस न हो जाये कि उन्हें स्वराज्य मिल गया है तबतक यह कैसे कहा जा सकता है कि उन्होंने उसे पा लिया है? जब आपमें से अमीर-गरीब, ऊँच-नीच सभी लोग अपने भीतर स्वराज्यका अनुभव करने लगेंगे तब निश्चय ही स्वराज्य मिल जायेगा। मैं अभी आपको स्वराज्यकी कोई परिभाषा नहीं दूंगा। लेकिन अगर अक्तूबर अथवा दिसम्बरके अन्ततक सारा भारत यह कहेगा कि उसे कुछ भी नहीं मिला है तो मैं भी उसके साथ यही कहूँगा। जिस चीजका एहसास अथवा अनुभव आप खुद नहीं कर सकते, जिसे आप खुद पहचान नहीं सकते उसका अनुभव या एहसास आपको मैं नहीं करवा सकता और न उसे पहचानना ही सिखा सकता हूँ। आप यह न सोचें कि चूंकि आप लोगोंने एक करोड़ रुपया इकट्ठा कर लिया है इसलिए स्वराज्य अब आपके हाथोंमें ही है। यह

तो हमारे युद्धका साधन-मात्र है और इस बातका सूचक है कि लोग इस वर्षके अन्ततक स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं।

मैं नहीं समझता कि सान्ता क्रूजके निवासियोंने जो-कुछ दिया है, वह उनकी शक्तिसे बाहर था। जब मैंने एक करोड़ रुपया इकट्ठा करनेका कार्य हाथमें लिया था तब मुझे बम्बईपर बहुत भरोसा था। मुझे विश्वास था कि अगर देशके अन्य भागोंके लोग अपना कर्त्तव्य न भी निभा पायें तो बम्बईके लोग तो मुझे वह रकम दे ही देंगे। मैं नहीं समझता कि सान्ता क्रूजके स्त्रियों और बच्चोंने अपना उचित हिस्सा दे दिया है। आपको इन चीजोंके बारेमें बनियेकी भावनासे नहीं सोचना चाहिए हालाँकि मैं स्वयं बनिया हूँ। (हँसी) घरोंमें स्त्रियोंकी बहुत चलती है और वे बिना-किसी विघ्न-बाधाके जितना धन देना चाहें, दे सकती हैं। मैं आपसे पूछना चाहता हूँ कि क्या आपने अपनी सारी सम्पत्तिका ढाई प्रतिशत दिया है, अगर आप चाहतीं तो मुझे निश्चय ही साठ लाख बड़ी आसानीसे दे सकती थीं। अगले चार दिनोंमें आपको इस घाटेको पूरा करना है, आपको इन बातोंके सम्बन्धमें बनियेवाली भावनासे नहीं सोचना चाहिए; आपको देशके प्रति अपने कर्तव्यका पालन करना चाहिए। श्री जे० के० मेहताने मुझे, स्पष्ट ही, अभिमानपूर्वक बताया कि सान्ता क्रूजमें चालीस चरखे चलते हैं, जब कि मैं यहाँ चार सौ से भी ज्यादा स्त्रियोंको देख रहा हूँ और मुझे आश्चर्य होता है कि ये सब भी चरखा क्यों नहीं चलातीं।

इसके बाद श्री गांधी भारत-भूमिसे गरीबीको दूर करनेके लिए चरखेके इस्तेमाल-के सम्बन्धमें कुछ विस्तारसे बोले। उन्होंने कहा कि गरीब और अमीर, दोनों ही वर्गोंकी स्त्रियोंको चरखा चलाना चाहिए और मैं उन स्त्रियोंका आशीर्वाद पाना चाहता हूँ जो अपने हाथके कते सूतसे बुना खद्दर पहनती हैं। मुझे विश्वास है कि मैं जिस उद्देश्यको अपने सामने रखकर चला हूँ, उस उद्देश्यको उनके आशीर्वादसे अवश्य पूरा करूँगा। स्वराज्यके लिए, जिसे सब प्राप्त करना चाहते हैं, तीन महीने बहुत ज्यादा हैं — यह अवधि लम्बी है। हम समस्त भारतकी मनोवृत्तिको पूर्णतया परिवर्तित करके स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं। आप लोगोंने जो-कुछ किया उतनेसे ही सन्तुष्ट होकर न बैठ जायें बल्कि मुझे और अधिक पैसा देनेके लिए आपसे जितना बन पड़े, कीजिए। बम्बईका यह कर्त्तव्य है कि वह मुझे ज्यादा धन दे, क्योंकि बम्बईके रास्ते ही सारे भारतमें, प्रत्येक शहर और गाँवमें, विदेशी कपड़े पहुँचते हैं। मैं चाहता हूँ कि बम्बई साठ लाख रुपयेकी इस कमीको पूरा करके अपने इस पापका प्रायश्चित्त करे। आप जानते हैं कि जहाँ सत्य है वहाँ विजय है।

सान्ता क्रूजके लोगोंकी इस शिकायतके बारेमें कि वे अपनी समितिको बम्बई प्रान्तीय समितिके साथ मिलाना चाहते हैं, श्री गांधीने कहा कि अगर आप बम्बईके साथ मिलना चाहते हैं तो आपको इससे कोई भी अलग नहीं रख सकता। अगर आप ऐसा चाहते हैं तो आपने जो पैसा इकट्ठा किया है वह या तो महाराष्ट्र समितिको

अथवा बम्बई समितिको चला जायेगा। बम्बई समितिके कोषाध्यक्ष सर्वश्री तैरसी और मोतीवाला हैं। इन कोषाध्यक्षोंको इस रकममें से एक पाई भी खर्च करनेका अधिकार नहीं है। समितिके मन्त्री सर्वश्री उमर सोबानी, बेंकर और डा० वेलकर हैं और लोग इनपर भरोसा कर सकते हैं कि ये एक पाई भी व्यर्थ खर्च नहीं करेंगे। आप लोग मुझमें ही विश्वास करके भूल करते हैं, क्योंकि समस्त भारतमें एकत्र की गई राशियोंकी देख-भाल करना मेरे लिए असम्भव है। कोषकी व्यवस्था अच्छे लोगोंके हाथोंमें देनेके लिए मुझसे जो-कुछ हो सकता था, मैंने कर दिया है। ऐसे लोगोंकी अब कमी नहीं है; क्योंकि भारतका वातावरण काफी हद्दतक पवित्र हो गया है। मैं आपको यकीन दिला सकता हूँ कि इस कोषकी व्यवस्था करनेवाले अधिकारियोंमें से एक भी अधिकारी अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताके लिए इस पैसेका उपयोग नहीं करेगा। मुझे इन सबपर पूरा-पूरा भरोसा है। मुझे बम्बई समितिके सदस्योंके नाम मालूम नहीं हैं, लेकिन मैं कोषाध्यक्षों और मन्त्रियोंको जानता हूँ और उनपर पूर्णतया विश्वास किया जा सकता है। मैंने आपसे अपना पैसा श्रीमती नायडूको देनेके लिए नहीं कहा, क्योंकि वे हिसाबमें चुस्त नहीं हैं; वे आपको स्वराज्य-कोषमें चन्दा देनेके लिए न सिर्फ फुसला सकती हैं बल्कि अपनी मीठी आवाजमें धमकी भी दे सकती हैं। (हँसी) इसलिए आप अपना पैसा पूरे विश्वासके साथ दे सकते हैं। जहाँतक उस रकमके उपयोगका सवाल है, वह नये स्कूल और कालेज स्थापित करने तथा चरखेका प्रचार करनेके लिए खर्च की जायेगी। समितिका उद्देश्य सिर्फ ब्याजपर ही गुजारा करना नहीं है। वह तो सारी पूँजीको भारतके पुनरुद्धारके कार्यमें खर्च करना चाहती है।

वैष्णवों और श्रावकोंको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा, जबतक आप दलित-वर्गके लोगोंके साथ भाइयोंका-सा व्यवहार नहीं करते तबतक आपको स्वराज्य नहीं मिलेगा। जबतक एक भी व्यक्ति दूसरे व्यक्तिके साथ उपेक्षा और घृणाका व्यवहार करेगा तबतक आपको स्वराज्य नहीं मिल सकता, क्योंकि तबतक आप इसके योग्य ही नहीं होंगे। मैं हिन्दुओं — श्रावकों और वैष्णवों — से अनुरोध करता हूँ कि वे अपने बीचसे अस्पृश्यताको जड़मूलसे उखाड़ फेंकें। अस्पृश्यताकी भावना शैतानकी भावना है। जिस तरह आप इस शैतानी सरकारसे छुटकारा पाना चाहते हैं उसी तरह आपको अपने बीच प्रचलित इस शैतानी प्रथासे भी छुटकारा पानेके लिए तैयार हो जाना चाहिए। आपके इन गरीब भाइयोंको कुएँसे पानी भरनेकी इजाजत नहीं है, वे बीमार हों तो उनके लिए अस्पतालोंमें गुंजाइश नहीं है — इस वस्तुस्थितिके बारेमें आप क्या कह सकते हैं? जबतक आपके मार्गमें इन गरीबोंको इस दलित अवस्थामें रखनेवाली अस्पृश्यताकी नैतिक बाधा मौजूद है तबतक आप कैसे कह सकते हैं कि आप स्वराज्यके काबिल हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-६-१९२१

१३४. तार : मदनमोहन मालवीयको

बम्बई
२८ जून, १९२१

पण्डित मदनमोहन मालवीय
शिमला

सरकारसे क्षमा[१] माँगनेका मंशा तो था ही नहीं। यदि होता तो मैं स्पष्टतः वैसा कहता। भेंटका (दोनों पक्षों द्वारा) स्वीकृत विवरण प्रकाशित करने या गोपनीयतासे मुझे बरी किये जानेके लिए मैंने पिछले सप्ताह वाइसरायको पत्र लिखा था।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

१३५. टिप्पणियाँ

अधिकारी तथा कर्मचारी

वाइसराय द्वारा अहमदिया जमातको दिये गये उत्तरसे यह स्पष्ट है कि वे नौकरशाहीके हाथमें खेल गये हैं। नौकरशाही बहुत चालाक, संगठित तथा पूर्णतः सिद्धान्तहीन होती है। उन्होंने अधिकारियों तथा कर्मचारियोंका जिस तरह बचाव किया है, उससे जातीय समानताके अर्थका पता चल जाता है। यूरोपीय लोग भारतीयोंपर निःशंक होकर जुल्म करते हैं और करते रहें, इसमें वाइसरायको कोई असमानता नजर नहीं आती। मुझे पंजाबके एक मजिस्ट्रेट द्वारा दिये गये एक विलक्षण फैसलेकी याद आ रही है। उसने एक आयरिश सैनिक द्वारा एक निरीह भारतीय महिलाके साथ छेड़खानी किये जानेके मामलेमें अपनी कल्पना-बुद्धिका सहारा लेकर कुछ ऐसे कारण खोज निकाले जिनसे अपराध अपेक्षाकृत कम लगने लगे और फिर उसने उसपर केवल पचास रुपया जुर्माना करके यह समझ लिया कि न्यायकी माँग पूरी हो गई।

परमश्रेष्ठ दैनिक पत्रोंको पढ़नेका कष्ट नहीं उठाते; वे यूरोपीयों द्वारा भारतीयोंको अपमानित किये जानेके समाचारोंसे भरे रहते हैं। वे इस तथ्यसे अनभिज्ञ मालूम होते हैं कि ब्रिटिश अधिकारी रेलमें अपने डिब्बेमें भारतीय न्यायाधीशों-तक की उपस्थिति गवारा नहीं करते। वाइसराय कहते हैं, "मुझे पूरा विश्वास है कि इस कथनमें जरा भी सत्यता नहीं है कि ब्रिटिश अधिकारी जिन भारतीयोंके सम्पर्कमें आते

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १५-६-१९२१ और २९-६-१९२१।

हैं, उन्हें जातीय बड़प्पन जताना चाहते हैं।" मैं लॉर्ड रीडिंगको यह बता देना चाहता हूँ कि उनका यह कथन औसत भारतीयके प्रतिदिनके अनुभवसे इतना भिन्न है कि इससे लोगोंके मनमें उनकी निर्णयबुद्धि तथा उनके उद्देश्यकी ईमानदारी-तक के प्रति सन्देह उत्पन्न हो जाना अवश्यम्भावी है। वे अपने कर्मचारियों तथा अधिकारियोंको आचरणके जो प्रमाणपत्र देंगे, उनमें भी लोगोंको यही लगेगा कि वे जान-बूझकर सत्यकी ओरसे आँखें फेर रहे हैं और न्याय नहीं करना चाहते। लोग इस बातमें शककी गुंजाइश भी नहीं मानेंगे और यही समझेंगे, जैसा कि मैं समझता हूँ, कि वाइसराय स्वेच्छासे अपनी आँखें बन्द नहीं किये हैं बल्कि उन्हें सिवा उन चीजोंके, जो नौकर-शाही उन्हें दिखानेको तैयार है, और कोई चीज देखने ही नहीं दी जाती।

पाँच सौवीं मंजिलसे

तथ्य यह है कि किसी भी वाइसरायके लिए सत्यको देख पाना असम्भव है, क्योंकि सालमें सात महीने वह पहाड़की चोटियोंपर रहता है, और जब वह मैदानमें रहता है तब भी पूर्णतः अलग-सा रहता है। जरा बम्बईके एक ऐसे व्यापारीकी कल्पना कीजिए जो सबसे ऊपरवाली मंजिलसे व्यवसाय-संचालन करता है, और जो अपने क्लर्कों तथा सेल्समैनोंसे केवल लिफ्टों एवं फोनोंके जरिये उनसे सम्बन्ध रखता है। बम्बईके लोग इस स्थितिसे सन्तुष्ट नहीं हैं; हालाँकि वहाँ सबसे ऊपर और सबसे नीचेकी मंजिलोंके बीच कमसे-कम अनेक मंजिलोंकी ऐसी शृंखला तो है, जिनमें लोग रहते हैं। पर शिमलेमें जो एक बड़ा व्यापार-भवन है उसके तथा मैदानमें रहनेवाले कराहते हुए करोड़ों लोगोंके बीच तो ठोस निर्जीव चट्टान है; और उन अशक्त लोगोंका चीत्कार भी, जब वह मैदानसे उठकर पहाड़की चोटीतक पहुँचता है, तो शून्यमें विलीन हो जाता है। राजकुमार सिद्धार्थको दुनियासे इतना अलग रखा गया कि उन्हें मालूम ही नहीं हो पाया कि दुःख, अभाव तथा मृत्यु क्या चीजें हैं। वे एक ईमानदार नवयुवक थे। पर यदि एक घटना न घटी होती तो संसारको उनका नाम भी मालूम न होने पाता। वे अपनी जनतासे अधिक दूर नहीं रहते थे, और उनका जीवन भी वैसा ही था जैसा उनके पिताकी प्रजाका। सिद्धार्थ जनतासे मुश्किलसे तीस फुटकी ऊँचाईपर रहते थे, जब कि वाइसराय साढ़े सात हजार फुटकी ऊँचाईपर[1] रहते हैं। फिर वाइसराय जनताकी आशाओं तथा आशंकाओंको नहीं समझ पाते इसमें उनका दोष नहीं है। उन्होंने यदि स्वेच्छासे अपनेको जनतासे विच्छिन्न रखा हो तो बात अलग है। जबतक वे शारीरिक एवं मानसिक रूपसे शिमला-वास करते रहेंगे तबतक उन्हें सत्यसे अनभिज्ञ रखा जायेगा जैसे कि सिद्धार्थको रखा गया था। पर एक घटना तो उनकी भी आँखोंके सामने उपस्थित है; जैसी उस सुप्रसिद्ध युवक राजकुमारके लिए थी जिसकी विश्व आज बुद्धके रूपमें पूजा करता है। वह घटना है असहयोग। और यदि लॉर्ड रीडिंगकी आँखें तथा कान खुले हैं तो वे शीघ्र ही सत्यको देख-सुन सकते हैं।

१. तात्पर्य समुद्रकी सतहसे शिमलेकी ऊँचाईसे है।

सावरकर बन्धु

'कैपिटल' के 'डिचर' ने इन बहादुर भाइयोंपर कीचड़ उछाला है। उनमें से एक-पर उसने यह आरोप लगाया है कि उन्होंने कारावास-कालमें बेतारके तारका दुरुपयोग किया और शत्रुके साथ मिलकर षड्यन्त्र रचा। उसने सारी बातका ऐसे विस्तारके साथ वर्णन किया है मानो अधिकारियोंने उसे उस अंशको लिखनेके लिए विशेषरूप से प्रेरित किया हो। यदि आरोप सही है तो सरकारको चाहिए कि वह तथ्योंको प्रकाशित करे। वह जिस रूपमें पेश किया गया है उससे जान पड़ता है मानो आरोप सच्चा है और अवश्य ही इससे जनताकी निगाहमें दोनों बन्धुओंकी प्रतिष्ठाकी हानि हुई होगी। मैं समझता हूँ कि वे असहयोगी नहीं हैं। उनका दावा है कि वे बिलकुल निर्दोष हैं तथा उनके पास सम्बन्धित समाचारपत्रके विरुद्ध कारवाई करनेका स्पष्ट आधार भी है। बहरहाल जो भी हो, डा० सावरकरने मुझे सूचित किया है कि ऐसी सजाओंमें आम तौरसे जितने दिनोंकी माफी दी जाती है, अगर उन्हें भी गिना जाये तो उन दोनों भाइयोंमें से श्री गणेश सावरकर तो चौदह साल दो मासकी सजा भुगत चुके हैं; अतः कानूनन उन्हें रिहाईका अधिकार प्राप्त है। भारतीय दण्ड संहिताका खण्ड ५५ इस प्रकार है:

> **ऐसे हर मामलेमें जिसमें आजीवन कालेपानीकी सजा दी जाती है, भारत सरकार अथवा उस स्थानकी सरकार जिसकी सीमामें उक्त दण्ड दिया गया हो, दोनोंमें से हर तरहके अभियुक्तकी सहमतिके बिना उसकी सजा घटाकर चौदह वर्ष कर सकती है।**

इस धाराके अन्तर्गत यह स्पष्ट है कि श्री गणेश दामोदर सावरकरको दो मास पूर्व ही रिहा हो जाना चाहिए था। चूँकि दोनों भाई अंडमानसे हटा दिये गये हैं, अतः जिस खण्डको मैंने उद्धृत किया है वह उनके पक्षमें लागू किया जाना चाहिए, और उन्हें चौदह सालसे अधिक समयतक बन्दी नहीं रखा जाना चाहिए। सजामें से जितनी अवधि माफ की जा चुकी है उसे चौदह सालमें से घटना चाहिए। इस तरह-का उदाहरण, जो एक स्नेही भाईकी लगन तथा परिश्रमके कारण प्रकाशमें आया है, अपने ढंगका अकेला नहीं है। संसारको यह कभी विदित ही नहीं हो पायेगा कि इस प्रकार कानूनके नामपर कितने गैरकानूनी काम किये गये हैं। मेरा मन यह स्वीकार करनेको नहीं होता कि श्री सावरकरको जान-बूझकर कैदमें रखा जा रहा है और इसके पीछे दुष्टताका भाव है। किन्तु पीड़ित व्यक्तिको तो इससे कोई सान्त्वना नहीं मिल सकती।

स्वतन्त्रताका प्रवेश-द्वार

अभीतक और तो और प्रगतिशील-वर्गोंमें भी ऐसे लोग हैं जो भारतकी स्वतन्त्रता-प्राप्तिके लिए जेल जानेकी उपयोगितापर सन्देह करते हैं। उनका खयाल है कि जेल चले जानेसे जनता वीर पुरुषोंकी सेवाओंसे वंचित हो जाती है। यह तो वैसा ही है जैसे यह कहना कि सबसे बहादुर सैनिकोंको कभी कोई जोखिम उठानी ही नहीं चाहिए।

क्योंकि इससे जिस उद्देश्यका वे पृष्ठपोषण करते हैं, उसका नेतृत्व करनेवालों के अभाव-का खतरा पैदा हो जायेगा। ऐसे संशयवादी यह भूल जाते हैं कि लोकमान्यकी महान् लोकप्रियता तथा प्रभावका कारण उनका जेल जाकर सजा भुगतना ही था। सूलीपर मृत्यु ईसाकी सबसे शानदार उपलब्धि थी। करबलाके मैदानमें इमाम हसनके बलिदान-ने इस्लामको विश्वमें एक शक्ति बना दिया। हरिश्चन्द्रको अनन्त दुःख उठानेके कारण स्मरण किया जाता है। भारत तबतक स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं कर सकता जबतक कि लाखों लोग भयका त्याग नहीं कर देते, और बिना किसी अपराधके स्वेच्छासे जेल जानेको तैयार नहीं हो जाते। यदि लाखों नहीं तैयार होते तो कमसे-कम हजारोंको तो स्वतन्त्रता पानेके लिए वास्तवमें जेल जाना ही चाहिए। असहयोगका ध्येय राष्ट्रके सच्चे शौर्यको जाग्रत करना है। यदि हमें स्वतन्त्र होना है तो मरते दमतक कष्टोंका मुकाबला करनेके लिए तैयार रहना चाहिए। जो अपनेको बचायेगा उसका अवश्य नाश होना है।

क्या हम अपनी सफाई दें?

यदि यह सत्य है कि इस सरकारकी इच्छाका न्यायोचित विरोध करनेके लिए हमें भारतकी जेलोंको भर देना चाहिए तो इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि हम किसी ब्रिटिश कानूनी अदालतके समक्ष अपनी सफाई नहीं दे सकते; और वकील नियुक्त करनेका तो सवाल ही नहीं उठता। मैं जानता हूँ कि जटिल मुकदमे भी हो सकते हैं, जैसे सावरकर बन्धुओंका मुकदमा। यदि मुझे यह मालूम हो कि वे असह-योगी हैं, और असहयोगमें विश्वास करते हैं तो मुझे उन्हें यह सलाह देनेमें जरा भी हिचक न होगी कि चाहे उनका पक्ष पूरी तरहसे सही भी हो, फिर भी उन्हें जिन लोगोंने उनपर अत्याचार किया उनके विरुद्ध क्षतिपूर्तिके लिए कोई भी कार्रवाई नहीं करनी चाहिए। यद्यपि ऐसे मुकदमोंमें सफाई न देनेका मुख्य कारण ब्रिटिश अदालतों-का बहिष्कार करनेसे सम्बन्धित प्रस्ताव ही होगा, तथापि कष्टसहनकी दृष्टिसे भी वह उतना ही आवश्यक है।

फिर अली बन्धुओंकी सफाईके बारेमें

शिमलामें वाइसराय महोदयसे मेरी भेंट तथा अली बन्धुओंकी सफाईने जितना समय नष्ट किया है, उतना किसी और चीजने नहीं। मेरे सामने जो बहुत-से पत्र हैं, उनमें से केवल एकके बारेमें मैं यहाँ जिक्र करना चाहता हूँ। एक सम्मानित मित्र,[1] जिन्हें ईमानदारी तथा सच्चे व्यवहारसे सम्बन्धित मेरी ख्यातिका बड़ा ख्याल है, लिखते हैं कि शिमलामें यह चर्चा हो रही है कि मैंने वाइसरायके साथ अन्याय किया है, उनपर लगभग वादाखिलाफीका आरोप लगाया है, और यह कहकर कि सफाई नहीं दी गई है, सम्भवतः मैं अनजाने ही सत्यसे डिग गया हूँ। मैं आज भी कहता हूँ कि सफाई सरकार-को नहीं दी गई है। यदि ऐसी बात होती तो उसकी शब्दावलीमें ही इस बातको स्पष्ट कर देनेमें मैं कभी न हिचकता। उसे अस्पष्ट रखना मेरा उद्देश्य नहीं था।

१. स्पष्टतः तात्पर्य पण्डित मदनमोहन मालवीयसे है; देखिए पिछला शीर्षक ।

अली बन्धुओंकी नाक रखनेके लिए किसी बातको छिपानेकी कोई जरूरत नहीं थी। सबसे पहले मैं प्रत्येक व्यक्तिको, जिसमें परमश्रेष्ठ वाइसराय भी शामिल हैं, यह विश्वास दिला देना चाहता हूँ कि यदि मैं कभी सत्यसे बाल-भर भी डिग गया तो मैं उनसे तथा विश्वसे अवश्य क्षमा-याचना करूँगा। सत्यको मैं अपने प्रभावके मुकाबले, चाहे वह मेरे देशमें हो अथवा किसी और जगह, अधिक महत्त्व देता हूँ। मैंने लॉर्ड रीडिंग-पर वादाखिलाफीका आरोप लगाया हो यह मुझे स्मरण नहीं है। तीव्र गतिसे होनेवाली बातचीत मानसिक चलचित्रके समान होती है। मस्तिष्क शब्द-रूपी चित्रोंको, जितनी तेजी-से वे आते हैं, ग्रहण करता जाता है, पर उसे वह पूरेका-पूरा अर्थात् ठीक उसी क्रममें स्मृतिमें नहीं रख पाता। हो सकता है कि विभिन्न मुलाकातोंकी हम दोनोंके मनपर अलग-अलग छाप पड़ी हो। मेरे मनपर जो छाप पड़ी उसे तो मैंने अधिकसे-अधिक सही रूपमें प्रस्तुत कर दिया है, और गोपनीयताका यथासम्भव उल्लंघन किये बिना किया है। पर यह मैं बिलकुल स्पष्ट देख रहा हूँ कि जनताके सामने चित्र बिलकुल धुँधला है। वह मुलाकातोंके पर्याप्त पूर्ण विवरणके बिना सन्तुष्ट नहीं हो सकती। मैं उसकी जिज्ञासा पूरी करनेके लिए उत्सुक हूँ। इस उद्देश्यसे मैंने परमश्रेष्ठ वाइसराय महोदयके साथ पत्रव्यवहार भी शुरू कर दिया है और उनसे कहा है कि या तो हम दोनोंकी सहमतिसे एक विवरण प्रकाशित किया जाये अथवा मुझे उसे गोपनीय रखनेके दायित्वसे मुक्त कर दिया जाये। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मेरी कोई बात ऐसी नहीं है जिसे गोपनीय रखनेकी जरूरत हो। पर मैं यह स्वीकार करता हूँ कि वाइसरायकी स्थिति मुझ जैसे सार्वजनिक कार्यकर्त्तासे बहुत भिन्न है। मैं उन लोगोंसे, जो पूरी बात जाननेको उत्सुक हैं, थोड़ा सब्र रखनेको कहूँगा। इस बीच मुझसे जो एक गम्भीर भूल हुई दिखाई देती है, मैं उसे स्वीकार करना चाहता हूँ। जो विज्ञप्ति प्रकाशित की जानेवाली थी, मुझे कहना चाहिए था कि वह मुझे दिखा दी जाये। पर मैं पुनः शिमला जाकर अपनी यात्रामें और विघ्न नहीं डालना चाहता था, और मुझे इस बातका पूरा विश्वास था कि पूरी बात अच्छे ढंगसे तथा दोनों पक्षोंके लिए सम्मान-जनक रूपसे सम्पन्न हो जायेगी। मुझे तो बिना किसी दुर्भावनाके भी गलतफहमियाँ और उससे भी बुरी बातें होनेका इतना सारा अनुभव था, इसलिए मुझे इस ओर ज्यादा चौकसी बरतनी चाहिए थी। पर वैसा न हो सका। फिर भी मुझे पूरा विश्वास है कि यद्यपि इस विवादके कारण काफी कटुता उत्पन्न हो गई है, तथापि अन्तमें यही सिद्ध होगा कि इससे देशका अनिष्ट होनेके बजाय भला ही हुआ है। इस बीच मैं नेक मौलाना अब्दुल बारीके इस कथनको स्वीकार करता हूँ कि असहयोगियोंके उत्साहमें गिरावट आनेकी शक्लमें जो हानि हुई है वह तो प्रत्यक्ष है, पर लाभ भविष्यके गर्भमें है। खैर, देखें आगे क्या होता है!

पारसियोंकी उदारता

प्रसिद्ध तिजोरी-निर्माता श्री गोदरेजने तिलक-स्वराज्य-कोषके लिए तीन लाख रुपये देनेकी घोषणा करके चन्देकी अन्य सब राशियोंको फीका कर दिया है। सार्व-जनिक कामोंके लिए दिये गये उनके चन्दे अभीतक गुप्त हुआ करते थे। पर इस बार

उन्होंने सार्वजनिक घोषणाकी आवश्यकताको समझा। मैं श्री गोदरेज तथा सम्पूर्ण पारसी समुदायको बधाई देता हूँ। मैं यह भी बता देना चाहता हूँ कि बम्बईमें चन्दा करनेके सप्ताह-भरमें एक दिन भी ऐसा नहीं गया जब कि पारसियोंने चन्दे न दिये हों। पारसी महिलाएँ तथा पुरुष घर-घर जाकर भी चन्दा कर रहे हैं। वे धरना भी दे रहे हैं। समाचारपत्रोंमें भी सभी पारसी-समाचारपत्र आन्दोलनके विरोधी नहीं हैं। पर श्री गोदरेजकी उदारताके कारण पारसियोंको समस्त भारतमें सहज ही सर्वप्रथम स्थान प्राप्त हो गया है। वैसे तो पारसी रुस्तमजीकी ५२,००० रुपयेकी राशि ही पारसियोंको सम्मानित स्थान दिलानेके लिए यथेष्ट थी किन्तु श्री गोदरेजने उन्हें सर्वप्रथम स्थान दिला दिया है।

खतरेकी सम्भावना

शराबकी दुकानोंपर धरना देना पारसियोंसे बहुत सम्बन्ध रखता है। हमें अपने पारसी देशवासियोंके प्रति बहुत सहिष्णुतासे काम लेना होगा। धरना देना हम बिलकुल तो बन्द नहीं कर सकते, पर हमें चाहिए कि हम शराबके व्यापारियोंसे मिलें, उनकी कठिनाइयोंको समझें, और अपनी कठिनाइयाँ उन्हें बतायें। श्री गोदरेजने अपने चन्देकी रकमको मद्यनिषेध तथा पददलित वर्गोंके उत्थान-सम्बन्धी कार्योंके लिए निर्धारित कर दिया है। अतः हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि सभी पारसी अवश्य ही महान् मद्यनिषेध आन्दोलनके विरोधी हैं। यदि नरमदलीय मन्त्रिगण पूरे साहसके साथ नीलामम मिली सारी रकम लौटा नहीं देते, और शराबकी दुकानोंको बन्द नहीं कर देते तो इस समय मद्यनिषेध आन्दोलनके दौरान सबसे अधिक भय है हिंसाके विस्फोटका। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूँ कि आन्दोलनको संयमित-नियन्त्रित किया जा सकता है, पर उसे रोका नहीं जा सकता। लोग शराबकी दुकानोंको बन्द करने तथा उसे दवाके दुकानदारों द्वारा दवाके रूपमें बेचे जानेके सिवा अन्य किसी भी रूपमें बेचे जानेको अपराध माननेपर तुले हुए हैं। यह ऐसा मामला है जिसमें जरा भी विलम्बकी गुंजाइश नहीं है।

आत्मशुद्धिकी प्रक्रिया

श्री अब्बास तैयबजीको सभी जानते हैं। जबसे उन्होंने कांग्रेस कमेटीकी पंजाब रिपोर्टपर[1] काम किया है तबसे वे देशकी कुछ-न-कुछ सेवा करते ही रहते हैं। पर असहयोगने उनके जीवनमें क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया है, जैसा कि अन्य बहुत-से लोगोंके जीवनमें भी किया है। श्री अब्बास बूढ़े होते हुए भी खेड़ामें रात-दिन काममें जुटे हुए हैं, ताकि बेजवाड़ा कार्यक्रमके अनुसार खेड़ाको जो-कुछ करना है, उसे वह पूरा कर दे। वे किसानों-जैसे कठोर जीवनके आदी नहीं हैं। फिर भी वे इस समय खेड़ाके सामान्य किसानोंके साथ, उन्हींकी मर्जी और सुविधाका खयाल रखते हुए, मिलने-जुलने-में लगे हुए हैं। उनके साथ काम करनेवाले नवयुवक मित्र मुझे बतलाते हैं कि शक्ति और परिश्रममें वे उनमें से प्रत्येकको मात दे रहे हैं। मुझे विश्वास है कि पाठकगण

१. तात्पर्य पंजाबमें हुए उपद्रवोंकी जाँचके लिए कांग्रेस द्वारा नियुक्त उप-समितिकी रिपोर्टसे है; देखिए खण्ड १७, पृष्ठ १२८–३२२।

उनके पत्रसे लिये गये निम्न अंशको अवश्य पसन्द करेंगे। यह पत्र उन्होंने मेरे उस पत्रके उत्तरमें लिखा है जिसमें मैंने उनके स्वास्थ्यके प्रति चिन्ता व्यक्त की थी। वे कहते हैं:

> मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आपको मेरे स्वास्थ्यके बारेमें जरा भी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है। मैं कई वर्षोंसे इतना स्वस्थ कभी नहीं रहा हूँ। वास्तवमें बेजवाड़ामें मैंने जो खद्दर अपनाया, उससे मैं अपनेको अपनी उम्रसे बीस वर्ष कमका अनुभव कर रहा हूँ। मुझे कितना अच्छा अनुभव हो रहा है। हर जगह, यहाँतक कि गाँवकी औरतों द्वारा भी मेरा हार्दिक स्वागत किया जाता है। जिन-जिन स्थानोंमें मैं गया हूँ, उनमें से अधिकांशने अपने हिस्सेसे दूना या तिगुना दिया है। केवल आनन्द तथा नडियाद-जैसे बड़े शहर ही पीछे हैं। पर नडियाद, जहाँ मैं चार दिन बिता चुका हूँ, प्रगति कर रहा है, और मेरा खयाल है कि यदि वह अपने हिस्सेसे अधिक नहीं, तो कमसे-कम अपने हिस्सेका तो देगा ही। मैं आज कपड़वंज जा रहा हूँ किन्तु रात मैं नडियादमें ही बिताया करूँगा, नहीं तो मेरे नेक दोस्त ढीले पड़ जायेंगे। . . .
>
> हमारे कुछ कार्यकर्त्ताओंमें उमंग और उद्यमकी कमी है। मेरा खयाल है कि वे उस सम्मानित वर्गका प्रतिनिधित्व करते हैं, जिस वर्गमें मैं अब नहीं रहा। क्या शानदार अनुभव है यह। मुझे उस सामान्य लोक-वर्गसे, जिस वर्गका होना अब मैं सम्मानकी बात समझता हूँ, कितना अधिक प्यार तथा स्नेह मिला है। इस फकीरके वेशने ही सारे बंधनोंको तोड़ा है। और अब स्त्री तथा पुरुष मुझसे उसी तरह मिलते हैं जिस तरह मैं चाहता हूँ। कितना अच्छा होता, अगर वर्षों पहले ही यह मालूम हो जाता कि फेंटा, साया, अँगरखा, जूते तथा मोजे एक व्यक्तिको उसके गरीब भाइयोंसे अलग कर देते हैं। मुझे केवल अब यह अनुभव हुआ है कि उस प्रकारके वेशमें किसीके अन्दर इतना विश्वास उत्पन्न कर सकना कि वह अपनी बातें आपसे कह सके, क्यों असंभव था। अब मेरी समझमें आ रहा है कि मैंने जीवनमें कितना गँवाया है। . . .
>
> आन्दोलनने मेरी जीवन-धाराको कितना प्रभावित किया है, उसे मैं बहुत धुँधले रूपमें ही देख पा रहा हूँ। फिर भी मैं उसे देख रहा हूँ, और यही महत्त्व रखता है। देनेमें कितना आनन्द है, यह महसूस करना भी एक नया अनुभव है।

चरखेकी प्रशंसा

एक ईसाई महिला लिखती हैं:

> चरखेके जरिये स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए मैं अपनी पूरी शक्तिसे काम करूँगी। यहाँसे रवाना होनेसे पहले-पहले मैंने अच्छे चरखे तैयार करा लिये।

तमिलमें हम चरखेको 'राट्टिनम' कहते हैं। गरीब औरतोंने मेरे पास आकर मुझसे चरखे माँगे और कातना सिखानेको कहा, ताकि वे अपनी जीविकाके लिए थोड़ा-बहुत कमा सकें। तब मुझे ईसाके शब्द स्मरण हो आये, "मैं नग्न था और तुमने मुझे वस्त्र नहीं दिया", "मैं भूखा था और तुमने मुझे खाना नहीं दिया।" मैं आशा करती हूँ कि परमेश्वर हश्रके दिन मुझसे ये कठोर शब्द न कहेंगे। भारत भूखा-नंगा है। भारतीय नारियाँ रोटीके लिए तड़पते हुए अपने बच्चोंके लिए भोजन प्राप्त करनेके निमित्त अपनी इज्जत तक बेचनेको मजबूर हुई हैं। चूँकि भारतकी अपनी ही सीमाओंमें यथेष्ट प्राकृतिक साधन मौजूद हैं, अतः उक्त स्थिति और भी दयनीय लगती है। भारत एक ऐसी स्त्रीके समान है जो सड़कके किनारे रुई, चावल तथा गेहूँके खेतोंके बीच नंगी-भूखी बैठी हुई है। भारतकी स्त्रियाँ बेकार क्यों बैठी हैं, जब कि दूसरे देशवाले भारतकी ही उपजपर फल-फूल रहे हैं? इसलिए कि वे उस कामको छीन लेते हैं जो भारतीय स्त्रियोंको मिलना चाहिए। चरखा भारतवासियोंको काम देगा और मुट्ठी-भर दानेके लिए तड़पते हुए यहाँके नन्हें बच्चोंको भोजन देगा। चरखेके संगीतके साथ स्त्रियाँ अपने सुन्दर गीत गायेंगी, पुराने जमानेकी कहानियाँ सुनायेंगी, और इस प्रकार सादे घरेलू जीवनकी सुन्दरता एवं सन्तुष्टि पुनः लौट आयेगी। यदि मेरे अन्दर कविकी प्रतिभा होती तो मैं चरखेके, उसके सौन्दर्य तथा उसकी उपयोगिताके, उसकी काव्यात्मकता तथा उसके धार्मिक मूल्यके गीत लिखती और गाती; जरूरतके समय सहायताके लिए ईश्वरकी प्रशंसाके गीत गाती। मैं अपनी समस्त भारतीय बहनोंसे अपने घरोंसे भूख तथा अपमानरूपी भेड़ियेको दूर रखनेके लिए चरखा अपनानेको कहूँगी। . . . पर मुझमें वह प्रतिभा नहीं है। केवल मेरी आत्माके अन्दर वह गीत ध्वनित हो रहा है। फिर मैं इसके सिवा और क्या कर सकती हूँ कि चरखेको अपना गीत स्वयं गाने दूँ, और मैं स्वयं चरखा चलाऊँ और दूसरोंको भी वैसा ही करनेकी शिक्षा दूँ।

उक्त महिला कताईमें काफी निपुण हो गई हैं, और वे अपने साधनोंकी शक्ति और साधनोंको लड़कियोंके लिए एक स्कूल खोलनेमें लगानेवाली हैं। कताई इस स्कूलकी एक खास विशेषता होगी।

सच्ची भावना

गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने कांग्रेस महासमितिके लिए अपने सदस्योंका चुनाव सम्पन्न कर लिया है। जिस क्रममें सदस्यगण चुने गये हैं, उसी क्रममें मैं उनके नाम यहाँ दे रहा हूँ: अब्बास तैयबजी, इमाम ए० के० बावजीर, एस० एफ० इदरस, अनसूयाबेन साराभाई, मो० क० गांधी, वल्लभभाई पटेल, महादेव देसाई, इन्दुलाल के० याज्ञिक, डा० दीक्षित, डा० चन्दूलाल देसाई, मोहनलाल पण्डचा तथा वामनराव मुका-

दम। चुनाव स्वभावतः आनुपातिक प्रतिनिधित्वके आधारपर हुआ। नाम देकर पाठकोंको मैं कष्ट न देता यदि इस चुनावसे कुछ सीख न मिलती होती। पाठकगण यह देखेंगे कि तीन मुसलमान चुने गये हैं और वे सूचीमें सर्वप्रथम हैं, जिससे पता चलता है कि मतदाता उन्हें चुननेके लिए कृतसंकल्प थे। संख्याकी दृष्टिसे दोसे अधिक नहीं चुने जाने चाहिए थे, पर मतदाताओंने बुद्धिमानीसे सब मुसलमान उम्मीदवारोंको चुननेका निर्णय किया। उसके बाद वे कमसे-कम एक महिलाको अवश्य चुनना चाहते थे, अतः उनके बाद श्रीमती अनसूयाबेन आती हैं। लेकिन इस चुनावमें सबसे अधिक मार्केकी बात यह है कि जहाँ सब अच्छे कार्यकर्त्ता चुन लिये गये वहाँ बहुतसे उतने ही अच्छे और योग्य कार्यकर्त्ता चुपचाप अलग रह गये। वे चुनावमें खड़े नहीं हुए। आत्म-विलोपनकी इस भावनाकी, जिस किसीसे वह सम्बन्ध रखती हो, मैं तारीफ करता हूँ। कार्यकर्त्ताओंमें सम्मानके पदोंके लिए आपसमें कशमकश नहीं होनी चाहिए। सबका ध्येय सर्वाधिक योग्य कार्यकर्त्ता बनना होना चाहिए। पर सबका सम्मानके पदोंपर चुना जाना सम्भव नहीं है, खास तौरसे जब यदि उन पदोंके साथ भारी जिम्मेदारी भी जुड़ी हुई हो। सबसे अच्छा तरीका यह है कि हर व्यक्ति चुनावसे अलग रहकर दूसरोंको चुने जाने दे। इसी तरह कटुता, अस्वस्थ प्रतिद्वन्द्विता तथा विद्वेषकी भावनासे बचना सम्भव है। चाहे कोई व्यक्ति कभी भी कोई पद न ग्रहण करे, फिर भी उसके लिए सबसे उत्तम सेवा कर सकना निश्चय ही सम्भव है। सच तो यह है कि सम्पूर्ण विश्वमें सबसे अच्छे कार्यकर्त्ता वही सिद्ध हुए हैं जो सामान्यतः सबसे अधिक चुप और शान्त रहते हैं।

मुस्लिम प्रतिनिधित्व

लखनऊ-समझौतेपर कार्य-समितिके परामर्शात्मक प्रस्तावके सम्बन्धमें बहुत लोगोंको शिकायत है। नये संविधानमें मुस्लिम प्रतिनिधित्वसे सम्बन्ध रखनेवाला एक खण्ड वह है जो अल्पसंख्यकोंके अधिकारोंके बारेमें है। चूँकि कार्य-समितिका ध्यान इस बातकी ओर आकृष्ट किया गया कि मुसलमान अपने प्रतिनिधित्वके बारेमें परेशान हो रहे हैं, और वे कांग्रेस द्वारा लखनऊ-समझौतेपर अमल चाहते हैं, अतः उस दिशामें निर्देश करना युक्तिसंगत समझा गया। इसमें सन्देह नहीं कि हम लोगोंके अन्दर फूट डालनेकी कोशिश की जा रही है। मुसलमानोंका आना शुरू ही हुआ है। इसलिए प्रत्येक हिन्दूका कर्त्तव्य है कि वह उनको कांग्रेसमें शामिल होनेके लिए हर तरहका उचित प्रोत्साहन दे। कांग्रेसको समस्त जातियों तथा धर्मोंका सामान्य मिलन-स्थल होना चाहिए। जहाँ अनुनय-विनयके बावजूद मुसलमान बिलकुल ही आगे नहीं आते, वहाँ उम्मीदवारोंके अभावके कारण स्थान खाली रखे जा सकते हैं, अथवा जबतक अनुकूल मुस्लिम उम्मीदवार नहीं मिल जाते, तबतक के लिए उन स्थानोंको दूसरों द्वारा भरा जा सकता है। कुछ मित्रोंका कहना है कि इस समय हमें किसी जाति विशेषके अधिकारोंके बारेमें नहीं बल्कि केवल कार्यक्षमताके बारेमें सोचना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि कार्य-क्षमता प्रशंसनीय चीज है, लेकिन यह भी हो सकता है कि हम उसके अन्धपुजारी बन जायें, जैसा कि हमारे अंग्रेज मित्र बन गये हैं। एकता कार्यक्षमतासे अधिक महत्त्वपूर्ण है, और हमारे लिए एकता ही कार्यक्षमता है। हाँ, एकताके नामपर हमें एक वस्तुका

त्याग नहीं करना चाहिए और वह है सिद्धान्त अथवा अन्तरात्माकी आवाज, अथवा सत्य; सिद्धान्त अथवा अन्तरात्माकी आवाजका ही नाम सत्य है।

गो-रक्षा

हिन्दू-मुस्लिम एकताके सन्दर्भमें मैं एक बार पुनः गो-रक्षाकी चर्चा कर रहा हूँ। गो-रक्षाकी भावना जितनी अधिक मेरे हृदयमें है उससे ज्यादा किसी अन्य हिन्दूके हृदयमें नहीं, पर मैं उतावला नहीं होना चाहता। बलप्रयोग द्वारा हम मुसलमानोंसे गो-हत्या बन्द करानेमें कभी सफल नहीं हो सकते। उनके अन्दर गायके लिए उसी प्रकारकी तथा उतनी ही भावना नहीं हो सकती जितनी कि हम हिन्दुओंके अन्दर है। अगर हम ईमानदारीका व्यवहार करेंगे तभी तो ऐसी स्थिति आयेगी कि हमारे साथ ईमानदारीका व्यवहार करना उनके लिए जरूरी हो जायेगा। बिहारमें अब तूफान मचा हुआ है। मैं हिन्दू तथा मुसलमान दोनों नेताओंसे आग्रहपूर्वक विनय करता हूँ कि वे मौकेको हाथसे न जाने दें, और बुराईको आरम्भमें ही कुचल दें। साथ ही बिहारके हिन्दुओंको चाहिए कि वे निरामिषताके प्रश्नको गो-हत्याके साथ न मिलायें। दोनोंका स्थान अलग-अलग है। गो-रक्षा दो करोड़ हिन्दुओंका धार्मिक सिद्धान्त है, जब कि निरामिषता बहुत थोड़ेसे लोगोंतक सीमित है। उन थोड़ेसे लोगोंको अपना विचार दूसरोंपर नहीं लादने दिया जा सकता।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी

नव-निर्वाचित महासमिति, जिसके सदस्योंकी संख्या पहलेसे बड़ी है, की बैठक २२ जुलाईको लखनऊमें होनेवाली है। यह बैठक बहुत महत्त्वपूर्ण होगी। इसमें ऐसा कार्यक्रम तैयार करना है जिससे साल-भरके अन्दर स्वराज्यकी स्थापना तथा खिलाफत एवं पंजाब सम्बन्धी अन्यायोंका परिशोधन किया जा सके। उसे या तो एक नई कार्य-समितिका चुनाव करना होगा, अथवा पुरानी कार्य-समितिकी ही पुष्टि करनी होगी, यदि उसके सब सदस्य नई महासमितिके फिरसे सदस्य चुन लिये जाते हैं। उसे संभवतः कार्य-समितिके कुछ निर्णयोंपर पुनः विचार-विमर्श भी करना होगा। उसके अन्दर जो विचार-विमर्श होगा, उसीसे साल-भरके अन्दर स्वराज्य-प्राप्ति सम्बन्धी प्रश्नका बहुत-कुछ निपटारा होगा। अतः लोगोंके लिए ऐसी आशा करना स्वाभाविक है कि उस संस्थाके समक्ष जो प्रश्न उठाये जायेंगे उनपर विचार करनेके लिए पूरा सदन भरा होगा।

जूनके बाद

जान पड़ता है कि कुछ लोग इस खयालमें हैं कि ३० जूनके बाद बेजवाड़ा कार्यक्रमके सम्बन्धमें आगे कोई प्रयास करनेकी जरूरत नहीं है। यह भ्रांतिपूर्ण विचार है। यदि हमने एक करोड़ सदस्य बना लिये और बीस लाख चरखे चालू करवा लिये, तो फिर हमें उनमें और वृद्धि करनी चाहिए। न्यूनतम निश्चित राशि एकत्र करके हम तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा करना बन्द कर सकते हैं, पर यदि हम उससे भी अधिक संग्रह करते हैं तो उसमें कोई हानि नहीं है।

जैसी स्थिति है, उससे मालूम होता है कि बहुत-से प्रान्त ऐसे होंगे जो ३० जून तक अपने लिए निर्धारित रकमसे बहुत-कम एकत्र कर पायेंगे। अतः उनसे यह अवश्य उम्मीदकी जायेगी कि वे कमसे-कम कांग्रेस महासमितिकी बैठक आरम्भ होनेतक अपना संग्रह-कार्य जारी रखें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९-६-१९२१

१३६. टर्कीका प्रश्न

अगर हम अपने मुसलमान भाइयोंके सच्चे शुभेच्छु हैं तो यूरोपमें टर्की राष्ट्रको कुचलनेके लिए जो आन्दोलन चल रहा है, उसके खिलाफ हमें मुसलमान भाइयोंके प्रति सहानुभूति होनी चाहिए। यह बड़े खेदकी बात है कि ब्रिटिश सरकार लुके-छिपे या खुले आम आन्दोलनका नेतृत्व कर रही है। हिन्दुओंको इस्लामी एकताके आन्दोलनसे भयभीत नहीं होना चाहिए। वह भारत या हिन्दुओंके खिलाफ नहीं है और न उसे ऐसा होनेकी जरूरत है। मुसलमानोंको हर मुसलमान राज्यका शुभेच्छु होना चाहिए और यदि कोई मुसलमान देश अकारण मुसीबतमें पड़ जाये तो उसकी मदद भी करनी चाहिए। और जहाँतक हिन्दुओंका सवाल है, यदि वे मुसलमानोंके सच्चे दोस्त हैं तो उनकी भावनाओंसे सहानुभूति होनी चाहिए। अतः हमें चाहिए कि हम अपने उन मुसलमान भाइयोंकी मदद करें, जो यूरोपमें तुर्की साम्राज्यको नष्ट होनेसे बचानेके लिए कोशिश कर रहे हैं।

यदि मुसलमानोंको इस बातका थोड़ा भी संकेत मिला हो कि ब्रिटिश सरकार अंकाराकी तुर्की सरकारके खिलाफ यूनानियोंके साथ खुल्लमखुल्ला मिल सकती है, और वे इससे सशंकित हो उठे हों तो इससे हिन्दुओंको अपना सन्तुलन नहीं खोना चाहिए। यदि ब्रिटेन ऐसे पागलपनपर उतारू हो जाता है तो टर्कीके खिलाफ ब्रिटिश सरकारकी किसी भी ऐसी योजनामें भारत साथ नहीं दे सकता। ऐसा करना इस्लामके खिलाफ युद्ध छेड़नेके समान होगा।

इंग्लैंड अपना मार्ग चुननेको स्वतन्त्र है। हिन्दू और मुसलमान अब जाग गये हैं। वह अब उन्हें गुलाम बनाकर नहीं रख सकता। यदि भारतको साम्राज्यके दूसरे सदस्योंकी बराबरीका दर्जा पाना है तो उसके मतकी शक्ति किसी भी अन्य सदस्यसे कहीं ज्यादा होगी। स्वतन्त्र राष्ट्र-मण्डलमें जैसे हर सदस्यका यह कर्त्तव्य है कि जबतक और सदस्य कुछ सर्वस्वीकृत सिद्धान्तोंका पालन कर रहे हैं तबतक वह उसमें शामिल रहे। वैसे ही उसे यह अधिकार भी है कि यदि दूसरे सदस्य गलत रास्तेपर चलें तो वह उससे अलग हो जाये। यदि भारत किसी गलत बातके पक्षमें मत दे तो इंग्लैंड-को अन्य सदस्योंकी तरह ही राष्ट्र-मण्डलसे अलग हो जानेका हक है। इस प्रकार जब भारतको अपना उचित पद प्राप्त हो जाये तब सन्तुलनका केन्द्र इंग्लैंडके बजाय भारत हो जायेगा। साम्राज्यके अन्तर्गत स्वराज्यसे मेरा यही मतलब है। किसी भी

मसलेपर विचार-विमर्श करते समय पशु-बलके प्रयोगकी बात कभी भी मनमें नहीं लानी चाहिए। हमें सदा न्याय-बुद्धिका सहारा लेना चाहिए, न कि बलका।

इंग्लैंडकी तरह भारतको भी अपना रास्ता चुननेका हक है। आज हम साम्राज्यके अन्तर्गत स्वराज्यकी कोशिश इस उम्मीदसे कर रहे हैं कि इंग्लैंड अन्तमें सच्चा साबित होगा; और यदि ऐसा नहीं होता तो हम पूर्ण स्वतन्त्रताके लिए लड़ेंगे। किन्तु यदि यह निर्विवाद रूपसे सिद्ध हो जाये कि ब्रिटेन टर्कीको खत्म कर देना चाहता है, तो भारतके लिए एकमात्र विकल्प होगा पूर्ण स्वतन्त्रता। जहाँतक मुसलमानोंका सवाल है यदि टर्कीका अस्तित्व, जैसा वह आज है, खतरेमें पड़ जाये तो उनके लिए आगा-पीछा करनेकी गुंजाइश ही नहीं रह जाती। तब तो यदि उनसे बन पड़ेगा तो वे तलवार खींच लेंगे और बहादुर तुर्कोंके साथ लड़ते-लड़ते या तो मर मिटेंगे या जीतकर ही दम लेंगे। पर यदि वे भारत सरकारकी नीतिके कारण ब्रिटिश सरकारके खिलाफ युद्धकी घोषणा नहीं कर सकते तो कमसे-कम ऐसी सरकारके प्रति जो अन्यायपूर्वक टर्कीसे युद्ध छेड़ देती है, वफादार होनेसे इनकार तो कर ही सकते हैं। हिन्दुओंका भी कर्त्तव्य उतना ही साफ है। यदि अभीतक हम मुसलमानोंसे डरते हैं और उनपर अविश्वास करते हैं तो हम ब्रिटेनका साथ ही देंगे और इस तरह अपने गुलामीके दिन और बढ़ायेंगे। और यदि हममें इतना साहस और धार्मिक बल है कि हम अपने मुसलमान देश-भाइयोंसे न डरें और यदि हममें इतनी बुद्धिमानी है कि हम उनपर विश्वास करें तो हमें चाहिए कि आजादी हासिल करनेके लिए हम सभी शान्तिपूर्ण और सच्चे तरीकोंसे मुसलमानोंका साथ दें। हिन्दू धर्मके बारेमें मेरी जो कल्पना है, उसके मुताबिक एक हिन्दूके लिए अहिंसात्मक असहयोगके सिवा और कोई रास्ता है ही नहीं। चाहे वह पूर्ण स्वतन्त्रताके लिए हो या साम्राज्यके अन्तर्गत स्वराज्यके लिए। यदि भारत अहिंसाके रहस्य और उसकी अजेय शक्तिको पहचान ले और उसे ग्रहण करे तो उसे आज ही उपनिवेशका दर्जा या पूरी आजादी मिल सकती है। जब वह अहिंसाके मन्त्रको सिद्ध कर लेगा तब वह असहयोगके हर कदमके लिए, जिसमें कर न देना भी शामिल है, तैयार हो जायेगा। आज भारत तैयार नहीं है। किन्तु यदि हम टर्कीके नाशके लिए या अपनी गुलामीके दिन और बढ़ानेके लिए रचे जानेवाले षड्यन्त्रोंको विफल करनेके लिए तैयार होना चाहते हैं तो हमें जल्दसे-जल्द प्रबुद्ध अहिंसाकी भावना पैदा करनी होगी। वह अहिंसा निर्बलकी नहीं, बलवानकी अहिंसा होगी जो मारनेके बजाय सत्यकी प्रतिष्ठाके लिए खुशी-खुशी मरनेको तैयार रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९–६–१९२१

१३७. कार्य-समिति और उसका काम

कार्य-समितिके प्रस्तावोंकी कुछ आलोचना की गई है। कार्य-समितिने असहयोगी वकीलोंके अदालतोंमें जाने तथा असहयोगी प्रतिवादियोंके अदालतमें अपना बचाव करनेको अनुचित करार देते हुए जो व्यवस्था दी है, उसपर बहुत आपत्ति की गई है, और यहाँतक कहा गया है कि उसकी व्यवस्थाओंकी परवाह न की जाये। इसलिए यह जानना आवश्यक हो जाता है कि कार्य-समितिके क्या काम हैं और इसे समझनेके लिए हमें पहले कांग्रेसके संविधानको समझना होगा।

कांग्रेसका ध्येय शान्तिपूर्ण तथा न्यायोचित तरीकोंसे स्वराज्य हासिल करना है। कांग्रेसका संचालन ऐसे ढंगसे होना चाहिए जिससे भारत अपने निर्दिष्ट लक्ष्यकी ओर तेजीसे बढ़ सके। कांग्रेसका संविधान भी ऐसा बनाया गया है जिससे इस राष्ट्रकी स्वशासनकी क्षमताकी पूरी कसौटी हो जाये और यह सिद्ध हो जाये कि उसमें सचमुच यह क्षमता है। निस्सन्देह वह एक ऐसी ऐच्छिक सरकारकी स्थापना करता है, जिसका एकमात्र बल जनमत तथा जनताका सद्भाव है। आज जिस प्रकार कांग्रेस वर्तमान शासन-प्रणालीका विरोध कर रही है — और इसमें सन्देह नहीं कि यदि जरूरत पड़ी तो उसे समाप्त कर देनेके लिए भी वह जुट जायेगी — उससे जाहिर होता है कि कांग्रेसका प्रभाव जितना ही बढ़ेगा सरकारका उतना ही कम होगा। जिस दिन लोग कांग्रेसमें पूरी तरह विश्वास करने लगेंगे और उसके निर्देशोंका स्वेच्छया पालन करने लगेंगे उसी दिन पूर्ण स्वराज्य स्थापित हो जायेगा; क्योंकि तब सरकारको कांग्रेसके माध्यमसे व्यक्त लोकमतका पालन करना ही होगा, अन्यथा वह स्वयं समाप्त हो जायेगी। इसलिए कांग्रेसको देशकी सर्वाधिक संगठित, सबल और शुद्ध तथा सबसे बड़ी संस्था बनना चाहिए। अतः उसकी नीति ऐसी होनी चाहिए जिसे लोग प्रसन्नतासे स्वीकार कर लें।

कांग्रेसका अधिवेशन सालमें केवल एक बार होता है, जिसमें वह अपनी नीतियाँ निर्धारित करती है। कांग्रेस महासमिति उसके प्रस्तावोंमें समाहित उन नीतियोंको कार्यान्वित करती है। इसलिए कांग्रेसकी महासमितिको भी उतने ही अधिकारके साथ कांग्रेसके प्रस्तावोंकी व्याख्या और सभी नये सवालोंपर विचार करना चाहिए जितने अधिकारसे स्वयं कांग्रेस कर सकती है। उसके सदस्यगण विभिन्न प्रस्तावों एवं उनके अर्थोंपर जितनी चाहें उतनी बहस कर सकते हैं, पर कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तके मामलोंको छोड़कर बाकी सब बातोंमें उन्हें बहुमतसे स्वीकृत प्रस्तावोंको मानकर ईमानदारीके साथ कार्यान्वित भी करना चाहिए। किसी बातपर महासमितिमें बहस हो चुकनेके बाद फिर उसपर महासमितिके बाहर बहस नहीं हो सकती। महासमिति अपना काम तेजी और ठीक ढंगसे कर सके, इसके लिए कांग्रेसके संविधानमें एक कार्य-समितिकी व्यवस्था की गई है। इस कार्य-समितिकी बैठक बराबर होनी चाहिए और महासमिति द्वारा सौंपे गये सभी कार्योंको उसे पूरा करना चाहिए। जब महासमितिकी बैठक नहीं

हो रही हो तब कार्य-समितिसे महासमितिके सारे काम करनेकी अपेक्षा की जाती है। समितिको जनमतके बारेमें पूरी जानकारी रखनी चाहिए, उसे सही दिशा देनी चाहिए और उसकी व्याख्या भी करनी चाहिए। उसे सभी मातहत संगठनोंको काम करनेकी स्थितिमें रखना चाहिए, देश-भरमें संगठनके लिए धन जुटानेकी कोशिश करनी चाहिए, उसका उचित वितरण करना चाहिए और जब-कभी बहुत महत्त्वके मामलोंपर निर्णय लेना हो तब निर्देशके लिए महासमितिकी बैठक बुलानी चाहिए। कांग्रेसके लिए कार्य-समितिका वही महत्त्व है जो संसदके लिए मन्त्रिमण्डलका। यदि हमें इसी वर्ष संवैधानिक सरकारकी स्थापना करनी है तो कार्य-समितिके सभी निर्णय ऐसे होने चाहिए जिनका आदर सब लोग करें। अतः यह जरूरी है कि उसके सदस्य ऐसे हों जिन्हें महासमितिके सदस्य तथा पूरा राष्ट्र सम्मानकी दृष्टिसे देखता हो। उसे जल्दबाजीमें किसी बातपर निर्णय नहीं करना चाहिए और उसके सदस्योंको एक-से विचारका होना चाहिए। उसके अन्दर दो नीतियाँ या दो दल नहीं हो सकते। चूँकि कांग्रेस पूरे देशका प्रतिनिधित्व करती है, इसलिए उसके अन्दर सभी विचारों, सभी दलोंके लोग हो सकते हैं। पर कार्य-समितिमें ऐसे लोग ही होने चाहिए जो कांग्रेसके बहुसंख्यक दल व उसकी नीतियोंका प्रतिनिधित्व करते हों। उसके निर्णय अधिकतर सर्वसम्मत होने चाहिए। जब कोई सदस्य अन्य सदस्योंके साथ मिलकर नहीं चल पाता तो वह अलग हो सकता है, पर उसे कार्य-समितिकी कार्रवाइयोंकी अखबारोंमें चर्चा करके उसके कामोंमें बाधा डालने या उन्हें प्रभावित करनेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। अतः यद्यपि कांग्रेसवालोंको कार्य-समितिके निर्णयोंको कार्यान्वित करना ही चाहिए, तथापि ऐसा नहीं है कि यह संगठन किसीके प्रति जवाबदेह है ही नहीं। कांग्रेस महासमिति अविश्वासका प्रस्ताव पास करके उसे बरखास्त कर सकती है। महासमिति उसके निर्णयोंपर फिरसे विचार कर सकती है और यदि गम्भीर कारण उपस्थित हों तो उन्हें रद्द भी कर सकती है। मेरे खयालसे जबतक कार्य-समितिका जनतापर काफी प्रभाव नहीं होता तबतक साल-भरके अन्दर स्वराज्य-प्राप्तिका लक्ष्य पूरा नहीं हो सकता। इसलिए हममें से हर व्यक्तिको चाहिए कि वह कांग्रेसके सभी प्रस्तावोंको पूरी तरहसे कार्यान्वित करके उसे एक ऐसी संस्था बना दे जिसकी इच्छाका कोई अनादर ही न कर सके। जो काम सरकार अन्तमें बल-प्रयोग द्वारा करती है, कांग्रेस उसी कामको प्रेम द्वारा करनेकी उम्मीद रखती है। सरकारने जनताके हृदयमें भय पैदा करके अपनेको ऐसा-कुछ बना लिया है कि कोई उसकी इच्छाका अनादर नहीं कर सकता, पर कांग्रेसको ऐसा रास्ता अख्तियार करके लोगोंको अपनी शक्तिका एहसास कराना है जिससे इसके सिद्धान्तों और नीतियोंको सभी अपनी मर्जीसे स्वीकार कर लें। इस तरह जनताके समक्ष जो भी कार्यक्रम रखा जाना है, उससे सम्बन्धित हर मामलेमें अहिंसाका पालन करना जरूरी है। लेकिन हर संगठन जनताके सहयोगपर ही सफल होनेकी आशा रखता है। कांग्रेसके निर्णयोंके प्रति वफादारी नागपुर कांग्रेसमें एक सालके अन्दर स्वराज्य प्राप्त करनेके हमारे संकल्पकी सफलताकी अनिवार्य शर्त है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९–६–१९२१

१३८. चरखेका सन्देश

'इंडियन सोशल रिफॉर्मर' ने चरखेकी प्रशंसामें किसी पत्र-लेखककी एक टिप्पणी प्रकाशित की है। उसने अपनी टिप्पणीमें यह कामना की है कि आन्दोलनका संगठन ऐसे ढंगसे किया जाये कि कताई करनेवाले उससे उकता न जायें। श्री अमृत-लाल ठक्करने ('सर्वेंट ऑफ इंडिया' में प्रकाशित) अपनी एक उपयोगी टिप्पणीमें काठियावाड़में चल रहे अपने परीक्षणके बारेमें लिखा है। उन्होंने लिखा है कि किसान स्त्रियोंने चरखे अपना लिये हैं। इससे उनको उकताहट कभी नहीं होगी क्योंकि यह उनकी अपनी जीविकाका साधन है, और पहले वे इसकी आदी भी थीं। इसका चलन बन्द इसलिए हो गया था कि उनके काते हुए सूतकी कोई माँग ही नहीं रह गई थी। शहरी लोग यदि चरखेको एक फैशन या खब्तकी तरह अपनायें तो हो सकता है कि वे आगे चलकर उससे उकता जायें। चरखेके प्रति आस्था उन्हीं लोगोंकी रहेगी जो आज देशके लिए इस सबसे अधिक उपयोगी कार्यके लिए अपने अवकाशके कुछ घंटे लगाना अपना कर्त्तव्य मानते हों। कताई करनेवालों का तीसरा वर्ग स्कूली बच्चोंका है। राष्ट्रीय स्कूलोंमें चरखा चालू करनेके परीक्षणसे मुझे बड़े अच्छे परिणामोंकी आशा है। यदि राष्ट्रीय स्कूलोंमें चरखे चालू करनेका काम वैज्ञानिक ढंगसे ऐसे अध्यापकों द्वारा शुरू किया जाये जो चरखेको भारतके साढ़े सात लाख गाँवोंमें शिक्षा पहुँचानेका सबसे कारगर साधन मानते हों, तो फिर इससे उकताहट पैदा होनेका कोई खतरा नहीं रह जायेगा; और इतना ही नहीं उसके सहारे राष्ट्र नये-नये कर लगाये बिना और राजस्वके अनैतिक तरीके इस्तेमाल किये बिना ही जन-शिक्षाका खर्च जुटानेकी समस्या भी हल कर लेगा।

'इंडियन सोशल रिफॉर्मर' के पत्र-लेखकने सुझाया है कि चरखेपर बढ़िया किस्मका सूत तैयार करनेकी कोशिश की जानी चाहिए। मैं उनको आश्वस्त करना चाहता हूँ कि यह काम शुरू भी हो गया है, लेकिन ढाकाकी मलमलकी तरहका बढ़िया निखार (फिनिश) या उससे कुछ कम महीन किस्मका सूत कातनेमें अभी कुछ समय तो लग ही जायेगा। हाथ-कताई अभी पिछले सितम्बरमें ही शुरू हुई थी और भारतको उसकी उपयोगितापर दिसम्बरमें ही विश्वास होने लगा था। यदि इसे ध्यानमें रखा जाये तो इसने अभीतक जितनी प्रगति की है वह बहुत काफी मानी जानी चाहिए।

पत्र-लेखकने शिकायत की है कि हाथकते सूतकी बुनाई उतनी ही तेजीसे नहीं हो पाती। एक हदतक यह सही है। लेकिन इसका इलाज सिर्फ यह नहीं है कि करघोंकी संख्या बढ़ा दी जाये। इससे कहीं ज्यादा जरूरत इस बातकी है कि मौजूदा बुनकरोंको हाथका कता सूत इस्तेमाल करनेके लिए प्रेरित किया जाये। बुनाईका काम कताईकी अपेक्षा अधिक पेचीदा किस्मका है। कताईकी भाँति, बुनाई केवल एक अनुपूरक उद्योग नहीं है, वह अपने-आपमें जीविकाका एक सम्पूर्ण साधन है। इसीलिए वह कभी बन्द नहीं हुआ था। "भारतमें इतने काफी बुनकर और करघे मौजूद

हैं कि वे विदेशोंसे मँगाये जानेवाले सारे वस्त्रोंकी कमी स्वयं पूरी कर सकते हैं।" हमें यह समझ लेना चाहिए कि मद्रास, महाराष्ट्र और बंगालमें हमारे हजारों करघे जापान और मैनचेस्टरसे आनेवाले महीन सूतसे कपड़ा बुननेमें लगे हुए हैं। हमें उनका उपयोग हाथका कता सूत बुननेके लिए ही करना चाहिए। और इस कामके लिए राष्ट्रको बेकारकी आडम्बरपूर्ण और महीन, मात्र दिखावेकी मलमलकी ओर अपनी आसक्तिको छोड़ना ही पड़ेगा। मुझे तो ऐसी मलमलकी बुनाईमें कोई कला नहीं दिखाई देती जो शरीरको ढकनेकी बजाय उसे और उघाड़ देती है। कलाके सम्बन्धमें हमें अपने विचार बदलने चाहिए। यदि सामान्य परिस्थितिमें महीन वस्त्रोंकी बुनाई वांछनीय मानी जाये, तो भी आजकी परिस्थिति सामान्य नहीं है। हम आज स्वतन्त्र और आत्म-निर्भर बननेका भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं, इसलिए हमें हाथके कते सूत-का बुना वस्त्र पहननेमें ही सन्तोष मानना चाहिए। हमें एक ओर तो फैशन-परस्त लोगोंको मोटे वस्त्रपर सन्तोष करनेके लिए कहना चाहिए और दूसरी ओर कताई करनेवालों को ज्यादा महीन और एकसा सूत कातना सिखाना चाहिए।

पत्र-लेखकने कहा है कि मिल-मालिकोंको मिलोंमें तैयार वस्त्रोंके दाम घटाने चाहिए। जिन्हें स्वदेशीसे प्रेम है, जब वे लोग खद्दर पहनना अपना कर्त्तव्य मानने लगेंगे, जब देशमें जरूरतके मुताबिक चरखे चलने लगेंगे और बुनकर लोग हाथका कता सूत इस्तेमाल करने लगेंगे, तब मिल-मालिक कीमतें घटानेपर विवश हो जायेंगे। जिन लोगोंका उद्देश्य अधिकसे-अधिक मुनाफा लेते चले जाना ही हो उनसे देशभक्तिकी अपील करना करीब-करीब बेमतलब लगता है।

पत्र-लेखकने कुछ अन्य असंगतियोंका जिक्र किया है — जैसे कि सार्वजनिक समा-रोहोंमें खद्दर और अन्य अवसरोंपर फैशनेबल अंग्रेजी सूट पहनना, और खद्दरधारियों द्वारा सबसे कीमती किस्मके सिगार पीना। ये सभी बातें नये फैशनके चल निकलने पर धीरे-धीरे समाप्त हो जायेंगी। मेरा तो कहना यह है कि जैसे-जैसे विदेशी वस्त्रों-का पूर्ण बहिष्कार करनेमें हम समर्थ होते जायेंगे, वैसे-वैसे वर्तमान असंगतियोंको भी अवश्यमेव त्यागते जायेंगे और देशकी विशाल जनताके हृदयमें बद्धमूल सादगी और स्वदेशीके आदर्शके अनुरूप अपने राष्ट्रीय जीवनको एक नये साँचेमें ढालते जायेंगे। तब हम संसारकी कमजोर जातियोंके शोषणपर आधारित साम्राज्यवादके शिकंजेमें नहीं फँसेंगे और हम नौसेना तथा वायु-सेनाओं द्वारा अभिरक्षित इस भड़कीली भौतिकवादी सभ्यताको स्वीकार करनेपर विवश नहीं होंगे जिसने जनताका शान्तिसे रहना हराम कर रखा है। इसके विपरीत हम उस समय साम्राज्यको परिष्कृत करके एक राष्ट्र-मण्डलका रूप दे देंगे जिसमें सभी राष्ट्र यदि चाहें तो संसारकी उन्नतिमें अपना सर्वो-त्तम योगदान करनेके लिए और निरे भौतिक बलके बदले वास्तवमें कष्टसहन द्वारा संसारके कमजोर राष्ट्रों या जातियोंको अभय देनेके लिए सम्मिलित और सक्रिय हो सकते हैं। असहयोगका उद्देश्य विचार-जगत्में इसी प्रकारकी एक क्रान्ति लाना है। परन्तु ऐसी काया-पलट चरखेकी पूर्ण सफलताके बाद ही सम्भव है। भारत संसारको ऐसा सन्देश देने योग्य तभी बन सकता है जब वह सभी प्रलोभनोंको अपने वशमें

कर ले और इस प्रकार विदेशी आक्रमणोंके लिए दुर्भेद्य बन जाये और अपनी दो बड़ी-बड़ी आवश्यकताओं — खाद्य और वस्त्र — के मामलेमें आत्मनिर्भर बन जाये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९–६–१९२१

१३९. चाय-बागानके एक अधिकारीका पत्र

श्री गांधी तथा असहयोग आन्दोलनसे सम्बन्धित अन्य लोगोंके नाम पत्र:

सज्जनो,

क्या आपने कभी इस बातपर तनिक भी विचार किया है कि आपका असहयोग आन्दोलन भारतको किधर लिये जा रहा है? यदि अनुमति हो तो असमके बारेमें मैं कुछ कहूँ। आप जिन बुराइयोंको दूर करनेकी कोशिश कर रहे हैं, उन्हें दूर करने या दुरुस्त करनेका उपाय असहयोग नहीं वरन् कानून है। सबसे पहले कानून और फिर अनिवार्य शिक्षा। असमके जो चाय-बागान यूरोपीयोंके नियन्त्रणमें हैं, उन सभीमें काम करनेवाले कुलियोंकी यूरोपीय अधिकारी बहुत अच्छी तरह देखभाल करते हैं। पर मुझे खेदके साथ कहना पड़ता है कि आपके ही देशवासियोंमें इन बागानोंके कुलियोंसे नाजायज तरीकेसे पैसे ऐंठनेकी नामुनासिब प्रवृत्ति बहुत अधिक फैली हुई है। चाय-बागानोंमें काम करनेवालों को काफी अच्छी मजदूरी मिलती है। मेरे बागानमें काम करनेवाले पुरुषोंको औसतन १० रुपये ३ आने ८ पाई, स्त्रियोंको ६ रुपये १२ आने ८ पाई तथा बच्चोंको ४ रुपये १५ आने ९ पाई मिलते हैं। (सितम्बर १९२० की सरकारी रिपोर्ट)। इसके अलावा असमके सभी चाय-बागानोंके कुलियोंको ईंधन तथा दवाई मुफ्त दी जाती है; उनका मुफ्त इलाज किया जाता है; मुफ्त रिहायशका इन्तजाम है; मवेशियोंको चरानेके लिए चरागाहकी मुफ्त व्यवस्था है; खेतीके लिए मुफ्त जमीन दी जाती है; अकाल पड़नेपर चावल बाजार-भावसे काफी कममें दिया जाता है। आप यह तो मानेंगे ही कि किसीके आगे थाली परोसकर रखी जा सकती है, लेकिन उसके मुँहमें जबरदस्ती कौर तो नहीं डाला जा सकता। उसी तरह आप किसी कुलीको कामपर तो लगा सकते हैं, लेकिन उसे काम करनेके लिए मजबूर नहीं कर सकते; और कोई चाहे दुनियाके किसी भी धन्धेमें लगा हो, काम करना तो उसके लिए जरूरी ही है। चाय-बागानोंमें नफरीपर भी काम कराया जाता है; और जिन दिनों ज्यादा काम रहता है उन दिनों पुरुष आसानीसे एक दिनमें ८ से १० आने तक और स्त्री ४ से ६ आने तक कमा

सकती है। उक्त सुविधाओंको देखते हुए, क्या आप असहयोगी लोग हृदयसे यह कह सकते हैं कि चाय-बागानका मालिक कुलियोंके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन नहीं कर रहा है? नहीं, आप ऐसा नहीं कह सकते। आपके देशवासी अब यह महसूस करने लगे हैं कि कुली पहलेकी तरह बेवकूफ नहीं रहा और अब उससे नाजायज ढंगसे ज्यादा-कुछ नहीं वसूल किया जा सकता। पर पैसा तो कहींसे आना ही चाहिए। अतः पैसा ऐंठनेके लिए आप उससे यह कहते हैं कि तुम्हें उचित मजदूरी नहीं मिलती, तुमसे कड़ी मेहनत करवाई जाती है, तुम्हारे साथ दुर्व्यवहार किया जाता है; और न जाने और भी कितनी झूठी बातें कही जाती हैं। आपकी नई कौन्सिलें क्या कर रही हैं? आप कौन-से कानून बना रहे हैं? जिस रफ्तारसे आप लोग चल रहे हैं उससे यह निश्चित है कि जल्दी ही आपको पछताना पड़ेगा।

तब क्या करना जरूरी है? असममें भारतीय कर्मचारियोंका वेतन दूना कर देना चाहिए। इससे बाबुओंमें इस समय जो असन्तोष व्याप्त है, वह समाप्त हो जायेगा। अधिकतर बाबुओंकी तनख्वाहें तो कम हैं, पर उन्हें काफी बड़े परिवारका भरण-पोषण करना होता है। इससे उन्हें कहीं-न-कहींसे पैसा पानेको मजबूर होना पड़ता है। वे बड़ोंसे, शक्तिशालियोंसे तो कुछ वसूल कर नहीं सकते, अतः छोटोंसे, कमजोरोंसे ही ऐंठते हैं। मेरे कर्मचारियोंमें एक प्रधान क्लर्क तथा उसके दो सहायक क्लर्क हैं। उन सबकी तनख्वाह बहुत कम है। वे चोरी नहीं करते और कर भी नहीं सकते, क्योंकि मुझे धोखा देना बहुत मुश्किल है। मैं उनकी वर्तमान स्थितिसे बहुत दुःखी हूँ। पर मैं अपनी तनख्वाहमें से उनकी मदद नहीं कर सकता। कारण, मैं भी अपनी जीविकाके लिए मेहनत-मशक्कत करता हूँ। और मैं मदद करूँ भी क्यों? मेरे मालिक मुझे उन्हें अधिक वेतन देनेकी इजाजत नहीं देते। पर आज नहीं तो कल, उन्हें अधिक वेतन देना ही होगा। अलबत्ता, वह आन्दोलन तथा सहयोगके जरिये ही होगा, असहयोगके जरिये नहीं। आपके अनुयायी बोल्शेविकोंका तरीका अपना रहे हैं। जहाँ खुशहाली है, वहाँ वे गड़बड़ी पैदा कर देना तथा सारी चीजोंको उलट-पलट देना चाहते हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि रचनात्मक आन्दोलन कीजिए, सहयोग कीजिए, कानून बनाइए। आप असहयोगकी बातको दिमागसे निकाल दीजिए। उससे कोई लाभ न होगा।

मैं असममें निम्नलिखित बातें चाहता हूँ :

(१) मजदूर आजाद हों, क्योंकि आजादी ही सच्चा धन है।

(२) प्रत्येक भारतीयको बिना किसी रोक-टोकके देशके किसी भी हिस्सेमें, अकालग्रस्त हिस्सेसे खुशहालीवाले हिस्सेमें, जानेका अधिकार हो।

(३) गरीब, अमीर तथा भारतीयों एवं गोरों सबके लिए समान कानून बनाये जायें।

(४) भारतीय स्त्रियों तथा उनके यूरेशियाई बच्चोंकी रक्षाके लिए कानून बनाया जाये।

(५) हर चाय-बागानके लिए एक पंचायत हो, जिसे कानूनी सत्ता हासिल हो और उसका अध्यक्ष चाय-बागानका मैनेजर हो। पंचायतको भारतीयों तथा गोरों, दोनोंके मामलोंकी सुनवाई तथा फैसला करनेका हक हो। (मेरे कुलियोंको मेरे विरुद्ध लगाये आरोपोंकी सुनवाई और फैसलेका अधिकार हो)।

(६) कुलियोंको बीमारीका भत्ता देना अनिवार्य हो।

(७) कुलियोंकी शादियोंपर से प्रतिबन्ध हटा लिया जाये।

(८) गर्भवती स्त्रियोंको छः मासतक प्रसूतिका भत्ता देना अनिवार्य हो।

आप यह स्वीकार करेंगे कि ये सब सुझाव विधायकोंके लिए हैं, न कि असहयोगियोंके लिए। इसलिए मैं कहता हूँ कि रचनात्मक आन्दोलन कीजिए, सहयोग कीजिए, कानून बनाइए।

आपके कौंसिलके सदस्य क्या कर रहे हैं? उनसे कहिए काम करें, अच्छे और उपयोगी कानून बनायें, जनताकी आवाजको सुनें। मेरा बल मेरे कुलियों-का प्यार है। उनका भी बल भारतीय जनताका उनके प्रति प्यार है; भारतीय जनतामें सहयोगी और असहयोगी, रचनात्मक आन्दोलनकारी और विधायक सभी शामिल हैं। अगर उन्हें उनका प्यार नहीं मिलता तो इसका मतलब है, भारत एक ऐसे परिवारके समान है जिसके सदस्य आपसमें विभक्त हैं, फूटसे ग्रस्त हैं। इसलिए मैं कहता हूँ कि सहयोग कीजिए। मैं जिन भारतीयोंके सम्पर्कमें आता हूँ या जिनसे मेरा साबका पड़ता है, उन सबके साथ मैं सहयोग करता हूँ, चाहे वे चमार हों या ब्राह्मण, कुली हों या राजा। सभी ईश्वरको प्यारे हैं, सभी मनुष्य हैं। सबको मैं अपना भाई मानता हूँ। जहाँ मैं मदद कर सकता हूँ, वहाँ मदद करता हूँ; जहाँ किसीका कष्ट दूर कर सकता हूँ, वैसा करता हूँ; जहाँ कोई बात समझा सकता हूँ, समझाता हूँ। भ्रातृत्वकी भावना पनपने दीजिए। यह असहयोग द्वारा सम्भव नहीं, सहयोगके द्वारा ही सम्भव है।

मुझे आपको यह बताते हुए खुशी होती है कि मैं जिस चाय-बागानका मैनेजर हूँ, उसके कुली दूसरे चाय-बागानोंके कुलियोंके मुकाबले कहीं अधिक सन्तुष्ट हैं तथा उन्हें उनके मुकाबले ज्यादा मजदूरी मिलती है। और मैं दावेके साथ कह सकता हूँ कि जबसे मैं भारत आया हूँ तभीसे मेरा ध्येय कुलियोंकी तकलीफोंको दूर करना रहा है, यद्यपि यह सही है कि सबको खुश नहीं किया जा सकता। यह सब काम सहयोगके जरिये ही सम्भव हो सका है, और मेरे अधीनस्थ बागानमें न तो कभी कोई हड़ताल हुई है और न होगी। यह मैं

विश्वासके साथ कह रहा हूँ। इसलिए मैं आपसे कहता हूँ कि आप अपनी गति-विधियाँ बन्द करें और उनकी भी जो आपकी योजनासे सहानुभूति रखते हैं; और इस तरह यह जो लोगोंपर असम छोड़कर चले जानेका पागलपन सवार हुआ है, उसे रोकें। इस भाग-दौड़के कारण हजारों लोगोंकी जानें जा रही हैं; जरा उनके बारेमें भी सोचिए। एक गलतीको दूसरी गलतीसे सुधारा नहीं जा सकता।

मैं अपने तथा थोड़े-से और बागानोंको छोड़कर बाकी सब बागानोंमें अपनाये गये तरीकोंके खिलाफ हूँ। मैं यह कबूल करता हूँ कि ये चाय-बागान जहाँ व्यवस्थाका काम बाबू लोगोंके हाथमें है, चाय-उद्योगके लिए कलंक-रूप हैं। पर स्थितिको सुधारनेके लिए सहयोगकी, रचनात्मक आन्दोलनकी, कानून बनानेकी जरूरत है, न कि आपके तरीकोंकी। आपका तरीका यानी साम्यवादी बोल्शेविकोंका तरीका है — असहयोगकी भावना भी इसमें शामिल है। सत्य किसीको नुकसान नहीं पहुँचाता।

मैं अपने इस पत्रकी भाषाके लिए, जो केवल मेरे दिलके भावोंको प्रकट करती है, माफी चाहता हूँ।

आपका,

"चुप रहनेवाला मानो अपना दोष स्वीकार करता है।"

मैं इस पत्रको जैसाका-तैसा छाप रहा हूँ। पत्र लिखनेवाले ने अपना नाम लिखा तो है, पर वे उसे जाहिर नहीं करना चाहते। मैंने नेटाल और चम्पारन, दोनों ही जगह इस पत्रके लेखकके समान लोग देखे हैं। वे कुलियोंके शुभेच्छु अवश्य हैं, पर वे यह नहीं महसूस करते कि ऐसा होना केवल उस व्यक्तिके समान होना है जो दयालु होनेके नाते ही अपने पशुओंकी अच्छी तरह देखभाल करता है। एक बार अगर यह मंजूर कर लिया जाये कि मनुष्योंके साथ जानवरोंकी तरह बरताव किया जा सकता है तो बहुत-से गोरे मैनेजरोंको पशुओंके प्रति होनेवाली क्रूरताको रोकनेवाली सोसाइटीसे योग्यताके प्रमाणपत्र मिल सकते हैं। मुझे इस बातका पूरा अनुभव है कि मुफ्त दवा, मुफ्त इलाज, मुफ्त आवास तथा मुफ्त चरागाह — ये सब धन्धा चलानेकी चालें हैं, जिनका उद्देश्य कुलियोंको सदाके लिए दास बनाकर रखना है। यदि उसे पूरी मजदूरी दी जाये और उससे आवास तथा दवाके लिए पैसे लिये जायें तो वह ज्यादा आजाद होगा। निःशुल्क चरागाह तो उसके लिए उतना ही जरूरी है जितना कि साँस लेना। आपको हर बागानमें जो यूरेशियाई बच्चे मिलेंगे, वे वहाँकी मजदूर स्त्रियोंकी दयनीय दशाके साक्षी हैं। यदि मेरा बस चले तो मैं उन सब बागानोंको, जहाँ यूरेशियाई बच्चे पाये जाते हैं, बन्द कर दूँ, क्योंकि ये बच्चे भारतीय नारीत्वके प्रति किये गये अपराधके जीते-जागते प्रमाण हैं। मैं जानता हूँ कि समस्या काफी कठिन है। लेकिन यदि गोरे भारतीय स्त्रियोंके सतीत्वकी उतनी ही इज्जत करने लग जायें जितनी वे अपनी बहनोंकी करते हैं तो विवाह-सम्बन्धके बाहर इस तरहके यूरेशियाई बच्चे होने ही न

पायें। मैं 'स्वच्छन्द' यौन-सम्बन्धमें विश्वास नहीं रखता। यह विषय बहुत ज्यादा दर्दनाक है। स्त्रियों तथा पुरुषोंके यौन-सम्बन्धोंकी शुद्धताको मैं बहुत ही पवित्र वस्तु मानता हूँ। और इसीलिए मैंने इन सब बागानोंमें जो-कुछ देखा व सुना है, उसके बारेमें संयमके साथ लिख पाना मेरे लिए बहुत मुश्किल है। मैं यह नहीं कहता कि केवल गोरे मैनेजर ही यह हरकत करते हैं, भारतीय मैनेजर नहीं। मैं जानता हूँ कि भारतीय मैनेजरोंका अपराध छिप जाता है, क्योंकि उनसे पैदा हुए बच्चोंका रंग भारतीयोंके रंगमें मिल जाता है। पर यह मैं अवश्य कहूँगा कि गोरे मैनेजरोंको यह अपराध करते हुए किसी प्रकारके दण्डका भय नहीं होता, भारतीय मैनेजरोंको दण्डका भय रहता है। लेकिन मैं इस अध्यायको यहीं समाप्त करता हूँ। पत्र-लेखकने सलाह दी है कि चाय-बागानके मैनेजर पंचायतोंके अध्यक्ष हों, इस कुटिल सलाहसे चाय-बागानके मालिकोंकी पोल खुल जाती है। उक्त पत्रके लेखकने असहयोगके बारेमें जो-कुछ कहा है, उससे जाहिर होता है कि उन्हें असहयोगके बारेमें पूरी जानकारी नहीं है। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि मैंने असमके किसी भी कुलीको हड़ताल करनेकी सलाह नहीं दी है। मैं वहाँके मजदूरोंकी समस्याको जाननेका भी दावा नहीं करता। इसके अलावा लेखकको यह मालूम होना चाहिए कि असहयोग पूँजी अथवा पूँजीपतियोंके खिलाफ नहीं, बल्कि इस समय जो शासन-पद्धति चालू है, उसके खिलाफ हो रहा है। लेकिन यह भी सही है कि जहाँ-कहीं बुराई होगी, अत्याचार और अन्याय होगा वहाँ कोई चाहे या न चाहे, असहयोग होगा ही। लोग एक बार असहयोगकी शक्ति जान लेनेपर उसका इस्तेमाल जरूर करेंगे। यदि वे इसका इस्तेमाल मूर्खतापूर्वक या अनुचित रूपसे करते हैं तो नुकसान उनका ही होगा। मेरे खयालसे कानून बनाने या कौन्सिलोंमें वाद-विवादसे ज्यादा फायदा नहीं हो सकता। मजदूरोंकी हालत तभी सुधर सकती है जब मालिक उनके साथ भाई-बन्धुओंकी तरह व्यवहार करने लगें, या जब मजदूरोंमें खुद इतनी समझ आ जाये कि वे अपने हकोंको जानने लगें और उन्हें हासिल करनेके तरीके भी मालूम कर लें। किसी कानूनके लिए जनमत तैयार किये बिना वैसा कानून बनाना बेकार ही नहीं, नुकसानदेह भी है। जनमत तैयार करनेका या मौजूदा मामलेमें, तरीकोंमें परिवर्तन लानेका, या मेरी शब्दावलीमें कहिए तो हृदय-परिवर्तनका सबसे जल्दी सफल होनेवाला उपाय असहयोग ही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९–६–१९२१

१४०. टिप्पणियाँ

[२९ जून, १९२१]

घड़ा अथवा गागर

मैं यह टिप्पणी, हमारी जो परीक्षा[1] होनेवाली है उसके एक दिन पहले लिख रहा हूँ। कुम्हारकी भाषामें कहें तो अभी चाकपर मिट्टीके पिण्डको रखा गया है। उसमें से शुद्ध सम्पूर्ण घड़ा उतरेगा अथवा छोटी गागर, यह तो कार्यकर्त्ता ही जानें अथवा भगवान् जानें। जैसी मनोवृत्ति होती है वैसी बरकत होती है। चन्दा उगाहनेवालों की मनोवृत्ति अच्छी होगी तो बरकत अवश्य होगी। गुजरातसे दस लाख रुपयोंके बारेमें तो अब कोई शंका नहीं रही। आशा तो यह है कि दस लाख रुपयेसे भी अधिक रकम मिलेगी। इसमें आश्चर्य भी क्या है? हमारे पास अपेक्षाकृत दौलत अधिक है। गुजरातकी मिलें ही हमारी आशा पूरी कर सकती हैं। गुजरातके बाहर व्यापार करनेवाले साहसी व्यापारी दे सकते हैं, राजा लोग भयका त्याग करें तो वे भी इतना दे सकते हैं। हमने तो आजतक ऐसे कार्योंमें प्रजाके रूपमें हाथ ही नहीं डाला, अपनी शक्तिको आजमाया ही नहीं है; इसीसे हमने डरते-डरते कम अनुमान लगाया। भय छोड़ेंगे तो आगे बढ़ेंगे।

लेकिन हमें तो तीन लाख सदस्य और एक लाख चरखे चाहिए। हम इतना करते हैं या नहीं, इसपर हमारा भविष्य निर्भर करता है। ईश्वर! गुजरातकी और भारतकी लाज रखना।

हमारा दायित्व

लेकिन जैसे-जैसे पैसा बढ़ता जाता है, सदस्यों और चरखोंकी संख्यामें वृद्धि होती जाती है वैसे-वैसे हमारा दायित्व भी बढ़ता जाता है। पैसा मिलनेपर हम भाग्यवान नहीं माने जायेंगे; हमें पैसेको खर्च करना भी आना चाहिए, पैसेका हिसाब रखना आना चाहिए। हमें उस पैसेका सदुपयोग भी करना चाहिए। हमने पैसा ब्याजपर देनेके लिए नहीं लिया है बल्कि आजकी जरूरतको देखते हुए लिया है। हमें उस पैसेके द्वारा जन-जीवनको उन्नत बनाना है। हमें विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करना है। हमें [बच्चोंको] राष्ट्रीय शिक्षा देनी है, हमें अन्त्यजोंकी दयनीय स्थितिको सुधारना है। हमें अकालकी पीड़ाको दूर करना है। हमें मद्यपान करनेवालों से मद्यको छुड़ाना है। इन सब कार्योंमें हमें सारा पैसा चाहिए। उसके लिए हमारे पास ईमानदार कार्यकर्त्ता होने चाहिए। हमारा हिसाब स्पष्ट होना चाहिए। एक बालकको भी उसे देखनेका हक होना चाहिए। हमें जो पैसा मिला है उसके शुद्ध उपयोगपर ही हम भविष्यमें

१. ३० जून, इस तारीख तक बेजवाड़ा कांग्रेसमें निश्चित किये गये कार्यक्रमको पूरा किया जाना था।

मददकी आशा रख सकते हैं। इसमें हमारे पास निर्दोष बहनोंके अमूल्य आभूषण आये हैं। कितनी ही बालिकाओंने वे सब आभूषण दे डाले हैं जो उन्हें अत्यन्त प्रिय थे। मैं कितनोंका नाम जानता हूँ लेकिन मैं उन्हें प्रकट नहीं करना चाहता। उन्होंने भी नामसे कोई सरोकार नहीं रखा। स्त्रियोंके धनको उनका नाम प्रकट करके देना मुझे अच्छा ही नहीं लगता। उसमें मैं इतनी ज्यादा पवित्रताका आरोप करता हूँ कि उनका नाम प्रकट करना मुझे पाप-जैसा लगता है। उन्होंने वे आभूषण सिर्फ धर्मार्थ ही दिये हैं। एक विधवा बहनने अपने पास रखे हुए मोती-माणिकके सब आभूषण दिये हैं। उन्हें लेते समय मेरा हृदय भर आया। क्या हम इन आभूषणोंके अधिकारी हैं? विधवा अपने आभूषणोंको दे डालनेकी कभी इच्छा नहीं करती, वह उन्हें सँभालकर रखती है। इस बहनको मैंने सावधान किया। मैंने कहा कि अगर ये आभूषण संकोच अथवा शर्मके मारे दिये हों तो वापस ले लो। लेकिन वह क्यों लेती? उसने तो निश्चय कर रखा था। इस तरह मिले पैसेका हम गफलतसे, मूर्खतापूर्ण ढंगसे, बेईमानी-से दुरुपयोग करें तो? तो हमें स्वराज्य तो कभी नहीं मिल सकता, इस तरह हम नरकके भी अधिकारी बनेंगे। इन बहनोंका पुण्य, इनकी श्रद्धा हमें निभा लेगी, हमारी लाज रखेगी तथा हमारे मनोरथको पूर्ण करेगी।

पारसियोंकी उदारता

पारसी संघर्षमें भाग नहीं ले रहे हैं — ऐसा मैंने जब-जब सुना है तब-तब मुझे हँसी ही आई है। कुल मिलाकर हिन्दुस्तानमें एक लाख पारसी हैं। अगर हम संख्याके हिसाबसे ही विचार करें तो इनसे ४,१२० रुपया, उतने ही सदस्य और ८२४ चरखे मिल जायें तो हम कह सकते हैं कि उन्होंने अपना भाग अदा कर दिया। लेकिन ४,१२० रुपया तो उन्होंने छुटपुट दान द्वारा ही पूरा कर दिया है। अनेक गुमनाम भाइयोंने जो रुपया भेजा है उससे ही यह रकम पूरी हो गई होगी। पारसी रुस्तमजीने ५२,००० रुपया भेजा है, इसे भी मैं उसीमें शामिल करता हूँ और मैं मानता हूँ कि उन सबने मिलकर ४,१२० सदस्य भी अवश्य दिये होंगे। कितने ही पारसी स्वयंसेवक कांग्रेसके सदस्य बनानेका काम कर रहे हैं। वे बम्बईमें अच्छा कार्य कर रहे हैं। पारसी वकीलोंने वकालत भी छोड़ी है। एक सज्जनने अपना विज्ञान सम्बन्धी ज्ञान प्रजाको देनेका निश्चय किया है। चरखे अवश्य कम चलते हैं, तथापि कुछ-एक पारसी बहनों और भाइयोंने चरखेके कामको हाथमें ले लिया है। वे शराबकी दुकानोंपर धरना भी देते हैं। इसलिए क्या यह कहा जा सकता है कि उन्होंने किसी भी क्षेत्रमें कम काम किया है? उनके समस्त समाचारपत्र इस आन्दोलनके विरुद्ध नहीं हैं। 'साँझ वर्तमान'की सेवा प्रसिद्ध है। भाई भरूचाकी मेहनतसे कौन परिचित नहीं है? पारसी बहनें पर्याप्त संख्यामें जो काम कर रही हैं उसका विवरण तो मैं किसी अन्य स्थानपर दूँगा लेकिन उनमें से एकका नाम दिये बिना बात नहीं बन सकती। भारतके पितामहकी पौत्री तनतोड़ काम कर रही हैं। वे पूरी तरह खादीकी पोशाक ही पहनती हैं। यदि पारसी समाजने इतना ही किया होता तो भी हमने उनका उपकार माना होता, उनकी ओर हमने अँगुली न उठाई होती।

लेकिन भाई गोदरेजने तो बिलकुल हद ही कर दी है। उन्होंने तो तीन लाख रुपयेका दान दिया है। इतना तो किसी एक व्यक्तिने अबतक नहीं दिया। यह सच है कि यह रकम इस समय हमारे पास नकदीके रूपमें नहीं है, लेकिन यह तो सोनेकी मोहरके समान है। उन्होंने यह रकम हमारी प्रवृत्तिके दो शुद्धतम अंगोंके लिए अर्थात् मद्य-निषेध और अन्त्यजोंकी उन्नतिके लिए दी है। उन्होंने यह रकम खास तौरसे अन्त्यजोंकी उन्नतिके लिए दी है। इस कार्यके लिए मैं खुद तो सिर्फ हिन्दुओंका पैसा ही लेना चाहता हूँ। यह सुधार हिन्दुओंको ही करना है। लेकिन इस भाईने अपने निर्मल हृदयसे जब इसे देनेका निश्चय किया तो मैं इसे कैसे अस्वीकार कर सकता था? इस रकमको मिलाकर, जहाँतक मैं जानता हूँ, पारसियोंकी ओरसे कमसे-कम चार लाख रुपये हो जाते हैं। उनकी ओरसे जो भेंट मिलनेवाली है वह अलग है। भाई गोदरेज और पारसियोंको हम जितना धन्यवाद दें उतना कम है।

दक्षिण आफ्रिकासे भी मदद आ चुकी है। पाटीदार मण्डलने ८,२७५ रुपया, खत्री मण्डलने ९६० रुपया तार द्वारा भेजा है। मैं अभी और अधिककी उम्मीद रखता हूँ।[1] दक्षिण आफ्रिकाके पाटीदारोंकी दानशीलताका तो मुझे हमेशा अच्छा अनुभव होता रहा है।

कुछ लोग यह मानते जान पड़ते हैं कि जूनके बाद उन्हें अनुमति लिये बिना पैसा इकट्ठा करना अथवा भेजना नहीं चाहिए। यह तो निरा वहम है। आजतक हमने बेजवाड़ामें तय की गई तीन वस्तुओंपर ही ध्यान दिया है। उसका अर्थ यह नहीं है कि जूनके बाद नये सदस्य अथवा नये चरखे नहीं बनवाने चाहिए और पैसे इकट्ठे नहीं करने चाहिए। एक करोड़ रुपया इकट्ठा करनेके बाद तिलक स्वराज्य-कोषको हम भले बन्द कर दें। लेकिन एक करोड़ पूरा होने तक तो पैसा इकट्ठा करनेके लिए हम बँधे हुए हैं। हमारी प्रतिज्ञाके दो अंग हैं। एक करोड़ रुपया इकट्ठा करना और वह भी ३० जूनतक। अगर हम तीस जूनतक न कर सके और उसके बाद भी मेहनत करके एक करोड़ रुपया इकट्ठा करें तो हम ऋणमुक्त तो हो ही जायेंगे। अवधि बीतनेपर लज्जित हों। लेकिन बीतनेपर भी न देकर अथवा कम देकर हम निर्लज्ज तो नहीं बन सकते। इसलिए मुझे उम्मीद है कि जिन्हें इस कोषमें अभी चन्दा देना है वे अवश्य देंगे। गुजरातको उसके लिए प्रयत्न करनेकी जरूरत नहीं होगी क्योंकि गुजरात अपना फर्ज अदा कर चुका होगा।

यह तो हुआ तिलक स्वराज्य-कोषके सम्बन्धमें। लेकिन सदस्यों और चरखोंका क्या हो? [वचन तो] सिर्फ इतना ही है कि तीस जूनतक हम गुजरातसे कमसे-कम तीन लाख सदस्य बनायें और एक लाख चरखे चलायें। लेकिन हमारा कर्त्तव्य तो यह है कि गुजरात इस वर्ष २१ वर्षके लगभग प्रत्येक स्त्री-पुरुषको सदस्य बनाये, गुजरातके प्रत्येक घरमें चरखेका प्रवेश हो और आबाल-वृद्धको चरखा चलानेके लिए प्रेरित किया जाये। यदि हम गुजरात प्रान्तकी नौ लाख आबादी मानें और प्रति पाँच

१. यहाँ मूलमें एक पादटिप्पणी दी गई है जिसमें कहा गया है: "यह लिखनेके बाद तार द्वारा सूचना मिली है कि स्टेंजरकी इंडियन एसोसिएशनकी ओरसे लगभग १०० पौंड तथा नैरोबीसे १,२७४ रु० प्राप्त हुए हैं।"

व्यक्तियोंको एक घर गिनें तो अठारह लाख घर हुए। इसलिए जबतक हम ढाई लाख चरखे न चलाने लगें तबतक हमें सन्तोष नहीं होना चाहिए। चरखे और सदस्योंकी संख्यामें वृद्धि करनेकी प्रवृत्तिकी कोई सीमा नहीं हो सकती। जैसे-जैसे इसमें वृद्धि होगी वैसे-वैसे हमारा बल बढ़ेगा, स्वराज्यके झंडेका तेज और भी प्रखर होगा, स्वराज्यका जहाज आगे बढ़ानेके लिए हवा और प्रचण्ड होगी और स्वराज्यके जहाजकी गतिमें भी तीव्रता आयेगी। जून मासतक अमुक संख्यामें चरखे बढ़ाकर और सदस्य बनाकर हमने अपनी गतिके वेगको आँका और अनुमान लगाया कि हमारा उत्साह कम हुआ कि बढ़ा; हमारा विश्वास कम हुआ कि बढ़ा। इन दोनों प्रवृत्तियोंके निरन्तर जारी रहनेपर ही हमारे स्वराज्यका आधार निर्भर करता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३–७–१९२१

१४१. पत्र : लाला लाजपतरायको

[३० जून, १९२१ के पूर्व]

प्रिय लालाजी,

मुझे पूरी आशा है कि इस महीनेकी अन्तिम तिथिके पहले ही गुजरात जितना चन्दा देनेकी आशा कर रहा है, पंजाब भी उतना दे चुकेगा। मेरे ऐसा कहनेका कारण यह है कि मैं अमृतसरको बहुत अच्छी तरहसे जानता हूँ। अमृतसरने चन्दा वसूल करनेके सम्बन्धमें अबतक बहुत ही कम काम किया है। धनके मामलेमें अमृतसरका पंजाबमें वही स्थान है जो गुजरातमें अहमदाबादका है। भारतमें सभी स्थानोंसे अधिक जोरका धक्का अमृतसरको लगा है और इसलिए अमानवीय अपमानोंको असम्भव बनानेके लिए चलाये जानेवाले संघर्षमें भी उसे अगुआ होना चाहिए। मेरी कामना है कि आपके प्रयत्नोंसे अमृतसरके धनाढ्य व्यक्तियोंको उनका महान् उत्तरदायित्व समझाना सम्भव हो सकेगा।

हृदयसे आपका,

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ७५५६) की फोटो-नकलसे।

१४२. भाषण: बोरीवलीकी सभामें[1]

३० जून, १९२१

श्री गांधीने कहा कि बृहस्पतिवार आखिरी और सबसे महत्त्वपूर्ण दिन है। यह भारतकी परीक्षाका समय है और मुझे उम्मीद है आप इस परीक्षामें उत्तीर्ण होंगे। आज समय बहुत मूल्यवान है और मैं कोई लम्बा भाषण देने नहीं जा रहा हूँ। आज ही एक करोड़ रुपया इकट्ठा करना है और मैं आशा करता हूँ कि आप अपने कर्त्तव्यको पूरी तरह निभायेंगे। मैं नहीं जानता कि मैं यह रकम कैसे इकट्ठी कर पाऊँगा, लेकिन मुझे भारतीयोंकी योग्यता और देशभक्तिमें अत्यधिक विश्वास है और मेरे अन्तर्तमको इस बातका पक्का यकीन है कि हम यह जरूरी रकम इकट्ठी कर लेंगे। मुझे नहीं मालूम कि बम्बईमें कितना रुपया इकट्ठा हुआ है, क्योंकि मैं अहमदाबाद गया हुआ था। मुझे यह भी नहीं मालूम कि गुजरातमें कितना रुपया इकट्ठा हुआ है। गुजरातने दस लाख रुपया इकट्ठा करनेका जिम्मा लिया था; किन्तु गुजरातके लोगोंने वस्तुतः लगभग १२ लाख रुपया इकट्ठा कर लिया है और उन्हें पन्द्रह लाखकी पूरी-पूरी उम्मीद है। जब मैं अहमदाबादसे बम्बई आ रहा था तो रास्तेमें एक सज्जनने मुझे एक लाख रुपयेका चेक दिया और कहा कि वे बम्बईके समीप जमीनका एक बेशकीमती टुकड़ा भी दानमें देंगे। पंडालके द्वारपर मुझे २५,००० रुपयेका एक चेक दिया गया है। जोहानिसबर्गसे मुझे ९,००० रुपयेकी एक हुंडी और खत्री समाजसे १,००० रुपये मिले हैं।

मुझे बड़ी आशा है कि बम्बईके लोग मुझे आवश्यक रकम देंगे, क्योंकि चन्दा इकट्ठा करनेका बहुत बड़ा दायित्व बम्बईके कन्धोंपर ही है। जब मैं बम्बईसे रवाना हुआ था तबतक आप लोगोंने लगभग पन्द्रह-बीस लाख रुपया इकट्ठा कर लिया था और मुझे पूरी उम्मीद है कि भारतकी आज जो कसौटी हो रही है, उसमें वह खरा उतरेगा। मैंने यहाँ सिर्फ यह सुना ही है कि बोरीवलीमें बहुतसे धनवान व्यापारी रहते हैं और मैं भगवान्से प्रार्थना करता हूँ कि वे इस कोषमें मुक्त-हस्त होकर दान देंगे।

मैंने अहमदाबाद और बम्बईमें सुना है कि वैष्णवोंको इस आन्दोलनके प्रति बहुत ज्यादा शंकाएँ हैं। मैं उन्हें एक पत्र[2] लिख चुका हूँ जिसे शायद आप सब लोग

१. बोरीवलीकी जनताने गुरुवारकी सुबह गांधीजीको तिलक स्वराज्य-कोषके लिए एक थैली भेंट की। स्त्री-पुरुष बहुत बड़ी तादादमें इकट्ठे हुए थे। उपस्थित लोगोंमें वि० झ० पटेल, अली बन्धु और सरोजिनी नायडू भी थे।

२. देखिए "वैष्णवोंसे", ३-७-१९२१।

देखेंगे। आज तो भारत यही अपेक्षा रखता है कि सभी समुदायोंके लोग एक होकर स्वराज्य प्राप्तिके लिए महान् प्रयत्न करेंगे। तथापि इसका मतलब यह नहीं है कि आप अपना-अपना धर्म छोड़ दें। जबतक यह संसार है तबतक विचारोंमें अनेकता और मतभेद तथा भिन्न-भिन्न धर्म भी रहेंगे ही। लेकिन आपको स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए एक होकर प्रयत्न करना है। तथापि समाजके निम्न वर्गोंको इस पतितावस्थामें रखकर आप कभी स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकेंगे। उनको दबाकर रखना, हेय दृष्टिसे देखना, उनसे नफरत करना, उन्हें गालियाँ देना, उन्हें अपने कुओंसे पानी न भरने देना, अपने गाँवोंसे अलग रखना — यह सब निश्चय ही वैष्णव धर्म नहीं है। वह तो ईश्वर-विहीन धर्म है। वैष्णव धर्म तो कुछ और ही चीज है। वल्लभाचार्यने अपने शिष्योंको घृणा और असहिष्णुताकी शिक्षा कभी नहीं दी थी। उनके उपदेशोंका आशय था कि आपको दलित वर्गोंको, गरीबी और अज्ञानके अन्धकारमें डूबे हुए लोगोंको उठाना चाहिए। वल्लभाचार्यने आपको यह नहीं बताया है कि आप अपने भाइयोंको दलित करके रखें। मैं इन बातोंके सम्बन्धमें जितना ज्यादा सोचता हूँ, मेरा यह विश्वास उतना ही दृढ़ होता जाता है कि इस सवालके बारेमें वैष्णवोंने जो रुख अपना रखा है वह गलत है।

मैं आपसे यह सब एक दुनियादार व्यक्तिकी हैसियतसे और एक ऐसे व्यक्तिकी हैसियतसे कह रहा हूँ जिसे इन सब बातोंका बहुत अनुभव है। मैं अपने दक्षिण आफ्रिका-के अनुभवोंसे यह समझ गया हूँ कि किसी दलित वर्गका सदस्य होनेका मतलब क्या होता है। दक्षिण आफ्रिकामें मेरे साथ दलित वर्गके व्यक्तिकी तरह व्यवहार किया गया था। वहाँ मुझे गोरे लोगोंसे अलग उस स्थानपर रहना पड़ा था, जिसे "बस्ती" कहते थे। वह स्थान सचमुच एक ढेढ़वाड़ा (भंगियोंके रहनेका स्थान) ही था। वहाँ सफाई वगैरहका कोई इन्तजाम नहीं था और न रोशनी, सड़कें अथवा किसी सभ्य शहरमें सुलभ होनेवाली सुविधाएँ ही थीं। वहाँ मैंने जाना कि अन्त्यज होनेका मतलब क्या होता है और मैंने वे सारे कष्ट सहे हैं जिनसे भारतमें आज मेरे भाई कराह रहे हैं। अगर आप अपने भाइयोंके साथ अच्छा बरताव नहीं कर सकते तो आपके भारतीय होनेसे क्या फायदा है, और आपके इस देशमें जन्म लेनेसे क्या लाभ है?

अंग्रेजोंके हाथों आपको जो अपमान और अत्याचार सहना पड़ा है उसीके कारण आपने इस सरकारको शैतानी सरकार कहा है और आपने उसके साथ सहयोग न करनेका निश्चय किया है। तो क्या आप भारतीय लोग भी अपने भाइयोंके साथ वही बरताव करेंगे जो गोरे आपके साथ कर रहे हैं? आप जो-कुछ कर रहे हैं, क्या उसका हिसाब-किताब करना उचित न होगा? क्या यह उचित नहीं होगा कि आप जो-कुछ कर रहे हैं, तनिक रुककर उसपर विचार करें? मैंने आपसे अस्पृश्योंके हाथका भोजन खानेके लिए नहीं कहा है, मैंने तो आपसे सिर्फ उनके साथ भाइयोंका-सा बरताव

करनेके लिए ही कहा है। अगर आप सब एक होकर संकल्प करें, तो आप इसी क्षण स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं, लेकिन आप तो इतनी सारी जातियोंमें विभक्त हैं। अगर हिन्दू यह सोचें कि मुसलमान उनके जन्मजात शत्रु हैं और इसलिए उनसे घृणा करना अपना कर्त्तव्य मान लें, तो आप कभी स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते। आप भयके कारण ही अस्पृश्यताको दूर करनेसे भागते हैं। जून मासके इस आखिरी दिन, उच्च संकल्प और महत्त्वके इस दिन मैं आपसे कहूँगा कि इसी भयने आपको अपने भाइयोंको दलित रखने और उनसे पृथक जीवन व्यतीत करनेके लिए विवश किया है। जबतक आपके दिलोंमें गरीबोंके लिए करुणा और दयाका भाव नहीं जागता, जबतक आपके दिलोंमें अपने भाइयोंके प्रति प्रेम-भाव नहीं उत्पन्न होता तबतक आप भारतीय स्वराज्यके योग्य नहीं होंगे। मुझे एक करोड़ रुपयोंकी उतनी चिन्ता नहीं, मैं उसकी इतनी परवाह नहीं करता, क्योंकि किसी-न-किसी तरह आप यह रकम इकट्ठी कर ही लेंगे। लेकिन मैं आपसे जो चाहता हूँ वह यह है कि आप अपने दलित भाइयोंसे प्यार करें। मैं जिस स्वराज्यकी स्थापना करना चाहता हूँ वह घृणा और भयपर आधारित नहीं होगा, मेरा स्वराज्य तो न्याय और सत्यपर आधारित होगा। वह धर्मराज्य होगा।

कलसे आप लोग मुझे पैसा माँगते हुए, उसकी चर्चा करते हुए नहीं सुनेंगे। आप मुझसे कुछ और ही सुनेंगे। कलसे आपको सभी विदेशी वस्तुओंका व्यापार छोड़ना होगा। जो विदेशी कपड़ेका लेन-देन करते हैं, उन्हें उसे छोड़ देना होगा। विलायती कपड़ेका व्यापार करनेवालों को यह व्यापार छोड़ देना होगा और मैं बहनोंसे अपील करता हूँ कि वे विदेशी वस्त्र पहनना छोड़ दें और खद्दर पहनें। अगर आप देशके प्रति अपना कर्त्तव्य निभाना चाहते हैं तो आपको विदेशी वस्त्रोंका त्याग करके खद्दर पहनना चाहिए। अगर मेरी बहनें और बेटियाँ मुझे प्यार करती हैं और अगर उनके दिलोंमें मेरे प्रति तनिक भी आदर-भाव है तो मैं उनसे अपील करता हूँ कि वे विदेशी वस्त्र पहनना छोड़ दें और हमेशाके लिए विलासिताके इन उपकरणोंको त्याग देनेका पक्का निश्चय कर लें।

यहाँ मैं आपको एक व्यक्तिगत अनुभव सुनाऊँगा। अभी पिछले दिन ही मेरी पत्नीने मुझसे कहा कि वह जो मोटे खद्दरकी साड़ी पहने हुए है, उससे उसे खाना पकाने और घरका काम-काज करनेमें असुविधा होती है और वह मुझसे कुछ हलका और महीन वस्त्र पहननेकी अनुमति चाहती है। जैसे मैं जो कुछ करना चाहूँ वह करनेकी उसने मुझे पूरी स्वतन्त्रता दे रखी है, वैसे ही मैंने भी उसे सभी बातोंमें पूरी स्वतन्त्रता दे रखी है। इस हालतमें मैं स्वभावतः उससे कुछ करनेको नहीं कहना चाहता था। लेकिन मुझे अपनी पत्नीसे कहना पड़ा कि अगर वह मेरा भोजन खादी पहनकर नहीं पका सकती तो अच्छा हो कि वह मेरे लिए कुछ पकाये ही नहीं, क्योंकि मैं अपवित्र विदेशी कपड़े पहनकर बनाये गये भोजनमें से कुछ भी ग्रहण नहीं करूँगा। मैं अपनी

पत्नी द्वारा विदेशी वस्त्र पहनकर पकाये गये भोजनको हाथ भी नहीं लगाऊँगा। अगर भारतीय स्त्रियाँ इतना त्याग भी नहीं करना चाहतीं, अगर वे इतना कष्ट उठानेको भी तैयार नहीं हैं तो आपको अभी जलियाँवाला बाग-जैसी बहुत सारी विभीषिकाएँ झेलनी होंगी। अगर आप मेरे कथनकी ओर ध्यान नहीं देंगी तो आपको महीनेकी इस आखिरी तारीखको जो कष्ट उठाना पड़ रहा है आगे उससे भी अधिक कष्ट सहन करने होंगे। अन्तमें उन्होंने सभी हिन्दुओं और मुसलमानोंसे उत्कटता-पूर्वक अपील की कि वे सभी विदेशी वस्तुओंका त्याग कर दें और सिर्फ स्वदेशमें ही बनी वस्तुओंका इस्तेमाल करें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १–७–१९२१

१४३. भाषण: पारसियोंकी सभामें[1]

३० जून, १९२१

श्री गांधीने अपने लम्बे भाषणके दौरान श्रोताओंसे अनुरोध किया कि मेरे बोलते समय आप लोग कोई बाधा न डालें और हर्षध्वनि वगैरह न करें। उन्होंने कहा, मैंने ऐसा कभी नहीं कहा कि पारसी लोग मुझे अच्छी तरहसे नहीं जानते और वे मेरे साथ नहीं हैं। जब मैं छोटा बच्चा था, तभीसे मैं पारसियोंको जानता हूँ और पारसी मुझे जानते हैं। मेरे सबसे अच्छे और अन्तरंग मित्र पारसी हैं और पारसी समाजसे मेरा सम्बन्ध बहुत घनिष्ठ है। दादाभाई मेरे पिताके, बल्कि पितामहके समान थे और अगर आपको कभी स्वराज्य मिला तो यह दादाभाईके प्रयत्नों और इस देशके लिए उन्होंने जो शानदार काम किया है उसकी बदौलत होगा। जब मैं नवयुवक था, तब उन्होंने ही मुझे स्वराज्यका प्रथम पाठ पढ़ाया था। जब मैं दक्षिण आफ्रिकासे एक शिष्टमण्डल लेकर इंग्लैंड गया था तब दादाभाई नौरोजी और श्री फीरोजशाह मेहता मुझसे जो कहते थे, मैं वही बोलता और करता था। मेरे मनमें ऐसा खयाल कभी नहीं आया कि पारसी लोग मेरे विरुद्ध हैं। मुझे बराबर पूरी उम्मीद रही है कि इस आन्दोलनमें वे मेरा साथ देंगे। मुझे इस बातका तनिक भी दुःख नहीं है कि उनके मनमें शंकाएँ हैं। ये सिर्फ पारसी लोग ही हैं जो सैकड़ों वर्षोंसे तीस करोड़ भारतीयोंके बीच रहते आये हैं और तब भी उन्होंने दुनियाको अपने अस्तित्वका विशेष बोध कराया है और इस देशके जीवनके विभिन्न क्षेत्रोंमें एक प्रमुख स्थान प्राप्त

१. पारसियोंकी यह सभा गांधीजीको ३०,००१ की एक थैली भेंट करनेके लिए बम्बईके एक्सलसियर थियेटरमें हुई थी। सभामें वि० झ० पटेल, सरोजिनी नायडू, श्री और श्रीमती पिक्थॉल, अली बन्धु और डाक्टर किचलू भी मौजूद थे।

कर लिया है। मैं आपकी झूठी प्रशंसा करने नहीं जा रहा हूँ। मेरा ऐसा करनेका इरादा नहीं है। मैं वही कह रहा हूँ जो मैं सचमुच महसूस करता हूँ। संसारमें अनेक ऐसी जातियाँ हैं जो संख्यामें पारसियोंके समान ही कम हैं, लेकिन ऐसा नहीं है कि उन्हें उनके देशसे बाहर भी सारी दुनिया जानती हो। संसारमें ऐसा कौन-सा स्थान है जहाँके लोग पारसी समाजसे परिचित नहीं हैं, हालाँकि उनकी संख्या सिर्फ ८०,००० है। अगर बम्बई सुन्दर है, अगर बम्बई अपनी उदारताके लिए प्रसिद्ध है, अगर बम्बई अपनी लोक-भावनाके लिए प्रसिद्ध है तो यह सब आप लोगोंके कारण ही है। अगर पारसी न होते तो बम्बई भी भारतके किसी अन्य नगरके समान ही होता। इसके लिए सारा भारत आप लोगोंका आभारी है। अगर राजनीतिक क्षेत्रमें किसीने भारतीयोंको नेतृत्व दिया है तो पारसियोंने ही दिया है। और मैं अपने हिन्दू और मुसलमान मित्रोंसे कहूँगा कि वे पारसियोंपर किसी तरहका दोषारोपण न करें। अगर सभी समुदायोंके लोग परस्पर एक हो जायें तो आप इसी क्षण स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं। कमसे-कम मुझे तो इस बातपर बड़ा गर्व है कि पारसी किसी और देशमें न जाकर इसी देशमें आये और मुझे इस बातकी भी बड़ी खुशी है कि उन्हें गुजरातने आश्रय दिया, जिसकी उन्होंने बहुमूल्य सेवा की।

दक्षिण आफ्रिकामें जब गोरोंने आधी रातको मेरे मकानको घेर लिया था और वे मुझे मार डालना चाहते थे, उस समय जिन सज्जनने अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर अपना तथा अपने परिवारका सब-कुछ खतरेमें डालकर मेरी रक्षा की थी और मेरा साथ दिया था, वे पारसी रुस्तमजी ही थे। जबतक मैं जीवित रहूँगा तबतक पारसी रुस्तमजीने मेरे लिए जो-कुछ किया है, उसे कभी नहीं भूल पाऊँगा। पारसी लोग पवित्रता, सत्य और ईमानदारीसे भरपूर हैं और मुझे एक जातिके रूपमें आपपर अभिमान है। अगर आप लोगोंने ३०,००० रुपये इकट्ठे न किये होते और मुझे सिर्फ पाँच रुपये ही दिये होते तो भी मैं आप लोगोंसे सन्तुष्ट रहता। श्री गोदरेज मुझे पहले ही तीन लाख रुपये दे चुके हैं और उन्होंने समस्त भारतको दिखा दिया है कि पारसी लोग क्या-कुछ कर सकते हैं। पारसियोंने मुक्त-हस्त होकर न जाने मुझे कितना-कुछ दिया है और यह झूठ है कि भारत आकर आपने इस देशकी कोई सेवा नहीं की है। मेरे विचारसे तो आपने इस देशके प्रति अपना ऋण पूरा-पूरा चुका दिया है। स्वभावसे आप लोगोंकी जाति एक व्यावसायिक जाति है और यह दुःखकी बात है कि अभी थोड़े समयसे आप लोग सरकारी नौकरी भी करने लगे हैं। यह न केवल पारसी समाजकी बल्कि समस्त भारतकी क्षति है। लेकिन आपने जो शिक्षा प्राप्त की है उसने आपको सरकारी नौकरी करनेको विवश कर दिया है और यह सचमुच बड़े दुःखकी बात है। व्यापारने आपको ईमानदार बनना, पैसा इकट्ठा करके इस देशके अन्य वर्गोंकी सहायता करना सिखाया है और अब मैं आपसे वर्तमान परिस्थिति और अपने भविष्यका लेखा-जोखा करनेके लिए कहता हूँ। आपने दादाभाई नौरोजी,

फीरोजशाह मेहता और जमशेदजी टाटा जैसे नर-रत्नोंको जन्म देकर देशके प्रति अपना ऋण पूरा-पूरा चुका दिया है। मैं आप लोगोंसे स्वराज्य-आन्दोलनमें, जो अब जोरों-पर है, भाग लेनेका अनुरोध करता हूँ। आप लोग जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें अन्य समुदायोंका मुकाबला कर सकते हैं। अगर आपने अतीतमें इस देशके लिए इतना किया है, तो इस समय आप अपने-आपको इस आन्दोलनसे अलग क्यों रख रहे हैं? आप लोग बहुत समृद्ध हैं, आपके पास करोड़ों रुपये हैं, तो फिर आपने कोषके लिए और ज्यादा पैसा क्यों नहीं दिया? दादाभाईने राजनीतिक संन्यासीका जीवन व्यतीत करते हुए भारतकी जो सेवा की थी वह भारतको, सिर्फ पारसियोंको ही नहीं वरन् समस्त समुदायों और जातियोंको, स्वतन्त्र करनेके लिए ही की थी। मैं आपसे आपके मित्रके रूपमें इसलिए बात करने नहीं जा रहा हूँ, क्योंकि मैं आप लोगोंका बहुत बड़ा प्रशंसक हूँ और दीर्घकालसे आप लोगोंके साथ मेरा बहुत निकट सम्पर्क रहा है।

महात्माजीने आगे कहा कि अगर आप चाहें तो कोई भी काम बड़ी आसानीसे कर सकते हैं, क्योंकि आपका समाज सिर्फ अस्सी हजार लोगोंका एक छोटा और सुगठित समाज है। हिन्दुओं और मुसलमानोंके सम्बन्धमें यह बात नहीं कही जा सकती। अगर आप अंग्रेजोंके आनेसे पूर्व स्वतन्त्र रह सकते थे तो मेरी समझमें नहीं आता कि आप स्वराज्य प्राप्त करनेके बाद स्वतन्त्र क्यों नहीं रह सकते? इस देशमें छोटे समुदायोंकी रक्षा करना हिन्दुओं और मुसलमानोंका प्रथम कर्त्तव्य है। अगर हिन्दू और मुसलमान स्वयं अपने प्रति सच्चे हैं तो वे इस बातका ध्यान रखेंगे कि वे किसी भी पारसीके भूखे रहते अपने मुँहमें अन्नका एक कौर भी न डालेंगे। अगर हिन्दू और मुसलमान इसके अतिरिक्त कुछ और करना चाहते हैं तो माना जायेगा कि वे धर्म-राज्यके लिए काम नहीं कर रहे हैं। मैं आपको निर्भय बनाना चाहता हूँ और आपके मनमें किसी तरहकी शंका नहीं रहने देना चाहता। मैं चाहता हूँ कि आप अपनी सारी शक्ति देशके कल्याणके लिए लगायें। अगर आप ऐसा करें तो आप इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं तथा आप खिलाफत और पंजाब सम्बन्धी अन्यायोंका भी निराकरण कर सकते हैं। अगर आप संसारपर अंग्रेजोंकी तरह राज्य करना चाहते हैं तब मैं कहूँगा कि भारतीय उसके लायक नहीं हैं और मैं ईश्वरसे प्रार्थना करूँगा कि वे कभी उसके लायक भी न हों। क्या भारतीय हब्शी लोगोंको गुलाम बनाना चाहते हैं अथवा उन्हें कैदी बनाना चाहते हैं अथवा उनसे बेगार करवाना चाहते हैं और उन्हें भिखमंगा बनाकर रखना चाहते हैं? मैं चाहता हूँ कि आप आत्मशुद्धिके द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त करें और फिर समस्त संसारसे बुराइयोंको दूर करें।

मैं आपसे कहूँगा कि आप इसी क्षणसे स्वराज्यवादी बन जायें। आप स्वराज्य-वादी तो हैं ही, लेकिन आपके मनमें अभी कुछ शंकाएँ हैं; मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप सच्चे स्वराज्यवादी बनें। आप इन प्रश्नोंपर अच्छी तरहसे विचार करें और अपने-आपसे पूछें कि गांधी जो यह-सब बातें करता है, सो क्या वह मूर्ख है।

भारत जो स्वराज्य प्राप्त करनेवाला है वह धर्मराज्य है। भारतीय असत्यपर नहीं, बल्कि सत्यपर आधारित स्वराज्यकी स्थापना करना चाहते हैं और हम उन सभी चीजोंसे दूर रहना चाहते हैं जो असत्य हैं। मुझे शैतानसे असहयोग करनेकी शिक्षा पारसी समाजसे ही मिली है। इसने मुझे शैतानसे, सभी बुराइयोंसे अलग रहना सिखाया है। मैं अंग्रेजोंसे घृणा नहीं करता और न मैं उन्हें इस देशसे ही निकाल बाहर करना चाहता हूँ, लेकिन मुझे भारतीयोंको लॉर्ड रीडिंगकी तरह अंग्रेजोंकी प्रजा बताना पसन्द नहीं है। इन बातोंपर विचार करते हुए मेरी आत्मा काँप उठती है। आपमें किसी भी बुराईका प्रतिरोध करनेकी शक्ति होनी चाहिए। स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए आपके पास रिवाल्वरोंका होना अथवा आपका बैरिस्टर और वकील बनना जरूरी नहीं है। जो चीज आवश्यक है वह है आत्मविश्वास, किन्तु मुझे दुःख है कि पारसी लोग शंकाओंसे इस तरह भरे हुए हैं। मैं आपसे याचना करता हूँ कि आप अपनी शंकाओंको दूर कर दें। मैं आपसे अपील करता हूँ कि आप सब स्वराज्यवादी बन जायें और स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके निमित्त अन्य समुदायोंके साथ मिलकर काम करें।

इसके बाद श्री गांधीने शराबकी दुकानोंकी चर्चा की। उन्होंने कहा कि बम्बईमें पारसियोंके सिरपर एक बहुत बड़ा दायित्व है। बम्बईमें देशी शराबकी लगभग नौ सौ दुकानें हैं और अधिकांश दुकानोंके मालिक पारसी हैं। मेरे पास अनेक पारसी आये और उन्होंने मुझे बताया कि उन्होंने सरकारको एक सालकी पूरी रकम पहले ही दे दी है और अगर उनकी दुकानोंपर धरना दिया गया तो वे बरबाद हो जायेंगे और अपनी सारी पूंजी गँवा बैठेंगे। मैंने इन बातोंपर विचार किया है और मुझे दुकानदारोंसे बहुत सहानुभूति है। आप लोग सरकारके साथ सहयोग कर रहे हैं और आपने अपने खिताब नहीं छोड़े हैं, मुझे इसका तनिक भी दुःख नहीं है। लेकिन शराबकी दुकानोंकी बात अपेक्षाकृत अधिक गम्भीर है। मुझे दुःख है कि धरना देनेवालोंमें सिर्फ हिन्दू और मुसलमान ही हैं। क्या ही अच्छा होता, अगर मेरे पारसी भाई-बहन भी धरना देनेके इस काममें शामिल होते। मैं नहीं चाहता कि जोर-जबरदस्ती की जाये, मैं नहीं चाहता कि इस पवित्र उद्देश्यके लिए किसी प्रकारके आपत्तिजनक साधनोंका उपयोग किया जाये। जब पारसी स्त्रियाँ शराबकी दुकानोंपर जानेवाले पारसियोंकी राहमें खड़ी हो जायेंगी तब उन्हें शराबकी दुकानोंके अन्दर घुसनेमें शर्म आयेगी और उन्हें गाली देनेमें शर्म आयेगी तथा वे उनपर हाथ भी नहीं उठायेंगे। श्री गांधीने पारसियोंसे कहा कि आप शराब पीना छोड़ दें तथा अपने उन भाइयोंकी मदद करें जिन्हें धरना दिये जानेके कारण अपनी दुकानोंको बन्द करना पड़ा है। आप उन्हें सरकारसे उनकी रकम वापस दिलानेमें मदद करें और जिस तरह सम्भव हो, सहायता दें। अहमदाबादमें एक पारसी ठेकेदारने मुझसे शिकायत की कि धरना देनेवालोंने उसपर हमला किया लेकिन जाँच करनेपर उसकी यह बात गलत साबित हुई। सच तो यह है कि स्वयंसेवकोंपर ही हमला किया गया था और अब वे अपने सिरपर पट्टी बाँधकर धरना दे रहे हैं। उन्होंने बदलेमें हाथ नहीं उठाया।

श्री गांधीने अपने पारसी भाइयों और बहनोंसे अपील की कि वे अन्य समुदायों द्वारा शराबखोरीको रोकनेके लिए किये जानेवाले प्रयत्नोंमें सहायता दें। मैं नहीं समझता कि जो लखपती पारसी इस सभामें शामिल नहीं हुए हैं, वे मेरे आन्दोलनके विरुद्ध हैं और उन लोगोंसे मेरी प्रार्थना है कि वे शराबके ठेकेदारोंकी जितनी बने उतनी सहायता करें। इस बीच मैं आप लोगों [दुकानदारों]से स्वराज्यके काममें मदद देनेकी बात कहता हूँ। मैं भगवान्से प्रार्थना करता हूँ कि वह पारसी समाजको, स्वराज्य-प्राप्तिके लिए इस समय जो संघर्ष चल रहा है, उसमें उचित हिस्सा लेनेका बल प्रदान करे और इस समय उसका क्या कर्त्तव्य है, यह समझनेकी सद्बुद्धि दे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १–७–१९२१

१४४. भाषण: बम्बईके व्यापारियोंकी सभामें[1]

३० जून, १९२१

महात्मा गांधीने कहा कि आप लोगोंने देशको स्वतन्त्र करनेके निमित्त जो धन मुझे दिया है, उसके लिए मैं आपका कृतज्ञ हूँ। मैं आशा करता हूँ कि आप मुझसे इस समय लम्बे भाषणकी अपेक्षा नहीं करेंगे, क्योंकि शामको मुझे और भी दो सभाओंमें जाना है। आप लोगोंसे मुझे केवल यही कहना है कि यदि कोलाबाके सूतके व्यापारियोंकी तरह अन्य व्यापारियोंने देशकी स्थितिको पहचान लिया तो पंजाब और खिलाफतके प्रति किये गये अन्यायोंका निराकरण करवाना कदापि कठिन नहीं होगा। मैं चाहता हूँ कि देशके व्यापारी अब अपने देशकी राजनीतिमें प्रमुख हिस्सा लिया करें। जबतक व्यवसायमें लगे हुए लोग देशके मामलोंमें अधिक दिलचस्पी लेना शुरू नहीं करते तबतक हमें अपने उद्देश्यमें सफलताकी जरा भी आशा नहीं करनी चाहिए। परन्तु इन वर्गोंमें जागृतिके शुभ लक्षण दिखाई देने लगे हैं। और यदि यही क्रम जारी रहा तो इस वर्षके भीतर ही स्वराज्य मिलना निश्चित समझिए। अपने देशकी राजनैतिक स्थितिमें प्रमुख भाग लेना व्यापारी-वर्गोंका प्रथम कर्त्तव्य है। श्री मथुरादासने ठीक ही कहा है कि स्वराज्य-कोषमें हमने जो-कुछ दिया है वह उतना नहीं है जितना कि होना चाहिए था। इस कथनका कारण यह है कि हम करोड़ों रुपयेके मूल्यका सूत प्रतिवर्ष बाहर भेज देते हैं और हमें उस पापके प्रायश्चित्तस्वरूप एक करोड़ रुपयेमें जितनी कसर रहती हो उसे पूरा करना चाहिए था। ये एक करोड़ रुपये आज राततक इकट्ठे हो जाने चाहिए। मुझे भारतीयोंपर पूरा विश्वास है; आशा

१. यह भाषण कपड़ा-व्यापारी संघके तत्त्वावधानमें हुई एक सभामें दिया गया था जिसमें कपड़ा-व्यापारियों और कर्मचारियोंने तिलक स्वराज्य-कोषके लिए गांधीजीको २,५०,००० की थैली भेंट की थी।

है कि वे कांग्रेसके आदेशकी उपेक्षा नहीं करेंगे। हम अन्य प्रान्तोंसे ४० लाखकी उम्मीद कर सकते हैं और बाकीका ६० लाख आप लोग बम्बईमें पूरा करें। मुझे पूरी आशा है कि आप इस रकमको इकट्ठा करनेकी भरसक कोशिश करेंगे और इस तरह देशकी प्रतिष्ठाकी रक्षा करेंगे। हमने बेजवाड़ामें जो शपथ ली थी, आज उसे पूरा करनेका अन्तिम दिन है और यदि आज राततक यह धन नहीं प्राप्त किया जा सका तो सारे भारतकी आँखें नीची होंगी। आज तो राष्ट्रका सम्मान व्यापारियोंपर निर्भर है। धनके मामलेमें सिर्फ वे ही मदद कर सकते हैं। मेरे जैसे भिखारीसे तो कोई आर्थिक मददकी आशा नहीं की जा सकती। भाषण समाप्त करते हुए उन्होंने ईश्वरसे प्रार्थना की कि वह आवश्यक धन मुहैया करके देशकी प्रतिष्ठा बनाये रखनेकी सामर्थ्य प्रदान करे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १-७-१९२१

१४५. भाषण : बम्बईकी सभामें[1]

३० जून, १९२१

महात्माजीने कहा कि बम्बईमें स्त्री-पुरुषोंमें जो जोश मैंने देखा है, उससे मुझे भविष्य आशामय लगता है और मुझे उम्मीद है कि हमने जो शपथ कलकत्तामें और फिर दुबारा नागपुरमें ली थी, उसे हम पूरा कर सकेंगे। मुझे इस वक्ततक ठीक नहीं मालूम कि देशमें कितना रुपया चन्देमें आ चुका है। परन्तु केवल कुछ ही मिनट पहले मुझे सूचना मिली है कि काठियावाड़में दो लाखसे ज्यादा चन्दा हो गया है और आज सुबह एक सज्जनका भेजा हुआ २५,००० रुपयेका चैक मुझे मिला है। हमें काठियावाड़से ५०,००० रुपयेसे ज्यादाकी आशा नहीं थी। मैं जो-कुछ देख रहा हूँ, उससे आशा होती है कि एक करोड़ जमा हो जायेगा। परन्तु मैं इस सम्बन्धमें निश्चित रूपसे जानना चाहता हूँ और इसलिए बम्बईके कुछ मिल-मालिकोंसे आश्वासन चाहता हूँ कि यदि अपेक्षित रकम जमा न हो सकी तो वे कमीको पूरा कर देंगे। मुझे पूरी आशा है कि इस तरहका आश्वासन मिल जायेगा। आगे बोलते हुए उन्होंने कहा कि इस अवसरका लाभ उठाकर मैं कुछ शब्द महिलाओंसे अपने देशके हृदयमें पैठे हुए विश्वास और उसकी प्रतिष्ठाके विषयमें कहूँगा। जैसा कि सभी लोग जानते हैं स्त्रियाँ ही हम लोगोंके विश्वासकी न्यासी हैं और राष्ट्रकी अन्नपूर्णा हैं। राष्ट्र सशक्त या आदर्श राष्ट्र केवल तभी हो सकता है जब हमारी महिलाएँ पूर्णतया धार्मिक और देशभक्त हों। फिलहाल तो भारतीय महिलाओंकी पवित्रता और उनका धर्म

१. न्यू चिंचबन्दरमें मांडवी हलकेकी कांग्रेस समितिके तत्त्वावधानमें तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा करनेके लिए शामको की गई एक सभामें।

खद्दरमें ही समाहित है। इसलिए मैं अपील करता हूँ कि आजसे महिलाएँ सभी विदेशी वस्त्रोंका परित्याग कर दें और अपनी तथा अपने बच्चोंकी पोशाक शुद्ध खद्दरकी ही बनाया करें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २–७–१९२१

१४६. एक महिलाको लिखे पत्रका अंश

रेलगाड़ीमें
३० जून, १९२१

समाचारपत्रोंमें आपके जेवरोंके बारेमें प्रकाशित एक अंशने आपके दानकी सारी खूबसूरती ही नष्ट कर दी है। मैंने यह आशा कर रखी थी कि वह दान त्यागका एक मौन कार्य होगा। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि कई लड़कियोंने आपसे ज्यादा रकमें दानमें दी हैं। उन्होंने अपने नामका ढिंढोरा पीटनेकी इच्छा नहीं की। आजसे दो दिन पहले एक बहनने मुझे अपने सारे कीमती जेवर — मोतीका हार, मानिकके कंगन और बुन्दे दे डाले। उस बहनने ये सब चीजें बड़ी विनम्रता और शोभायुक्त ढंगसे दीं। वे अपना नाम प्रकाशित कराना नहीं चाहतीं। उन्होंने यह सब ईश्वरके नामपर दिया है। मुझे आपके लिए खेद है। इस कटु सत्यके लिए मुझे क्षमा कीजियेगा . . .।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१४७. भाषण : बाँदराकी सभामें[1]

१ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने कहा : कल रात हम सो नहीं सके हैं। हम दो बजेतक नाट्यशालामें रहे। हम वहाँ नाटक देखने नहीं गये थे बल्कि तिलक स्वराज्य-कोषके लिए रुपया इकट्ठा करने गये थे। जब मैंने अपने मित्र मुहम्मद अलीको अपने थैलेमें जेवरोंके अतिरिक्त २५,००० रुपयेकी रकम लाते हुए देखा तो मुझे ३० वर्ष बाद फिर नाट्यशालामें प्रवेश करनेपर अपार हर्ष हुआ। इसी कारण अली बन्धु सभामें नहीं आ सके

१. गांधीजीने उत्तरी बम्बईके इस उपनगरमें सुबहके वक्त की गई एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया था। यह सभा उनको तिलक स्वराज्य-कोषके लिए १५,००० रुपयेका चैक देनेके उद्देश्यसे आयोजित की गई थी।

हैं, वे बिलकुल थक गये थे। यदि मैंने श्री पटेलको वचन न दिया होता तो स्वयं मेरे लिए भी यहाँ आ सकना कठिन था। श्री पटेल चाहते हैं कि यह राशि छोटी-छोटी रकमोंके रूपमें गरीब लोगोंसे इकट्ठी की जाये। मैं इस बारेमें उनसे सहमत हूँ और यदि इस देशके गरीब लोग थोड़ा-थोड़ा चन्दा देकर एक करोड़ रुपया पूरा कर दें तो मुझे प्रसन्नता हो। हम लगभग एक करोड़ रुपया इकट्ठा करनेमें समर्थ हो गये हैं। ४४ लाख रुपये शेष भारतने दिये हैं और बाकी रुपया इसी महाप्रान्तमें इकट्ठा किया गया है। मैं इस बातको प्रकाशित कर देना चाहता था कि हमने एक करोड़ रुपया इकट्ठा कर लिया है और इस देशकी लाज रह गई है। कल आधी राततक हम ८१-८२ लाखतक ही इकट्ठा कर पाये थे। जब हमने थोड़ेसे दिनोंमें इतनी बड़ी रकम इकट्ठी कर ली है तो हम शेष रकम भी बहुत आसानीसे इकट्ठी कर सकेंगे। फिर भी मैंने अपने ४ या ५ धनी मित्रोंसे इस कमीके बारेमें बातचीत की है और उन्होंने शेष रकमकी पूर्ति करनेका वचन दे दिया है। मैं इस बातको संसारके सम्मुख प्रकट करना नहीं चाहता कि मैंने इस प्रकारका आश्वासन प्राप्त कर लिया है, क्योंकि मेरे मित्रोंने मुझसे कहा है कि यदि उनका नाम प्रकट कर दिया जायेगा तो इसका अर्थ उनका विज्ञापन करना ही होगा; इसके अतिरिक्त अन्य लोग अपना-अपना चन्दा रोक लेंगे। इसलिए मुझे आपके सम्मुख यह घोषणा करते हुए प्रसन्नता होती है कि एक करोड़ रुपया तो पूरा हो ही जायेगा। यदि यह रकम छोटे-छोटे चन्दोंके रूपमें इकट्ठी की जाती तो मैं कहता कि बाँदराके लोग स्वराज्यके योग्य हैं। यदि बाँदराके धनी लोगोंने कुछ नहीं दिया है तो मेरे लिए यह चिन्ताकी बात नहीं है। वे आगे चलकर देंगे। जब मुझे श्री पटेलने यह सूचना दी कि बाँदरामें तो केवल १०,००० रुपये इकट्ठे किये जा सकेंगे तो मुझे जरा भी बुरा नहीं लगा। यद्यपि इस रकमके इकट्ठा करनेपर मैं आपको बधाई देता हूँ, किन्तु आपमें से कुल मिलाकर कांग्रेसके जितने सदस्य बने हैं और बाँदरामें जितने चरखे चल रहे हैं उसपर आपको मैं बधाई नहीं दे सकता। मुझे एक करोड़ रुपयेकी चिन्ता नहीं है, किन्तु मुझे कांग्रेसके एक करोड़ सदस्य बनानेकी चिन्ता जरूर है। जितने रुपयोंकी जरूरत मुझे है उसके बारेमें जब मैं अपने एक मित्रसे बात कर रहा था और उससे यह कह रहा था कि मैं एक करोड़ रुपयेसे सन्तुष्ट नहीं होऊँगा, मुझे तो कई करोड़ रुपये चाहिए, तब मेरे उस मित्रने कहा कि विक्टोरिया स्मारक-कोषमें भी लगभग ५२ लाख रुपये ही इकट्ठे हो पाये थे और वह कोष अधिकारियोंके प्रभावको काममें लाते हुए दबाव और खुशामदके जरिये इकट्ठा किया गया था। तिलक स्वराज्य-कोष बिना किसी दबावके और केवल स्वेच्छासे दिये गये पैसोंसे इकट्ठा किया गया है। तो फिर भला उस रकमको इकट्ठा करनेमें कितना प्रयत्न न किया गया होगा!

हमने बेजवाड़ाका कार्यक्रम पूरा कर लिया है। लेकिन अब हमें कांग्रेसके सदस्य बनाने हैं और घर-घरमें संकल्पित संख्यामें चरखे चलवाने हैं। इस देशमें ६ करोड़

परिवार रहते हैं; प्रत्येक घरमें चरखा होना चाहिए। मैं केवल चरखोंकी संख्यासे या उनके कते हुए सूतकी मात्रासे सन्तुष्ट होनेवाला नहीं हूँ। मुझे उससे भी बड़ी चीज चाहिए। मैं आपके शरीरोंपर चरखेकी छाप देखना चाहता हूँ। मेरे कहनेका अर्थ यह है कि आप सबको खद्दर पहनना चाहिए। यदि आप खद्दरका व्यवहार करते हैं तो साफ जाहिर है कि आप चरखेका उपयोग कर रहे हैं। हम इतने सालोंसे एक भ्रममें फँसे रहे और इसलिए हम विदेशी कपड़ेका व्यवहार करते रहे। यदि हम स्वराज्य चाहते हैं तो हमें केवल खद्दरका ही उपयोग करना चाहिए। भारतीयोंको केवल स्वदेशी वस्त्र ही पहनने चाहिए और हर कार्यके लिए खद्दर ही काममें लाना चाहिए। लोकमान्य तिलकने एक बार अपने एक मित्रसे कहा था कि यदि हमारा देश रोगों और मौसमी बुखारका घर बन जाये तब भी हम भारत छोड़कर इंग्लैंड नहीं जायेंगे और वहाँ रहकर स्वराज्य लेनेका प्रयत्न नहीं करेंगे। भारत हमारी मातृभूमि है और उसका जलवायु चाहे जितना बुरा हो तो भी हमें यहीं रहना है और यहीं मरना है। जबतक हम ऐसा नहीं कर पाते तबतक इस देशके लोग कभी सुखी नहीं रह सकेंगे। यदि हमें भारतसे प्रेम है, यदि हम उन तिलक महाराजका आदर करते हैं जिन्होंने यह कहा था कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, तो भारतीयोंको विदेशी कपड़ेका व्यवहार छोड़ देना चाहिए। अभी उस दिन एक पारसी महिलाने मुझे अपने एक हजारके विदेशी जेवर भेजे; मैंने उस महिलाको नहीं देखा है और मैं उसका नाम भी नहीं जानता। भारतीयोंको विदेशी जेवर क्यों पहनने चाहिए? क्या भारतके सब सुनार मर गये हैं? जबतक भारतमें सुनार हैं और उन्हें काफी काम नहीं मिल रहा है तबतक हम विदेशोंमें बने आभूषण क्यों पहनें? मुझे निश्चय है कि जिस पारसी बहनने मुझे अपने आभूषण दिये हैं वह अब खद्दर पहन रही होगी या यदि अबतक खद्दर नहीं पहनती होगी, तो अब जल्दी ही पहनने लगेगी। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप शुद्ध स्वदेशीका व्यवहार करें। मैं आपसे धन देनेका अनुरोध नहीं करता, क्योंकि धन तो किसी-न-किसी तरह इकट्ठा किया ही जा सकता है; किन्तु मेरी आपसे पहली प्रार्थना यही है कि आप विदेशी कपड़ा पहनना छोड़ दें। सितम्बरके बाद मैं आपसे ये बातें नहीं कहूँगा। सितम्बरके बाद मैं अपने मुसलमान मित्रोंसे यह कहने जा रहा हूँ कि यदि वे खिलाफतके प्रश्नका निपटारा अपनी इच्छाके अनुसार कराना चाहते हैं तो वे केवल स्वदेशी कपड़ेका व्यवहार करें। आपमें से हरएक स्त्री-पुरुषको चरखेका प्रयोग करना चाहिए और आजसे केवल स्वदेशी कपड़ेका व्यवहार करनेका निश्चय कर लेना चाहिए। हमारे कार्योंमें एक नया दौर शुरू हुआ है और यदि हम स्वदेशी कपड़ेका उपयोग करेंगे तो हमारी शक्ति कई गुनी हो जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २–७–१९२१

१४८. 'नवजीवन' को तार[1]

बम्बई

[१ जुलाई, १९२१]

भारत लोकमान्य की स्मृति और स्वराज्य-स्थापनाके लिए बनाये गये कोषमें जून मासके अन्ततक लगभग ८० लाख रुपया इकट्ठा करनेमें सफल हो गया है। मुझे उम्मीद है कि शेष बीस लाख रुपया जनता बिना किसी देरके पूरा कर देगी। यद्यपि बेजवाड़ाके कार्यक्रमको अक्षरशः पूरा हुआ नहीं कहा जा सकता तथापि यह कह सकते हैं कि जनताने कांग्रेसकी माँगका सुन्दर उत्तर दिया है। बम्बईने अपनी उदारता और दान देनेकी क्षमताके अपने पहले सभी रेकार्ड तोड़ दिये हैं। उसे और दूसरे प्रान्तोंको मिलकर अब बाकी रकम को तुरन्त पूरा कर लेना चाहिए। लेकिन इस समय तो सबसे ज्यादा ध्यान विदेशी कपड़ेके सम्पूर्ण बहिष्कार और कांग्रेसके करोड़ सदस्य बनानेके कार्यको पूरा करनेकी ओर लगाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३–७–१९२१

१४९. 'नवजीवन' को तार[2]

बम्बई

[१ जुलाई, १९२१]

देशबन्धु चित्तरंजन दास तार द्वारा खबर देते हैं कि तिलक स्वराज्य-कोषमें बंगालने २५ लाख रुपया दिया है। इस तरह हिन्दुस्ताननने अपनी प्रतिज्ञाका एक करोड़ रुपया पूरा कर लिया है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३–७–१९२१

१. यह सन्देश तार द्वारा बम्बईसे भेजा गया था।

२. यह तार पिछले शीर्षकमें जिस तारका उल्लेख है उसके तुरन्त बाद दिया गया था।

१५०. विदेशी कपड़ेका बहिष्कार[1]

ईश्वर महान् है। जिधरसे आशा नहीं होती वह उधरसे सहायता भेज देता है। अभी कुछ ही दिन पहले श्री दासने[2] मुझे तार द्वारा यह सूचित किया था कि बंगालमें तीन लाखसे ज्यादा रुपया इकट्ठा नहीं हुआ है। मेरे लिए यह घोषणा करना कोई छोटी बात नहीं थी कि भारतमें नियत तिथितक पूरा एक करोड़ रुपया एकत्रित नहीं हो पाया। मैंने मित्रोंसे कम पड़नेवाली रकमकी पूर्तिका जिम्मा लेनेका बहुत आग्रह किया है। वे मुझे यह रकम देनेके लिए तैयार हो गये लेकिन उन्होंने यह ठीक नहीं समझा कि उनके नाम संसारके सम्मुख प्रकट किये जायें, क्योंकि उनकी रायमें यह प्रसिद्धि पानेके प्रयत्न-जैसा लगता है। उन्होंने कहा कि रकमको जहाँका-तहाँ मानकर कांग्रेस महासमितिकी बैठकसे पहले बाकी रकम सार्वजनिक रूपसे इकट्ठी करनेका प्रयत्न किया जाये तो ज्यादा अच्छा होगा। मैंने हार तो मान ली, लेकिन मेरा हृदय बहुत खिन्न हुआ कि ईश्वरने मेरी प्रार्थना नहीं सुनी। फिर भी मैं यह जानता था कि ईश्वर सहायता देनेसे कभी नहीं चूकता। उसने बंगालको मेरी रक्षाके लिए भेज दिया और बेजवाड़ामें राष्ट्रने जो संकल्प किया था वह हो गया। हमें नम्र भावसे उसके चरणोंमें सिर झुकाना चाहिए; खुशियाँ मनानेके लिए हमें मार्गमें हरगिज नहीं रुकना है। हमें आगे बढ़ते जाना चाहिए। यद्यपि संग्रह की हुई कुल रकम अब एक करोड़ ५ लाख[3] रुपयेसे ऊपर पहुँच गई है, फिर भी प्रत्येक प्रान्तको एक करोड़ रुपयेमें से अपनी आनुपातिक रकम तो पूरी करनी ही चाहिए।

लेकिन हमारा अगला आवश्यक कदम विदेशी कपड़ेका पूर्ण बहिष्कार करना है। पहली अगस्तको हम लोकमान्य तिलककी पुण्यतिथि मनाते हैं। यदि हम निश्चित रूपसे और विशेष प्रयास करें तो हम इस तारीखसे पहले ही विदेशी कपड़ेका लगभग पूर्ण बहिष्कार कर सकते हैं। मैं जानता हूँ कि इसके लिए हमें बहुत बड़े बहुमतका समर्थन चाहिए। लेकिन यदि हम उतने ही उत्साहसे काम करें जितना हमने धन-संग्रह करनेमें दिखाया है तो सबका ऐसा समर्थन प्राप्त करना असम्भव नहीं है। भारतमें स्वराज्यकी स्थापना करनेकी शक्ति तभी आयेगी, उससे पहले नहीं। हम विदेशी कपड़े-

१. इस लेखका मूल शीर्षक था "अब हमें क्या करना चाहिए: एक अगस्ततक कपड़ेका बहिष्कार"।

२. चित्तरंजन दास।

३. २-७-१९२१ के **बॉम्बे क्रॉनिकल**में छपी रिपोर्टके अनुसार इस रकममें प्रान्तोंका भाग (लाखोंमें) इस तरह था: बम्बई नगर ३७$\frac{१}{२}$; बंगाल २५; गुजरात और काठियावाड़ १५; पंजाब ५; मद्रास और आन्ध्र ४; मध्य प्रदेश और बरार ३; महाराष्ट्र (बम्बईके उपनगरों सहित) ३; बिहार ३; सिन्ध २; उत्तर प्रदेश २$\frac{१}{२}$; कर्नाटक १; दिल्ली २; अजमेर और मारवाड़ $\frac{१}{२}$; उड़ीसा और असम $\frac{१}{४}$; बर्मा १$\frac{१}{४}$।

का पूर्ण बहिष्कार करके लोकमान्यकी पुण्यतिथि जितने अच्छे रूपमें मना सकते हैं, उससे अच्छे रूपकी कल्पना मैं नहीं कर सकता।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २–७–१९२१

१५१. भाषण : बम्बईकी सार्वजनिक सभामें[1]

शनिवार, २ जुलाई, १९२१

अब आप मुझसे पैसेकी बात नहीं सुनेंगे। अब तो इसीपर विचार करना है कि हमें आगे क्या करना है। पैसा आये तो कोई हर्ज नहीं। तिलक महाराजके नामपर एक करोड़ तो क्या दस करोड़ भी न्यौछावर करें तो यह कोई बड़ी बात न होगी। स्वराज्यके लिए आवश्यकता पड़े तो दस करोड़ भी खर्च करें, लेकिन दस करोड़की जरूरत पड़ेगी ही नहीं। आवश्यकतासे अधिक एक पाई भी खर्च न करनेवाले व्यक्तिको व्यवहारकुशल कहा जाता है। अब तो आप एक ही बातपर विचार करें। पहली अगस्तको तिलक महाराजकी पुण्यतिथि है, उस दिन हमें क्या करना चाहिए?

तिलक महाराजका जो मन्त्र[2] था उससे आपको मुग्ध होना चाहिए। उनकी विद्वत्ता अथवा मधुर वाणीसे नहीं बल्कि उनके कार्यसे, यज्ञसे, स्वार्थ-त्यागसे आपको मोहित होना चाहिए। उनकी जो हार्दिक इच्छा थी, जिसके लिए उन्होंने अपने प्राण उत्सर्ग किये, जिसके लिए उन्होंने कष्ट सहे, आपको वह कार्य पूरा करना चाहिए। उनका इससे बढ़कर और कोई अच्छा स्मारक हो ही नहीं सकता। आप अरबों रुपया केवल इकट्ठा करें, इसकी अपेक्षा आप एक भी पाई इकट्ठी किये बिना स्वराज्य प्राप्त करें तो वह बेहतर होगा। मुझे दृढ़ विश्वास है कि आप अवश्य ऐसा करेंगे। लेकिन जबतक आप स्वराज्यका विचार नहीं करते तबतक कुछ नहीं हो सकता। आपको विदेशी कपड़ेका विचार करना ही होगा। इसपर कोई आपकी हत्या नहीं कर देगा, आपको सिर्फ अपने दिलको जरा समझाना पड़ेगा, जैसे बालकोंके गलेमें कड़वी दवाका घूँट उतारना पड़ता है उसी तरह बहनोंको भी अपने गलेमें यह घूँट उतारना चाहिए। आप पहली अगस्तकी राह न देखें; बल्कि कल ही अपने सन्दूक, शरीर और समझकी जाँच कर लें। विदेशी कपड़ा हमारी गुलामी है। आपको गुलामी छोड़ देनी चाहिए। व्यापारियोंको तो अवश्य ही छोड़ देनी चाहिए। तिलक महाराजको गाली देकर अगर कोई पैसा दे तो वह मैं कैसे लूँ, मैं अगर ले भी लूँ तो महाराष्ट्र तो मेरा सिर ही काट ले। हम तिलक महाराजका सच्चा स्मारक बनाना चाहते हैं तो सबको स्वदेशी

१. यह सभा बम्बई कमीशन एजेन्ट्स एसोसिएशन और लिंगायत कमीशन एजेन्ट्स एसोसिएशनके संयुक्त तत्त्वावधानमें हुई थी। इनकी ओरसे तिलक स्वराज्य-कोषके लिए गांधीजीको ५,००१ रुपये भेंट किये गये थे।

२. "स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूँगा।"

बनना ही चाहिए। अगर आप पैसा दें तो वह विदेशी कपड़ेका त्याग करनेके वचनके रूपमें ही दें। आप यह सोचकर कि विदेशी कपड़ेके व्यापारसे पैसा कमा लेंगे, स्वराज्य-कोषमें पैसा नहीं दे सकते।

आप विदेशी कपड़ेके व्यापारको गोमांस और शराब तुल्य समझें। आप आढ़तका धन्धा करते हैं और दलाल द्वारा माल भेजते हैं। उसमें आप विदेशी कपड़ा भी भेजते हैं। इसलिए आप प्रतिज्ञा करें कि आप अपने ग्राहकोंको ऐसा माल नहीं भेजेंगे। क्या कोई हिन्दू अपने ग्राहकको शराब भेज सकता है? जो वस्तु हम ग्राहकको भेज नहीं सकते तो उसका व्यापार कैसे कर सकते हैं? इसी तरह हम विदेशी कपड़ेका भी व्यापार नहीं कर सकते। आपके दिलोंमें अंग्रेज अथवा अंग्रेजी कपड़ा बनानेवाले के प्रति तिरस्कार न होकर, विदेशी कपड़ेके प्रति होना चाहिए। देश जिस धन्धेसे गुलामीके गर्तमें गिरता है उससे आप पैसा कमायें, यह कैसे सम्भव है? एक पारसी भाई शराबके बारेमें मुझसे पूछने आये। उनसे मैंने कहा कि अगर आप भिखारी भी बन जायें तो भी आपको शराबको हराम समझना चाहिए। जो चीज हिन्दके हिन्दुओं और मुसलमानोंको फूटी आँख नहीं सुहाती उससे आप कमाई कैसे कर सकते हैं? यही बात विदेशी कपड़ेपर भी लागू होती है।

शराबकी दुकानोंपर हम जैसे धरना देते हैं वैसे ही विदेशी कपड़ेकी दुकानोंपर भी क्यों न दें, यह बात मेरी समझमें नहीं आती। विदेशी कपड़ेका बहिष्कार तो अधिक महत्त्वका है। बहनो, आप विदेशी कपड़ा खरीदती हैं, सो अधर्म है। विदेशी कपड़ा खरीदना अर्थात् अपने बालकको छोड़कर पराये बालकको गोद लेना। विदेशी कपड़ोंमें आप सुन्दर लगती हैं, ऐसा आप समझती हैं। लेकिन सच्चा सौन्दर्य तो आपकी कर्त्तव्यपरायणतामें है। सीताने उद्धत रावण द्वारा भेजे गये कपड़ोंका तिरस्कार कर पत्तोंसे अपने शरीरको ढकना अधिक पसन्द किया था। आप बहनें भी सीताजी बनें। आप विदेशी कपड़ा न छोड़ें और स्वराज्य माँगें, यह कैसे हो सकता है? पहली अगस्तसे पहले-पहले आपको इतना तो करना ही होगा।

आपमें से जो साहसी हों वे विदेशी कपड़ेको जला डालें। कंगालोंको देना चाहें तो मुझे दें; क्योंकि आप असली कंगालोंको नहीं पहचानते। उन्हें तो मैं ही पहचानता हूँ। आपने उन्हें पहचाना होता तो आप विदेशी ठाठमें आनन्द न मनाते, मौज-शौक न करते। आप विदेशीके मोहको त्याग दें, तभी हमारा काम हो सकता है। आपने जो रुपया दिया है उसके पीछे निहित वचनका आप पालन करें। अभी तो हमें सिर्फ उसीकी जरूरत है।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १०-७-१९२१

१५२. वैष्णवोंसे

आपमें से अनेक मेरे सगे हैं, अनेक जातिभाई हैं, और कितने ही बचपनके मित्र हैं, [जिनके] बहुत-सारे पत्र मुझे मिलते रहते हैं। अन्त्यजों सम्बन्धी मेरे विचारोंके लिए आपमें से कोई मुझे बधाई देता है, अनेक इसे मेरी भूल मानकर विनयपूर्वक मुझे समझाते हैं, कोई गुस्सेमें आकर मुझे गालियाँ देते हैं और कोई-कोई तो मुझे धमकी भी देते हैं।

इस सबको मैं, उनके मनमें मेरे प्रति निहित प्रेमकी निशानी समझता हूँ। अन्त्यजोंके सम्बन्धमें मेरे जो विचार हैं वैसे ही विचार अन्य अनेक लोगोंके भी हैं और वे अन्त्यजोंको स्पर्श करनेमें कोई दोष नहीं देखते। लेकिन ज्यादातर लोगोंको मुझपर ही गुस्सा आता है और उसका कारण मैं यही समझता हूँ कि वे मुझे दूसरी तरहसे मर्यादा धर्मका पालन करनेवाला तथा एक अच्छा व्यक्ति मानते हैं। उनके अनुसार अन्त्यजों सम्बन्धी मेरे विचारोंमें जो भूल निहित है उसको वे सहन नहीं कर सकते। उनकी मान्यता है कि मेरे ये विचार स्वराज्य सम्बन्धी हमारी गतिको भी अवरुद्ध करते हैं। कोई-कोई तो यह भी मानते हैं कि मैंने आपत्तिको अपने हाथों न्यौता दिया है और अपनी हठधर्मीसे स्वराज्यकी नावको तूफानमें डाल दिया है।

दूसरी ओर, मेरी नम्र मान्यता यह है कि अन्त्यजोंके प्रति मेरे भाव मेरे वैष्णव-धर्मको दीप्त करते हैं, उनमें मेरी शुद्ध दया निहित है, उनसे मेरी मर्यादाकी शुद्धता सिद्ध होती है।

कितने ही वैष्णव यह मानते हैं कि मैं वर्णाश्रम-धर्मका लोप कर रहा हूँ और मेरी मान्यता यह है कि मैं वर्णाश्रम-धर्मको मलिनतासे निकालकर उसके शुद्ध स्वरूपको प्रकट कर रहा हूँ। मैं अन्त्यजोंसे रोटी और बेटीके व्यवहारकी हिमायत नहीं कर रहा हूँ। मैं तो इतना ही कहता हूँ कि किसी भी मनुष्यको छूनेमें पाप होता है, ऐसा विचार करना ही पाप है।

रजस्वलाका उदाहरण देकर अन्त्यजोंकी अस्पृश्यताके विचारका जो बचाव किया जाता है, उसे मेरी मति तो अज्ञान मानती है। रजस्वला बहनसे अगर हम छू जाते हैं तो उसे हम पाप नहीं मानते। उसे तो हम शारीरिक शौच नियमको भंग हुआ जान, नहा-धोकर स्वच्छ हो जाते हैं। जिस अन्त्यज भाईने मैला उठाया हो और जबतक वह न नहाये अथवा दूसरी तरहसे स्वच्छ न हो तबतक स्पर्श न करना अथवा स्पर्श हो जानेपर नहा लेनेकी बात तो मैं समझ सकता हूँ लेकिन अन्त्यज कुलमें जन्मे लोगोंका सर्वथा त्याग करनेमें धर्म होनेकी बातको मेरी आत्मा कतई स्वीकार नहीं कर सकती।

वैष्णव धर्मका मूल दया है। अन्त्यजोंके प्रति हमारे व्यवहारमें दयाका लेशतक नहीं दिखता। हममें से अनेक व्यक्ति तो अन्त्यजोंको गालीके बिना बुलाते ही नहीं हैं। भूलचूकसे अगर वे हमारे डिब्बेमें बैठ जाते हैं तो उनपर गालियोंकी बौछार होने

लगती है। हम उन्हें वही जूठा भोजन देते हैं जो हम जानवरोंको देते हैं। उनके बीमार पड़ने अथवा साँपके काटनेपर हमारे वैद्य अथवा डाक्टर उनकी दवा करने नहीं जाते। यदि जाने लगें तो जहाँतक हमारा वश चलता है हम उन्हें जानेसे रोकते हैं। अन्त्यजों-के रहनेके लिए खराबसे-खराब मुहल्ला और उसमें न रोशनीकी व्यवस्था और न सड़कोंका ही प्रबन्ध। उनके लिए कुएँ नहीं होते। सार्वजनिक कुओं, धर्मशालाओं और विद्यालयोंका लाभ उन्हें नहीं मिलता। उनसे हम कठिनसे-कठिन सेवा लेकर कमसे-कम वेतन देते हैं। उनके लिए तो ऊपर आकाश और नीचे धरती है। यह क्या वैष्णव धर्मकी निशानी है? इसे दयाधर्म कहें कि क्रूरताधर्म कहें? अंग्रेज सरकार, जिसके साथ आपने भी असहयोग किया है, हमारा इस सीमातक तिरस्कार नहीं करती। हम तो अन्त्यजोंके प्रति अपनी डायरशाहीको धर्म मानकर पोषित करते हैं।

मैं तो मानता हूँ कि हमने जो बोया है वही काट रहे हैं। हम अन्त्यजोंका तिरस्कार करके जगत्‌के तिरस्कारका पात्र बनते हैं।

अस्पृश्यताको बुद्धि ग्रहण नहीं कर सकती। वह सत्य और अहिंसाका विरोधी धर्म है; इससे वह धर्म ही नहीं है। हम ऊँच हैं और दूसरे नीच हैं — यह विचार ही नीच है। जिस ब्राह्मणमें शूद्रका — सेवाका — गुण नहीं वह कोई ब्राह्मण नहीं है। ब्राह्मण तो वह है जिसमें क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रके सब गुण हों। इसीके उपरान्त ज्ञान आता है। शूद्र कोई ज्ञानसे नितान्त विमुख नहीं है। उनमें सेवा प्रधान है। वर्णा-श्रम धर्ममें ऊँच-नीचकी भावनाको अवकाश नहीं है। वैष्णव-सम्प्रदायमें तो भंगी, चांडाल आदि तर गये हैं। जो धर्म जगत्-मात्रको विष्णुमय जानता है वह अन्त्यजोंको विष्णुसे रहित कैसे मान सकता है?

लेकिन मैं आपसे शास्त्रार्थ नहीं करना चाहता। मैं विद्वान् होनेका दावा नहीं करता। शास्त्रार्थमें सारे शास्त्री मुझे भले ही हरा दें। लेकिन मुझे विश्वास है कि दया धर्मका मुझे ठीक-ठीक अनुभव है। दया धर्ममें अन्त्यज तिरस्कारको अवकाश हो ही नहीं सकता।

और फिर आप अन्त्यज किसे कहेंगे? बुनकरको अन्त्यज कहेंगे? चमड़ेके जो लखपति व्यापारी हैं उन्हें अन्त्यज कहेंगे? अथवा सोना सारी मलिनताको धो डालता है? जिसने चमारका धन्धा छोड़ दिया है, जो भंगी मोटर चलाता है, मिलमें काम करता है, हमेशा नहाता-धोता है, क्या उसे भी आप अस्पृश्य मानेंगे?

लेकिन मैं दलील किसलिए करूँ? जिसे अस्पृश्य मानो, उससे छू जानेपर पाप मानो और नहाना चाहो तो नहा लो; लेकिन मेरी प्रार्थना तो यह है कि जिस तरह मासिक धर्ममें पड़ी हुई माताका आप तिरस्कार नहीं करते बल्कि उसकी सेवा करते हैं उसी तरह अन्त्यजोंका भी तिरस्कार न कर उनकी सेवा करें। उनके लिए कुएँ खुदवाएँ, स्कूल बनवाएँ, उन्हें दवा दें, उनके लिए वैद्य भेजें, उनके दुःखमें भाग लें, उनकी आत्माकी दुआ लें, उनको अच्छी जगहमें रखें, अच्छा वेतन दें, सम्मान और शिक्षा दें तथा उन्हें अपना छोटा भाई समझें। उनसे मद्यपान, गो-मांसाहार आदि छुड़वाएँ, जो छोड़ें उन्हें प्रोत्साहन दें। ऐसा करके आप देख सकेंगे कि अस्पृश्यता समाज-का एक अतिरिक्त अंग है। आपमें कुछ-एकने अन्त्यजों सम्बन्धी मेरे विचारोंके कारण

तिलक स्वराज्य-कोषमें चन्दा दिया ही नहीं है। मैं आप लोगोंसे प्रार्थना करता हूँ कि अगर आप अस्पृश्यताको नहीं छोड़ते तो भी आप सुधारोंके कामके लिए पैसेकी मदद तो दे ही सकते हैं। कितने ही वैष्णवोंने तो जो पैसा दिया है सो यह कहकर दिया है कि वह इसी कामके लिए खर्च किया जाये। इसके अतिरिक्त अन्त्यजों सम्बन्धी मेरे विचार आपको पसन्द न हों तो भी आप स्वदेशी आन्दोलनके लिए, अकालके लिए, स्कूलोंके लिए तो पैसा दे ही सकते हैं। लेकिन मेरी मान्यता तो ऐसी है कि अन्त्यजोंकी उन्नतिकी बातका विरोध आप करेंगे ही नहीं। इसलिए मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप दया धर्ममें अपने विश्वासके प्रतीक रूपमें पैसा इसी शर्तके साथ दें कि वह अन्त्यजोंकी उन्नतिके कार्योंके लिए खर्च किया जाये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३–७–१९२१

१५३. विदेशी मालका बहिष्कार कैसे हो[1]

इस समय जब कि काफी समय बीत गया है, यह बतानेकी आवश्यकता नहीं कि विदेशी वस्त्रोंका प्रस्तावित बहिष्कार प्रतिहिंसात्मक कार्रवाई नहीं है; बल्कि यह राष्ट्रीय जीवनके लिए उतनी ही आवश्यक है जितनी कि जीवनके लिए साँस। इसलिए बहिष्कार जितनी जल्दी अमलमें लाया जायेगा, देशका उतना ही अधिक कल्याण होगा। इसके बिना न तो स्वराज्यकी स्थापना की जा सकती है और न स्थापनाके बाद उसे कायम ही रखा जा सकता है। इसलिए यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि अगस्तकी पहली तारीखसे भी पहले इसपर कैसे अमल किया जाये।

बहिष्कारको जल्दीसे-जल्दी अमली रूप देनेके लिए निम्नलिखित बातोंकी आवश्यकता है: (१) मिल-मालिक अपने लाभोंको नियमित करें और प्रमुख रूपसे भारतीय बाजारके लिए माल तैयार करें, (२) आयात करनेवाले, विदेशी माल खरीदना छोड़ दें — तीन प्रमुख व्यापारी इसकी शुरुआत कर भी चुके हैं, (३) उपभोक्ता सभी प्रकारके विदेशी कपड़ेको खरीदनेसे इनकार कर दें और जहाँतक सम्भव हो खादी खरीदें, (४) उपभोक्ता केवल खादी पहनें, मिलका कपड़ा उन गरीबोंके लिए रहने दें जो कि स्वदेशी और विदेशीके भेदको नहीं जानते, (५) उपभोक्ता स्वराज्यकी स्थापना और खादीके निर्माणमें वृद्धि होने तक उतना ही कपड़ा उपयोगमें लायें जितना कि तन ढकनेके लिए आवश्यक हो, (६) उपभोक्ता विदेशी कपड़ोंको उसी प्रकार नष्ट कर दें जिस प्रकार कि मद्य-त्यागकी शपथ लेनेपर मादक पेयको नष्ट कर दिया जाता है; या उसे विदेशोंमें उपभोगके लिए बेच दें, या जिन कामोंको

१. ऐसा प्रतीत होता है कि यह टिप्पणी जो ६–७–१९२१ के **यंग इंडिया**में छपी थी, अन्य समाचारपत्रोंको भी भेजी गई थी।

करनेमें कपड़े गन्दे होते हैं उन कामोंके समय अथवा सोने आदिके समय उन्हें पहनकर जीर्ण-शीर्ण कर डालें।

यह आशा की जाती है कि उपर्युक्त अनुच्छेदमें जिन लोगोंका उल्लेख किया गया है, वे सब एक साथ और इस सम्बन्धमें अच्छा काम करेंगे। किन्तु अन्तमें तो सफलता उपभोक्ताके दृढ़ निश्चयपर ही निर्भर करती है। उसका अपनी गुलामीका बिल्ला लगानेसे इनकार कर देना पर्याप्त है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ४–७–१९२१

१५४. पत्र : न० चि० केलकरको

बम्बई
४ जुलाई [१९२१]

प्रिय श्री केलकर,

मुझे अबतक जितनी बधाइयाँ मिली हैं उनमें से सबसे ज्यादा मूल्यवान बधाई मैं आपकी मानता हूँ। यदि आपने कामको उचित मानकर बधाई दी है तो इसमें मैं आपका हार्दिक सहयोग चाहता हूँ। मुझे कार्य-समितिके सम्बन्धमें आपका पत्र[1] मिला। भविष्यमें आपको जैसी आत्मिक प्रेरणा मिले आप वैसा ही करें। मेरे मनमें केवल यही खयाल आता है कि हमें कार्य-समितिको ऐसी संस्था बना देना चाहिए जो तेजीसे कार्य कर सके, जो शक्तिशालिनी हो और जिसमें मतैक्य हो। उसमें मतभेदकी गुंजाइश है, विश्वास भेदकी नहीं। मेरा तो विश्वास है कि हम कांग्रेसके संविधानको दक्षतापूर्वक कार्यान्वित करके जो-कुछ चाहते हैं वह सब पा सकते हैं। किन्तु मैं अपने विश्वासको भारतपर जबरन लाद नहीं सकता। यदि हमें इस सालके अन्दर स्वतन्त्रता मिलनी बदी है तो वह विश्वास आ ही जायेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१२२) की फोटो-नकलसे।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

१५५. पत्र : के० राजगोपालाचार्यको

गामदेवी
बम्बई
५ जुलाई, १९२१

प्रिय महोदय,

आपका इसी २८ तारीखका पत्र मिला। आपने अपने पत्रमें जिस मामलेका उल्लेख किया है उसकी चर्चा मैं 'यंग इंडिया'में जल्दी ही कर रहा हूँ। आपने जो सुझाव दिया है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

श्री के० राजगोपालाचार्य
तिरुपति
मद्रास राज्य

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ५६६८) की फोटो-नकलसे।

१५६. टिप्पणियाँ

उत्तरदायित्वका आरम्भ

'तिलक स्वराज्य-कोष'को भारतने जो अभूतपूर्व समर्थन दिया, उससे प्रकट हो जाता है कि भारतको असहयोगके अपने नेताओंपर भरोसा है। क्या नेता अपने-आपको इस भरोसेके योग्य सिद्ध करेंगे? अनेक लोगोंने बड़ी उदारतासे दान दिया है, और सभीने यह सवाल पूछा है कि इस निधिका उपयोग किस प्रकार किया जायेगा। मैंने निस्संकोच यही उत्तर दिया है कि प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंके नेता जिम्मेदार और परखे हुए व्यक्ति हैं। यदि हम इस कोषमें मिली पाई-पाईका लेखा-जोखा नहीं रखते और धनका उपयोग बुद्धिमानीसे नहीं करते तो हमें सार्वजनिक जीवनसे बाहर कर दिया जाना चाहिए। हमें याद रखना चाहिए कि गरीबसे-गरीब आदमियोंने अपनी शक्ति-भर दिया है। कई लोगोंने तो अपना सब-कुछ दे दिया है। धोबी, बढ़ई, लुहार, ईसाई, यहूदी, पारसी, सिख, जैन, मुसलमान और हिन्दू — सभीने यथाशक्ति दिया है। १६ जूनतक, जब बम्बईमें संग्रहका काम आरम्भ हुआ, सारे भारतमें प्राप्त हुई धन राशि ३० लाख रुपये थी — और शायद इतनी भी नहीं थी। मुझे विश्वास था जूनके अन्ततक बम्बईके अतिरिक्त दूसरे प्रान्तोंमें ही चालीस लाख रुपये इकट्ठे

हो जायेंगे। इसलिए सारे भारतने १४ दिनोंमें अथक प्रयत्न करके प्रतिदिन ५ लाख रुपयेके हिसाबसे धन दिया। बम्बईके बाहरके प्रान्तोंने ३० जूनतक बम्बईके जितने ही समयमें ३८ लाख रुपये जमा कर लिए थे। रिकार्ड बुरा नहीं रहा। इस विश्वासको हम किस प्रकार बनाये रख सकते हैं? हमें हिसाब इस तरह बिलकुल ठीक-ठीक रखना चाहिए कि एक बच्चा भी उसे देख और समझ सके। असहयोगके अतिरिक्त और किसी भी उद्देश्यके लिए इस धनका उपयोग नहीं होना चाहिए और सामान्यतः नीचे लिखे उद्देश्योंके अतिरिक्त और किसी उद्देश्यके लिए नहीं: (१) चरखे और खादीके प्रचारके लिए, (२) अस्पृश्यता निवारण, और इस प्रकार दलित जातियोंके उत्थानके लिए, (३) राष्ट्रीय पाठशालाओं — जहाँ कताई और बुनाई भी शिक्षणके विषय हों — के संचालनके लिए और (४) नशाबन्दी आन्दोलनको आगे बढ़ानेके लिए।

इन उद्देश्योंमें राष्ट्रीय सेवाको जारी रखना भी शामिल है। इस सेवाके द्वारा ही हम ऊपर लिखे उद्देश्योंको प्राप्त कर सकेंगे और ऊपर लिखे उद्देश्योंको प्राप्त करना यह दिखाना है कि हम स्वराज्यके योग्य हैं और उसके उचित पात्र हैं।

मैं सभी प्रकारकी समितियोंको सतर्क कर दूं कि वे इस कोषसे मिलनेवाले सूद-पर निर्वाह करनेकी बात न सोचें। रुपया सूदपर लगाना और फिर सूदसे ही काम चलाना राष्ट्रपर और अपने-आपपर अविश्वास जाहिर करता है। राष्ट्रका विश्वास ही हमारी पूँजी होनी चाहिए और समय-समयपर उससे मिलनेवाला सहयोग ही हमारा सूद। यदि हम राष्ट्रके प्रतिनिधि होनेका दावा करते हैं तो हमें उसकी सेवाके लिए बनाई गई संस्थाओंका वार्षिक व्यय चलानेके लिए उसपर भरोसा करना चाहिए। सूद-पर निर्वाह करनेकी प्रवृत्ति हमें गैर-जिम्मेदार बनाती है। भारतके विभिन्न भागोंमें धर्मके नामपर जो अपार धनराशि पड़ी-पड़ी सड़ रही है, उसके कारण ऐसी तमाम धार्मिक संस्थाएँ यदि बाकायदा भ्रष्टाचारके अड्डे नहीं बन गई हैं तो ढोंग-मात्र बनकर तो रह ही गई हैं। इसलिए यदि हम पिछले अनुभवसे लाभ उठाना चाहते हैं, तो हमें प्राप्त हुआ सारा धन अगले छः महीनोंमें खर्च कर देना चाहिए। मैंने बेजवाड़ामें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सामने वित्तीय कार्यक्रम पेश किया था। वह मैंने इसलिए किया था कि मुझे मालूम था कि हमारे पास ईमानदार और योग्य कार्यकर्त्ता हैं जो राष्ट्रीय और प्रान्तीय स्तरपर उचित रूपसे धनका उपयोग कर सकते हैं और फिर हमें इस वर्षके लिए उस धनराशिकी आवश्यकता भी थी। विदेशी कपड़े-के बहिष्कारमें हम तबतक सफल नहीं हो सकते, जबतक हम चरखे, हाथकता सूत और खादी खरीदनेमें खुले हाथों खर्च न करें। स्वदेशीका प्रचार हमें बराबर तबतक करते रहना चाहिए जबतक चरखा व्यावसायिक रूपसे लाभदायक बनकर घर-घरमें न पहुँच जाये। वर्ष-भरमें खर्च कर सकनेकी दृष्टिसे एक करोड़ रुपये बहुत बड़ी रकम नहीं है, क्योंकि उसका वितरण एक बड़े भू-भागमें करना है। मेरा सुझाव है कि इस मासके अन्ततक प्रत्येक प्रान्त अपना एक बजट बनाये और ठीक उतना ही खर्च करे — न ज्यादा, न कम। मैंने एक महीनेका सुझाव इसलिए दिया है कि उससे पहले विभिन्न प्रान्त शायद ही अपना हिसाब-किताब ठीक कर पायें और शायद ही चन्देके वायदोंकी रकम वसूल कर पायें। और फिर हमें देखना चाहिए कि अखिल भारतीय

कांग्रेस कमेटी आनेवाले महीनोंके बारेमें क्या निर्णय करती है। यदि हम सुव्यवस्थित रूपसे यह कार्यक्रम पूरा कर लें तो हम सितम्बरके अन्ततक नहीं तो दिसम्बरसे पहले ही स्वराज्य अवश्य प्राप्त कर लेंगे।

बम्बईका फैसला

बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने वहाँ जमा चन्देकी रकमके इन्तजामके बारेमें एक बहुत व्यावहारिक और शोभनीय निर्णय किया है। उस प्रस्तावका महत्त्वपूर्ण भाग, जहाँतक मुझे याद है, कुछ इस प्रकार है:

> चूँकि जूनमें अखिल भारतीय तिलक स्मारक-कोषके लिए जो चन्दा जमा किया गया था वह केवल प्रान्तीय आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिए नहीं बल्कि बेजवाड़ामें अपने ऊपर लिये गये उत्तरदायित्वको निभानेके लिए और उन प्रान्तोंकी सहायताके लिए था जिन्हें सहायताकी जरूरत है, इस कमेटीकी राय है कि इस निधिके व्ययके प्रबन्धके लिए एक विशेष समिति नियुक्त करना वांछनीय होगा। सर्वश्री राघवजी पुरुषोत्तम, वेलजी लखमसी नापू, रेवाशंकर जगजीवन झवेरी, उमर सोबानी, जमनालाल बजाज, अर्देशर बरजोरजी गोदरेज, शंकरलाल बैंकर और लक्ष्मीदास तैरसीको उस समितिमें नियुक्त किया जाये, जो उक्त कोषकी रकमके खर्चका नीचे लिखी शर्तोंके साथ प्रबन्ध करे और उसपर नियन्त्रण रखे:
>
> (१) निधिका पहला दायित्व प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीका असहयोग सम्बन्धी व्यय होगा।
>
> (२) अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी सिफारिशपर चरखे और खादीके प्रसार, दलित जातियोंके उत्थान, राष्ट्रीय पाठशालाओं, अकाल पीड़ितोंकी सहायता और मद्य-निषेधके लिए दूसरे प्रान्तोंको सहायता दी जायेगी।

यह कार्य आत्म-त्यागका है, जिसके लिए बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी सारे देशकी बधाईकी पात्र है। प्रस्तावमें जो उद्देश्य साफ-साफ दिखाई देता है वह है इस विशाल धनराशिका इस प्रकार प्रबन्ध करना जिसमें सन्देहके लिए कोई गुंजाइश न रह जाये।

एक मुसलमान भाईके लिए त्यागपत्र

बम्बईने आत्म-त्यागका एक दूसरा उदाहरण भी प्रस्तुत किया है। मुसलमानोंके प्रतिनिधित्वके बारेमें कार्य-समितिने अपनी राय तब दी जब मतदान पत्र जारी किये जा चुके थे। मतदानके फलस्वरूप केवल एक मुसलमानका निर्वाचन हो सका, वह थे श्री उमर सोबानी और उनके बारेमें शायद ही यह दावा किया जा सके कि वे मुसलमानोंके हितोंका विशेष प्रतिनिधित्व करते हैं। सार्वजनिक कार्यकर्त्ताके रूपमें उनकी इतनी ख्याति है कि उन्हें केवल मुसलमानोंका प्रतिनिधि नहीं माना जा सकता। और

यह आवश्यक था कि बम्बईसे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके लिए कमसे-कम दो मुसलमान सदस्य चुने जायें। इसलिए श्री विट्ठलदास जेराजाणीने एक मुसलमान प्रतिनिधिके लिए अपनी सदस्यता त्याग दी। भ्रातृभाव और सार्वजनिक भावनाके ये उदाहरण ही मुझे यह माननेको प्रेरित करते हैं कि स्वराज्य तेजीसे हमारे निकट आ रहा है। खतरा सिर्फ यह है कि कहीं हम स्वयं उससे दूर न भागने लगें। मेरी रायमें यह घटना कार्य-समितिकी बुद्धिमानीकी परिचायक है। हमें सतर्क बनाने और ईमानपर दृढ़ रखनेके लिए उसने ठीक मौकेपर अपनी राय दी। कार्य-समितिने हमें सतर्क किया है कि हम विशेष और नाजुक हितोंकी अवहेलना न कर दें और जहाँ-कहीं भी मुसलमानोंमें जोशका जरा भी अभाव दिखाई दे हिन्दू यह ध्यान रखें कि उनकी ओरसे मुसलमानोंमें संकोच, उदासीनता और सन्देहके लिए कोई कारण न रह जाये। और जो बात हिन्दू और मुसलमानोंके विषयमें है, वही दूसरी जातियोंके आपसी सम्बन्धोंपर भी लागू होती है। हित जितना ही दुर्बल हो उसका उतना ही अधिक ध्यान शक्तिशाली दलको रखना चाहिए। तब फिर जातीय भेदभावके लिए हमारे बीच कोई स्थान नहीं रह जायेगा।

क्या यह उल्लंघन है?

नरमदलीय लोगोंसे यह निवेदन[1] करके कि वे मद्य-निषेध आन्दोलनमें हमारे साथ सहयोग करें, मित्रोंको यह सन्देह है कि मैंने कांग्रेसके प्रस्तावका उल्लंघन किया है। और मेरा उनको मद्य-निषेधके बारेमें कानून बनानेके लिए आमन्त्रित करना तो विशेष रूपसे प्रस्तावका उल्लंघन माना गया है। एक मित्र पूछते हैं: "जिन परिषदोंका हमने बहिष्कार किया है, हम उनकी सहायता क्यों लें? क्या इसका यह अर्थ नहीं कि आपने अपने रुखमें कुछ परिवर्तन कर लिया है?" मैं कहूँगा कि इसका यह अर्थ बिलकुल नहीं है। चुनौती और प्रार्थनामें काफी बड़ा अन्तर है। यदि मैं लाचारी महसूस करके कोई प्रार्थना करता तो उसका अर्थ कांग्रेसके प्रस्तावका उल्लंघन और मेरे पुराने रुखमें परिवर्तन होता; किन्तु विनम्र भाषामें नरम दलवालों को अपना कर्त्तव्य पूरा करने और जनताके प्रतिनिधि होनेके अपने दावेको सिद्ध करनेके लिए कहनेसे तो मेरी रायमें हमारी स्थिति और मजबूत होती है। जो-कुछ हम कर रहे हैं उसमें सहयोग देनेके लिए सरकार और नरम दलवालों को आमन्त्रित करनेमें मैं कोई बुराई नहीं देखता; नरम दलवालों से और यहाँतक कि सरकारी अधिकारियों और अधिकृत सरकारी संस्थाओंके जरिए सरकारसे भी यह प्रार्थना करनेमें कोई हानि नहीं कि वे खिलाफत और पंजाबके मामलेमें सहायता दें, या शराबकी सभी दूकानें बन्द करा दें, या हर स्कूलमें चरखा चालू करा दें, या जनमतका खयाल करते हुए विदेशी कपड़ेके आयातपर कानूनन रोक लगा दें। क्योंकि यदि वे यह-सब कर सकते हैं तो जिस प्रणालीसे उन्हें प्रेम है या जिसका वे संचालन करते हैं मैं उसे बुरा समझना छोड़ दूँगा। यह अपील करके मैंने उन्हें आंशिक रूपसे जनताका आदर फिर प्राप्त करनेका मार्ग बताया है और इस अपीलका असर न होनेपर अपने और देशके लिए

१. देखिए "पत्र: नरमदलीय भाइयोंको", ८-६-१९२१।

इस तन्त्रकी जड़ता प्रदर्शित करनेके लिए एक और कारण प्रस्तुत किया है। मैंने स्वयं इस तन्त्रका भाग होनेके नाते अपील नहीं की है बल्कि एक बाहरके आदमीके नाते अपील की है।

धरनेके बारेमें

'इंडियन सोशल रिफॉर्मर'ने अपनी प्रभावपूर्ण शैलीमें धरनेकी उपयोगिताको अस्वीकार किया है। यदि मैं उसके द्वारा प्रस्तुत तर्ककी जाँचमें न पड़कर इस सम्बन्धमें सिर्फ अपना अनुभव और अपने विचार सामने रखूँ तो थोड़ेमें ही काम चल जायेगा। यह तो स्पष्ट ही है कि धरना देना थोड़े दिनोंका ही कार्यक्रम हो सकता है; किन्तु यह किसी दवामें कोई अतिरिक्त उत्तेजक तत्त्व मिला देने जैसा है। शराब पीना व्यसन ही नहीं, एक व्याधि है। मैं बीसियों ऐसे आदमियोंको जानता हूँ जो खुशी-खुशी शराब पीना छोड़ दें, यदि यह उनके लिए सम्भव हो। मैं ऐसे भी लोगोंको जानता हूँ जिन्होंने प्रार्थना की है कि शराब उनकी पहुँचसे बाहर रखी जाये ताकि उन्हें उसका लालच न हो और ऐसा कर दिये जानेपर भी मैंने उन्हें चोरीसे शराब पीते हुए देखा है। लेकिन इसलिए मैं यह नहीं समझता कि उन्हें उस प्रलोभनसे बचानेका प्रयत्न गलत था। व्याधिग्रस्त लोगोंको उनकी अपनी गलतियोंसे बचाना आवश्यक है। यदि मेरे किसी पुत्रको जुआ खेलनेकी लत हो और यदि जुआरियोंकी कोई कम्पनी मेरे पुत्रको प्रलोभन देनेके लिए मेरे घरके पास ही आकर जम जाये तो मेरा कर्त्तव्य हो जाता है कि या तो उस कम्पनीको मिटाकर धर दूँ या उसके अड्डेके सामने निगरानीके लिए आदमी बिठा दूँ, ताकि मेरे पुत्रको लज्जा आये और वह वहाँ जाना छोड़ दे। यह सच है कि मेरे घरसे दूर जुआरियोंकी दूसरी कम्पनियाँ हैं, तो भी मैं समझता हूँ इस कम्पनीपर निगरानी रखनेका मेरा काम उचित समझा जायेगा। अपने लड़केका जुआ खेलना कठिन बना देना मेरे लिए आवश्यक है। यदि 'रिफॉर्मर' राज्य द्वारा मद्य-निषेधके सिद्धान्तको स्वीकार करता है, तो उसे तबतक धरना देनेके सिद्धान्तको भी मानना चाहिए जबतक राज्य जनमतकी परवाह न करनेवाला बर्बर तन्त्र बना हुआ है। मान लीजिये कि राज्य हर गलीमें देहका व्यापार करनेवाली स्त्रियोंके लिए आलीशान इमारतें खड़ी करवा देता है और उन्हें अपना व्यापार चलानेके लिए अनुमति-पत्र देता है, तो जनताको क्या करना चाहिए? क्या उसका यह कर्त्तव्य नहीं होगा कि यदि वह इन इमारतोंको, जो भ्रष्टाचारके अड्डे हैं, नष्ट नहीं करती तो उनका बहिष्कार कर दे और लोगोंको सावधान कर दे कि वे इस भ्रष्टाचारसे, जो उनके ऊपर थोपा गया है, अलग रहें? मैं इस बातकी आवश्यकताको मानता हूँ कि धरना देनेके लिए केवल चरित्रवान स्त्री-पुरुष चुने जायें और यह सावधानी बरती जाये कि जो लोग जनमतकी परवाह न करके शराब पीनेपर तुले हों उनके प्रति हिंसाका प्रयोग न होने पाये। धरना देना तो एक ऐसा कर्त्तव्य है कि यदि शराबबन्दीमें राज्यकी सहायता नहीं मिलती तो प्रत्येक नागरिकको इसे निभाना चाहिए। आखिर पुलिसका गश्तीदल चोरोंके विरुद्ध धरना नहीं देता तो और क्या करता है? जब चोर किसीके घरमें घुसनेका इरादा जाहिर करता है तो पुलिस बन्दूकका इस्तेमाल करती है।

धरना देनेवाला कमजोर इच्छा-शक्तिवाले अपने किसी भाईको शराब पीनेकी लतसे सावधान करते हुए लज्जा, यानी प्रेमका दबाव डालता है। 'रिफॉर्मर'ने धरनेके सिर ऐसे अनेक दावे मढ़े हैं जो कभी किये ही नहीं गये।

धारवाड़में हिंसा

यदि 'क्रॉनिकल'में छपे कांग्रेस कमेटीके तारको सच मानें, तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि पुलिसका कोई अफसर, जिसको गोली चलानेका हुक्म देनेका अधिकार नहीं था, घबड़ा गया और उसने निहत्थी भीड़पर गोली चलानेका हुक्म दे दिया। शराबकी दूकानोंको कुछ ऐसी हठके साथ खुला रखा जा रहा है मानो जनताको शराब मुहैया करना सरकारका एक कर्त्तव्य है। वास्तवमें यह जनमतकी खुली और अनीतिपूर्ण अवज्ञा है। जो लोग मरे हैं, मैं बेशक उनके कुटुम्बियोंको बधाई दूँगा और यदि भीड़ने थोड़ा-बहुत भी शक्ति-प्रदर्शन किया हो, तो मैं उसपर दुःख प्रकट करूँगा। साथ ही मैंने उन भारतीय मन्त्रियोंको, जिन्हें ये हस्तान्तरित विभाग सुपुर्द किये गये हैं, आदर-पूर्वक सावधान कर देना चाहता हूँ कि यदि वे साहसके साथ उस संकटका सामना नहीं करते जो देशके सामने है और तुरन्त शराबकी दूकानें बन्द करके उस धनको नहीं लौटाते जो गरीब ठेकेदारोंसे पेशगी लिया गया था, तो वे अपने महान् दलकी परम्पराके विरुद्ध आचरण करेंगे। इस जघन्य व्यापारसे दुराचारपूर्वक जो राजस्व प्राप्त होता है उसे खो देनेकी चिन्ता उन्हें नहीं होनी चाहिए। एक जाग्रत और क्रुद्ध जन-चेतनाके सामने यह धन्धा टिका नहीं रह सकता। एक भ्रष्ट साधनसे प्राप्त धनसे चलने-वाली शिक्षा वैसे काफी बुरी चीज है। अब निर्दोष व्यक्तियोंके खूनका दाग लग जानेके बाद वह दुर्गन्धित हो उठेगी। मैं मन्त्रियोंसे प्रार्थना करता हूँ कि समय रहते चेत जायें। यह न हो कि उनपर कभी राजस्वके लोभमें अंधे होकर समयको न पहचान पानेका दोष लगाया जाये। इस ओरसे कुछ सप्ताह तो क्या कुछ घंटे भी उदासीन रहना, उनके लिए हानिकारक होगा। शराबसे प्राप्त राजस्वको छोड़ देनेसे पहले, राजस्वके दूसरे साधनोंको ढूँढ़नेके लिए रुके रहना गलत होगा। यह तो वैसा ही होगा जैसे किसी प्लेगवाले घरको दूसरा घर मिलने तक न छोड़ना। ऐसी स्थितिमें अधिकतर तो वह घर तत्काल खाली करके दूसरा घर तलाश किया जाता है।

एक बहादुर सिख

सरदार शार्दूलसिंह मुझे हमेशा बड़े ही बहादुर असहयोगी लगे हैं। वे बहुत सुसंस्कृत और सम्मानशील व्यक्ति हैं। अहिंसात्मक असहयोगपर उनकी बौद्धिक आस्था है। वे एक कट्टर राष्ट्रवादी हैं। सिख धर्मके सिद्धान्त उनको प्राणोंके समान प्यारे हैं, किन्तु राष्ट्रवादसे भी उन्हें उतना ही प्यार है। अहिंसा सभी बातोंमें उनका सर्वोपरि सिद्धान्त नहीं है। इसमें उनकी स्थिति अली बन्धुओं-जैसी ही है, और यह एक बड़ी बात है। वे अहिंसाके सिद्धान्तका उतनी ही ईमानदारीसे पालन करते हैं जितना कि अली बन्धु, और इतना कहना काफी कह देना है। किन्तु यह सरकार उनको केवल देश-निकाला देनेके योग्य व्यक्ति मानती है। उन्हें पाँच वर्षका देश-निकाला दिया गया है। वे आवश्यकतासे अधिक बहादुर, ईमानदार और इसलिए आवश्यकतासे अधिक

प्रभावशाली हैं; इसीलिए पंजाब सरकार खौफ खा गई और इसी कारण उन्हें जनताके बीचसे हटा दिया गया है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि उनके जेल भेज दिये जानेसे देशके लिए उनकी सेवाओंका महत्त्व और भी बढ़ गया है। सारे भारतमें बहादुरी और आत्म-संयमका यह प्रदर्शन अद्भुत है कि इतने अधिक लोग प्रसन्नतापूर्वक जेल जाना स्वीकार करते हैं और लोग बिना झुके धीर, गम्भीर और शान्त बने रहते हैं। मुझे आशा है कि सरदार शार्दूलसिंहके जेल भेजे जानेके फलस्वरूप सिख और दूसरे पंजाबी और अधिक उत्साहसे असहयोगके लिए काम करेंगे। मैं सरदार शार्दूलसिंह और उन सब लोगोंको बधाई देता हूँ जो मातृभूमिके लिए यातनाएँ सह रहे हैं।

युवराजका प्रस्तावित आगमन

दुखकी बात है कि युवराजके आगमनकी बात फिरसे उठाई गई है और अस्थायी रूपसे उसकी तिथि भी निश्चित कर दी गई है। भारत जिस तन्त्रसे बिलकुल आजिज आ गया है, उसके प्रतिनिधिके स्वागतको वह कभी तैयार नहीं होगा। यदि भारतकी अनिच्छुक जनतापर यह यात्रा थोपी गई, तो युवराजके आगमनके दिन उसी तरहकी हड़ताल होनी चाहिए जैसी ड्यूकके आगमनपर हुई थी। मैं फिर स्पष्ट कर दूँ कि व्यक्तिगतरूपसे युवराजके विरुद्ध असहयोगियोंको कुछ नहीं कहना है। किन्तु जिस पदपर वे हैं उसे उनसे अलग नहीं किया जा सकता। यद्यपि यह सच है कि सम्राट् या उनके उत्तराधिकारी सक्रिय रूपसे राजकीय मामलोंमें हस्तक्षेप नहीं करते (जो कि राज्यके लिए सुविधाजनक है) तथापि वे मौजूदा तन्त्रके उतने ही पुरअसर प्रतिनिधि हैं जितना कि बहुत हस्तक्षेप करनेवाला कोई प्रधान मन्त्री या वाइसराय हो सकता है। मेरा तो विचार है कि अपनी अलग-थलग स्थितिके कारण तन्त्रके समर्थकके रूपमें उनका प्रभाव और भी अधिक हो जाता है। यदि युवराज आते हैं तो वे असहयोगियोंको या हमारे लक्ष्यको आशीर्वाद देने नहीं आयेंगे, बल्कि इस सरकारकी प्रशंसाके गीत गाने आयेंगे जो पंजाबके अपमान, मुसलमानोंके प्रति वचन-भंग, भारतपर शराबका कुत्सित व्यापार थोपने और देशको गरीब और इतना दुर्बल बनानेके लिए जिम्मेदार है कि भारत समझने लगा है कि उसे अनिश्चित कालतक दासतामें बँधे रहना पड़ेगा। मेरी विनम्र रायमें युवराजका प्रस्तावित आगमन जलेपर नमक छिड़कने-जैसा होगा और प्रत्येक असहयोगीका यह कर्त्तव्य होगा कि वह आदर किन्तु दृढ़ताके साथ साफ-साफ शब्दोंमें इस तरहके उन सब प्रयत्नोंका विरोध करे जो एक गिरते हुए तन्त्रको सहारा देनेके लिए किये जा रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ६–७–१९२१

१५७. बम्बईकी सुन्दरता

बम्बई सुन्दर है। इसलिए नहीं कि वहाँ बड़ी-बड़ी इमारतें हैं; क्यों कि ये इमारतें अधिकतर तो भयंकर गरीबी और गन्दगीका आवरण-भर हैं। इसलिए भी नहीं कि वह सम्पन्न है; क्यों कि अधिकांशतः यह धन जनताके शोषणसे कमाया जाता है। उसकी सुन्दरताका मूल कारण उसकी उदारता है जिससे सारा संसार परिचित है। दानवीरता सबसे पहले पारसियोंने दिखाई और फिर बम्बईने हमेशा उसे निबाहा। बम्बईकी उदारताके कारण उसके अनेक पापोंपर पर्दा पड़ गया है। तिलक स्वराज्य-कोषके मामलेमें बम्बईने अपने सब पुराने रिकार्ड तोड़ दिये हैं। १६ जून और ३० जूनके बीच बम्बईने इस कोषमें २॥ लाख रुपये प्रतिदिनके हिसाबसे चन्दा दिया। बम्बईके कारण भारत अपने वायदेपर कायम रह सका। मुझे सन्देह नहीं कि चित्तरंजन दास बम्बईके इस दावेको स्वीकार करेंगे कि बंगालको उसीके उत्साहकी छूत लगी और उसे त्राता बननेका अवसर दिया और बंगाल ३ लाखसे छलाँग लगाकर एकदम २५ लाखपर पहुँच गया। यदि ऐसा न हुआ होता तो बम्बईके अच्छेसे-अच्छे कार्य-कर्त्ताओंके भगीरथ प्रयत्नोंके बावजूद भारत एक करोड़ रुपया जमा न कर पाता। इसीलिए मैंने कहा कि बम्बईकी सुन्दरता उसकी उदारताके कारण है।

कितने सदस्य बनाये गये कितने चरखे दाखिल किये गये इसके आँकड़े तो उपलब्ध नहीं हैं; किन्तु यह चन्दा भारतके दृढ़ संकल्पका सबसे ज्वलन्त प्रमाण है।

भारतने जैसा मान स्वर्गीय लोकमान्यको दिया है वैसा आजतक और किसीको नहीं दिया। किन्तु यह एक करोड़ तो उस स्मारककी पहली सीढ़ी ही समझिए जिसे हम लोकमान्यकी स्मृतिमें खड़ा कर रहे हैं; उसका कलश तो स्वराज्य ही है। ऐसे महान् पुरुषकी स्मृतिके प्रति श्रद्धा प्रकट करने योग्य स्मारक तो स्वराज्य ही हो सकता है, इससे कम और कोई चीज नहीं।

तो भी हमें आत्मवंचना नहीं करनी है। स्मारक सम्बन्धी प्रस्तावमें निहित भावनाके प्रति सचाई बरतनेके लिए प्रत्येक प्रान्त और प्रत्येक जिलेको अपनी जन-संख्याके अनुपातमें चन्दा देना चाहिए था। दो पैसे प्रति व्यक्तिके हिसाबसे देना साधारण स्त्री या पुरुषकी सामर्थ्यसे बाहर नहीं था। मुझे आशा है कि प्रत्येक प्रान्त शीघ्रसे-शीघ्र अपना निर्धारित अंश पूरा कर देगा।

यह चन्दा हमारी लम्बी यात्राका प्रथम चरण है। इस एक करोड़ रुपयेसे स्वराज्य नहीं मिलनेवाला। सारे संसारका धन भी हमें स्वराज्य नहीं दे सकता। पूरी तरह स्वतन्त्र होनेके लिए पहले हमारा आर्थिक रूपसे स्वतन्त्र होना आवश्यक है। भूखों मरते हुए व्यक्तिसे भजनकी आशा करना व्यर्थ है। भूखसे विकल आदमी तो अपनी आत्मा भी बेच देगा। उस बेचारेके पास आत्मा कहाँसे आई। इसलिए स्वतन्त्रताकी बात सोचनेके पहले उसे यह अनुभूति जरूर होनी चाहिए कि वह आर्थिक रूपसे किसीका मोहताज नहीं है। और यह तबतक नहीं हो सकता जबतक भारत कपड़ेके

लिए विदेशी बाजारपर आश्रित है। ऐसा व्यक्ति जो प्राणवायुके लिए यन्त्रपर आश्रित है, मरणोन्मुख व्यक्ति है। तब फिर भारतको मरणोन्मुख कहनेमें क्या बुराई है? और यदि हम इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं तो वह केवल तभी सम्भव है जब हम आत्म-त्यागका सहारा लेकर विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण बहिष्कार कर दिखायें। इसलिए इस रकमका उपयोग चरखे और हथकरघेसे यथासम्भव अधिकसे-अधिक खादी तैयार करनेमें किया जाना चाहिए। हर प्रान्तका मुख्य काम यही होना चाहिए। हमें अपनी मिलोंके उत्पादनकी जाँच करनी चाहिए और मिल-मालिकोंको इसके लिए राज़ी करना चाहिए कि वे अपना उत्पादन और मुनाफा राष्ट्रकी आवश्यकताओंको देखते हुए निर्धारित करें। मिलका कपड़ा तो गरीबसे-गरीब लोगोंके लिए ही रहना चाहिए; क्योंकि हम फिलहाल उनतक इसे पहुँचा नहीं सकते।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी आगामी बैठकको इसपर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए और इस बहिष्कारका काम पूरा करनेके लिए कार्यक्रम निर्धारित करना चाहिए।

मुख्य रूपसे बहिष्कारका भार आखिरकार बम्बईको ही उठाना है, जैसा कि उसने चन्देकी उगाहीके समय किया था। बम्बई भारतके कपड़ा बाजारको नियन्त्रित करता है। और वह कपड़ा लंकाशायर और जापानसे मँगाया जाता है। इस प्रकार बम्बईके सूत और कपड़ा आयात करनेवालोंके ऊपर एक बड़ा उत्तरदायित्व है। यदि हम बहिष्कारको सफल बनाना चाहते हैं तो उन्हें देशके लिए बड़ा त्याग करनेके लिए तैयार रहना चाहिए। मिल-मालिकोंका भी कोई कर्त्तव्य है। उन्होंने भारी मुनाफा कमाया है। उनके लिए बहिष्कार आन्दोलनकी भली प्रकार सहायता करना बहुत आसान है। इसके लिए राष्ट्रीय जीवनके प्रति उन्हें अपना दृष्टिकोण बदलना चाहिए। मिल-मजदूरोंका भी देशके प्रति कर्त्तव्य है। अबतक उनकी दिलचस्पी केवल अपनी मज-दूरीमें रही। अब उन्हें जनहितका भी विचार करना पड़ेगा। अन्तमें आती है अभागी जनता जिसका मूल्य निर्धारित करनेमें कोई हाथ नहीं और जिसे मिल-मालिकों और आढ़तियोंकी इच्छानुसार दाम देने पड़ते हैं। बहिष्कारका सवाल छोड़ दें तो भी यह एक बड़ी असन्तोषजनक स्थिति तो है ही। अकाल सामने खड़ा है। अब समय आ गया है कि हममें से प्रत्येक व्यक्ति, देशहितकी बात भुलाकर अपना उल्लू सीधा करने-की बजाय समस्त जनताके हितके बारेमें सोचे। सुन्दर बम्बईके सामने एक स्वर्णिम अवसर है। या तो वह अपने इस सौन्दर्यको निखारे या जो यश मिला है उससे भी हाथ धोये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ६–७–१९२१

१५८. अपील : मिल-मालिकोंसे

६ जुलाई, १९२१

मिल-मालिकोंकी सेवामें

सज्जनो,

शायद आप असहयोग आन्दोलनमें विश्वास नहीं रखते। मैं जानता हूँ कि आपमें से कुछ लोगोंका खयाल यह है कि अन्तमें इसका परिणाम हिंसा ही होगा। यदि इससे आपका यह आशय है कि हिंसा उस सरकारकी ओरसे होगी जो सत्ता नहीं छोड़ना चाहती तो आपका कहना सही है। यदि धारवाड़ कांग्रेसके मन्त्रीकी रिपोर्ट-पर विश्वास किया जाये तो वहाँकी घटना इसका एक ताजा उदाहरण मालूम होती है। आपमें से कुछ लोग यह समझते हैं कि आन्दोलनसे, चाहे वह सफल हो चाहे अस-फल, देशको हानि ही पहुँचेगी। मेरी आपसे यही प्रार्थना है कि फिलहाल अहिंसाकी बातपर न सोचें और इस समय विदेशी कपड़ेके बहिष्कारका जो आन्दोलन तीव्र किया जा रहा है, आप उसका अध्ययन करें। मैं जब बंगाल जाता हूँ तभी बंगाली लोग मुझसे यह कहनेमें नहीं चूकते कि जब बंगभंग विरोधी आन्दोलन चल रहा[1] था तब मिल-मालिकोंने सहायता नहीं दी थी; इतना ही नहीं उन्होंने कीमतें बढ़ा दीं, कपड़ोंमें ज्यादा माँड़ी देकर उन्हें कुछ-का-कुछ दिखाया, यहाँतक कि स्वदेशीके नामपर हमारे सिर विदेशी कपड़ा मढ़कर हमें धोखा दिया। मैं नहीं जानता कि इन आरोपोंमें सचाई कितनी है। लेकिन आप इस बातमें मुझसे सहमत होंगे कि यदि उनके आरोप सच हैं तो वे मिल-मालिकोंके लिए किसी श्रेयके द्योतक नहीं हैं।

इस समय देशपर जो उस बारसे भी बड़ा संकट आया हुआ है उसमें आप लोग कौन-सा मार्ग ग्रहण करेंगे, यदि इसके सम्बन्धमें मुझे सन्देह न होता तो मुझे ये आरोप याद न आते। मुझसे कई मित्रोंने कहा है कि राष्ट्रको आप लोगोंसे किसी बातकी अपेक्षा नहीं करनी चाहिए। वे कहते हैं कि अपवादस्वरूप एक या दो सच्चे लोगोंको छोड़-कर आपने तिलक स्वराज्य-कोषमें कुछ नहीं दिया है। मैंने आपके चन्दा न देनेका बचाव इस आधारपर किया है कि आपमें से जिनको इसमें कोई वैचारिक आपत्ति नहीं है उन्होंने संकोच या भयके कारण ऐसा किया है। मैं अपने मनमें यह बात तो नहीं आने देना चाहता कि जब आपकी सहायताकी अत्यन्त आवश्यकता है तब आप व्यव-सायियोंकी हैसियतसे देशकी मदद नहीं करेंगे। लेकिन जो व्यापारी विदेशी कपड़ेका व्यापार करते हैं और जिन्हें मैं यह समझा रहा हूँ कि उन्हें देशकी भावना पहचाननी चाहिए और विदेशी कपड़ेका व्यापार बन्द कर देना चाहिए, वे मुझे यह कहकर डराते हैं कि इस आन्दोलनमें उनकी मददका परिणाम केवल यह होगा कि आप, मिलों-के मालिक-गण, तुरन्त कीमतें बढ़ा देंगे और कीमतें बढ़ानेके समर्थनमें राष्ट्रके सामने

१. १९०५ में और उसके बाद।

उपलब्धि और माँगके नियमको प्रस्तुत करेंगे एवं इस प्रकार हालत जितनी खराब अब है उससे भी ज्यादा खराब हो जायेगी। वे मुझसे कहते हैं कि वे विदेशी कपड़ेका व्यापार खुशीसे छोड़ देंगे परन्तु इस शर्तपर कि उन्हें इस बातका विश्वास दिला दिया जाये कि आप लोग उपलब्धि और माँगके नियमकी बात नहीं उठायेंगे और कीमतें न बढ़ाना अपना कर्त्तव्य समझेंगे। सन् १९१९ में आपमें से कुछ लोगोंने मुझसे यह कहा था कि यदि आप कीमतें न भी चढ़ायें तो भी फायदा उपभोक्ताको नहीं बल्कि बीचके लोगोंको होगा और वे लूट मचायेंगे। मेरा खयाल है कि आप जैसे बुद्धिमान व्यवसायियोंके लिए यह तर्क देना अशोभनीय है। आप अपने बनाये हुए मालके व्यापार-को, जबतक वह उपभोक्ताओं तक न पहुँचे, भलीभाँति नियन्त्रित कर सकते हैं। आपको तो इतना ही करना है कि आप अपने व्यापारमें थोड़ी-सी राष्ट्रीय भावनाका समावेश करें।

मैं यह नहीं कहता कि आप परोपकार करें, यद्यपि आप व्यापार करते हुए परोपकारकी भावना भी रखें तो इसमें अनुचित कुछ भी नहीं होगा। लेकिन मैं यह प्रार्थना अवश्य करता हूँ कि आप अपने व्यापारको विशुद्ध स्वार्थके बजाय राष्ट्रीय आधारपर चलायें। कोई आदमी महज इसलिए कि वह अपने और अपने हिस्सेदारोंका खयाल रखनेके साथ-साथ राष्ट्रका भी खयाल रखता है कम व्यवसायकुशल नहीं हो जाता। इसलिए मेरा आपसे अनुरोध है कि असहयोगके सम्बन्धमें अपने विचारोंको कोई क्षति पहुँचाये बिना यह आश्वासन अवश्य दें कि यदि विदेशी मालके प्रस्तावित बहिष्कारके कारण माँग बढ़ गई तो आप केवल उसी बातको लेकर अपने कपड़ेके भाव नहीं बढ़ायेंगे और इस सम्बन्धमें व्यापारियों और उपभोक्ताओंको डरनेकी कोई जरूरत नहीं है। देशको आपसे कमसे-कम इतनी अपेक्षा रखनेका अधिकार तो है ही।

आपका विश्वस्त मित्र,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ६–७–१९२१

१५९. तार: चक्रवर्ती राजगोपालाचारी और एस० श्रीनिवास आयंगारको[1]

[६ जुलाई, १९२१ या उसके पश्चात्]

कांग्रेस महासमितिकी बैठक और अन्य दायित्वोंको देखते हुए अगस्तसे पहले दो सप्ताह देना असम्भव।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५६२)की फोटो-नकलसे।

१६०. पत्र: महादेव देसाईको

बुधवार [६ जुलाई, १९२१ या उसके पश्चात्][2]

चि० महादेव,

कल तुम्हारा पत्र मिला। तुमने जो लिखा था सो मैं समझ ही गया था। मैंने न उलटा अर्थ किया और न करनेकी मेरी आदत है। जब एक वाक्यके दो अर्थ होते हों तब जो अर्थ हमारे प्रतिकूल पड़े उसे ही अपने ऊपर लागू करना चाहिए; यही उचित है और यही सच भी है। उपर्युक्त दोनों वाक्योंमें यह दोष नहीं था। दोष तो मैंने जो बताया वही था। २५ लाख मानना हमारे कोई विशेष अनुकूल नहीं होता; क्योंकि इस रकमके बिना भी एक करोड़ हो गये थे और अन्तिम पत्र लिखनेके बाद ही यह तार आया था। वे एक लाख चरखे दानमें देना चाहते हैं अथवा कम दाममें देना चाहते हैं इससे भी हमारे कार्यमें कोई फर्क नहीं पड़ता। अभीतक एक लाख चरखोंवाले वाक्यका मैं दूसरा अर्थ नहीं करता। लेकिन वाक्योंका अर्थ लगानेमें उतावली की गई है और यह उतावली भी आसक्तिकी सूचक है। आसक्तिमें हमेशा असत्य ही भरा होता है। अनासक्त पुरुषके पास सोचने-विचारनेका समय होता है और वह कुछ ऐसा ही अर्थ करता है जिससे विरोधी पक्षका बचाव हो सके और यदि व्यक्ति सत्यनिष्ठ है तो जैसा मैंने बताया है वह पत्र-लेखकके अभिप्रायकी सही कल्पना कर लेता है।

तुम्हारे बारेमें पढ़ा। जो हुआ सो विपरीत हुआ। इससे यह प्रकट होता है कि हम किस तरह भूलमें पड़ जाते हैं। सच्चा प्रायश्चित्त तो यही हो सकता है कि

१. यह श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी और एस० श्रीनिवास आयंगारके ६ जुलाईको मद्राससे दिये गये इस तारके उत्तरमें भेजा गया था: "बम्बईमें कार्य आरम्भ कर देनेके बाद यहाँ जल्दी ही दो सप्ताहके दौरेके लिए जरूर आयें।"

२. '२५ लाख' के उल्लेखसे प्रतीत होता है कि यह पत्र ३० जूनके बाद पड़नेवाले बुधवार अथवा उसके बाद अर्थात् ६ जुलाईको लिखा गया था; देखिए "'नवजीवन' को तार", १-७-१९२१।

फिर कभी ऐसा न हो। तथापि मैं निम्नलिखित सुझाव देता हूँ। प्रत्येक एकादशीको सिर्फ एक सेर, ८० तोला, गर्म दूध पर रहो। न फल लो, न शक्कर। और वह दूध भी दो या तीन बारमें पियो, एक ही बारमें नहीं। अगली एकादशीसे ऐसा एक वर्षतक करो।

श्रीमद् राजचन्द्रजीके[1] लेखोंको पढ़ जाना और उनपर विचार करना।

तुलसीदासकी 'मणिरत्नमाला' पढ़कर उसपर मनन करना।

भर्तृहरिके 'वैराग्यशतक' को पढ़ उसपर अच्छी तरहसे विचार करना।

'योगवासिष्ठ' का वैराग्य प्रकरण खूब ध्यानसे पढ़ जाना।

हर रोज कमसे-कम एक घंटा चरखा कातना और उस समय हमेशा यह विचार करना कि इस यज्ञके द्वारा मनकी मलिनता धुल जाये। यह भी एक वर्षतक करना, यात्रा और बीमारी अपवाद हैं।

सवेरे उठनेपर अन्य समस्त कार्य बादमें करना। सवेरे उठ शौचादि करना हो तो वह करके, यदि आश्रममें हो तो प्रार्थना करके, आध घंटेतक चुपचाप उपर्युक्त पुस्तकोंका पाठ करना और बादमें एक घंटा चरखा चलाना। इसके बाद कुछ और काम करना।

एक वर्षके लिए नौ बजनेसे पहले सो जाना और चार बजनेके बाद बिस्तरपर कतई न रहना। इस कार्यक्रममें परिवर्तन तभी हो सकता है जब तुम बीमार पड़ो।

इस प्रायश्चित्तका विधान करते समय मैं दोषको बढ़ा-चढ़ाकर नहीं कहता और न ही मैं उसको कम मानता हूँ। इसमें से तुम्हें जो-कुछ निकालना हो उसे निकाल देना। लेकिन लोक-लाजके अधीन होकर चरखेको मत निकालना। और लोक-लाज अथवा लोक-सेवाके विचारसे नौ बजे सोना मत छोड़ना। 'इंडिपेंडेंट' को आड़े नहीं आने देना। . . . दैनिकके लिए लिखनेके लिए रातको जागनेकी जरूरत नहीं है। और फिर जिस शैलीसे हम चलाना चाहते हैं उसमें ऐसा कुछ नहीं है।

और जान लो कि ऊपरका डेढ़ घंटा तो मौनका ही है। देवदासने निर्दोष भावसे तुम्हारे पत्रको पढ़ना शुरू किया, इससे उसे रोकना मुझे उचित नहीं लगा।

तुमने न आनेका जो कारण दिया है वह सबल है इसलिए चाहो तो मत आओ। पण्डितजी अथवा जोसेफ भेजें और आओ, यह अलहदा बात है। तुम्हारे न आनेकी मुझे चिन्ता नहीं; लेकिन अगर आ जाते तो मुझे खुशी ही होती।

तुम्हारे दोषको देखनेपर मेरे प्रेममें कोई कमी आ जायेगी, ऐसा तो तुम कभी नहीं मानोगे। मैं पूर्ण होऊँ तो कमीको अवकाश नहीं हो सकता। मैं अपूर्ण मुमुक्षु अगर दूसरोंके दोषोंको बढ़ा-चढ़ाकर देखूँ तो अपनी अपूर्णतामें वृद्धि करूँगा।

मैंने नित्य-स्मरण करनेके लिए कहा है तथापि ग्लानि नहीं होनी चाहिए। शुद्ध पश्चात्ताप ग्लानिका विरोधी है। पाप लम्बा मुँह बनाता है। मलिनताका स्मरण हमें विनम्र बनाता है, ग्लानि कभी नहीं देता।

१. श्रीमद् राजचन्द्र, जिनका गांधीजीपर बहुत प्रभाव पड़ा; देखिए खण्ड १३, पृष्ठ १४६।

'सुख दुःखे समेकृत्वा'[1] की बात यहाँ भी लागू होती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२९) की फोटो-नकलसे।

१६१. कपड़ेके व्यापारियोंको खुला पत्र

७ जुलाई, १९२१

सज्जनो,

कल मैंने मिल-मालिकोंको विदेशी कपड़ेके बहिष्कार-आन्दोलनमें सहायता देनेके लिए निमन्त्रित किया था। सम्भव है वे सहायता दें, शायद न भी दें। आशा तो यही है कि वे सहायता देंगे। लेकिन आपका इस आन्दोलनसे अलग रह सकना असम्भव है, क्योंकि आपमें से अधिकतर लोग असहयोगमें पक्का विश्वास रखनेवाले हैं। आपके सहयोगसे तिलक स्मारक-कोषके सम्बन्धमें हमारी बेजवाड़ामें की गई प्रतिज्ञाकी पूर्ति सम्भव हुई है। लेकिन आप कहेंगे कि चन्दा देना तो हमारे लिए एक छोटी-सी बात थी किन्तु हमारा व्यापार हमारे लिए जीवन-मरणका मामला है। इसी प्रकारके भ्रमके कारण हमें स्वराज्य नहीं मिल रहा है। यदि आपका व्यापार आपके लिए जीवन-मरणका मामला है तो क्या देशका हित आपके नजदीक उससे कम महत्त्व रखता है? स्वराज्यका अर्थ यह है कि मैं और आप लोग निजी व्यापारसे देशके व्यापारको अधिक महत्त्व दें। दूसरे शब्दोंमें आपसे विदेशी कपड़ा न मँगानेका जो अनुरोध किया गया है वह इस बातका अनुरोध है कि आप देशके लाभसे अपने लाभको कम महत्त्व दें।

आप इंग्लैंड, जापान या अमेरिकासे जो कपड़ा मँगाते हैं उसके प्रत्येक गजपर आप अपने देशवासियोंसे कमसे-कम तीन आने छीन लेते हैं और बदलेमें उन्हें कुछ नहीं देते। मैं यह बात स्पष्ट करके कहूँ। भारतमें बहुत मजदूर हैं जो गाँवोंमें बेकार पड़े हुए हैं। पहले ये बेकार मजदूर सूत और कपड़ा तैयार करनेमें लगे हुए थे। विदेशी कपड़ेके आयातके फलस्वरूप वे अनिवार्यतः बेकार बन गये और इस लम्बे अरसेमें उनमें से बहुतेरोंको कोई दूसरा धन्धा नहीं मिल पाया। इसी कारण जब-जब भारतमें अनावृष्टि होती है तब-तब दयार्द्र व्यक्तियोंके हृदय काँप उठते हैं। ऐसा होनेकी जरूरत नहीं है। भारतमें अनावृष्टि कोई असाधारण बात नहीं है। हमको उसके इतना घातक होनेका अनुभव इसलिए होता है कि हम करीब-करीब भूखों मर रहे हैं। लम्बी बेकारी-के फलस्वरूप अपना निर्वाह करते रहनेकी हमारी शक्ति क्षीण हो गई है। आप यह खयाल न कीजिए कि झोंपड़ियोंमें रहनेवाले ये करोड़ों लाचार लोग सबके-सब हमारे दर्जनभर शहरोंमें, जहाँ मजदूरोंकी कमी है, इकट्ठे होकर अपनी रोजी कमा सकते

१. भगवद्गीता, २-३८।

हैं। उनके ऊपर जमीनका भार है और वे इच्छा रहते हुए भी अपनी जमीनको नहीं छोड़ सकते। भारतके तमाम शहरोंमें भी ये करोड़ों लोग समा नहीं सकते। उनकी आँखोंमें चमक हाथ-कताई और हाथ-बुनाईके धन्धेकी पुनः स्थापनासे ही आ सकती है, अन्यथा नहीं। और यदि मैं आपसे यह न कहूँ कि भारतकी गहरी और दुःख-जनक दरिद्रताके लिए मिल-मालिकोंकी अपेक्षा व्यापारी अधिक उत्तरदायी हैं तो मैं अपने प्रति और देशके प्रति कर्त्तव्य-पालनसे च्युत माना जाऊँगा। इसमें सन्देह नहीं कि जब मिल-मालिक ऊँची कीमतें वसूल करते हैं तो वे इस दरिद्रताको और भी भीषण बना देते हैं। लेकिन इसके लिए आप इतने उत्तरदायी हैं कि यदि आप विदेशी कपड़ेका आयात बन्द कर दें तो आप हाथ-कताईके प्राचीन और सम्मानपूर्ण धर्मको पुनरुज्जीवित कर सकते हैं। और हाथ-बुनाईके उद्योगको उत्तेजन दे सकते हैं।

आखिर जिस व्यापारसे भारतको हानि पहुँच रही है उसको छोड़ना आपमें-से बहुतेरोंके लिए जीवन-मरणका मामला क्यों होना चाहिए? निश्चय ही आपमें इतनी सूझ-बूझ है कि आप कोई दूसरा ऐसा व्यापार खोज निकाल सकते हैं जो आपके लिए और देशके लिए समान रूपसे लाभप्रद हो। आयात बन्द करनेका अर्थ है प्रति वर्ष ६० करोड़ रुपये बाहर जानेसे बचा लेना। लेकिन इसका अर्थ इससे कहीं ज्यादा बड़ी पूँजीको यहाँ व्यवहारमें लाना है। इसका अर्थ यह है कि रुईकी समस्त प्रक्रियाएँ भारतमें ही पूरी की जायें। इसमें आपके लिए व्यापारकी गुंजाइश है। इसका अर्थ है कि इस समय दिन-प्रतिदिन बढ़ती हुई मात्रामें जो धन हमारे प्यारे देशसे बाहर जा रहा है वह नहीं जायेगा और वह देशके व्यापारमें लगेगा। मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप अपनी तीक्ष्ण बुद्धिकी मददसे इसे अनुचित कामोंमें लगाना बन्द करके ऐसे हितकर काममें लगायें जो आपके लिए सुलभ हो सकते हैं। आपको हाथ-कताई और हाथ-बुनाईके उद्योगका संगठन अवश्य करना चाहिए। तब आप मेरी तरह मोटी-झोटी खादीसे सन्तुष्ट नहीं होंगे। आप अपने कतैयोंसे बारीकसे-बारीक सूत कातनेका और बुनकरोंसे ढाकाकी विश्वविख्यात मलमल बुननेका आग्रह करेंगे। आप इसमें बड़ी-बड़ी पूँजी लगायेंगे। परन्तु मैंने तो अपनी बहनोंको केवल कुछ हजार रुपये दिये हैं, जो आपसे मुझे दानमें मिले थे। आपके लिए इस विदेशी कपड़ेके अपवित्र व्यापारको छोड़नेका अर्थ है हाथ-कते सूतके उत्पादन और वितरणका संगठन करना। यह उद्योग आपकी देशभक्तिके अनुरूप है। शायद आप यह कहें कि ऐसा संगठन करनेमें कुछ साल लग जायेंगे। आपने अपना वर्तमान व्यापार एक क्षणमें तो नहीं जमा लिया है। यदि आपको यह विश्वास हो गया है कि यह ऐसा व्यापार है जिसने भारतको गरीब और गुलाम बनाया है, तो आप इसके नष्ट होनेके परिणामोंपर विचार करनेके लिए नहीं रुकेंगे। आप कैसी भी हानि उठाकर इसकी इतिश्री हो जाने देंगे।

और इसमें हानि ही क्या है? बहुत तो नहीं है। आपको विदेशी कपड़े और सूतके सब नये ऑर्डर रोक देने हैं। इसमें कुछ खर्च नहीं होता। आपके पास विदेशी कपड़ा जमा है जो आपको खपाना है। इसकी खपतके लिए संसारका बाजार आपके लिए खुला पड़ा है। भारतकी जरूरतकी कपड़ेकी खास किस्में मारिशस, दक्षिण आफ्रिका या पूर्व आफ्रिका जैसे देशोंमें कई कामोंमें प्रयुक्त की जा सकती हैं। आप

सिर्फ मुझे यह अनुमति दे दें कि आपके पास जो विदेशी कपड़ा और सूत जमा है उसको खपानेका सर्वोत्तम तरीका आपके लिए मैं सोच निकालूँ।

आपमें से कुछ लोगोंको उपभोक्ताओंकी जरूरतोंके बारेमें चिन्ता हो गई है। कपड़ेकी जो भी कमी होगी वे उसमें किसी तरह अपना निर्वाह कर लेंगे, उससे उन्हें कोई असुविधा न होगी और वे अगले साल हर तरहके अर्जकी और बारीक सुन्दर खादीको बड़ी मात्रामें इससे भी ज्यादा पसन्द कर सकेंगे।

मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप उपभोक्ताओंकी बात जरूरतसे ज्यादा न सोचें। आपका झीनी जापानी धोतियाँ या साड़ियाँ या माँड़ीदार महीन सूती कपड़े दिखाकर उनको प्रलोभन देना उचित नहीं है। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप इसकी अपेक्षा उपभोक्ताओंमें खादीमें कला देखनेकी रुचि पैदा करें। कपड़ेमें एकसापन और मुलायमियत ही कला हो, सो बात नहीं है। बहुत ही बढ़िया बने हुए रेशमके गुलाबी फूलमें कोई कला नहीं है। क्योंकि उसमें कोई जीवन नहीं है। लेकिन बागसे तोड़ा हुआ गुलाबका ऐसा फूल जिसकी बहुत-सी पँखुड़ियाँ झर गई हों सफाईसे बनाये हुए नकली गुलाबकी अपेक्षा, जो सजी हुई खिड़कीमें रखा गया है, किसी भी हालतमें बढ़िया बैठता है। असली फूलमें जीवनका संचार है। क्या ही अच्छा हो कि भारतके व्यापारी पैसेके लिए काम न करें, बल्कि उसकी अपेक्षा प्राचीन कलाका अध्ययन करें और उसे पुनरुज्जीवित करना अपना व्यवसाय बना लें। इससे आपको और देशको धन मिलेगा। हमें सबसे बड़ी जिस कलाको पुनरुज्जीवित करना है वह स्वराज्य है। स्वदेशीको अपनाये बिना स्वराज्य मिल नहीं सकता। और भारतके लिए स्वदेशीको अपनानेका अर्थ है विदेशी कपड़ेका स्थायी रूपसे बहिष्कार करना। मैं आपको अगुआ बननेके लिए निमन्त्रित करता हूँ क्योंकि आपमें इसकी क्षमता है। परमात्मा आपको इस नेतृत्वकी शक्ति और समझ दे।

आपका विश्वस्त मित्र,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ७–७–१९२१

१६२. तार: गुलाम महबूबको[1]

[७ जुलाई, १९२१][2]

गुलाम महबूब
मोगा

जमानत न दें। वकील न करें। ब्यौरा भेजें।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५६४) की फोटो-नकलसे।

१६३. पत्र: ज० बो० पेटिटको

[७ जुलाई, १९२१ के पश्चात्][3]

प्रिय श्री पेटिट,[4]

एसोसिएशनने जो दो हजार रुपये मंजूर किये हैं उनमें से कृपया ५०० रुपये मुझे दें। मैंने यह रकम श्री बनारसीदासके लिए माँगी है जो श्री एन्ड्रयूजकी अधीनतामें काम कर रहे हैं। उन्होंने यह रकम खर्च कर ली है। मैंने इन ५०० रुपयोंके बारेमें आपसे कहा था कि वह मुझे इस कार्यके लिए कलकत्ताके एक मित्रने दिये थे। यह खर्च केवल फीजीसे लौटे हुए उन प्रवासियोंपर ही हुआ जिनकी श्री एन्ड्रयूज की देख-रेखमें श्री बनारसीदास सार-सँभाल कर रहे हैं।

आपका,

पेंसिलसे लिखे हुए अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ७५६५) से।

१. यह तार गुलाम महबूबके उस तारके जवाबमें दिया गया था जिसमें उन्होंने लिखा था: "हम ७ कांग्रेस कार्यकर्ताओंपर नौकरशाही और उसके खुशामदियोंके भड़कानेपर गैर-सरकारी लोगोंने धारा १०७ के अन्तर्गत मुकदमा दायर कर दिया है। मुकदमा गैर-सरकारी है, हाजिरीकी जमानत और सफाईके बारेमें सलाह दें।"

२. यह तारीख डाक मुहरके आधारपर दी गई है।

३. स्पष्ट है कि यह पत्र बनारसीदासके बोलपुरसे भेजे गये ७ जुलाईका पत्र मिलनेके बाद लिखा गया था और इसमें उन्होंने ५०० रुपये माँगे थे। यह रकम गांधीजीको दिसम्बर १९२० में, जब वे कलकत्तासे नागपुर आये थे, एक मारवाड़ी सज्जनने दी थी और उन्होंने इसे अमृतलाल ठक्कर और बनारसीदासको सौंप दिया था। पत्रका मसविदा, जो बनारसीदासके पत्रके पीछे लिखा गया है, सम्भवतः गांधीजीने बोलकर लिखवाया था।

४. जहांगीर बोमनजी पेटिट, प्रसिद्ध पारसी दानवीर।

१६४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

बम्बई
८ जुलाई, १९२१

भाईश्री वल्लभभाई,

मैं सोमवारको सुबह वहाँ जाऊँगा और उसी दिन वापस हो जाऊँगा। राजनीतिक मण्डलको क्या करना चाहिए, इस बारेमें भाई इन्दुलालको[1] पत्र लिखा है। उसे देख लें। मुझे आशा है कि असहयोगका निश्चय किया जायेगा। कौंसिलोंका सर्वथा बहिष्कार ही हमारा आसरा है।

भाई मावलंकर[2] वगैराको खबर दे दें।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो : सरदार वल्लभभाईने

१६५. तार : मोतीलाल नेहरूको

बम्बई
[८ जुलाई, १९२१ या उसके पश्चात्][3]

मोतीलाल नेहरू

अध्यक्षका आग्रह है कि बहिष्कारके संगठनका खयाल करते हुए समितिकी तारीख चौबीसके बाद रखी जाये। मेरा सुझाव है कि बैठक अट्ठाईसको बम्बईमें बुलाई जाये। मंजूरी तारसे दें।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५६७) की फोटो-नकलसे।

१. श्री इन्दुलाल याज्ञिक, एक सक्रिय राजनैतिक कार्यकर्त्ता; गुजरात प्रान्तीय समितिकी स्थापनाके समय उसके मन्त्री। बादमें कांग्रेससे अलग हो गये। गांधीजीने इन्हींसे **नवजीवन** लेकर उसे साप्ताहिकका रूप दिया था।

२. श्री गणेश वासुदेव मावलंकर (१८७७–१९५६); अहमदाबादके सुप्रसिद्ध वकील, संसदीय मामलोंके विशेषज्ञ और कांग्रेसी नेता। १९३७ में बम्बई विधान परिषद्के तथा १९४६ में केन्द्रीय विधान परिषद्के अध्यक्ष निर्वाचित; मृत्युपर्यन्त लोकसभाके अध्यक्ष।

३. गांधीजीने यह तार कोडाइकनालसे ८ जुलाईको सी० विजयराघवाचार्यके नीचे लिखे तारके उत्तरमें भेजा था: "खुशीसे लेकिन तारीख इतवार २४ के बाद रखें। स्वराज्य-कोषमें आश्चर्यजनक सफलतापर सधन्यवाद हार्दिक बधाइयाँ। तारीख तार द्वारा सूचित करें।"

१६६. पत्र : कुँवरजी मेहताको

शनिवार [९ जुलाई, १९२१]

भाईश्री कुँवरजी,[1]

आपके पत्रको मैं अभी-अभी पढ़ पाया हूँ। भाई मकनजी और वराड गाँवके भाइयोंको मेरी ओरसे धन्यवाद दीजियेगा। भाई मकनजीने सच्ची बहादुरीका परिचय दिया है। उन्होंने घड़ी-भरके लिए चले जानेके लिए कहा सो उसकी फिक्र नहीं; बादमें क्रोधपर विजय प्राप्त कर क्षमाके गुणको धारण किया और गाँवके लोगोंने भी शान्ति रखी, इसे मैं महत्त्वकी बात मानता हूँ।[2]

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २६७१) से।

१६७. शुभ घड़ी

गिरनारकी चोटीपर पहुँचनेकी इच्छा करनेवाला व्यक्ति पगडंडीपर पहुँचनेपर जिस तरह वहाँ पहुँचा हुआ नहीं कहलाता उसी तरह हम स्वराज्यकी नसैनीपर एक सीढ़ी चढ़कर ही रुक जायें तो हम स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकेंगे। हमें एक साँसमें ही चढ़ना होगा। पैसा इकट्ठा किया यह तो ठीक किया, इससे विश्वास आया। हमारे साथ कौन-कौन हैं, कितने लोग हैं इसका कुछ अन्दाज हुआ। हमें जो काम करने हैं उन कामोंपर खर्च करनेके लिए हमें साधन मिले। लेकिन जिस कामसे हमें स्वराज्यकी झाँकी मिलती है वह तो स्वदेशी ही है। हजारों रुपया देनेसे हम स्वराज्य-मन्दिरमें प्रवेश नहीं पा सकते। उस मन्दिरमें प्रवेश पानेकी शर्त तो स्वदेशी ही है। इस मन्दिरका दरबान यह नहीं पूछेगा कि हमारे पास कितने पैसे हैं। बल्कि हमने खादी पहनी है या नहीं, यह देखेगा; हमारे मुँहसे शराबकी गन्ध आती है या नहीं, इसकी जाँच करेगा। स्वदेशीका पालन करनेवाला स्वयमेव स्वतन्त्रताका अनुभव करेगा। जिसके मनमें स्वतन्त्रताकी भावनाका प्रादुर्भाव नहीं हुआ वह दूसरोंके कहनेसे स्वतन्त्र हो ही नहीं सकता। सभीको इस बातका अनुभव हो रहा है। विदेशी कपड़ेका त्याग न करनेवाले को ऐसा अनुभव कभी हो ही नहीं सकता।

जापानी साड़ी, फ्रेंच साटिन, मैनचेस्टरकी मलमल, यह सब एक प्रकारका व्यसन ही है। इस व्यसनकी गुलामीमें पड़ा हुआ व्यक्ति स्वतन्त्रताका कोई विचार नहीं करता

१. एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ता, जिनका सम्बन्ध गुजरातके पाटीदार मण्डलसे था।

२. इसमें जिस घटनाका जिक्र किया गया है उसके लिए देखिए "टिप्पणियाँ", १७-७-१९२१।

क्योंकि वह पहरावेसे विदेशी हो जाता है। जिसके मनमें यह भावना है कि विदेशी सब चीजें अच्छी हैं उसमें स्वदेशकी भावना कहाँसे आ सकती है? उनका अपना तन्त्र कैसे हो सकता है? जिसे हिन्दुस्तानकी हवा माफिक नहीं आती, उसकी पोशाक नहीं भाती, उसकी खुराक रुचिकर नहीं लगती, उसके लिए हिन्दुस्तानको अपना देश माननेका क्या अर्थ हो सकता है? अभी करोड़ों हिन्दुस्तानकी हवासे उकताये नहीं हैं, हिन्दुस्तानकी गेहूँ-बाजरेकी रोटीको हाथसे पकाकर सन्तोष मानते हैं; लेकिन हिन्दुस्तान हमें जो कपड़ा देता है उससे हमारी तृप्ति नहीं होती। विदेशी कपड़ेसे हमें मोह हो गया है। जबतक यह मोह नहीं जाता तबतक हिन्दुस्तानको पराधीन रहना पड़ेगा।

कोई अगर हमें विदेशी कपड़ा मुफ्त दे तो भी व्यर्थ है। इतना ही नहीं बल्कि हानिकारक है क्योंकि भेंट लेकर जीनेवाला व्यक्ति तो भिक्षुक बनता है। और भिक्षुक तो हमेशा ही पराधीन रहता है, उसने तो अपनी आत्मा बेच दी है।

हमें स्वराज्य-मन्दिरमें प्रवेश करनेके लिए स्वदेशीकी ही जरूरत है। स्वदेशी अर्थात् विदेशी कपड़ेका बहिष्कार। चरखेकी शक्तिको हिन्दुस्तानने परख लिया है। हिन्दुस्तानका कोई भी प्रान्त अब चरखेसे अनजान नहीं है। कम-अधिक प्रमाणमें हर एक प्रान्तमें खादी बुनी जाने लगी है। यह कला हाथमें आ गई है। लेकिन — ?

लेकिन विदेशी कपड़ेका मोह जाना चाहिए। जबतक यह मोह नहीं जाता तबतक चरखेका निरन्तर चलते रहना सम्भव नहीं है। हिन्दुस्तान जबतक चरखेके चमत्कारको नहीं पहचानता तबतक उसमें बाहुबल नहीं आयेगा, आत्मविश्वास नहीं आयेगा। विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करनेकी शुभ घड़ी अब आ पहुँची है।

अक्तूबरकी पहली तारीख तक अगर स्वराज्य नहीं मिला तो मेरी लाज जायेगी, हिन्दुस्तानके प्रति मेरा विश्वास झूठा ठहरेगा। दिसम्बर तक नहीं मिला तो हिन्दुस्तानकी प्रतिज्ञा टूट जायेगी, हिन्दुस्तानकी नाक कट जायेगी, नागपुर कांग्रेसमें सम्मिलित हुए प्रतिनिधियोंकी लाज जायेगी।

विदेशी कपड़ेके बहिष्कारके बिना स्वराज्य नहीं मिलेगा। विदेशी कपड़ेका त्याग करना शरीरकी शुद्धि करना है। शरीर-शुद्धिके बिना स्वराज्य-मन्त्र जपनेका हमें अधिकार नहीं है।

इसलिए यदि हम इस वर्ष स्वराज्य-मन्दिरमें प्रवेश करना चाहते हैं तो अब हमें बहिष्कारमें ढील नहीं डालनी चाहिए। क्योंकि स्वदेशी धारण करनेका अर्थ अपूर्व शक्ति धारण करना है। लेकिन अगर इस मन्दिरपर जिनका कब्जा है वे हमारी शक्तिको नहीं पहचानते और हमें कब्जा देनेको तैयार नहीं होते तो हमें उनके साथ लड़ना होगा। उसमें थोड़ा समय तो अवश्य लगेगा तथापि मेरा यह विश्वास भी है कि यदि हम विदेशी कपड़ेका सर्वथा बहिष्कार कर दें तो हमें युद्ध नहीं करना पड़ेगा और हमें कब्जा मिल जायेगा।

तथापि हमें युद्धकी अवधिका भी ध्यान रखना चाहिए। अतः अगर हम अक्तूबरमें स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हों तो हमें ३१ अगस्त तक बहिष्कार पूरा कर लेना चाहिए। ऐसा कर सकेंगे या नहीं इसका निश्चय पहली अगस्ततक हो सकता

है। पहली अगस्तको तिलक महाराजकी पुण्यतिथि है। यदि कार्य किया होगा तो वह दिन हम उत्साहसे मनायेंगे; यदि हम कर्त्तव्यका पालन न कर सके होंगे तो लज्जाके मारे घर बैठे रहेंगे। जिस तरह हमने जूनके अन्तिम दिनोंमें ही खूब काम किया उसी तरह हम इस मासके बाकी दिनोंमें खूब काम करके विदेशी कपड़ेका बहिष्कार पूरा करें। जो अपने-आपको असहयोगी कहलवाता है उसे सिर्फ खादी ही पहननी चाहिए। उसे कमसे-कम कपड़ोंसे काम चलाना चाहिए। यह सन्धिकाल — कठिन काल — है। एकदम बहिष्कार करनेसे हमारे पास कपड़े कम हो जायेंगे, देशमें कपड़ेकी तंगी हो जायेगी, यह जानकर भी हमें कम कपड़े प्रयोगमें लाने चाहिए। और फिर हर कोई नये कपड़े बनवा भी तो नहीं सकता, अतएव कमसे-कम कपड़े पहननेमें ही हमारी गति है।

हमारे पास जितना विदेशी कपड़ा हो उसे या तो हम जला दें अथवा विदेश भेज दें अथवा शौचादि क्रियाके समय पहनकर फाड़ डालें। विदेशी कपड़ेको हम गुलामीकी निशानी समझकर उसका उपयोग उसी अवस्थामें करें जब अत्यन्त गरीब होनेके कारण गुजारा न हो सके।

गरीबोंको सुविधा प्रदान करनेके लिए हम विदेशी कपड़ेको वापस लेनेके लिए भंडार रखें और बदलेमें खादीकी आवश्यकताको पूरा करें। इस तरह अनेक प्रकारकी योजनाएँ बनाकर हमें पहली अगस्त तक अपने पहरावेमें तो विदेशी कपड़ेका बहिष्कार पूरा करना चाहिए। हम सबको अब अपने-अपने घरोंमें विदेशी मालको न लेने और प्रतिदिन अमुक तोले सूत कातनेका निश्चय कर लेना चाहिए।

लेकिन इतना ही पर्याप्त नहीं है। हमें कपड़ेकी प्रत्येक दुकानपर घूम आना चाहिए। जो विदेशी माल बेचते हों उनसे विदेशी माल न मँगवानेकी प्रार्थना करनी चाहिए। और अगर उनके पास विदेशी माल पड़ा हो तो उसे विदेशमें बेचनेके लिए कहें।

खरीददारों तथा व्यापारियोंका जो फर्ज है वही मिल-मालिकोंका भी है। उनसे हम प्रार्थना कर रहे हैं कि वे बहिष्कारको लेकर कपड़ेके दाम न बढ़ायें। आज भी वे इतना ज्यादा दाम लेते हैं कि उसमें कमी की जानी चाहिए। तिसपर भी अगर वे जनताकी तंगीका लाभ उठाकर दाम बढ़ाते हैं तो वे स्वयं विदेशी बनते हैं, देशके दुश्मन बनते हैं। मेरा खयाल है कि वे सीमाका अतिक्रमण नहीं करेंगे।

स्वराज्य प्राप्त करनेके आन्दोलनको हमने आत्मशुद्धि माना है। हम जैसे-जैसे ऊँचे उठते जाते हैं वैसे-वैसे हमारी कसौटी होती जाती है। अगर प्रत्येक व्यक्तिके दिलमें देशभक्ति होगी, अगर हर व्यक्ति देशको अपना घर समझ उसे शुद्ध रखनेकी इच्छा करेगा तो इस वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना मैं बहुत ही आसान बात समझता हूँ। जूनकी तीस तारीखको देशने एक चमत्कार कर दिखाया, इसलिए बहिष्कारके चमत्कारकी आशा रखनेका हमारे पास कारण है। प्रभु लाज रखना।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १०–७–१९२१

१६८. पंच महायज्ञ

यज्ञके अनेक अर्थ हो सकते हैं। हिन्दुस्तानमें गृहस्थ, संसारीके लिए पाँच यज्ञ आवश्यक हैं: चूल्हा, मूसल, चक्की, घड़ा और चरखा। इनमें से जिस घरमें जो चीज जितनी कम होगी उतनी ही कम बरकत होगी। लेकिन इन यज्ञोंपर दृष्टिपात करनेसे आप देखेंगे कि वस्तुतः दो ही यज्ञ हैं और बीचके तीन यज्ञ गौण हैं। चक्की, मूसल और घड़ा ये चूल्हेके ही अंग हैं। जिसके यहाँ चक्की अथवा मूसल नहीं चलता उसका चूल्हा मन्द हो जाता है, उसका तेज कम हो जाता है, लेकिन चूल्हा तो जलता ही है। लेकिन जिसके यहाँ चरखा नहीं चलता उसके यहाँसे तो एक मुख्य अंग ही चला गया, उसे तो पक्षाघात हो गया। अन्न अथवा वस्त्रके लिए जो यज्ञ न करे उसे अन्न अथवा वस्त्रका अधिकार ही नहीं है। ऐसा रिवाज होना चाहिए कि जो चूल्हा न जलाये वह खाना न खाये, जो चरखा न चलाये वह कपड़ा न पहने। लेकिन हमने तो चरखा छोड़नेपर भी वस्त्र न छोड़े। जो यज्ञ किये बिना खाता है वह चोर कहलाता है। वैसे ही जो यज्ञ किये बिना कपड़े पहनता है वह भी चोर है। यज्ञ अर्थात् कुरबानी, यज्ञ अर्थात् आत्मत्याग अर्थात् शारीरिक परिश्रम। जो चूल्हा और चरखा चलाता है वह बुद्धिपूर्वक यज्ञ करता है। जो व्यक्ति ऐसी पोषक मजूरी नहीं करता सो अन्तमें थोड़ी-बहुत कसरत करके अन्नको पचाता है।

अब कदाचित् अधिकांश लोग समझ गये होंगे कि हमने चरखेको छोड़कर कितना पाप किया है। किसी समय हिन्दुस्तानकी महिलाएँ जब यह कोमल किन्तु पोषक परिश्रम किया करती थीं तब हिन्दुस्तान सुखी था, स्वस्थ था, तेजस्वी था। आज हिन्दुस्तान चरखेको छोड़कर दुःखी, रोगी और तेजहीन हो गया है।

चूल्हा, चरखा आदि घरके शृंगार हैं। चरखेके जानेके बादसे हिन्दुस्तानमें लाखों घर खंडहर हो गये हैं। इस कथनमें कोई अतिशयोक्ति न मानें। पाठकका घर भले ही ऐसा न हो। पानीकी तंगीका अर्थ यह नहीं होता कि किसीको पानी ही न मिले। लेकिन होता यह है कि पानी सबको कम, अनेकको बहुत ही कम और थोड़े लोगोंको बिलकुल ही नही मिलता। चरखेके अभावमें भी छः करोड़ घरोंका बहुत अच्छा गुजारा होता है। लेकिन कितने ही घर तो जमींदोज़ हो गये हैं। उड़ीसा और चम्पारनको ही देखिए। उनके बहुतसे गाँव खण्डहर हैं। डेढ़ सौ वर्ष पहले जिस देशके लोग बारहों महीने किसी-न-किसी प्रवृतिमें व्यस्त रहते थे उनमें से कुछ वर्षोंसे अगर अस्सी प्रतिशत लोग बिना कामके चार महीने बेकार रहते हों तो उस देशका क्या हाल होगा?

धातु तो दौलतकी निशानी मात्र है, खरा पैसा तो मजूरी ही है। अस्सी प्रतिशत लोग चार महीने बेकार रहते हैं अर्थात् उनकी एक तिहाई शक्ति कम हो गई। वर्षोंसे तीन रुपयेका काम करनेकी योग्यता और इच्छा दोनों ही के बावजूद हिन्दुस्तानके लोग दो रुपयेका काम कर रहे हैं, उनको दो रुपयेका ही काम मिलता है। ऐसा देश

कंगाल क्यों न हो? इस स्थितिसे उबरनेका उपाय यही है कि हम हाथसे कते सूतके ही कपड़े पहननेकी प्रतिज्ञा करें। ऐसा करेंगे तो हमें अपनी गरजसे चरखा चलाना पड़ेगा और अन्तमें हमें पता चलेगा कि हमारा उसे छोड़ना ही भूल थी। लेकिन इस बीच उसे लोकप्रिय बनानेके लिए हमें विशेष प्रयत्न करने होंगे।

जबतक हम विदेशी कपड़ेके लालच और लतसे चिपके रहते हैं तबतक हम चरखा दाखिल करने और दाखिल करनेके बाद उसे चलानेके लिए अधीर नहीं होंगे। यदि हम विदेशी कपड़ा न पहननेकी प्रतिज्ञा करते हैं तो चरखा चलानेमें ही हमारी मुक्ति है। इस तरह चरखे और बहिष्कारका परस्पर निकट सम्बन्ध है। जिसकी जरूरत नहीं होती उसकी हमें कम चाह होती है। चरखेकी जरूरतको पैदा करना हमारा धर्म है। उसके बिना हिन्दुस्तानकी कंगाली कभी दूर नहीं होगी। ऐसी अमूल्य वस्तुका त्याग करके हमने जो भूल की है उसका हम जितना प्रायश्चित्त करें उतना कम है। यदि स्वेच्छया प्रायश्चित्त करेंगे तो अल्प त्यागसे काम चल जायेगा। बलात् तो क्या-क्या करना पड़ेगा सो तो दैव ही जाने।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १०–७–१९२१

१६९. टिप्पणियाँ

दक्षिण आफ्रिकासे मदद

तिलक स्वराज्य-कोषके लिए दक्षिण आफ्रिकासे जो रकम प्राप्त हुई है वह निम्नलिखित है:

	[रुपये]
पाटीदार मण्डल, जे० बी०	८,२७५
काठियावाड़ आर्य-मण्डल, नेटाल	२,५००
टोंगाट-वेरुलम	१,०००
दरजी-मण्डल, जेदा	१,४४५
दरजी-मण्डल, डर्बन	५३०
पाटीदार यूनियन, डर्बन	१,००१
मार्फत उमर शेठ	५,४२५
वेरुलम मन्दिर	१,६५८½
दरजी हरसुखराय मण्डल	७७०

दक्षिण आफ्रिकासे इतनी रकम कम नहीं कही जा सकती। बाहर रहनेवाले भारतीयोंको दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंसे सबक लेना चाहिए।

"लोगोंको अपनी ओर करना चाहते हो"

एक सज्जन लिखते हैं कि वैष्णवोंके प्रति अपने पत्रमें मैंने गुस्सा करनेवाले व्यक्तिके गुस्सेको भी प्रेमका गुस्सा माना है सो उसमें भी मेरा स्वार्थ है। वे कहते

हैं कि "आप चीजोंको इतने सुन्दर ढंगसे प्रस्तुत करके अपने विरोधियोंको भी अपनी ओर करना चाहते हैं"।

इस पत्र-लेखककी बातमें अर्धसत्य है। मै विरोधियोंको अपनी ओर जरूर करना चाहता हूँ लेकिन जो मै मानता नहीं, उसे कहकर नही। ये भाई लिखते हैं कि "यदि गुस्सा भी प्रेमकी निशानी हो तो फिर कहा जायेगा कि जनरल डायरने भी प्रेमके कारण जलियाँवालाका कत्लेआम करवाया था।" मुझे तो लगता है कि इस दलीलमें बहुत अज्ञान भरा हुआ है। अनेक बार बाप बेटेपर क्रोधित होता है, सो प्रेमवश ही होता है; लेकिन जनरल डायरका गुस्सा तो सिर्फ द्वेषके कारण ही था। वैष्णवोंके गुस्सेको मैं प्रेमकी निशानी समझता हूँ, इसका कारण स्पष्ट है। मेरे साथ उनका कोई निजी वैर नहीं है। मेरे दूसरे आचरणोंको वे पसन्द करते है। लेकिन अस्पृश्यता सम्बन्धी मेरे विचारोंको वे भूल मानते है और उसे मेरा दोष मानकर मुझसे नाराज होते हैं। अन्य अनेक लोग मर्यादाका उल्लंघन करते है लेकिन वे उन्हें कोई पत्र नहीं लिखते और उनपर नाराज भी नहीं होते। ऐसे अनेक उदाहरण दिये जा सकते है। पत्र-लेखकको मै फिरसे विचार करनेकी सलाह देता हूँ।

आक्षेप

एक भाई माणावदरसे लिखते हैं:

> **आप लिखते हैं कि अगर पंजाब और खिलाफतके मामलेमें न्याय मिल जाये तो आप स्वराज्यकी लड़ाईका शेष कार्य अन्य नेताओंको सौंपकर निवृत्त हो जायेंगे।**

उनका कहना है कि मैं ऐसा कर ही नही सकता और यह सच भी है। बात सिर्फ इतनी ही है कि वे मेरे कथनको नहीं समझ सके हैं। मैंने उपर्युक्त बात कहकर यह बताया है कि खिलाफत और पंजाबके न्यायमें ही स्वराज्यकी चाबी है। इन दोनोंके मिलनेके बाद स्वराज्य प्राप्त करनेमें किसीको विशेष अड़चन नहीं होगी। इन दोनोंके मिलनेपर हमें आवश्यक शक्ति प्राप्त हो जायेगी, ऐसी मेरी मान्यता है। बाकी स्वराज्यकी लड़ाई शुरू हो गई है और उसे मैं कभी छोड़ ही नहीं सकता।

सुन्दरलालजीका पत्र

सुन्दरलालजी जबलपुरमें पकड़े गये हैं और उन्हें सपरिश्रम कारावास मिला है, इस बातको सब कोई जानते हैं। उन्होंने जेल जानेसे पूर्व मुझे एक पत्र लिखा है उसमें से जानने योग्य अंश मैं नीचे उद्धृत कर रहा हूँ।[1]

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १०–७–१९२१

१. यहाँ नहीं दिया गया है। इस पत्रमें पण्डित सुन्दरलालने स्वराज्य प्राप्तिके साधनके रूपमें अहिंसामें अपना विश्वास प्रकट किया था तथा जेलकी सजाका, आत्मशुद्धिका अवसर मिलनेके कारण, स्वागत किया था।

१७०. भाषण : दवा-विक्रेताओंकी सभा, बम्बईमें

१० जुलाई, १९२१

कितने लोग विदेशी कपड़ेके बहिष्कारकी प्रतिज्ञा लेनेवाले है — इस लोभसे खिचकर मैं यहाँ आया हूँ। विदेशी कपड़ेके बहिष्कारका कारण मैं दे चुका हूँ। मिल-मालिक अथवा विदेशी कपड़ेके व्यापारी हमारी मदद करें या न करे लेकिन यदि हिन्दके लोग चाहें तो वे विदेशी कपड़ेका बहिष्कार कर सकते है। बाहरसे आनेवाले कपड़ोंका हिन्द इस्तेमाल न करे, यह विदेशी कपड़ेका बहिष्कार हुआ। आप सिर्फ अबसे विदेशी कपड़ेका उपयोग न करनेकी प्रतिज्ञा लें, इससे मुझे सन्तोष नहीं होगा। आपके पास अगर विदेशी कपड़ा हो तो आप उसको भी इस्तेमालमें नहीं ला सकते। इसके लिए मैने तीन उपाय ढूंढ़ रखे हैं। श्रेष्ठ तो यही है कि हमारे पास जितना विदेशी कपड़ा हो उसे हम जला डालें। इस उपायके सम्बन्धमे अनेक लोगोंका कहना है कि हमारे देशमें अनेक गरीब लोग भूखे और नग्नावस्थामें घूमते हैं, क्यों न उन्हें ये कपड़े दे दें? कपड़े जलानेमें तो द्वेषभाव दिखाई देगा। उसके जवाबमें मैं कहता हूँ कि यदि मैं द्वेष-बुद्धिसे विदेशी कपड़ोंको जलानेकी बात कहता होऊँ तो लोगोंके मनमें द्वेष-भाव बढ़ सकता है परन्तु अगर हम यह समझते हों कि विदेशी कपड़ेका इस्तेमाल करके हमने भयंकर भूल की है तो गुलामीसे छुटकारा पानेका श्रेष्ठ उपाय उसे जलाना ही है।

दूसरा उपाय है ऐसे कपड़ोंको हिन्दसे बाहर भेजना। अपने देशमें तो हम गरीबसे-गरीब और कंगालसे-कंगालको भी विदेशी कपड़ा नही दे सकते। मद्य और विदेशी कपड़ेको मैं एक ही कोटिमें रखता हूँ। आपसे विदेशी कपड़ेका तिरस्कार नहीं हो पाता, सो मैं समझता हूँ। मेरे ये विचार एक बहुत लम्बे अर्सेसे हैं इसलिए मुझे यह कठिन नहीं लगता। और आपको थोड़े ही समयमे अपने विचारोंमें परिवर्तन करना है। यदि आपका भी यही मत है कि विदेशी कपड़ेका उपयोग विदेश भेजनेमें ही किया जाना चाहिए तो आपके पास जितना भी कपड़ा है वह सब मेरे पास भेज दें। उसके लिए वैसी व्यवस्था कर दी जायेगी; लेकिन अगर आप यह मानते हों कि विदेशी कपड़ेके बहिष्कारसे द्वेष नहीं बल्कि जोश बढ़ेगा, हिन्दका निश्चय और दृढ़ होगा तो मैं उसे अवश्य आगमें जला डालना चाहूँगा।

जो गरीब हैं अथवा जिनके पास स्वदेशी खरीदने लायक पैसे भी नही हैं, उनसे विदेशी कपड़े लेकर बदलेमें उन्हें खादी देनेकी व्यवस्था की जा रही है। हमारे पास इस समय स्वदेशी दो तरहकी है, मिलका कपड़ा और चरखेकी खादी। हमारे लिए तो खादी ही हो सकती है; मिलका कपड़ा हमें गरीबोंके लिए रहने देना चाहिए। भोग-विलासमें पड़े हुए अनेक लोग खादी पहनना पसन्द नहीं करते; उसके प्रति उनमें रुचि नहीं है। लेकिन आप जबतक इतना त्याग नहीं कर सकते तबतक गुलामी-का त्याग असम्भव लगता है। यदि आप खादी न पहन सकें तो आपको मिलका

कपड़ा पहनना चाहिए। कालबादेवीके स्वदेशी भण्डारमें १०,००० रुपयेकी खादी है और वह बिकाऊ है। मैंने आज भाई नारणदास पुरुषोत्तमदासके साथ विचार-विमर्श किया है और थोड़े ही दिनोंमें ५०,००० रुपयेकी खादी आ जायेगी।

खादीका उपयोग आवश्यकतासे अधिक न करें। देश अभी इतना माल तैयार नहीं कर सकता जो सब तक पहुँच सके। खादीका उपयोग घी और सोनेकी तरह होना चाहिए। जबतक स्वराज्य नहीं मिल जाता तबतक हमें ठाठ-बाटसे नही रहना चाहिए। पुरुषोंके पास दो कुर्ते और धोती होनी चाहिए। स्त्रियोंको भी कम कपड़ोंमें गुजारा करना चाहिए। एक भाईने सुझाव दिया है कि हमें फाँसीपर भी चढ़नेके लिए तैयार रहना चाहिए लेकिन आपको फाँसीपर नही चढ़ना है। अगर सारा भारत फाँसीपर चढ़नेके लिए तैयार हो जाये तो आज ही स्वराज्य है। लेकिन जब ऐसा समय आयेगा तब मुझे आपको विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करनेके लिए कहनेकी जरूरत ही न रह जायेगी। फिलहाल तो हममें ताकत ही नहीं रही है। कितनी ही बहनें यह कहती है कि जापानकी साड़ी और फ्रांसकी मखमल मुझे सौंपकर खादी पहनना मुश्किल लगता है। लेकिन हममें सच्ची सामर्थ्य आई है या नही — इस बातका पता लगानेकी यह कुंजी है। कितने ही लोगोंका कहना है कि आपने मेरी खातिर ही पैसा दिया है, लोगोंने सच्चा त्याग नहीं किया है। इसे भी आप विदेशी कपड़ेका त्याग कर झूठा साबित कर सकेंगे।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १७–७–१९२१

१७१. तार : सी० विजयराघवाचार्यको

[१० जुलाई, १९२१ या उसके पश्चात्][1]

बम्बईमें अट्ठाईसको बैठककी सूचना भेजी जा रही है।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५६८)की फोटो-नकलसे।

१. सी० विजयराघवाचार्यने १० जुलाईको कोडाइकनालसे तार दिया था: "धारवाड़ प्रार्थना करता है, केलकर समर्थन करते हैं, तुरन्त तार दें बम्बई या धारवाड़ तारीख आवश्यक।"

१७२. पत्र : मणिबेन पटेलको

सोमवार, ११ जुलाई, १९२१

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिल गया। कपड़े जलानेका हेतु तो यह है कि विदेशी कपड़ोंकी तरफ और वैराग्यवृत्ति पैदा की जाये। ये कपड़े गरीबोंको दिये जायें, इस विचारमे भी मोह है। लाख दो लाखके कपड़े गरीबोंको गये तो क्या, न गये तो क्या? इतने दिनतक ये कपड़े मँगवाकर हमने हिन्दुस्तानको बड़ा नुकसान पहुँचाया है। मै मानता हूँ कि अब ये कपड़े गरीबोंको देनेसे भी लाभ नहीं होगा। ये कपड़े विदेश भेज देनेमें कुछ सार अवश्य है। फिर भी मैं सबकी राय लेता रहता हूँ। उसमे से जो सबको ठीक लगेगा वह मान लेंगे। अब भी शंका हो तो पूछना।

डाह्याभाईकी वानरसेना अच्छा काम कर रही दीखती है। एक बात वे याद रखें। लोगोंसे विनयपूर्वक अपनी बात कहे। घृणा या खिल्ली उड़ाने, मजाकका भाव तनिक भी न रखें। शराब पीनेवाले पर दया रखी जाये।

काकासाहब[1] बढ़िया शिक्षक है, इसमे तो शक ही नहीं। तुम सबको वे पसन्द आये, इससे मै खुश हुआ हूँ।

काका विट्ठलभाईसे मुलाकात हुई है; काफी बातचीत हुई। उन्होने अपने जिला बोर्डमें ठीक प्रस्ताव पास करवाया है। मेरे पास आने-जानेवाले लोग कहते हैं कि काकाकी अभी चरखेपर श्रद्धा नहीं है। इतना ही नही, मण्डलियोंमें चरखेके प्रति अरुचि प्रकट करते रहते हैं। फिर भी जब उनसे मिलूँगा तब फिर बात करूँगा। मुझ-पर पिछली मुलाकातका यह असर पड़ा था कि उनके मनका बहुत-कुछ समाधान हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

मणिबेन
द्वारा/श्री वल्लभभाई झवेरभाई पटेल
भद्र, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो : मणिबहेन पटेलने

१. दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर (जन्म १८८५); १९१५ से गांधीजीके साथ हुए।

१७३. पत्र : देवचन्द पारेखको

गामदेवी, बम्बई
११ जुलाई, १९२१

भाईश्री देवचन्दभाई,

आपके पत्र मिले। काठियावाडने तो आशासे अधिक किया है। मैं चाहता हूँ कि अब आप खादी तैयार करनेमें लग जायें।

कानूनकी सविनय अवज्ञा एकाएक नहीं करनी है। आपका हिसाब ठीक नहीं है। छः करोड़ चरखे अपने-आप शुरू हो जायेंगे। बीस लाख चरखे शुरू करनेमें हमें बहुत ज्यादा खर्च नहीं करना पड़ा है। हो भी नहीं सकता, क्योंकि थोड़ा-सा खर्च करनेके बाद लोकोपयोगी वस्तुको लोग स्वयंमेव उठा लेते हैं। सदस्य बढ़ानेका काम भी चलता रहता है।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (जी० एन० ५७१७) से ।

१७४. भाषण : बम्बईमें शराब-बन्दीपर[1]

१२ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने कहा : बम्बई लौटनेके बाद मैंने शराबके ठेकेदारोंकी स्थिति समझ ली है और मैं सोचता रहा हूँ कि मैं प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीको, और शराबके व्यापारियोंको भी, क्या सलाह दूँ। मैं इन बातोंके बारेमें गहराईसे सोचता रहा हूँ। शराबके व्यापारियोंका, जो अपनी आजीविका लोगोंको शराब बेचकर कमा रहे हैं, मुझे बहुत खयाल रहता है। श्री बी० एफ० भरूचाने मुझे इस सम्बन्धमें तथ्य और आँकड़े दिये हैं तथा कई पारसी भाइयोंने गुमनाम और अपना नाम देते हुए पत्र भी लिखे हैं। मुझे इन सब पत्रोंसे यह मालूम हो गया है कि इस व्यापारके सम्बन्धमें शहरकी वास्तविक स्थिति क्या है। मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि पारसियोंकी ८०,००० की छोटी-सी बिरादरीमें यदि एक दर्जन या ऐसे ही कुछ बुरे लोग हों तो भी उनसे उसे नुकसान पहुँचेगा, जब कि हिन्दुओं या मुसलमानोंमें इन बुरे आदमियोंकी संख्या ५ या ७ लाख होनेपर भी उनका इतना साफ परिणाम नहीं दिखेगा। संसारमें सदा ऐसा

१. महात्मा गांधीने मंगलवारको प्रातः बम्बईमें मारवाड़ी विद्यालयके भवनमें शराबके व्यापारियोंकी सभामें भाषण दिया था। यह सभा पारसी राजकीय सभाके तत्त्वावधानमें बुलाई गई थी ।

ही होता आया है। इसलिए थोड़े-से पारसी शराब-विक्रेता बदनाम हो गये हैं और दूसरे नजरोंके सामने भी नहीं आये हैं। शराबके पारसी व्यापारियोंका उदाहरण बहुत स्पष्ट होकर देशके सामने आ गया है। मैंने एक्सलसियर थियेटर [वाली सभा]में अपने पारसी मित्रोंसे कहा था कि वे अपने शिष्टतम आचरणसे समस्त देशके सामने एक आदर्श उपस्थित कर सकेंगे। किन्तु मुझे गहरा दुःख है कि पारसियोंमें से इतने लोग जनताको शराब बेचकर अपनी आजीविका कमा रहे हैं और मेरा खयाल है कि यह उनके लिए बहुत बदनामीकी बात है। मुझे इस बातका भी खेद है कि इतनी सारी विधवाओंको अपना गुजारा शराब बेचकर करना पड़ता है। मेरी रायमें शराब बेचनेकी अपेक्षा इन बहनोंके लिए पत्थर तोड़कर या भीख माँगकर भी अपना पेट भरना ज्यादा अच्छा है।

अगर मेरे पास पेटिट या टाटाके[1] जैसे साधन होते तो मैं इन पारसी विधवाओंके पैरोंपर जा गिरता और उनसे प्रार्थना करता कि वे जितना रुपया चाहें ले लें, परन्तु उस व्यापारको छोड़ दें। मै बहुत ही खुशीसे इन बहनोंकी सार-सँभाल करता। यदि मेरे पास रुपया होता तो मैं उसका सबसे पहला उपयोग यही करता कि उसे अपने पारसी भाई-बहनोंको देता और उनसे शराबका व्यापार बन्द कर देनेकी प्रार्थना करता। मेरे कुछ पारसी मित्रोंने मुझसे कहा है कि हम तो केवल एक गिलास शराब पीते हैं और उसे छोड़ नहीं सकते; हमारे धर्ममें मद्यपानका निषेध नहीं है। इसके विपरीत दूसरे कुछ लोगोंने बताया है कि पारसी धर्ममें मद्यपान निषिद्ध है। लेकिन आपके धर्ममें मद्यपानकी अनुमति हो या न हो, मेरा हृदय अपनी इन पारसी बहनोंके प्रति क्षोभसे भरा हुआ है। यदि शराब रूपी जहरका बेचना ज्यादा दिनतक जारी रहा तो वह आपके जैसी छोटी बिरादरीको बरबाद करनेके लिए बहुत काफी है।

आप पारसी मित्रोंने श्रीकृष्णका नाम सुना होगा और यादवोंके सम्बन्धमें, जिनकी संख्या लाखों या उससे भी ज्यादा थी, उनकी भविष्यवाणी भी सुनी होगी। श्रीकृष्णने उनसे कहा था कि यदि वे मद्यपान करेंगे और व्यभिचार करेंगे तो उनका समस्त वंश इस पृथ्वीतलसे सदाके लिए मिट जायेगा। और उन शक्तिशाली यादवोंका अब क्या चिह्न बचा है? क्या व्यभिचार मद्यपानका निकटतम साथी नहीं है? मुझे अपने दक्षिण आफ्रिकाके अनुभवसे मालूम है कि ये शराबके विक्रेता और खरीददार कैसे लोग होते हैं। जो लोग शराब बेचते हैं उनको शराबखोरोंके स्तरपर उतर आना पड़ता है और अपनी मनोवृत्ति भी उसी स्तरकी बना लेनी पड़ती है। मुझे इन बातोंका बहुत अनुभव है और मैंने वस्तुतः समस्त देशमें जो-कुछ देखा है वही मैं आपको बता रहा हूँ। मेरी यह भी राय है कि जो लोग शराब बेचते हैं वे ईमानदार नहीं हो सकते। मैं यह बात अपने पारसी भाइयोंसे ही नहीं कह रहा हूँ, बल्कि भण्डारियोंसे भी कह रहा हूँ जिन्होंने मुझे लिखा है कि वे बरबाद हो गये हैं और वे धीरे-धीरे २० या २५ सालमें

१. उद्योगपति व दानी।

अपना यह व्यापार बन्द कर देंगे। क्या इस देशके लिए तबतक रुकना सम्भव है? यदि एक चोर या व्यभिचारी यह कहे कि वह अपने व्यसनको कुछ दिनमें छोड़ देगा तो इससे देशका क्या लाभ? यदि पारसी लोग इस व्यापारको तुरन्त नहीं छोड़ देते तो इससे उनकी बिरादरी और उनके देशको नुकसान पहुँचेगा। आपने शराबका व्यापार करके ऊपरसे दीख पड़नेवाली जो समृद्धि प्राप्त की है उसकी बात आपको नहीं सोचनी चाहिए। मैं पारसी मित्रोंसे अनुरोध करता हूँ कि उन्हें चाहे कितना ही खर्च क्यों न उठाना पड़े या कितना ही बड़ा त्याग क्यों न करना पड़े, फिर भी वे पारसी विधवाओंकी देखभाल करें। लोगोंके बहुत बड़े फिरकेको नुकसान पहुँचाकर धनी बननेकी अपेक्षा कोई दूसरा निष्कलंक धन्धा करना ज्यादा अच्छा है।

रही धरनेकी बात। मैंने यह कभी नहीं सोचा कि वह स्थायी रूपसे बन्द किया जा सकता है। मुझे रक्तपातसे बड़ी चिढ़ है, किन्तु मैं शराबखोरीकी बुराई रोकनेकी खातिर हर तरहका खतरा मोल लेनेके लिए तैयार हूँ। जबतक धरना देनेवाले हिंसापर नहीं उतर आते तबतक सरकार क्या करती है, उसके प्रति मै उदासीन हूँ। धारवाड़में क्या हुआ है वह मै जानता हूँ। मुझे यकीन है कि धारवाड़के लोगोंने वह भूल नहीं की थी जो मालेगाँवके निवासियोंने की थी। धारवाड़के कलेक्टर श्री पेटर अहमदाबाद भेजे जानेवाले हैं; इस खबरको सुनकर मुझे भारी धक्का लगा है। उन-पर ठीक ही यह आरोप लगाया जा रहा है कि निर्दोष लोगोंकी हत्या उनकी मौन सम्मतिसे की गई। यदि श्री पेटर अहमदाबाद जायेंगे तो वहाँ भी वे चैनसे न बैठ पायेंगे। अहमदाबादमें उनको धरना बन्द करवाने के लिए निर्दोष लड़कों और लड़कियोंकी हत्या करवानी पड़ेगी। श्री पेटर-जैसे अधिकारीको गुजरातमें भेजना गुजरातके लोगोंका अपमान करना है।

इसके बाद श्री गांधीने धरनेके सम्बन्धमें अपने डर्बनके अनुभव सुनाये। उन्होंने कहा कि भारी कठिनाइयोंका सामना करने पर भी १४ या १५ सालके लड़कोंने बिना किसी भय या अनुग्रहकी आकांक्षाके अपने कर्त्तव्यका पालन किया। फलतः एक भी आदमीने अपना पंजीयन नहीं कराया। इन युवकोंने किसी तरहकी हिंसाका प्रयोग कभी नहीं किया था।

मैं समस्त देशमें पूरे धरनेके पक्षमें हूँ; लेकिन इस प्रणालीमें इस समय जो दोष विद्यमान हैं मैं उनको जानता हूँ। मुझे मालूम है कि गलत किस्मके लोग धरना-देनेवालों में घुस गये हैं। इसलिए मैंने यह सुझाव दिया है कि केवल बम्बईमें धरना इस महीनेके अन्ततक के लिए स्थगित किया जा सकता है ताकि उसका ज्यादा अच्छा संगठन किया जा सके और वह पूरी बम्बईमें लागू किया जा सके। इसके अलावा पहली अगस्ततक विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करवानेकी व्यवस्थाके लिए सब कार्यकर्त्ताओं-की आवश्यकता है। लेकिन इस सम्बन्धमें अन्तिम निर्णय करना कांग्रेस कमेटीका काम है। मैं कोई निरंकुश व्यक्ति नहीं हूँ जैसा कि 'प्रजामित्र' कहता है। मेरे लिए

३२ करोड़ लोगोंको उनके कर्त्तव्यका आदेश देना सम्भव नहीं है। मैं तो केवल सलाह दे सकता हूँ और रास्ता दिखा सकता हूँ। इस बीच शराबके व्यापारियोंका यह कर्त्तव्य है कि उनको जो-कुछ सोचना-विचारना हो वे सोच-विचार लें और यह देखें कि क्या वे कोई दूसरा धन्धा हाथमें ले सकते हैं और शराबका विक्रय बन्द कर सकते हैं। धारवाड़की घटनासे उनके द्वारा बेची जानेवाली शराबमें निर्दोष लोगोंका खून मिल गया है। मेरा यह पक्का विश्वास है कि धारवाड़के धरना देनेवालोंने कुछ नहीं किया था; उन्होंने मारपीट नहीं की थी; उनपर जो आरोप लगाये गये हैं वे निराधार हैं और मुझे बखूबी मालूम है कि पुलिसने शराबके ठेकेदारोंको तरह दी थी, इसलिए मैं शराबके व्यापारियोंकी भी इतनी ही जिम्मेदारी समझता हूँ जितनी इन अधिकारियोंकी।

पारसी समाजमें सज्जनता है, ज्ञान और साहस है, इस कारण मैं उससे बड़े-बड़े कामोंकी अपेक्षा रखता हूँ। धारवाड़में एक उद्धत कलेक्टरने क्या-क्या किया है, सो हम जानते हैं। मुझे विश्वास है कि मेरे सामने जो उद्देश्य है वह धरनेसे अवश्य पूरा होगा; किन्तु यदि सम्भव हो तो मैं यह चाहता हूँ कि वह उसके बिना ही प्राप्त किया जा सके। मुझसे ठेकेदार लोग कहेंगे कि वे अपने लाइसेंसोंका रुपया सरकारको दे चुके हैं। आपने सरकारको जो-कुछ दिया है वह आप उससे आसानीके साथ वापस ले सकते हैं। आपने जो रुपया दिया है यदि उसे आप सब वापस लेनेका इरादा कर लें तो मुझे निश्चय है कि आप उसे वापस ले सकते हैं। आप सरकारको दर्ख्वास्त दे सकते हैं कि आपका रुपया आपको लौटा दिया जाये, क्योंकि आप असहयोगी नहीं हैं; और यदि आपको इसमें सफलता न मिले तो आप अन्य उपायोंका आश्रय ले सकते हैं। यदि भारतको सितम्बर या दिसम्बरतक भी स्वराज्य न मिले तो आप यह समझ लें कि आपने सरकारको जो रुपया दिया है वह भावी सरकारके पास आपके नाम जमा रहेगा। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आपका रुपया कदापि नहीं मारा जायेगा।

लेकिन आखिर क्या आप लोग इतने गरीब हैं कि आप इस रुपयेका मारा जाना बरदाश्त नहीं कर सकते? मुझे अभी पिछले दिनों एक पारसी शराब-विक्रेताका पत्र मिला है उसमें कहा गया है कि आप लोगोंको जितना गरीब बतानेका प्रयत्न किया जाता है आप उतने गरीब नहीं हैं। पारसी विधवाएँ भी गरीब नहीं हैं; उनके पास बहुत रुपया है और मेरा भी यही विश्वास है। मैं अपनी निजी जानकारीके बलपर कहता हूँ कि आप गरीब नहीं है और यदि आप शराब बेचना बन्द कर देते हैं तो आप असहाय नहीं हो जायेंगे। मैं आपसे कहता हूँ कि आप डरपोक न बनें और परिणामोंसे भयभीत न हों; बल्कि साहसी स्त्री-पुरुषोंकी तरह तनकर खड़े हों। मैं चाहता हूँ कि पारसी लोग समानताके दर्जेकी माँग करनेमें राष्ट्रके साथ रहें। किसी तरहकी हीनताका दर्जा अब उन्हें बरदाश्त नहीं करना चाहिए। मुझसे कुछ लोगोंने

कहा कि जो लोग २० सालसे ज्यादा अरसेसे इस व्यापारमें लगे हुए हैं अब उनके लिए इस व्यवसायको छोड़ना कैसे सम्भव होगा? मेरी समझमें शान्त चित्तसे उन्हें परिस्थिति-पर विचार करना चाहिए और इसके बारेमें कोई निश्चित निर्णय कर लेना चाहिए। मैंने इस समस्यापर विचार किया है और मैं यह अनुभव करता हूँ कि चूँकि आप लोग गरीब नहीं हैं, इसलिए आप कोई दूसरा धन्धा, जिसे आप पसन्द करें, आसानीसे आरम्भ कर सकते हैं। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप अपनी एक समिति बना लें और तब यह विचार करें कि आपको इस मामलेमें क्या करना चाहिए। किन्तु आपको आशा तो कदापि नहीं छोड़नी चाहिए। आप दूसरे धन्धे और दूसरे काम कर सकते हैं और यह प्रयत्न करके देख सकते हैं कि क्या आप उनके द्वारा भी शराबके व्यापारकी तरह आसानीसे धनवान नहीं हो सकते। लेकिन सबसे पहले तो आपका कर्त्तव्य यही है कि आप शराबका व्यापार इसी दम छोड़ दें। जबतक आप अपने देशके निमित्त कुछ त्याग करनेके लिए तैयार नहीं होंगे तबतक आप स्वतन्त्रताकी रक्षा नहीं कर सकेंगे और न स्वराज्य ही ले सकेंगे। केवल त्यागके द्वारा ही हम स्वराज्य और पूर्ण स्वतन्त्रताके योग्य हो सकते हैं। आपको अपनी ही योग्यतापर निर्भर रहना चाहिए और अपने ऊपर भरोसा रखना चाहिए। अंग्रेज जातिने भी आत्मविश्वासके कारण ही सबसे अधिक उन्नति की है। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप आशा न छोड़ें और अपने ऊपर भरोसा रखें, आपसे जितने त्यागकी अपेक्षा की जाती है उसके लिए परमात्मा आपको बुद्धि देगा।

श्री गांधीने इसके बाद कहा कि यदि व्यापारी मुझसे कोई प्रश्न पूछेंगे तो मैं उनका उत्तर देनेको तैयार हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १३-७-१९२१

१७५. टिप्पणियाँ

सीमा-प्रान्तके मित्र

मैंने सीमा-प्रान्तके मित्रोंसे जो अपील की है उसके बारेमें बन्नूके मुहम्मद नवाज़खाँ साहब, बी० ए०, एलएल० बी० ने मुझे एक लम्बा पत्र भेजा है। 'यंग इंडिया' में उसे उद्धृत करना सम्भव नहीं है; इसलिए मैं उसका सारांश यहाँ दे रहा हूँ। उनका विचार है कि जो कबायली सन्देशको समझ जायेंगे वे प्रसन्नतापूर्वक इसे स्वीकार करेंगे। उन्होंने कबायलियोंकी भूमि हथियाये जानेका इतिहास बतलाते हुए यह सिद्ध किया है कि इस भूमिके हथियाये जानेसे पहले हमले बिलकुल नहीं होते थे। और चूँकि सभीके पास हथियार होते थे, इसलिए जिनपर हमला होता था वे अपनी रक्षा कर सकते थे। किन्तु इस इलाकेके हड़प कर लिये जानेके बाद जिन कबायलियोंकी भूमि उनसे जबरदस्ती छीन ली गई थी वे हथियाये गये इलाकेके हिन्दू और मुसलमान

दोनोंको अपना दुश्मन समझने लगे। खासकर इसलिए कि इन लोगोने कबायलियोंको दबानेमें अंग्रेजोंकी मदद की थी। पत्र-लेखकका, जो स्थितिको बहुत नजदीकसे जानने-का दावा करते हैं, विचार है कि कबायली लोग धर्मोकी परवाह नही करते और वे हिन्दुओ और मुसलमानों दोनोंको बिना कोई फर्क किये लूटते रहे हैं। वे यह भी कहते है कि मुसलमानोंने कबायली हमलोके खिलाफ हिन्दुओंकी कभी सहायता नहीं की। कबायलियोंकी तटस्थताके सबूतमें पत्र-लेखकने उस सौहार्दपूर्ण व्यवहारका हवाला दिया है जो कबायली सीमा-प्रान्तके स्वतन्त्र इलाकेमें रहनेवाले अपने साथी हिन्दुओंके साथ करते हैं। उनका कहना है कि वहाँ हिन्दुओंको ब्रिटिश राज्यसे अधिक धार्मिक स्वतन्त्रता है। ब्रिटिश राज्यकी तुलनामें वहाँ हिन्दुओंकी सामाजिक प्रतिष्ठा कहीं अच्छी है। वहाँके मलिक[1] अपनी समस्त शक्तिके साथ अपनी छत्रछायामे रहनेवाले हिन्दू भाइयोकी रक्षा-के लिए तैयार रहते हैं। पत्र-लेखकके मतमे ब्रिटिश सरकारने लज्जाजनक रूपसे वहाँ-के उन निवासियोंकी सुरक्षाके अपने कर्त्तव्यको तिलांजलि दे दी है, जो दुर्भाग्यवश ब्रिटिश साम्राज्यके सरक्षणमे आ गये हैं। अपने पत्रको समाप्त करते हुए वे कहते है कि सीमान्तमे लागू विधियाँ पढ़ने लायक हैं। वहाँ न्याय-प्रक्रियामे मनमानी चलती है और जनताका जीवन और धन उन सैनिक अफसरोंकी दयापर निर्भर है जिनमे कानूनी फैसले देनेकी योग्यता नहीं है। उनका कहना है कि एक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर अपन पदका दुरुपयोग करते हैं एव अन्याय और दमनके साधन बन जाते है। उन्हें किसी भी भले आदमीको जरा-से भी शकपर हवालातमें बन्द कर देनेका अधिकार है।

भारतीय लोकतन्त्र

एक आदरणीय महानुभाव लिखते है :

> **मौलाना मुहम्मद अली और शौकत अलीने जो वक्तव्य दिये है उनकी ओर आपका ध्यान गया होगा। उन्होंने कहा है कि हमारे आन्दोलनके सम्बन्धमें बड़े दिनसे पहले कोई समझौता नहीं हो जाता तो कांग्रेसके अहमदाबाद अधि-वेशनमें एक भारतीय लोकतन्त्रकी घोषणा कर दी जायेगी। इस वक्तव्यका विशेष महत्त्व है, क्योंकि यह किसी गैर जिम्मेदार व्यक्तिने नहीं बल्कि मौलाना बन्धुओं-जैसे जिम्मेदार लोगोंने दिया है। किन्तु लगता है कि यह वक्तव्य अनुचित और असामयिक भी है; कांग्रेसने देशके सामने जो कार्यक्रम रखा है यह उसकी पूर्तिमे बाधक होगा। समूचे देशने कांग्रेसकी अपीलका शानदार समर्थन किया है और कुछ हिस्सोंको छोड़कर सारा देश स्वराज्य-प्राप्तिके लिए काम करनेको तैयार है। मेरा निवेदन है कि आप मौलाना बन्धुओंके वक्तव्यपर अपनी सम्मति दें और जनताको आश्वासन दें कि कांग्रेसने जो अहिंसात्मक असहयोगका सिद्धान्त स्वीकार किया है उससे वह नहीं भटकेगी।**

मुझे दुःखके साथ स्वीकार करना पड़ता है कि मैंने मौलाना बन्धुओंका उक्त वक्तव्य नहीं देखा। किन्तु यह आश्वासन देनेमें मुझे कोई हिचक नहीं है कि देशने

१. कबीलेके मुखिया।

बहुत सोच-समझकर अहिंसात्मक असहयोगका मार्ग चुना है; मैं उससे उसे तनिक भी न हटने देनेमें कोई प्रयत्न उठा नहीं रखूँगा। अली बन्धुओंके भी इस मार्गसे हटनेकी मुझे कोई आशंका नहीं है। किन्तु मुझे उनके मनको समझनेमें कठिनाई नहीं है। वे यह जरूर कह सकते हैं कि यदि भारतको पंजाब और खिलाफतके मामलोंमें वह राहत नहीं मिलती जिसकी माँग की गई है, तो कांग्रेस अपने अगले अधिवेशनमें स्वतन्त्रताकी घोषणा कर देगी। साम्राज्यके अन्दर स्वराज्य तभी सम्भव है जब इंग्लैंड खिलाफत सम्बन्धी विश्वासघात और जलियाँवाला बागके हत्याकाण्डसे उसपर जो धब्बा लगा है उसे धो दे। कांग्रेसका सिद्धान्त जान-बूझकर ऐसा लचीला बनाया गया है कि स्व-राज्यकी माँगके लिए उसमें जगह रहे। बहुत न कहकर इतना तो कह ही सकते हैं हैं कि मौलानाओंने अधिकसे-अधिक वही मत दुहरा दिया है जो श्री एन्ड्रचूज द्वारा प्रकट किया गया था। मेरी रायसे भिन्न, श्री एन्ड्रचूजकी यह धारणा है कि स्वशासित और आत्मसम्मानी भारतके लिए ब्रिटिश साम्राज्यमें बने रहनेकी गुंजाइश नहीं। वे यह आशा भी करते हैं कि एक-न-एक दिन मैं भी इसी नतीजेपर पहुँचूँगा। किन्तु मेरा मानसिक गठन दूसरी तरहका है। जबतक थोड़ी भी गुंजाइश हो, मैं आशा नहीं छोड़ता। ब्रिटिश जनतापर मेरा इतना विश्वास अवश्य है कि वे भले ही अन्ततक हमारे निश्चय और शक्तिकी परीक्षा ले लें किन्तु ऐसी स्थिति उत्पन्न नहीं होने देंगे कि बात इतनी बिगड़ जाये कि फिर सुधर न सके। उनमें इतना विवेक तो है ही कि वे डायर-शाही और ओ'डायरशाहीके लिए और यूनानसे मैत्रीके अस्पष्ट लाभके लिए जाग्रत और सशक्त भारतको हाथसे नहीं जाने देंगे। हम देखेंगे कि लीक-लीक न चलनेवाली उनकी आत्मामें बहादुर तुर्कोंकी न्यायसंगत आकांक्षाओंके प्रति अज्ञानवश द्वेषभाव है। भारतके दिनों-दिन बढ़ते दबावके आगे वह अवश्य झुकेगी। कांग्रेस अधिवेशनसे बहुत पहले ही, यदि भारत अपनी सचाईपर टिका रहता है, तो मैं स्वतन्त्रताकी घोषणाकी नहीं बल्कि एक सम्मानपूर्ण समझौतेकी आशा रखता हूँ — ऐसे समझौतेकी जो पंजाब और खिलाफत सम्बन्धी भारतकी माँगोंको पूरा करेगा और जो तुरन्त भारतको उसके चुने हुए प्रतिनिधियोंकी इच्छाके अनुरूप स्वराज्य देनेके लिए आश्वासन देगा। किन्तु पाठक इससे यह न समझ बैठें कि मेरी यह भविष्यवाणी उस कार्रवाईकी जानकारी-पर आधारित है, जो शिमलामें वाइसरायकी कोठी या इंग्लैंडके सरकारी हल्कोंमें हो रही है। इस भविष्यवाणीका आधार मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि भारतमें अगले तीन महीनोंमें अपनी शक्ति दिखानेकी योग्यता है; यानी यह योग्यता है कि वह विदेशी कपड़ेका पूर्ण बहिष्कार कर दे और दिखा दे कि इससे भी बड़े आत्मसंयमके साथ वह एक कठोर प्रकारकी सविनय अवज्ञाका कार्यक्रम अपना सकता है।

मार्गकी कठिनाइयाँ

किन्तु हमारे मार्गमें जो कठिनाइयाँ हैं उनके प्रति मैं आँखें नहीं मूँदे हूँ। अलीगढ़से प्राप्त समाचार चिन्ताजनक[1] है, घटनाका सरकारी विवरण और दूसरा विवरण मैंने 'इंडिपेन्डेन्ट' में देखा है। यदि मैं गलतीपर हुआ तो मैं अलीगढ़की जनतासे क्षमा-

१. देखिए "सन्देश : अलीगढ़की जनताको", १६-७-१९२१।

याचना कर लूँगा; किन्तु 'इंडिपेन्डेन्ट' के संवाददाताका विवरण तथ्योंसे मेल नहीं खाता और तथ्योंसे जितना निष्कर्ष निकल सकता है उससे कहीं अधिक निष्कर्ष निकालनेकी कोशिश करता है। वह इस बातसे इनकार नहीं करता कि भीड़ने आगजनी की; और फिर भी भीड़को दोषी न माननेका प्रयत्न करता है। यह विश्वास करनेके लिए कि अलीगढ़में अधिकारियोंने क्षोभका कोई कारण उत्पन्न हुए बिना ही द्वेषपूर्ण ढंगसे ज्यादती की है, मुझे बहुत स्पष्ट प्रमाणकी जरूरत होगी। मुझे यह सम्भव लगता है कि पुलिस भीड़ द्वारा एक आक्रामक प्रदर्शनको रोकना चाहती थी और ऐसा करते हुए वह आत्म-संयम खो बैठी और उसने गोली चला दी। मेरा कहना यह है कि हमारी ओरसे कोई आक्रामक कार्रवाई होनी ही नहीं चाहिए। असहयोगियोंको किसीको सताना या धमकाना नहीं चाहिए। हमारे अन्दर एक अदम्य उत्साह बढ़ रहा है जो केवल भगवान्पर भरोसा रखने — यानी अपने लक्ष्यकी न्यायपूर्णतापर विश्वास — का परिणाम है। यदि हम चाहते हैं कि अपने कार्यक्रमको सफल बनायें — और वह भी इसी सालके अन्दर — तो हमारे लिए धमकी देने या शक्तिप्रदर्शन करनेका अवसर ही नहीं है। हमें अपने संकल्पके प्रति पूरी दृढताके साथ सच्चे रहना चाहिए। हम आशातीत रूपसे तभी सफल हो सकते हैं जब हम विचार, वाणी और कर्ममें अहिंसा बरतें। अहिंसा चाहे हमारा सर्वोपरि जीवन-सिद्धान्त न हो, किन्तु अपने लक्ष्यतक पहुँचनेके लिए हमारा मौजूदा सिद्धान्त तो होना ही चाहिए। इसमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि हमने जिस तरह अपने प्रतिद्वन्द्वियोंके प्रति बुरा बरताव न करना तय किया है उसी प्रकार हम उनके प्रति बुरा न सोचें, बुरा न कहें। अहिंसा और सत्यकी प्रतिज्ञाका उपयोग हमें हिंसा और असत्य — अतिशयोक्तिको छिपानेके लिए भी नहीं करना चाहिए; न हमें अपने अच्छेसे-अच्छे साथियोंके जेल चले जानेसे डरना चाहिए। मैं इस विश्वासपर कायम हूँ — जो मैंने अक्सर प्रकट किया है — कि पण्डित सुन्दरलाल और पण्डित माखनलाल[1] अपनी आत्माकी शान्तिके लिए जेल जाकर वहाँ राष्ट्रकी उससे अच्छी सेवा कर रहे हैं जितनी वे स्वतन्त्र रहनेपर करते। जो ऐसा नहीं सोचते वे असहयोगकी गतिशीलताको नहीं समझते। इस महान् आन्दोलनकी प्रेरक शक्ति मौखिक प्रचार नहीं, बल्कि वह मौन प्रचार है जो इस पागल सरकारके शिकार बननेवाले निर्दोष लोगोंको यातना देता है।

एक पीड़ितका पत्र

अपनी गिरफ्तारीसे कुछ ही दिन पूर्व पण्डित सुन्दरलालने मुझे एक लम्बा पत्र लिखा था। मैं उसके सम्बन्धित भागका भावानुवाद दे रहा हूँ। पूरा पत्र मुझे स्वाभाविक और साफ लगा। यह कहना आवश्यक नहीं कि वह केवल मेरी सूचनाके लिए लिखा गया था।

> **स्वराज्य-प्राप्तिके लिए अहिंसापर मेरा विश्वास दृढ़ हो गया है, मेरी बुद्धिने यह सिद्धान्त पक्की तरहसे ग्रहण कर लिया है। मैं अब उसे केवल**

१. माखनलाल चतुर्वेदी, हिन्दीके जाने-माने कवि और देशभक्त; **कर्मवीर**के सम्पादक।

निर्बलका अस्त्र ही नहीं, अपितु बलवानका अस्त्र भी मानने लगा हूँ। किन्तु मैं यह स्वीकार करना चाहता हूँ कि कई वर्षोंतक मेरा विश्वास इसके विरोधी और गलत सिद्धान्त, हिंसापर रहा है, इसलिए मैं बड़ी लगनके साथ इस नये सिद्धान्तके अनुसार अपने जीवनको ढाल रहा हूँ। यदि मैं अपने जेल भेजे जानेके बारेमें, जो सम्भावित लगता है, चिन्तित हूँ तो यह चिन्ता उस कामको लेकर ही है जो मैंने मध्य-भारतमें शुरू किया है। यदि लापरवाहीसे मेरे मुँहसे निकली किसी बातसे इस काममें बाधा पड़ेगी, तो मुझे दुःख होगा। किन्तु जो प्रसन्नता और सन्तोष मुझे इस समय है वह इस विचारसे है कि शायद ब्रिटिश जेलके कठोर अनुशासनसे मेरा जीवन अधिक अच्छी तरह गठित हो सकेगा। जेलमें प्राण दे देना मुझे उतना ही प्रिय है जितना (नये ढंगसे) ठोक-पीटकर मानवताकी सेवाके लिए ठीक तरह गढ़ा जाना। इसलिए मैं आगामी गिरफ्तारीके लिए पूरी तरह तैयार हूँ।

मुझे विश्वास है कि सैकड़ों असहयोगी जो जेलकी सजा भोग रहे हैं इसी भावनासे प्रेरित हैं जो पण्डित सुन्दरलालने दिखाई है। अलीगढ़के लोगोंको प्रसन्नतासे अपने साथीको पकड़े जाने देना चाहिए था और उसका स्थान लेकर उसका काम करना चाहिए था। हमें सिर्फ इतना ही करना है कि हम अपने साथियोंके जेल जानेसे खाली होनेवाली जगहोंको भरते चले जायें। हमारा कार्यक्रम बिलकुल स्पष्ट है। उसे पूरा करनेका अर्थ वह-सब प्राप्त कर लेना है जिसकी हमें कामना है।

'जमींदार' के विरुद्ध धमकी

मुझे मालूम हुआ है कि लाहौरसे निकलनेवाली पत्रिका 'जमींदार' पर, जिसका सम्पादन अपनी गिरफ्तारीतक श्री जफर अली खाँ करते थे और अब उनके सुपुत्र कर रहे हैं, मुकदमा चलाये जानेकी धमकी दी गई है। सम्पादकसे कहा गया है कि यदि वे इस मुकदमेसे बचना चाहते हैं तो, अपने मनके खिलाफ, क्षमा-याचना करें। उनसे कहा गया है कि दिये गये वे वक्तव्य, जिनको वे सही मानते हैं, वापस ले लिये जायें। इनमें से एक वक्तव्य नाजिफपर तथाकथित बमबारी है। यह सूचना उन्होंने दूसरे समाचारपत्रोंसे ली है। हजारों मुसलमानोंको विश्वास है कि यह सच बात है। उन्होंने सरकारको आश्वासन दिया है कि यदि स्वतन्त्र जिम्मेदार मुसलमान उस जगह जाकर जाँच करें और यदि वे कह दें कि यह बमबारी नहीं हुई तो वे अपना वक्तव्य वापस ले लेंगे। यह प्रस्ताव काफी सम्मानजनक है। उन्होंने एक जोशीली कविता प्रकाशित की है जिसकी कुछ पंक्तियोंका ऐसा अर्थ निकाला जा सकता है कि उनसे हिंसाको प्रोत्साहन मिलता है। उन्होंने एक असहयोगीके नाते इन पंक्तियोंके लिए क्षमा-याचना करना स्वीकार किया है, वह इसलिए नहीं कि वे मुकदमेसे डरते हैं बल्कि इसलिए कि अहिंसाके अपने सिद्धान्तके सम्बन्धमें वे अपनेको एक गलत स्थितिमें नहीं पड़ने देना चाहते। तीसरा वक्तव्य जिसपर सरकारको ऐतराज है बंगालमें एक मुकदमेकी रिपोर्ट और उसपर टिप्पणीसे सम्बन्धित है, जिसमें एक

यूरोपीय द्वारा एक खानसामाके मारे जाने और अदालत द्वारा उसपर ३००) रु० जुर्माना किये जानेका जिक्र था। टिप्पणी, जिसपर ऐतराज किया गया है, सचमुच कड़ी है। उसमें कहा गया है कि ब्रिटिश अदालतें यूरोपीयोंको ३००) रु० जुर्माना-भर कर भारतीयोंकी हत्या करनेकी छूट देती हैं। किन्तु उसमें हिंसाको कोई उकसावा नहीं है, और अखबारोंमें छपनेवाली उन कई घटनाओंसे जिनमें न्यायपर कुठाराघात हुआ है, वह उचित ठहरती है। सरकारको कोई भान नहीं है कि यूरोपीयों और भारतीयोंके बीच समान रूपसे न्याय एक असम्भव-सी बात माननेकी भावना भारतीयोंके दिलमें कितनी गहरी बैठ गई है। 'जमींदार' के विरुद्ध चौथा इलजाम मौलाना मुहम्मद अलीके उस वक्तव्यको छापनेका है जिसमें अफगानिस्तानके हौएका जिक्र है। सम्पादको और सार्वजनिक नेताओंसे क्षमा-याचना के लिए कहनेका यह विचार अली भाइयोंकी क्षमा-याचनाका मजाक बनाना है, क्योंकि संयुक्त प्रान्तकी सरकार भी 'इंडिपेन्डेन्ट' पत्र और दूसरे लोगोंसे इसी प्रकार क्षमा-याचनाकी माँग कर रही है। मुझे मालूम नहीं कि सरकार द्वारा आत्मसम्मानी असहयोगियोंसे क्षमा-याचनाकी माँगका इलाहाबादमें क्या परिणाम हुआ। ज्यादा ईमानदार और सम्मानजनक तरीका यह होता कि सरकार जिन असहयोगियोंको पसन्द नही करती, उन्हें जेल भेज देती। पंजाबमें सरकारने हमारी बेइज्जती करनेका जो ढंग अपनाया था, उससे हटकर अब क्षमा-याचनाकी माँग करनेका यह घुमावदार तरीका उसे नहीं अपनाना चाहिए।

सहयोग और असहयोगकी परिभाषा

देशके लिए यह कोई छोटी बात नहीं कि श्री द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर जिन्हें उनके मित्र प्यारसे 'बड़ो दादा' कहते हैं, अपनी वृद्धावस्था और शान्तिनिकेतनके अपने एकान्तमें भी, देशमें जो-कुछ हो रहा है उसपर बारीकीसे निगाह रखते है। श्री एन्ड्रयूजने असहयोगपर प्रकट किये उनके हालके विचारोंका स्वतन्त्र अनुवाद जगह-जगह भेजा है। यद्यपि यह अनुवाद पूराका-पूरा अखबारोंमें छपा है, मैं श्री ठाकुर द्वारा की गई सहयोग और असहयोगकी परिभाषाओंको, जो इतनी ही सच्ची और प्रभावपूर्ण हैं, प्रकाशित करनेका लोभ संवरण नहीं कर सकता। सहयोगके बारेमें लिखते हुए वे कहते हैं:

> **हमारे शासकोंने अपने निरंकुश कृत्योंको दुनियासे छिपानेके लिए विधान-मण्डलोंके रूपमें एक कठपुतलीका तमाशा खड़ा किया है जिनमें सहयोग देनेके लिए कुछ पेशेवर भाषण-शूरोंको आमन्त्रित किया गया है। हमारे शासकोंका विचार है कि ऐसा करके उन्होंने हमें हमेशाके लिए अपने अहसानसे दबा दिया है। दरअसल उन्होंने जलेपर नमक छिड़का है। ये विधान-मण्डल हमारे गले पड़ गये हैं और डर यह है कि सिन्दबाद नाविककी कहानीमें वर्णित बूढ़ेकी भाँति वे हमारा दम घोट देंगे। बड़ो दादा आगे कहते हैं: यदि हमारे अंग्रेज शासकोंके अनुसार सहयोगका यही अर्थ है, तो यह समझ पाना बहुत कठिन नहीं कि असहयोगका हमारे लिए क्या अर्थ है। हम कोई भी ऐसी चीज, जो**

देशके लिए घातक हो, कभी स्वीकार नहीं करेंगे, चाहे उसे अस्वीकार करनेमें हमारी जान ही क्यों न चली जाये। यही असहयोग है।

अनुकरणीय

श्री विट्ठलभाई पटेलको नगरपालिका या विधान-मण्डलोसे जूझनेमे जो सुख मिलता है वह और किसी काममें नही मिलता। ६ तारीखको थानाके जिला बोर्डमें निम्नलिखित प्रस्ताव रखते हुए वे पूरे जोशमे थे:

(१) यह बोर्ड इस बातपर दुःख प्रकट करता है कि शराबकी बिक्री बढ़ रही है और उसके फलस्वरूप जनताके चरित्र, स्वास्थ्य और सम्पत्तिका नाश हो रहा है।

(२) यह बोर्ड इस अभिशापको दूर करनेके लिए आरम्भ किये गये आन्दोलनका स्वागत करता है और इस आन्दोलनके संगठनकर्त्ताओंने जनसेवाकी जो भावना दिखाई है उसके लिए बधाई देता है।

(३) यह बोर्ड इस बातपर दुःख प्रकट करता है कि उसके पास इस तरहका कोई अधिकार नहीं है, जिसके बलपर वह शराबकी बिक्री रोक सके। इसलिए बोर्डकी सम्मति है कि जो अधिकार उसे प्राप्त है, अपने दायित्वपर वह उनका उपयोग धरना और कांग्रेस कमेटियोंको सहायता देनेमें करे, ताकि वह उन शराब बेचनेवालों को, जो स्वेच्छासे अपनी दूकाने बन्द कर दें, मुआवजा दे सके।

(४) ऊपर लिखे उद्देश्यको पूरा करनेके लिए यह बोर्ड एक समिति नियुक्त करता है जिसके प्रधान और उपप्रधान — प्रस्तावक — तथा श्री आचार्य सदस्य होंगे। यह समिति धरना देनेके कामको नियोजित करेगी और पूरी तरह मद्य-निषेधको सफल बनायेगी।

(५) बोर्ड इस समितिको अधिकार देता है कि शुरूमें वह ३,०००) रु० तक खर्च कर सकती है; और आगे चलकर इससे भी अधिक धन खर्च कर सकेगी।

यह स्पष्ट ही एक साहसपूर्ण कदम है। यदि बोर्ड अन्ततक अपने प्रस्तावको कार्यान्वित करनेके लिए कटिबद्ध रहता है और अपने शासन-क्षेत्रमें पूरी तरह शराबकी दूकानें बन्द करनेमें सफल होता है, तो वह अपनेको गौरवान्वित करेगा और देशकी महत्त्वपूर्ण सेवा करेगा। आशा है कि सारे भारतमें स्थानीय बोर्ड और नगरपालिकाओंके सदस्य श्री पटेलका अनुकरण करेंगे। यदि सारे भारतमें स्थानीय बोर्ड और नगर-पालिकाएँ इस सम्बन्धमें एक साथ कदम उठायें तो यह समाज-सुधारकोंको बल देगा और सरकारको मजबूत करेगा तथा इस तरह हिंसाका वह खतरा भी दूर होगा जो धरना देनेवालों, पुलिस और जनताके झगड़ोंसे पैदा हो सकता है।

शस्त्र अधिनियम

स्वामी श्रद्धानन्द एक घटना प्रकाशमें लाये हैं कि बिजनौर जिलेके एक मजिस्ट्रेट-ने गुरुकुल कांगड़ीके सहायक प्रबन्धककी बन्दूकके लाइसेंसका नवीकरण करनेसे इनकार कर दिया। यह सुधारोंकी निरर्थकताका खुला प्रदर्शन है। यदि स्वामी श्रद्धानन्दका यह अनुमान ठीक है कि लाइसेंसका नवीकरण न किये जानेका कारण असहयोग आन्दोलनसे उनका सम्बन्ध है तो इससे यह जाहिर होता है कि जनताके दैनिक जीवनसे सम्बन्ध रखनेवाली बातोंके प्रति सरकारका रवैया और शासनका तरीका बिलकुल नहीं बदला है; जो-कुछ थोड़ा परिवर्तन हुआ है वह असहयोगके प्रभावके कारण। लेकिन स्वामी श्रद्धानन्द-जैसे जाने-माने नागरिकके प्रति बिजनौरके जिला मजिस्ट्रेटके ऐसे हृदयहीन व्यवहारके लिए जनता तैयार नहीं थी। मैंने इस व्यवहारको हृदयहीन कहा है, क्योंकि जिस बन्दूकके लिए लाइसेंस लेना था उसकी जरूरत शिकारके लिए नहीं बल्कि एक घने जंगलमें जंगली जानवरोंसे बचावके लिए थी।

बहाना

मैं पण्डित माखनलाल चतुर्वेदीपर चलाये गये मुकदमे और उनको दिये दण्डका पहले ही जिक्र कर चुका हूँ। मुझे अदालतमें दिये उनके बयानकी एक प्रति अभी मिली है। उन्होंने गवाह पेश करने या दूसरी तरहसे अपना बयान देनेसे इनकार कर दिया। केवल अदालतके सामने एक वक्तव्य दिया जिसमें उन्होंने अहिंसाके सिद्धान्तपर अपना विश्वास दुहराया। इसलिए मेरी तरह पाठकोंको भी यह जानकर अचम्भा होगा कि यदि पण्डित माखनलालके वक्तव्यको सच माना जाये तो उनपर मुकदमा उस कसूरके लिए नहीं चलाया गया जिसके लिए सरकार उन्हें दोषी समझती थी; बल्कि एक निर्दोष भाषणके लिए चलाया गया। मेरा मतलब वक्तव्यके निम्नलिखित भागसे स्पष्ट हो जायेगा कि जब पण्डित माखनलालपर मुकदमा चलानेका निश्चय किया गया, उस समयतक उन्होंने कोई भाषण नहीं दिया था।

> मैं जबलपुरसे निकलनेवाले 'कर्मवीर' का सम्पादक रहा हूँ। पत्रकारिताका अपना कर्त्तव्य निभाते हुए मुझे जनताकी कई कठिनाइयोंको प्रकाशमें लाने और प्रान्तमें प्रशासन सम्बन्धी कार्योंकी आलोचना करनेके अवसर आते रहे हैं। नरसिंहपुर जिलेका प्रशासन बहुत बदनाम हो गया था और यह जरूरी हो गया था कि डिप्टी कमिश्नर श्री जे० सी० बोर्नके प्रशासनसे सम्बन्धित गोलमालका मेरे पत्र द्वारा निर्भयतापूर्वक भण्डाफोड़ किया जाये। वहाँके स्थानीय अधिकारी लगातार जनतापर अत्याचार करते थे। इसके बारेमें विधान-मण्डलमें कहा गया था, "पुलिसकी एक टुकड़ीने एक गाँवपर धावा बोला, लोगोंको यातनाएँ दीं, उनके मुँहपर थूका, ठोकरें मारीं, उन्हें गिरफ्तार करके उनके साथ दुर्व्यवहार किया, कई दिनतक उनको भूखा रखा और अन्तमें स्त्रियोंकी इज्जत खराब की।" सरकारकी कारगुजारियोंका इस तरह पर्दाफाश होनेके बादसे ही मैं उसका कोपभाजन हो गया। और इससे मुझे जरा भी आश्चर्य नहीं होता कि

मध्यप्रान्तकी सरकार मुझपर एक भाषणके लिए मुकदमा चला रही है जो मैंने १२ मार्च, १९२१ को बिलासपुर सम्मेलनमें दिया था, जबकि सरकारके गृह-सदस्यने ४ मार्चको ही मध्य-प्रान्तकी विधान-परिषद्में खुल्लमखुल्ला यह कहा था कि मुझपर मुकदमा चलाया जाना निश्चित है और सरकारकी स्वीकृतिकी प्रतीक्षा की जा रही है। मैं कह सकता हूँ कि यदि मैंने नरसिंहपुरमें बोर्नके शासनके भ्रष्टाचारका पर्दाफाश न किया होता तो यह मुकदमा हरगिज न चलाया जाता। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैंने १२ मार्चको बिलासपुर जिला सम्मेलनमें भाषण दिया था, किन्तु मैं यह कहना चाहता हूँ कि सरकारके खुफिया विभाग द्वारा भेजी गई उसकी रिपोर्ट न मेरे विचारोंका प्रतिनिधित्व करती है न वह जो-कुछ मैंने कहा उसका एक ईमानदाराना और सच्चा विवरण है। मैं भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अहिंसात्मक असहयोगके सिद्धान्तका एक वफादार समर्थक हूँ और नागपुर अधिवेशनमें जो प्रस्ताव पास हुआ था मैंने ईमानदारीसे उसका अक्षरशः पालन किया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सरकारने यह मुकदमा चलानेका निश्चय ४ मार्च को ही कर लिया था, जब कि मुकदमा एक ऐसे भाषणके लिए चलाया गया जो १२ मार्चको दिया गया था। नरसिंहपुरके प्रशासनके कार्योका उन्होंने जो भंडाफोड़ किया उसके लिए उनपर मुकदमा क्यों नही चलाया गया? मुझे यह मालूम नही कि नरसिंहपुरके प्रशासनपर लगाये आरोपमें कुछ सचाई है या नहीं। किन्तु कहीं-न-कहीं कुछ बड़ी गड़बड़ जरूर है।

भगवान्का अपमान

एक सज्जन लिखते हैं :

मुझे यह सूचना देते हुए दुःख होता है कि ऐसे अनेकों चित्र देखनेको मिलते हैं जिनमें आपको और दूसरे नेताओंको श्रीकृष्ण और पाण्डवोंके रूपमें दिखाया जाता है। क्या आप इसे रोकनेके लिए अपने प्रभावका उपयोग नहीं करेंगे, क्योंकि इससे मेरी तरहके बहुतसे लोगोंकी धार्मिक भावनाको चोट पहुँचती है जो श्रीकृष्णको केवल एक महापुरुष नहीं अपितु भगवान्का अवतार मानते हैं ?

पत्र-लेखकसे मेरी पूरी सहानुभूति है। मैंने ये चित्र नहीं देखे किन्तु मुझे श्रीकृष्णके रूपमें दिखाना मुझे भगवान्का अपमान लगता है। मैं अपनेको उन अनेक कार्यकर्त्ताओंमें से एक तुच्छ कार्यकर्त्ता मानता हूँ जो एक महान् उद्देश्यके लिए काम कर रहे हैं। नेताओंको बढ़ा-चढ़ाकर दिखानेसे इस लक्ष्यको लाभकी अपेक्षा हानि ही होगी। किसी भी लक्ष्यकी सफलताकी सबसे अधिक सम्भावना तभी होती है जब उसकी विवेचना हो और उसके औचित्यके कारण लोग उसके लिए काम करें। एक प्रगतिशील समाजमें कर्मको हमेशा व्यक्तियोंसे अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए,

क्योंकि व्यक्ति कर्मके निमित्त-मात्र हैं। इसलिए मैं पूरा जोर लगाकर कहूँगा कि जोशीले लोग और साहसी व्यापारी उचित-अनुचितका विचार करें, और इस प्रकारके चित्र हटा लें जो उक्त भाई जैसे व्यक्तियोंकी धार्मिक भावनाओंको निस्सन्देह ठेस पहुँचाते हैं।

कराचीके स्कूल

श्री जगतियानीने अपने स्कूलके बारेमें जो महत्त्वपूर्ण सफाई दी है, उसे इससे पहले प्रकाशित न करनेके लिए मुझे उनसे क्षमा माँगनी चाहिए। सच बात यह है कि लगातार यात्रापर रहनेके कारण मुझे अपने सभी पत्रोका उत्तर देनेका समय नही मिला। बम्बईमें मुझे जरा साँस लेनेका मौका मिला है और मै जमा कामको निपटानेका प्रयत्न कर रहा हूँ। उनका पत्र मैं अभी-अभी देख पाया हूँ। उसका सम्बन्धित भाग इस प्रकार है:

> **स्कूलोंके हिसाब-किताबकी गड़बड़के सम्बन्धमें एक पत्र 'यंग इंडिया'में पहले ही प्रकाशित हो चुका है। मैं लेखकसे सहमत हूँ। मै 'तिलकालय'का प्रिंसिपल हूँ, जिसके बारेमें मेरे कुछ विरोधियोंने अफवाहें फैला रखी हैं। स्कूल मैंने पिछले नवम्बर अर्थात् अपने असहयोगमें भाग लेनेके एक महीने बाद शुरू किया था। चूँकि खिलाफत समितिसे मुझे कोई सहायता नहीं मिल सकी, इसलिए मुझे व्यक्तिगत सहायतापर ही निर्भर रहना पड़ा। एक नये स्कूलको जमनेमें कुछ समय लगता है। किन्तु मेरे स्कूलके शुरूके ही दिनोंमें मेरी "मोटी तनख्वाह"के बारेमें अफवाहें शुरू हो गई थीं। जब कि सचाई यह है कि मैंने कोई तनख्वाह नहीं ली; बल्कि ३१ मई, १९२१ तक स्कूलको १,२०० रुपयेका घाटा हुआ है। जहाँतक धनका प्रश्न है, स्कूलका एक वित्त-बोर्ड है जिसके प्रधान श्री दुर्गादास बी० अडवानी हैं। बोर्डकी बैठक हुई और हिसाब-किताब, जिसकी जाँच समिति द्वारा नियुक्त एक पेशेवर मुनीमने की, पास किया गया। रिपोर्टमें हिसाब-किताबका विवरण भी दिया जायेगा। साधारण रूपसे यही विधि अपनाई भी जानी चाहिए थी। सार्वजनिक सहायतासे चलनेवाली सभी शालाएँ इसी पद्धतिका अनुसरण करती हैं। उनसे यही अपेक्षा की जाती है कि वे समय-समयपर अपना आय-व्ययका लेखा प्रकाशित किया करें। इससे उन समाचारोंमें निहित अन्याय स्पष्ट हो जायेगा जिनपर आपके लेख आधारित हैं। वे समाचार स्पष्टतः व्यक्तिगत द्वेषका परिणाम हैं।**

मैं पत्रका शेष भाग प्रकाशित नहीं कर रहा हूँ। उसका सम्बन्ध केवल स्थानीय और व्यक्तिगत मामलोंसे है। मैं नहीं समझता कि ऐसे मामलोंकी सार्वजनिक चर्चासे कोई लाभ है। हमें अपने अन्दर ऐसी क्षमता बढ़ानी चाहिए कि हम इस तरहकी छोटी-छोटी परेशानियोंको बरदाश्त कर सकें और जल्दी ही अपने प्रतिद्वन्द्वियोंसे सहमत हो सकें।

लॉर्ड सिन्हाकी भूमिमें

शायद उड़ीसा भारतमें सबसे गरीब प्रान्त है। वहाँके निवासी बहुत ही सीधे और भोले हैं। 'समाज' उत्कलका एक समाचारपत्र है। किओंझर नामकी एक छोटी-सी रियासतमें होनेवाली सरकारी मनमानीके बारेमें एक सम्वाददाताने 'समाज' में लिखा है:

> आपको किओंझरके विषयमें सूचनाएँ अवश्य ही मिल रही होंगी; किन्तु शायद आप वहाँकी अन्दरूनी हालत न जानते हों। रियासतके अधिकारी इस भीतरी हालतको दबानेका यत्न कर रहे हैं, और इस प्रकार जनताको असहाय और निरुपाय कर देना चाहते हैं। डाकखानोंको बन्द जैसा ही समझना चाहिए। किसीको कोई समाचारपत्र पढ़नेको नहीं मिलता। चिट्ठियाँ न भेजी जाती हैं, न मिलती हैं। पहले उन्हें अधिकारियोंके पास देखनेको भेजा जाता है और फिर जो-कुछ उनमें लिखा होता है उसको देखते हुए जो ठीक समझा जाता है सो होता है। एक परिपत्र द्वारा 'समाज' पर पाबन्दी लगा दी गई है। इसलिए यह अखबार यहाँ देखनेको नहीं मिलता। दूसरे, लोगोंको एक स्थानसे दूसरे स्थानपर जानेकी स्वतन्त्रता नहीं है। सड़कोंपर पहरेदार तैनात हैं। थोड़ासा भी शक होते ही राहगीरोंकी तलाशी ली जाती है कि उनके पास कहीं कोई सूचना तो नहीं है। यदि किसीपर यह सन्देह हो कि उसके पास कोई सूचना है तो उसे आगे जानेसे रोक दिया जाता है। इस प्रकार सर्वथा असहाय जनताको दबानेमें कोई कसर नहीं छोड़ी जाती। सुना जाता है कि निशाकर मिश्र नामके एक व्यक्तिको इतना पीटा गया कि वह मर गया। यह समाचार दबा दिया गया है। एक दूसरे जगद्बन्धु चक्रवर्ती नामके सज्जन मरणासन्न हैं; उनके बचनेकी आशा नहीं। कहा जाता है कि उन्हें एक कोठरीमें अकेला बन्द रखा गया है। किन्तु कोई नहीं जानता कि वे हैं कहाँ। लोगोंमें यह धारणा पक्की हो गई है कि लोगोंके मरनेके समाचारोंको अधिकारी दबानेका पूरा यत्न कर रहे हैं।

मुझे कुछ और भी पत्र मिले हैं, जो इस विवरणकी पुष्टि करते हैं। पाठकको यह नहीं समझ लेना चाहिए कि यह रियासत पश्चिमी भारतकी रियासतों जैसी ही है। उत्कलकी रियासतोंमें अंग्रेज पोलिटिकल एजेंट सर्वेसर्वा है, और वह जो चाहता है करता है। ऊपर जिस जुल्मका वर्णन है, वह इसलिए हो रहा है कि लोगोंने असहयोग आन्दोलनके कार्यकर्त्ताओंको जगह दी। मैं उनसे यही कह सकता हूँ कि जबतक भारत गुलामीकी जंजीरमें जकड़ा है, उन्हें ये यातनाएँ भोगनी पड़ेंगी। मैं असहयोगियोंको यही सलाह दूँगा कि उन्हें ऐसे स्थानोंमें आन्दोलन नहीं करना चाहिए जहाँ दमन शुरू होनेपर वे जनताकी किसी प्रकारकी सहायता न कर सकें। यदि उत्कलकी जनता शक्तिशाली और सुसंगठित होती तो मैं बिना हिचक उनसे कहता कि वे इन तथाकथित रियासतोंमें जायें, वहाँके प्रत्येक अमानुषिक प्रतिबन्धको तोड़ें और प्रत्येक कानूनी

दण्ड स्वीकार करें। किन्तु मेरी समझमें वह समय अभी नहीं आया है। जितना आत्म-संयम इस समयतक हममे है, उससे बहुत अधिक आत्मसयम हमें सीखना होगा। हमने जितना सीखा है उससे आशा तो बँधती है, किन्तु निस्सन्देह हमे उससे अधिक आत्मसंयम सीखनेकी जरूरत है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १३–७–१९२१

१७६. रिसता हुआ घाव

संयुक्त-प्रान्तके उदार सघ (लिबरल लीग) के शिष्टमण्डलको उत्तर देते हुए परम-श्रेष्ठ वाइसरायने जो भाषण दिया, वह उस भाषणकी अपेक्षा कहीं अधिक सतर्कतापूर्ण था जो उन्होने अहमदिया शिष्टमण्डलको उत्तर देते हुए दिया था। फिर भी परम-श्रेष्ठको यह याद दिलाना आवश्यक है कि उन्होंने इस भाषणमें भारतसे असम्भव कार्य करनेको कहा है। उदारदलीय तथा राष्ट्रवादी, सहयोगी तथा असहयोगी, हिन्दू, मुसलमान, सिख, जैन, पारसी, ईसाई, यहूदी सभी जो अपनेको भारतीय कहते हैं, अपने तरीकेसे जोर देकर कहते हैं कि पंजाब तथा खिलाफतके प्रति किये गये अत्याचारोंका प्रतिकार होना चाहिए। परमश्रेष्ठ अब भी खिलाफतके दावेपर जोर दे रहे हैं। यह आशाजनक बात है। इस सम्बन्धमें वे यह नहीं कहते कि भारतके मुसलमान और हिन्दू तथा अन्य देशवासी खिलाफतके प्रति किये गये अत्याचारोंको भूल जायें। किन्तु वे हमसे यह साफ-साफ कहते हैं कि हम पंजाबके प्रति किये गये अत्याचारोंको भूल जायें। यह काम उतना ही असम्भव है जितना कि किसी वैद्यके कहने मात्रसे रोगी-का अपने कष्टदायक रोगको भूल जाना। केवल संज्ञाहीन करनेवाली औषधके उप-योगसे वह कुछ देरके लिए कष्ट भूल सकता है। पंजाबके प्रति किये गये अत्याचार तो ऐसे हैं जैसे कि रिसता हुआ कोई घाव। जिस प्रकार रिसता हुआ घाव सारा जहर बाहर निकाल दिये जानेतक अच्छा नहीं हो सकता, उसी प्रकार पंजाबके प्रति किये गये अत्याचार बेईमान तथा पश्चात्तापहीन सरकारी अधिकारियोंकी पेंशनों तथा नौकरियोंके समाप्त कर दिये जानेके पहले न तो भूले जा सकते हैं, न उन्हें क्षमा ही किया जा सकता है। क्या लॉर्ड रीडिंगका अनुमान है कि श्री थॉमसनको उच्चतर पदपर प्रतिष्ठित करनेमें भारतकी सहमति है? वे हमसे कहते हैं कि हम उद्देश्यके प्रति ईमानदारी तथा सचाईके लिए उन्हें तथा उनकी सरकारको श्रेय दें। वे चाहें तो श्रेय ले लें, किन्तु श्रेय देते समय यह विचार मनमें आता है कि महत्त्वपूर्ण मामलोंपर सरकार तथा जनताके दृष्टिकोणमें मौलिक भेद है। जबतक लॉर्ड रीडिंग और उनकी सरकार भारतसे यह कहती है कि वह पेंशन तथा नौकरीकी सूचियोंमें उन अधि-कारियोंके नाम बहाल रखनेपर सहमत हो जाये जो भारतीय दृष्टिकोणसे अपने उत्तर-दायित्वके प्रति अयोग्य सिद्ध हुए हैं तबतक सरकार और जनतामें एकमत होनेका प्रश्न ही नहीं उठता। यदि हमें लेशमात्र भी उत्तरदायित्व दिया गया होता तो निश्चित रूपसे हमें उन लोगोंको बरखास्त करनेका अधिकार मिल जाता, जिन्होंने हमपर नृशंस

अत्याचार किये हैं। मेरे लेखे तो इन दोनों अत्याचारोंका प्रतिकार करना उत्तरदायित्वकी सबसे बड़ी कसौटी है। खिलाफतके प्रति जो अन्याय हुआ है उसे स्वीकार किया गया है। पंजाबपर किये गये अत्याचार खूनके अक्षरोमें लिखे गये हैं। हम मानते हैं कि हमने अमृतसर, कसूर, जलियाँवाला तथा गुजराँवालामें गलतियाँ कीं। किन्तु इसके लिए हमें भारी कीमत चुकानेके लिए मजबूर किया गया। हमारा अपमान किया गया, हमें ठोकरें मारी गई। अपराधी और निर्दोष, सभी फाँसीपर चढ़ाये गये। हमने स्वयं कई स्थानोंपर स्पष्ट एवं मुक्त-रूपसे अपना अपराध स्वीकार किया है। हम यह नहीं चाहते कि अन्याय करनेवाले अधिकारियोंको अपमानित किया जाये। हम तो केवल यह माँग करते हैं कि वे हमपर मालिक बनाकर न लादे जायें। एक अंग्रेज अधिकारीने एक बार मुझसे स्पष्ट कहा कि माइकेल ओ'डायर या जनरल डायरका नाम पेंशनकी सूचीसे हटानेकी बातपर सहमति देनेके बजाय मैं नौकरी छोड़ देना अधिक अच्छा समझूँगा। मैंने उससे कहा कि मैं आपके इस प्रकारके रुखसे सहानुभूति रख सकता हूँ; किन्तु आप भी मुझसे इस विचारसे सहमत होनेकी आशा न रखें और उसने ऐसी आशा नही की। हजारों न सही सैकड़ों अंग्रेज पुरुष तथा महिलाएँ माइकेल ओ'डायर तथा जनरल डायरको साम्राज्योद्धारक और अपने गौरवका संरक्षक समझते हैं। यह भी सम्भव है कि यदि मैं भी, चाहे जिस मूल्यपर, भारतको अधीन रखनेके लिए कृतसंकल्प अंग्रेजोंमें से एक होता तो मैं भी शायद उन्हींके जैसा महसूस करता। किन्तु मेरा विचार है, जबतक इस प्रकारका रुख बना रहेगा तबतक सरकार और जनताके बीच सहयोग नहीं हो सकता। हमारे द्वारा असहयोग होनेपर अंग्रेज इस तथ्यको समझ जायेंगे कि देशके प्रशासनमें उनके साथ सहयोग करनेका अर्थ हम लोग उनके इस रुखके साथ सहमति प्रकट करना मानते हैं। यह मित्रों और साथियों जैसा रुख नहीं है और तलवारके बलपर उनका भारतमें बने रहना अब सम्भव नहीं है। वे यहाँ केवल हमारी सद्भावनाके बलपर रह सकते हैं। यदि हमें अब कोई चीज जोड़े रह सकती है तो वह केवल सद्भावनाकी कड़ी ही हो सकती है। मुँहसे समानताका दम भरना और वास्तवमें अलगावकी खाइयाँ खोदकर अपने बड़प्पनको अक्षुण्ण रखना तो हमारा मजाक उड़ाना ही है। लॉर्ड रीडिंग संसारके बुद्धिमान् व्यक्तियोंमें से हैं, इस-लिए मुझे आशा है, वे इस बातको जल्दी ही समझ जायेंगे कि दो विरुद्ध रुखोंमें संगति बनाये रखना सम्भव नहीं है। यदि कोई बीचका मार्ग होता तो असहयोगियोंने उसे कभीका अपना लिया होता। यह विशाल जनसमुदायकी घृणा या दुर्भावनाका प्रश्न नहीं है। मैं उन्हें आमन्त्रित करता हूँ कि वे गहरे पैठकर देखें तो उन्हें मालूम हो जायेगा कि हम कमजोर होनेपर भी गोरी जातिकी श्रेष्ठताको अब किसी प्रकार भी स्वीकार करनेके लिए तैयार नहीं हैं। जबानी जमा-खर्चका चाहे कितना ही अच्छा मतलब क्यों न हो और चाहे कितनी ही सचाईसे वह क्यों न किया गया हो, उससे कोई उपयोगी उद्देश्य सिद्ध नहीं हो सकता। हम भारतके लोग इतने मूर्तिपूजक तो हैं कि जिस समानता की बात कही जाती है हमें उसका साक्षात् प्रमाण चाहिए। गोरे सैनिकोंका अस्तित्व अंग्रेज जातिकी रक्षाके लिए आवश्यक हो सकता है, किन्तु क्या वे यह नहीं जानते कि भारतकी सीमाकी रक्षाके लिए उनकी बिलकुल आवश्यकता

नहीं है ? अंग्रेजोंको सर्वथा उन्हीं शर्तोंपर यहाँ रहनेके लिए तैयार रहना चाहिए जिन शर्तोंपर पारसी रहते है। पारसी संख्यामें मुट्ठी-भर होनेपर भी एक हजार वर्षसे प्रतिष्ठित मित्र एवं साझीदारोंकी हैसियतसे यहाँ रह रहे है। उन्हे विशेष सुरक्षाकी आवश्यकता नहीं पडी, क्रुद्ध हिन्दुओं या मुसलमानोसे होनेवाले खतरेके समय उन्हें किसी किलेकी शरण लेनेके लिए नहीं जाना पड़ा। क्या मूसा और ईसाके अनुयायियोके पास पारसियों जैसा विश्वास नहीं है ? वास्तविक तथ्य तो यह है कि अंग्रेज भारतमें लाखो हिन्दुओं और मुसलमानोंके साथ सद्भावनाके साथ रहनेके लिए तैयार नही हैं। हिन्दू और मुसलमान भी अंग्रेजोंको इस डरसे कोई विशेपाधिकार देनेके लिए तैयार नहीं हो सकते कि आदमीकी बुद्धि अधिकसे-अधिक खतरनाक जिन हथियारोंकी खोज कर सकती है वैसे हथियार अग्रेजोके पास है। हिन्दुओं-मुसलमानोंके पास इसके सिवा और कोई चारा नही कि वे उनका भय छोड़कर, अर्थात् अप्रतिरोधके जरिये अधिकसे-अधिक प्रयत्न करके उन सब शस्त्रोंके प्रभावको बेकार कर दें। हो सकता है कि यह बात उद्दण्डतापूर्ण या काल्पनिक लगे। किन्तु मुझे आशा है कि लॉर्ड रीडिंगको शीघ्र ही किसी-न-किसी प्रकार यह मालूम हो जायेगा कि मैंने भारतके मनकी बात सही तौरपर कही है। और जितनी जल्दी इस मौलिक सत्यका ज्ञान होगा उतनी ही जल्दी अंग्रेजो और भारतीयोंके बीच वास्तविक तथा हार्दिक सहयोग होगा। मैं ऐसे सहयोगकी लालसा रखता हूँ, और यही लालसा मुझे किसी प्रकारकी क्षमा-याचना स्वीकार करनेसे रोकती है, फिर चाहे वह सहयोगके लिए कितनी ही प्रलोभनकारी क्यों न हो। असहयोगका जन्म अज्ञान तथा दुर्भावनासे नहीं हुआ, बल्कि इसका जन्म ज्ञान और प्रेमसे होता है और इसलिए सहयोगकी ओर बढ़नेके लिए यही प्रभावशाली कदम है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३–७–१९२१

१७७. पत्र : भारतके अंग्रेजोंके नाम

प्रिय मित्रो,

आज दूसरी बार मैं आपको पत्र लिखनेका साहस कर रहा हूँ।[१] मै जानता हूँ आपमेंसे अधिकतर असहयोगको नापसन्द करते हैं। यदि आप मुझे ईमानदारीका श्रेय देते हैं तो मैं आपसे निवेदन करूँगा कि आप मेरे दो कार्यक्रमोंको[२] मेरी अन्य गति-विधियोंसे अलग करके देखें।

यदि आपको मेरी ईमानदारीका एहसास नहीं होता तो मैं उसे साबित नहीं कर सकता। जब मैं यह कहता हूँ कि हम अंग्रेजोंसे घृणा किये बिना उनके द्वारा स्थापित

१. इससे पहले गांधीजीने २७ अक्तूबर, १९२० को अंग्रेजोंके नाम एक पत्र लिखा था, देखिए खण्ड १८ ।

२. विदेशी वस्त्र-बहिष्कार और मद्यनिषेध आन्दोलन ।

शासन प्रणालीसे घृणा कर सकते हैं, तब मेरे कुछ भारतीय मित्र मुझपर कपटाचारका दोष मढ़ते हैं। मै उन्हें यह बतानेकी कोशिश कर रहा हूँ कि किसी भी व्यक्तिके लिए अपने भाईकी दुष्टतासे घृणा करनेपर भी अपने भाईसे घृणा न करना सम्भव है। ईसाने स्क्राइब्स[1] और फैरिसियोंकी[2] दुष्टतासे घृणा करनेपर भी उनसे घृणा नहीं की थी। उन्होंने व्यक्तिके प्रति प्रेम और उसकी बुराईके प्रति घृणाका कानून केवल अपने लिए नहीं बनाया, बल्कि यह सिखाया कि इसका सार्वजनिक व्यवहारमें उपयोग करें। वस्तुतः संसारके सभी धर्म-ग्रंथोमें मैंने इसका उल्लेख पाया है।

मै दावा करता हूँ कि मुझे मानवीय स्वभाव तथा अपनी कमजोरियोंका काफी हदतक सही ज्ञान है। अनुभवसे मैंने यह जाना है कि अपने ही द्वारा प्रस्तुत प्रणालीकी अपेक्षा आदमी स्वयं अच्छा होता है। और इसलिए मैं अनुभव करता हूँ कि वैयक्तिक रूपमें आप उस प्रणालीसे बहुत अच्छे हैं जिसे आपने संघके रूपमें विकसित किया है। १० अप्रैलके दिन अमृतसरमें मेरा प्रत्येक देशभाई जिस भीड़में शामिल था उससे अच्छा था। वह एक व्यक्तिके रूपमें उन निर्दोष अंग्रेज बैंक मैनेजरोंकी हत्या करनेसे इनकार कर देता। किन्तु उस भीड़में बहुतसे आदमी अपनेको भूल गये। इसीलिए दफ्तरमें बैठा अग्रेज उससे बाहरके अग्रेजसे भिन्न है। इसी प्रकार भारतमें रहनेवाला अग्रेज, इग्लैंडमें रहनेवाले अंग्रेजसे भिन्न है। यहाँ भारतमें आप जिस प्रणालीसे सम्बन्धित हैं वह इतनी निकृष्ट है कि उसका वर्णन ही नहीं हो सकता। अतः मेरे लिए यह सम्भव है कि मैं आपको वुरा समझे बिना तथा प्रत्येक अंग्रेजपर बुरे उद्देश्यका दोष मढ़े बिना कठोरसे-कठोर शब्दोंमें उक्त प्रणालीकी निन्दा कर सकूँ। इस प्रणालीके आप भी उतने ही गुलाम हैं जितने कि हम। इसीलिए मैं चाहता हूँ कि आप भी मेरे प्रति ऐसा ही व्यवहार करें और मुझपर उन इरादोंका दोष न मढ़ें जो आपको मेरे लिखित शब्दोंमें उपलब्ध न हों। मै जब यह कहता हूँ कि मैं उस प्रणालीको विनष्ट करने या सुधारनेके लिए अधीर हूँ जिसने भारतको आपके मुट्ठी-भर देश-वासियोंका गुलाम बनाया है और जिसके कारण अंग्रेज भारतमें अपनेको किलों तथा उन तोपोंकी छायामें ही सुरक्षित अनुभव करते है जो यहाँ इस देशमें जहाँ-तहाँ दर्शकोंका ध्यान अपनी ओर बरबस खींचती हैं तो आप समझ लीजिए कि अपने इस कथनमें मै पूरी तरह अपना इरादा आपके सामने रख चुका। यह आपके और हमारे लिए एक अपमानजनक दृश्य है। राजविधि द्वारा गठित हमारा जीवन पारस्परिक अविश्वास और भयपर आधारित है। आप स्वीकार करेंगे कि यह इन्सानियत नहीं है। जिसके कारण यह स्थिति उत्पन्न हुई है। उस प्रणालीको राक्षसी ही कहना होगा। आप भारतीयोंका अखण्ड भाग बनकर भारतमें रह सकते हैं, विदेशी शोषक बनकर सदा नहीं रह सकते। एक अंग्रेजकी जानके बदले १,००० भारतीयोंकी जानें! यह एक अत्यन्त निराशाजनक सिद्धान्त है, लेकिन आप मुझपर

१. ईसाके समयके यहूदी पुरोहित।

२. एक यहूदी जाति।

विश्वास कीजिए, भारतमें आपके उच्चतम अधिकारियोंने १९१९ में इस सिद्धान्तकी घोषणा की थी।

मैं आपसे यह कहनेके लिए लालायित हूँ कि आप आगे बढ़ें और इस प्रणालीको विनष्ट करनेमें मेरा हाथ बँटायें, जिसने हमें और आपको नीचे गिरा दिया है। किन्तु मैं अनुभव करता हूँ कि अभी ऐसा सम्भव नही है। हमने स्वयं उसे समाप्त करनेके लिए पर्याप्त तत्परता, आत्मत्याग और आत्मसंयम नहीं दिखाया है।

किन्तु मैं आपसे इतना जरूर कहता हूँ कि आप विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कार तथा मद्यनिषेध आन्दोलनमें हमारी सहायता करे।

लंकाशायरका कपड़ा जैसा कि ब्रिटिश इतिहासकारोंने बताया है, भारतपर जबरदस्ती लादा गया और जान-बूझकर व्यवस्थित रूपसे उसके विश्व प्रसिद्ध उत्पादकोंको नष्ट कर दिया गया। इसलिए भारत न केवल लंकाशायर बल्कि जापान, फ्रांस और अमरीकाकी दयापर भी निर्भर है। हम कपड़ेके लिए प्रतिवर्ष (न्यूनाधिक रूपमें) ६० करोड़ रुपये भारतसे बाहर भेजते हैं। हम अपने कपड़ोंके लिए काफी मात्रामे रुई पैदा करते हैं। क्या यह पागलपन नहीं है कि रुई भारतसे बाहर भेजी जाये और वहाँ उससे कपड़ा तैयार करके फिर जहाज द्वारा हमारे पास वापस ले आया जाये? क्या भारतका इस निःसहाय अवस्थातक पहुँचाना सही था?

डेढ़ सौ साल पहले हम अपना सारा कपड़ा तैयार करते थे। हमारी महिलाएँ अपनी झोपड़ियोंमे बारीक सूत कातती थी और अपने पतियोंकी कमाईमें वृद्धि करती थीं। गाँवके जुलाहे उस सूतसे कपड़े बुनते थे। हमारे जैसे विशाल कृषिप्रधान देशमें यह राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्थाका अपरिहार्य अंग था। इसके कारण हम अपने खाली समयका स्वाभाविक ढंगसे उपयोग कर सकते थे। आज हमारी महिलाएँ अपने हाथोंकी कुशलता खो बैठी हैं और लाखों लोगोंपर जबरदस्ती थोपी गई इस निष्क्रियताने देशको गरीब बना दिया है। बहुतसे जुलाहोंने भंगीका काम सँभाल लिया है। कुछने किरायेके सिपाही बननेका पेशा अपना लिया है। कलाकार जुलाहोंकी आधी जाति नेस्तनाबूद हो गई है और आधे बचे-खुचे जुलाहे हाथ-कता बारीक सूत न मिलनेके कारण आयात किये गये विदेशी सूतसे कपड़े बुन रहे हैं।

अब शायद आप समझेंगे कि भारतके लिए विदेशी कपड़ेके बहिष्कारका क्या अर्थ है। इसकी योजना बदला लेनेकी दृष्टिसे नहीं बनाई गई है। यदि सरकार आज खिलाफत तथा पंजाबके साथ किये गये अत्याचारोंका प्रतिकार कर दे और भारतको तुरन्त स्वराज्य देनेकी अनुमति दे दे, फिर भी बहिष्कार आन्दोलन निश्चित रूपसे चलता रहेगा। स्वराज्यका अर्थ है कमसे-कम इतना अधिकार प्राप्त करना जिससे राष्ट्रके आर्थिक अस्तित्वके लिए महत्त्वपूर्ण भारतीय उद्योगोंकी रक्षा हो सके और आर्थिक अस्तित्वको खतरा पहुँचानेवाले आयातोंको बन्द किया जा सके। कृषि और चरखा राष्ट्र रूपी शरीरके दो फेफड़े हैं। किसी भी कीमतपर उनके क्षयको बचाना नितान्त आवश्यक है।

इस मामलेपर अब लिखनेकी आवश्यकता नहीं। जब कृषिके सहायक विशाल परिमाणमें उत्पादन करनेवाले एक ऐसे व्यवसायके अभावमें सारा राष्ट्र भूखसे मर

रहा हो तब विदेशी निर्माताओं तथा भारतीय आयातकोंके हितोंपर विचार नहीं किया जा सकता।

आप इसे विदेशी मालका आम बहिष्कार करनेवाला आन्दोलन न समझें। भारत अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारसे अपनेको अलग नही रखना चाहता। कपड़ेके अलावा जो वस्तुएँ भारतके बाहर अधिक अच्छी बन सकती हैं उन्हें वह व्यापार-सन्धि करनेवाले दोनों पक्षोंके लिए सुविधाजनक शर्तोंपर कृतज्ञताके साथ ग्रहण करेगा। भारतपर जबरदस्ती कुछ भी नहीं लादा जा सकता। किन्तु मैं भविष्यकी ओर नही झाँकना चाहता। मैं निश्चित रूपसे आशा करता हूँ कि जल्दी ही भारतके लिए बराबरीकी शर्तोंपर इंग्लैंड-के साथ सहयोग करना सम्भव हो जायेगा। तब व्यापारिक सम्बन्धोंकी जाँच करनेका अवसर मिलेगा। इस समय तो मैं आपसे कहूँगा कि आप विदेशी कपड़ोंके बहिष्कारको पूरा करनेमे हमारे सहायक बनें।

उसी तरहका और उतना ही महत्त्वपूर्ण आन्दोलन शराबबन्दी है। शराबकी दूकानें समाजपर लादा गया घोर अभिशाप है। इस प्रश्नके सम्बन्धमें आज जैसी चेतना लोगोमें पहले कभी नहीं थी। मैं स्वीकार करता हूँ कि इस सम्बन्धमे आपकी अपेक्षा भारतीय मन्त्री ज्यादा सहायता कर सकते हैं। लेकिन मैं चाहूँगा कि आप इस प्रश्न-पर अपने विचार स्पष्ट रूपसे व्यक्त करें। जहाँतक मैं समझता हूँ पूर्ण मद्य निषेध किसी प्रकारके प्रशासनके अन्तर्गत तो राष्ट्रके आग्रहपर ही किया जा सकता है। आप राष्ट्रके पक्षमें अपना प्रभाव डालकर निरन्तर बढ़ते हुए आन्दोलनकी प्रगतिमें सहायता पहुँचा सकते हैं।

आपका विश्वस्त मित्र,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १३–७–१९२१

१७८. श्रद्धाका स्वरूप

मुझे एक अजीब-सा गुमनाम पत्र मिला है। जिसमें इस बातके लिए मेरी प्रशंसा की गई है कि मैंने वह लक्ष्य हाथमें लिया है जिससे लोकमान्यको सबसे अधिक प्रेम था और मुझसे कहा गया है कि लोकमान्यकी आत्मा मेरे अन्दर निवास कर रही है और मुझे अपनेको उनका एक योग्य अनुगामी सिद्ध करना चाहिए। पत्रमें आगे कहा गया है कि स्वराज्यके संघर्षमें हिम्मत न हारूँ ? और अन्तमें मुझपर आरोप लगाया गया है कि अपनेको राजनीतिक रूपसे गोखलेका शिष्य बताकर मैं लोगोंको धोखा देता हूँ। मैं चाहता हूँ लोग गुलामोंकी तरह नाम छिपाकर पत्र लिखनेकी प्रवृत्ति छोड़ दें। हम लोग अपने अन्दर स्वराज्यकी भावना बढ़ा रहे हैं, इसलिए हममें निर्भयतापूर्वक अपनी बात कहनेका साहस होना चाहिए। चूँकि इस पत्रका विषय सार्वजनिक महत्त्वका

है, इसलिए इसका उत्तर अपेक्षित है। मैं यह नहीं कह सकता कि मुझे स्वर्गीय लोकमान्यका अनुयायी होनेका गौरव प्राप्त है। मैं अपने करोड़ों दूसरे देशवासियोंकी भाँति, लोकमान्यकी अदम्य इच्छाशक्ति, उनकी अपार विद्वत्ता, उनके देशप्रेम और सबसे अधिक उनके व्यक्तिगत जीवनकी पवित्रता और उनके महान् त्यागके कारण उनका प्रशंसक हूँ। उन्होने आधुनिक कालके दूसरे सभी लोगोसे अधिक जनताके मनको प्रभावित किया है; उन्होंने हमारे अन्दर स्वराज्यकी भावना फूँकी है। मौजूदा शासनतन्त्रकी बुराइयोंको जितना श्री तिलकने समझा था उतना शायद किसी दूसरेने नही समझा। और मै पूरी नम्रताके साथ यह दावा भी करता हूँ कि मै उनके सन्देशको जनतातक पहुँचानेके लिए उतनी ही सचाईसे काम करता हूँ जितना उनका अच्छेसे-अच्छा शिष्य कर सकता है। किन्तु मैं यह भी जानता हूँ कि मेरा तरीका श्री तिलकका तरीका नहीं है। और इसी कारण अभीतक महाराष्ट्रके नेताओसे मेरी जैसी चाहिए वैसी पटरी नही बैठी, किन्तु मैं ईमानदारीसे महसूस करता हूँ कि मेरे तरीकेपर श्री तिलक अविश्वास नहीं करते थे। मुझे उनका विश्वासपात्र होनेका सौभाग्य प्राप्त था। उन्होने कई मित्रोंके सामने अपनी मृत्युसे केवल १५ दिन पहले मुझसे जो अन्तिम बात कही थी वह यह थी कि यदि जनता द्वारा उसे स्वीकार कराया जा सके तो मेरा तरीका बहुत उत्तम सिद्ध होगा। उन्होंने यह भी कहा था कि उन्हें इसमें शक अवश्य है। पर मेरे पास कोई दूसरा तरीका नहीं है। मैं यही आशा कर सकता हूँ कि जब अन्तिम परीक्षाका समय आयेगा तब यह सिद्ध हो जायेगा कि देशने अहिसात्मक असहयोगका तरीका पूरी तौरपर सीख लिया है। मैं अपनी अन्य मर्यादाओंको भूला नहीं हूँ। मैं किसी प्रकारकी विद्वत्ताका दावा नहीं कर सकता। मुझमें तिलक-जैसी संगठन-शक्ति भी नहीं है। मेरे साथ कोई ऐसा सुगठित, अनुशासित दल भी नहीं है जिसको मै अपने नेतृत्वमें चला सकूँ; और २३ सालतक देशसे बाहर रहनेके कारण मुझे भारतका उतना अनुभव नहीं है जितना कि लोकमान्यको था। हम दोनोंमें दो चीजें बिलकुल ही समान रही हैं — देशके लिए प्रेम और स्वराज्यके लिए सतत प्रयास। इसलिए मैं गुमनाम पत्र-लेखकको आश्वस्त कर देना चाहता हूँ कि लोकमान्यकी स्मृतिके प्रति श्रद्धामें मैं किसीसे कम नहीं रहूँगा और स्वराज्य-प्राप्तिके लिए लोकमान्यके सबसे अग्रणी शिष्योंके कन्धेसे-कन्धा मिलाकर आगे बढ़ता रहूँगा। मैं जानता हूँ कि तिलकको एक ही प्रकारकी श्रद्धांजलि सबसे ज्यादा पसंद होगी और वह है कमसे-कम समयमें भारत द्वारा स्वराज्य-प्राप्ति। इसके अतिरिक्त और कोई भी चीज़ उनकी आत्माको शान्ति नहीं दे सकती।

जहाँतक शिष्यत्वका प्रश्न है वह एक पवित्र व्यक्तिगत मामला है। मैंने सन् १८८८ में[1] दादाभाईके चरणोंमें सिर रखा था, किन्तु वे मुझे अपनेसे बहुत दूर लगे। मैं उनका पुत्र बन सकता था, शिष्य नहीं। शिष्यका दर्जा पुत्रसे ऊँचा है। शिष्यत्व एक नया जन्म होता है। वह स्वैच्छिक आत्मसमर्पण होता है। सन् १८९६ में अपने

१. जिन दिनों गांधीजी लन्दनमें वकालत पढ़ रहे थे; देखिए **आत्मकथा**, भाग १, अध्याय २५।

दक्षिण आफ्रिकाके कामके[1] सम्बन्धमें मैं भारतके लगभग सभी जाने-माने नेताओंसे मिला। जस्टिस रानडेका मुझपर रोब गालिब हो गया था। उनकी उपस्थितिमें मुझे बात करनेका साहस नहीं होता था। बदरुद्दीन तैयबजीने मुझे पुत्रके समान समझा और मुझे रानडे और फीरोजशाहके कहनेपर चलनेकी सलाह दी। फीरोजशाह एक प्रकारसे मेरे संरक्षक बन गये। उनकी इच्छा मेरे लिए ब्रह्मवाक्य थी। "तुम्हें २६ सितम्बरको एक सार्वजनिक सभामें भाषण देना है और तुम्हें वहाँ ठीक समयपर पहुँच जाना चाहिए।" मैंने आज्ञा-पालन किया। २५ तारीखकी शामको मुझे उनसे मिलना था। मैं मिलने गया।

"तुमने अपना भाषण लिख डाला?" — उन्होंने पूछा।

"जी नहीं।"

"इस तरह नहीं चलेगा, युवक। क्या आज रातको लिख सकते हो? — मुशी, तुम श्री गांधीके पास जाकर भाषणकी पाण्डुलिपि ले आना। रातों-रात ही यह छप जाये और उसकी एक प्रति मुझे भेज दी जाये।" मेरी ओर मुड़कर उन्होंने आगे कहा: "गांधी, बहुत लम्बा भाषण न लिखना। तुम नहीं जानते बम्बईके श्रोता बहुत लम्बा भाषण पसन्द नहीं करते।" मैंने सिर झुका दिया।

बम्बई-केसरीने मुझे आदेशका पालन करना सिखाया। उन्होंने मुझे अपना शिष्य नहीं बनाया। उन्होंने इसके लिए कोशिश भी नहीं की।

उसके बाद मै पूना गया। मैं वहाँ बिलकुल अजनबी था। मेरे मेजबान मुझे पहले श्री तिलकके पास ले गये। जब मैं उनसे मिला तो वे अपने सहयोगियोंसे घिरे हुए थे। उन्होने मेरी बात सुनी और कहा "हमें तुम्हारे लिए एक सभा आयोजित करनी होगी। लेकिन शायद तुम्हें पता नहीं कि दुर्भाग्यवश यहाँ दो दल हैं। तुम सभापतित्व करनेके लिए, कहींसे कोई निर्दलीय व्यक्ति जुटाओ। तुम डा० भाण्डारकरसे मिलोगे?" मैंने बात मान ली और वापस आ गया। मेरे मनमें श्री तिलककी बहुत स्पष्ट स्मृति नहीं है। बस इतना ही याद है कि उन्होंने अपने प्रेम और अपनी बेतकल्लुफीसे मेरी घबराहट दूर कर दी थी। वहाँसे, मुझे ऐसा याद है, मैं गोखलेके पास गया और फिर डा० भाण्डारकरके पास। डा० भाण्डारकरने मेरे अभिवादनका उत्तर कुछ उस भावसे दिया जैसा कि कोई अध्यापक अपने किसी विद्यार्थीको देता है।

"तुम एक ईमानदार और जोशीले युवक लगते हो। दोपहरकी ऐसी गरमीमें मुझसे मिलने बिरला ही आता। आजकल मैं सार्वजनिक सभाओंमें कभी नहीं जाता किन्तु तुमने एक ऐसी दयनीय परिस्थिति सामने रखी है कि मैं अपना नियम-भंग कर दूंगा।"

श्रद्धेय डाक्टर और उनके बुद्धिमत्तापूर्ण चेहरेके लिए मेरे मनमें श्रद्धा पैदा हो गई थी। किन्तु अपने हृदयके छोटेसे सिंहासनपर मैं उनको नहीं बैठा सका। वह अभीतक खाली था। मैं कई व्यक्तियोंको अनुकरणीय मानता था, पर मुझे अपने आदेशोंपर चलानेवाला हृदय-सम्राट् अभीतक नहीं मिल सका था।

१. देखिए **आत्मकथा,** भाग २।

गोखलेकी बात कुछ दूसरी थी। कह नहीं सकता क्यों। कालेजके[1] अहातेमें उनके मकानपर मैं उनसे मिला था। ऐसा लगा जैसे कोई पुराना मित्र मिल गया हो, बल्कि यों कहिए जैसे लम्बी जुदाईके बाद माँ मिल गई हो। उनका सौम्य चेहरा देखकर मैं एकदम आश्वस्त हो गया। उन्होंने मेरे व्यक्तिगत जीवनके बारेमें, आफ्रिकामें मेरे कामके बारेमें, बड़ी बारीकीसे छोटीसे-छोटी बातें पूछनी शुरू कीं, इस प्रकार उन्होंने मेरे हृदयमें घर कर लिया। उनसे जुदा होते समय मैंने अपने मनमें कहा — "तुम्हीं हो वह, जिसकी मुझे तलाश थी।" तबसे गोखलेने मुझे अपनी आँखोंसे ओझल नहीं होने दिया। १९०१ में जब मैं[2] दुबारा दक्षिण आफ्रिकासे आया, तो हम एक-दूसरेके और भी नजदीक आये। उन्होंने जैसे मुझे अपने हाथमें लेकर गढ़ना शुरू कर दिया। उन्हें इसका बहुत खयाल रहता था कि मैं कैसे बोलता हूँ, कैसे कपड़े पहनता हूँ, कैसे चलता हूँ, क्या खाता हूँ इत्यादि। मेरी माँ भी मेरा इतना खयाल नहीं रखती होगी, जितना गोखले रखते थे। जहाँतक मुझे याद है, हम एक-दूसरेसे कुछ नहीं छिपाते थे। वह सचमुच पहली नजरमें प्रेम हो जानेका मामला था; यह प्रेम १९१३ की[3] कठोर तनावपूर्ण स्थितिमें भी टिका रहा। उनमें मुझे वे सारी बातें दिखीं जिनकी मैं एक राजनीतिक कार्यकर्त्तासे अपेक्षा करता था। वे स्फटिकके समान शुद्ध, मेमनेकी भाँति विनम्र और सिंहके समान शूर थे। उनमें उदारता तो इतनी थी कि वह एक दोष बन गई थी। हो सकता है उनमें इनमें से एक भी गुण न रहा हो, लेकिन मेरे लिए इसका कोई महत्त्व नहीं। मेरे लिए इतना ही काफी है कि मुझे उनमें कोई दोष नहीं दिखाई पड़ा, जिसको लेकर मैं उनकी भर्त्सना कर सकूँ। मेरे लिए वे राजनीतिक क्षेत्रमें सबसे दोषरहित व्यक्ति थे और हैं। यह नहीं कि हममें मतभेद नहीं थे। सामाजिक प्रथाओंके बारेमें अपने विचारोंमें १९०१में भी हममें मतभेद था — उदाहरणके लिए विधवा-विवाहके प्रश्नपर। पश्चिमी सभ्यताके मूल्यांकनके सवालपर भी हमने देखा कि हमारे विचार भिन्न-भिन्न हैं। अहिंसापर मेरे कट्टर विचारोंसे उन्होंने स्पष्ट ही मतभेद प्रकट किया था। किन्तु इन मतभेदोंका न उनके लिए कोई महत्त्व था, न मेरे लिए। हमें दुनियाकी कोई चीज एक-दूसरेसे अलग नहीं कर सकती थी। यह अटकल लगाना कि यदि वे आज जीवित होते तो क्या होता, उनकी आत्माका अपमान करना है। मैं जानता हूँ कि मैं उनके नेतृत्वमें काम करता होता। मैंने यह-सब स्पष्टीकरण इसलिए किया है कि उस गुमनाम पत्रसे मुझे चोट पहुँची है, क्योंकि उसमें यह कहा गया है कि मैं अपने राजनीतिक शिष्यत्वके सम्बन्धमें धोखा देता हूँ। क्या मैंने उस दिवंगत आत्माका ऋण स्वीकार करनेमें कोताही की है? मैंने सोचा मुझे गोखलेके प्रति अपनी वफादारीकी घोषणा कर

१. फर्ग्युसन कालेज, पूना।

२. गांधीजी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके कलकत्ता अधिवेशनके समय, गोखलेके साथ एक महीनेतक ठहरे थे; देखिए **आत्मकथा,** भाग ३, अध्याय १७, १८ और १९।

३. बात उन दिनोंकी है जब गांधीजीने सत्याग्रह छेड़नेका निश्चय किया था; देखिए खण्ड १२।

देनी चाहिए, खासकर तब जब मै एक ऐसे खेमेमें हूँ जिसको भारतीय जनता विरोधी दल मानती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३–७–१९२१

१७९. पत्र-लेखकोंसे

एक प्रशंसक : अली बन्धु खिलाफतके कोषसे निर्वाह नहीं करते।

आर० जे० वर्मा : जहाँ-जहाँ ताल्लुके, जिले या प्रान्तका पूरा भाग इकट्ठा नही किया जा सका है, वहाँ निश्चय ही कांग्रेस महासमितिकी बैठक के बाद भी चंदा इकट्ठा करना जारी रहना चाहिए। और जो व्यक्ति अपना चंदा लिखा चुका है वह सौजन्यपूर्वक यह कहकर तो इनकार कर ही नहीं सकता कि पूरा भाग तो इकट्ठा किया ही जा चुका है। जिन वकीलोंने कांग्रेसके प्रस्तावके अनुसार वकालत बन्द कर दी थी, वे यदि फिर वकालत आरम्भ करें तो शिष्टाचारका तकाज़ा तो यह होगा कि वे किसी कांग्रेस कमेटीमें पद-ग्रहण न करें।

'स्वराज्य' : यदि कोई स्वदेशी भण्डार जापानी कपड़ेको स्वदेशी कपड़ेके नामसे बेच रहा है, तो निश्चय ही उसका भंडा-फोड़ किया जाना चाहिए और उसका बहिष्कार किया जाना चाहिए। इस तरहकी धोखाधड़ीके विरुद्ध विवेकपूर्ण सक्रिय लोकमत तैयार करना अत्यन्त अचूक उपाय होता है। इसके अतिरिक्त लोगोंको सब तरहका बारीक कपड़ा त्याग देना चाहिए। हाथ-कते सूतके और हाथ-बुने कपड़ेमें भ्रमकी गुंजाइश ही नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३–७–१९२१

१८०. सन्देश : धारवाड़की जनताको

[१४ जुलाई, १९२१ के पूर्व]

धारवाड़में गवर्नमेंटकी कार्रवाइयोंको मै अत्यन्त ध्यानपूर्वक देख रहा हूँ। जो लोग सरकारी जुल्मके शिकार हुए हैं उनके सम्बन्धियोंको मैं बधाई देता हूँ और जनताको भी उसके धैर्य और सहनशीलताके लिए बधाई देता हूँ। मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि धारवाड़के निवासियोंका उत्साह गिरफ्तारियोंके बावजूद मन्द नहीं पड़ा। मुझे विश्वास है कि यदि हम लोग अपने धैर्य और अहिंसाके सिद्धान्तके अनुसार काम करते रहे तो धारवाड़ जैसी घटनाएँ स्वराज्य-सिद्धिमें बहुत सहायक होंगी। ज्ञानपूर्वक बदला न लेना जनताके साहसको दूना कर देता है और

उनके उद्देश्यकी पवित्रता बढ़ जाती है। इस कारण सरकारी दमनसे भयभीत हुए बिना हमको अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ते रहना चाहिए। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि स्थानीय दलबन्दी और झगड़ोंके कारण धारवाड़का मामला कुछ ज्यादा उलझ गया है। मेरा सभीसे यह अनुरोध है कि इस समय जो खतरा हम सबके सामने खड़ा है उसे ध्यानमें रखते हुए हमें अपने आपसी मतभेदोंको भूल जाना चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि यदि सब नहीं तो कमसे-कम असहयोगी अवश्य ऐसा करेंगे। आपसके लोग यदि कुछ ज्यादती भी करे तो उसकी परवाह न की जाये, तो विरोधियोंका वैमनस्य स्वतः शान्त हो जायेगा। 'विरोधको दूर करनेका प्रेम और औदार्यसे बढ़कर अन्य कोई उपाय नहीं है'।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १४–७–१९२१

१८१. पत्र : एक संवाददाताको[1]

लैबर्नम रोड
बम्बई
१४ जुलाई, १९२१

प्रिय महोदय,

आपने जो-कुछ पूछा है उसके सम्बन्धमें मेरा उत्तर यह है कि यदि कोई सनातनी हिन्दू कुछ निश्चित स्थितियोंमें स्वच्छताके साथ पकाया गया विशुद्ध निरामिष भोजन किसी मुसलमान या किसी दूसरे व्यक्तिके साथ खाता है तो उसके लिए ऐसा करना अवैध नहीं है।

मौलाना शौकत अलीने स्वर्गीय लोकमान्य तिलककी अर्थीको कन्धा देनेपर खेद प्रकट किया है इसके सम्बन्धमें मुझे यह कहना है कि उन्होंने स्वतः इस कार्यपर खेद प्रकट नहीं किया है, बल्कि एक हिन्दूकी अर्थीको कन्धा देकर उन्होंने इस्लामकी परम्पराका अनजानेमें जो भंग किया है, उसके लिए उपस्थित मौलानाओंसे क्षमा माँगी है।

उनकी यह क्षमा-याचना दिवंगत आत्माके प्रति उनके अक्षुण्ण आदरभावसे सर्वथा मेल खाती है।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ७५७१)की फोटो-नकलसे।

१. पत्र पानेवाले का नाम ज्ञात नहीं है।

१८२. पत्र : मणिबेन पटेलको

बम्बई
शुक्रवार, १५ जुलाई, १९२१

चि० मणि,

तुम्हारे पत्रका लम्बा उत्तर देनेको जी करता है। परन्तु उतना समय नहीं है। अब रातके ११ बजेंगे। परन्तु सवालका जवाब दे दूँ। जो [विदेशी] कपड़ा व्यापारके लिए रखा गया हो उसे जलाने या दे देनेका सवाल ही नही है।

पत्रिकाएँ[1] तो मैं अभी पढ़ भी नहीं सका। शराब बेचनेवालों के हमले हम जितने अधिक सहन करेंगे उतना अधिक हमारा काम बढ़ेगा।

बापूके आशीर्वाद

मणिबेन
द्वारा/श्री वल्लभभाई झवेरभाई पटेल
भद्र, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो : मणिबहेन पटेलने

१८३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

शुक्रवार [१५ जुलाई, १९२१ या उसके पश्चात्][2]

भाईश्री वल्लभभाई,

भाई गिडवानीसे खूब बातें हुई। वे परेशान हैं। काका और आश्रमवासियोंके खिलाफ कुछ शिकायत है। आप सबको जमा करके निपटारा कर दें। काकाकी तरफसे परेशानी कैसे होगी, यह समझमें नहीं आता। काकाने इस बार तो कोई बातचीत नहीं की। सारा असन्तोष मिट जाये तो अच्छा।

अनसूयाबेनके अनुदानका[3] निपटारा कर डालें। उनके पास जाइये और जो रकम चाहिए उसका चैक दे दीजिये।

१. शराबबन्दी आन्दोलन-सम्बन्धी पत्रिकाएँ।

२. यह पत्र ११ जुलाई, १९२१ को मणिबेन पटेलको लिखे पत्रके बाद लिखा गया होगा जिसमें गांधीजीने विठ्ठलभाईसे खादीके सम्बन्धमें बात करनेका उल्लेख किया है।

३. स्कूलोंके लिए।

विट्ठलभाईके साथ फिरसे खूब बातें हुई, यह मणिबेन या डाह्याभाईसे कहिये। मैं मानता हूँ कि विट्ठलभाई अब चरखेका महत्त्व कुछ अधिक समझते हैं। मुझे यह जरूर लगता है कि उनका सही क्षेत्र कौंसिल है। वे लोगोंमें पैठकर, उनमें घुलमिल-कर सेवा नही कर सकते। ऐसा नही है कि वे सेवा नही करना चाहते। परन्तु इस चीजको उन्होंने अपनेमें बढ़ाया नही है। कौंसिलोंमें जाकर काम करनेकी योग्यताको बढ़ाया है। मेरे खयालसे दोनोंके लिए अलग-अलग गुण चाहिए। बम्बईमें विट्ठलभाईकी कोई निन्दा करता हो, सो तो मैंने देखा ही नही।

मोहनदासके वन्देमातरम्

भाईश्री वल्लभभाई पटेल, बैरिस्टर
भद्र, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो : सरदार वल्लभभाईने

१८४. सन्देश : जनताके नाम[1]

[१६ जुलाई, १९२१ के पूर्व][2]

आप अपने घरसे आज ही विदेशी कपड़े हटा दें; उनको पटणी भवन या किसी निकटतम स्थानवाली कांग्रेस कमेटीको दे दें और उससे रसीद ले लें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

१. भूलेश्वर जिला कांग्रेस कमेटी द्वारा जारी किये गये एक पर्चेमें गांधीजीका यह सन्देश छापा गया था।

२. इस सन्देशकी तिथि उपलब्ध नहीं है; किन्तु सम्भवतः यह और इसके बादका शीर्षक १६ जुलाई, १९२१ के "बहिष्कारके उपाय" लेखसे पहले लिखे गये होंगे।

१८५. स्वदेशी व्रत[1]

[१६ जुलाई, १९२१ के पूर्व][2]

मैं, निम्न हस्ताक्षरकर्त्ता, अन्तःकरणपूर्वक तथा ईश्वरको साक्षी करके प्रतिज्ञा करता हूँ कि १ अगस्त, १९२१; सम्वत् १९७७, आषाढ़ बदी १२, सोमवारके दिनसे निम्नलिखित तीन व्रतोंमें से एकका पालन करूँगा :

१. मै शुद्ध स्वदेशी वस्त्र पहनूँगा।

२. मै मिलके कते सूतसे हाथकरघेपर बुने वस्त्रका प्रयोग करूँगा।

३. मै भारतकी मिलोंमें कते और बुने वस्त्रोंका प्रयोग करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

१८६. बहिष्कारके उपाय

बम्बई
१६ जुलाई, १९२१

बहिष्कारका काम चुपचाप हो रहा है और खद्दरकी माँग बहुत बढ़ गई है। यद्यपि विदेशी कपड़ा न मँगानेके प्रतिज्ञा-पत्रपर ७ व्यापारियोंने ही अबतक हस्ताक्षर किये हैं, तथापि बहुतोंने उसके लिए ऑर्डर देना बन्द कर दिया है और दिये हुए ऑर्डर रद कर रहे हैं। दुःखकी बात है कि कलकत्ताने इस सम्बन्धमें बहुत ही कम कर्त्तव्य-पालन किया है। सभी व्यापार-केन्द्रोंमें संगठित रूपसे और जोर-शोरसे बहिष्कारकी कोशिश होनी चाहिए। मारवाड़ी व्यापारियोंको उचित है कि इस समय अपनी स्वदेश-भक्तिका प्रमाण दें। देशके सब स्त्री-पुरुषोंको चाहिए कि वे किसी भी दलके पक्षपाती क्यों न हों, लेकिन विदेशी कपड़ेको सदाके लिए त्याग देनेमें अपनी शक्तिभर कुछ उठा न रखें।

१ अगस्तको, जो लोकमान्य तिलकके वार्षिक श्राद्धका दिन है उस दिन भारतमें कहीं भी हड़ताल न होनी चाहिए। जनताको यह सोचकर कि हमारा बल बढ़ रहा

१. 'बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स' के अनुसार बम्बई प्रेसीडेन्सीकी भिन्न-भिन्न स्वदेशी सभाओंको इस प्रतिज्ञापर लोगोंसे हस्ताक्षर करानेके आदेश दिये गये थे।

२. ऐसा लगता है कि इस प्रतिज्ञाका मसविदा स्वयं गांधीजीने तैयार किया था। इसकी सही तिथि मालूम नहीं है तथापि अनुमान है कि यह विदेशी वस्त्रके बहिष्कार सम्बन्धी निर्देश-पत्रके थोड़ा आगे-पीछे ही प्रचारित किया गया होगा। देखिए अगला शीर्षक।

है और लक्ष्यकी ओर हमारी गतिका वेग बढ़ रहा है, उस दिन तो खुशी मनानी चाहिए। स्वर्गवासी देशभक्त (लोकमान्य)की स्मृतिमें उस दिन शोक मनाना उचित नहीं है। . . .

कांग्रेस कार्यकर्त्ताओंको जनतामें स्वदेशीके प्रति अनुराग अवश्य उत्पन्न करना चाहिए। जबतक विदेशी कपड़ेका बहिष्कार पूर्ण रूपसे न हो जाये तबतक बहिष्कारके लिए लोगोंको उत्साहित करना और खद्दर तैयार करना उनका प्रधान कर्त्तव्य होना चाहिए। इस संक्रमणकालमें हमें आधेसे कम कपड़ेपर गुजारा करना चाहिए। नहीं तो उसकी कीमत बहुत ज्यादा बढ़ जायेगी और वस्त्रके पूर्ण अकालका कष्ट सहना पड़ेगा। जबतक हर घरमें चरखा न चलने लगे और हरएक जुलाहा हाथका सूत न बुनने लगे, हमें कपड़ेको बड़ी कंजूसीसे बरतना चाहिए।[1]

आज, १८–७–१९२१

१८७. सन्देश : अलीगढ़की जनताको

१६ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने इस आशयका एक सन्देश भेजा है कि अलीगढ़-काण्डसे उनको मार्मिक व्यथा हुई है। उन्होंने आशा व्यक्त की है कि मंजिलके इतने निकट पहुँचनेपर अब अलीगढ़की जनता उत्तेजना दिखाकर या हिंसाका सहारा लेकर या असहयोगियों अथवा अन्य किन्हीं लोगों द्वारा की गई हिंसाकी जिम्मेदारी लेनेसे इनकार करके कोई कमजोरी नहीं दिखायेगी और इस तरह घड़ीकी सुई पीछेकी ओर घुमानेकी कोशिश नहीं करेगी।[2]

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १७–७–१९२१

१. मूल हिन्दीमें लिखे इस लेखका **आज**में उपलब्ध यह पाठ भाषाके साधारण सुधारोंके साथ यहाँ दिया गया है।

२. यह सन्देश उर्दू और हिन्दी, दोनोंमें प्रचारित किया गया था और स्थानीय नेताओंने अलीगढ़-काण्डकी सचाईका पता लगानेकी बड़ी मुस्तैदीसे कोशिश की थी।

१८८. भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

१६ जुलाई, १९२१

श्री गांधीने कहा : हमने जिन बड़े-बड़े कामोंका बीड़ा उठाया था उनमें से एक पूरा हो गया है, लेकिन अभी एक बड़ा और कहीं मुश्किल काम, जो हमें स्वराज्य हासिल करनेसे पहले पूरा करना है, बच रहा है। जिन लोगोंने एक करोड़ रुपये इकट्ठे करनेका काम हाथमें लिया है वे लगातार मेहनत और कोशिश करके उसे पूरा कर सकते हैं, इनके बिना दुनियामें कुछ भी हासिल करना मुमकिन नहीं होता। इस काममें बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ हैं और इसमें जो त्याग करना पड़ेगा वह पैसा कमानेके श्रमसे अधिक ही है। यदि हम स्वराज्य हासिल करना चाहते हैं, यदि हम चाहते हैं कि खिलाफत और पंजाबके उन अन्यायोंका प्रतिकार हो जिन्हें अब वाइसराय तक हमसे भूलने और माफ करनेके लिए कह रहे हैं, तो हमें अपने देशके लिए यह त्याग करना ही पड़ेगा; इसके सिवा कोई चारा नहीं है। हम कमसे-कम समयमें स्वराज्य चाहते हैं। बिना जी-तोड़ मेहनतके उसे हासिल नहीं किया जा सकता। और यदि मुझे सच-मुच लगता कि यह कर्त्तव्य पूरा करने लायक शक्ति हमारे अन्दर नहीं है, तो मैं आपसे कभी स्वराज्यकी बात ही न करता। लेकिन आपके अन्दर शक्ति मौजूद है, आपको सिर्फ उसको पहचानना है, महसूस करना है। हृदयकी विशालतासे प्रेरित होकर एक बहनने मेरे पास इस कोषमें एक साड़ी भेजी है, जिसकी कीमत करीब ९०० रुपये बैठती है। उसका वजन करीब १२ से १५ पौंड है। मुझे अचम्भा तो इस बातका है कि वे इतनी भारी साड़ी पहनती कैसे होंगी। उसमें जरीका काफी काम है। इसमें रत्ती-भर भी शक नहीं कि यह साड़ी देते वक्त उनका दिल भारी हो आया होगा। वे इस साड़ीको पहनकर काफी खुशी महसूस करती होंगी। आप जितनी बहनें यहाँ मौजूद हैं, आपको अपने देशकी खातिर खद्दरकी साड़ियाँ ही पहननी चाहिए; वे इतनी भारी भी नहीं होतीं।

बहनोंने खुशी-खुशी धन और अपने आभूषण दिये हैं। मैं जानता हूँ कि अपने बढ़िया वस्त्रोंको इस तरह दे देना कोई आसान काम नहीं है। पर मुझे उम्मीद है कि आप यदि इस राष्ट्रीय प्रयत्नमें अपना पूरा-पूरा योग देना चाहती हैं तो यह त्याग अवश्य करेंगी। एक करोड़ रुपयेका योगदान काफी अच्छा योगदान है। इससे ज्ञात होता है कि लोग स्वराज्य हासिल करनेकी जरूरत कितनी गहराईसे महसूस करते हैं, लेकिन यह त्याग नहीं है। विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारमें अपने सुख और अपनी रुचिको भी छोड़ना पड़ेगा। स्त्री-पुरुष दोनोंसे यह त्याग अपेक्षित है। आज मेरे पास लन्दनसे हाल

१. यह सभा परेलके मोरारजी गोकुलदास हॉलमें हुई थी।

ही में लौटे दो भारतीय नवयुवक आये थे। उनमें एक बंगाली था और दूसरा पारसी। दोनों बड़े सच्चे दिलसे बातें कर रहे थे। मैंने उनके कई सवालोंके जवाब दिये और उनसे सिर्फ एक सवाल पूछा : क्या वे अपने विदेशी वस्त्र छोड़नेके लिए तैयार हैं? उनकी बातोंमें कोई भी दुराव-छिपाव नहीं था और दोनों ही अपने देशसे प्रेम करते थे। दोनोंने स्वीकार किया कि विदेशी वस्त्रोंका त्याग ही उचित है। लेकिन उनमेंसे एकने कहा कि वह अपने-आपमें इतनी शक्ति महसूस नहीं करता कि विदेशी वस्त्र त्याग सके। पर इस बातको भी वह पूरी तरह मानता था कि यदि लोग विदेशी वस्त्रों-तकका त्याग नहीं कर सकते, तो इसका मतलब होगा कि वे स्वराज्यके लिए तैयार नहीं हैं।

मैंने स्वराज्य लेनेके लिए एक सालकी अवधि निश्चित की है। मैं उसका पूरा महत्व और उसका अर्थ समझता हूँ। मैंने उसके लिए कुछ निश्चित शर्तें रखी हैं। कांग्रेसने उनको अपने प्रस्तावमें शामिल कर लिया है। भारतकी बुराइयोंकी क्या दवा होनी चाहिए, इसे मैं उतनी ही अच्छी तरह जानता हूँ जितना कि एक डाक्टर अपने मरीजके रोगके बारेमें जानता है। लेकिन यदि मरीज डाक्टरकी बतलाई दवा न करे और इसलिए चंगा न हो पाये, तो उसमें डाक्टरका क्या दोष? मैंने एक दवा बताई है, जिसे मैं समझता हूँ कि भारत बिना-किसी ज्यादा कठिनाई के सेवन कर सकता है और उसे पचा सकता है। कांग्रेसने देशके सामने जो कार्यक्रम रखा है वह अपने आपमें सचमुच त्रुटि रहित है। उस कार्यक्रममें स्वदेशी भी शामिल है। स्वदेशीको आधे मनसे अपनाकर काम नहीं चलेगा, उसे पूरी तौरपर, हर क्षेत्रमें स्वीकार करना पड़ेगा।

इस विषयमें अपनी पूरी रजामंदी जाहिर करनेका शानदार मौका आपके सामने है। पहली अगस्त आ रही है। क्या हमने अपने-आपको इस योग्य बना लिया है कि हम लोकमान्यकी पुण्य-तिथि मना सकें? क्या हम इस योग्य बन पाये हैं कि लोक-मान्यके दिये हुए मन्त्रका उच्चार कर सकें? जिस तरह हर हिन्दूको गायत्री-पाठ करनेसे पहले आचमन आदि करके शुद्ध होना पड़ता है, और मुसलमानोंको नमाज पढ़नेसे पहले वजू करनी पड़ती है, तभी उसमें असर पैदा होता है। इसी तरह श्री तिलक द्वारा दिये गये स्वराज्य-मन्त्रका उच्चार करने योग्य बननेके लिए पहली अगस्त-को आपको खादी पहननी पड़ेगी। मेरा खयाल है कि भारतको आर्थिक रूपसे स्वाधीन बनाने और उसके जरिये स्वराज्य हासिल करनेके लिए हर भारतीय द्वारा विदेशी वस्त्रोंका त्याग करना एक सबसे जरूरी शर्त है। इसके अनुरूप अपने-आपको बनाना भारतकी सामर्थ्यसे बाहर नहीं है। आशा है कि लोग इसके इच्छुक भी हैं।

मैं आप लोगोंका ध्यान मेसर्स शॉ वैलेस ऐंड कम्पनी द्वारा श्री कशालकरको कोई जवाब देनेका अवसर दिये बिना बरखास्त किये जानेकी ओर भी दिलाना चाहता हूँ। उनका कसूर सिर्फ इतना था कि उन्होंने हाथकी कती खादीकी टोपी पहननेका

साहस किया था। कम्पनीका मैनेजर इसको बरदाश्त नहीं कर पाया और चूँकि नवयुवक कशालकर झुकनेके लिए तैयार नहीं हुआ, इसलिए उसे बरखास्त कर दिया गया। अपने साहसके लिए वह हमारी बधाईका पात्र है। क्या यह घटना भारतकी गुलामीकी द्योतक नहीं है? दूसरे किसी देशमें यदि किसी मैनेजरने इतने मनमाने ढंगसे निजी भूषाके बारेमें अपने किसी कर्मचारीकी स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप किया होता, तो उसे या तो क्षमा-याचना करनी पड़ती या खुद बरखास्त होना पड़ता। अब भी समय है यदि मेसर्स शॉ वैलेस ऐंड कम्पनीके सभी कर्मचारी पारस्परिक सहयोग और आत्म-सम्मान-की भावना महसूस करते हों तो वे सभी, विरोधस्वरूप ही सही, खादीके वस्त्र और टोपियाँ पहनना शुरू कर दें और श्री कशालकरको बहाल करनेकी माँग करें।

मैं इस बरखास्तगीका बड़ा महत्त्व मानता हूँ। मैनेजरने एक असहाय भारतीय कर्मचारीको बरखास्त करके पूरे मामलेको एक राजनीतिक पुट दे दिया है और श्री कशालकर द्वारा किये गये एक राष्ट्रीय कार्यके प्रति रोष प्रकट करके सारे राष्ट्रका अपमान किया है। और इस बरखास्तगीसे यहाँ मौजूद सभी श्रोताओंका सम्बन्ध है। यदि अन्य कोई कारण न भी माना जाये, तो श्री कशालकर-जैसे एक नवयुवकको अपमानसे बचानेके लिए ही क्यों न हो, कर्मचारियोंको खादीके वस्त्र और टोपियाँ पहनना अवश्य शुरू कर देना चाहिए। इसी प्रकारकी घटनाओंसे आँका जायेगा कि आपकी राष्ट्रीय भावना कितनी बलवती है। श्री कशालकर-जैसे सभी अन्याय-पीड़ित व्यक्तियोंकी रक्षा करनेकी हमारी क्षमताका अर्थ स्वराज्य हासिल करनेकी हमारी योग्यता है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १७–७–१९२१

१८९. असहयोग समितिका प्रतिवेदन

केन्द्रीय खिलाफत समितिकी असहयोग समितिका प्रतिवेदन इस प्रकार है:

अंकाराकी टर्की सरकारके सम्बन्धमें उत्पन्न खतरनाक परिस्थितिको देखते हुए, केन्द्रीय खिलाफत समितिने हमसे सामना करनेका सबसे अच्छा तरीका क्या होगा यह पूछा है।

चूँकि हमारी समिति केवल असहयोग सम्बन्धी विषयोंपर विचार करनेके लिए नियुक्त की गई थी, इसलिए असहयोगके अलावा दूसरे साधनोंपर विचार करनेका हमें कोई अधिकार नहीं है। लेकिन हम समझते हैं कि अहिंसक असहयोग आन्दोलनने जो सफलता अबतक प्राप्त कर ली है उसे देखते हुए असहयोगके अलावा दूसरे किन्हीं साधनोंपर विचार करना अनावश्यक भी हो गया है। इस महीनेके अन्तमें जब कांग्रेस-के बेजवाड़ा कार्यक्रमके पालन किये जानेके परिणामोंका लेखा-जोखा किया जायेगा,

तब हम असहयोगकी सफलताओंको और ज्यादा अच्छी तरह आँक सकेंगे और तभी हम अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी सलाहसे परिस्थितिका सामना करनेके लिए उपयुक्त कदम उठा सकेंगे। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक २२ जुलाईको लखनऊमें होने जा रही है।

सविनय अवज्ञा

असहयोगके सम्बन्धमें तो यह स्पष्ट है कि हमें अपना हर कदम भारतीय जनताकी तैयारीको देखकर ही निश्चित करना चाहिए। यह सुझाव दिया ही जा चुका है कि पिछले तीन महीनोंके दौरान जो प्रगति हुई है उसे देखते हुए सविनय अवज्ञा शुरू करना बिलकुल उचित जान पड़ता है। टर्कीके लोगोंके बारेमें ब्रिटेनकी सरकारने एक बार फिर ऐसा रुख अपनाया है जिससे मुसलमानों और भारतीयोंके मतके प्रति घोर अवहेलना प्रकट होती है। साथ ही ब्रिटिश सरकारने भारतमें असहयोग आन्दोलनके पूर्णतः अहिंसक होनेपर भी उसके दमनके लिए कानूनका जो घोर दुरुपयोग किया है, जान पड़ता है, उसके कारण हमें जल्दी ही सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू करनेपर विवश होना पड़ेगा। जो भी हो, चूँकि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी लखनऊकी अपनी बैठकमें इस प्रस्तावपर विचार करनेवाली है, इसलिए उसके निर्णयोंतक रुके रहना ही ठीक होगा।

फिर भी हम यह बतला देना चाहते हैं कि यूरोपकी परिस्थितिसे लोगोंका उत्साह बढ़ना चाहिए, खास तौरसे मुसलमानोंका। उनको देशके सामने प्रस्तुत कार्यक्रमके सिलसिलेमें — अर्थात् खिताबों, परिषदों, स्कूलों-कालेजों, न्यायालयों और रंगरूटोंकी भरतीसे सम्बन्धित कार्यक्रमकी ओर — और अधिक जोरसे काम करनेके लिए उत्साहित होना चाहिए। हमारी राय है कि जो लोग सेनामें भरती होते हैं उन्हें अब भरतीसे पहलेसे अधिक बचना चाहिए। हम समझते हैं कि यदि ब्रिटिश सरकार टर्कीके खिलाफ लड़नेके लिए कहे तो उसे सहायता देनेसे इनकार करना भारतीय सैनिकोंका कर्त्तव्य है। मुसलमान उलेमाओंको पूरी-पूरी कोशिश करनी चाहिए कि मुसलमान सैनिकोंको इस सम्बन्धमें इस्लामके धार्मिक आदेश भली-भाँति समझाये जायें; और अब सारे असहयोगियोंको भी चाहिए कि वे टर्कीसे लड़ाई शुरू होनेकी सूरतमें कांग्रेस कार्य-समिति द्वारा भारतीय सैनिकोंके कर्त्तव्यके बारेमें दी गई रायपर खास जोर दें।

असहयोग कार्यक्रमकी मुख्य बातें

सबसे पहले तो लिखित रूपमें हम अपना यह विश्वास प्रकट करना चाहते हैं कि बेजवाड़ा कार्यक्रमपर ज्यादा मुस्तैदीसे अमल करना नितान्त आवश्यक है क्योंकि टर्की और इस्लामके बारेमें ब्रिटिश सरकारका रवैया निःसन्देह वैमनस्यपूर्ण मालूम पड़ता है उससे हमें सफलतापूर्वक जूझना है। किसी भी बालिग भारतीय युवक या युवतीको कांग्रेसके रजिस्टरमें अपना नाम लिखाने या तिलक स्वराज्य-कोषमें चन्दा देनेमें तनिक भी विलम्ब नहीं करना चाहिए। हम अपने उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए हर घरमें चरखा चलवाना, सर्वत्र खादीका इस्तेमाल करना और विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण बहिष्कार करना नितान्त आवश्यक मानते हैं। साथ ही सभी लोगों, खासकर मुसलमानोंको

खिलाफत समितिका सदस्य बनना चाहिए और स्मरनाके पीड़ित लोगोंकी सहायताके लिए खुले हाथो चन्दा देना चाहिए, अन्यथा अंकाराकी टर्की सरकारको उनपर काफी खर्च करना पड़ेगा। उसका हाथ पहले ही काफी तंग है।

इसलिए हमारा कहना है कि इन दिशाओंमें दूने उत्साहसे प्रयास किया जाना चाहिए। हमें आशा है कि जनता परिस्थितिकी गम्भीरता और अविलम्बनीयताके अनुरूप ही तत्परता दिखायेगी। सारी जनता यह समाचार पाकर बहुत क्षुब्ध हो उठी है कि ब्रिटेन टर्कीके खिलाफ और भी वैमनस्यपूर्ण कदम उठानेकी बात सोच रहा है और हम इस विरोध-भावनाको ऐसा रूप देना अपना कर्त्तव्य समझते हैं कि वह अधिक-से-अधिक हितकारी हो, जिससे कि भारत खिलाफत और पंजाबके अन्यायोंका प्रतिकार करानेके अपने महान् उद्देश्य और स्वराज्य लेनेके अपने महानतम उद्देश्यको शीघ्रतासे प्राप्त कर सके। मजिल दूर नहीं है, लेकिन टर्कीके सर्वथा अशक्त बननेसे पहले उसकी सहायतार्थ पहुँचनेके लिए अधिकसे-अधिक प्रयत्न करना जरूरी है। हर मुसलमान-को इस आशंकाको देखकर असहयोग कार्यक्रमको पूरा करनेकी दिशामें जी-जानसे जुट जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-७-१९२१

१९०. जलायें किसलिए?

खम्भातसे एक बहनने लिखा है और अन्य स्थानोंसे भी पत्र आये हैं, उनमें पत्र-लेखक लिखते हैं कि विदेशी कपड़ोंको जलानेके बदले उन्हें गरीबोंको दे देना चाहिए अथवा बाहर, विदेशोंको भेज देना चाहिए। अच्छी तरह से सोच-विचार करने पर भी मुझे यही लगता है कि विदेशी वस्त्रको जला ही देना चाहिए। यदि हम मानते हों कि विदेशी कपड़ा पहनना पाप है, इसीसे देश कंगाल हुआ है, इससे अनेक बहनोंको अपना घरबार तजना पड़ा है तो हमें विदेशी कपड़ेको मैल समझना चाहिए तथा जिस तरह हम अपना मैल दूसरोंको नहीं देते उसी तरह विदेशी कपड़े रूपी इस मैलको भी हमें औरोंको देनेकी बात नहीं सोचनी चाहिए। हमने यदि विदेशी कपड़ोंको त्यागनेका निश्चय न किया होता तो हम खुद ही उन कपड़ोंको पहनकर फाड़ देते। अब अगर हमने उनका त्याग करनेका निश्चय किया है तो हमें उनका पूर्णतया त्याग करना चाहिए। उन्हें किसीको पहननेके लिए देना तो उनका उपयोग करनेके समान है, क्योंकि उन्हें किसीको देकर हम उसका पुण्य लूटना चाहते हैं। मुझे लगता है कि हमें वैसे फलका अधिकार नहीं है। हम जैसे सड़े हुए अनाजको फेंक देते हैं वैसे ही हमें विदेशी कपड़ोंको भी फेंक देना चाहिए। हिन्दू, मुसलमान, पारसी सबके लिए विदेशी कपड़ा हराम होना चाहिए। और यदि हम ऐसा मानें तो उन कपड़ोंका कतई उपयोग न करें। यह भावना उत्पन्न करनेके लिए मैं अपने पास पड़े विदेशी कपड़ोंका त्याग करना और उन्हें जला डालना आवश्यक समझता हूँ। उससे जो भावना उत्पन्न होगी उसे मैं मूल्यवान मानता हूँ। मैं लोगोंमें इस हदतक जोश फैलानेकी जरूरत महसूस करता

हूँ कि विदेशी कपड़ेके सम्बन्धमें हमे धोखा देनेकी किसीकी हिम्मत न हो। इसीसे अगर हम पहली अगस्तको पहनने योग्य सभी विदेशी कपड़ोको जला डालें तो मैं समझूंगा कि हमने आत्मशुद्धि कर ली है।

विदेशी कपड़ेके प्रति अरुचि पैदा करनेकी हमे जरूरत है। कोई-कोई मुझसे पूछते हैं कि क्या इससे विदेशियोंके विरुद्ध अरुचिका भाव उत्पन्न नही हो जायेगा। यह सघर्ष दुष्टताकी निन्दा करते हुए भी दुष्टके प्रति प्रेमभाव रखनेका पाठ सिखानेका संघर्ष है। मनुष्य जितनी दुष्टता करता है उतना दुष्ट होता नही। हम सब भूलसे भरे हुए हैं, तो फिर एक-दूसरेका तिरस्कार क्यों करे? दुष्टकी भी सेवा करना, सब धर्मोंकी शिक्षा है। धर्मोंकी परीक्षा उसके राग-द्वेषादिको रोकनेमें ही है। क्रोधका कारण मिलनेपर भी जो क्रोध नहीं करता उसी व्यक्तिने प्रभुको जाना है। मनुष्य-मात्रका कार्य प्रभुको जान लेना है। क्रोधको रोकना केवल संन्यासीका ही धर्म नही है। संन्यासीको तो अन्य अनेक कठोर व्रतोंका पालन करना होता है। अतएव हम कपड़े तो जलायें लेकिन कपड़ा बनानेवालो पर क्रोध न करें। मैनचेस्टर और जापान कपड़ा भले बनायें किन्तु यदि हम न ले तो वे क्या कर सकते हैं? हम मद्यपान न करें तो मद्य-विक्रेता क्या करेंगे? विवेकपूर्वक विचार करें तो स्वराज्यकी चावी हमारी अपनी ही जेबमें है। हमें शराबकी लत लगी हुई है, उसे जला डालना चाहिए; रेशमी बारीक कपड़ेका शौक है, उसे भस्म कर देना चाहिए; अनेक तरहके पकवान खानेका शौक है, उसे छोड़ देना चाहिए। जबतक हम सब स्त्रियोको बहनके समान मानना नहीं सीखते तबतक हमें आँखोंपर पट्टी बाँध लेनी चाहिए। शास्त्रकारोंने जिस-जिस वस्तुके सम्बन्धमें अरुचि उत्पन्न करनी चाही है उस-उस वस्तुका इतना स्पष्ट चित्रण किया है कि उसपर मनन करनेवाले व्यक्तिके मनमें उसके प्रति अरुचि उत्पन्न हुए बिना नहीं रहती। लेकिन क्या उसके कर्त्ताके सम्बन्धमें अरुचि उत्पन्न करना उचित है? क्या हमें शराब बनानेवालों, विदेशी रेशम बनानेवालो, पकवान पकाने-वालों और सौन्दर्यमयी स्त्रीको जला डालना चाहिए अथवा हमें अपने विषयोंको और उनकी ओर प्रलोभित करनेवाली चीजोंको जलाना चाहिए। स्वराज्य कौन पायेगा? शराब छोड़नेवाला अथवा शराब बनानेवाले को जलानेवाला व्यक्ति?

लेकिन जो कपड़े जलाकर कपड़ा छोड़ना न सीखे बल्कि कपड़ा बनानेवाले को गाली देना सीखे तो उसे कपड़े जलाने ही नहीं चाहिए, उसे वैसा करनेका अधिकार नहीं है।

इतना कहनेके बाद भी जो लोग कपड़े जलानेकी अपेक्षा उन्हें बाहर भेजनेका विचार रखते हैं, वह भी प्रशंसनीय है। हमारे मुसलमान भाई स्मरना कपड़ा भेज रहे हैं, वहाँ भेजनेके लिए अगर हम विदेशी कपड़ा दें तो भी हमारा उद्देश्य पूर्ण हो जायेगा। परदेशी कपड़ेका त्याग करते हैं अर्थात् हम अपना प्रथम कार्य पूरा करते हैं। त्याग किये गये कपड़ोंके सम्बन्धमें अगर मतभेद हो तो जिसे जैसा रुचे वैसा वह कर सकता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७–७–१९२१

१९१. व्यापारी क्या करें ?

जो व्यापारी विदेशी माल बेचते हैं वे उसे कहाँ फेंक दें? वे भिखारी बन जायें तो देशका क्या होगा? क्या उन्हें नोटिस नहीं मिलना चाहिए?

विदेशी मालका व्यापार करना तो सदा ही बुरा काम था। उसी व्यापारके लालचमें पड़कर तो हम फँसे, गुलाम बने, किसानोंको बिना कामके चार महीने रहना पड़ा और अकालके लिए जरा भी पूँजी न रही। विदेशी व्यापारसे हिन्दुस्तानका सत्यानाश हो गया। ऐसा व्यापार करनेवाले क्या करें, यह प्रश्न पूछा ही नहीं जाना चाहिए। उन्हें शूरवीर बनना चाहिए। सभीका देशहितको समझना और उसकी खातिर स्वार्थत्याग करनेके लिए तैयार होना, इसीका नाम स्वराज्य-शक्ति है। उन्हें इस बातपर विचार करना चाहिए कि उन्होंने इतने दिन व्यापार कैसे किया, और अब अपने सिरपर आनेवाली मुसीबतको झेल लेना चाहिए।

इसके अतिरिक्त विदेशी कपड़ेको निकालना कोई बहुत बड़ी बात नहीं है। उनका माल बाहरके देशोंमें भी खप सकता है। थोड़ा-बहुत माल सामान्य रूपसे बाहरके देशोंके कामका नहीं होता, लेकिन उसका कुछ-न-कुछ उपयोग हो सकता है, यह बात व्यापारियोंको बतानेकी जरूरत नहीं है।

व्यापारी भिखारी हो जायेंगे ऐसी बात नहीं, पैसा तो हाथका मैल माना गया है। व्यापारी आज कमाता है और कल गँवाता है। पैसा कमानेकी शक्तिमें ही व्यापारीकी रक्षा और निर्भयता समाहित है। पैसा तो आनी-जानी वस्तु है किन्तु व्यापार करनेकी शक्ति स्थिर रहनेवाली वस्तु है। एक व्यापारमें नुकसान उठानेवाला व्यापारी दूसरेकी तलाश कर लेता है। 'व्यापारी-बच्चा कभी भीख नहीं माँगेगा' ऐसे बहादुरीपूर्ण वचन मैंने अनेक व्यापारियोंके मुँहसे सुने हैं।

व्यापारी विदेशी मालके व्यापारको त्यागकर खादीका व्यापार क्यों नहीं कर सकता? साठ करोड़ रुपयेका नया माल तैयार करना है, क्या इस उद्योगसे हजारों व्यापारी अपनी आजीविका प्राप्त नहीं कर सकते? 'क्या करेंगे' यह वाक्य तो आलस्यका परिचायक है।

सच तो यह है कि विदेशी कपड़ेके बहिष्कारमें हमें स्वराज्यकी बात सूझी ही नहीं है और जबतक जनताकी नस-नसमें स्वदेशीकी उत्कट भावना व्याप्त नहीं हो जाती तबतक बहिष्कार सफल नहीं होगा और तबतक स्वराज्य भी नहीं मिलेगा। इसलिए देशकी खातिर व्यापारी-वर्गमें कपड़ेके व्यापारकी आहुति देनेका जोश आना चाहिए।

व्यापारियोंको बहिष्कारका नोटिस नहीं मिला, यह कहना अज्ञानका परिचायक है। नोटिस तो गत सितम्बरसे मिल चुका है। उसकी चर्चा भी तभीसे चली है। लेकिन व्यापारी सावधान नहीं हुए। कांग्रेस प्रस्ताव पास करती रहती है और वे प्रस्ताव विस्मृतिके गर्तमें विलीन हो जाते हैं, इसलिए उनकी कौन परवाह करता है? समय बदल गया है; इसका ज्ञान व्यापारियोंको नहीं हुआ। इसमें किसका दोष है?

सितम्बरसे मैंने लगभग प्रत्येक सभामें विदेशी कपड़ेके त्यागकी बात कही है। जो अनुचित धंधा करते है, जो व्यसनी है, जो व्यभिचारी है, जो अन्त्यजों आदिसे द्वेष करनेवाले है उन्हें जबसे असहयोग, आत्मशुद्धिका यज्ञ शुरू हुआ तभीसे नोटिस मिल चुका है। उनमें से जिस-जिस बातकी जरूरत जान पड़ेगी उस-उस बातपर समयानुसार अधिक जोर दिया जायेगा। लेकिन सबको यह समझ लेना चाहिए कि दुराचार, लोककल्याणके विरुद्ध अर्थसंग्रह, छोड़ दिया जाना चाहिए ऐसा नोटिस तो सबको मिल गया है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७–७–१९२१

१९२. टिप्पणियाँ

अनुकरणीय

वराड़ गाँवमें जो घटना घटी और जिसका हाल समाचारपत्रोंमें श्री कुँवरजी विट्ठलभाईने प्रकाशित कराया है उसको पढ़कर किस असहयोगीको हर्ष नही होगा? अध्यापक मकनजीको उनके धैर्य और क्षमाशील स्वभावपर धन्यवाद देना उचित है। जब हम सब लोग इसी प्रकार धैर्यपूर्वक मार खाना सीख जायेंगे तब स्वराज्य मिलनेमें विलम्ब न होगा। जिस भाईने अज्ञानके कारण अध्यापक मकनजीपर अत्याचार किया उसको बराड़ गाँवके लोग सुगमतासे दण्ड दे सकते थे, किन्तु फिर भी उन्होंने अपने रोषपर अंकुश रखा इससे उनकी शुद्ध वीरता प्रकट होती है। अध्यापकके साथी पिटनेके डरसे उनको छोड़कर भाग गये; उनके सम्बन्धमें चेतावनी देनेकी जरूरत है। हमें चाहे पिटनेका डर भी हो, फिर भी हमें अपने साथीको छोड़कर नही भागना चाहिए, बल्कि अपने शरीरको जोखिममें डालकर भी उसकी रक्षा करनी चाहिए। रक्षा करनेमें मारनेकी बजाय मरनेके साहसकी जरूरत होती है। युद्धमें 'अपलायन' शूरवीरका — क्षत्रियका — गुण माना गया है। चारों वर्णोंके लोगोंमें से प्रत्येकमें कम या अधिक मात्रामें चारों वर्णोंके ही गुण होने चाहिए। ब्राह्मणों और वैश्योंके लिए वीरताकी आवश्यकता नहीं है अथवा उनमें वीरता नहीं हो सकती, ऐसा मानना केवल अज्ञान है। हममें से प्रत्येक व्यक्तिमें अपनी और अपने साथियोंकी रक्षा करनेकी शक्ति अवश्य होनी चाहिए। जो दूसरोंपर प्रहार करके अपनी रक्षा करते है उसके सम्मुख स्वयं मरनेका जोखिम भी होता है और वीरता इस जोखिमके अनुपातसे ही नापी जाती है। इतनी आलोचना करनेका मेरा अभिप्राय यह नही है कि मैं अध्यापकके साथीके दोष बताना चाहता हूँ। हमको ये सब नये अनुभव होते रहते हैं। जबतक हमारे हृदयमें इतना साहस नहीं आता तबतक ऐसी भूलें तो होंगी ही। हम दूसरेको मारनेका दोष करके अपनी अहिंसाकी प्रतिज्ञाको भंग न करें तो हमारे ऊपर किसी प्रकारका जोखिम नहीं आयेगा।

अली भाइयोंपर आरोप

एक भाई लिखते हैं कि वे जब जूनके महीनेमें [तिलक स्वराज्य-कोषके लिए] रुपया इकट्ठा कर रहे थे तब उन्होंने अली भाइयोके सम्बन्धमें यह आरोप सुना था कि वे लोग खिलाफत समितिके रुपयोंमे से अपने खर्चके लिए हर महीने छः-सात हजार रुपये लेते हैं। एक अन्य सज्जन लिखते हैं कि उनका प्रतिदिनका खर्च नब्बे रुपये आता है और यह खर्च खिलाफत समिति उठाती है। इस तरहकी आलोचना मैंने बहुतसे लोगोके मुँहसे सुनी है, इसलिए मैं इन दो पत्रोंका उल्लेख कर रहा हूँ। मुझे मालूम है कि यह बात बिलकुल झूठ है। अली भाई अपना खर्च खिलाफत समितिसे लेते ही नही। उन दोनोका खर्च उनके निजी मित्र चलाते हैं और वह खर्च होता भी कम है। इसकी अपेक्षा यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि इन दोनों भाइयोंने देशके लिए और इस्लामके लिए फकीरी ले ली है। चार वर्ष पहले उनका जितना खर्च था और वे जिस तरह रहते थे उससे उनकी आजकी खादीकी पोशाक और आजके सादा खानपानकी क्या तुलना!

'स्वदेशी' टोपी

देशद्रोही अथवा निरे स्वार्थी लोगोके कारण हम लोग गुलाम हुए और स्वार्थका त्याग न कर सकनेके कारण इस समय भी गुलाम बने हुए हैं। जिस समय स्वदेशीके प्रचारका काम जोरसे चल रहा है उस समय धोखेबाज लोगोंने अपनी सरगर्मी बढ़ा दी है। मेरे पास तीन शिकायतें आई हैं। बम्बईमें कुछ लोग गली हुई विदेशी बनात, विदेशी साटन और विदेशी धागेका प्रयोग करके टोपियाँ बना रहे हैं और स्वदेशी बताकर मेरे नामका उपयोग करके बेच रहे हैं। ये टोपियाँ काली हैं। जो लोग स्वदेशी टोपियाँ पहनते हैं उनको मेरी सलाह है कि वे सफेद और खादीकी बनी हुई टोपियाँ ही पहनें। सफेद टोपी जितनी सुन्दर, साफ-सुथरी और सुविधाजनक होती है उतनी रंगीन टोपी नहीं होती। यह टोपी रोज धोई जा सकती है। काली टोपीमें मैल खपता है और बदबू आने लगती है। जिन टोपियोंमें सदा पसीना बसा रहता है उन टोपियोंको सफाई-पसन्द लोग कभी नही पहनेंगे। जिस टोपीमें चमड़ा लगा होता है वह दिमागके लिए भी ठीक नहीं होती। हिन्दुओंको तो चमड़ा लगी हुई टोपी सुहा ही कैसे सकती है? अंग्रेज चमड़ा लगी टोपी पहनते हैं; किन्तु वे तो जब बाहर जाते हैं तभी उसको लगाते हैं और थोड़े-थोड़े दिन बाद उसे बदलते भी हैं। हम लोग तो एक ही पगड़ी या टोपी वर्षों पहनते हैं और उसे हर समय सिरपर लगाये रहते हैं, इस कारण हमारे लिए चमड़ा लगी पगड़ी या टोपी अवश्य ही असह्य होगी। खादीकी टोपी साफ-सुथरी और हलकी होनेसे बिलकुल हानिरहित होती है। फिर यदि खादी बहुत मोटी हो तो उसका अच्छेसे-अच्छा उपयोग टोपियाँ बनानेमें ही होता है; उसका इससे अच्छा उपयोग और क्या किया जा सकता है? जिन लोगोंको सिरसे लेकर पैरतक खादी पहननेका शौक हो गया है वे खादीका व्यवहार सिरसे ही आरम्भ करें। इस खादीकी टोपीको अमीर और गरीब सभी पहन सकते हैं। अमीर अपनी खादीकी टोपीको रोज धोयेगा, उसमें दर्जी बेलबूटे बना देगा और उसमें कई तहें बना देगा। टोपीमें इस तरहका

फेरफार भले ही हो, किन्तु सभीके सिरोपर टोपी एक ही तरहकी हो इस बातका ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिए। अन्तमें निर्णय एक ही होना चाहिए कि केवल खादीकी ही टोपी स्वदेशी मानी जाये। जिस टोपीपर कोई छाप लगानेकी जरूरत न हो, जिसे बालक भी पहचान सकें, स्वदेशी टोपी ऐसी ही होनी चाहिए। जिस तरह हम लोग अपने मस्तिष्कमें से छल-कपट और आडम्बर निकालकर स्वराज्यवादी बन सकते है उसी तरह हमें टोपीमें से भी छल-कपट और आडम्बरको निकाल देना चाहिए। जो लोग स्वदेशीके नामपर विदेशी टोपियाँ बेचते है उनसे मेरा निवेदन है कि यदि वे अपना धन्धा ईमानदारीसे कर ही न सकते हो तो अपनी बेईमानीका प्रयोग इस देशके अहितके काममें तो न करें। चोरोंकी भी कोई निश्चित नीति होती है। चोर चोरका माल नहीं चुराता। गरीबोंके घर भी चोरी न करनेवाले चोर होते है। समस्त देशमें यह जो महायज्ञ चल रहा है ऐसेमें क्या हम स्वार्थ-सिद्धिके नीचतापूर्ण विचारको छोड़कर ऊँचे नहीं उठ सकते? मैं जनतासे साफ-साफ कहना चाहता हूँ जो लोग इस तरह जनसाधारणको ठगते हैं उनकी दुकानोंका सर्वथा बहिष्कार करना ही उचित है।

'स्वदेशी लट्ठा'

जो बात टोपीके सम्बन्धमें कही जा सकती है वही लट्ठेके सम्बन्धमें भी कही जा सकती है। शिमलासे पत्र मिला है कि वहाँ लोग जापानी लट्ठेपर से जापानकी छाप मिटाकर, उसे फिरसे धोकर, उसपर बम्बईकी छाप लगाकर विदेशी मालको स्वदेशी-के नामसे बेच रहे हैं और इसमें कुछ मिल भी हिस्सा ले रहे हैं। मुझे आशा है कि इस मौकेपर कमसे-कम मिल-मालिक तो देशको धोखा देनेमें भाग नहीं लेंगे। इस शुद्ध प्रवृत्तिके समय देश उनसे सहायताकी ही आशा करता है।

खरीददारोंको भी सावधान रहनेकी जरूरत है। यदि लोग बारीक कपड़ेका मोह छोड़ दें तो उनके ठगे जानेकी सम्भावना कम हो जायेगी। लोग तरह-तरहकी माँड़ी लगे हुए मालका त्याग करके स्वदेशी कपड़ेको परख सकेंगे। इन सब परेशानियोंसे बचनेका उपाय बिना धुली खादी खरीदना है। परन्तु हर गाँवके लोग यदि अपनी आवश्यकताकी खादी स्वयं बना ले तो कोई किसीको ठग ही नहीं सकेगा।

मिल-मालिक स्वदेशी आन्दोलनमें जितनी सहायता कर सकते हैं उतनी सहायता करना किसी दूसरेके लिए सम्भव नहीं। अहमदाबादके मिल-मालिकोंने तिलक स्वराज्य-कोषमें रुपया देकर अपना नाम उज्ज्वल किया है। श्री अम्बालाल साराभाईने निश्चय किया है कि वे कपड़ेके दाम नहीं बढ़ायेंगे और दुकान खोलकर फुटकर ग्राहकोंको थोकके भावमें कपड़ा देंगे। उन्होंने इस प्रकार स्वदेशीके आन्दोलनमें भाग लेनेका विचार प्रकट करके कारखानोंके मालिकोंका यश बढ़ाया है। चूँकि उन्हें असहयोगसे भय लगता है इसलिए वे हमें अपनी पूरी सहायता नहीं दे सके हैं। मैं आशा करता हूँ कि जब असहयोगी अपने संयमसे सबको निर्भय बना देंगे तब वे असहयोगमें भी पूरी तरह भाग लेंगे। इस बीच उनका वह पत्र, जिसमें उन्होंने भाव न बढ़ानेका निश्चय किया है, हमारे लिए निःसन्देह बहुत उपयोगी सिद्ध होगा।

मुझे आशा है कि अन्य मिल-मालिक भी श्री अम्बालालका अनुकरण कर स्वदेशी आन्दोलनमें सहायक होंगे।

कपड़ेके व्यापारियोंने तो मुझे यहाँतक बताया है कि कपड़ेके वर्तमान भाव न बढ़ाये जायें [वे घटाये जाने चाहिए]। वे आज तो जापानी मिलोंके मालके भावोंकी अपेक्षा भी ऊँचे हैं। मिल-मालिकोंको इस सम्बन्धमें सलाह करके कोई निर्णय अवश्य करना चाहिए।

उनको यह जाँच करनी चाहिए कि देशमें कितने कपड़ेकी जरूरत है। उसको देखकर ही उन्हें दूसरे देशोंसे कपड़ेके आर्डर लेने चाहिए। यहाँसे दूसरे देशोंको सूत भी बहुत जाता है। उसके निर्यातमें भी आवश्यक फेरफारकी जरूरत होगी। सम्भव है कि इस मामलेमें और भी अधिक विचार करनेकी जरूरत हो। कुछ लोगोंको ऐसा लगेगा कि दूसरे देशोंके लोगोंको हमारे कपड़ेकी जबतक माँग है तबतक जितना कपड़ा हम आजतक उनको देते आये हैं उतना तो हमें उनको देना ही पड़ेगा। हमारी स्थिति इंग्लैंडकी स्थितिसे भिन्न है। इंग्लैड और हमारे बीचके व्यापारमें एक तरहकी जबरदस्ती है। शायद दूसरे देशोंके साथ हमारे व्यापारमें यह जबरदस्ती न हो। दूसरे देशोंके साथ हमारे व्यापारिक सम्बन्धोंका मामला एक भिन्न और नाजुक मामला है। तीन बातोंके बारेमें कोई सन्देह नहीं है। अफीमका व्यापार नितान्त अनीतियुक्त है। इस सम्बन्धमें भारत सरकारने जो अन्याय किया है उसमें हम पूरी तरह शामिल रहे हैं। इसमें हमने चीनको नुकसान पहुँचाकर जो पाप किया है वह तो सदा हमारे सिर रहेगा ही। जबतक हिन्दुस्तानकी आवश्यकता पूरी नहीं होती तब-तक यहाँसे अन्न और कपास बाहर भेजना ही नहीं चाहिए। इसके विपरीत हमारे देशसे बहुत-सा अन्न लड़ाईके समय बाहर भेजा गया। कपासके सम्बन्धमें हमने कितना बड़ा अपराध किया है उसका ज्ञान तो हमें आगे चलकर होगा।

मिल-मालिकोंसे हमें जो आखिरी मदद माँगनी है वह है मालकी शुद्धताके सम्बन्ध-में। उन्हें विदेशी सूतका बना माल देशी कहकर नहीं बेचना चाहिए और कपड़ेमें बेहद माँड़ी नहीं लगानी चाहिए। मुझे आशा है कि मालिक आपसमें सलाह करके इन बातोंके सम्बन्धमें ऐसा निर्णय करेंगे जिससे देशके हितकी रक्षा हो।

किसका फायदा?

असहयोगसे धनी लोगोंके सिवा और किसको लाभ पहुँचेगा। असहयोगमें दंगे-फसाद या लड़ाई-झगड़े हुए तो उनमें कौन-कौनसे लोग शामिल होंगे?

इस तरहके दो प्रश्न एक पत्र-लेखकने पूछे हैं। यदि असहयोगसे ग़रीबोंको फायदा न पहुँचा तो उससे किसीको भी फायदा नहीं पहुँच सकता। असहयोगसे किसी भी योग्य संस्था अथवा व्यक्तिको हानि नहीं पहुँचेगी; बल्कि उससे सभीको लाभ पहुँचेगा। यह शस्त्र ऐसा है जिससे गरीबसे-गरीब आदमीके अधिकारकी रक्षा होगी।

असहयोगमें दंगे-फसाद या लड़ाई-झगड़े होते ही नहीं; इसलिए उनमें कौन भाग लेगा यह प्रश्न ही नहीं उठता। यदि असहयोगमें दंगे-फसाद या लड़ाई-झगड़े हों तो वह असहयोग नहीं रह जाता। वहाँ असहयोग समाप्त हो जाता है। यदि देशमें दंगे-फसाद

हो जायें तो समझना चाहिए कि देशने असहयोगका त्याग कर दिया है। ये दोनों परस्पर विरोधी बाते हैं। यदि दंगे-फसाद होंगे तो बदमाश लोग एक क्षणके लिए ऐसा सोच सकते हैं कि उनसे उन्हें फायदा पहुँचेगा। संसारमें सदा ऐसा होता आया है। जिस पत्र-लेखकने उक्त दो सवाल पूछे हैं वह इस बातको भूल गया है कि यह लड़ाई धर्मकी है, आत्मशुद्धिकी है, ईश्वरसे डरनेकी है और मनुष्यसे निर्भय रहनेकी है।

सरौतेके बीच सुपारी

एक सहानुभूति रखनेवाले पारसी भाईने पारसियोंकी सभाके बाद कुछ शंकाएँ उठाई थीं। ये शंकाएँ विचारणीय हैं इसलिए मैं उनके सम्बन्धमें यहाँ संक्षेपमें विचार करता हूँ। ये भाई कहते हैं:

> **(१) आपके जैसे विचार सब नेताओंके नहीं हैं; क्या आप यह जानते हैं? कदाचित् आप यह नहीं जानते कि बम्बईमें पारसियोंके सम्बन्धमें जो सामान्य विचार प्रकट किये जाते हैं उनमें द्वेष-भावना होती है। इसको रोकनेके लिए आप क्या उपाय कर रहे हैं और आगे क्या उपाय करेंगे?**
>
> **(२) पारसियोंकी स्थिति ऐसी ही है जैसे "सरौतेके बीच सुपारी" की होती है। उनमें पूरी देशभक्ति है, इसलिए वे देशका कार्य करना नहीं छोड़ सकते। उसी तरह वे अबतक जिस सुरक्षित व्यवस्थामें रहते आये हैं उसको खतरेमें डालना भी उन्हें कठिन लगता है। यदि आपके हाथसे देशकी बागडोर निकल जाये अथवा आपकी मृत्युके बाद देशमें इस महान् जागृतिके परिणामस्वरूप लोगोंमें समभाव न रहे तो पारसी लोग अवश्य ही कुचले जायगे।**

ये दोनों शंकाएँ ऐसी नहीं है जिन्हें यों ही छोड़ दिया जाये। मैंने पारसियोंके सम्बन्धमें जो विचार व्यक्त किये हैं वे विचार यदि समस्त समाजके न हों, मेरे अपने ही हों तो लेखकने ऊपर जो भय प्रकट किया है वह विचारणीय माना जाना चाहिए। यह बात तो सच है कि किसी-किसी क्षेत्रमें पारसियोंकी जो आलोचना की जाती है उसमें द्वेषभाव होता है। पारसियोंकी जाति बहुत छोटी जाति है इसलिए उनका दोष आसानीसे निगाहके सामने आ जाता है और उनके गुणोंपर परदा पड़ जाता है। इस कारण हमें सदा उनके गुणोंपर ही दृष्टि रखनी चाहिए। जब हम लोगोंके गुणोंको ही देखेंगे तभी उनपर हमारा प्रेम बढ़ेगा। पारसी लोग हमारे भाई हैं, यह समझकर हमें उनकी उदारता, धैर्यशीलता, विनय, बुद्धिमत्ता, आस्तिकता और भारी सादगीको अवश्य देखना चाहिए और उनके किसी भी ऐसे दोषको न देखना चाहिए जो हममें भी न हो। पारसी लोग भारतमें रहते हैं इससे भारतकी कोई हानि हुई है ऐसी कोई बात खयालमें आ ही नहीं सकती। उनके भारतमें आनेसे भारतको लाभ पहुँचा है, यह बात हम आसानीसे देख सकते है। पारसी लोगोंपर सबसे बड़ा आरोप तो यह है कि वे पाश्चात्य सभ्यताकी कोरी नकल कर रहे है और भारतीय सभ्यताको दिनपर-दिन छोड़ते जा रहे हैं। यदि हम गहराईसे सोचें तो हमें मालूम होगा कि यह बात भी सही नहीं है। उनपर पाश्चात्य सभ्यताका बहुत अवांछनीय असर हुआ है,

यह मै स्वीकार करता हूँ। किन्तु यह असर जितना हिन्दुओं और मुसलमानोंपर हुआ है उतना ही पारसियोंपर भी हुआ है। किन्तु उन्होने जो फेरफार किया है वह इस कारण स्पष्ट दिखाई देता है कि उनकी सख्या अधिक नही है और वे प्राय: बम्बईमें ही रहते हैं। इसके विपरीत जो हिन्दू और मुसलमान बिलकुल अग्रेज बन गये हैं, जहाँ-तहाँ बिखरे होनेसे निगाहमे कम आते है। मैं जो बात कह रहा हूँ उसको वे लोग पूरी तरह समझ जायेंगे जो इंग्लैंड हो आय है। वहाँ मैंने पारसियो, हिन्दुओं और मुसलमानोंमें कोई भी अन्तर नहीं देखा। वहाँ मुझे सभी पूरे अंग्रेज जान पड़े।

किन्तु अब?

जैसा हिन्दुओं और मुसलमानोंमे परिवर्तन हुआ है वैसा ही परिवर्तन पारसियोंमें भी आरम्भ हुआ है। पारसी नवयुवक सादगीके मन्त्रको समझ गये हैं। पारसी लड़कियाँ खादी पहनने लगी हैं। खादी पहननेकी जिनकी हिम्मत नहीं होती, वे देशी मिलोंके कपड़े पहनने लगी हैं। मेरी मान्यता यह है कि जब पारसी लोगोके मनके प्रवाहकी दशा बदलेगी तब क्षणभरमें महत्त्वपूर्ण फेरफार हो जायेगा। मेरे मनपर ऐसी छाप पड़ी है कि पारसी जाति कभी नमक-हराम नहीं हो सकेगी। यह सम्भव है कि वह अल्प-संख्यक होनेसे हिन्दुओ और मुसलमानोके समान मैदानमें आती हुई न जान पड़े; किन्तु मेरे मनसे यह बात नही निकलती कि उनके हाड़-माँसमें भी भारतीयता है और उन्हें भारतसे प्रेम है। पारसी लोग किसी मामलेमें पीछे रहे हो यह मैं तो जानता ही नहीं। इसलिए हिन्दुओं और मुसलमानोंको यह उचित है कि वे पारसियोंसे प्रेम करें और उनके दोष न निकालें और न उनकी ओर संकेत ही करें।

पारसी भाइयोंको डरनेकी कोई जरूरत नहीं है। जिन्होंने दूसरे लोगोंका कुछ नहीं बिगाड़ा है उनको किसी तरहका डर नहीं होना चाहिए। पैगम्बर जरतुश्तने यह शिक्षा दी है कि भलाईका बदला सदा भलाई होता है। एक छोटी जातिके मनमें जैसे भय होता है वैसे ही निडरता भी होती है। पारसियोंको यह जानकर कि उन्होंने भारतका कुछ बिगाड़ा नहीं है यह मान लेना चाहिए कि भारत उनका कोई अहित न करेगा। जिस जाति या मनुष्यने भारतके हितके विरुद्ध अपना स्वार्थ सिद्ध किया हो उसीको डरनेकी जरूरत है। निर्दोष मनुष्य अकेला भी हो तो भी उसे डरनेकी जरूरत नही। फिर यह लड़ाई आत्मशुद्धिकी लड़ाई है ऐसा मानकर मैं पारसी भाई-बहनोंको विनयपूर्वक यह सलाह देता हूँ कि वे इस लड़ाईमें पूरे मनसे शामिल हो जायें। इस लड़ाईमें हमें एक-दूसरेपर विश्वास करना चाहिए। इस तरहका विश्वास उत्पन्न करनेका उपाय है अपने मनमें आत्मविश्वास पैदा करना और आत्मविश्वास ही स्वराज्य है।

मर्यादाका उल्लंघन

कोई सज्जन मेरे चित्र कृष्णके रूपमे छापकर बेच रहे हैं। एक भाईने मेरा ध्यान इस ओर खींचा है और इसमें मर्यादाका जो उल्लंघन होता है उसे रोकनेके लिए मुझे लिखा है। मैंने ऐसा कोई चित्र नहीं देखा है। उसे देखनेकी मेरी इच्छा

भी नहीं है। मै मानता हूँ कि ऐसे कार्योंसे मर्यादा भंग होती है। हम भगवान् श्रीकृष्णको पूर्ण पुरुषोत्तमके रूपमे देखते है। हम उनको ईश्वरका अवतार मानते है। हम उन्हें 'श्रीमद्भगवद्गीता' का पूर्ण योगी मानते है। हम लक्ष्मीजीको सामान्य सांसारिक नारी नही मानते। इसके विपरीत हम उन्हें भगवान्की सम्पूर्ण माया और संसारकी धात्रीके रूपमें देखते है। मुझे विष्णुका और मेरी पत्नीको लक्ष्मीका रूप दिया जाये तो इससे हम दोनो ही लज्जा अनुभव करते है। यदि हम इस तरहका रूप दिये जानेसे भ्रममें पड़ जाये तो हम पापके भागी होगे। मुझमें क्या-क्या अपूर्णताएँ है इसका मुझे पूरी तरह भान है। मै परिपूर्णताका अभिलाषी एक तुच्छ मुमुक्षु प्राणी हूँ। मेरी पत्नी अनेक विडम्बनाओंको सहती हुई मेरे साथ-साथ चलनेका प्रयत्न करती है और वह केवल एक साधारण स्त्री है। मैं मानता हूँ कि हमारा गार्हस्थ जीवन सुखमय है, किन्तु मैं चाहता हूँ कि मेरी आँखें सेवा धर्मका पालन करते-करते ही बन्द हों, इसके अतिरिक्त मेरी अन्य कोई अभिलाषा नही है। लोकमें यश पानेका मुझे तनिक भी मोह नहीं। मेरी प्रवृत्ति ही लोकयश कमानेकी नहीं है। मेरी समस्त प्रवृत्ति श्रेय प्राप्तिके निमित्त ही है। मै जो-कुछ भी करता हूँ, धर्म मानकर ही करता हूँ, मुझे अपनी अन्तरात्मामें इस बातका निश्चय है। और जहाँ कोई भी कार्य धर्म मानकर किया जाता है वहाँ सम्मानरूपी पुरस्कार पानेकी आशा होती ही नहीं। लोक-सम्मान प्राप्त करनेमे एक क्षण भी गँवाना मुझे अखरता है। इसलिए मुझे तो अपने चित्रका बेचा जाना भी पसन्द नही है; तब मुझे पूर्ण पुरुषके रूपमें चित्रित किया जाये अथवा मेरी पत्नीको लक्ष्मीका रूप दिया जाये यह बात मुझे केवल असह्य ही हो सकती है। और जो लोग मेरा सम्मान करना चाहते है वे मैंने जो सिद्धान्त लोगोंके सम्मुख रखे हैं उनको पूरी तरह कार्यान्वित करके ही ऐसा कर सकते हैं। जो लोग मुँहसे मेरा सम्मान करते हैं अथवा मेरा चित्र अपने पास रखते है; किन्तु मेरे सिद्धान्तोंका अनादर करते है, वे मेरा अपमान करते है और धार्मिक पुरुषोकी मूर्तियोंके रूपमें मुझे चित्रित करके मर्यादाका उल्लंघन करते है। पुराने जमानेके एक मनुष्यने कहा है कि हम किसी भी मनुष्यको उसकी मृत्युसे पहले भला नही मान सकते। जो मृत्यु सामने खड़ी होनेपर भी ईश्वरको न भूले उसीको मोक्ष मिलता है। जो जीवनपर्यंत भलाई करना न छोड़े वही भला माना जा सकता है।

एक शंका

भावनगरसे दो भाइयोंने पत्र लिखकर मुझसे पूछा है कि महासभाका प्रतिनिधि कौन हो सकता है।

जो असहयोगी नहीं है क्या वह प्रतिनिधि नहीं हो सकता? महासभा तो राष्ट्रीय संस्था है।

यह बात बिलकुल सच है। जहाँ मतदाता असहयोगी ही हों वहाँ सहयोगी प्रतिनिधि नहीं चुना जा सकता। किन्तु यदि महासभामें सहयोगी मतदाता हो और उनके मत अधिक आयें अथवा एक सहयोगीको चुनने योग्य मत इकट्ठे किये जा सकें तो सहयोगी अवश्य चुना जा सकता है और उसका चुनाव बिलकुल नियमानुसार माना जायेगा।

एक दूसरी शंका

बम्बईके एक भाई पूछते हैं:

यदि ढेढ़ और भंगी पढ़-लिख जायेंगे तो वे नौकरी करना अथवा व्यापारमें भाग लेना चाहेंगे। तब उनका काम कौन करेगा?

इस पत्रमें दूसरे प्रश्न भी हैं किन्तु उनका उत्तर इस प्रश्नके उत्तरमें आ जाता है; इसलिए मैं उन्हें अलग नहीं देता। उक्त प्रश्न हम अस्पृश्यताको जिस रूपमें जानते हैं उसकी भयंकरता बताता है। अन्त्यजोंके साथ हम सामान्यतः जो बरताव करते हैं उनमें केवल द्वेष ही होता है। वे पढ़ें इसका अर्थ है वे भंगीका काम न करें, मुझे तो यह खयाल ही अनुचित लगता है, किन्तु इस खयालके पीछे भी कारण हम ही हैं। हम भंगीके कामको नीचा मानते हैं; किन्तु ठीक सोचें तो यह तो सफाईका काम है और इसलिए पवित्र है। माँ अपने बच्चेका मैला उठाती है, इससे वह और भी अधिक पवित्र मानी जाती है। रोगीकी सेवा-शुश्रूषा करनेवाली नर्स बदबूदार चीजोंको उठाती है किन्तु हम उसका सम्मान करते हैं। जो मनुष्य हमारे पाखानोंको साफ रखकर हमें तन्दुरुस्त रखनेमें मदद देता है हम उसका आदर क्यों न करें? उसको नीचे गिराकर हम खुद नीचे गिरते हैं। जो दूसरोंको कुएँमें गिराता है वह स्वयं भी कुएँमें गिरता है। इसलिए हमें भंगी और उनकी जैसी अन्य जातियोंको नीचा समझनेका कोई अधिकार नहीं है।

भोजा भगत मोची थे, फिर भी हम उनके भजनोंको बड़े आदरसे गाते हैं और उनको पूज्य भावसे देखते हैं। जो 'रामायण' पढ़ते हैं उनमें से ऐसा कौन होगा जिसके मनमें निषाद्की राम-भक्ति देखकर उसके प्रति आदरका भाव पैदा न हुआ हो? फिर भंगी और उनकी जैसी अन्य जातियाँ अपने धन्धे छोड़ें तो हमारे लिए उनका विरोध करने या घबरानेका कोई कारण नहीं है। हम जबतक किसीसे भी जबरदस्ती कोई काम कराना चाहेंगे तबतक हम स्वराज्यके योग्य नहीं होंगे। हमें अपने-अपने पाखानोंको खूब साफ रखना सीख लेना चाहिए। हमें जब अपने पाखानोंको गन्दा रखनेमें शर्म मालूम होने लगेगी तब हम उन्हें वाचनालयकी तरह साफ रखेंगे। हमारे पाखा-नोंमें जो दुर्गन्ध या उससे उत्पन्न दूषित वायु रहती है वह हमारी सभ्यताको कलंकित करती है और यह बताती है कि हममें स्वास्थ्यके नियमोंका अज्ञान कितना गहरा है। हमारे पाखानोंकी खराब हालत अन्त्यजोंके प्रति हमारे दूषित दृष्टिकोणका प्रमाण है और हम जिन अनेक रोगोंके शिकार होते हैं उनका कारण है। दूसरी जातियोंके संसर्गसे हम जाति-च्युत हो जायेंगे या भ्रष्ट हो जायेंगे, यह सोचना हमारी दुर्बलता-का सूचक है। हम जबतक संसारमें हैं तबतक दूसरोंका संसर्ग तो रहेगा ही। हमारे धर्मकी कसौटी यही है कि हम इस संसर्गके होनेपर भी निर्दोष रह सकें। भंगी और ऐसी अन्य जातियोंको स्वच्छता सिखाना, आगे बढ़ाना और उनका सम्मान करना दयाधर्म है। ऐसा करनेका अर्थ यह नहीं है कि हम उनके साथ खानपानका सम्बन्ध भी रखें; किन्तु यह तो आवश्यक है कि हम अपने हृदयके भावोंको शुद्ध करें।

बुढ़ापेका दोष ?

एक पाठकने 'नवजीवन-अभ्यासी' के नामसे यह लिखा है :

> **गुजरातके दो प्रमुख विद्वानोंने वृद्ध होते हुए भी देशकी इस विषम स्थितिमें सरकारी कालेजोंमें गुजरातीके प्राध्यापकोंका स्थान स्वीकार कर लिया है। इस प्रकारकी उद्वेगकारी घटनापर आप अवश्य कोई टिप्पणी करेंगे, मुझे ऐसी आशा थी। किन्तु वह व्यर्थ गई; 'नवजीवन'के एकके बाद एक निकलनेवाले दो अंकोंके पन्ने उलटनेके बाद मैं निराश हो गया हूँ और इस सम्बन्धमें आपके मौनसे मुझे आश्चर्य हुआ है। मुझे विश्वास है कि आपने इस सम्बन्धमें विचार अवश्य किया होगा और विचार करके ही कोई टीका न करनेका निर्णय किया होगा। आपने किस कारणसे प्रेरित होकर ऐसा किया, यदि आप इसका स्पष्टीकरण कर देंगे तो मुझे और कदाचित् मेरे जैसे बहुतसे लोगोंको इस विषयमें जो आश्चर्य हो रहा है वह न होगा।**

'अभ्यासी'का यह अनुमान सच है। मैंने सोच-समझकर ही कोई टीका नहीं की है। हमारे दो वृद्ध विद्वानोंने सरकारी नौकरी स्वीकार की, इससे दुःख तो मुझे भी हुआ। किन्तु उनके कार्यकी टीका कैसे की जाये? बुढ़ापा आनेपर कोई प्राध्यापक नहीं हो सकता यह तो कोई कारण नहीं है। फिर सभी बूढ़े असहयोगी होने चाहिए ऐसा भी आवश्यक नहीं है। और फिर विद्वान् लोग सहयोगी नहीं हो सकते यह भी नहीं कहा जा सकता। और यदि बूढ़ों अथवा विद्वानोंको सहयोग करनेका अधिकार है तो फिर हम टीका किसकी करें? बूढ़े और विद्वान् मनुष्योंको सरकारकी नौकरी स्वीकार करनेमें कोई बुराई दिखाई नहीं देती, यह बात असहयोगियोंको चौंकानेवाली और विचारमें डालनेवाली अवश्य है। मेरी मान्यता है कि असहयोगियोंमें भी कुछ लोग बूढ़े और विद्वान् हैं। इसका अर्थ यह है कि हमारे लिए इस सम्बन्धमें विचारने योग्य कुछ अधिक नहीं रह जाता। मैं तो यह मानता हूँ कि इन दोनों विद्वानोंने लालचसे डाँवाँडोल होकर नहीं बल्कि उचित विचार करके सरकारी नौकरी स्वीकार की है। अतः 'अभ्यासी' और उसके जैसे दूसरे लोगोंके लिए इन दोनों वयोवृद्धोंको दोष देने योग्य कोई बात नहीं रहती। 'अभ्यासी' को जो आश्चर्य हुआ है उसमें मुझे असहिष्णुताका आभास मिलता है; किन्तु हमें अन्य लोगोंको भी विचार और कार्य, दोनोंकी उतनी ही स्वतन्त्रता देनी चाहिए जितनी हम अपने लिए चाहते हैं; और वयोवृद्धोंको तो विशेष रूपसे देनी चाहिए।

मित्र रूपमें शत्रु

'प्रजामित्र'के सम्पादकको एक कार्ड मिला है, उसे मैंने पढ़ा है। पत्र अहमदाबादसे भेजा गया है। उसमें भेजनेवाले के दस्तखत तो हैं, किन्तु जगहका नाम नहीं है। दस्तखत एक मुसलमान भाईके हैं। उसकी भाषा यहाँ दी जाने योग्य, शिष्ट नहीं है। उसमें सम्पादकको मेरे विचारोंकी आलोचना करनेपर गालियाँ दी गई हैं। मुझे

आशा है कि इस पत्रका लेखक, चाहे वह कोई भी हो और कहींका भी हो, मेरी इस टिप्पणीको देख लेगा। लेखकने दिखाई तो मित्रता है; किन्तु काम शत्रुताका किया है। इस तरह गालियाँ देकर या धमकियाँ देकर हम खिलाफत या स्वराज्यके आन्दोलनको गति नहीं दे सकते। यदि हम खिलाफत या स्वराज्यके आन्दोलनको गति देना चाहते हैं तो हमें सभ्यता और नम्रता सीखनी चाहिए। 'प्रजामित्र' के सम्पादक हमारे मतका चाहे जितना विरोध करें, इसमें उनको कुछ भी दोष कैसे दिया जा सकता है? यदि अखबारोंको आलोचनाका अधिकार न हो तो उनकी कोई कीमत नही रहती। सरकारने अखबारोंपर जो प्रतिबन्ध लगा रखे हैं, जब हम उनको भी हटानेकी माँग करते है तब यदि लोग धमकाकर जो दबाव डालना चाहते हैं, उसे हम बरदाश्त कर सकेंगे? हम किसी भी मनुष्यके मतको या मनको प्रेमसे, तर्कसे और अपने उदाहरणसे बदलनेका प्रयत्न कर सकते है। हम किसीके भी मनको धमकियाँ देकर कभी नही बदल सकते। इसलिए प्रत्येक मनुष्यको और विशेष रूपसे असहयोगियोंको अपनी जीभको और अपने विचारोंको सुधारना चाहिए और उन्हें नरम बनाना चाहिए। जिसकी जीभपर खुदा या ईश्वरका नाम शोभित हुआ हे, जिसके हृदयमें ईश्वरका वास रहा है, उसकी जीभपर या उसके हृदयमें मलिन भाव एक घड़ी या पल-भर भी कैसे टिक सकता है? जो व्यक्ति असहयोगियोंके दलमें मैली जीभ या मलिन हृदय लेकर प्रविष्ट होता है, वह मित्र होनेका दावा करनेपर भी राष्ट्रके और मेरे प्रति शत्रुका काम करता है।

अस्पृश्यताकी मर्यादा[1]

इस लेखके सम्बन्धमें मेरा एक शब्द भी लिखना आवश्यक नहीं है। शास्त्रीजीने अस्पृश्यताकी जो व्याख्या की है उस व्याख्याके विरुद्ध मैंने कुछ नहीं कहा। गन्दे लोगोंका स्पर्श करके हम सदा स्नान करते हैं। मैंने कठोर भाषाका जो प्रयोग किया है वह केवल इस प्रचलित अस्पृश्यताके विरुद्ध किया है जिसके मूलमें द्वेषके अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है। यदि शास्त्रीजीके जैसे विचार सभी वैष्णवोंके हों तो ऐसे वैष्णवोंसे तो मुझे कुछ भी कहनेकी जरूरत न होगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७–७–१९२१

१. यह टिप्पणी वसन्तराग शास्त्रीके इस सम्बन्धमें लिखे गये लेखके साथ दी गई थी।

१९३. भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

१७ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने कहा : मैं इसके पहले भी मदनपुरा आ चुका हूँ। दो साल पहले मैं यहाँ आपका काम देखने आया था। लेकिन यह सभा एक बिलकुल दूसरे ही उद्देश्यसे बुलाई गई है। पिछली बार जब मैं यहाँ आया था, तब खिलाफतके सवालको लेकर कोई आशंका नहीं थी और हमें अपने शासकोंसे न्याय पानेका पक्का भरोसा था; क्योंकि ग्रेट ब्रिटेनके प्रधान मन्त्रीने न्याय करनेका वायदा किया था। लेकिन बावजूद उसके ब्रिटिश सरकारने मुसलमानोंको काफी नुकसान पहुँचाया। और अब जबतक मुसलमानोंकी शिकायतें दूर नहीं हो जातीं तबतक हमारे दिमागको चैन नहीं मिल सकता। सरकारने पंजाबके साथ जो-कुछ किया है, उसको लेकर भी जनता बहुत चिन्तित है। भारतीय जनता जबतक अपने सैनिकोंको ब्रिटेन की ओरसे लड़नेके लिए विदेश जानेसे नहीं रोक सकती तबतक यह नहीं कहा जा सकेगा कि असली ताकत जनताके हाथोंमें आ गई है। अब हमें एक शक्तिशाली अस्त्र मिल गया है, असहयोगका अस्त्र; और कांग्रेसने बड़े निश्चित शब्दोंमें बता दिया है कि इस दिशामें जनताको क्या करना चाहिए। लेकिन अभी जनताने इस दिशामें बहुत बड़े पैमानेपर पहल नहीं की है। लोगोंने अपने खिताब वापस नहीं किये हैं और उन्होंने स्कूलों या न्यायालयोंका त्याग नहीं किया है। इस तरह लोगोंने अपना फर्ज पूरा नहीं किया है। किन्तु फिर भी सरकारकी प्रतिष्ठा गिरी है; लोग अब सरकारी खिताबोंको उतनी इज्जतकी नजरसे नहीं देखते; लोग कचहरियोंमें तो जाते हैं पर यह समझकर नहीं कि वे अच्छी हैं या वहाँ उनको न्याय मिल जायेगा, बल्कि इसलिए कि वे उनके पतनकी निशानी हैं।

बुनकरोंके सामने उनका फर्ज साफ है — उनको स्वदेशी आन्दोलनकी भरसक सहायता करनी चाहिए। अगर बुनकर इस आन्दोलनमें हाथ बँटायें तो वे देशको फिरसे खुशहाल बना सकते हैं। सबसे बड़ा दुर्भाग्य तो यह है कि बुनकर लोग विदेशी सूत इस्तेमाल करते हैं। श्री गांधीने बुनकरोंसे कहा कि आपको विदेशी सूतका इस्तेमाल छोड़ देना चाहिए, सिर्फ स्वदेशी और हाथका कता सूत ही इस्तेमाल करना चाहिए। आपको महीन सूत ही नहीं हाथका कता मोटा सूत भी इस्तेमाल करना चाहिए। और किसी भी देशके बुनकर मिलका तैयार किया हुआ सूत इस्तेमाल नहीं करते। वे हाथका कता महीन सूत इस्तेमाल करते हैं, लेकिन साथ ही मोटा सूत भी इस्ते-

१. गांधीजीने बम्बईमें भायखला कांग्रेस कमेटीके तत्त्वावधानमें इतवारकी रातको मदनपुरामें बुनकरोंकी एक सभामें भाषण किया था।

माल करते है। दुनियाके किसी भी देशमें, जापान तकमें, इतने कुशल बुनकर नहीं हैं जितने कि हमारे पास हैं। मै खुद एक बुनकर हूँ और मुझे इसपर गर्व है, क्योंकि बुनकरोंपर ही देशकी खुशहालीका दारोमदार है। लोग जब भी मुझसे पूछते है कि मेरा पेशा क्या है, तो मै गर्वसे यही जवाब देता हूँ कि मै किसान और बुनकर हूँ, बैरिस्टर नहीं हूँ। बुनकर हाथका कता सूत इस्तेमाल करके इस देशको खुशहाल बना सकते है। यह नहीं सोचना चाहिए कि यदि आप हाथका कता सूत इस्तेमाल करेंगे तो बरबाद हो जायेंगे। आज आपके लिए अपना हुनर दिखाने या लोगोंके लिए बढ़िया कपड़े पहनकर निकलनेका अवसर नहीं है। स्वराज्य मिलनेतक और खिलाफत तथा पंजाबके अन्यायोंका प्रतिकार होनेतक हमें मोटे कपड़े पहनने चाहिए। यदि आप कोशिश करें तो आसानीसे हाथके कते सूतसे कपड़ा बुन सकते है। मुझे उम्मीद है कि आपको जबतक हाथका कता सूत मिलता रहेगा तबतक आप यह खयाल अपने दिमागमें नहीं लायेंगे कि हाथका कता सूत इस्तेमाल करनेसे आपको कम मजूरी मिलेगी। में आपको भरोसा दिलाना चाहता हूँ कि आपकी कमाई इतनी ही बनी रहेगी जितनी कि आज है। आपके पास अभी जितना भी विदेशी सूत हो उसे आपको त्याग देना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि पहली अगस्तको[1] कोई भी विदेशी वस्त्र पहने न दिखाई पड़े, और मैं कहूँगा कि उस दिन किसीको भी विदेशी वस्त्र पहनकर चौपाटी-पर नहीं आना चाहिए। बुनकर लोगोंको श्री मुहम्मद अली और श्री खत्रीसे मिलकर उनके साथ अपनी कठिनाइयोंके बारेमें बात करनी चाहिए। अगर आप १ अगस्ततक विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार कर सकें तो आप आसानीसे स्वराज्य प्राप्त करने योग्य हो जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १९–७–१९२१

१९४. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

बम्बई

१८ जुलाई [१९२१]

प्रिय चार्ली,

यदि तुमको पत्र न लिखना कर्त्तव्यकी उपेक्षा करना कहा जा सकता है तो मैं कर्त्तव्यकी उपेक्षा करनेका दोषी हूँ। तुम्हारी आत्मा तो सदा ही मेरे साथ रहती है। मैं समझता था कि तुम शिमलामें हो। मैंने स्टोक्सकी[2] खुली चिट्ठी नहीं देखी।

१. विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारका आन्दोलन आरम्भ करनेके लिए यही तिथि निश्चित की गई थी।

२. सैम्युल स्टोक्स, सार्वजनिक कार्यकर्त्ता और गांधीजीके सहयोगी।

लेकिन इस हफ्तेके 'यंग इंडिया'में बेगार[1] और स्त्रियोंकी स्थितिके[2] सम्बन्धमें अग्रलेख रहेंगे। मैंने इस मामलेमें बंगालके नाम तुम्हारे सन्देशके बारेमें विचार व्यक्त किये है।

जल्दी अच्छे हो जाओ। गुरुदेवके प्रति मेरा प्रेम निवेदन करना और उनके स्वास्थ्यके बारेमें मुझे लिखना।

सस्नेह,

तुम्हारा,
मोहन

[पुनश्च :]

पोलककी बहन सैली नहीं रही।

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० १३०९ और जी० एन० २६३९) की फोटो-नकलसे।

१९५. भाषण: बम्बईकी मुसलमान महिलाओंके समक्ष[3]

१९ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने कहा: मुसलमानोंके साथ मेरे पुराने सम्बन्ध है। जो सज्जन मुझे पहली बार आफ्रिका ले गये थे वे भी एक मुसलमान मित्र ही थे। यहाँ मौजूद आप सभी महिलाएँ मेरी बहनें हैं। स्वराज्यके लिए हम जितनी भी कोशिशें कर रहे हैं वे सब आपके मजहबपर कोई आँच न आने देनेके लिए हैं। मेरे दिमागमें हिन्दू और मुसलमानके बीच कोई फर्क नहीं है।

मेरी रायमें तो सभी मजहब अच्छे हैं। कभी-कभी कुछ गुमराह लोगोंकी वहजसे मजहबमें कुछ गलत बातें शामिल हो जाती हैं। 'कुरान शरीफ'में जो भी कुछ है सब अच्छा है। सभी मजहबोंमें सचाई मौजूद है। हम सभी इस्लामकी बहबूदी चाहते हैं। हम बिलकुल नहीं चाहते कि दुनियामें शैतानका राज हो।

शैतानके राजमें मैं कोई भी अच्छा काम नहीं कर सकता। आज ही शामको मेरे पास अलीगढ़से एक तार आया है, जिसमें कहा गया है कि श्री शेरवानीको जेल भेज दिया गया है, हालांकि वे शान्तिके लिए काम कर रहे थे। ऐसा भी मौका आ सकता है जब सभी अच्छे आदमियोंको जेलोंमें डाल दिया जाये। हममें से हर एकको उसके लिए तैयार रहना चाहिए। आफ्रिकामें हिन्दुओं और मुसलमानोंने मर्द-औरतका कोई फर्क माने बिना जेल जानेमें कोई कोताही नहीं की थी और इस तरह अपने

१. देखिए "शिमलाकी छाया", २१-७-१९२१।

२. देखिए "स्त्रियोंकी स्थिति", २१-७-१९२१।

३. नेपियन सी रोडपर ५०० से अधिक मुसलमान महिलाओंकी एक सभा हुई थी। गांधीजीने स्वदेशीके बारेमें हिन्दुस्तानीमें भाषण किया था। मूल हिन्दी भाषण उपलब्ध नहीं है।

देशकी इज्जतको महफूज रखा था। ऐश-आरामकी जिन्दगी बसर करनेवाले लोग जेलकी जिन्दगी बरदाश्त नहीं कर पायेंगे, क्योंकि उनको वहाँ दिनमें दस बार चाय और बढ़िया कपड़े मिलनेवाले नहीं हैं।

आपको अपने मजहबकी खातिर सभी ऐश-आराम छोड़ देने चाहिए और खादी पहनना शुरू कर देना चाहिए। भारतको जबतक स्वराज्य नहीं मिल जाता और खिलाफत तथा पंजाबके अन्यायोंका प्रतिकार नहीं हो जाता, तबतक हर एकको विलायती कपड़ोंसे दूर रहना चाहिए। स्वराज्य मिल जानेपर हम सभी तरहका स्वदेशी कपड़ा तैयार करने लगेंगे। इसलिए आपको छः महीनेके लिए सभी ऐश-आराम छोड़ देने पड़ेंगे।

मुझे यह सुनकर बड़ी खुशी हुई है कि श्रीमती हाजी यूसुफ सोबानीने कातना शुरू कर दिया है। आप सबको अपने पास उसी तरह चरखा रखना चाहिए जैसे आप अपनी गोदमें बच्चेको रखती हैं। आपको स्वराज्य और खिलाफतकी खातिर हर दिन कमसे-कम कुछ घंटे तो जरूर ही भगवान्‌का नाम लेते हुए कताई करनी चाहिए। चरखेके जरिये भारतीय नारीत्वकी प्रतिष्ठाकी रक्षा ही नहीं होगी, आप अपने घरोंमें ही बैठकर स्वतन्त्र रूपसे अपनी आमदनी भी बढ़ा सकेंगी। चरखेके जरिये आप अपने मुल्कके लिए जितना कर सकती हैं, उतना तलवारके जोरपर नहीं किया जा सकता। बहुतसे भारतीयोंकी महीने-भरकी आमदनी आठसे पन्द्रह रुपयेतक है। जो उनके परिवारोंके लिए पूरी नहीं पड़ती। गंगाबेनने बीजापुरके गरीब भारतीयोंके घरोंमें दो हजार चरखे चलवाये हैं; इसका नतीजा यह हुआ है कि उनको वहाँसे बढ़िया किस्मका हाथका कता सूत मिल जाता है और वहाँके लोगोंको जीविकाका एक स्वतन्त्र साधन मिल गया है।

महात्मा गांधीने भाषण जारी रखते हुए कहा: पहले हम ढाकाकी उम्दा मलमल तैयार कर लेते थे, लेकिन मौजूदा सरकारकी वजहसे वहाँके बुनकर बड़ी खराब हालतमें हैं और वे अपना धन्धा करनेमें असमर्थ हैं। हमें बढ़िया कपड़ेके लिए मैनचेस्टर नहीं जाना चाहिए। एक भारतीय महिलाने मुझे जरीके कामकी एक साड़ी दी है। उसका वजन करीब बारह सेर[1] है। अगर आप लोग इतनी भारी साड़ियाँ पहन सकती हैं, तो खादीकी साड़ियाँ क्यों नहीं पहन सकतीं? स्त्रियाँ पुरुषोंकी अपेक्षा कहीं ज्यादा तकलीफ और मुसीबत बरदाश्त कर सकती हैं; इसलिए खादीका पूरा-पूरा इस्तेमाल करनेमें उनके लिए कोई रुकावट नहीं है। श्रीमती मजहरुल हकने मुझे हीरेकी चार चूड़ियाँ दी हैं। स्त्रियोंको अपने आभूषणोंसे बहुत मोह होता है, इसलिए इस तरहका त्याग बतलाता है कि स्वराज्य नजदीक आ रहा है। सुन्दर स्त्री वही है जिसके दिलमें भगवान्‌का खयाल है। बाहरी सुन्दरताके सभी उपकरण उनको छोड़ देने

१. स्पष्टतया यह भूल है यहाँ सेरकी जगह पौंड होना चाहिए। देखिए "भाषण : बम्बईमें स्वदेशी-पर", १६–७–१९२१।

चाहिए। बढ़िया महीन कपड़ोंके लिए आपको जापान, फ्रांस और चीनकी तरफ नहीं देखना चाहिए। आप सभीको हिन्दुओं और मुसलमानोंकी कामयाबीके लिए भगवान्से प्रार्थना करनी चाहिए, लेकिन आपकी प्रार्थनामें असर तभी पैदा होगा जब आपके दिल पवित्र हों और बदनपर स्वदेशी कपड़े हों। यह एक बड़ा मुश्किल-सा अहद है। लेकिन एक बार ऐसा अहद कर लेनेपर उसपर चलना सचमुच आसान हो जाता है।

अन्तमें महात्मा गांधीने वहाँ मौजूद सभी महिलाओंसे कहा कि वे या तो अपने विलायती कपड़े आगमें झोंक दें या उनको स्मरना भेज दें। उन्होंने बोलनेकी दावत देने और पूरे ध्यानसे उनकी बात सुननेके लिए सभीको धन्यवाद दिया।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २०–७–१९२१

१९६. भाषण : बम्बईमें शराबके ठेकेदारोंके समक्ष[1]

१९ जुलाई, १९२१

श्री गांधीने कहा : मैंने पिछली बार आप लोगोंको बतलाया था कि धरनेका सारा काम कांग्रेस कमेटीके हाथमें है और मैं तो आपको सलाह-भर दे सकता हूँ कि आपको क्या करना चाहिए। लेकिन आप लोगोंको मेरी सलाहका नतीजा मालूम ही है। कुछ ठेकेदारोंने सरकारके पास भेजा जानेवाला प्रार्थनापत्र देख ही लिया है; और चूँकि आप असहयोगी नहीं हैं, इसलिए आपके ऐसा करनेपर किसीको कोई एत-राज नहीं हो सकता। यदि आप असहयोगी होते तो शराबके ठेके न रखते। ठेकेदारोंको सरकारके पास प्रार्थनापत्र भेजनेका पूरा अधिकार है। कहा गया है कि ठेकेदार सेवक है। अगर सेवक हैं, तो भी सरकारको अदा की गई फीसकी वापसीके लिए अपनी सरकारसे कहना कोई गलत बात नहीं है। सरकार आपके ठेके जबरन बन्द नहीं कर सकती। इसके लिए उसे एक नया कानून पास करना पड़ेगा। लेकिन ठेकेदार लोग अपनी अदा की गई फीस वापस लेकर अपने ठेके बन्द कर सकते हैं।

धारवाड़ और अलीगढ़की दुःखद घटनाओंके बारेमें आपको मालूम ही है। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि इतने सारे लोगोंके मरनेकी सबसे ज्यादा जिम्मेदारी शराब-के ठेकोंपर ही है। श्री शेरवानी अलीगढ़के एक बहुत ही जाने-माने प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। वे एक मुसलमान जमींदार परिवारके हैं और कैम्ब्रिजके ग्रेजुएट हैं। अलीगढ़से मिले एक तारमें मुझे बतलाया गया है कि कल श्री शेरवानीको भी गिरफ्तार कर लिया गया। श्री शेरवानीने भीड़को शान्त करनेकी भरसक कोशिश की, उन्होंने भीड़को

१. पारसी राजकीय सभाके तत्त्वावधानमें मारवाड़ी विद्यालय हॉलमें एक सभा आयोजित की गई थी, जिसमें गांधीजीने शहरके शराबके हिन्दू और पारसी ठेकेदारोंके सामने भाषण दिया था।

शान्त बनाये रखनेके लिए हर कोशिश की थी; अलबत्ता उन्होंने 'नाक रगड़ने' से इनकार कर दिया था और लोगोंमें उत्साह बनाये रखनेका प्रयत्न किया था। अब उनको भी गिरफ्तार कर लिया गया है। सारी गड़बड़ीकी जिम्मेदारी किसपर है? गड़बड़ी धरनेके समय शुरू हुई थी। श्री गंगाधरराव देशपाण्डेने मुझे बेलगाँवसे तार भेजकर सूचित किया है कि उनको और उनके मित्रोंको आदेश दिया गया है कि वे वहाँ छावनीके हलकेमें शराबके ठेकोंपर धरना न दें। श्री देशपाण्डेने पूछा है कि वे इस आदेशका पालन करें या न करें। मैंने श्री देशपाण्डेको यही सलाह दी है कि आदेश गैर-कानूनी तो है पर उसका पालन किया जाना चाहिए और सविनय अवज्ञा भी संयत ढंगसे करना ही ठीक होगा। शराब-विक्रेताओंका फर्ज है कि वे अपने करोड़ों देशवासियोंकी इच्छाका आदर करें। अपने ठेके बन्द करके, आप अपने देश-को लाभ पहुँचायेंगे और जो चीज पूरे देशके हितमें है वह आपके भी हितकी चीज है। मैं पक्की तौरपर जानता हूँ कि शराबके कुछ ठेकेदारोंकी माली हालत अच्छी नहीं है। देशकी जनताका फर्ज है कि वह इन लोगोंकी सहायताके लिए जो भी कर सकती हो, करे। लेकिन आप लोगोंको भी यह स्वीकार करना चाहिए कि आप अपने ठेके चालू रखकर देशको नुकसान पहुँचा रहे हैं।

श्री गांधीने शराबके ठेकेदारोंको चेतावनी दी कि अगर आपने अगस्तके अन्ततक कुछ नहीं किया तो बड़ी गड़बड़ी मच जायेगी। दुबारा जब धरना देना शुरू किया जायेगा तो वह काफी संजीदगीसे किया जायेगा। धरना देनेवाले लोग धरना छोड़ने-की अपेक्षा जेल जाना और यहाँतक कि गोली खाना ही ज्यादा पसन्द करेंगे। मैं महसूस करता हूँ कि ठेके बन्द हो जाने चाहिए, चाहे फिर सरकारी आदेशपर धरना देना बन्द न करनेपर खूनकी नदियाँ ही बह चलें। मैं आपसे यह वायदा नहीं कर सकता कि अगस्तके महीनेमें फिरसे धरना देना शुरू नहीं किया जायेगा। क्योंकि धरना देनेवालों ने जिस बातका अहद किया है वह उन्हें कामयाबीके साथ पूरा करना ही चाहिए, फिर उनको चाहे जितनी बड़ी कीमत क्यों न चुकानी पड़े। मेरे पास कई पत्र आ चुके हैं जिनमें कहा गया है कि धरने बन्द करके मैंने ठीक नहीं किया। मुझपर दोष लगाया गया है कि मैंने अली भाइयोंको कमजोर सलाह दी और मुझे इस बातके लिए भी दोषी ठहराया गया है कि मैंने पहले सत्याग्रह आन्दोलन बन्द करवा दिया था और अब धरने भी बन्द करा दिये हैं। मैंने अली भाइयोंको जो सलाह दी थी वह कमजोरीकी सलाह नहीं थी, वह मजबूती पैदा करनेवाली सलाह थी और सत्याग्रह तथा धरनोंके मामलेमें भी यही बात है। इसीलिए मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप देशकी आवाजपर कान दें और देशको आसन्न बलिदानसे बचायें। मैं किसी रोगसे पीड़ित होकर मरनेकी बजाय धरना देते हुए मरना ही ज्यादा पसन्द करूँगा। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि और भी बहुतसे लोग ऐसा ही करनेके लिए तैयार हैं।

श्री गांधीने अपने भाषणके अन्तमें शराबके ठेकेदारोंसे अपील की कि उनको ऐसे समयमें देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करना चाहिए, और कहा कि उपस्थित लोगोंमें से जो लोग प्रश्न करना चाहते हों, वे प्रश्न करें।

श्री मानेकजी बारियाने कहा कि बेईमानी शराब-विक्रेताओंमें ही नहीं सभी पेशोंमें चल रही है। हमारे सामने सवाल यह है कि ठेके कौन लोग और कब बन्द करें? शराबका रोजगार हजारों सालसे चलता आ रहा है और उसे एकबारगी बन्द नहीं किया जा सकता। ठेके धीरे-धीरे एक-एक करके बन्द किये जाने चाहिए। कोई भी पेशा हो, यदि उसे ईमानदारीसे चलाया जाये तो फिर उसमें शर्म या बेईमानीकी बात नहीं है। हर एकको अपने-अपने हितोंका ध्यान रखना पड़ता है। और यहाँतक कि स्वदेशीके प्राण, श्री गांधीको भी यदि कोलाबा जाना हो तो वे बैलगाड़ीमें नहीं जायेंगे, बल्कि तेज चलनेवाली विदेशी विक्टोरियामें ही जाना पसन्द करेंगे। शराबबन्दी तो शराब पीनेवालों की आदत छुड़ाकर ही की जा सकती है; उसका दूसरा कोई रास्ता नहीं है। ठेकेदारोंने सरकारको फीसकी वापसीके लिए लिखा है और उसके वापस होते ही वे अपने ठेके बन्द कर देंगे। सरकार उनको होनेवाले घाटेका हिसाब पूरे सालकी उनकी बिक्री को देखकर ही लगा सकती है, कुछ महीनोंकी बिक्रीको देखकर नहीं। मैं श्री गांधीसे पूछता हूँ, आप कहते हैं कि हमें सितम्बरतक स्वराज्य मिल जायेगा; तो क्या उस समय हम एक कानून पास करके शराबकी बिक्री बन्द नहीं कर सकते? श्री गांधी किस तारीखसे शराबकी बिक्री बन्द करना चाहते हैं?

श्री गांधी : आज ही से। (हँसी और हर्ष-ध्वनि)

इसपर श्री बारियाने कहा कि यदि श्री गांधी इसी दिनसे बिक्री बन्द कराना चाहते हैं, तो यह तो भगवान् चाहे तभी हो सकता है।

श्री गांधीने कहा कि मैं तो चाहता हूँ कि आज ही से बन्द हो जाये, लेकिन सवाल यह है कि क्या मैं ऐसा कर सकता हूँ? मैं तो बहुत-सी चीजें करना चाहता हूँ, लेकिन हो सकता है कि मैं न कर पाऊँ!

श्री गांधीने [श्रोताओंके प्रश्नोंका] उत्तर देते हुए कहा कि मुझे आशा है कि हम इस सभासे एक कदम आगे बढ़े हैं। मैं चाहता हूँ कि आप इस मसविदेपर तभी दस्तखत करें जब आप इस दिशामें कदम आगे बढ़ाना चाहते हों। सितम्बर महीनेमें खूनकी नदियाँ बहनेके बारेमें मैं कहना चाहता हूँ कि श्री शेरवानी, श्री मुहम्मद अली और मेरी तरह धरना देनेवाले बहुत सारे लोग होंगे और यदि उनको गिरफ्तार कर लिया जायेगा तो उनकी जगह लेनेके लिए सैकड़ों और लोग खड़े हो जायेंगे। और यदि उनको भी गिरफ्तार कर लिया गया तो हजारों देशवासी अपनी जान कुर्बान करनेको आगे आ जायेंगे और तब सरकारके सामने यही एक चारा रह जायेगा कि उनको गोली मारकर उनका खून कर दे। धारवाड़ और अलीगढ़में क्या हुआ था? शायद धारवाड़में भीड़ने पथराव किया था। उसका जवाब दिया गया गोलियोंसे।

भारतमें यही चलन रहा है। और जब जनता सरकार, ठेकेदारों तथा पियक्कड़ोंके चंगुलमें पड़ जाये तो परिस्थिति विषम तो होनी ही है; इसे टाला नहीं जा सकता। इसीलिए मैंने कहा है कि यदि ठेके बन्द नहीं किये गये तो सितम्बरमें खूनकी नदियाँ बहेंगी। अन्तमें श्री गांधीने ठेकेदारोंसे कहा कि वे ज्ञापनके सिलसिलेमें श्री भरूचासे मिलें और उनसे सलाह-मशविरा करें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २०–७–१९२१

१९७. पत्र: के० पी० जगासिया ब्रदर्सको[1]

बम्बई

[१९ जुलाई, १९२१के बाद]

प्रिय महोदय,

आपके गत १९ जुलाईके पत्रके सिलसिलेमें मैं सिर्फ इतनी सलाह दे सकता हूँ कि आपको वही करना चाहिए जो हर एक व्यवसायी कर रहा है। लाटरीका सुझाव मुझे उचित नहीं जान पड़ता।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ७५८०)की फोटो-नकलसे।

१९८. तार: बेलगाँवके धरनेदारोंको

२० जुलाई, १९२१

धरनेके खिलाफ गैरकानूनी आदेशोंका भी पालन करें, क्योंकि उससे आगे चलकर सविनय अवज्ञा आन्दोलनको निश्चय ही बल मिलेगा। विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारकी जी तोड़ कोशिश करें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

१. कराचीके आयात-निर्यात व्यापारी जगासिया ब्रदर्सने स्वदेशी आन्दोलनकी शिकायत करते हुए गांधीजीको लिखा था कि इसके कारण उनको व्यवसायमें खासा घाटा उठाना पड़ा है और उनके गोदामोंमें विदेशी वस्त्रोंका स्टॉक बेकार पड़ा है। उन्होंने गांधीजीसे सलाह माँगी थी कि वे अपने सिरपर पड़े भुगतानको कैसे चुकायें और पूछा था कि क्या वे अनबिके मालको खपानेके लिए लाटरीका तरीका अपनानेकी अनुमति देंगे।

१९९. भाषण: पूनाकी सार्वजनिक सभामें[1]

२० जुलाई, १९२१

कैम्पकी एक आम सभामें बोलते हुए महात्मा गांधीने कहा कि विदेशसे अंगुल-भर कपड़ेका आयात नहीं होना चाहिए। कुछ जमाना हुआ भारत अपनी जरूरतसे भी ज्यादा कपड़ा तैयार किया करता था। भारतीय सूत उद्योगको ईस्ट इंडिया कम्पनी-के कर्मचारियोंने नष्ट कर दिया। आयातित कपड़ेके लिए हमें प्रतिवर्ष ६०,००,००,००० रु० बाहर भेजने पड़ते हैं। हमें चाहिए कि हम स्वयं खादी पहनने और सूत कातनेके लिए तैयार हों और बुनकरोंको कपड़ा बुननेके लिए हाथका कता सूत अपनानेके लिए प्रोत्साहित करें। स्वदेशी एक धर्म है। इस धर्मका पालन दृढ़ताके साथ किये बिना स्वराज्य पाना असम्भव है।

धरनेकी चर्चा करते हुए गांधीजीने कहा कि धरना एक बड़ा और अच्छा आन्दोलन है, परन्तु मदिरापान करनेवालों को हरगिज मारना-पीटना नहीं चाहिए। उन्हें गालियाँ भी नहीं देनी चाहिए। [धरना देते समय] स्वयंसेवकोंको पूर्णतः अहिंसात्मक रहना चाहिए। शराबके व्यापारियोंको अपनी दूकानें बन्द कर देनी चाहिए। देश शराबसे छुटकारा पाना चाहता है; शराबने पीनेवालों को हैवान बना दिया है। अपना भाषण समाप्त करते हुए गांधीजीने श्रोताओंसे अपील की कि स्वदेशीको पूरे दिलसे अपनायें।[2]

श्री गांधीने कहा कि विदेशी सूतसे बुना हुआ कपड़ा भी विदेशी ही माना जायेगा। मैं चाहता हूँ कि आप इस विषयमें बहुत ही सतर्क व सावधान रहें। स्वतंत्रता प्राप्तिके लिए लोकमान्यने जो त्याग किये उन्हें आप सब याद करें और उनके विचारोंको अपने जीवनमें उतारें। मुझे इस बातकी परवाह नहीं है कि स्कूलों व अदालतोंका बहिष्कार होता है या नहीं। उसका उद्देश्य तो सिद्ध हो ही गया है। लेकिन मैं हिन्दू-मुस्लिम एकता, अहिंसा और विशेष रूपसे विदेशी वस्त्रका बहिष्कार जरूर चाहता हूँ; उसका पूरा आग्रह करता हूँ। यदि अगस्तके अन्ततक हम यह बहिष्कार सफलतापूर्वक कर सके तो स्वराज्य हमें मिल गया समझिए। उन्होंने महाराष्ट्रकी प्रशंसा की और [इस कार्यक्रममें] अधिक आस्था रखनेको कहा।

शनिवार वाड़ाके मैदानमें एक विशाल सार्वजनिक सभामें भाषण देते हुए गांधीजीने कहा कि आजका दिन एक पवित्र दिन है। हम लोग यहाँ तिलक महाराजकी

१. भाषणके पूर्व गांधीजीने लोकमान्यके चित्रका अनावरण किया और उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। उन्होंने स्त्रियों तथा खिलाफत-कार्यकर्त्ताओंकी सभाओंमें भी भाषण दिये थे।

२. इसके आगेका अंश उसी दिनकी एक दूसरी सार्वजनिक सभामें गांधीजी द्वारा दिये गये भाषणका विवरण है।

बरसी मनानेको इकट्ठे हुए हैं। उन्होंने हमें स्वराज्यके महामन्त्रकी दीक्षा दी थी। स्वराज्य पानेके लिए सबसे आसान और सम्भव उपाय स्वदेशी ही है। उससे नंगोंको वस्त्र और भूखोंको भोजन मिलेगा। २ करोड़ भारतीय आधा पेट खाकर बसर कर रहे हैं। महाराष्ट्र बुद्धिमान है, महाराष्ट्रमें विद्या है, महाराष्ट्र हर प्रकारका त्याग करनेको तैयार रहता है परन्तु उसमें विश्वासकी कमी है। यदि महाराष्ट्र स्वदेशी धर्मको अविचल विश्वाससे अपनाये तो साल-भरके अन्दर स्वराज्य मिलना निश्चित है। भाषण समाप्त करते हुए गांधीजीने आशा व्यक्त की कि महाराष्ट्र तिलक महाराजके योग्य साबित होगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २४–७–१९२१

२००. भाषण : तिलक महाविद्यालयके उद्घाटनपर[1]

२० जुलाई, १९२१

तिलक महाविद्यालयके भवनका उद्‌घाटन करते हुए विद्यालयके मन्त्री प्रोफेसर घारपुरे द्वारा परिचयात्मक भाषण दिये जानेके बाद महात्मा गांधीने कहा कि देशमें सभी जगह राष्ट्रीय स्कूल और कालेज खोले गये हैं। उन्होंने बिहारकी विशेष रूपसे प्रशंसा की, क्योंकि वह आलस्य और निद्राको एकदम त्यागकर असहयोग कार्यक्रमके लगभग सभी अंगोंको पूरा करनेमें सफल हुआ है। श्री चित्तरंजन दासने बंगालके असहयोगी विद्यार्थियोंके लिए व्यवस्था कर दी है। इस दिशामें उनका त्याग निश्चय ही अद्वितीय है। गुजरातमें भी एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय है। परन्तु विश्वविद्यालय तो हमारी शिक्षा-प्रणाली कैसी हो यह सामने रखनेके लिए खोले गये हैं। मुझे यह देखकर खुशी हुई है कि तिलक महाविद्यालयमें औद्योगिक और व्यावसायिक प्रशिक्षणके लिए भी व्यवस्था की गई है। निःसन्देह यह इस संस्थाकी एक विशेषता है। इसलिए यह तथ्य कि ये महाविद्यालय सरकारी संस्थाओंकी कोरी नकल-भर नहीं हैं, भविष्यमें 'टाइम्स ऑफ इंडिया' की नुक्ताचीनी बन्द कर देनेके लिए काफी होगा। गांधीजीने अन्तमें कहा, मैं आशा करता हूँ कि विद्यालय ऐसे विद्यार्थी तैयार करेगा जो उस महापुरुषके नामको उज्ज्वल करेंगे, जिसके नामपर यह खोला गया है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २४–७–१९२१

१. पूना में।

२०१. टिप्पणियाँ

इन स्थितियोंमें आप क्या करें?

यदि आप बुनकर हैं और अपने देश, खिलाफत और पंजाबके बारेमें सोचते हैं तो —

(१) आपको केवल हाथ-कते सूतका ही कपड़ा बुनना चाहिए, और उसका उतना ही पैसा लेना चाहिए जितने से कि आपकी जीविका चल जाये। आपको मोटा सूत बुननेकी दृष्टिसे अपने करघेमें आवश्यक परिवर्तन करनेसे सम्बन्धित सभी कठिनाइयोंका हल निकालना चाहिए।

(२) यदि आपको तानेके लिए हाथका कता सूत काममे लानेमें कोई कठिनाई हो तो आपको उसके लिए भारतीय मिलों द्वारा काते गये सूतको और बानेके लिए हाथका कता सूत काममें लाना चाहिए।

(३) जहाँ यह भी सम्भव न हो, वहाँ आप ताने और बाने दोनोंके लिए मिलका [देशी] सूत काममें लायें।

पर आपको अबसे रेशमी या सूती सभी प्रकारका विदेशी सूत काममें लाना बन्द कर देना चाहिए।

यदि आप कांग्रेसके अधिकारी या कार्यकर्त्ता हैं तो आप अपने कार्यक्षेत्रके बुनकरोंके सामने ऊपर बताये गये सुझाव रखकर उन्हें इस ढंगको अपनानेके लिए समझाये-बुझायें और उनकी भरसक सहायता करे।

यदि आप खरीददार हैं तो केवल सबसे अच्छी किस्मका कपड़ा खरीदनेका आग्रह कीजिए। पर यदि आपको कपड़ेकी वैसी पहचान न हो या उतना मँहगा खरीदनेकी सामर्थ्य न हो तो उससे हलके दर्जेका — दूसरे या तीसरे दर्जेका — कपड़ा खरीदिए, पर किसी भी हालतमें विदेशी कपड़ा या विदेशी सूतसे भारतमें बुना कपड़ा न खरीदिए।

यदि आप गृहस्थ हैं तो —

(१) आपको अबसे किसी भी प्रकारका विदेशी कपड़ा न खरीदनेका दृढ़ निश्चय कर लेना चाहिए।

(२) आपको अपने पड़ोसके बुनकरसे मिलना चाहिए और घरके कते सूतसे और उसके अभावमें भारतीय मिलके कते सूतसे अपने लिए पर्याप्त खादी तैयार करवा लेनी चाहिए।

(३) आपको अपना सारा विदेशी कपड़ा कांग्रेस कमेटीको दे देना चाहिए। वह उसे नष्ट कर देगी या स्मरना या उसे भारतसे बाहर और कहीं भेज दिया जायेगा।[1]

१. देखिए "जलायें किसलिए?", १७–७–१९२१।

(४) यदि आपको अपने विदेशी कपड़े छोड़ देनेकी हिम्मत न हो तो आप उन्हें घरपर छोटे-मोटे काम करते समय पहनकर फाड़ डालें; पर घरसे बाहर कभी विदेशी कपड़े पहनकर न जायें।

(५) यदि आपको थोड़ा भी अवकाश हो तो आप उसको राष्ट्रके लिए सम और ठीक बटदार सूत कातनेका काम सीखनेमें लगायें।

यदि आप छात्र या छात्रा हैं तो स्वराज्यकी स्थापना होनेतक आपको कमसे-कम चार घंटे प्रतिदिन सूत कातना, रुई पींजना या कपड़ा बुनना चाहिए। आप इतना किये बिना पढ़ने-लिखनेको पाप समझें।

कांग्रेस कमेटियाँ

लोग मुझसे पूछते हैं कि क्या कांग्रेसके रजिस्टरमें एक करोड़ सदस्य दर्ज हो गये हैं। मेरे सामने ठीक-ठीक आँकड़े तो नहीं हैं पर यदि हमें केवल औपचारिक पजीयनसे ही सन्तोष होता हो तो यह मैं अवश्य जानता हूँ कि हमारी सदस्य-संख्या लगभग उतनी हो गई है। पर हमें उसका ठीक-ठीक अर्थ समझ लेना चाहिए। वह यह कि हमारे पास ऐसे एक करोड़ पुरुष और स्त्रियाँ हैं जो कांग्रेसके सिद्धान्तमें विश्वास करते हैं और उसके लिए काम करना चाहते है। विदेशी कपड़ेका बहिष्कार उसकी सच्ची कसौटी है। यदि हमारे साथ एक-से विचार रखनेवाले एक करोड़ पुरुष और स्त्रियाँ हों तो हमें उसका प्रत्यक्ष प्रमाण सड़कों और गाँवोंमे दिखाई देना चाहिए। क्या हमें चलते समय ऐसा दिखाई देता है कि हर तीस स्त्री-पुरुषोंमें से एकने खादीके या कमसे-कम स्वदेशी कपड़े पहन रखे हैं? क्या हमें दिखाई देनेवाले अधिकांश व्यक्तियोंके पहनावे आदिमें स्वदेशीपन दिखाई देता है? इसका उत्तर अनिच्छासे ही सही किन्तु होगा नकारात्मक ही। इसलिए मैं कांग्रेसके सभी संगठनोंको यह सलाह दूंगा कि जबतक हम विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण बहिष्कार न कर दें तबतक हमें स्वदेशीके अतिरिक्त और किसी बातपर ध्यान ही नहीं देना चाहिए। इसके लिए यही उपयुक्त समय है। हर एक कांग्रेसी कार्यकर्त्ताको खद्दरके कपड़े पहनने चाहिए। यह तो स्वराज्यके सैनिककी पोशाक ही बन जानी चाहिए। मैं अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी आगामी बैठककी ओर इस आशासे दृष्टि लगाये हूँ कि सभी सदस्य वहाँ सैनिककी इस पोशाकसे सुसज्जित हो कर आयेंगे। यदि हमें ३१ अगस्ततक विदेशी कपड़ेका पूर्ण बहिष्कार कर देना है तो काग्रेसी संगठनोंको पींजने, कातने और बुननेवाली संस्थाओंका रूप ले लेना चाहिए। कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंको पींजने, कातने और बुननेके काममें प्रवीण हो जाना चाहिए। उन्हें लाचारीके भावसे साबरमती आश्रमको सूचना और मार्गदर्शन प्राप्त करनेके लिए नहीं लिखना चाहिए। ईश्वरकी कृपासे अब हर एक प्रान्तमें इससे सम्बन्धित प्रक्रियाओंका थोड़ा-बहुत ज्ञान हो गया है। हर एक प्रान्तमें कार्यकर्त्ताओंको पिंजारों, कतियों और बुनकरोंका सहयोगी बनना चाहिए, उनके धन्धेको सीखना चाहिए ताकि स्वयं कार्यकर्त्तागण उस धन्धेको संरक्षण दे सकें; उन्हें उनके साथ किसी प्रकारकी होड़ नहीं करनी है। उन्हें चरखों और तकलियोंके लिए बढ़इयों और लुहारोंके सहयोगीके रूपमें भी काम करना चाहिए। इस तरह पर्याप्त खादीका भण्डार बनाकर

उसे लागत दामपर बेचना चाहिए; इस लागतमें भण्डार चलानेका खर्च शामिल होना चाहिए। दूसरे शब्दोंमें फिलहाल हर एक कांग्रेस कार्यालयको शान्तिपूर्ण अस्त्रोंके संग्रह और निर्माणका आगार बन जाना चाहिए। क्या यह असंगत या असम्भव माँग है? क्या युद्धके समय इंग्लैंड, फ्रांस और जर्मनीमें प्रत्येक काम कर सकनेवाला व्यक्ति युद्धके उद्देश्योंको आगे बढ़ानेके लिए काम नहीं करता था? यदि हम यह विश्वास करते हैं कि स्वराज्य स्वदेशीके बिना प्राप्त नहीं किया जा सकता तो क्या उसका निष्कर्ष यह नहीं निकलता कि हमें सतत और बुद्धिमत्तापूर्वक अपना ध्यान अन्य सभी बातोंकी ओरसे हटाकर केवल बहिष्कार करने, विनिर्माण करने और वितरण करनेकी ओर लगाना चाहिए। सभाएँ और सभाओंमें होनेवाले भावुकतापूर्ण ओजस्वी भाषण बन्द कर दिये जाने चाहिए। हमें शासकोंके विषयमें सोचनेकी अपेक्षा अपनी कमजोरियों और कमियोंके विषयमें सोचना चाहिए। शासकोंके विषयमें सोचनेसे तो केवल घृणा, दुर्बलता और विवशता ही उत्पन्न होगी। अपनी कमजोरियों और कमियोंके विषयमें सोचने और तदनुसार कार्य करनेसे हममें साहस, शक्ति और आशा जागेगी। इसलिए यदि हम सभाएँ या बैठकें करें तो वे बहिष्कार और विनिर्माणकी आवश्यकताको प्रदर्शित करने, तथा उसके लिए मार्ग दिखानेके लिए केवल कार्रवाई सम्बन्धी बैठकें होनी चाहिए।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी आगामी बैठक

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी होनेवाली बैठकपर बहुत-कुछ निर्भर है। वाद-विवाद या व्यर्थकी बातचीतके लिए हमारे पास समय नहीं है। हमें यह कहनेमें समर्थ होना चाहिए कि क्या भारतको अगले कुछ महीनोंमें स्वराज्यकी स्थापना और खिलाफत तथा पंजाबमें हुए गलत कामोंके प्रतिकारके लिए संगठित किया जा सकता है; क्या हम सफलता सम्बन्धी आवश्यक बातोंके लिए एकमत हैं, और क्या हम उसके लिए अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर काम करनेके लिए तैयार हैं? आशा है कि उत्तरदायी अधिकारी अपने-अपने प्रान्तोंके विषयमें निम्नलिखित आँकड़े लेकर आयेंगे:

(क) तिलक स्वराज्य-कोषकी राशि,

(ख) कांग्रेस-रजिस्टरमें दर्ज सदस्योंकी संख्या,

(ग) चालू चरखोंकी संख्या और उनसे आजतक हुआ उत्पादन,

(घ) पींजनेवालों की संख्या,

(ङ) (१) हाथसे कते सूत, (२) भारतीय मिलोंमें कते सूत, और (३) विदेशी सूतके बुनकरोंकी संख्या,

(च) विदेशी वस्त्रोंका आयात करनेवालों की संख्या।

साथ ही वे नागरिक सविनय अवज्ञा और करबन्दी आन्दोलनकी सम्भावनाओंके सम्बन्धमें आवश्यक सूचना देनेकी तैयारीसे भी आयेंगे।

मुझे आशा है कि कमेटीकी यह बैठक कार्रवाई पूरी करनेके लिए होगी और इसमें निरर्थक वाद-विवादके द्वारा राष्ट्रीय समयका एक भी क्षण नष्ट न होने देनेकी सावधानी रखी जायेगी।

मिलोंमें बनी खादी

एक संवाददाताने इस तथ्यकी ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया है कि बाजारमें अब हमारे यहाँके मिलोंमें बनी हुई और जापानसे खरीदी हुई खादी मिल रही है। इसपर विश्वास करनेको जी नहीं होता। क्या वाणिज्य-व्यापारका स्तर इतना गिर गया है कि इस अनुल्लंघनीय क्षेत्रका ऐसा उल्लंघन करें। हमारी मिलोंके पास अपनी मशीनोंके लिए निश्चिय ही इतना काम है कि उन्हें झोंपड़ियोंमें रहनेवाले गरीब कामगारोंके मुँहसे उनकी रोटी छीननेकी जरूरत नहीं पड़नी चाहिए। फिर भी उपभोक्ताको तो सावधान हो ही जाना चाहिए। हाथसे कते सूतके बने कपड़ेको पहचाननेमें कभी गलती नही होती, विशेष रूपसे जब वह बिना कलफ लगा हुआ और बिना धुला हो। जो कपड़ा मिलका बना हुआ दिखाई देता हो और फिर भी जिसे हाथसे कता और हाथसे बुना हुआ कहा जाता हो उसके बारेमें सतर्क हो जाना चाहिए। सच तो यह है कि हाथसे कते और बुने कपड़ेकी अपनी विशेषता होती है; होनी भी चाहिए। तैयार होनेपर उसमें एक विशेष प्रकारका निखार होना चाहिए, और उसमें मिलके बने हुए कपड़ेकी बेजान बाहरी चमक-दमक नहीं होनी चाहिए। हाथकी कती खादीमें एक खुरदरापन होता है जो तापहर होता है। हाथसे बनी खादी पसीना सोखनेवाली, हलकी, देखनेमें अच्छी लगनेवाली होती है, और बुननेवाले और कातनेवाले दोनोंके पसीना बहाये बिना यह चार आने प्रति गजके हिसाबसे तैयार नहीं की जा सकती। यह इससे कममें केवल तभी तैयार की जा सकती है जब यह केवल बेकार सूतसे बनाई जाये, पर तब जल्दी जीर्ण हो जायेगी और कुछ ही बार धोनेसे फट जायेगी। जिन भण्डारोंसे हम परिचित हैं केवल वहींसे खादी खरीदना ठीक होगा। बम्बई और अहमदाबादकी कांग्रेस समितियोंने ऐसे प्रामाणिक भण्डार बना दिये हैं जहाँ शुद्ध खादी उचित दामोंपर मिल सकती है। खादी केवल वही है जिसका ताना-बाना हाथका कता हो और जो हाथसे बुनी हो।

कृपाण

'सिख यंग मैंस एसोसिएशन'के मन्त्रीके अनुसार कृपाणका सिखोंके लिए वही महत्त्व है जो ब्राह्मणोंके लिए यज्ञोपवीतका होता है। और अब पंजाब सरकार कृपाणकी लम्बाई और चौड़ाई निश्चित करके सिखोंको अपने पवित्र अधिकारसे वंचित करनेका प्रयत्न कर रही है। जिस प्रकार मैं शस्त्र रखने या उनका उपयोग करनेको घृणित समझता हूँ, उसपर जबरदस्ती रोक लगानेकी बातको मैं उससे भी अधिक घृणित मानता हूँ। जैसा कि मैंने तीन वर्ष पहले कहा था, किसी जातिको जबरदस्ती निःशस्त्र करनेके कामको इतिहासमें ब्रिटिश सरकार द्वारा भारतके प्रति किये गये जघन्य कृत्यके रूपमें माना जायेगा। यदि लोग शस्त्र रखना चाहते हैं तो उन्हें बिना किसी बाधाके शस्त्र रखने देना चाहिए। अबतक तो सिखोंके पास कृपाण बिना किसी रोक-टोकके रही है; इसलिए अब उसपर रोक लगाना उनके प्रति और भी घोर अन्याय होगा। मन्त्रीको यह सिद्ध करनेमें कोई कठिनाई नहीं है कि कृपाणके विरुद्ध छेड़े गये इस संघर्षके साथ-साथ इस बहादुर जातिके दमनके प्रयत्न किये जा रहे हैं। इसका कारण भी

स्पष्ट है। सिखोंमें राजनीतिक जागृति आ गई है। वे केवल अपने अधिकारियोंके कहने-पर मार-काटके कामसे ही सन्तुष्ट नहीं हो जाते। जिस कारणसे उन्हें लड़नेके लिए कहा जाता है उसके सब पहलुओंपर वे विचार करना चाहते हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वे यह जानना चाहते हैं कि उनकी 'स्थिति क्या है।' वे हर एक काममें बराबरीके भागीदार बनना चाहते हैं। सरकारको यह असहनीय है, और इस-लिए वह उनको दबा देनेपर तुली हुई है। सरकारके विचारमें जो उनमें सबसे अधिक वीर हैं, उनकी जबानपर ताला डाल दिया गया है। मैं केवल यह आशा कर सकता हूँ कि सिख अपने पवित्र शस्त्रको छोड़ देनेकी अपेक्षा सत्याग्रहका मार्ग अपनायेंगे। हम जोर-जबरदस्तीसे अनुशासन नहीं सीख सकते। शस्त्र रखनेका अधिकार होते हुए भी हम उनका प्रयोग न करने या दायित्व तथा आत्मसंयमके साथ उनका प्रयोग करना सीखें।

कितना सुन्दर!

पं० मोतीलाल नेहरूकी अनुमतिसे मैं रामगढ़में, जहाँ वे इन दिनों स्वास्थ्य-लाभ कर रहे हैं, व्यतीत किये हुए उनके जीवनका निम्नलिखित शिक्षाप्रद और मनोरंजक वर्णन शब्दशः उद्धृत कर रहा हूँ:—

जिस छोटी पहाड़ीपर मैं अकेला केवल अपने एक नौकरके साथ आराम कर रहा हूँ, वहाँका जलवायु और वातावरण मेरे लिए बहुत अनुकूल सिद्ध हो रहा है। कुछ दमा और खांसी अब भी शेष है, पर स्वास्थ्य और शक्ति प्राप्त होनेके साथ-साथ वह अवश्य ही दूर हो जायेगी। दुःखकी बात केवल यही है कि बीमारीके बादकी देखभालके लिए मेरे पास पर्याप्त समय नहीं है; और यह व्यावसायिक जीवनकी पिछली बुराइयोंके कारण है जो अब भी मेरे पीछे पड़ी हुई हैं। जब मैंने वकालत छोड़ी तब मेरे पास जो सैकड़ों मुकदमे थे उनमें से दो को मैं छोड़ नहीं सका था। इनमें से एक मामला सरूपके[1] विवाहके ठीक पहले आया था, और कुछ सीमातक मेरे स्वास्थ्यके खराब होनेका कारण यह भी था, और अब यह दूसरा मामला मेरे स्वास्थ्यके लिए आवश्यक आराममें आड़े आ रहा है। यह एक लम्बा और नया मुकदमा है और ५ जुलाईको शुरू होगा, जिसके लिए पहलेसे तीन या चार दिनका अध्ययन आवश्यक होगा। मैं इसे लखनऊमें होनेवाली अखिल भारतीय बैठकके बाद लेनेका प्रयत्न कर रहा हूँ, पर मैंने फिलहाल रामगढ़से रवाना होनेकी तारीख ३० जून निश्चित कर ली है। यदि मुझे केवल कुछ ही सप्ताहोंका समय और मिल जाये तो मैं आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि मेरे अन्दर एक बैल-जितनी शक्ति आ जायेगी। पर अहिंसावादी असहयोगी व्यक्तिके लिए शारीरिक दृष्टिसे इतना अधिक शक्ति-शाली होना शायद निरापद नहीं है।

मैं जिस प्रकारका जीवन यहाँ व्यतीत कर रहा हूँ, आप उसके बारेमें जानना चाहेंगे। अतीतके उन सुखद (?) दिनोंमें जब मैं पहाड़ोंपर आया करता

१. विजयलक्ष्मी, उनकी बड़ी पुत्री।

था, तब मेरे साथ दो प्रकारका भोजन बनानेकी व्यवस्था रहा करती थी — एक अंग्रेजी और दूसरी भारतीय। शिविरमें छोटी हाजरीके बाद, हम जंगलकी ओर रवाना होते और हमारे साथ राइफलों, छोटी बन्दूकों और कारतूसोंका पूरा इन्तजाम रहता, और कभी-कभी तो हमारे साथ हाँका करनेवालों की एक छोटी-सी फौज ही रहती थी। हम दिन ढलेतक अपने रास्तेमें आनेवाले भोले-भाले जानवरोंको मारते रहते थे। इस बीच हमें जंगलमें घरके समान ही बिलकुल समयपर बाकायदा खाना और चाय मिल जाती थी। शिविरमें लौटनेपर हमारे लिए बढ़िया भोजन तैयार मिलता; हम डटकर भोजन करते और निश्चिन्ततासे गाढ़ी नींद सोते थे। शान्त रूपसे चलनेवाले जीवन-क्रममें अव्यवस्था उत्पन्न करनेवाली कोई बात नहीं होती थी; हाँ, असावधानीसे निशाना चूक जानेपर किसी गरीब जानवरकी जान बच जाती थी तो जरूर नाराज होनेका प्रसंग उपस्थित हो जाता था! और अब पीतलके कुकरने (जिसे हमने तिब्बिया कालेजके उद्घाटनके समय खरीदा था) उक्त दो भोजन-व्यवस्थाओंकी जगह ले ली है; परिचारकोंके दलके बदले अब केवल एक ही नौकर रह गया है जिसे बहुत होशियार नहीं कहा जा सकता। पहले जहाँ हम अपना सामान खच्चरों-पर लादकर ले जाते थे वहाँ अब चावल, दाल और मसालेके तीन छोटे-छोटे थैले — जिन्हें खादीके बदले विदेशी कपड़ेका बनानेके लिए मैं कमलाको[1] कभी क्षमा न करूँगा — ही रह गये हैं। जहाँ पहले अंग्रेजोंकी तरह नाश्ता, दोपहरका और रातका भोजन करते और साथ ही सुबह-शामकी चायके साथ बहुत-सारे फल लेते थे और कभी-कभी उपलब्ध होनेपर एक या दो अंडे मिल जाते थे, वहाँ अब दोपहरमें मुख्य भोजनके रूपमें केवल चावल, दाल और सब्जी ही लेते हैं, अलबत्ता कभी-कभी खीर भी होती है। शिकारकी जगह लम्बे सैर-सपाटोंने ले ली है और राइफलोंकी जगह पुस्तकों, पत्रिकाओं और समाचार-पत्रोंने (पुस्तकोंमें मेरी प्रिय पुस्तक है एडविन अर्नाल्डकी "सांग सिलेश्चियल",[2] जिसे अब मैं तीसरी बार पढ़ रहा हूँ)। जब जोरकी वर्षा होती है, जैसी कि इस समय हो रही है, तब इस प्रकारके ऊल-जलूल पत्र लिखनेके अतिरिक्त और कोई काम नहीं रह जाता। [शेक्सपियरके शब्दोंमें कहूँ तो] "क्यासे क्या हो गया?" पर वास्तवमें जीवनका जितना रस मुझे इसमें मिल रहा है उतना पहले कभी नहीं मिला। केवल चावल समाप्त हो गये हैं, और मैंने ब्राह्मणके समान इस समय पासमें विद्यमान जगतनारायणके[3] राजसी भण्डारसे चावलके धर्मार्थ दानके लिए प्रार्थना की है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१–७–१९२१

१. जवाहरलाल नेहरूकी पत्नी।

२. भगवद्‌गीताका अंग्रेजी अनुवाद।

३. प्रमुख वकील, हंटर कमेटीके सदस्य; देखिए खण्ड १६।

२०२. शिमलाकी छाया

यह बात बिलकुल साफ है कि असहयोग आन्दोलन न ब्रिटिश-विरोधी है और न ईसाई-विरोधी, लेकिन यदि इसका प्रमाण ही चाहिए तो श्री स्टोक्सका उदाहरण हमारे सामने है। वे अंग्रेज है और भारतमें बस गये हैं। वे कट्टर ईसाई है। उन्होंने अपना सर्वस्व बेगारीकी कुप्रथाको दूर करनेमें लगा दिया है। ये श्री स्टोक्स पक्के असहयोगी और कांग्रेसी हैं। मेरे विचारमें मेरा यह कहना ठीक है कि वे धीरे-धीरे विचारपूर्वक उसके अनुयायी बने है। श्री स्टोक्स सरकारसे जितना संघर्ष कर रहे हैं, उतना कोई भारतीय भी नहीं कर रहा है। वे पर्वतीय लोगोंके सच्चे मार्गदर्शक, दार्शनिक और मित्र बन गये हैं। पाठकको यह जानना चाहिए कि बेगार शिमलामें ही, कहा जाये तो वाइसरायकी नाकके बिलकुल नीचे, चल रही है; और लॉर्ड रीडिंग फिर भी इस बुराईको दूर करनेमें असमर्थ हैं। मुझे इस बातमे सन्देह नही कि उनके मनमें इसे दूर करनेकी पर्याप्त इच्छा तो है, पर वे जिला अधिकारियो और अन्य अधिकारियोंको अपनी इच्छाके मुताबिक नहीं चला पाते। कुछ अधिकारी इतने निर्लज्ज है कि यदि वे ब्रिटिश सरकारके सीधे प्रशासनमें रहनेवाले प्रदेशोंमें मनमानी नहीं कर पाते है तो देशी रियासतोंके द्वारा करा लेते हैं। शिमलाके पासके पहाड़ी भागोंमें छोटी-छोटी देशी रियासतें है जिनमें ब्रिटिश अधिकारी ही सर्वशक्तिमान् होता है। वह अपने अधिकार-क्षेत्रमें वाइसरायसे भी अधिक शक्ति-सम्पन्न होता है। वह रियासतोसे अपनी इच्छाके अनुसार काम करवा सकता है, और इतने पर भी कह सकता है कि उन रियासतों-के कामोंमें उसका कोई हाथ नही है। प्रतिपालक अधिकरण (कोर्ट ऑफ वार्ड्स) के अन्तर्गत एक ऐसी रियासत है जहाँ शिमलाके उप-आयुक्त (डिप्टी कमिश्नर) के इशारेपर बेगार-आन्दोलनको दबानेका प्रयत्न चल रहा है। मेरे एक पारसी मित्रने मेरी बातको सुधारते हुए ठीक ही कहा है कि यह समस्या ब्रिटिश शासनके समयसे नहीं, आदिकालसे, मानव-इतिहासके आरम्भसे ही चली आ रही है। और दमन करने-वालों का विशेष प्रिय तरीका यही है कि आन्दोलनके मुख्य-मुख्य व्यक्तियोंको जनताके बीचसे हटा दिया जाये। जड़पर ही कुठाराघात होना चाहिए और इसीलिए गरीब पर्वतीय लोगोंके सबसे अधिक कार्यक्षम और सुसंस्कृत व्यक्ति कपूरसिंहको बन्द कर दिया गया है। सबूत किस ढंगसे इकट्ठा किया गया था, इसका एक विशद वर्णन इस प्रकार है:

> **जनताको पूरी तौरपर आतंकित कर दिया गया था। शिमलासे पुलिस बुलाई गई और कई लोग गिरफ्तार कर लिये गये। सभी लोगोंको मशीनगनोंसे उड़ाने और कालापानी भेज देनेकी धमकियाँ देकर डराया गया . . .ऐसे वाता-वरणमें मुकदमेके लिए सबूत इकट्ठा किया गया।**

इससे पंजाबके मार्शल लॉके दिनोंकी याद हो आती है।

पर्वतीय लोगोंको अपने विश्वसनीय नेतापर किये गये इस अत्याचारके विषयमें बुरा लगना स्वाभाविक है। आशा है कि जबतक उनके नेताको छोड़ नहीं दिया जायेगा तबतक वे श्री स्टोक्सके नेतृत्वमें चलकर किसी भी तरहकी बेगार करनेसे दृढ़तापूर्वक इनकार कर देंगे; फिर उसके लिए उनको पूरे पैसे भी क्यों न मिलें? उन्हे कमजोर नहीं पड़ना चाहिए, बल्कि एक संकल्प करके स्वयं ही अधिकारियोंके क्रोधका सामना करनेके लिए डट जाना चाहिए और अपने नेताके समान जेलकी सजाका सामना करना चाहिए।

बेगार कायम रखनेके लिए यह हठ क्यों किया जाता है? अधिकारियोंकी सत्ता, शान और सुविधाके लिए। और इसलिए कि अधिकारियोंका काम बेगारसे ही चलता है। बेगारके बिना वे हिमालयके जगलोमें शिकार नहीं खेल सकते। यदि बेगार बन्द हो गई होती तो ड्यूकको पहाड़ी किलोंमें शिकारके लिए नहीं ले जाया जा सकता था। यदि इसे लुत्फ माना जाये तो शेरो और भोले-भाले जानवरोंके शिकार करनेका लुत्फ उठानेके लिए हजारों अनिच्छुक गाँववालों के परिश्रमके बलपर वहाँतक एक नया रास्ता तैयार कराना पड़ा था। यदि पशुओंके पास हमारी समझमें आने लायक वाणी होती तो वे अपना पक्ष ऐसे शब्दोंमें प्रस्तुत करते कि मानवता स्तब्ध रह जाती। जो जंगली जानवर हमें परेशान करने आते हैं, उनको मारनेकी बात तो मै समझ सकता हूँ, पर मनुष्यकी रक्त-पिपासा शान्त करनेके लिए किये जानेवाले आयोजनोंपर बहुत पैसा लुटानेके पक्षमें जो तर्क दिये जाते हैं उनमें से कोई भी मुझे ठीक नही जँचता। यदि बेगार-प्रथा न होती तो अधिकारियों या पर्यटकोंके मनोरंजनके लिए शिकारके आयोजन भी न हो पाते। मुझे भारतीय राजाओंके रीति-रिवाज और महाभारतके दृष्टान्त बतलानेकी कोई जरूरत नहीं है। जिन दृष्टान्तों या रीति-रिवाजोंको मैं ठीक नहीं समझता या जिनका नैतिक आधारपर समर्थन नहीं कर सकता, मैं उनका दास बननेके लिए तैयार नहीं हूँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-७-१९२१

२०३. स्त्रियोंकी स्थिति

कटककी श्रीमती सरलादेवी लिखती हैं:—

क्या आप यह नहीं मानते कि स्त्रियोंके प्रति किया जानेवाला दुर्व्यवहार भी अस्पृश्यताकी तरह व्यापक रोग है। मैं जिन तरुण 'राष्ट्रवादियों' के सम्पर्कमें आई हूँ उनमें से नब्बे प्रतिशतका दृष्टिकोण मैंने इस मामलेमें पशुवत् पाया है। भारतमें कितने असहयोगी हैं जो स्त्रियोंको केवल भोगकी वस्तु नहीं समझते? क्या स्त्रियोंके प्रति अपने दृष्टिकोणमें परिवर्तन किये बिना भी सफलताकी आवश्यक शर्त — आत्मशुद्धि — सम्भव है?

मैं इस मतसे सहमत नहीं हो सकता कि स्त्रियोंके साथ किया जानेवाला दुर्व्यवहार अस्पृश्यता-जितना व्यापक रोग है। श्रीमती सरलादेवीने इस बुराईको बहुत बढ़ा-चढ़ाकर कहा है। और न ही असहयोगियोंके विरुद्ध लगाये गये इस आरोपको सिद्ध किया जा सकता है कि स्त्रियोके प्रति उनका दृष्टिकोण मात्र वासना-पूर्तिका है। उद्देश्य कोई भी हो, नमक-मिर्च मिलाकर पेश करनेसे बात कमजोर हो जाती है। पर साथ ही, मुझे इस बातको स्वीकार करनेमें जरा भी हिचक नहीं है कि अपने-आपको सच्चे स्वराज्यके योग्य बनानेके लिए पुरुषोंको अपने मनमें स्त्रियों और उनकी पवित्रता-के प्रति कहीं अधिक सम्मानकी भावना पैदा करनी चाहिए। श्री एन्ड्रयूजने इस सम्बन्धमें जो बात कही है उसमे इन महिलाकी बातकी अपेक्षा कहीं अधिक सचाई है। उन्होंने बहुत तीखे शब्दोमें कहा है कि हमारी पतिता बहनोंकी लज्जाजनक स्थिति हमारे लिए दुःखकी ही बात हो सकती है; हम किसी भी तरह अपने अहंकारके पोषणके लिए उसका उपयोग करें, यह बहुत गलत है। कोई असहयोगी आनन्द और उत्साहके साथ यह कहे कि इन गुमराह बहनोंमें से कुछ ऐसी हैं जो अपना शरीर सिर्फ असहयोगियोंको ही देती है, तो यह बहुत ही गिरानेवाला विचार है। हमारे नैतिक कल्याणके विषय अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है और इस मामलेमें असहयोगियों और सहयोगियोंमें कोई भेद नहीं किया जा सकता। जबतक एक भी ऐसी स्त्री मौजूद है जिसे हम अपनी वासना-तृप्तिके लिए रखते है, हम सभी पुरुषोंके मस्तक लज्जासे झुक जाने चाहिए। हम ईश्वरकी सर्वश्रेष्ठ कृतिको अपनी वासना-तृप्तिका साधन बनाकर स्वयंको पशुवत् बनायें, इसकी अपेक्षा तो मैं यही पसन्द करूँगा कि समूची मानवजाति ही नष्ट हो जाये। पर यह समस्या केवल भारतकी नहीं है। यह तो संसार-भरकी समस्या है। मैं शारीरिक सुखोंके पीछे दौड़नेवाले आधुनिक कृत्रिम जीवनको त्यागनेका प्रचार इसीलिए करता हूँ और स्त्री-पुरुषोंसे सादगीका जीवन अपनानेके लिए इसीलिए कहता हूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि पशुताके स्तरसे नीचे उतरनेसे अपनेको बचानेका केवल यही एक मार्ग रह गया है कि हम समझ-बूझकर सादगीकी ओर लौट चलें। चरखा इस सादगीका ही प्रतीक है। मेरी उत्कट इच्छा है कि भारतीय नारियोंको अधिकसे-अधिक स्वतन्त्रता मिले। मैं बाल-विवाहोंसे घृणा करता हूँ। मैं बाल-विधवाको देखकर सहम जाता हूँ, और जब मैं किसी पतिको अपनी पत्नीके मरते ही एक बर्बर उदासीन भावसे दूसरा विवाह रचाते देखता हूँ तो क्रोधसे काँपने लगता हूँ। मैं उन माता-पिताओंकी अपराध-पूर्ण उदासीनताकी निन्दा करता हूँ जो अपनी पुत्रियोंको बिलकुल अज्ञानी और निरक्षर रखते है और किसी सम्पन्न युवकसे विवाह कर देने मात्रके उद्देश्यसे ही उनको पालते-पोसते हैं। इस दुःख और क्रोधके होते हुए भी मैं इस समस्याकी कठिनाईको समझता हूँ। स्त्रियोंको मतदानका अधिकार होना चाहिए और कानूनी तौरपर उनका दर्जा पुरुषोंके बराबर होना चाहिए। पर समस्या यही समाप्त नहीं हो जाती। यह तो शुरू ही तब होती है जब नारियाँ देशकी राजनीतिक गति-विधियोंमें हाथ बँटाने लगती हैं।

मेरे एक बड़े अच्छे मुसलमान मित्रने लन्दनमें नारी-आन्दोलनके प्रमुख कार्यकर्त्ताके साथ हुई अपनी बातचीतका वर्णन बड़े सुन्दर ढंगसे किया था। उसको मैं यहाँ अपना आशय स्पष्ट करनेके लिए प्रस्तुत करता हूँ। वे मित्र नारी स्वातंत्र्य आन्दोलनकी एक

बैठकमें भाग ले रहे थे। वहाँ एक महिला मित्रको बैठकमें एक मुसलमानको देखकर आश्चर्य हुआ। उसने उनसे पूछा कि वे बैठकमें कैसे पहुँच गये? मेरे मित्रने उनको बतलाया कि बैठकमें उपस्थित होनेके दो बड़े-बड़े और दो छोटे-छोटे कारण थे। बहुत छोटी आयुमें ही उनके पिता मर गये थे और वे जो-कुछ भी बन पाये हैं वह सब अपनी माताके कारण ही। फिर उनका विवाह भी ऐसी स्त्रीसे हुआ जो जीवनमें उनकी वास्तविक सहभागिनी सिद्ध हुई। और उनके कोई पुत्र नहीं था, केवल चार पुत्रियाँ हैं और वे सभी छोटी-छोटी हैं और वे स्वयं एक पिताके नाते चाहते हैं कि वे अधिक-से-अधिक उन्नति करें। ऐसी स्थितिमें नारी-आन्दोलनमें उनके भाग लेनेपर किसीको कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। आगे उन्होंने कहा कि मुसलमानोंपर यह दोषारोपण किया जाता है कि वे स्त्रियोंके प्रति उदासीन रहते हैं। इससे अधिक गलत और अपमान-पूर्ण कथन हो ही नहीं सकता। इस्लामी कानूनमें स्त्रियोंको समान अधिकार दिये गये थे। पर उनके खयालसे पुरुषने ही अपनी वासनाके लिए स्त्रीको पतिता बना दिया है। उसने स्त्रीकी आत्माकी प्रशस्ति करनेके बजाय उसके शरीरकी प्रशस्ति आरम्भ कर दी, और वह अपनी इस चालमें इतना ज्यादा सफल रहा कि आज स्वयं स्त्री यह महसूस नहीं कर पाती कि वह भी मात्र शारीरिक शृंगारसे प्रेम करने लगी है जो एक तरहसे उसकी दासताकी ही निशानी है। और यह कहते-कहते उनका गला रुँध गया कि यदि ऐसा नहीं तो क्यों बहनोंको अपने शरीरका साज-शृंगार करनेमें ही सबसे अधिक आनन्द आता है? क्या हम पुरुषोंने उन स्त्रियोंकी आत्माको ही बिलकुल कुचल नहीं दिया है? नहीं, उन्होने अपने ऊपर काबू पाते हुए कहा कि वे सिर्फ इतना ही नहीं चाहते कि नारियाँ औपचारिक स्वतन्त्रता प्राप्त करके ही रह जायें, बल्कि उन्हें अपने बन्धनोंको भी तोड़नेमें समर्थ होना चाहिए, जिनमें उन्होंने स्वयंको अपनी इच्छासे जकड़ लिया है और इसीलिए उन्होंने तय कर लिया है कि वे अपनी पुत्रियोंको बड़ी होनेके बाद स्वतन्त्र रूपसे कोई काम करने योग्य बनायेंगे।

इस सुविचारपूर्ण वार्ताका और अधिक ब्यौरा देनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं पत्र-लेखिकासे यही कहूँगा कि वे मुसलमान मित्रकी इस वार्ताके मुख्य विचारके विषय-में मनन करे और इस समस्याको हल करनेकी कोशिश करें। स्त्रीको स्वयंको पुरुषकी वासना-तृप्तिका साधन समझना बन्द कर देना चाहिए। इसका इलाज उसके अपने ही हाथमें ज्यादा है। यदि वह पुरुषके समान उसकी सहभागिनी बनना चाहती है तो उसे पुरुषके लिए और अपने पतिके लिए भी अपने शरीरका साज-शृंगार करनेसे इनकार कर देना चाहिए। मैं सीताके विषयमें इस प्रकार कभी सोच भी नहीं सकता कि उन्होंने रामको रिझानेके लिए शारीरिक साज-शृंगारपर एक क्षण भी नष्ट किया होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-७-१९२१

२०४. पत्र-लेखकोंसे

पी० सिष्टा : वकीलोंसे सम्बन्धित कांग्रेसके प्रस्तावका[1] उद्देश्य यह था कि जिन न्यायालयोंके द्वारा सरकार अपनी सत्ताको मजबूत करती है उन न्यायालयोंकी प्रतिष्ठा कम हो जाये।

एन० एच० मोदी : संविधानका विचार किये बिना जो लोग रसद और बेगार लेते हैं, उनको निश्चय ही कांग्रेस समितियोंमें पदाधिकारी नहीं बनना चाहिए। मेरी रायमे, कांग्रेसके प्रस्तावसे नामजद सदस्योंके पदाधिकारी बननेपर रोक लगती है। साथ ही कोई अवैतनिक मजिस्ट्रेट भी पदाधिकारी नहीं बन सकता। इक्कीस वर्षसे कम आयुके लोग निश्चय ही सदस्य नहीं बन सकते, भले ही वे कितने भी पढ़े-लिखे क्यों न हों। निजी रूपसे मैं इस बातमें विश्वास नहीं कर सकता कि सहयोगी असहयोगका कार्य सफलतासे चला सकते है। इसलिए मै चाहता हूँ कि जहाँ कार्य संगठित करनेके लिए कोई असहयोगी नही मिल सकता, वहाँ कार्य आरम्भ ही न किया जाये। असहयोगी मुसलमानको अवश्य ही विदेशमें बनी तुर्की टोपी नही पहननी चाहिए। जो व्यक्ति कांग्रेस समितियोंके चुनावमें अपने लिए मत माँगनेके लिए पैसे लेकर काम करनेवाले लोग नियुक्त करता है, मैं उसे अयोग्य उम्मीदवार समझता हूँ। मैं इस पत्र-लेखकसे और दूसरे लोगोंसे यह कहता हूँ कि अन्ततः इस बातका चुनाव करना तो मतदाताओंके हाथमें है। यदि असहयोगी मतदाता सहयोगियोंको या संदिग्ध चरित्रके लोगोंको चुनना तय करते हैं तो कोई भी संविधान उन्हें सार्वजनिक जीवनमे प्रवेश करनेसे नहीं रोक सकता। और चूँकि सहयोगियोंको भी कांग्रेसमें सम्मिलित होनेका अधिकार है, इसलिए यदि वे कांग्रेसमें आते है तो जहाँ उनका बहुमत होगा वहाँ वे निःसन्देह अपनी पसन्दके उम्मीदवारोको चुनेंगे। कांग्रेसके संविधान-में दलोंका खयाल नहीं रखा गया है। हाँ, कांग्रेसके असहयोग-सम्बन्धी प्रस्तावमें, जो लगभग निर्विरोध पारित किया गया था, यह आवश्यक रखा गया है कि असहयोगी उन लोगोंको ही चुने जो कांग्रेस कार्यक्रमका अधिकसे-अधिक दृढ़तासे पालन करते हों, जिससे प्रस्ताव ठीक तरह अमलमें लाया जा सके।

के० बी० लाल गुप्त : इस बातका कभी भी दावा नहीं किया गया है कि चरखेसे किसी परिवारका निर्वाह हो सकता है। दावा केवल यही किया जाता है कि चरखेसे गरीबको भोजन मिल सकता है। किन्तु उसका सबसे बड़ा दावा तो यह है कि वह राष्ट्रको समृद्ध बनानेके लिए अनिवार्य है।

बी० एस० एम० : फौजदारी या दीवानीके झूठे मुकदमोंमें गवाही देनेके सम्बन्धमें आपसे मेरा कहना है कि आप कार्यकारिणी समितिके स्पष्टीकरण को देखें। जहाँ नगरपालिकाएँ स्कूलोंका राष्ट्रीयकरण कर दे, वहाँ भी यह अच्छा होगा कि कांग्रेसके

१. इसमें वकीलोंसे अदालतोंका बहिष्कार करनेको कहा गया था।

विशेषज्ञ उपलब्ध हों तो वे उन स्कूलोंको उनके नियन्त्रण एवं देखरेखमें रहने दें। खिलाफत और पंजाबके अन्यायोंका परिमार्जन हो जाये तो भी जबतक स्वराज्य नहीं मिलता, असहयोग बन्द नहीं किया जा सकता। मैंने अपनी शिमलाकी भेंट जनताको विस्तारसे नही बताई, यह गोपनीयता मेरी रायमें पाप नही है। जब कोई व्यक्ति अपने किसी मित्रकी विश्वास करके कही हुई बातको बतानेसे इनकार करता है तब वह पाप नही करता। विश्वासको कायम रखने और गोपनीयता न रखनेमें पूरी संगति है। हम दण्ड-भयसे या भावी अनिष्ट-भयसे किसी बातको गुप्त रखें, यह सम्भव है।

तेजसिंह वर्मा : फीजी और असमके लोगोंको लेनेका आपका कृपापूर्ण प्रस्ताव श्री एन्ड्र्यूजके पास भेज दिया गया है। उनका पता है—शान्तिनिकेतन, बोलपुर, पूर्व भारत रेलवे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-७-१९२१

२०५. सभ्यताका उपहास

यद्यपि मैं साहित्य पढ़नेका प्रेमी हूँ, किन्तु मुझे किसी साहित्यिक कृतिको पढ़नेका अवसर कठिनाईसे ही मिलता है। 'नेशन' साप्ताहिकका पिछले बड़े दिनपर निकाला गया अंक मेरे पास महीनोंसे पड़ा है। उसमें 'लॉ ऐंड गॉस्पेल'[१] शीर्षकसे एक विचारपूर्ण निबन्ध है। यह निबन्ध वर्तमान आन्दोलनपर इतना अधिक लागू होता है कि 'यंग इडिया'के जो अनेक पाठक उसे देख नहीं सके हैं उनके लाभके लिए मैं उसे किसी तरहका बहाना बताये बिना ज्योंका-त्यों पूरा उद्धृत करता हूँ। उस निबन्धके योग्य लेखकने विश्व-विद्रोहको तत्त्वतः धार्मिक आन्दोलन बताया है। पाठकोंको इस बातका निर्णय करना चाहिए कि क्या भारतीय असहयोग आन्दोलन, जो अहिसाकी स्पष्ट मान्यतापर आधारित है (भले ही हम उस अहिंसाको व्यवहारमें लानेमें बहुत सफल न भी हों), उन सभी आन्दोलनोंमे सबसे अधिक धार्मिक नहीं है जो विश्वके विभिन्न भागोंमें मनुष्यको ऐसी प्रणालीकी दासतासे मुक्त करनेके लिए चलाये जा रहे हैं, जिसे हम झूठ-मूठ ही सभ्यता कहते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-७-१९२१

१. मूल अंग्रेजी निबन्धके लिए देखिए अंग्रेजी खण्ड २०, परिशिष्ट ५।

२०६. त्याग और उत्पादन

पुरातनका त्याग और निर्माण — नाश और रचना — असहयोगके ये दो अंग हैं। हम इन दोनोंमें से एकके बिना भी काम नही चला सकते। हमने जो कदम उठा लिया है और जिस स्थानपर हम आ खड़े हुए है उसके अन्तर्गत ये दोनों अंग पूरी तरह आ जाते हैं और मेरी समझसे तो इनके बिना हम आगे बढ़ ही नहीं सकते। मै किसी अन्य प्रकारसे अहिंसात्मक असहयोगके आन्दोलनको चलाना असम्भव समझता हूँ।

हम स्वदेशीके बिना एक डग भी आगे नहीं बढ़ सकते, मुझे यह भासित होता ही रहता है। हमारी शक्तिका पूर्ण विकास इसी तरह हो सकता है। ज्ञानपूर्वक नाश और ज्ञानपूर्वक निर्माण इसके अन्तर्गत आ जाता है। इसीमें राष्ट्रके सब अंगोंका व्यायाम और उनकी शक्तिका परीक्षण हो जाता है। राष्ट्र अबतक किसी भी कार्यमें पूरे मनसे नहीं लगा है। स्वदेशीका सफल प्रयोग जी-जानसे जुटे बिना असम्भव है। जो राष्ट्र पूरे मनसे प्रयत्न करता है उसके लिए स्वराज्य हस्तामलकवत् है; और स्वदेशीके बिना स्वराज्यको आकाश कुसुमके समान समझना चाहिए।

स्वदेशीकी सफलताके लिए हमें विदेशी कपड़ेका पूरा त्याग करना है और उसकी कमी नया देशी कपड़ा बनाकर पूरी करनी है। हम अभीतक तो नाश करनेसे डरते थे। अब हमे चरखेके रूपमें रत्नचिन्तामणि मिल गया है। इसका अर्थ यह है कि हमें उत्पादनका अचूक उपाय मालूम हो गया है। किन्तु हमें त्यागके सम्बन्धमें बहुत ध्यान देनेकी जरूरत है। उत्पादनकी गति एक निश्चित सीमातक ही बढ़ सकती है। बादमें तो वह सहज रूपसे बढ़ती रहेगी। नाशका कार्य एक क्षणमें किया जा सकता है। नाश करनेके लिए भी विशेष भावनाकी आवश्यकता होती है। जब हमारे मन बदल जायें तब समझना चाहिए कि अब हम नाश करनेके लिए तैयार हो गये हैं।

त्याग वैराग्यके बिना नहीं टिकता यह बात बहुत अनुभवके आधारपर कही गई है। हमें विदेशी कपड़ेके प्रति इतनी विरक्ति, इतनी अप्रीति हो जानी चाहिए जितनी किसी मलिन वस्तुके प्रति होती है। जबतक हमारे मनमें इतनी विरक्ति उत्पन्न नहीं होती तबतक हमारा मन जापानकी साड़ी या मैनचेस्टरकी मलमलकी तरफ जाता रहेगा। और तबतक हम इस तरहकी चीजोंकी माँग करते रहेंगे एवं तबतक ऐसी चीजोंके बेचनेवाले हमें धोखा देकर इन चीजोंको हमारे सिर मढ़ते रहेंगे। इसलिए अभी तो हमें वैसी दिखनेवाली चीजोंको छूना भी नहीं चाहिए। कहीं हम धोखा न खा जायें, यह भय तो हमें लगता रहना चाहिए। इस तरहकी विरक्ति उत्पन्न करनेके लिए हमें यह भी स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि हमारी दासताका मूल विदेशी कपड़ा है। दूसरी सब चीजें उसके बाद ही आई हैं। ईस्ट इंडिया कम्पनीकी कोठी विदेशी कपड़ेके पीछे और उसीके लिए बनाई गई थी।

पहली अगस्त हमारे लिए एक महान् स्मृति-दिवस होना चाहिए। हमारे युगके लोकमान्यकी पहली पुण्यतिथि उसी दिन पड़ती है। उस दिन हम संसारको कौन-सा चमत्कार करके दिखायेंगे?

हमारे मनमें लोकमान्यके प्रति जो पूज्यभाव है उसको हम किस प्रकार व्यक्त करें? उसका केवल एक उपाय है, हम उस दिन सब तरहके विदेशी कपड़ेका पूरा बहिष्कार करें। हम सब उस दिन प्रत्येक शहर या गाँवमें एक ही स्थानपर इकट्ठे हों और अपने सब विदेशी कपड़े लेकर उनका वहाँ सदाके लिए त्याग करें। इसमें लोकमान्यका अधिकतम सम्मान आ जाता है और इस एक कामको पूरा करनेसे ही हमारे लिए एक वर्षमें स्वराज्य लेना सर्वथा सम्भव हो जाता है। इसलिए पहली अगस्ततक तो खाते-पीते, बैठते-उठते यही विचार करते रहें कि हम स्वयं विदेशी कपड़ेका त्याग कैसे कर सकते है और दूसरोंसे कैसे करा सकते हैं। हमने धन-संग्रहके लिए जितना प्रयत्न किया था उससे अधिक प्रयत्न हमें विदेशी कपड़ेके त्यागके लिए करना है। परन्तु प्रत्येक जातिको अपना इन्तजाम खुद कर लेना चाहिए। प्रत्येक जातिको विदेशी कपड़ा इकट्ठा करके कांग्रेसकी [बहिष्कार] समितिको दे देना चाहिए और उसकी रसीद ले लेनी चाहिए। यह कार्य स्त्रियोंको अधिक कठिन लगेगा। उनके लिए रुपया देना आसान था जेवर देना भी आसान था, किन्तु विदेशी कपड़ेकी सुन्दर लगनेवाली साड़ियोंको निकालकर दे देना तो उन्हें बहुत कठिन लगेगा। फिर भी उन्हें इतना कड़वा घूँट पीना ही है। समस्त राष्ट्रके लिए यह घूँट अन्तिम घूँट है। उसके बाद तो थोड़ेसे स्त्री-पुरुषोंको जेल जानेके लिए तैयार रहना होगा। ईश्वर गुजरातके स्त्री-पुरुषोंको इतनी त्याग-वृत्ति दे।

हमारे पास समय थोड़ा है किन्तु इसीमें हमें अपना यह-सब काम कर लेना है।

दूसरा अंग है उत्पादन। जो लोग खादी पहनने लगे हैं उन्हें खादीके उत्पादनमें जुट जाना चाहिए। इस कार्यमें शिथिलता करना पाप माना जायेगा। यदि राष्ट्र विदेशी कपड़ेको सर्वथा त्याग देगा तो हमें बहुत अधिक खादीकी जरूरत होगी। हम विदेशी कपड़ेको इसलिए नष्ट करते हैं कि हमें खादीका उपयोग बढ़ाना है; खादीका उपयोग इसलिए बढ़ाना है कि हमें उसके द्वारा चरखेकी प्रवृत्ति बढ़ानी है और राष्ट्रको उद्योगी बनाना है, एवं लोगोंकी झोंपड़ियोंमें समृद्धिका प्रवेश कराना है। प्रत्येक भारतीयकी औसत वार्षिक आय छब्बीस रुपये है; इसे दूना करनेका यह एक आसान तरीका है। करोड़ों लोगोंकी आय-वृद्धिका कोई दूसरा तरीका नहीं है। इसलिए गुजरातके हर घरमें चरखा चलाया जाना चाहिए और गुजरातके हर गाँवमें हाथके सूतकी खादीका उत्पादन होना चाहिए। इस समय कांग्रेसकी [बहिष्कार] समितिकी ओरसे यही प्रवृत्ति प्रधानतः चलाई जानी चाहिए। विदेशीके त्याग और स्वदेशीके उत्पादनसे ही हमारी कार्य-दक्षताका परिचय मिलेगा।

जो लोग कांग्रेसके उद्देश्यको समझते हैं और उसका सम्मान करते हैं वे मिलके बने कपड़ोंका व्यवहार कर ही नहीं सकते। यदि वे करेंगे तो मिलोंका कपड़ा गरीबों-को नहीं मिलेगा और उसके भाव चढ़ जायेंगे। यदि हमें खादीकी प्रतिष्ठा बढ़ानी हो और जुलाहोंको अधिक मजूरी देनी हो तो भी हमें खादीको शिष्ट वेश बनाना

चाहिए। खादीका व्यवहार किये बिना भारतको वास्तविक गौरव मिलना और उसकी कलाका उत्थान होना असम्भव है। जब स्वराज्य मिल जाये तब भले ही हमारे धनी-मानी लोग बहुत बारीक सूत कतवाकर और उससे ढाकाकी मलमल-जैसा कपड़ा बनवाकर पहनें। अभी तो उन्हें भी [मोटी] खादी पहनना ही शोभा देता है।

गुजरातके व्यापारी विदेशी कपड़ा तो निश्चय ही नहीं मँगवायेंगे; उनसे इतनी आशा रखना कुछ अधिक नहीं है। जहाँ विदेशी कपड़ा बिकता है ऐसे प्रत्येक शहरमें कांग्रेसके नेताओंको जाना चाहिए और विदेशी कपड़ेके व्यापारियोंसे निवेदन करना चाहिए कि वे विदेशी कपड़ेका व्यापार बन्द कर दें। इस प्रकार कांग्रेसके सदस्योंका यह मुख्य कर्त्तव्य है कि वे राष्ट्रके प्रत्येक अंगसे स्वदेशीका व्यवहार करवानेके काममें जुट जायें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २१-७-१९२१

२०७. भाषण : बैंकके उद्घाटनपर[1]

बम्बई
२१ जुलाई, १९२१

मैं बैंक-व्यवसाय और लेन-देनसे ताल्लुक रखनेवाली संस्थाओंसे सम्बन्धित नहीं हूँ। उसकी प्रबन्ध-विषयक बातोंसे भी मैं बहुत ही कम परिचित हूँ; मित्रोंने मुझे यहाँ आनेको प्रेरित किया और मैं उनके प्रेमके कारण यहाँ आ पहुँचा हूँ। मैं यहाँ कभी-कभी मातृभूमिके लिए धन माँगने आया करता हूँ। विदेशी कपड़ा न पहननेके लिए आपको राजी करनेके सम्बन्धमें भी मैं आपसे कुछ निवेदन करना चाहता हूँ और आपसे यह भी कहना चाहता हूँ कि आप स्वदेशीको प्रोत्साहन दें, क्योंकि उसमें स्वराज्यकी कुंजी छिपी हुई है। हममें एक बड़े बैंकका कारोबार चलानेकी और अपने राष्ट्रीय कार्योंके दौरान करोड़ों रुपयोंकी व्यवस्था करनेकी योग्यता होनी चाहिए। हमारे देशमें अधिक बैंक नहीं हैं, इसका यह अर्थ नही कि हममें करोड़ों और अरबों रुपयोंका ठीकसे प्रबन्ध करनेकी क्षमता नहीं है। हमारे देशमें पिछले कई सौ वर्षोंसे बैंक-व्यवसाय होता आ रहा है। हमारे मारवाड़ी लोग जन्मजात बैंकर हैं और वे यदि भारतके अलावा किसी भी अन्य देशमें जन्मे होते तो कुछ करोड़ ही नहीं सैकड़ों करोड़ रुपयोंका प्रबन्ध कर चुके होते। परन्तु चूँकि वे इस निर्धन देशमें जन्मे हैं इसलिए उनकी योग्यताका मूल्य कम आँका जाता है। एक लेखकने लिखा है कि हालके अधिकांश युद्ध आर्थिक कारणोंसे ही हुए हैं; किन्तु यह कहना भी अनुचित न होगा

१. गांधीजीने शामके चार बजे यूनियन बैंक ऑफ इंडिया लिमिटेडके भवनका उद्घाटन किया। सेठ रतनसी धरमसी मोरारजीने सभाकी अध्यक्षता की।

कि अमीर लोगों द्वारा पीड़ित मानवताका बड़ा हित-साधन किया जा सकता है। मुझे आशा है कि इस बैंकका संचालन ऊँचे नैतिक सिद्धान्तोंपर किया जायेगा। मैं इसकी सब प्रकारकी समृद्धिकी कामना करता हूँ। इन शब्दोंके साथ मैं इसका उद्घाटन करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-७-१९२१

२०८. सन्देश : जनताको

[२१ जुलाई, १९२१][1]

पहली-अगस्तको विदेशी वस्त्रोंका त्याग करके और खद्दर पहनकर "लोकमान्यके" पवित्र नामका स्मरण कीजिए। बहिष्कार स्वराज्य-प्राप्ति तथा सार्वजनिक और खिलाफत सम्बन्धी अन्यायोंका निराकरण करानेकी अपरिहार्य शर्त है।

पहली अगस्तको लाखों पुरुषों और स्त्रियों — हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई तथा यहूदी — सभीको लाखोंकी संख्यामें लोकमान्यकी स्मृतिका सम्मान करनेके लिए एकत्रित होना चाहिए।

जो लोग खादी, या कमसे-कम [स्वदेशी] मिलका बना कपड़ा नही पहनना चाहते, उन्हें शरीक होनेकी जरूरत नहीं है। विदेशी वस्त्र पहनकर आना स्वर्गीय लोकमान्यकी स्मृतिका अपमान करना है। विदेशी वस्त्र स्वयसेवकोंके हवाले कीजिये या प्रिन्सेस स्ट्रीटमें[2] स्थित अशोक बिल्डिगमें खोले गये स्टोरमें भेज दीजिये। सबसे अच्छी बात तो यह होगी कि उन कपड़ोंकी होली जला दी जाये। किन्तु यदि आप चाहेंगे तो वे स्मरना या किसी अन्य देशको भेज दिये जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

१. साधन-सूत्रके अनुसार 'सन्देश' के पत्रक इसी तारीखको वितरित किये गये थे।

२. बम्बईमें।

२०९. भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

२१ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधी जब बोलनेके लिए उठे तो उनके स्वागतमें जोरकी हर्षध्वनि हुई। उन्होंने कहा कि बहुत थोड़ा-सा ही अरसा बीतनेपर आज हम दुबारा इकट्ठे हुए हैं। पिछली बार तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा करनेके लिए मिले थे। उस अवसरपर सभामें कुछ स्त्रियाँ भी उपस्थित थीं। आज मुझे स्वदेशीके सम्बन्धमें कुछ कहना है। मैं निश्चित रूपसे नहीं कह सकता कि हम इस सालके अन्ततक विदेशी कपड़ेका पूर्ण बहिष्कार कर पायेंगे या नहीं। यदि आप सबने इस काममें मदद की तो सम्भव है कि हम शीघ्र ही अपना लक्ष्य प्राप्त कर सकें। मैं गत सितम्बर माससे लोगोंसे कहता आ रहा हूँ कि यदि भारतके लोगोंने राष्ट्रीय कार्यमें मदद की तो हम आगामी सितम्बरतक स्वराज्य पानेमें सफल हो जायेंगे। स्वदेशी आन्दोलन एक ऐसा आन्दोलन है जिसमें अमीर-गरीब दोनों ही खुशीसे भाग ले सकते हैं। यहाँ-तक कि सरकारी कर्मचारी भी निःसंकोच शुद्ध स्वदेशी वस्त्र पहन सकते हैं। मेरा विचार है कि यदि आप देशकी पुकारका अनुकूल उत्तर दे सकें तो मैं समझूँगा कि मेरा उद्देश्य पूरा हो गया। मैं आप लोगोंसे साफ-साफ कह दूँ कि ३१ जुलाईके बाद मैं आपसे स्वदेशीके बारेमें कुछ नहीं कहूँगा क्योंकि उससे पहले हर विदेशी चीजका पूर्ण बहिष्कार हो चुकेगा।

. . . आगे बोलते हुए गांधीजीने कहा, जब कोई व्यक्ति यह मानने लगता है कि असत्य बोलना बुरा है तभी वह समझ पाता है कि वह क्या कर रहा है। इसलिए मैं आप लोगोंसे कह रहा हूँ कि कुछ स्वदेशी और कुछ विदेशी वस्त्र पहनकर आप अपनेको धोखा न दें। सभी धर्मोंके अनुसार यह मिथ्याचार कहा जायेगा। मैं गत ६ अप्रैलसे आपको बताता आ रहा हूँ कि जबतक हिन्दू यह नहीं समझ लेते कि मुसल-मानोंका साथ देकर ही वे खिलाफतकी गलतियाँ सुधरवा सकते हैं, और जबतक मुसलमान यह नहीं समझते कि हिन्दुओंका साथ देकर ही वे अपने उद्देश्यकी पूर्तिमें सफल हो सकते हैं तबतक आप स्वराज्यके लक्ष्यको प्राप्त करनेमें सफल नहीं हो सकते। कल मैं अपने भाई मौलाना और बहन नायडूके साथ पूनामें एक जगहसे दूसरी जगह फिरता रहा और लोकमान्य तिलककी बरसी मनानेमें मदद करता रहा। स्वर्गीय लोकमान्यकी खातिर मैंने वहाँ सुबहसे लेकर राततक काम किया और जिन लोगोंके सामने भाषण दिया उन्हें विदेशोंमें बने सभी वस्त्रोंका बहिष्कार करनेके लिए समझाया।

१. यह सभा मांडवीमें जिला कांग्रेस कमेटीके तत्त्वावधानमें रातको ९ बजे हुई थी। सभामें गांधीजीके अलावा श्रीमती सरोजिनी नायडूने भी भाषण दिया था।

. . . गांधीजीने अपना भाषण जारी रखते हुए कहा कि मिलोंमें तैयार किये गये कपड़े पहननेमें आपको काफी सावधान रहना चाहिए। राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे मशीनका बना कपड़ा वांछनीय नहीं है। वही पुरुष या स्त्रियाँ सुन्दर हैं जो अपना काम अपने लिए और देशके लिए सन्तोषजनक ढंगसे करते हैं। मेरे सामने जो स्त्रियाँ बैठी हुई हैं, उनसे मैं प्रार्थना करूँगा कि वे बिना किसी शंकाके खादी पहनें, क्योंकि जबतक वे विदेशी वस्त्रका बहिष्कार नहीं करतीं, वे स्वराज्यका दावा नहीं कर सकतीं।

भाषण समाप्त करते हुए गांधीजीने कहा कि जो लोग विदेशोंमें तैयार किये गये वस्त्रका बहिष्कार करनेको राजी हैं वे उन कपड़ोंको या तो गरीबोंकी मददके लिए स्मरना भेज दें या भारतसे बाहर कहीं और भेज दें या पहली अगस्तको जलवा दें। जैसे बने वैसे विदेशी वस्त्रोंको पूरी तरह नष्ट कर देना चाहिए। अलबत्ता हर व्यक्ति अपने उन पुराने विदेशी वस्त्रोंको सँजोकर रखना चाहेगा जो उसे उसके प्रिय मित्रों या सम्बन्धियोंने प्रेमोपहारके रूपमें दिये हैं, परन्तु देशकी पुकारको सुनकर इस तरहके वस्त्र भी नष्ट कर देने चाहिए; या कहीं और भेज देने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २२–७–१९२१

२१०. भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर[१]

२२ जुलाई, १९२१

जब महात्मा गांधी बोलनेके लिए उठे तब जोरकी हर्षध्वनि हुई। उन्होंने कहा कि मैं शहरमें जगह-जगह स्त्री-पुरुषोंके सामने भाषण देता रहा हूँ और मैं समझता हूँ कि आपसे स्वदेशीके सम्बन्धमें कुछ नई बात कहना सम्भव न होगा। मेरे पास लखनऊसे एक सज्जन आये थे। उन्होंने मुझे बताया कि संयुक्त प्रान्तमें कुछ गड़बड़ी चल रही है। सरकारने एक व्यक्तिको मामूली अपराधके कारण एक बहुत अँधेरी कोठरीमें बन्द कर दिया और वह व्यक्ति अभी कैदमें ही है। उक्त सज्जनने मुझसे प्रश्न किया कि ऐसी स्थितिमें मनुष्यको क्या करना चाहिए। मैंने उन्हें सभी कष्ट धैर्यपूर्वक सहनेकी सलाह दी। आप सबको अपने हृदयोंमें धैर्य नामक सद्गुण लाना चाहिए। मुझे पक्का पता नहीं कि उक्त सज्जनने जो बातें कहीं हैं वे सच हैं या नहीं, क्योंकि तीन दिनतक लगातार अँधेरी कोठरीमें बन्द रहना बहुत ही कठिन है। निस्सन्देह ऐसी ही घटनाका अनुभव मुझे भी है, क्योंकि अभीतक हम पंजाबमें विदेशियों

१. मोरारजी गोकुलदास हॉलमें 'ओ' वार्ड कांग्रेस कमेटीके तत्त्वावधानमें गांधीजीने रातके ९ बजे यह भाषण दिया था।

द्वारा भारतीयोंपर की गयी नृशंसताएँ भूल नहीं सके हैं। इसलिए मुझे जो कहानी सुनाई गई है, वह सच भी हो सकती है।

मैं आपसे फिर कहता हूँ कि यदि आप देशके प्रति अपना कर्त्तव्य नहीं समझते तो आपका आजादी माँगना मुनासिब नहीं है। आज मैं इस सभामें आपसे स्वदेशीके सम्बन्धमें कुछ कहूँगा। मुझे किसीने और भी कहानियाँ सुनाई हैं, मसलन यह कि सरकारने तीन व्यक्तियोंको गिरफ्तार किया, उनमेंसे एक व्यक्ति कांग्रेसका मन्त्री है। उसने गिरफ्तार होनेपर सरकारसे माफी माँग ली और बाकी दोनोंने भी माफी माँगी है। उन तीनों आदमियोंने अब राष्ट्रीय कार्योंमें भाग लेना त्याग दिया है और आन्दोलनसे अलग हो गये हैं। उन्हें ऐसे कार्योंके लिए शर्म आनी चाहिए। मैं उपस्थित लोगोंसे अनुरोध करूँगा कि जहाँतक हो सके निर्भय रहें, क्योंकि जब आपका उद्देश्य श्लाघनीय है तो आपको सरकारकी परवाह क्यों करनी चाहिए? यदि आप कठिनाइयाँ और मुसीबतें झेलनेको तैयार नहीं हैं तो आपको आन्दोलनमें भाग लेना इसी समय छोड़ देना चाहिए। इसलिए मैं यहाँ इस सभा-भवनमें उपस्थित हर स्त्री-पुरुषसे अपील करता हूँ कि वह हर घड़ी देशकी खातिर दुःख सहनेको तैयार रहे।

विदेशी कपड़ोंके लिए हमने एक 'डिपो' खोला है जहाँ आप बिना-किसी हिचकिचाहटके अपने कपड़े दे सकते हैं। यदि आप ३१ जुलाई तक विदेशी-वस्त्रका बहिष्कार करनेमें सफल नहीं होते तो आपको अपने साथियोंकी निगाहोंमें और सारे संसारके सामने बहुत शर्मिन्दा होना पड़ेगा।

गांधीजीने उनसे प्रश्न किया कि क्या आप लोगोंने पहली अगस्तके लिए कुछ तैयारियाँ की हैं। उन विदेशी वस्त्रोंको जमा करनेके लिए खोले गये डिपोमें अपने कपड़े भेजनेमें जरा भी शर्मकी बात नहीं है। कुछ बहनोंने, जब उनसे अपनी विदेशी साड़ियोंका बहिष्कार करनेको कहा गया, उत्तर दिया कि वे ऐसा करनेको राजी नहीं हैं। हाँ, कुछ ऐसी भी स्त्रियाँ हैं जो खादीके कपड़े पहननेको सदैव तैयार रहती हैं। आज किसी भी महिलाके पास यदि विदेशी कपड़ा है तो वह सबका-सब राष्ट्रकी पुकारपर त्याग दिया जाना चाहिए। सभामें उपस्थित स्त्री-पुरुष यदि अपने विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार करनेको राजी नहीं हैं तो उन्हें स्वराज्य पानेका कोई अधिकार नहीं है।

मुझे आज इस सभामें जो-कुछ कहना है वह मैं कई बार पहले भी कह चुका हूँ और अब मैं उन लोगोंसे, जो मेरी बात माननेको तैयार हैं, अपने हाथ उठानेको कहूँगा। परन्तु उनसे हाथ उठवानेके पहले मैं उन्हें बता दूँ कि तथाकथित स्वदेशी वस्त्र, जो मिलका तैयार किया हुआ है, हरगिज न अपनाया जाये, क्योंकि मैं आपको यही राय देता हूँ कि मशीनके बने सभी प्रकारके कपड़ोंका त्याग किया जाये। खादी-की सर्वोत्तम खासियत यह है कि वह हाथकी कती और हाथकी बुनी होती है।

गांधीजीने आगे कहा कि बेजवाड़ाकी खादीकी साड़ियाँ अब बड़ी संख्यामें उपलब्ध नहीं हैं, परन्तु उनके अभावमें आप खादीकी साड़ियाँ बहुत आसानीसे पहन सकती हैं और पहली अगस्तको बहुतसी स्त्रियाँ खादीकी साड़ी पहने दिखाई देंगी। मैं आपसे फिर कहूँगा कि इस पोशाकको अपनानेमें कोई शर्मकी बात तो है ही नहीं क्योंकि यह आपकी राष्ट्रीय पोशाक है। आपको अपने मनमें निराशाका पोषण नहीं करना चाहिए बल्कि भारतीय राष्ट्रवादका संग्राम लड़नेके लिए साहसी बनना चाहिए।

इसके बाद उन्होंने उन स्त्री-पुरुषोंसे हाथ उठानेको कहा जो पहली अगस्तको और उसके बाद अपनी पोशाक खादीकी ही रखनेको राजी हैं। इस अनुरोधपर भवनमें उपस्थित लगभग सभी लोगोंने अपने हाथ उठाये। कुछ स्त्रियोंको थोड़ी-बहुत अनिच्छासे हाथ उठाते देखा गया।

इसके बाद गांधीजीने उनसे विदेशोंमें बने कपड़ोंका बहिष्कार करनेका अनुरोध किया और कहा कि वे किसी शंका या अनुग्रहका खयाल किये बिना खादी पहनें और उनसे यह भी कहा कि आप लोग किसी भी प्रकारकी धमकीसे विचलित न हों। . . .

अपना भाषण समाप्त करते हुए गांधीजीने कहा कि स्वदेशी आन्दोलनके सम्बन्धमें मुझे और कुछ नहीं कहना है, क्योंकि पिछले बहुत दिनोंसे मैं बराबर इसी विषयपर बोलता आया हूँ। मुझे अपने देशवासियोंपर बहुत विश्वास है और इसलिए मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि जिस महत्त्वपूर्ण आन्दोलनका मैंने श्रीगणेश किया है उसका परिणाम अच्छा ही निकले। (हर्षध्वनि)

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३–७–१९२१

२११. भाषण : बम्बईमें[1]

२३ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने सभाकी कार्रवाई शुरू करनेसे पहले कहा कि मैं श्री जयकरका[2] एक पत्र पढ़कर सुना रहा हूँ; उन्हें बुखार आ गया है इसलिए उन्होंने सभामें शरीक होने और लोकमान्यकी स्मृतिमें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करनेमें असमर्थता व्यक्त की

१. गांधीजीने एम्पायर थियेटरमें पारसी राजकीय सभाके तत्त्वावधानमें आयोजित एक सभामें भाषण दिया। उपस्थित लोगोंमें मार्माड्यूक पिक्थॉल, मौलाना अली और सरोजिनी नायडू भी थे। श्रोतृवर्गमें काफी स्त्रियाँ खादी पहने हुए थीं, जिनमें दादाभाई नौरोजीकी पौत्री कुमारी पेरीन कैप्टेन भी थीं। जलसेमें आनेके लिए जो टिकट रखे गये थे उनकी बिक्रीसे मिले धनको लोकमान्य तिलककी सर्वोत्तम जीवनीके निमित्त अलग रख दिया गया था।

२. मुकन्दराव रामराव जयकर (१८७३–१९५९); प्रसिद्ध वकील तथा बम्बई विधान परिषद्के सदस्य; पंजाबके उपद्रवोंकी जाँचमें गांधीजीकी सहायता की। १९३७-३९ में संघीय न्यायालय (फेडरल कोर्ट) के न्यायाधीश।

है। इसके बाद उन्होंने श्री ललितसे स्वर्गीय लोकमान्यके सम्बन्धमें अपना गीत गानेकी प्रार्थना की।

सभामें भाषण देते हुए गांधीजीने कहा कि जिस कामके लिए हम यहाँ एकत्र हुए हैं वह पवित्र है। आज शामका हमारा कार्यक्रम काफी लम्बा है। [इसलिए] मैं आपका अधिक समय नहीं लूँगा।

श्री तिलक लम्बे भाषण देनेके लिए प्रसिद्ध नहीं थे। वे बहादुरीके कामोंके लिए प्रसिद्ध थे। देश उनकी वक्तृत्व शक्तिके कारण उनको प्यार नहीं करता था। उनके समकालीन कुछ ऐसे व्यक्तियोंके नाम लिये जा सकते हैं जो भाषण-सज्जाकी दृष्टिसे अधिक अच्छे वक्ता माने जाते थे। इसलिए मैं आप लोगोंके सम्मुख लम्बा भाषण देकर आपका अधिक समय लेनेकी जरूरत नहीं समझता। मैं आपका ध्यान उनके कुछ उन अत्यन्त विशिष्ट गुणोंकी ओर दिलाऊँगा जिनकी बदौलत वे जनताके आदर्श बन गये थे — वे गुण जिनकी ऐसे राष्ट्रके लिए उस समय बहुत जरूरत है, जो एक ही सालके भीतर स्वराज्य पानेका बहुत जोरदार प्रयत्न कर रहा हो। आप उनके गुणोंका अनुकरण करके और उन्हें अपने जीवनमें गूँथकर दिवंगत नेताकी स्मृतिमें सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित कर सकते हैं। एक महान् गुण जो देशने लोकमान्यमें देखा वह था उनकी निडरता। उनमें यह गुण इतना साफ झलकता था कि कुछ लोग तो उन्हें अशिष्ट कहने लगे थे। हम जानते हैं कि वे नौकरशाहीकी कड़ी आलोचना करनेसे कभी नहीं चूके। इसलिए नौकरशाहीका क्रोध भड़क उठा और उनपर अंग्रेजोंके खिलाफ नफरत पैदा करनेका आरोप लगाया गया। किन्तु मैं जानता हूँ कि यदि श्री तिलक नौकरशाहीकी आलोचना करनेमें कुछ उठा नहीं रखते थे तो वे उसके सदस्योंकी प्रशंसा करनेको भी, जब कभी वे मुनासिब समझते, तैयार रहते थे। मुझे याद है कि कलकत्ताके पिछले अधिवेशनके अवसरपर जिसमें तिलक महाराज उपस्थित थे, उन्होंने एक हिन्दी सम्मेलनकी अध्यक्षता की। वे वहाँ कांग्रेसमें छिड़े हुए गम्भीर वाद-विवादसे उठकर आये थे। परन्तु सम्मेलनके सामने उन्होंने बिना लिखा विद्वत्तापूर्ण धारावाहिक भाषण दिया। उन्होंने देशी भाषाओंकी सेवाओंके सम्बन्धमें अंग्रेजीके विद्वानोंकी प्रशंसा की। उन्होंने कहा कि भविष्यके इतिहास-लेखक उनकी सेवाओंकी कद्र करेंगे। तथापि इसका यह अर्थ नहीं कि अंग्रेज देशी भाषाओंको लाभ पहुँचानेके लिए भी भारत आये थे, परन्तु फिर भी, जिन अनेक अंग्रेजोंने भारतीयोंकी अपनी भाषाओंकी कद्र करनेमें मदद की उनके प्रति भारत ऋणी है और उसे न मानना अनुचित होगा।

उनका दूसरा महान् गुण, जिसकी देशको बहुत जरूरत थी, उनका आत्मबलिदान था। वे अपने देशकी सेवामें कभी पीछे नहीं रहे। इसके लिए उन्होंने कभी सौदा नहीं किया। उनके लिए आत्मत्याग हर्षका विषय था। गांधीजीने कहा कि मुझे उदाहरण देनेकी जरूरत नहीं है क्योंकि श्रोतृगण उनके बलिदानोंके उदाहरण मुझसे अच्छी तरह जानते हैं। तीसरा महान् गुण उनकी असीम सादगी था। श्री तिलकने

हमेशा स्वदेशी-व्रतका पालन किया। यदि उनके रहते खादी बनाई जाती तो वे उसे बिना हिचकिचाहटके पहनते। मैं तो विश्वास ही नहीं कर सकता कि साज-सज्जाकी अभिलाषा उन्हें छू भी सकती थी। आप लोगोंसे मेरी अपील है कि श्री तिलककी स्वदेशी भावनाका अनुकरण करें। परन्तु यह अनुकरण अनमने भावसे न करें। मैंने सुना है कि जिन स्त्रियोंने जूनमें अपने स्वदेशी प्रेमका इतना अच्छा परिचय दिया था वही अब अपनी विदेशी साड़ियोंको दे डालनेमें संकोच कर रही हैं। मैं उन गहनोंको नहीं भूल सकता जो एक पारसी बहनने पारसी सभामें मेरे पास भेजे थे। मैं चाहता हूँ कि स्त्रियाँ स्वदेशीका काम इसी भावनासे जारी रखें। यदि यह काम उन्हें कठिन लगता हो तो श्री तिलकका उदाहरण सामने रखें। अपने वस्त्रोंकी खाली अलमारियोंको देख-देखकर आँसू बहानेका समय नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि बम्बईके नागरिक अपना समस्त विदेशी कपड़ा त्याग देंगे और खादी पहनकर पहली अगस्तका दिन मनायेंगे। इसके बाद उन्होंने श्रीमती सरोजिनी नायडूसे भाषण देनेके लिए कहा।

[अंग्रेजीसे]

***बॉम्बे क्रॉनिकल*, २४–७–१९२१**

२१२. टिप्पणियाँ

चोर और डाकुओंका भय

खेड़ा जिलेमें चोर और डाकुओंका भय हमेशा बना रहता है। इनका थोड़ा-बहुत डर तो दूसरी जगहोंमें भी है। स्वराज्य लेनेका अर्थ आत्मरक्षा करना भी है। दूसरे लोग हमारी रक्षा करें और हम स्वराज्यका उपभोग करें, ऐसा नही हो सकता। लोगोंमें आत्मरक्षाकी शक्ति होनी ही चाहिए। यह शक्ति दो प्रकारसे आती है। एक तो हम चोरों और डाकुओंको चोरी करने और माल लूटने दें; इसका अर्थ है हम कोई सम्पत्ति ही न रखें। दूसरे हम चोरों और डाकुओंको दण्ड दें। सभी लोग अपनी सम्पत्ति गँवानेके लिए अथवा कोई सम्पत्ति न रखनेके लिए तैयार नहीं होते। इसीलिए वे चोरों और डाकुओंको दण्ड देकर रोकनेका उपाय करते हैं। कोई चौकीदार रखता है और कोई स्वयं ही उनसे लड़ाई करता है। चोरों और डाकुओंसे लोगोंकी रक्षा करना राजाका एक मुख्य कार्य होता है। लोग जब अपनी रक्षा आप करना सीख लेंगे तभी स्वराज्य होगा। इसलिए हममें यह शक्ति आनी चाहिए। यह काम कुछ कठिन नहीं है। गाँवों और शहरोमें लोग अपने स्वयंसेवक तैयार कर सकते हैं और पहरा दे सकते हैं। हर गाँवमें रोशनीका इन्तजाम होना चाहिए। यदि हम इतना ही कर लें तो भी चोरोंका भय बहुत-कुछ दूर हो जायेगा।

किन्तु इस कामके साथ-साथ और इससे भी ज्यादा जोरसे तो सुधारका काम किया जाना चाहिए। चोरोंसे बचाव करना जितना जरूरी है उसकी अपेक्षा चोरोंको

चोरीके धन्धेसे निकालना बहुत जरूरी है। चोरी करना और डाका डालना यह एक तरहका नैतिक रोग है। इस रोगको दूर करनेका उपाय हमारे पास अवश्य होना चाहिए। इन लोगोंको हमें राष्ट्रका अग मानना चाहिए और इनको सुधारनेका प्रयत्न करना चाहिए। ये लोग मिलने-जुलनेसे, समझाने-बुझानेसे और पढाने-लिखानेसे हमारी बात नही समझेंगे, ऐसा माननेका कोई कारण नहीं है। उन्हें सुधारनेमें हमे धीरजसे काम लेना चाहिए और उनके प्रति प्रेमभाव रखना चाहिए। हमारे लिए इन दोनों कामोंको हाथमें लेना बहुत जरूरी है।

रेलोंमे चोरी

रेलोमें चोरी होने और रेल-कर्मचारियों द्वारा रिश्वत लिये जानेकी इतनी खबरें आ रही हैं कि यदि ये सब शिकायतें सच्ची हो तो हमें लज्जित होना चाहिए। समस्त देशमें आत्मशुद्धिकी प्रवृत्ति चल रही है। ऐसे समय किसी जगहसे चोरीकी या रिश्वत लेनेकी शिकायत आती है तो दुःख हुए बिना नही रहता। रेलोंमे चोरी होती है, इसमें सरकारका हाथ तो अवश्य ही नहीं है। इसके लिए तो केवल हम ही जिम्मेदार हैं। मैने तो यहाँतक सुना है कि अकालके दिनोंमें घास ले जानेके लिए डिब्बे चाहिए तो उसके लिए भी रेल-कर्मचारियोंको रिश्वत देनी पड़ती है; यदि हम रेलसे कोई पार्सल भेजते हैं और उसमें से चीज निकालनेकी जरा भी गुंजाइश होती है तो पार्सल तोड़ दिया जाता है और माल चुरा लिया जाता है। अभी हालमें बम्बईमें एक व्यापारी-का खादीका पार्सल आया था; उसमें से खादी चुरा ली गई। यदि रेल-कर्मचारियोंको मेरी इस टिप्पणीको देखनेका अवसर मिले तो उनसे मेरा निवेदन है कि वे जनताका ध्यान रखें और यदि इस तनख्वाहसे पूरा न पड़ता हो तो कमाईका कोई दूसरा ईमान-दारीका साधन खोजें। रेल कर्मचारी संघोंके संचालकोंको मेरी सलाह है कि वे रेल कर्मचारियोंसे अपने कर्त्तव्योंका पालन करानेका उतना ही प्रयत्न करें जितना प्रयत्न उनके अधिकारोंकी रक्षा करनेका करते हैं। यदि हमें स्वराज्य मिला और यह शिका-यत दूर नहीं हुई तो हमारा शासन उतना ही मँहगा रहेगा जितना मँहगा आज है। स्वराज्यकी रक्षा तभी की जा सकती है जब सच्चे और देशभक्त अर्थात् लोगोंके हितमें अपना हित समझनेवाले लोग अधिक हों और लालची, स्वार्थी और बेईमान लोग कम हों। स्वराज्यका एक अर्थ है 'अधिक लोगोंका राज्य', और यदि ये अधिक लोग अन्यायी और स्वार्थी हों तो राज्यमें अन्धाधुन्धी ही होगी, यह स्पष्ट है। मैं इस आन्दो-लनमें यह मानकर सम्मिलित हुआ हूँ कि इसमें अधिकतर लोग सच्चे और अच्छे हैं; किन्तु वे भीरु, लापरवाह और अज्ञानी हो गये हैं और अपनी शक्तिको नहीं पहचानते। ये लोग जब अपनी शक्तिको पहचान जायेंगे तो वे अपने सच्चे बल अर्थात् आत्म-बलको काममें लेंगे और सफल होंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४–७–१९२१

२१३. भाषण: सान्ता क्रूज, बम्बईमें

२४ जुलाई, १९२१

भाइयो और बहनो,

मैं आज यहाँ बहुत बड़ा लालच लेकर आया हूँ। मुझसे कल भाई विट्ठलदासने कहा था कि बम्बईमें जितनी तेजीसे पैसा इकट्ठा हुआ था, उतनी तेजीसे विदेशी कपड़ा इकट्ठा करनेका काम नहीं चल रहा। यदि किसी जगहसे इस कामकी अच्छी शुरुआत हो सके तो बहुत उत्साहसे काम चलेगा; फिर और लोग भी अच्छा उत्साह दिखायेंगे। रुपया इकट्ठा करनेके सम्बन्धमें कामकी शुरुआत माटुंगासे की गई थी। परन्तु विदेशी कपड़ा इकट्ठा करनेके सम्बन्धमें आमन्त्रणकी भिक्षा माँगनेका काम मैंने सान्ता क्रूजसे शुरू किया है और यह आमन्त्रण मुझे भिक्षामें मिला है।

स्वदेशीके प्रचारका काम सितम्बरसे आरम्भ हुआ है; फिर लोगोंको यह काम नया शुरू हुआ क्यों लगता है? कांग्रेसने स्वदेशीके प्रचारका प्रस्ताव सितम्बरमें पास किया था। इसे खिलाफत समितिने तो पहले ही स्वीकार कर लिया है। मौलाना मुहम्मद अलीके साथ मैं तभीसे स्वदेशीका प्रचार कर रहा हूँ। मैं जहाँ-जहाँ घूमा हूँ वहाँ-वहाँ मैंने इस सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट किये हैं। यदि हम खिलाफतके सम्बन्धमें कोई निर्णय करा सकेंगे तो हममें स्वराज्य लेनेकी शक्ति आ जायेगी। किन्तु स्वदेशीको पूरी तरह स्वीकार किये बिना यह शक्ति नहीं आयेगी।

चरखा हर घरमें होना चाहिए। स्वदेशीके दो अंग हैं — (१) विदेशी कपड़ेका बहिष्कार और (२) उसके स्थानमें देशी कपड़ेका उत्पादन। यदि इस समय सारा कपड़ा मिल ही तैयार करें तो स्वराज्य नहीं मिल सकेगा। तो हम उसे कायम नहीं सकेंगे, ऐसी मेरी मान्यता है। जबतक भारतमें घर-घर चरखा न चलेगा तबतक स्वराज्य नहीं मिलेगा।

हमारे आन्दोलनके तीन मुख्य अंग हैं — स्वदेशी, हिन्दू-मुस्लिम एकता और शान्ति। इन तीनों कामोंमें से पहला अर्थात् स्वदेशी हिन्दू, मुसलमान और पारसी सभीके लिए है।

भारतमें ईस्ट इंडिया कम्पनी जब व्यापार करनेके लिए आई थी यदि हमने तब स्वदेशी कपड़ेका त्याग न किया होता और इंग्लैंडसे आनेवाली मलमल और छींटपर न ललचाये होते तो उसके बादका हमारे देशका इतिहास आज दूसरी तरह ही लिखा गया होता। इस समय तो हम फिर स्वदेशीको ग्रहण करनेपर ही स्वराज्य ले सकते हैं। और यदि हम हिन्दुओं और मुसलमानोंमें ऐक्य न रख सकें अथवा देशकी शान्तिको भंग कर दें तो हम स्वराज्य भी खो देंगे। हमारी मनोरचना ही ऐसी हुई है कि हम हमेशा शान्तिकी कामना करते हैं। स्वराज्य मिलनेपर कोई किसीको हानि नहीं पहुँचायेगा, यही नहीं बल्कि स्वराज्य लेने और उसे कायम रखनेकी ये जरूरी शर्तें हैं।

मेरे विचारसे अन्य राष्ट्र तलवारके जोरसे हिन्दुस्तानको जीतनेकी इच्छा करें तो यह भिन्न बात होगी। परन्तु इतना तो सच है कि हिन्दू और मुसलमानोंमें दिन-प्रति-दिन कटुता कम होती जाती है। इसलिए यह काम तो चल ही रहा है; इस सम्बन्धमें कोई नया कदम उठानेकी जरूरत नहीं है। अभी शान्ति-स्थापनाके सम्बन्धमे भी कोई कदम उठानेकी जरूरत नहीं है। इन दोनों कार्योंके सम्बन्धमें हमें कोई त्याग नहीं करना पड़ता। किन्तु स्वदेशीके सम्बन्धमें तो त्याग करना है। हमें अपने समाजके समस्त अंगोंको एक-सा रखना है। हम मोची, बढ़ई या लुहारके बिना अपना काम नही चला सकते। इनकी सेवाएँ आवश्यक हैं। यदि हम इन समस्त शक्तियोंका विकास नही करेंगे तो हमें स्वराज्य नहीं मिलेगा। स्वदेशीके कार्यक्रमको एक मनुष्य पूरा नहीं कर सकता। रुपया तो एक मनुष्य भी दे सकता है, परन्तु कांग्रेसके एक करोड़ सदस्य बनाने हों तो हमें एक करोड़ स्त्री-पुरुषोंकी जरूरत होगी। इसी प्रकार यदि भारतमे स्वदेशीका प्रचार करना है तो उसमे हर एक भारतीयको भाग लेना चाहिए। इस कार्यमे तो ३० करोड़ लोगोंको आहुति देनी चाहिए। सब लोगोंको भली-भाँति समझकर स्वदेशी कपड़ेका बहिष्कार करना चाहिए। यह बहिष्कार एक वर्ष पहले असम्भव था। परन्तु यदि हम निश्चय कर ले तो इस अगस्तमें विदेशी कपड़ेका पूरा बहिष्कार किया जा सकता है। मैंने कहा है कि विदेशी कपड़ेके बहिष्कारके बाद एक महीनेके भीतर स्वराज्य लिया जा सकता है। इसका अर्थ यह है कि यदि हम इस कार्यको पूरा कर दिखायें तो हम सरकारको अन्तिम चुनौती दे सकते हैं। कपड़ा तैयार करनेकी शक्ति हमारे भीतर मौजूद है, किन्तु हममें श्रद्धा नहीं है। यह बात भोजन जैसी ही है। घरमें चूल्हा हो तो भोजन बनाना आसान है। इसी तरह यदि घरका चरखा हो तो उससे काम भी जरूर लिया जायेगा और वह काम आसान भी हो जायेगा। चरखेकी रचना इतनी सादी है कि वह बड़ी आसानीसे बनाया जा सकता है। मैं मानता हूँ कि हम विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करनेके लिए तैयार हैं। चरखेमें जादू है; परन्तु वह जादू तभी काम करेगा जब भारतीयोंमें श्रद्धा हो। किन्तु मैं मानता हूँ कि भारतीयोंमें इतनी श्रद्धा आ गई है।

भारतके लोगोंको महीन कपड़ेका मोह हो गया है। अभी उनका यह मोह गया नहीं है। कठिन व्रत धारण करनेवाली भारतीय स्त्रियोंको भी खादीकी साड़ी पहनना भारी पड़ता है। जब स्त्री और पुरुष दोनों ही कहते है, 'हम बारीक कपड़ा नहीं छोड़ सकते', तब मुझे उनपर दया आती है। यदि लोग मुझसे ऐसी बात कहेंगे तो मैं उनसे यही कहूँगा कि स्वराज्य नहीं मिलेगा; और यदि कोई स्वराज्य देने आयेगा तो मैं उससे ना कह दूँगा। मै उस समय उससे पूछूँगा कि वह किन लोगोंको स्वराज्य दे रहा है? इन लोगोंको तो अजीर्ण हो गया है। हम क्षयग्रस्त हो गये हैं। हमारे मुखोंपर जो लाली है वह दिखावटी है। हमें अपने देशकी बनी चीजें अच्छी नहीं लगतीं और विदेशी चीजें अच्छी लगती हैं, यह कहाँकी बुद्धिमानी है। आपने आज जो कपड़ा दिया है वह कितना-सा है? मुझे तो वह कपड़ा चाहिए जो आपने अपने बक्सोंमें रख छोड़ा है। आप अपना धर्म समझकर विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करें। आपने ससारमे क्या सुख देखा है? जिस राजमें उलटा न्याय होता है क्या उसमें

रहना हम सहन कर सकते हैं? हमें तो स्वदेशी व्रतधारी बनना चाहिए। स्वदेशी साधन और साध्य दोनों है। यदि आप विदेशी कपड़ेको त्याज्य समझते हों तो उसे मुझे दे दें। यह बहिष्कार ऐसा नहीं है कि आप बादमें विदेशी कपड़ा खरीद सके। इसका कारण यह है कि स्वराज्य इस बहिष्कारपर ही निर्भर है। स्वराज्य मिलनेपर हम व्यवस्थापिका सभाओमें, न्यायालयोमें जा सकते हैं; किन्तु विदेशी कपड़ा तो तब भी नहीं पहना जा सकता। इसके विपरीत आचरण करना अपने मनको धोखा देनेके समान है। यह कार्य करोड़ों लोगों द्वारा किया जाना चाहिए।

आप स्वदेशीके व्रतका पूर्ण पालन करें। आपके पास जितना विदेशी कपड़ा हो सबका-सब निकालकर दे दें।

[गुजरातीसे]

गुजराती, ३१-७-१९२१

२१४. भाषण: मारवाड़ी विद्यालयमें[1]

२६ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने कहा कि पहली अगस्त आनेवाली है और आपको उससे पहले ही अपने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा कर लेना है। आपके कर्त्तव्यका सबूत आपके अपने शरीर होंगे, आपके कर्त्तव्य-पालनका तथा आपके त्यागका प्रमाण आपके शरीर-से ही मिल जायेगा। तब किसी से यह पूछनेकी जरूरत नहीं रहेगी कि क्या उसने अपना कर्त्तव्य पूरा किया है, क्योंकि उसका चिह्न प्रत्येक व्यक्ति प्रत्यक्ष देख सकेगा। कुछ लोग ऐसा खयाल करते है कि जो एक करोड़ रुपया चन्देमें आया है उसमें अपना हिस्सा देकर हम तो अपना कर्त्तव्य पहले ही पूरा कर चुके हैं। उनका ऐसा सोचना ठीक नहीं है। वह चन्दा तो तिलक स्मारक स्वराज्य-कोषके लिए है, और जबतक आपको स्वराज्य नहीं मिल जाता तबतक यह कहना ठीक न होगा कि आपने उस महान् दिवंगत नेताके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन किया है। चन्दा इकट्ठा कर लेना ही काफी नहीं है, आपको स्वराज्य प्राप्त करना है। जब इस देशमें स्वदेशीका पूर्ण रूपसे प्रचलन हो जायेगा तब आप यह कह सकेंगे कि स्वराज्य मिल गया है। ऐसा कहनेसे मेरा यह मतलब नहीं है कि जिस दिन आप स्वदेशीको पूर्णतः अपना लेंगे उसी दिन स्वराज्य मिला हुआ समझें। जिस दिन आप पूर्ण स्वदेशी अपना लेंगे, उस दिनसे मैं एक महीनेका समय स्वराज्य पानेके लिए माँगूँगा। स्वदेशी अपनाकर आप स्वराज्य-की नींव रखेंगे और एक महीनेकी अवधिमें ही स्वराज्य प्राप्त कर सकेंगे।

१. गांधीजीने यह भाषण मारवाड़ी विद्यालय हॉलमें गिरगाँव कॉंग्रेस कमेटीके तत्त्वावधानमें हुई एक सार्वजनिक सभामें विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारके सम्बन्धमें दिया था। इस सभामें सरोजिनी नायडू और मुहम्मद अलीने भी भाषण दिये थे। उस समय वर्षा होनेके बावजूद लोग बड़ी संख्यामें उपस्थित हुए थे।

लाला लाजपतरायने मुझे इत्मीनान दिलाया है कि केवल पंजाबमें ४० लाख चरखे हैं। आप तो सारे भारतमें २० लाख ही चलवाना चाहते हैं। वहाँ तो हर घरमें उतने चरखे हैं जितनी उस घरमें स्त्रियाँ हैं और यदि किसी पंजाबी स्त्रीसे यह पूछा जाये कि क्या आप सूत कात सकती हैं तो वह इसमें अपना अपमान मानेगी। औरतें सूत कातना पसन्द करती हैं, परन्तु इस देशमें पुरुष मैनचेस्टरकी धोतियाँ पहनते हैं इसलिए चरखेपर सूत कातनेकी प्रथा उठ जानेकी जिम्मेवारी उन्हींकी है। अब चूँकि स्वदेशीको अपनाया जा रहा है, इसलिए चरखेका प्रचलन सारे देशमें हो गया है। देशमें काफी कपास है; कातनेवाले भी काफी हैं। कमी केवल इस बातकी है कि इन चीजोंका उपयोग करनेकी आपकी इच्छा नहीं होती। जिस तरह स्वराज्य पानेके लिए सब लोगोंका, चाहे वे हिन्दू हों, मुसलमान हों, पारसी, ईसाई या यहूदी हों, एक राष्ट्रके रूपमें संगठित हो जाना जरूरी है उसी तरह यह बहुत जरूरी है कि स्वराज्य पानेके उद्देश्यसे आप लोग पूर्ण स्वदेशी अपनाएँ। सच्चा स्वदेशी वस्त्र भारतमें काते गये सूतका बना हुआ ही माना जायेगा? उसमें विदेशी सूतका जरा भी अंश नहीं होना चाहिए। जो साड़ियाँ विदेशी सूतसे बनी हुई हों, वे अवश्य त्याग दी जायें। कुछ स्त्री-पुरुष अपने सब कपड़े एकदम त्यागना पसन्द नहीं करेंगे; वे कुछको बचा रखना चाहते हैं। परन्तु यदि वे इस मार्गका अनुसरण करते हैं तो वे स्वराज्यकी योग्यता प्राप्त नहीं कर सकेंगे। विदेशी कपड़ा खरीदकर उन्होंने या तो अपने धनका अपव्यय किया है या अपने बहुतेरे देशवासियोंको भुखमरीकी हालतमें रखा है। उन्हें चाहिए कि वे उन कलुषित वस्त्रोंको तुरन्त फेंक दें। सफेद खद्दर न केवल पहली अगस्तको बल्कि उसके बाद भी पहनना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७–७–१९२१

२१५. भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

२६ जुलाई, १९२१

महात्माजीने स्वदेशीपर व्याख्यान देते हुए कहा कि खादी पहनना अविलम्ब शुरू कर देना चाहिए और यह भी कहा कि खादीके द्वारा ही हमें निकट भविष्यमें स्वराज्य-प्राप्तिका अनुष्ठान पूरा करना है यह समय आपके मौन बैठे रहनेका नहीं बल्कि हम सबके लिए जागरूक रहनेका और अपने देशको विदेशियोंके कब्जेसे मुक्त करनेका है। लगभग ६० करोड़ रुपया प्रतिवर्ष हमारे देशके बाहर चला जाया करता है।

१. यह सार्वजनिक सभा भायखला जिला कांग्रेस कमेटीके तत्त्वावधानमें भायखला उपनगरमें हुई थी। गांधीजीने इसी सभामें अपना यह भाषण दिया था।

उन्होंने श्रोताओंसे पूछा कि उस रकमका कितना भाग हमारे देशवासियोंके हितमें खर्च किया जाता है? यदि दो आनेका विलायती कपड़ा खरीदा जाता है तो उसमें से सात पैसे विदेशी व्यापारियोंकी जेबोंमें चले जाते हैं। परन्तु यदि हम दो आनेकी खादी मोल लेते हैं तो एक या दो पैसे ही भारतीय व्यापारियोंकी जेबोंमें जाते हैं और बाकी पैसे हमारे कार्यकर्त्ताओंको मिलते है। जब ऐसी स्थिति है तो आप सबको पहली अगस्तको अपने वे सारे विदेशी कपड़े जला देनेको तैयार रहना चाहिए, जिन्हें पहनना, फिर कहूँगा कि पाप ही है। हमें इस पापका प्रक्षालन, उन कपड़ोंको उस पवित्र-स्थानपर जलाकर जहाँ हमारे महान् नेता लोकमान्य तिलकका दाह-संस्कार किया गया था, करना चाहिए। यदि आपमेंसे कुछ लोग उन्हें जला डालनेको तैयार नहीं हैं, तो वे उनको स्मरना भेज सकते हैं। यदि आप इस कामको पूरा नहीं कर सकते तो आप अपने दिवंगत नेता लोकमान्यके प्रति कर्त्तव्यसे च्युत होंगे। पहली अगस्तको चौपाटीकी रेतपर मैं आप सबको अपने देशके प्रति अपना पवित्र कर्त्तव्य निभाते हुए देखनेकी आशा रखता हूँ।

इस सम्बन्धमें मैं भायखलाके बढ़ई भाइयोंको कुछ सलाह देना नहीं भूलूँगा। मैं यहाँ उनसे थैली लेने नहीं आया हूँ, वरन् उन्हें साफ-साफ यह बताने आया हूँ कि स्वदेशीकी सफलता उनके कर्त्तव्यका अंग है। उनका कर्त्तव्य है कि अच्छे और सस्ते चरखे, जितने भी बना सकें बनायें, जो हर भारतीय घरकी शोभा बनें। मैं अपने बढ़ई दोस्तोंके बारेमें यह अच्छी तरह जानता हूँ कि वे आकर्षक अलमारियाँ तथा लकड़ीकी अन्य चीजें बनानेमें कुशल हैं। परन्तु अब उन्हें ऐसी चीजें बनानेमें समय नष्ट नहीं करना चाहिए। गांधीजीने बढ़ई भाइयोंसे सानुरोध कहा कि आप लोग हजारोंकी संख्यामें चरखे तैयार करें, क्योंकि वे स्वराज्यकी सीढ़ियाँ हैं। उन्हें मिल-जुलकर कलसे ही चरखे बनाना शुरू कर देना चाहिए। मुझे आशा है कि वे मेरी बातपर अमल करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २८-७-१९२१

२१६. तार: हकीम अजमल खाँको

[२८ जुलाई, १९२१ के पूर्व][1]

हकीमजी अजमल खाँ
दिल्ली

बहुत खेद हुआ। अखिल भारतीय कमेटीकी बैठक २८को बम्बईमें हो रही है। पहली अगस्तके बाद अलीगढ़ जा सकता हूँ। विदेशी कपड़ेका बहिष्कार संगठित कर रहा हूँ। यदि आप मुझे इसी महीने अलीगढ़ बुलाना चाहते हैं तो उस काममें रुकावट पड़ेगी। जवाब दीजिए।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५७४) की फोटो-नकलसे।

२१७. टिप्पणियाँ

सफेद टोपी

'ब्रिटिश इंडिया स्टीम नैविगेशन कम्पनी' का एक कर्मचारी खादीकी टोपी पहननेकी गुस्ताखी करनेपर नौकरीसे निकाल दिया गया है। इस तरहकी कार्रवाई पहले 'शॉ वैलेस ऐंड कम्पनी' ने की थी। यह तो अपमान है और यह अपमान कितना बड़ा है इसे हमने अभी अनुभव नहीं किया है। हम इतने अधिक गिर गये हैं कि हमें अपनी इस गिरावटकी हद दिखाई नहीं देती। फिर भी राष्ट्रोंके लिए इस प्रकारके अपमान जान-बूझकर या रोषके आवेशमें किये गए प्रहारोंसे अधिक अप्रतिष्ठाजनक होते हैं। जमीनपर पेटके बल रेंगने और नाक रगड़नेसे शरीरको कोड़े लगाये जानेकी[2] अपेक्षा भले ही कम कष्ट होता हो, परन्तु इस बारेमें कोई सन्देह नहीं कि पेटके बल रेंगने और नाक रगड़नेसे कोड़े लगाये जानेकी अपेक्षा भारतका अधिक अपमान हुआ है। किसीको सलाम करनेमें क्या बुराई है? परन्तु फिर भी एक महाराजाकी गद्दी इसलिए खतरेमें पड़ गई थी[3] कि उन्होंने वाइसरायके सामने कायदेसे सलामी देने और सलीकेसे पीछे हटनेका खयाल नहीं रखा था। वह सलामी राजभक्तिकी सलामी थी, जो राजभक्ति कायम रखनेके लिए जबरदस्ती अपमानपूर्वक ली जाती थी। इसी तरह इन दोनों पेढ़ियोंने अपने इन गरीब क्लर्कोंको इसलिए नौकरीसे निकाल दिया है कि

१. लगता है कि यह तार अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी २८–७–१९२१ को बम्बईमें होनेवाली बैठकसे पहले भेजा गया था।

२. यह उल्लेख अप्रैल १९१९ में पंजाबमें मार्शल लॉके दिनोंमें दी गई सजाओंका है।

३. बड़ौदा-नरेश महाराजा सयाजीराव गायकवाड़की, सन् १९११ के दिल्ली-दरबारमें किये गये आचरणके कारण।

उनमें अपनी राष्ट्रीय पोशाक पहननेकी हिम्मत थी, जिसे आप चाहें तो उनकी श्रद्धाका प्रतीक भी कह सकते हैं। ये घमंडी पेढ़ियाँ यह सहन नहीं कर सकी कि उनके क्लर्क ऐसी हिम्मत दिखायें। जिस समय भारतकी नारियाँ अपने नारीत्वको और भारतके पुरुष अपने पुरुषत्वको अनुभव करने लग जायेंगे, उसी समय भारत स्वतन्त्र हो जायेगा। तब दुनियाकी कोई ताकत उसे स्वतन्त्र होनेसे नहीं रोक सकती। इसलिए इन दोनों व्यक्तियोंको नौकरीसे निकाल दिये जानेका हमारे लिए बहुत बड़ा अर्थ होना चाहिए। और मुझे स्वीकार करना चाहिए कि इन पेढ़ियोंके अन्य कर्मचारियोंकी निष्क्रियतासे मुझे दुःखजनक निराशा हुई है। उन्हें कमसे-कम साधारण मजदूरोंका-सा साहस तो दिखाना ही था। भारतमें एक पीड़ित भाईके लिए बड़ी भारी हड़ताल होनेके उदाहरण अनेक मिल सकते हैं। क्या इन पेढ़ियोंके क्लर्कोंके मनमें अपने भाईके लिए कोई दर्द नहीं है? क्या वे समूचे भारतसे अपने निकट सम्बन्धका दावा कर सकते हैं? यदि उनके किसी सगे भाईके साथ वैसा ही व्यवहार किया गया होता, जैसा कि इन दो बहादुर नौजवानोंके साथ किया गया, तो वे क्या करते? पर इन पेढ़ियोंके कर्मचारी अब भी अपनी गलती सुधार सकते है। वे विरोधस्वरूप अब भी खादीकी सफेद टोपियाँ पहन सकते हैं और अपने उन क्लर्क भाइयोंको उनके पदोंपर फिरसे नियुक्त करनेकी माँग कर सकते हैं।

मैं इन दोनों बड़ी पेढ़ियोंके मैनेजरोंको भी नम्रतापूर्वक सावधान करता हूँ। असहयोगी जातिवादसे बचे हुए हैं। वे अपनी पूरी ताकतसे एक दूषित प्रणालीसे लड़ रहे हैं। व्यक्तिशः अंग्रेजोंसे उनका कोई झगड़ा नहीं है। परन्तु यदि अंग्रेज इन पेढ़ियोंके मैनेजरोंकी तरह पक्षपात करेंगे तो जाति विस्फोटको रोकना मुश्किल होगा। यदि यूरोपीय व्यापारी इस मामलेको बहुत जरूरी मानकर इन पेढ़ियोंकी भयंकर गलतियोंको फौरन ठीक न करेंगे तो यूरोपीय पेढ़ियोंका बहिष्कार किये जानेका भय है।

क्षमा मँगवानेका प्रयत्न

'इंडिपेंडेंट' में प्रकाशित सर्वश्री जवाहरलाल नेहरू, जोजेफ और रंगा अय्यर तथा संयुक्त प्रान्तकी सरकारके बीच हुए पत्र-व्यवहारसे यह सिद्ध होता है कि मेरा वाइसरायके पास जाना और अली भाइयोंको अपने कुछ भाषणोंके लिए क्षमा माँगनेकी राय देना, राजनीतिक दृष्टिसे बहुत बड़ी भूल थी। अब यह अधिकाधिक स्पष्ट होता जा रहा है, जैसा कि मौलाना अब्दुल बारीने कहा है, कि जहाँ मेरे वाइसरायके पास जानेसे और अली भाइयों द्वारा क्षमा-याचना करनेसे हुई हानि प्रत्यक्ष है, वहाँ इनसे कदाचित् कुछ लाभ हुआ है तो वह इतना अस्पष्ट है कि जनता उसे नहीं देख सकती। सौभाग्यसे मैं राजनीतिज्ञ नहीं हूँ। और संयुक्त प्रान्तकी सरकारने जवाहरलाल नेहरू तथा उनके साथियोंको फँसानेके लिए अली भाइयोंकी क्षमा-याचनाका जो निन्दनीय उपयोग किया है, उसके पीछे छिपी भलाईको मैं देखता हूँ। सरकारने तो अली भाइयोंकी क्षमा-याचनाकी शब्दावलीका अनुकरण तक किया है। लोग प्रायः गलत जगहपर रखी हुई वस्तुको गन्दगी कहते हैं और यह ठीक ही है। ठीक इसी तरह जहाँ मैं यह मानता हूँ कि अली भाइयोंकी क्षमा-याचना ठीक जगहपर होनेके कारण एक सम्मानजनक बात

थी, वहाँ गलत जगहपर होनेके कारण संयुक्त प्रान्तकी सरकार द्वारा अपेक्षित क्षमा-याचना असम्मानजनक बात होती। परन्तु उस सरकारका पाला जबरदस्त लोगोंसे पड़ा है। वे न तो झूठे उदाहरणोसे धोखा खानेवाले है और न जेलकी धमकियोंसे डरनेवाले हैं। इसलिए सरकारके सामने यही मार्ग रह गया है कि वह इन तीनो जन-सेवकोंके विरुद्ध उनके भाषणो और लेखोके आधारपर, जिन्हें जनता और वे स्वयं भूल चुकी है, अभियोग चलाकर अपनी अयोग्यता और असहनशीलताका अतिरिक्त प्रमाण दे। यदि वह 'अपराधियो'पर मुकदमा चलायेगी तो अशान्तिके मूल कारणको दूर करनेमे अपनी अयोग्यता सिद्ध करेगी और इससे उसकी समुचित विरोधी आलोचनाको सहन करनेकी अक्षमता भी प्रमाणित होगी। कानेको काना कहें तो उसे यह बात कड़ी लग सकती है; परन्तु सीधा-सादा सत्य जितनी अच्छी तरह समझमे आता है, उतनी अच्छी तरह कोई दूसरी चीज समझमें नही आ सकती। यदि कोई सरकार कठोर कार्य करती है तो कोमल शब्दोंमे उसका सच्चा वर्णन नहीं किया जा सकता। इसलिए इन पत्रोंके प्रकाशनसे स्वराज्यके उद्देश्यकी बहुत बड़ी सेवा हुई है। इससे वातावरण साफ हो गया है और इससे उन सभी लोगोंका मार्ग-निर्देशन होगा जिनकी स्थिति इन तीनों मित्रों जैसी है। कोई भी असहयोगी मुकदमेसे बचनेके लिए न तो क्षमा माँग सकता है और न कोई आश्वासन दे सकता है। साथ ही, जब उसका ध्यान उसकी कही हुई ऐसी बातकी ओर आकर्षित किया जाये जो हिंसा भड़कानेवाली मानी जाती हो, तो उसे अपनी गलती तुरन्त सुधार लेनी चाहिए और अपने सिद्धान्तके प्रति ईमानदार रहना चाहिए। यदि सरकार असहयोगियोंसे ईमानदारीका बरताव करना चाहती हो और उन्हें इसलिए जेलमें रखना चाहती हो कि वह असहयोग आन्दोलनको उसके अहिंसात्मक होने और बने रहनेके बावजूद नापसन्द करती हो तो उसे उनपर सिर्फ धारा १२४ क के अन्तर्गत मुकदमा चलाना चाहिए। उस अवस्थामे हममें से हरएक अवश्य ही अपना अपराध स्वीकार कर लेगा क्योंकि एक तन्त्रके रूपमे सरकारके प्रति अपने मनमें असन्तोष रखना और फैलाना हमारा सिद्धान्त है। हम इस तन्त्रको समाप्त करने-पर तुले हैं; और मुझे बताया गया है कि ऐसा करना उक्त धाराकी दृष्टिसे राजद्रोह है। यदि कानूनमें इस तन्त्रकी समाप्तिकी बात सोचनेकी अनुमति है तो हर असह-योगी वचनबद्ध देशभक्त है।

पत्रकारिताका दुरुपयोग

यह कुछ महत्त्वपूर्ण बात है कि 'डिचर'ने जो-कुछ कहा है और जिसका उल्लेख इन स्तम्भोंमें किया जा चुका है उसके लिए 'कैपिटल' ने श्री गणेश दामोदर सावरकरसे क्षमा-याचना कर ली है। इसमे 'डिचर' ने जो आरोप लगाया था वह इतना गम्भीर था कि उससे अली भाई गम्भीर संकटमें पड़ गये थे। क्या किसी उत्तरदायी समाचारपत्र-का सम्पादक चुनौती दिये जानेपर इस तथ्यकी आड़ लेकर दोषमुक्त होनेका दावा कर सकता है कि उसने अपने पत्रमें केवल अफवाह ही प्रचारित की है? क्या वह किसी ऐसी अफवाहको जिसमें दी गई विगत लगभग तथ्योंके विवरण जैसी हो, विशद चर्चाका आधार बना सकता है? उदाहरणके लिए, ये सब अफवाहपर आधारित हैं पहले ऐसा

कहकर क्या मै सम्राट्के विरुद्ध सभी प्रकारके आरोप लगा सकता हूँ? क्या मैं ऐसे आरोप लगानेके बाद उनसे ऐसे स्पष्ट निष्कर्ष निकाल सकता हूँ जिनसे महामहिम सम्राट्को बहुत अधिक क्षति पहुँचती हो? मैने इस बातको इस प्रकार मोटे तौरपर केवल यही दिखानेके लिए रखा है कि मै ब्रिटिश साम्राज्यके सर्वोच्च भद्र पुरुषकी प्रसिद्धिको कायरतापूर्वक कलुषित करनेके कारण अभद्र व्यवहार करनेका दोषी होऊँगा और कानूनके अनुसार सभ्य समाजसे तत्काल निकाला जा सकूँगा। इस मामलेमे इन हानिकर आरोपोंके शिकार संयोगसे दो सभ्य और वीर भारतीय हैं, और आरोपकर्त्ता एक यूरोपीय पत्रकार है, क्या इससे कुछ अन्तर पड़ जाता है? श्री गणेश सावरकरने अपने सम्मानपर लगाये गए इन दूषित आरोपोंपर क्षमा-याचना कर लेने मात्रसे सन्तोष कर लिया है, यद्यपि वह क्षमा-याचना भी सच्चे मनसे की गई नहीं जान पड़ती है, और मुकदमा चलानेका अपना अधिकार उदारतापूर्वक छोड़ दिया है। ऐसा करके वे देशके लोगोंकी दृष्टिमे और भी ऊँचे उठ गये हैं। श्री सावरकरके वकीलोंको दिये गये उत्तरमें इस पूर्णतः अक्षम्य आचरणके सम्बन्धमे बहाना प्रस्तुत किया गया है। जब-तक सम्पादक अफवाहोंकी बारीकीसे छानबीन न कर ले और उनके सचाईपर आधारित होनेका विश्वास न कर ले तबतक न्याय और ईमानदारीका थोड़ा-सा भी खयाल रखने-वाला समाचारपत्र अफवाहोंको प्रचारित नहीं कर सकता। मुझे आशा है कि अंग्रेजी और हिन्दीके समाचारपत्र इस बातपर गम्भीरतासे विचार करेंगे और 'कैपिटल' के सम्पादकको यह अनुभव करा देंगे कि उन्होंने एक सम्मानित पत्रकारके अयोग्य आचरण करनेका अपराध किया है।

विदेशी कपड़े क्यों जलाएँ?

आलोचकोंने विदेशी कपड़े जलानेके सम्बन्धमें मुझे बेहद झिड़कियाँ दी हैं। विदेशी कपड़े जलानेके विरुद्ध प्रस्तुत किये गये प्रत्येक तर्कपर विचार करनेके बाद मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि विदेशी कपड़ेसे छुटकारा पानेका सबसे अच्छा तरीका उसको नष्ट कर देना ही है। प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने यह बात विदेशी कपड़ा देनेवाले व्यक्तियोंकी इच्छापर छोड़ दी है कि वे विदेशी कपड़ेको नष्ट कर दें या भारतसे बाहर स्मरना या कहीं अन्यत्र भेज दें। इसलिए यदि विदेशी कपड़ेसे छुटकारा पानेका एकमात्र तरीका उनको नष्ट करना ही बताया गया होता तो इस प्रश्नका जितना महत्त्व होता उसका उतना महत्त्व अब नहीं रहता। विदेशी कपड़ेको नष्ट करनेका औचित्य इस बात-पर निर्भर करता है कि किसी व्यक्तिका विदेशी कपड़ेको छोड़ देनेकी आवश्यकतामें कितना तीव्र विश्वास है। जिस प्रकार शराब न पीनेवाला मनुष्य अपने शराबके गोदामकी शराब अपने जरूरतमंद पड़ोसीको नहीं दे देता, उसी प्रकार यदि कोई स्वदेशीका भक्त उस शराब न पीनेवाले मनुष्यके समान ही बहुत उत्कट भावना रखता है तो वह अपने बक्समें रखे विदेशी कपड़े गरीबोंको नहीं देगा। मेरा विचार है कि भारतमें विदेशी कपड़े पहनना लगभग शराब पीनेके समान ही बुरा है। मैं इस बारेमें निश्चित कुछ नहीं कह सकता कि वह कुछ मानीमें शराब पीनेसे भी अधिक बुरा नहीं है। पिछले डेढ़ सौ वर्षोंसे भारतमें विदेशी कपड़ा आ रहा है और उससे कताईके हमारे महान्

कुटीर उद्योगको हानि पहुँच रही है। जैसा कि श्री रमेशचन्द्र दत्तने[1] अपनी भारतके कताई और बुनाई उद्योगोंके विचारपूर्ण और सुनियोजित विनाशके इतिहासका अध्ययन पुस्तकमें बताया है, जो बिहार भारतका अत्यन्त समृद्ध प्रान्त था, वह अब अपने बुनाई और कताईके समृद्ध उद्योगके आयोजित और क्रूरतापूर्ण विनाशके कारण निर्धन हो गया है। यदि हम यह अनुभव ही कर ले कि ईस्ट इंडिया कम्पनीने कितनी हानि पहुँचाई है और हमने कम्पनीके गुमाश्तोंके अत्याचारोंके सामने या अपने आगे रखे गये प्रलोभनोंके सामने झुककर कितना बड़ा पाप किया है तो हमारे सिर लज्जाके कारण नीचे हो जायेंगे। यदि हम स्वदेशी वस्तुओका व्यवहार करते रहते तो हमारा महान् राष्ट्रीय उद्योग नष्ट ही न होता, हमारी स्त्रियोंको विवश होकर सार्वजनिक सड़कोंपर मजदूरी न करनी पड़ती और हमारे लाखो करोड़ों लोगोको विवश होकर वर्षमें कुछ समय बेकार न बैठना पड़ता। मेरा यह विनम्र मत है कि जिस कपड़ेसे ऐसी दु:खजनक स्मृतियाँ जाग उठती हैं और जो हमारे लिए लज्जा और पतनका चिह्न है उसे नष्ट कर देना ही ठीक है। वह निश्चय ही गरीबोंको नही दिया जा सकता। जो वस्तु हमारे लिए दासताका चिह्न है उसे उनको देकर हम उनकी सहायता कर रहे हैं, ऐसा सोचनेकी अपेक्षा हमे उनकी भावनाओं और उनकी राष्ट्रीय शिक्षा-दीक्षा-का अधिक खयाल करना चाहिए। क्या भारतके गरीब लोगोंमें देशभक्तिकी भावना नहीं होनी चाहिए? क्या उनमें हमारे ही समान आत्मगौरव और आत्मसम्मानकी भावनाएँ नहीं होनी चाहिए? मैं यह नहीं चाहता कि हममें से कोई तुच्छसे-तुच्छ मनुष्य भी ऐसा हो जिसमें सच्ची देशभक्तिकी भावना न हो। हम उन्हें सड़ा-गला भोजन या ऐसा भोजन जिसे हम नहीं खाना चाहते, देते हुए भयसे सहमते है या हमें सहमना चाहिए; ठीक वैसे ही भावका अनुभव हमें उन्हें विदेशी कपड़ा देते समय भी करना चाहिए। एक क्षण विचार करें तो यह भी स्पष्ट हो जायेगा कि हम जिन बारीक कपड़ोंको फेंक रहे है उनमें से ज्यादातर गरीबोंके लिए बिलकुल बेकार हैं। वे पसीनेकी बदबूसे भरी हुई हमारी गन्दी टोपियोंको और हमारी छोड़ी हुई कीमती रेशमी साड़ियों और अत्यन्त बारीक मलमलका क्या उपयोग कर सकते हैं? जो लोग इन्हें पहनते थे वे इनसे प्रेम करते थे; उनके अतिरिक्त अन्य लोगोके लिए इनका कोई मूल्य नहीं है। उनसे अकाल-पीड़ित लोगोंके शरीर नहीं ढँके जा सकते। इनमें उनके उपयोगकी वस्तुएँ तो वास्तवमें बहुत ही कम हैं। परन्तु जब मैं यह तर्क देता हूँ कि विदेशी कपड़ा नष्ट कर देना चाहिए तब मेरे इस तर्कका आधार यह नहीं होता कि जो कपड़ा फेंका गया है वह बेकार है। मेरा तर्क तो इससे भी अधिक गहरा जाता है क्योंकि वह उस एकमात्र भावनापर आधारित है जो हमारी श्रेष्ठतम भावनाको बल देती है और दे सकती है। एक अंग्रेजको जीर्ण-शीर्ण झंडेके प्रति किये गये अपमानपर क्यों रोष प्रकट करना चाहिए? परन्तु वह उसपर रोष प्रकट करता है, और वह यह ठीक ही सोचता है कि उसे ऐसा करना चाहिए। मैं एक क्षणके

१. १८४८–१९०९; भारतीय शासन-सेवाके सदस्य; **इकनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया सिंस द एडवैन्ट ऑफ द ईस्ट इंडिया कम्पनी**के लेखक; १८९९ में लखनऊ कांग्रेसके अध्यक्ष।

लिए अपने विश्वासको छिपा लूँ और उससे लाखोंका लाभ उठा लूँ तो उसमें क्या हानि है? परन्तु मुझे सारी दुनियाका साम्राज्य मिले तो भी मैं ऐसा नही कर सकता। बिलकुल इन्ही कारणोंसे हम भारतके गरीब लोगोके लिए विदेशी कपड़ा काममें नही ले सकते। और आखिर इस प्रकार छोड़े हुए कपड़ेको स्मरना और अन्य किसी विदेशी स्थानमें भेज देना त्यागके कार्यको सुविधाजनक बनाना ही है। परन्तु विदेशी कपड़ेको दूसरे देशोमें भेजनेमें उतनी प्रबल नैतिक आपत्ति नही है जितनी प्रबल नैतिक आपत्ति उस कपड़ेको अपने देशमे ही काममें लेनेमे है।

विदेशी सूत

'इंडियन सोशल रिफॉर्मर' ने विदेशी सूतको स्वदेशीकी परिभाषामें से निकाल देनेपर आपत्ति की है। कुछ विनाश किये बिना और कहीं किसीको चोट पहुँचाये बिना, उठाये हुए कदमको वापस लेना, सुधार करना और शुद्धि करना असम्भव है। बुनकरोंका खयाल ऐसा नहीं है कि यदि वे विदेशी सूतका कपड़ा नहीं बुनेंगे तो उन्हे बेकार बैठना पड़ेगा। यदि हम सिर्फ फिलहाल कम बारीक कपड़ेसे सन्तोष करनेकी बात मान जायें तो वे बिना कठिनाईके देशी कारखानोंमे कते सूतका कपड़ा बुन सकते हैं और उसमें अपनी कलात्मक प्रतिभाका पूरा उपयोग कर सकते है। जब भारतीय बाजारमें विदेशी कपड़ा और विदेशी सूत नहीं मिलेगे, तब भारतमें पुराने जमाने जैसे सुन्दर कपड़े फिर बनाये जा सकते हैं। भारतमे यह योग्यता है इसमें मुझे कोई बाधा दिखाई नहीं देती। सच्ची कला तो समाप्त हो गई है, और धनी लोगोंके घरोंमें कलात्मक वस्तुओंके नामपर दिखावटी वस्तुएँ आ घुसी हैं, क्योंकि अब सच्ची कलाके आश्रयदाता नहीं रहे हैं। मैं उस समयकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ जब सामान्य अवस्था आते ही धनी लोग अपने व्यवसाय-स्थानोंसे लगे हुए विशेष कातनेवालों और बुननेवालों के मकान बनवायेंगे और उन लोगोंका काम होगा अपने आश्रयदाताओंके लाभार्थ कलापूर्ण वस्त्र तैयार करना।

धरना देनेवाली स्त्रियाँ

एक पारसी बहन लिखती हैं, बम्बईमें धरना आरम्भ किया जायेगा तब मैं जो भी दल तैयार किया जाये उसमें सम्मिलित होनेके लिए बिलकुल तैयार हूँ और मुझे आशा है कि अन्य अनेक बहनें इसके लिए आगे आयेगी। उनका यह मत है कि यदि स्त्रियाँ बड़ी संख्यामें आगे आये तो उनकी उपस्थितिसे हिंसापर प्रभावकारी रोक लग जायेगी। मै उनकी बातका पूरी तरहसे समर्थन करता हूँ और आशा करता हूँ कि अन्य बहुत-सी बहनें बम्बईकी समितिको अपने नाम उम्मीदवारोंके रूपमें भेजेंगी।

कब्रोंको अपवित्र करना

आगराके एक मित्रने मेरा ध्यान अजमेरके भारतीय प्रैस्बिटेरियन कब्रिस्तानमें ईसाइयोंकी कब्रोंके अपवित्र किये जानेके सम्बन्धमें समाचारपत्रोंको भेजे गये श्री डेविडके पत्रकी ओर आकृष्ट किया है। मुझे इस बातका अफसोस है कि वह पत्र मेरे देखनेमें नहीं आया है। श्री डेविडने यह ठीक ही कहा है कि कट्टरपन और धर्मान्धतासे भारतीय

राष्ट्रका सामंजस्यपूर्ण विकास रुक जायेगा और ये एकताके विकासके लिए घातक हैं। जैसा कि मैंने प्रायः कहा है, हिन्दू-मुस्लिम एकताका अर्थ है उन सभी लोगोंकी एकता जो विभिन्न धर्मों व पंथोंके अनुयायी होनेपर भी भारतको अपना देश मानते हैं। कब्रोंको अपवित्र करना विशेष रूपसे कायरतापूर्ण अपराध है। युद्धके नियमों तकमें कब्रोंकी पवित्रता मानी जाती है। केवल पतित स्वभावका मनुष्य ही कब्रोंको अपवित्र करनेकी दुष्टता करके प्रसन्न हो सकता है। परन्तु जब हम इस बातका खयाल करते हैं कि इस समय राष्ट्र अपने सभी विसंगत तत्त्वोंमें सामंजस्य स्थापित करनेका प्रयत्न कर रहा है तब ऐसा अपराध और भी दुष्टतापूर्ण हो जाता है। हमारे संघर्षके प्रति सहानुभूति रखनेवाले बहुतसे लोग ईसाई हैं। श्री एन्ड्रयूज पक्के ईसाई हैं, भारतमें उनसे अधिक सच्चा कोई दूसरा कार्यकर्त्ता नहीं हो सकता। वे दीन-बन्धु कहे जाते हैं और यह ठीक ही है। मुझे आशा है कि अजमेरकी कांग्रेस कमेटी इस मामलेकी ओर ध्यान देगी और इन ईसाई देशभाइयोंकी सभी प्रकारसे सहायता करेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८–७–१९२१

२१८. उचित पश्चात्ताप और उससे शिक्षा

मुझे अभी-अभी श्री याकूब हसनका निम्न करुण पत्र प्राप्त हुआ है:

> मैं अब अनुभव करता हूँ कि मैंने दुर्बलताके क्षणमें एक गम्भीर अविवेकपूर्ण कार्य कर डाला है। जबसे मुझे अपनी भूलकी महत्ताका भान हुआ है तबसे मेरे हृदयमें ऐसी गहरी पीड़ा हो रही है कि उससे मैं पागल ही हुआ जा रहा हूँ। मुझे आपसे आन्दोलनके मुखियाके रूपमें क्षमा माँगनी चाहिए, और मैं बहुत ही नम्रतापूर्वक क्षमा माँग रहा हूँ। आप मुझे मेरे मार्गदर्शक और नेताके रूपमें जितना बुरा-भला कहा जाना चाहिए उतना बुरा-भला कहें और इस भूलकी जितनी कड़ी सजा दी जानी चाहिए उतनी कड़ी सजा दें; परन्तु मुझे आशा है कि आप भगवान्के नामपर मेरे इस पाप-कर्मके लिए मुझे क्षमा कर देंगे। मैं इससे पहले तक जिस पवित्र कार्यको अपने विवेकके अनुसार ईमानदारी और सचाईसे करनेका प्रयत्न करता रहा हूँ यदि उसे मेरे इस कार्यसे कोई क्षति पहुँची हो तो मैं उसका प्रायश्चित्त करूँगा और इस प्रकार उस क्षतिको पूरा करूँगा और ईश्वरके सम्मुख अपना मुख उज्ज्वल करूँगा।

इस पत्रमें सचाईकी झलक है; और इससे सभी आलोचना व्यर्थ हो जाती है। मैंने श्री याकूब हसनको यह लिख दिया है कि उनको क्षमा करना मेरा काम नहीं है। कौन जानता है, किसी संकटकी घड़ीमें मैं उनसे भी अधिक दुर्बल सिद्ध होऊँ? उनको केवल ईश्वर ही क्षमा कर सकता है, क्योंकि केवल वही हमें अच्छी तरह

जानता है। अनेक देशोंमें और अनेक जातियोंकी मार्फत ईश्वरने अपनी वाणीमें हमें यह आश्वासन दिया है, 'जब मनुष्य मेरे सामने शुद्ध और विनम्र हृदयसे अपनी दुर्बलताको स्वीकार कर लेता है तब मैं उसे क्षमा कर देता हूँ।' हम स्वयं दुर्बल हैं और इसलिए जिसने अपनी दुर्बलता स्वीकार कर ली है हमें ऐसे भाईपर पत्थर नहीं चलाना चाहिए।

परन्तु श्री याकूब हसनकी दुर्दशासे हम सभीको संकटके प्रति सचेत हो जाना चाहिए, क्योंकि यद्यपि विजय निकट दिखाई देने लगी है तथापि उसके पूर्व संघर्षका जो अन्तिम दौर आयेगा, और वह आयेगा अवश्य, उसको सहन न कर सकनेका भय होता है। हमें यह निश्चय कर लेना चाहिए कि यह सरकार वास्तवमें लोगोंके संकल्पके सामने झुकनेसे पहले हमें बार-बार अच्छी तरह परखेगी। हमें हजारोंकी संख्यामें भारतकी जेलोंको भरनेके लिए तैयार हो जाना चाहिए। उनके भीतर हैजा फैले तो भी हम चिन्ता न करें, हमें ऐसी तैयारी रखनी चाहिए। परन्तु दासताके जिस पुराने नैतिक हैजेसे हम पीड़ित हैं उसकी तुलनामें वास्तविक हैजा एक साधारण बात है। यदि शेरवानीके अभियोगकी हास्यास्पद कार्रवाईकी खबर सही है तो उन्हें बिलकुल निर्दोष होनेके बावजूद सजा दी गई है। संयुक्त प्रान्तमें कोई-न-कोई रोज ही जेल जा रहा है। अभी आन्ध्रसे इस आशयका तार आया है कि गुन्टूरमें दो कार्यकर्त्ताओंको एक-एक वर्षकी सजा हो गई है। उनमें से एक बैरिस्टर है। इस तारको भेजनेवाले श्री वेंकटप्पैयाका कहना है कि अभी दमन बढ़नेकी आशंका है। आगे-पीछे यह तो होना ही था। यदि हम इस प्रहारका सामना दृढ़तासे करेंगे तो इस वर्ष स्वराज्य निश्चय ही मिल जायेगा।

परन्तु केवल दुर्बलताका ही भय नहीं है। भय यह भी है कि लोग उत्तेजित किये जानेपर और बदलेकी कार्रवाई करनेमें कहीं भड़क न जायें। लोगोंकी कष्ट-सहन करनेकी अयोग्यता या अनिच्छाकी अपेक्षा उनके पागल हो जानेका भय अधिक गम्भीर है। भारत-भरमें प्रत्येक कार्यकर्त्ताका यह कर्त्तव्य है कि वह हिंसाको रोकनेका प्रयत्न करे, भले ही इस प्रयत्नमें उसकी जान ही क्यों न चली जाये।

भारत भविष्यमें किये जानेवाले व्यापक दमनका जो सबसे अच्छा उत्तर दे सकता है वह यह कि बुद्धिमान अर्थशास्त्री हमारे सामने जिन आँकड़ोंको प्रस्तुत करें हम उनकी बिलकुल चिन्ता न करें और सभी प्रकारके विदेशी कपड़ेका त्याग कर दें। यदि हम कृतसंकल्प हो जायें तो हम अपने लिए आवश्यक पूरा कपड़ा तीन महीनेमें ही हाथसे सूत कातकर और उसे हाथसे बुनकर तैयार कर सकते हैं। क्या हममें स्वराज्य प्राप्त होने तक, खादीसे सन्तोष कर लेनेका संकल्प-बल है?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-७-१९२१

२१९. हिन्दू-मुस्लिम एकता

यह बात अब सबको विदित है कि जबतक हिन्दुओं तथा मुसलमानोंमें एकता स्थापित नहीं हो जाती, देश तबतक कोई निश्चित प्रगति नही कर सकता। इसमें भी कोई सन्देह नही है कि जिस सीमेंटसे ये दोनों जुड़े हैं वह अभी नर्म और गीला है। उनमें अभीतक पारस्परिक अविश्वास बना हुआ है। राष्ट्रके नेता इस बातको भली-भाँति मान गये हैं कि जबतक दोनों जातियाँ एक-दूसरीपर विश्वास करनेकी और मिलकर काम करनेकी आवश्यकता अनुभव नही करतीं तबतक भारत उन्नति नहीं कर सकता। यद्यपि जनसाधारणमें बहुत परिवर्तन हो गया है, परन्तु परिवर्तन अभीतक स्थायी नही है। अभीतक मुसलमान जनसाधारण स्वराज्यकी उतनी आवश्यकता नही मानते जितनी हिन्दू मानते हैं। सार्वजनिक सभाओंमे मुसलमान उतने नही आते जितने हिन्दू आते हैं। इसमें जबरदस्ती तो कुछ की नहीं जा सकती। मुसलमानोंमे राजनीतिक अभिरुचि जगानेके लिए जितने समयकी आवश्यकता है [शायद] अभी उतना समय नहीं बीता। केवल एक वर्ष पूर्व ही मुसलमान काग्रेसके कार्यमें सामूहिक रूपसे कोई भाग ही नहीं लेते थे। वस्तुत: यह एक आश्चर्यकी बात है कि अब देशमे हजारों मुसलमान कांग्रेसके सदस्य बन गये हैं। यह इतना कार्य ही भारी सफलताका सूचक है।

परन्तु अभी तो बहुत काम करना है और मुख्यतः हिन्दुओंको करना है। अबतक जहाँ-कही भी मुसलमान उदासीन दिखाई देते हों वही वे उन्हें शामिल होनेका निमन्त्रण दें। हिन्दुओंकी ओरसे बहुधा इस बातकी शिकायत सुननेमें आती है कि मुसलमान न तो कांग्रेस-सगठनमें सम्मिलित होते हैं और न तिलक स्वराज्य-कोषमें चन्दा देते हैं। स्वाभाविक प्रश्न यह है कि क्या उन्हे शामिल होनेकी दावत दी जाती है? प्रत्येक जिलेमें हिन्दुओंको चाहिए कि वे अपने मुसलमान पड़ोसियोंको इस क्षेत्रमें लानेका विशेष प्रयत्न करें। जबतक हम एक-दूसरेको हीन या श्रेष्ठ समझेंगे तबतक हम लोगोंमें सच्ची समानता कभी कायम नही हो सकती। बराबरीके लोगोंमें किसीको हीन माननेकी गुंजाइश नहीं रहती। जहाँ मुसलमानोंकी संख्या कम हो वहाँ उन्हें अपनी अल्पसंख्याका या अपने भीतर शिक्षाकी कमीका खयाल नही करना चाहिए। शिक्षाकी कमी शिक्षा प्राप्त करके पूरी की जानी चाहिए। अल्पसंख्यामें होना कई बार एक वरदान होता है। बहुसंख्या प्राय: प्रगतिमें बाधक सिद्ध हुई है। अन्ततः मुख्य प्रभाव चरित्रका ही पड़ता है। किन्तु मैंने यह लेख यह बतानेके लिए नहीं लिखा है कि मुसलमान अपनी कमियाँ कैसे पूरी कर सकते हैं या उन्हें भविष्यमें क्या करना चाहिए।

मेरा मुख्य उद्देश्य हमारे सामने इस समय जो प्रश्न उपस्थित है उसपर विचार करना है। बकरीद जल्दी ही आ रही है। इस अवसरपर हिन्दुओं और मुसलमानोंमें झगड़े करानेके जो प्रयत्न किये जायेंगे; उनको व्यर्थ करनेके लिए हमें क्या करना चाहिए? यद्यपि बिहारमें स्थिति बहुत-कुछ सुधर गई है; किन्तु फिर भी हम अभी उसकी ओरसे निश्चिन्त नहीं हो सकते। अति उत्साही और अधीर हिन्दू कुछ मामलोंमें

जोर-जबरदस्ती कर रहे हैं। वे शरारती लोगोंके षड्यन्त्रोंमें आसानीसे फँस जाते हैं और इन षड्यन्त्रोंके पीछे सदा सरकारका हाथ नहीं होता। गोरक्षा हिन्दुओंको अत्यन्त प्रिय है। इसलिए हम इस प्रश्नपर प्रायः उत्तेजनाके शिकार हो जाते हैं और इस प्रकार अनजाने अपने प्रिय उद्देश्यको हानि पहुँचानेके साधन बन जाते हैं। हमें यह मान लेना चाहिए कि हमारे मुसलमान भाइयोंने अपने हिन्दू भाइयोंकी खातिर गायकी जान बचानेके लिए बहुत उद्योग किया है। उसका मूल्य कम आँकना गम्भीर भूल होगी। हमारा अपनी बातपर जोर देना उनके समस्त उद्योगको व्यर्थ कर देना है। हमने पिछले कुछ सालोंमें गोवधको या तो बिना किसी आपत्तिके ही सहन किया है; या आपत्ति की है तो वह केवल प्रभावहीन और हिंसात्मक आपत्ति रही है। हमने अपनी ओरसे अपने देशमें रहनेवाले मुसलमान भाइयोंसे अपने सम्बन्ध प्रेमपूर्ण बनानेका कोई प्रयत्न नहीं किया है और इस बातकी पात्रता प्राप्त नहीं की है कि हमारे ये भाई इस बारेमें अपने ऊपर स्वयं अंकुश लगा लें। हमने प्रायः अकारण ही यह मान लिया है कि यह कार्य असम्भव है।

किन्तु हम अब उनके इस संकट-कालमें सोच-समझकर उनकी सहायता करनेका विचारपूर्ण प्रयत्न कर रहे हैं। हमने यह कार्य अपनी इच्छासे किया है। इसके सत्-प्रभावको हमें सौदेबाजी करके नष्ट नहीं कर देना चाहिए। मित्रता कदापि सौदेकी वस्तु नहीं हो सकती। वह तो एक ऐसी स्थिति होती है जिसमें किसी भी बदलेका खयाल नहीं किया जाता। सेवा करना कर्त्तव्य है और कर्त्तव्य एक ऋण है। इस ऋणको चुकता न करना पाप है। यदि हम मुसलमानोंसे अपना मित्रभाव सिद्ध करना चाहते हैं तो हमारे ये भाई गायकी रक्षा करें चाहे न करें हमें उनकी सहायता करनी चाहिए। हमारे प्रति उनका जो व्यवहार है हम उसकी जिम्मेदारी उन्हींपर डालते हैं। हम उनसे यह कहनेकी धृष्टता नहीं करते कि हमारी सहायताके बदलेमें उन्हें क्या करना चाहिए। वह तो खरीदी हुई सहायता होगी। यदि मुसलमान इसको स्वीकार करनेसे इनकार कर दें तो हम इसके लिए उन्हें दोष नहीं दे सकते। इसलिए मुझे आशा है कि मुसलमान बकरीदपर चाहे कुछ भी करें, बिहारके वस्तुतः समस्त भारतके, हिन्दू पूरी सहिष्णुता दिखानेकी आवश्यकताको अनुभव करेंगे। वे कौन-सा मार्ग पसन्द करते हैं, यह बात हमें उन्हींपर छोड़ देनी चाहिए। अमृतसरमें जो काम हकीम अजमल खाँने एक घंटेमें कर दिया उसे हिन्दू वर्षों प्रयत्न करते तो भी नहीं कर सकते थे। पिछली बकरीदपर श्री छोटानी और श्री खत्रीने जिन गायोंकी रक्षा की उनकी रक्षा बम्बईके करोड़पति अपनी समस्त सम्पत्ति दे देते तो भी नहीं कर सकते थे। मुसलमानोंपर जितना अधिक दबाव डाला जायेगा, गोवध उतना ही अधिक होगा। हमें इस मामलेको उनकी सचाईकी भावना और कर्त्तव्य-बुद्धिपर छोड़ देना चाहिए। इस प्रकार हम गायकी बड़ीसे-बड़ी सेवा करेंगे।

गोरक्षाका उपाय मुसलमानोंको मारना या उनसे झगड़ा करना नहीं है। उसका उपाय यह है कि हिन्दू खिलाफतकी रक्षामें अपनी जान दे दें और गायका कोई उल्लेख न करें। गोरक्षा एक शुद्धिकी प्रक्रिया है। यह एक तपस्या है। हम जब स्वेच्छापूर्वक

कष्ट सहन करते हैं और किसी पुरस्कारकी अपेक्षा नहीं रखते, तब हमारी दु:खभरी पुकार ऊँची उठती है और ईश्वर उसे सुनता एवं उसका उत्तर देता है। धर्मका पथ यही है और यदि उसपर एक भी मनुष्य पूरे मनसे चलता है तो उसे उसका फल मिलता है। मैं तो यहाँतक कहता हूँ और मेरी इस बातका खण्डन नहीं किया जा सकता कि गायकी जान बचानेके लिए भी, अपने ही साथी, मनुष्यकी हत्या करना हिन्दू धर्म नहीं है। हिन्दू धर्म एक सच्चे हिन्दूको स्वधर्मकी खातिर अर्थात् गोरक्षाके निमित्त स्वयं कष्ट सहनेका आदेश देता है। क्या हिन्दू मुसलमानोंसे सौदा करनेके बजाय उनकी खातिर और उनके धर्मकी खातिर मरनेके लिए तैयार हैं? यदि हिन्दू इस प्रश्नका उत्तर धर्म-भावसे देंगे तो वे सदाके लिए मुसलमानोंको अपना मित्र बना लेंगे और सदाके लिए गायकी रक्षा भी कर लेंगे। हमें इन मुसलमान भाइयोंके बड़ेसे-बड़े नेताओंसे भी कोई बड़ी आशा नहीं करनी चाहिए। वे हमारी थोड़ी सहायता करनेके अलावा और क्या कर सकते हैं। जो लोग दीर्घकालसे गोवध करते आ रहे हैं और ऐसा करते हुए जिन्होंने हिन्दुओंके मनोभावोंका तनिक भी खयाल नहीं किया है, ये नेता उनके हृदयोंको एकाएक बदल देनेका जिम्मा नहीं ले सकते। परन्तु ईश्वर सर्वशक्तिमान् है; वह क्षणमें उनकी चित्तवृत्ति बदल सकता है और उसमें दया-भावका संचार कर सकता है। यदि प्रार्थनाके साथ-साथ कष्टसहन भी हो तो वह प्रार्थना हृदयकी प्रार्थना हो जाती है। ईश्वर केवल उसी प्रार्थनाको सुनता है। अब मैं अपने मुसलमान भाइयोंसे दो शब्द कहना चाहता हूँ। उन्हें अनुत्तरदायी या अज्ञानी किन्तु धर्मान्ध हिन्दुओंके कामोंसे चिढ़ नहीं जाना चाहिए। जो उत्तेजित किये जानेपर संयम रखता है, विजय उसीकी होती है। उन्हें यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि जिन हिन्दुओंमें जरा भी दायित्वकी भावना है वे इस समय मुसलमानोंका साथ किसी लाभके भावसे प्रेरित होकर नहीं दे रहे हैं। उनका यह विश्वास है कि खिलाफतके बारेमें मुसलमानोंकी माँग न्यायोचित है, और इस अच्छे काममें मुसलमानोंकी सहायता करना भारतकी सेवा करना है, क्योंकि मुसलमान भी इसी भारत-भूमिसे पैदा हुए हैं और परस्पर भाई-भाई हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८–७–१९२१

२२०. अहिंसा

मेरा विश्वास है कि हम अपने उद्देश्यके निकट पहुँच गये हैं, परन्तु जब विजय बहुत निकट दिखाई देती है तभी अधिकतम जोखम रहता है। किसीको जब भी कोई उल्लेखनीय विजय मिलती है उसे उससे पहले समस्त पूर्व प्रयत्नोंसे बड़ा एक अन्तिम प्रयत्न और करना पड़ता है। ईश्वर जो अन्तिम परीक्षा लेता है वह सदा कठिनतम होती है। शैतानका अन्तिम प्रलोभन सर्वाधिक मोहक प्रलोभन होता है। यदि हम स्वतन्त्र होना चाहते हैं तो हमें ईश्वरकी अन्तिम परीक्षामें उत्तीर्ण होना पड़ेगा और शैतानके अन्तिम प्रलोभनको अमान्य करना पड़ेगा।

अहिंसा असहयोगका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और अभिन्न अंग है। यदि हम अहिंसक बने रहें तो हम अन्य सब बातोंको छोड़ देनेपर भी अपना स्वतन्त्रता संग्राम चलाते रह सकते हैं। परन्तु यदि हम अहिंसापर कायम नहीं रहेंगे तो हम बुरी तरह हारेंगे। हमें यह याद रखना चाहिए कि हिंसा तो वह आधारशिला है जिसपर सत्ताकी इमारत टिकी है। चूँकि हिंसा सरकारका अन्तिम सहारा है, और उसका अन्तिम आश्रय है, इसलिए उसने लोगोंके सभी प्रकारके हिंसात्मक प्रयत्नोंको व्यर्थ करनेकी तैयारी कर ली है और इस प्रकार यदि हम हिंसा करें तो उसने अपने-आपको उससे पूर्ण सुरक्षित रखनेका प्रबन्ध कर लिया है। इसलिए हिंसाका आश्रय लेना अत्यन्त सक्रिय रूपसे सरकारके साथ सहयोग करना है। यदि हमने किसी भी प्रकारकी हिंसा की तो वह हमारी मूर्खता और दुर्बलताभरी नाराजीकी निशानी होगी। गम्भीरतम उत्ते-जनाके बीच भी संयम बनाये रखना योद्धापनकी सबसे सच्ची निशानी है। युद्ध-कलामें सर्वथा नौसिखुआ मनुष्य भी यह जानता है कि उसे उन स्थानोंसे बचना चाहिए जहाँ शत्रु घात लगाये हों। क्योंकि खरे सैनिककी तो यह कसौटी ही है कि वह हर तरहकी उत्तेजनासे अपनेको बचाये रखनेकी सावधानी बरते।

अलीगढ़की घटना इस बातका उदाहरण है। यह बात बहुत साफ दिखाई देती है कि वहाँ पुलिसने लोगोंको उत्तेजनाका काफी कारण दिया था। हम यह बात बहुत पहले ही जान चुके हैं कि ऐसा करना उसका काम है। अलीगढके लोग अपने लिए बिछाये गये जालमें फँसकर उत्तेजित हो गये और उन्होंने आगजनी की। अभीतक यह ठीक-ठीक मालूम नहीं हुआ है कि बिना वर्दीके सिपाहीको मारा किसने। यह साबित करनेकी जिम्मेदारी लोगोंकी है कि यह काम उन्होंने नहीं किया है।

हमें अपने प्रति कठोर होना चाहिए। यदि हम सीधे और तंग रास्तेसे जाना चाहते हैं (जो अवश्य ही सबसे छोटा रास्ता है), तो हमें अपने प्रति दयालु नहीं होना चाहिए। हम किसी भी दुर्घटनाका दोष बदमाशोंपर नहीं डाल सकते। उनके कामोंके लिए हमें जिम्मेदार होना चाहिए। यदि यह असम्भव हो तो हमें कह देना चाहिए कि हम स्वराज्यके अयोग्य हैं। हमें उनपर भी नियन्त्रण रख सकना चाहिए

और उनको भी अनुभव करना चाहिए कि जिस राष्ट्रीय और धार्मिक कार्यमें हम लोग लगे है उसमें उनका हस्तक्षेप न करना आवश्यक है। शुद्धीकरणके आन्दोलनमें पूरा देश ही ऊपर उठता है और उसमें दुष्ट और पतित लोग भी आ जाते हैं। यह हमारा समझ-बूझकर किया गया दावा है, इसके सम्बन्धमें किसीको कोई भ्रम नही रहना चाहिए। यदि हमारा यह दावा सिर्फ जबानी दावा ही हो तो हम जिस तन्त्रको शैतानी तन्त्र कहकर बुरा बताते हैं उससे भी अधिक शैतानी तन्त्रकी स्थापना करनेके दोषी सिद्ध होंगे।

इसलिए जब हम अहिंसात्मक असहयोगके मार्गपर चल रहे हैं तो हम नैतिक दृष्टिसे कर्त्तव्यबद्ध हो जाते है कि हम उसपर मन, वचन और कर्मसे आचरण करें। यदि हम इतने कमजोर या संदेहशील हैं कि अपने सिद्धान्तपर नहीं चल सकते तो हमें यह बात साफ-साफ स्वीकार कर लेनी चाहिए।

पाठकोंको इससे यह विचार न बना लेना चाहिए कि मुझे लगता है हम परीक्षामें खरे नही उतर रहे है। इसके विपरीत मेरा यह विश्वास है कि हमने लोगोंपर अपूर्व नियन्त्रण प्राप्त कर लिया है, और उन्होंने अहिसाकी आवश्यकता इतनी पहले कभी नहीं समझी थी जितनी अब समझ ली है।

परन्तु जिस रास्तेको हमने सोच-समझकर चुना है उससे जरा-सा भी हटनेसे हमें जो उचित चेतावनी मिलती है उसको न समझना हमारे लिए अनुचित होगा।

मुझे सावधानीके तौरपर कुछ कहना भी आवश्यक मालूम होता है, क्योंकि सरकारकी ओरसे दी जानेवाली उत्तेजना बढती जा रही है। ऐसा संयुक्त प्रान्तमें सबसे अधिक हो रहा है। श्री शेरवानीका सबेरे पाँच बजे गिरफ्तार किया जाना, उनपर शीघ्रतासे मुकदमा चलाया जाना, उनका अपराधी ठहराया जाना, उनको सजाका दिया जाना और उसी दिन वहाँसे अन्यत्र ले जाया जाना — ये सब बातें अन्यन्त विचारशील मनुष्यको भी चिढ़ा देनेके लिए काफी है। मुकदमेके ब्यौरेसे यह पता लगता है कि न्यायाधीशको कानूनका ज्ञान नहीं था और उनको इसकी अधिक परवाह भी नही थी। यदि उनके सामने सिर्फ वे ही सबूत थे जो समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हुए हैं तो वे सजा देनेके लिए काफी नहीं थे। यह मालूम होता है कि उनको अपराधी ठहराने और दण्ड देनेके बारेमें सब बातें पहले ही तय कर ली गई थीं। इस मामलेमें गवाही लेनेकी कार्रवाई एक बहुत बड़ा झूठ-मूठका दिखावा थी। हमारे यहाँ सर्वसाधारण कानूनके अधीन मुकदमोंके नाटककी तालीम चल रही है। प्रशासनके आदेश और अदालती अभियोगमें अन्तर ही कहाँ है? अदालती अभियोग तो और भी घातक होता है क्योंकि उसकी आलोचना करना अधिक कठिन होता है। 'मुकदमा झूठा दिखावा था', कहनेकी अपेक्षा 'मुकदमा चलाया ही नहीं गया', यह कहनेमें अन्यायकी अधिक प्रतीति होती है। दमनकारी कानून रद किये जा सकते हैं; परन्तु इससे यह निष्कर्ष तो नहीं निकलता कि दमन समाप्त हो जायेगा। स्वरूप बदल जानेपर भी वस्तु तो वही रहेगी। हम चाहते है कि वस्तु, आत्मा अथवा हृदय बदल जाये।

और यदि हम ऐसा परिवर्तन चाहते हैं तो हमें पहले अपने आपमें परिवर्तन करना चाहिए, अर्थात् हमारे ऊपर दमनका कोई प्रभाव नही पड़ना चाहिए। जिस

प्रकार हम हिंसात्मक प्रतिकार नहीं कर सकते, उसी प्रकार हम दमन किये जानेपर कमजोर न हों, भले ही वह दमन कितना ही कठोर या कष्टकर क्यों न हो।

संयुक्त प्रान्तकी एक विश्वसनीय अफवाह है कि तीन या चार प्रसिद्ध कार्य-कर्त्ताओंने जेल-जीवनको बहुत अधिक कष्टप्रद पाया, अतः कुछ कामोंको न करनेका वचन दे दिया और जेलसे छूट गये। यदि यह बात सच है तो यह खेदजनक है। हमें चट्टानकी तरह दृढ़ होना चाहिए। हमें पीछे नही हटना चाहिए। भारतकी जेलोंमे हमें जो भी कष्ट उठाने पड़ें हममें उनको खुशीसे सहन करनेकी सामर्थ्य होनी चाहिए। हमें सरकारसे कोई आशा नहीं करनी चाहिए। हमें उससे यही आशा करनी चाहिए कि वह बुरासे-बुरा जितना कर सकती है करेगी, फिर चाहे वह कानूनके अनुसार हो, चाहे उसके खिलाफ। उसका एकमात्र उद्देश्य हमको झुकाना है, क्योंकि वह अपने आपमें सुधार करना नहीं चाहती।

मैं सरकारके बारेमें कठोर मत नहीं दे रहा हूँ। धारवाड़ और अलीगढकी घटनाएँ सरकार द्वारा शिष्टताका उल्लंघन किये जानेकी सबसे ताजी मिसालें हैं। यदि मै विश्वास करूँ तो एक दूसरी अफवाह यह है कि संयुक्त प्रान्तकी एक जेलमें एक बहादुर मुसलमान कैदीको एक अँधेरी कोठरीमें बन्द कर दिया गया और तीन दिन-तक तेज बदबूमें रखा गया। जिस मनुष्यने मुझे सूचना दी उसने मुझसे पूछा कि जो व्यक्ति इस तेज बदबूको सहन न कर सके उसे क्या करना चाहिए। मैंने कठोरतासे किन्तु विचारपूर्वक उत्तर दिया कि फिर भी उसे क्षमा नहीं माँगनी चाहिए, उसे अत्याचारीकी इच्छाके सामने झुक जानेकी अपेक्षा अपना सिर जेलकी दीवारोंसे मारकर फोड़ लेना चाहिए। यह मेरा कोई ऐसा मत नहीं है जिसे मैं व्यर्थ ही प्रकट कर रहा हूँ, बल्कि ये मेरे दक्षिण आफ्रिकाके दिलचस्प छुटपुट अनुभव हैं। दक्षिण आफ्रिकामें जेलका जीवन सुख-सुविधापूर्ण नहीं था। बहुत-से कैदियोंको तनहाईकी सजा भुगतनी पड़ती थी। सैकड़ोंको सफाईका काम करना पड़ता था। अनेक लोगोने उपवास किये। एक स्त्री जब जेलसे छोड़ी गई तब वह हड्डियोंका ढाँचा ही रह गई थी, क्योंकि जो-कुछ भी वह खा सकती थी वह जेलके अधिकारी उसे देते नही थे। परन्तु वह स्वाभिमानिनी और दृढ़ थी। दक्षिण आफ्रिकामें जिन हजारों लोगोंने सजा भोगी, उनमें से शुरूमें एक या दो अपवादोंको छोड़कर मुझे ऐसे एक भी कैदीका उदाहरण याद नहीं आता जिसने जेलसे छूटनेके लिए किसी प्रकारकी कमजोरी दिखाकर माफी माँगी हो। पारसी रुस्तमजी, इमाम अब्दुल कादिर बावजीर, थम्बी नायडू और अन्य बहुतसे लोगोंने जिनके नाम मैं बता सकता हूँ, कभी पीछे पाँव नही हटाया। बल्कि वे बार-बार जेल गये। तपस्वियोंके रक्तदानके बिना स्वतन्त्रताके मन्दिरका निर्माण नहीं हो सकता। अहिंसाकी पद्धति सबसे त्वरित, निश्चित और सर्वोत्तम है। हमें कांग्रेसके और खिलाफतके सम्मेलनोंमें की गई अपनी प्रतिज्ञाके प्रति सच्चे बने रहना चाहिए, और विजय बिलकुल पास है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८–७–१९२१

२२१. टिप्पणी

मऊमें झगड़ा

इन्दौरके पास मऊ एक बड़ी सरकारी छावनी है जहाँ हिन्दू और मुसलमान दोनों ही रहते हैं। कुछ दिन पहले अखबारोंमें इधर-उधर कहीं एक खबर छपी देखी थी कि वहाँ बोहरा और सुन्नी मुसलमानोंमें मारपीट हो गई है। कहा जाता है कि इसमें एक बोहरा मारा गया और कई लोग घायल हो गये। कहा जाता है कि बोहरा भाइयोंने स्वराज्य-कोषमें रुपया देनेसे इनकार किया था, इसी बातको लेकर वहाँ झगड़ा हो गया। कुछ भी हो, बोहरा और सुन्नी मुसलमानोंमें अनबन दिखाई देती है। गोधरामें भी यह बात देखनेमें आई है। रतलाममें भी ऐसी ही घटना हुई है। बोहरा लोग भारत-भरमें कुल मिलाकर केवल तीन लाख हैं। जिनकी संख्या इतनी कम है ऐसे लोगोंको प्रश्रय देना बड़ी जातियोंका धर्म हैं। यदि बोहरा भाई खिलाफत या स्वराज्य आन्दोलनमें भाग न लें तो भी हमें उनको परेशान नहीं करना चाहिए। सम्भव है, कोई छोटी जाति डरके कारण अथवा परिणामका खयाल करके मैदानमें न भी आये। ऐसी स्थितिमें किसी बातके सम्बन्धमें उसपर जोर डालना उचित नहीं माना जा सकता। मुझे यह भी बताया गया है कि मऊमें हिन्दुओंने बोहरोंके विरोधियोंका पक्ष लिया था। मैं अनुभव करता हूँ कि जब एक धर्मके लोगोंमें कोई झगड़ा हो तो दूसरे धर्मके लोगोंको तटस्थ ही रहना चाहिए। उनका कर्त्तव्य है कि वे उन दोनोंको समझाने और उनमें मेल करवानेका उद्योग करें। जैसे हिन्दू-हिन्दूकी लड़ाईमें मुसलमानोंका किसी एक या दूसरे पक्षका साथ देना अनुचित है वैसे ही मुसलमान-मुसलमानके झगड़ेमें हिन्दुओंका पक्ष लेना भी अनुचित है। खिलाफतके हरेक कार्यकर्त्ताका कर्त्तव्य है कि वह जहाँ-कहीं भी झगड़ा होनेका डर हो, वहाँ उसे रोकनेका प्रयत्न करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८–७–१९२१

२२२. तार: हैदराबादके एक असहयोगीको

२९ जुलाई, १९२१

असहयोगी गवाही नहीं दे सकते।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

२२३. अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें बहिष्कारपर बहस

[३० जुलाई, १९२१ के पूर्व][१]

गांधीजी : जूनके महीनेमें जब हमने एक करोड़ रुपया इकट्ठा किया उस समय हममें जो उत्साह और स्फूर्ति थी वह अब कहाँ है? आज हम इस बातको लेकर सशंकित हैं कि कौन जाने हम विदेशी कपड़ेका बहिष्कार कर सकेंगे या नहीं। लेकिन हमारी दुर्बलता ही हमारे इस भयका कारण है। हम शान्तिसे विचार करें तो मालूम होगा कि बहिष्कारके बाद हमारे लिए कुछ और करनेको नही रह जायेगा। मैं जैसे-जैसे विचार करता हूँ वैसे-वैसे मुझे लगता है कि हमें सिपाहियोंको हथियार छोड़ देनेकी तथा करदाताओंको कर न देनेकी सलाह देनेकी भी जरूरत नही रहेगी। हम यदि सम्पूर्ण रूपसे बहिष्कार कर सकें तो थोड़ेसे ही लोगोंको कानूनका सविनय भग करके जेल जानेकी जरूरत होगी और थोड़ेसे लोगोंको ही आत्मत्याग करना होगा। अतएव हमें गमगीन, हताश अथवा पस्त-हिम्मत नही होना चाहिए।

लोगोंने स्वदेशी और बहिष्कारसे सम्बन्धित कुछ-एक प्रश्न मुझसे पूछे हैं। मै अब उनका उत्तर दूंगा।

प्रश्न: हम अगर आजसे नये विदेशी कपड़े न लेनेका व्रत लें और हमारे पास जो विदेशी कपड़े है उन्हें पहनकर फाड़ डालें तो इसमें क्या बुराई है?

उत्तर: मेरी समझमें नही आता कि जिस वस्तुको हमने एक बार कलुषित मान लिया हम उसे अपने पास सँजोकर कैसे रख सकते हैं? विदेशी कपड़ा पहनना अगर हमारे लिए अधर्म है तो फिर हम क्षण-भरके लिए भी कैसे उसे अपने पास रख सकते हैं? किसीके घरमें प्रवेश करके अगर मै जबरदस्ती उसका चूल्हा तोड़ डालूँ तो यह घोर पाप माना जायेगा। विदेशी कपड़ेके व्यापारने हमारे गरीब-वर्गका चूल्हा तोड़ डाला है, हमारे उद्योगको प्राय: समाप्त कर दिया है और अनेक लोगोंको भुखमरीकी स्थिति-में डाल दिया है। इस व्यापारके मोहमें हमने स्वयं अपने पेटपर लात मारी है; यह भी घोर पाप हुआ है। यदि कोई हमारे पाँवकी बेड़ियोंको तोड़ डाले तो क्या उसके टुकडोंको हम सँभालकर रखेंगे? मैं जानता हूँ कि जैसे दीर्घ कालतक पहनी गई बेड़ियोंसे गुलामको मोह हो जाता है उसी तरह हमारे मनमें भी विदेशी कपड़ेके प्रति मोह पैदा हो गया है और इसीसे हमारे मनमें ऐसे प्रश्न उठते हैं।

हम स्वयं भले ही अपने विदेशी कपड़ोंका त्याग कर दें; किन्तु हम वे कपड़े अपने देशके गरीबोंको और अर्ध-नग्नावस्थामें घूमनेवाले बहनों और भाइयोंको क्यों न दे दें? उन्हें कपड़े देकर उनकी आत्माको क्यों न शीतल करें? हम ये कपड़े विदेशों-में — हिन्दसे बाहर — किसलिए भेजें?

१. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक २८ से ३० जुलाईतक बम्बईमें हुई थी।

हमारे घरमें अगर किसीने गोमांस फेंक दिया हो तो हम उसे निकाल फेकेंगे अथवा उसे किसी गरीबको दे देंगे? सम्भव है वह किसी गरीबके कामका हो; लेकिन जिस वस्तुको इस्तेमाल करनेमे हम पाप मानते है वह दूसरोको कैसे दें? हम अपना सड़ा-गला भोजन किसी अन्यको खानेके लिए देंगे अथवा उसे नष्ट कर डालेंगे? समाज-की स्थिति आज इतनी विषम है कि कुछ लोग सड़े हुए भोजनसे भी पेट भरनेके लिए तैयार हैं। लेकिन उन्हें सड़ा हुआ भोजन देनेमें हमारी सज्जनता अथवा कुलीनता निहित नही है, इतना तो आप कबूल करेंगे ही। हमने निश्चय किया है कि हम पहली अगस्तको खादी नहीं तो कमसे-कम स्वदेशी कपड़ा पहनकर चौपाटीपर इकट्ठे होंगे। हमारी इच्छा है कि एक भी व्यक्ति खादी अथवा स्वदेशी वस्त्र पहने बिना चौपाटी-पर न आये। क्या आप यह चाहते हैं कि गरीब वहाँ न आये? आपके उतारे हुए विदेशी वस्त्र पहनकर वे सभामे कैसे आ सकते है? हम बड़े जबरदस्त अन्नदानी हैं लेकिन अपनी दयामे हम विवेक खो बैठते हैं। हमारी उतारन गरीबोका शृंगार क्यों होनी चाहिए? गरीबोंको दान दिया ही क्यो जाये? हम गरीबको स्वावलम्बी बनायें यही हमारा दान हो सकता है। हमारा आन्दोलन ही गरीबोको अपने जैसा बनानेका है। अपने जैसेका अर्थ गरीबोंको धनवान बनाना नही परन्तु यह है कि वे नंगे-भूखे न रहें। हमें जैसे श्वासोच्छ्वास लेनेका हक है वैसे ही पापीसे-पापी व्यक्तिको भी यह अधिकार है। ऐसा किसी भी शास्त्रमें नहीं लिखा कि उन्हें खाने-पीने अथवा पहनने-ओढ़नेका हक नहीं है। भीख माँगनेका अधिकार किसे है? जो व्यक्ति साधु है, जिसने हमें ज्ञानका दान दिया है और देता है उसके अतिरिक्त किसी दूसरेको भिक्षा माँगनेका अधिकार नहीं है। हम भिक्षा देकर भूल करते हैं, पाप करते है। हमारे अनेक सदा-व्रत आलस्य और पापकी निशानी है, ऐसी मेरी मान्यता है। हिन्दुस्तानमें ऐसी स्थिति होनी चाहिए कि किसी भी व्यक्तिको हाथ पसारनेकी जरूरत ही न रहे। हमें अगर गरीबोंको स्वावलम्बी बनाना है तो उन्हें उद्यम सिखाना ही पड़ेगा। मेरे पास आज ही एक अंग्रेज इस विषयपर बातचीत करनेके लिए आया था। उसे मै समझा रहा था कि क्या तुम किसी गरीबको अपना हैट या अपना सूट देना उचित समझोगे? इस समय आप जितने लोग यहाँ उपस्थित है आपके सिरोंपर मुझे ऐसी पगड़ी अथवा टोपी दिखाई नहीं देती जिसका गरीबके लिए कुछ उपयोग हो। बहनोंकी रंग-बिरंगी साड़ियों-का गरीब क्या करेंगे? उन्हें वे पहनेंगे ही नही। अगर हमने सोच-विचार किया होता तो हमारा पहरावा गरीबोंके पहरावेसे कुछ मिलता-जुलता होता। काठियावाड़की अहीरिनोंको मैं जानता हूँ। वे आपकी दी हुई साड़ियोंको फेक ही देंगी। क्या किसी भी गरीब स्त्रीको आपकी रेशमी साड़ीकी जरूरत है? क्या अकाल-ग्रस्त लोगोंको हम रेशमी साड़ियाँ भेजेंगे? क्या उनमे हम बुद्धिभेद उत्पन्न करेंगे? गीतामें बुद्धिभेद करनेकी मनाही की गई है। हम अपनी त्यक्त वस्तुएँ अगर गरीबोंको देंगे तो उससे उनकी आत्मा शीतल होगी; ऐसा आप क्यों मानते हैं? जब वे यह समझ जायेंगे कि हमने उन्हें वे वस्तुएँ दी हैं जिन्हें काममें लाना हम पाप मानते है तो वे हमें बद्दुआ देंगे? अगर आपको अकाल-पीड़ितोंसे सहानुभूति है तो आप उन्हें उन्हीं वस्तुओंमें से दें जो

आपके अपने इस्तेमालके लिए है। आप जो खादी पहनने जा रहे है उसमें से थोड़ी खादी आप गरीबोंको क्यों नहीं दे देते? पुण्य कोई सहल वस्तु नही है।

अपने पास पड़े विदेशी कपड़ेको हम विदेशोंको भेज सकते हैं, फिर उनकी होली किसलिए करें? इस कपड़ेको तैयार करनेमें मानव-जातिने जो श्रम किया है उसे नाहक ही पानीमें क्यों फेंकें?

मै तो विदेशके प्रति भी सभ्य व्यवहार करनेवाला व्यक्ति हूँ। हम क्यों न मिलका कपड़ा खरीदकर उन लोगोंको भेजें? मै इतना तो मानता हूँ कि इस कपड़ेको यहाँ [गरीब लोगोंको] दे देनेमें जितना दोष है उतना स्मरना भेजनेमें नही है। कुछ-एक वस्तुएँ अमुक स्थानपर ही पापमय होती हैं, सदा और सब स्थानोंपर पापमय नहीं होतीं। विदेशी कपड़ेपर भी यही बात लागू होती है। यूरोपके देशोंके लिए अथवा जो देश अधिकतर विदेशी कपड़ेपर निर्भर करते हैं और जहाँ कपास पैदा ही नहीं होती उनके लिए विदेशी कपड़ा पापमय नही होता। यूरोपमें बने किन्तु हमारे देशमें आये हुए कपड़ेको हम वापस यूरोप भेज सकते हैं। इस सम्बन्धमें मुसलमान भाइयोंसे मेरा बहस करना उपयोगी नहीं हो सकता इसलिए मै झुक गया और मैंने विदेशी कपड़ेके स्मरना भेजे जानेकी छूट दे दी, लेकिन हमारा प्रथम कर्त्तव्य तो उसकी होली करना ही है।

अब प्रश्न यह है कि जिस वस्तुपर मनुष्य जातिने परिश्रम किया है उसको कैसे नष्ट किया जा सकता है? लेकिन जगत्मे ऐसी कौन-सी वस्तु है जिसपर परिश्रम किया गया हो और फिर जिसका नाश न हुआ हो? मेरी पगड़ी सुन्दर बँधी हुई है—और मेरे भाई तो पगड़ी बाँधनेका धन्धा करते हैं—लेकिन अगर मेरी पगड़ीमें प्लेगके कीटाणु भर जायें तो चूँकि यह पगड़ी मेरे भाईने बाँधी है इसलिए क्या मुझे उसको नष्ट नहीं करना चाहिए? मेरा फर्ज तो उसे नष्ट करना ही है। मनुष्य-देहको हम संसार-सागरको पार करनेकी नौका मानते हैं। ईश्वरने ऐसी महत्त्वपूर्ण वस्तुओंके नाशकी भी व्यवस्था की है। वह तो अनेक वस्तुओंका नाश करता है। क्या हम उसकी अपेक्षा अधिक समझदार हैं? अपनी गढ़ी हुई वस्तुओंको नष्ट करनेका हमें अधिकार है।

जिन कपड़ोंको हमने स्वदेशी समझ लिया है और जिनके बारेमें हमें यह समझाया गया है कि वे स्वदेशी हैं, उनका त्याग करनेकी हमसे किसलिए अपेक्षा की जाती है? स्वदेशीका अर्थ आजतक एक ही था, अब दूसरा अर्थ किया जाता है, और थोड़े समय बाद क्या कुछ और ही अर्थ नहीं किया जायेगा? तो क्या हर बार हमें अपने वस्त्र निकालकर देते रहना चाहिए?

हमें अगर कोई चिरायता समझकर संखिया देगा तो क्या हम उसे खा लेंगे? यह प्रश्न पूछने योग्य ही नहीं है। मुझे अगर कोई पारा चढ़ा हुआ पैसा देता है और उसे अगर मैं अठन्नीके रूपमें बाजारमें चलाने जाता हूँ तो क्या पुलिस मुझे नहीं पकड़ेगी? जो वस्तु हमें खोटी लगे उसको हमें उसी क्षण त्याग देना चाहिए। वैसे मैंने १९१९ में स्वदेशीकी जो व्याख्या की थी उसकी वही व्याख्या आज भी है। जिस दिन मैंने यह

व्याख्या की थी उस दिन मेरे तनपर खद्दर भी नहीं था। जिसका कोई अस्तित्व ही न था उसे मैं हिन्दुस्तानके आगे किस तरह पेश कर सकता था? आज तो सूत और खादीका ढेर लगा है। और अब तो हमें सिर्फ आत्मविश्वासकी जरूरत है। स्वदेशीकी व्याख्याका रूपान्तर तो हमने अपनी सुविधानुसार किया है। मनुष्य हर तरहकी गुलामीसे छूट सकता है लेकिन उसे अपने साथियोंका गुलाम तो बनना ही पड़ता है। मुझे भी उस समय भाई उमर सोबानी और भाई शंकरलाल बैंकरके कथनको मान्यता प्रदान करनी पड़ी और मैंने उनकी खातिर एक नये व्रतकी[1] सृष्टि की जिसके अनुसार यहाँकी रुईसे यहाँकी मिलमें कते सूतके बुने हुए कपड़ेका प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन बात इतनेपर ही रुकी नहीं। बहन रामीबाई कामदारको इसमें भी मुश्किल दिखाई दी, इसलिए मैंने फिर तीसरे व्रतकी रचना की। लेकिन खरी स्वदेशी तो एक ही है। मैं आज सबसे यही व्रत लेनेके लिए कह रहा हूँ।

कपड़ोंकी होली जलानेसे क्या अहिंसा-व्रत भंग नहीं होता?

मैल धोनेमें हिंसा नहीं होती। जिससे आत्माका पतन होता है वह पाप है। कुछ-एक मामलोंमें हिंसा अनिवार्य है। शास्त्रोंका कहना है कि श्वासोच्छ्वासमें हिंसा है। इसके अतिरिक्त वनस्पतिमें भी प्राण हैं और हम वनस्पति खाते हैं; लेकिन उसे खानेमें हिंसा है, ऐसा हम नहीं मानते। सूक्ष्मदर्शक यन्त्रसे देखें तो पता चलेगा कि पानीमें भी कीटाणु भरे हुए होते हैं। दूधमें भी कीटाणु बिलबिलाते हुए दिखाई देते हैं, तिसपर भी हम पानी पीनेमें दोष नहीं देखते और दूध तो बहुत पुष्टिकारक खुराक मानी गई है। मैं इस समय आपके सम्मुख जो बोल रहा हूँ उसमें भी कुछ हदतक हिंसा निहित है। लेकिन ऐसी हिंसा अनिवार्य है और उसमें हम पाप नहीं मानते। जहाँ एक कौरसे निबाह हो सके वहाँ अगर हम दो खाते हैं तो वह पाप है। 'गीता' में कहा गया है, अगर हम अल्पाहारी नहीं बनते तो हम चोर हैं। तिसपर भी हम भारी भोज देते हैं; पग-पगपर 'गीता' के वचनोंको भंग करते हैं। अतएव ऐसा प्रश्न कैसे पूछा जा सकता है?

अश्रद्धा होते हुए भी लज्जा, भय आदि कारणोंसे कोई अपने विदेशी कपड़ोंमें से थोड़े-बहुत कपड़े निकालकर दे दे और बादमें वैसे ही विदेशी कपड़े खरीद ले तो उससे देशको लाभके बदले हानि ही होगी। इसलिए विदेशी कपड़े क्यों इकट्ठे किये जायें? विदेशी कपड़ोंमें निहित गुलामीके बारेमें लोगोंको बताकर 'यथेच्छसि तथा कुरु' क्यों न कहें?

हम किसीपर अश्रद्धा अथवा अविश्वास कैसे रख सकते हैं? हम दूसरोंको पाखण्डी क्यों मानें? हम यह कैसे मानें कि किसीने अपने मनमें मैल रखकर हमें कपड़े दिये हैं? तथापि व्यक्ति किसी भी वृत्तिसे सत्कार्य क्यों न करे, उससे लाभ ही होता है। अगर कोई व्यक्ति डरके मारे सच बोलता है तो उतनेसे भी उसके झूठ बोलनेपर जगत्‌की जो हानि होती वह न होगी। अशुभ भावसे यदि कोई व्यक्ति अच्छा कार्य करेगा तो इससे स्वयं उसीकी हानि होगी, उसे उस कार्यका पुण्यफल

१. देखिए खण्ड १५, पृष्ठ २०२-४।

नहीं मिलेगा; लेकिन जगत्‌को उसके कार्यमें निहित अच्छाईका लाभ अवश्य मिलेगा। भयवश विदेशी कपड़ा देनेवाले और स्वदेशी पहननेवाले को स्वदेशी-व्रत पालन करनेका पुण्यफल भले ही न मिले लेकिन उसके स्वदेशी पहननेसे देशके कारीगरको रोजी मिलेगी और उसके कार्यसे इतना हित तो होगा ही। लेकिन हमें तो यही मानना चाहिए कि हर किसीने जो-कुछ दिया है सो शुद्ध निष्ठासे दिया है।

'यथेच्छसि तथा कुरु'[1] इस वाक्यका प्रयोग भी भूलसे भरा हुआ जान पड़ता है। श्रीकृष्णने यह वाक्य कब कहा? अर्जुनको पूरी तरह अपने वशमें कर लेनेके बाद ही। उन्होंने अर्जुनको उसके कर्त्तव्यके बारेमें बताया, खूब अनुनय-विनय की और अन्तमें कहा कि "जो तेरी इच्छा हो सो कर"। हमें भी लोगोंको समझाना चाहिए, उनके आत्म-सम्मानकी भावनाको जगाना चाहिए और अगर तब भी वे न मानें तो हम उनसे कहें कि आपकी जो इच्छा हो सो करें।

हमें किसीको मारनेकी इच्छा नहीं करनी चाहिए। बल्कि खुद मरनेके लिए तैयार होना चाहिए। हम इसके लिए भी तैयार नहीं तो कमसे-कम हमें विदेशी कपड़े-का बहिष्कार तो करना ही चाहिए। कुछ किये बिना शान्त बैठे रहनेमें धर्म नहीं है। मैं अगस्तकी पहली तारीखतक ऐसी सभाओंमें जाऊँगा। लेकिन बादमें तो जाना भी बन्द कर दूँगा। ३१ अगस्ततक मैं स्वदेशीकी बात करूँगा और बादमें वह भी छोड़ दूँगा। मैं तो व्यावहारिक बनिया हूँ। जबतक मुझे यह लगेगा कि इन तिलोंमें तेल है तबतक मैं उन्हें पेरूँगा, लेकिन बादमें उन्हें छोड़ दूँगा। मुझे और बहुत-सा दूसरा व्यापार करना है।

प्रतिदिन ८–१० आने कमानेवाले लोग किस तरह विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करेंगे, १०० से १५० रुपये वेतन पानेवाले विदेशी कपड़े निकाल बाहर कर नये स्वदेशी अथवा खादीके वस्त्र कैसे बनवा सकते हैं? वे क्या कर्ज लें? क्या भिक्षा माँगे? अथवा अबसे विदेशी कपड़ा न लेनेका व्रत लेकर सन्तोष मानें?

ऐसे गरीब व्यक्ति भी विदेशी कपड़े रूपी मैलको निकालेंगे ही, बादमें भले खादीकी भीख माँगें, मित्रोंसे उधार माँगें अथवा मजूरी करें; और इस बीच लंगोटी-भर कपड़ेसे निर्वाह करें। दृढ़ संकल्प हमें अनेक कठिनाइयोंसे उबार लेगा। संकल्प एक तरहकी ईश्वर-प्रार्थना है और यह अवश्य फलीभूत होता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ११–९–१९२१

१. **भगवद्गीता**, १८–६३।

२२४. भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

३० जुलाई, १९२१

श्री गांधीने कहा कि ३० जूनको भारतीयोंने अपने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा किया है और उन्हें इसका गर्व होना चाहिए, क्योंकि उन्होंने समझ लिया है कि वे किसी कामको सरकारी मदद या संरक्षणके बिना कर सकते हैं। धनाभावके सम्बन्धमें हमारा भय अब दूर हो गया है और अब भी मुझे बिना माँगे ही पारसी, मुसलमान और हिन्दू मित्र तिलक स्वराज्य-कोषके लिए धन भेजते जा रहे हैं। इससे जाहिर होता है कि भारतीय अपनी मातृभूमिके प्रति अपना कर्त्तव्य पहचान रहे हैं। मुझे विश्वास है कि यदि इकट्ठा किया गया यह धन ठीकसे खर्च किया जायेगा तो एक करोड़ रुपया तो क्या चार करोड़ भी इकट्ठा हो जायेगा। परन्तु मैं साल पूरा होनेसे पहले ही स्वराज्य चाहता हूँ। इसका अर्थ यह हुआ कि हमें और रुपया इकट्ठा नहीं करना होगा। परन्तु मनुष्यकी चेती कब होती है? होती तो ईश्वरकी चेती ही है। इसलिए सम्भव है मेरी इच्छाएँ पूरी न हों। यदि सभी भारतीय — पुरुष और स्त्री — अपने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करें तो सफलता मिले बिना नहीं रह सकती। अब अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने निर्णय किया है कि हमें अपनी शक्ति अधिकसे-अधिक खादी तैयार करनेमें लगानी चाहिए। स्वदेशीके बिना हमें स्वराज्य नहीं मिल सकता। जो कपड़ा इस देशमें तैयार किया जाता है उसे पहनना भारतीय पसन्द नहीं करते। वे तो सिर्फ वही कपड़ा पसन्द करते हैं जो इंग्लैंड, फ्रांस या जापानसे आता है। क्योंकि उनका खयाल है कि देशमें बना कपड़ा इतना सुन्दर और कलात्मक नहीं होता जितना कि उसे होना चाहिए। यदि वे ऐसा सोच सकते हैं तो स्वराज्य कैसे प्राप्त कर सकते हैं? अन्न और वस्त्र भारतके दो फेफड़े हैं और यदि वे रोगी हुए तो देश अधिक दिनतक जिन्दा नहीं रहेगा। इस देशमें कितने ही करोड़ लोग किसी भी दिन भरपेट भोजन नहीं पाते। यदि आप उनके बारेमें सोचें तो आपको मालूम हो जायेगा कि भूखों मरते उन भारतीयोंके लिए अन्न मुहैया करना आपका कर्त्तव्य है। यदि आप इस देशका इतिहास पढ़ें तो आपको विदित होगा कि जबसे भारतने कातना-बुनना छोड़कर विदेशी कपड़ा अपनाया तबसे भारत गरीबी भोग रहा है। और जबतक आप लोग इन बातोंका हल नहीं निकालेंगे तबतक आपके कष्ट बने रहेंगे। अगर करोड़पती पारसी लोग अपनी सारीकी-सारी दौलत इस देशके निर्धन व्यक्तियोंको दे डालें तो भी उनका संकट दूर न होगा। क्या हमें इन करोड़ों

१. गांधीजीने यह भाषण एक्सेल्सियर थियेटरमें पारसी राजकीय सभाके तत्त्वावधानमें आयोजित पारसियोंकी एक भारी सभामें दिया था।

लोगोंको सदावर्तके सहारे रखना है? या वे उन्हें स्वावलम्बी बनाना चाहते है? इन लोगोंको तो अपने ही प्रयाससे, अपने ही उद्योगसे अपनी जीविका कमानी चाहिए और अपने लिए वस्त्र प्राप्त करना चाहिए। उन्हें अपनी जरूरतें पूरी करनेके लिए दूसरोंके आश्रित रहना कदापि नहीं सिखाना चाहिए। इस देशमे गरीबोंको काम देनेका एक ही मार्ग है और वह है भारतीयोंका खद्दर पहनने लगना। कुछ लोग शायद मुझसे यह प्रश्न करें कि ये सब गरीब लोग अहमदाबाद और बम्बई-जैसे शहरोंमें जहाँ मजदूरोंकी इतनी कमी है क्यों नहीं आ जाते। मै नहीं समझता कि भारतके गरीब अपने घर छोड़कर मिलोंमें काम करनेके लिए शहरोंमे जा बसेंगे। मान लीजिए कि वे ऐसा करते भी है तो परिणाम क्या होगा? उस हालतमें भारतको भूखे रहना होगा, क्योंकि तब हल कौन चलायेगा और आपके लिए गेहूँ तथा अन्य खाद्यान्न कौन पैदा करेगा। तब भारत एक जंगल जैसा हो जायेगा और जनता भूखों मरने लगेगी। इसलिए सारी आबादीका शहरोंमें बसना सम्भव नहीं है। जबतक इस देशमें एक भी व्यक्तिको भूखा रहना पड़ता है तबतक भारतीयोंका कर्त्तव्य है कि मितव्ययितासे काम लें और व्यर्थका ऐश-आराम त्याग दे। इसीलिए मैं अपने मित्रोंसे कहा करता हूँ कि वे चाहे जैसे भी सुधार प्राप्त कर लें, कौंसिलोंमें चाहे जैसे भी प्रस्ताव क्यों न पास करा लें जबतक वे इस देशसे गरीबी नहीं दूर कर सकते तबतक उनके सारे प्रयत्न व्यर्थ जायेंगे। मैं अपने पारसी मित्रोंसे अपील करूँगा कि वे भारतकी सच्ची स्थितिका ज्ञान प्राप्त करके उस रोगको पहचाने जिससे देश पीड़ित है और तब स्वदेशी अपनाकर उसे दूर करनेका प्रयत्न करें। पारसी सारे देशको दिखा दें कि वे चाहे जितने ऐशोआराममें क्यों न डूबे हों, कीमती चीजों और कपड़ोंको इस्तेमाल करना वे चाहे जितना क्यों न पसन्द करते हों, किन्तु एक बार इस देशकी गम्भीर स्थितिको पहचान लेनेके पश्चात् वे मातृभूमिके प्रति अपना कर्त्तव्य निभानेको तैयार है। वे केवल अन्य जातियोंके साथ कतारमें खड़े न होकर अन्य पिछड़ी जातियोंको स्वराज्यके लक्ष्यकी ओर ले जानेमे अगुआ होंगे। कमसे-कम मुझे तो इस बातका पूरा विश्वास है कि जो जाति देशके अनेक मामलोंमें अगुआ रही है वह इस बार भी देशमें अग्रणी बनेगी और पीछे नहीं रहेगी। सभी विभिन्न जातियोंको साथ लेकर चले बिना देश आगे नहीं बढ़ सकता और भारत एक भी जातिको पीछे नहीं छोड़ सकता। पारसी लोग जो अनेकों मामलोंमें प्रमुख हिस्सा लेते रहे हैं, इस मामलेमें भी लेंगे, इसके बारेमें मुझे जरा भी सन्देह नहीं है। पारसियोंको यह नहीं कहना चाहिए कि चूँकि उनके पास अभी ३० सितम्बरतक दो महीनेका समय है इसलिए वे इस बीच कुछ न त्यागकर अन्तिम दिन ही सब चीजें त्यागेंगे। आगामी सोमवारको[१] पारसी समाजकी परीक्षा होने जा रही है और मैं जानता हूँ कि वे खरे उतरेंगे, क्योंकि मैं अपने पारसी दोस्तों-

१. इस दिन, पहली अगस्तको बहिष्कार आन्दोलन प्रारम्भ होना था।

को अच्छी तरह जानता हूँ। मैं जिस समाजके साथ इतने वर्ष रह चुका हूँ उसे कैसे नहीं जानूँगा? जिन स्त्री-पुरुषोंने तिलक स्वराज्य-कोषके लिए इतना धन दिया है, जिन महिलाओंने अपने जेवर त्याग दिये हैं, उन्हें अब पहली अगस्तको अपने कर्त्तव्यमें नहीं चूकना चाहिए। इस तारीखसे उन सबको अपने विदेशी वस्त्र छोड़ देने चाहिए। जिसे पहनना वे पाप समझते हैं उसे एक क्षण भी अपने पास नहीं रखना चाहिए। उन्हें यह अवश्य जान लेना चाहिए कि इन विदेशी वस्त्रोंको पहनकर वे अपने करोड़ों देशभाइयोंको भूखा रख रहे हैं। वे विदेशी वस्त्र नष्ट कर दिये जाने चाहिए और अपने पास कतई नहीं रखने चाहिए, क्योंकि वे पापसे रँगे हुए हैं। उनकी दृष्टिमें जिसे पहनना पापपूर्ण है वह गरीबोंके लिए भी पहनना पापपूर्ण है और इस-लिए मैं उनके कपड़ोंको गरीबोंको दे दिये जानेके पक्षमें नहीं हूँ। परन्तु यदि वे चाहें तो उन कपड़ोंको भारतसे बाहर स्मरना भेजा जा सकता है।

मैं आप लोगोंसे खादी पहननेको कहता हूँ; गरीब लोगोंको मिलोंका बना कपड़ा पहनने दीजिए। जो-कुछ हाथका बना है वह अधिक कलात्मक, अधिक सुन्दर और कुल मिलाकर मशीनकी बनी चीजसे बेहतर है। मशीनपर जो-कुछ बनाया जाता है वह गरीबोंके लिए है। अमीर लोगोंको अपना सूत स्वयं कातना और उसे अपने बुनकरोंके पास भेजना चाहिए, ताकि वे उनकी पसन्दका कपड़ा तैयार कर दें। पहले, जब विदेशी कपड़ा पहनना शुरू नहीं हुआ था, ऐसा ही होता था। हम देशमें प्रचलित सभी प्रकारकी कलात्मक कारीगरीको भूल गये हैं और मिलोंमें तैयार की गई विदेशी चीजोंका प्रयोग करने लगे हैं, केवल इसलिए कि वे फ्रांस या इंग्लैंडसे आती हैं। क्या आप अपनेमें किसी प्रकारकी मौलिकता नहीं ला सकते? हर चीजके लिए विदेशोंका मुँह ताकना क्या अच्छी बात है? क्या आप लोग अपनी सब कारीगरी भूल बैठे हैं और अपनी जरूरतोंको पूरा करनेके लिए विदेशोंके मुहताज बन गये हैं? मैं उनसे अपील करता हूँ कि अपनी विदेशी चीजें त्याग दें और अपने देशके लिए कुछ त्याग करें। जो-कुछ आप करेंगे वह वास्तवमें आपका त्याग कहा जायेगा, आप तो केवल देशसेवा कर रहे हैं। मुझे खुशी है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सभी सदस्य जिनकी संख्या लगभग ३०० है, शुद्ध श्वेत खादी पहनकर बम्बई आये हैं। मुझे अक्सर याद आ जाया करता है कि इसके बारेमें श्री पिक्थॉलने क्या कहा था। उन्होंने कहा था कि यदि आप अपनेको किसी नये रंगमें रँगना चाहते हैं तो पहले आपको अपनी सारी गन्दगी धोकर उजले बनना होगा — आपको कोई अन्य रंगीन कपड़ा अपनानेसे पहले शुद्ध सफेद खादी धारण करनी चाहिए। खादीमें पवित्रता है, शुद्धता है और सौन्दर्य है और उसे पहननेवालों को कोई असुविधा भी नहीं होती। वह हमारी भारतीय राष्ट्रीयताका ध्वज है और अब उसे अवश्य पहनने लगना चाहिए। इसके बाद गांधीजीने लोगोंसे कहा कि आप लोगोंके बीच जो शपथ प्रचारित की गई है, उसपर खूब सोच-विचार कीजिए और उसपर अपने हस्ताक्षर कीजिए। ऐसा खूब अच्छी तरह विचार

करनेके बाद ही कीजियेगा। क्योंकि मै आप लोगोंको लज्जित करके आपसे हस्ताक्षर कराना नहीं चाहता। यह पूर्णतः ऐच्छिक हो; इसमें किसी तरहका भी दबाव नहीं होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१–७–१९२१

२२५. टिप्पणियाँ

श्वेत वस्त्र-सज्जित हिन्दुस्तान

तिलक जयन्तीके दिन 'क्रॉनिकल' के सम्पादक श्री पिक्थॉल[1] खादीकी पोशाक और खादीकी टोपी पहने सभामें आये, यह देख मैं चकित रह गया और उनके छोटे परन्तु शुद्ध विचारोंसे युक्त भाषणको सुन मुझे और भी अधिक खुशी हुई। उन्होंने कहा: "यह संघर्ष आत्मशुद्धिका संघर्ष है। थोड़े समयके लिए अगर हिन्दुस्तान सिर्फ श्वेत वस्त्र पहने तो इससे वह कुछ खोयेगा नही। एक बार श्वेत वस्त्र धारण कर अपने उद्देश्यको प्राप्त करनेके बाद भले ही हिन्दुस्तान रंग-बिरंगे कपड़े पहने।" हम सफेद खादी पहनते हैं क्योंकि रँगनेका हमारे पास समय ही नहीं है। इसके अतिरिक्त रंग विदेशी होनेके कारण हममें से बहुतोंको पसन्द नही आते। श्री पिक्थॉलको खादीकी शुभ्रतामें हमारे संघर्षकी उज्ज्वलता दिखाई दी; यह विचार मुझे बहुत सुन्दर लगा। और यह सच भी है। अभी तो हम जो रंग जहाँसे भी आये उसे ही सुन्दर मान लेते हैं। हकीकतमें यह मैल है। जो रंग समय देखकर और उसके उद्गम स्रोतकी जाँच करनेके बाद वस्त्रमें दिया जाता है उसीमें कला और सौन्दर्य होता है। बालक द्वारा कागजपर तूलिका फेरनेमें और चित्रकार द्वारा अपनी तूलिकासे रेखाएँ खींचकर चित्रको आत्मा प्रदान करनेमें कितना अन्तर होता है? अभी तो रंगोंके प्रति हमारा मोह बालक द्वारा तूलिका फेरनेसे पड़े धब्बोंके मोहके समान है। जबतक हिन्दुस्तानके लोग अधिकतर श्वेत वस्त्र धारण नहीं करते तबतक चित्रकारका जन्म नही होगा और हमारे बाजारोंमें चित्र दिखाई नहीं देंगे। जिस तरह चित्रपटके अभावमें बेलबूटे नहीं बनते उसी तरह जबतक हम शुद्ध सफेद खादीकी शुरुआत नही करते तबतक आँख और मनको जो भा सके ऐसे सुन्दर डिजाइनवाली खादी भी तैयार नहीं हो सकती। आजके रंग तो धुली-पुती कब्रके समान हैं। हिन्दुस्तानकी कलाका विकास चाहनेवाले व्यक्तियोंको विदेशसे आये हुए कपड़ेके कचरेको हटाकर शुभ्र भूमिका तैयार करनी ही होगी। आँगनमें रंग पूरनेसे पहले जैसे हम आँगन साफ करते हैं वैसे ही हमें हिन्दुस्तानके आँगनमें पड़े विदेशी कपड़ेके कचरेको तुरन्त निकाल देना चाहिए।

एक पारसी बहन

पारसी भाई और बहनें राष्ट्रीय आन्दोलनमें खूब भाग लेने लगे हैं। भाई गोदरेजने तो तिजोरी बनानेके अपने धन्धेको सिर्फ देशके लिए ही चलानेका निश्चय कर

१. मार्माडयूक पिक्थॉल।

लिया जान पड़ता है। पारसी नौजवान शराबकी दुकानोंपर धरना देनेके लिए निकल पड़े हैं। पारसी सज्जन खादी पहनने लगे हैं। भारतके पितामहकी पौत्री बहन पेरीनने सिरसे पैरतक मोटी खादीकी पोशाक धारण की है। पारसी बहनोंने अपने जवाहरात तिलक स्वराज्य-कोषमें दे दिये हैं। पारसी राजकीय सभाने एम्पायर थियेटरमें तिलक जयन्ती मनाई है। अब बम्बईकी एक पारसी बहनने शराबकी दुकानपर धरना देनेकी इच्छा प्रकट की है और अन्य बहनोंसे भी वैसा करनेके लिए कहा है। उस बहनका कहना है कि अगर अन्य बहनें भी इस कार्यमें शामिल हो जायें तो इस समय धरना देनेसे हिंसाका जो भय बना रहता है वह बहुत अंशोंमें दूर हो जायेगा। और अभी हाल ही में हमपर जो यह आरोप लगाया गया है कि धरना देनेवालों में अवांछनीय व्यक्ति भी आ जाते हैं उस आरोपसे भी हम मुक्त हो जायेंगे। इस बहनको मैं बधाई देता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३१–७–१९२१

२२६. प्रस्ताव : चुनावके सम्बन्धमें[1]

[बम्बई
३१ जुलाई, १९२१]

महात्मा गांधीने निम्नलिखित प्रस्ताव पेश किया :

१७. पिछले महीने बंगाल और मद्रासमें हुए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके चुनावोंसे सम्बन्धित संवैधानिक प्रश्नोंपर किसी पूर्वग्रहके बिना और उनके गुण-दोषोंपर नजर डाले बगैर, और इस तथ्यको देखते हुए कि समस्त भारतमें नये चुनाव अगले नवम्बरमें या उससे पहले अवश्य होंगे और इस बातको भी ध्यानमें रखते हुए कि समस्त भारतके कांग्रेस-संगठनोंके सामने इस समय एक व्यस्त और भारी कार्यक्रम प्रस्तुत है, यह समिति देश-हितके खयालसे इन चुनावोंमें किसी प्रकारका हस्तक्षेप करना या खलल पहुँचाना ठीक नहीं समझती है और बंगाल तथा मद्रासके उन लोगोंको, जिनके दिलोंमें क्षोभ है, सलाह देती है कि वे अपने-अपने प्रान्तोंमें प्रान्तीय संगठनोंको अपना सहयोग दें जिससे कार्यक्रम सुचारु रूपसे चलाया जा सके और वह सफल हो।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१

१. मणिभवन, लैबर्नम रोड, बम्बईमें कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक सुबह साढ़े आठ बजे हुई। गांधीजी द्वारा पेश किये गये इस प्रस्तावका मौलाना मुहम्मद अलीने अनुमोदन किया। प्रस्ताव बहुमतसे पास हो गया।

२२७. भाषण : बम्बईमें खादी-प्रदर्शनीके उद्घाटनपर[1]

३१ जुलाई, १९२१

महात्मा गांधीने प्रदर्शनीके उद्घाटनकी घोषणा करते हुए कहा कि मैं अध्यक्षा तथा अतिया बेगमका कृतज्ञ हूँ जिन्होंने इसके लिए इतना परिश्रम किया। अतिया बेगमने इसे सफल बनानेके लिए रात-दिन काम किया है। मै जानता हूँ कि उनके साथ और भी कार्यकर्त्ता थे। मै उनकी भी प्रशंसा करता हूँ। किन्तु इस पूरी प्रदर्शनीके कामको गति प्रदान करनेवाली शक्ति अतिया बेगम ही थीं। मुझे इस बातकी प्रसन्नता है कि इस देशमे इस प्रकारकी महिलाएँ हैं जिनमें संगठनकी इतनी महान् क्षमता है। इस सम्बन्धमें अध्यक्षा तथा उनकी बहनने जो-कुछ किया है उसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। मुझे इससे और भी अधिक प्रसन्नता होती है कि संगठन करनेवाली बहन मुसलमान हैं।

यह दुर्भाग्यकी बात है कि इतने समय बाद लोगोंको खद्दरसे बहुत-सी चीजें तैयार होनेकी बात बताई जा रही है। मुझे आशा है कि लोग इस प्रदर्शनीका लाभ उठायेंगे। खद्दरकी परिभाषा करते हुए उन्होंने बताया कि देशमे ही विशुद्ध रूपसे हाथकते सूतका हाथबुना कपड़ा खादी है। मुझे इस बातसे हर्ष होता है कि यह देश महीनसे-महीन वस्त्र बनानेमें समर्थ है, विशेषकर बेजवाड़ा और गंजाम जिलोंमें ऐसा कपड़ा बनाया जाता है। इस सभामें मौजूद बहनोंमे से बहुत-सी बहनें मद्रास अहातेके उन भागोंमें बनी साड़ियाँ अवश्यमेव पहने हुए होंगी। उन्हें इस बातपर गर्व होना चाहिए कि यह देश ऐसी महीन साड़ियाँ तैयार करनेमे समर्थ है। किन्तु जिस व्यक्तिको इस काम अर्थात् इस प्रकारके महीन वस्त्रके उत्पादनका प्रमुख श्रेय है वह भी यहाँ मौजूद है। किन्तु उसने अपने प्रान्तमें खद्दरको लोकप्रिय बनाया और वहाँ उसके उत्पादनको प्रोत्साहन दिया, इसके लिए उसे अपराधी माना गया है। मैं यह नहीं कहता कि वह खादीका लोगोंमें प्रचार कर रहा था, केवल इसीलिए उसे जेल भेजा गया।

किन्तु जहाँतक मैं जानता हूँ उसका इसके अतिरिक्त और कोई अपराध नहीं था कि उसने लोगोंके बीच खादीका बहुत प्रचार किया। सरकार अब उस जैसे लोगोंसे डरती है। इसलिए वह कुछ-न-कुछ स्याह-सफेद करके ऐसे लोगोंको जेल भेजनेकी कोशिश कर रही है।

इसलिए यह हमारा कर्त्तव्य है कि हम आन्ध्र-केसरी तथा कांग्रेस व स्वदेशीके जबरदस्त कार्यकर्त्ता वेंकटप्पैयाके समान सफेद खादी पहनकर जेल जायें। सरकार यह

१. गांधीजीने रामबाग, सी० पी० टैंकमें राष्ट्रीय स्त्री-सभा द्वारा आयोजित प्रदर्शनीका उद्घाटन किया था।

समझ गई है कि लोगोंने ३० सितम्बरके पूर्व जो-कुछ करनेके लिए कहा है उसे वे अवश्य करेंगे, इसलिए वह दमनका सहारा ले रही है। हमने अपना कार्य आरम्भ करते ही वाइसरायको चेतावनी दे दी थी। मैं श्री शेरवानी तथा आन्ध्र-निवासी श्री वेंकटप्पैयाको उस साहसके लिए बधाई देता हूँ जो उन्होंने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य पालन करनेके लिए जेल जाकर दिखाया है। लोगोंको ऐसे दमनसे भयभीत नहीं होना चाहिए; जबतक वे अपना कर्त्तव्य-पालन कर रहे हैं तबतक उन्हें इस दुनियामें डरने-का कोई कारण नहीं। मैं आप लोगोंसे अपील करता हूँ कि आप अपनी व्यक्तिगत सुविधा तथा विलासिताको छोड़कर खादी पहनें। जब मैं पुरी गया था तब मैंने देखा कि लोग भूखों मर रहे हैं। हमारे देशमें ऐसे तीन करोड़ लोग हैं। जब हमारे किसान अपने खाली समयमें चरखा कातते थे, तब वे अपनी आयमें अभिवृद्धि कर लेते थे, इस प्रकार वे भुखमरीको अपने पास नहीं फटकने देते थे। किन्तु अब लोग मैनचेस्टरके वस्त्र पहननेके आदी हो गये हैं, किसानोंका वह पेशा मारा गया है और वे भूखों मर रहे हैं। जगन्नाथके मन्दिरमें स्वयं भगवान्‌की प्रतिमा विदेशी वस्त्रोंसे सजाई गई थी, इसलिए मैंने पुजारीसे पूछा कि क्या वह विदेशी वस्त्र पहनाकर स्वयं भगवान्‌को ही शर्मिन्दा नहीं कर रहा है?

लोग शिकायत कर रहे हैं कि मेरे मित्र विट्ठलदास जेराजाणी तथा नारणदास पुरुषोत्तमने खादीकी कीमतें बढ़ा दी हैं। मेरा निवेदन है कि इस कामपर होनेवाले खर्चको पूरा करनेके लिए ही वे ऐसा कर रहे हैं; उनका उद्देश्य इस व्यापारसे किसी प्रकारका लाभ उठाना नहीं है। कुछ लोगोंकी शिकायत है कि बुनकर खादी बुननेकी अधिक मजदूरी माँग रहे हैं। आप ही बतायें कि इसमें उनका क्या अपराध है। क्या कभी यह शिकायत भी की गई है कि वकीलों तथा डाक्टरोंने अपनी फीस बढ़ा दी है? उनमें से कुछ तो १,००० रु० प्रतिदिनके हिसाबसे फीस लेते हैं, इसलिए यदि बुनकर कुछ आने और माँगते हैं तो इसमें क्या हानि है? क्या उन्हें अपने परिवार-का पालन-पोषण नहीं करना है? कुछ आने और प्राप्त कर लेनेपर वे अपने परिवार-की उन जरूरतोंको पूरा करेंगे जिन्हें वे बहुत दिनोंसे पूरा करनेमें असमर्थ थे। लोगोंको इसके लिए शिकायत क्यों होनी चाहिए? यदि बुनकर खादीकी कीमत जितनी उन्होंने बढ़ाई है उससे भी अधिक बढ़ा दें तो भी लोगोंको कोई आपत्ति नहीं उठानी चाहिए।

मैं चाहता हूँ कि इस देशका प्रत्येक घर सूत कातनेकी तथा प्रत्येक गली कपड़ा बुननेकी मिल बन जाये ताकि इस देशका पुनरुत्थान हो। यदि हमारी महिलाएँ अपने उस खाली समयको जिसे वे अब सिनेमा जाने आदिमें बर्बाद करती हैं, कपड़ा बुननेमें लगायें तो जहाँतक वस्त्रका प्रश्न है, भारत आत्मनिर्भर बन सकता है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १–८–१९२१

२२८. भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर[1]

३१ जुलाई, १९२१

मैं इस दिनको बम्बईके लिए एक पवित्र दिन मानता हूँ। आज हम अपने शरीरोंसे गन्दगी हटा रहे हैं। हम विदेशी वस्त्रको, जो हमारी गुलामीका चिह्न है, त्यागकर अपना शुद्धीकरण कर रहे हैं। आज हम स्वतन्त्रताके (स्वराज्य) मन्दिरमें प्रवेश पानेकी योग्यता प्राप्त कर रहे हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि बहिष्कृत वस्त्रोंको नष्ट करना क्रोध और द्वेष-भावनाका सूचक है। वह द्वेष-भावका सूचक है या नहीं यह तो इसपर निर्भर करता है कि हम किस भावनासे इन कपड़ोंको जला रहे हैं।

हम अंग्रेजों, अमेरिकियों, जापानियों या फ्रांसीसियोंके प्रति दुर्भावना क्यों रखें? वे हमारे यहाँ अपना कपड़ा तबतक पाटते रहेंगे जबतक हम उसे खरीदना पसन्द करेंगे। इसलिए यदि हमें क्रोध आये तो हमें अपना क्रोध अपने ही ऊपर उतारना चाहिए। जब हम विदेशी सुन्दर चीजोंसे लुब्ध होना बन्द कर देंगे तब हम विदेशी राष्ट्रोंके प्रति दुर्भाव रखना भी छोड़ देंगे।

मैं देखता हूँ कि टर्कीमें हो रही घटनाएँ हमारे देशके मुसलमानोंको सन्ताप पहुँचा रही हैं। वे खिलाफतके सम्बन्धमें किये गये अन्यायसे अधीर हो उठे हैं। मैं उनसे विनयपूर्वक कहना चाहता हूँ कि खिलाफतकी मदद करनेका सबसे छोटा और सीधा तरीका स्वदेशी है। क्योंकि स्वदेशीको अपनाकर हम भारतको शक्तिशाली बनाते हैं। और भारतकी ताकत बढ़ानेका अर्थ है खिलाफतकी रक्षा करनेकी हमारी ताकतका बढ़ जाना।

परन्तु आज हमारे दिलोंमें सबसे पहला खयाल यही होना चाहिए कि कल लोकमान्यकी बरसी मनानेके लिए हम अपनेको शुद्ध करें। जबतक हम स्वदेशीकी शपथ नहीं लेते, तबतक हम अपनेको शुद्ध नहीं कर सकते। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि जिन लोगोंने अपने कपड़े बाँटनेके लिए या बाहर भेजनेके लिए दे दिये हैं, वे इस बातका दृढ़ निश्चय करेंगे कि भविष्यमें कभी विदेशी वस्त्र नहीं पहनेंगे। मुझे विश्वास है कि लोकमान्यकी स्मृतिको अमर बनानेका सबसे अच्छा तरीका स्वराज्यकी प्राप्ति है। और स्वदेशीके बिना स्वराज्य असम्भव है। और स्वदेशीका श्रीगणेश तभी हुआ माना जायेगा जब विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण और स्थायी रूपसे बहिष्कार हो। इसलिए मैं होली जलानेकी इस रस्मको एक पुनीत यज्ञ मानता हूँ। और यह पवित्र रस्म मेरे द्वारा सम्पन्न होने जा रही है इसलिए मैं अपने-आपको सौभाग्यशाली मानता हूँ। ईश्वर

१. बम्बईके परेल नामक स्थानमें एलफिन्स्टन मिल्सके समीप विदेशी कपड़ोंकी होली जलाकर स्वदेशी आन्दोलन शुरू करनेके लिए एक ऐतिहासिक सभा हुई थी। गांधीजीके जिस भाषणकी छपी हुई प्रतियाँ सभामें पहलेसे बाँटी गई थीं उसीका यह अंग्रेजी अनुवाद समाचारपत्रोंमें छपा था।

हमारे भीतर और बाहरकी सारी अपवित्रता दूर करे। ईश्वर करे भारतको ऐसी शक्ति प्राप्त हो कि वह अगले ३० सितम्बरतक विदेशी वस्त्रोंके पूर्ण बहिष्कारको सफल बना सके और इस प्रकार अपने पवित्र निश्चयको पूरा कर सके।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १–८–१९२१

२२९. भाषण : बम्बईकी सार्वजनिक सभामें[1]

३१ जुलाई, १९२१

अपने भाषणके दौरान महात्मा गांधीने कहा : चरखा आपकी तलवार है। इसी शस्त्रसे आपको स्वराज्यका युद्ध लड़कर अपने देशके लिए विजय प्राप्त करनी चाहिए। चरखा ही एक ऐसा शस्त्र है जिससे आप अपने धर्मकी रक्षा कर सकते हैं; इसलिए आपका कर्त्तव्य है कि आप देशमें खद्दरके उपयोगको आम बना दें। आपकी मुक्ति केवल स्वदेशीमें है, इसलिए यह आपका कर्त्तव्य हो जाता है कि आप विदेशी वस्त्रोंका उपयोग सदैवके लिए छोड़ दें। जो विदेशी वस्त्र आप इस समय पहनते हैं, वे आपको विदेशियोंके साथ जकड़ रखनेवाले बन्धन हैं। यदि आप चाहते हैं कि देश हमेशाके लिए मुक्त हो जाये तो आपको विदेशी वस्त्रोंका उपयोग छोड़ना ही होगा। यह प्रत्येक भारतीयका निश्चित कर्त्तव्य है कि वह अपने उन भाइयोंके बारेमें सोचे जो भुखमरीके किनारेपर खड़े हुए हैं; इसका कारण यह है कि लोग स्वदेशी वस्त्रोंका उपयोग करना छोड़कर विदेशी वस्त्रोंके आदी हो गये हैं। अब चूंकि आप समझ गये हैं कि हमारे गरीब देशवासी किस हालतमें हैं, तो क्या आप उन्हें हमेशाके लिए इसी हालतमें रहने देंगे? मुझे आशा है कि आप ऐसा नहीं करेंगे। मुझे जरा भी सन्देह नहीं कि जिन लोगोंने अभीतक विदेशी वस्त्रोंका उपयोग नहीं छोड़ा है वे तुरन्त उसे छोड़ देंगे। जो बहनें यहाँपर उपस्थित हैं, मैं उनसे भी अपील करूँगा कि वे देशकी खातिर महीन विदेशी वस्त्रोंका परित्याग करके खद्दर पहनें। पूर्ण रूपसे स्वदेशीका उपयोग करके ही आप देशको गुलामीकी उन जंजीरोंसे छुड़ानेकी आशा कर सकते हैं जिनमें वह इस समय जकड़ा हुआ है। क्योंकि सच्ची स्वदेशीका अर्थ है सच्चा स्वराज्य। आपको अपने देशकी खातिर स्वराज्य तो प्राप्त करना ही है। मैं आप लोगोंसे अपील करता हूँ कि आप इस संकट-कालमें देशके प्रति अपना कर्त्तव्य निभायें और हमेशाके लिए स्वराज्य प्राप्त कर लें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १–८–१९२१

१. मोतीशाहके मंदिर, परेलकी सभामें।

२३०. पत्र : ज० बो० पेटिटको

[जुलाई १९२१ के अन्तमें]

प्रिय श्री पेटिट,

१८ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद स्वीकार करें। मेरा खयाल था कि रुक्का २,००० का था। मै याददाश्तसे लिख रहा हूँ। कृपया २,००० में से ५०० रुपये भेज दीजिए।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ८२३१) की फोटो-नकलसे।

२३१. सन्देश : खेड़ा जिलेकी जनताको

[१ अगस्त, १९२१ के पूर्व]

खेड़ाके भाइयो और बहनो,

मैंने आप लोगोंसे सदा बहुत आशाएँ रखी हैं, और अब आपने अपने हृदयोंमें भाई अब्बास तैयबजीको स्थान दिया है; इससे मेरी ये आशाएँ और बढ़ गई हैं। आपने तिलक स्वराज्य-कोषमें अपेक्षासे अधिक रकम दी। अब भारतकी यह दूसरी प्रतिज्ञा अधिक कठिन है, किन्तु वह आपके लिए कठिन नहीं हो सकती। किसानोंको विदेशी कपड़ेका मोह नहीं हो सकता। किसान लोग महीन कपड़े पहननेमें संकोच करेंगे। चरखा खेड़ाके सारे भयको दूर करनेवाली प्रधान वस्तु है। हमने चरखेके प्रभावको समझ लिया है। अब हमें सर्वथा उसीका आश्रय ले लेना चाहिए। ऐसा करने-वाले लोगोंको विदेशी कपड़ेका पूर्ण बहिष्कार करना ही चाहिए। इस कार्यको आरम्भ करनेके लिए जितना पुनीत दिवस लोकमान्य तिलककी संवत्सरीका दिन हो सकता है उतना कोई दूसरा नहीं। उस दिन आप विदेशी कपड़ेकी होली जलाकर अपना मैल धो डालें और फिर आपको कितना ही कम कपड़ा क्यों न मिले, उसीसे काम चलायें एवं खेड़ामें ही अपनी जरूरतके लायक खादी तैयार करनेका दृढ़ संकल्प कर लें। मेरी कामना है, प्रभु इस कार्यमें आपकी सहायता करे।

मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]

गुजराती, ७–८–१९२१

२३२. भाषण : बम्बईमें स्वदेशीपर

१ अगस्त, १९२१

महात्मा गांधीने कहा : आप लोग इतनी बड़ी संख्यामें यहाँ भाषण सुनने नहीं बल्कि लोकमान्य तिलककी पूजा करने आये हैं। आप यहाँपर तिलक महाराजको श्रद्धांजलि चढ़ाने आये हैं। मेरा सन्देश तो अखबारोंमें छप जायेगा, आप उसे वहाँ पढ़ सकते हैं। ऐसे लोगोंको जो एक वर्षके भीतर ही स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए कृत-निश्चय हैं, यहाँ इतनी बड़ी संख्यामें देखकर मेरा हृदय फूला नहीं समा रहा है। हमें इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए अधिकसे-अधिक काम करना है। इसीके लिए हमने ३० जूनसे पहले सभी प्रकारके विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार करनेकी शपथ ली है। यह देखना हमारा कर्त्तव्य है कि हमने अपनी शपथको निष्ठापूर्वक निभाया है कि नहीं। मैं इससे अधिक और कुछ नहीं कहना चाहता क्योंकि ज्वार आ गया है और तेजीके साथ आगे बढ़ता चला आ रहा है। जिस धैर्यके साथ आप डटे हुए हैं उससे मालूम पड़ता है कि आप अहिंसक और असहयोगी हैं। मुझे आशा है कि हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सिख, ईसाई और यहूदी सभी ली हुई शपथको निभायेंगे। तिलकने आप लोगोंको सिखाया है कि स्वराज्य आपका जन्मसिद्ध अधिकार है, इसलिए केवल स्वतन्त्रता प्राप्त करके ही आप अपने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य निभा सकेंगे। मेरी आप लोगोंसे अपील है कि आप चुपचाप यहाँसे घर जायें और स्वदेशी-व्रतका न केवल इस समय बल्कि सदैव पालन करते रहें। मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप स्वराज्य प्राप्त करनेपर भी स्वदेशीको न छोड़ें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २–८–१९२१

२३३. पूजाका अधिकार

जिसपर हमारा अधिकार न हो यदि हम ऐसा कार्य करें तो वह फलीभूत नहीं होता। धोबी हजामत करने बैठे तो खून निकाल दे। वकील इलाज करने लगे तो बंटा ढार हो जाये। अगर धूर्त मन्दिर जाये तो उसे देवीका प्रसाद अवश्य मिल' जायेगा किन्तु भक्ति-भावनासे विहीन प्रार्थनाको प्रभु स्वीकार नहीं करता।

उसी तरह अगर हम अधिकार बिना तिलक महाराजकी पूजा करेंगे तो वह कदापि स्वीकृत नहीं होगी। जिसे हिन्दुस्तान अच्छा ही नहीं लगता, जो हिन्दुस्तानकी आबोहवासे अकुलाता है, जिसे हिन्दुस्तानके रीति-रिवाज जंगली लगते हैं, हिन्दुस्तानी ढंगके भोजनको देखकर जो मुँह बिचकाता है, हिन्दुस्तानकी पोशाक जिसे काटनेको

दौड़ती है वह तिलक महाराजकी पूजा क्या करेगा? ऐसी पूजाको क्या तिलक महाराजकी आत्मा स्वीकार करेगी? जो व्यक्ति देवताको भक्तिपूर्वक 'पत्रंपुष्पंफलंतोयम' चढ़ाता है उसपर देवता प्रसन्न होते हैं। और भक्तिका अर्थ है भावपूर्वक अनुकरण।

पुजारीकी परीक्षाकी घड़ी आ पहुँची है। आज लोकमान्यकी पुण्यतिथि हम किस तरह मनायेंगे? क्या हम इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करनेका दृढ़ निश्चय करेंगे? क्या हम विदेशी कपड़ेके शृंगारको उतार फेंकेंगे?

जो अपना कर्त्तव्य नहीं जानता, उसे अधिकार नहीं मिलता। जो अपना कर्त्तव्य अदा नहीं करता वह मुक्ति-पत्र कैसे माँग सकता है? जिस तरह स्वराज्य जन्मसिद्ध अधिकार है उसी तरह स्वदेशी भी जन्मजात कर्त्तव्य है। स्वदेशी बिना स्वराज्य नहीं होता। स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है — यह 'तिलक गीता' का पूर्वार्द्ध है; स्वदेशी हमारा जन्मजात कर्त्तव्य है — यह उत्तरार्द्ध है।

इसलिए लोकमान्यकी पुण्य-तिथि अगर हम अच्छी तरहसे मनाना चाहते हों तो वह स्वदेशी व्रतको धारण करके ही मना सकते हैं। विदेशी कपड़ेका पूर्णतया त्याग किये बिना स्वदेशी-मन्त्रका जाप नही हो सकता। विदेशी कपड़ा मैल है। इस मैलको निकाले बिना हम स्वच्छ नहीं हो सकते और स्वच्छ हुए बिना स्वराज्य-मन्दिरमें प्रवेश करनेका हमें अधिकार नहीं है। जैसा कि मौलाना मुहम्मद अलीने कहा है, शान्तिसे स्वराज्य प्राप्त करनेका अर्थ स्वच्छन्दता नहीं है। हम कुछ भी त्याग न करें और केवल शान्ति-पाठ ही करते रहें तो यह मात्र मन्दता अथवा आलस्य कहलायेगा। त्याग और उद्यमविहीन शान्ति तो मृत्यु है। शव-जैसी शान्तिसे क्या लाभ है? ऐसी शान्तिका क्या उपयोग हो सकता है? कायर व्यक्ति भय देखकर घरमें छिपकर बैठ जाता है। ऐसीशान्तिसे घरका नाश ही हो जाता है। हमने जिस शान्तिकी प्रतिज्ञा ली है वह वीरताकी सूचक है। विदेशी कपड़ोंका त्याग करनेकी भी अगर हममें शक्ति नहीं है, बहादुरी नहीं है, इच्छा नहीं है तो हमारी यह शान्ति केवल दम्भ है। दम्भ तो एक नाटक है। नाटक में बहाये गये आँसुओंसे क्या ज्ञानोपलब्धि होती है?

इसलिए जो व्यक्ति तिलक महाराजकी पूजाका इच्छुक है, उसे तो सम्पूर्ण स्वदेशी-व्रत लेना ही पड़ेगा। स्वदेशी वस्त्र धारण किये बिना यदि कोई लोकमान्यका स्मरण करता भी है तो उसका फल तोतेकी तरह रटी हुई 'भागवत' जितना होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १-८-१९२१

२३४. भाषण : चौपाटीकी सभा, बम्बईमें[1]

१ अगस्त, १९२१

यह लोकमान्य तिलकके नामका ही जादू था कि कल श्री सोबानीके मैदानमें दो लाख स्त्री-पुरुषोंकी भीड़ एकत्र हुई। उस दृश्यने मेरी आत्माको अभिभूत कर दिया। कल बम्बईने जो अग्नि-शिखा प्रज्ज्वलित की वह पारसी मन्दिरकी अग्निके समान अखण्ड रूपसे जलती रहेगी और हमारे सारे कलुषको उसी प्रकार क्षार बनाती रहेगी जिस प्रकार कि हमने कल अपने भीषणतम बाहरी कलुष अर्थात् विदेशी वस्त्रोंको क्षार किया। यह हमारे विदेशी वस्त्रोंका स्पर्श न करनेके निश्चयका प्रतीक बने! हिन्दू, मुसलमान, जैन, सिख, पारसी, ईसाई, यहूदी तथा भारतको अपना घर माननेवाले अन्य धर्मावलम्बी सभी समाज, विदेशी वस्त्रोंकी अस्पृश्यताको अपना कर्त्तव्य समझें। यह सभी भारतीय सम्प्रदायोंके लिए समान रूपसे आवश्यक धर्म हो। जिस प्रकार विदेशी वस्त्रोंकी अस्पृश्यता हम सबके लिए पुण्य है उसी प्रकार दलित जातियोंकी अस्पृश्यता प्रत्येक धर्मनिष्ठ हिन्दूके लिए पाप होनी चाहिए। इसलिए कल हमने एक प्रशंसनीय कुर्बानी की। लोकमान्य तिलककी यादगार मनानेके लिए बम्बईने अपनेको उपयुक्त सिद्ध कर दिखाया है। हम उनके आत्म-बलिदान, निर्भीक साहस तथा सादगीकी यादगारको निधिके समान सुरक्षित रखें। उन्होंने देशभक्तिको अपना धर्म बना लिया था। इसलिए हम अपनेको उनके स्वराज्यके स्वप्नको साकार बनानेमें लगा दें। स्वराज्यसे कम कोई भी स्मारक उनकी यादगारको समुचित रूपसे स्थायी नहीं बना सकता।

और जैसा कि मैंने कल कहा था, सच्ची स्वदेशीके बिना भारतकी मुक्ति नहीं। जिस अग्निको हमने कल प्रज्ज्वलित किया वही सच्ची और आवश्यक बलिदानकी ज्वाला है।

बाहरी अग्निपर जो बात लागू होती है वही आन्तरिक अग्निके सम्बन्धमें भी है। कल की बाहरी अग्नि मेरे लिए अन्तःस्थित अग्निका प्रतीक है। वह हमारे मस्तिष्क तथा हृदयकी सारी दुर्बलताओंको भस्मीभूत कर दे। इस प्रकार परिष्कृत विवेक हमें स्वदेशीकी सच्ची आर्थिक उपयोगिता बताये। इस प्रकार परिष्कृत किये गये हमारे हृदय विदेशी वस्त्रके आकर्षणके प्रलोभनसे बचनेके लिए हमें बल प्रदान करें। विदेशी वस्त्र भारतके बाहर चाहे कितना ही उपयोगी क्यों न हो, किन्तु वह भारतके लिए अधिक उपयोगी नहीं है।

यदि वह अग्नि जिसे हमने कल जलाया था सच्ची है, वह श्रद्धांजलि जिसे लोकमान्यकी स्मृतिमें चढ़ानेके लिए आज हम एकत्र हुए हैं, सच्ची है तो हम अपनेको अथवा राष्ट्रको धोखा न देनेकी पूरी सावधानी बरतेंगे। खादीको राष्ट्रीय पोशाक

१. इस भाषणका पाठ छापकर श्रोताओंमें वितरित किया गया था।

निश्चित करनेका यह अच्छा अवसर है। इसके बाद शुभ अवसरोंपर विदेशी मलमल नहीं बल्कि पवित्र खादी हमारे शरीरोंको सुशोभित करेगी। यह खादी लाखों भारतीयोंके किसी कठिन परिश्रम या जबरन लादी गई निष्क्रियता तथा अकिंचनताका प्रतीक न होकर घरेलू जीवनको पुनरुज्जीवित करनेवाली कविता तथा गरीबसे-गरीब मेहनतकश-की भावी समृद्धिका प्रतीक है। और यदि बारह मास पूर्व स्वर्गवासी महान् देशबन्धु [लोकमान्य तिलक] की पवित्र अस्थियाँ जहाँ जलाई गई थीं वहाँपर किये गये कलके पवित्र समारोह तथा आजके प्रदर्शनका यही आशय है तो हमें अपने प्रस्तावसे पीछे नहीं हटना चाहिए, न इसके लिए कोई बहाना ही बनाना चाहिए। हमें बिना कोई प्रदर्शन किये सदैवके लिए विदेशी वस्त्रोंका उपयोग छोड़ देना चाहिए। हमें यह समझ लेना चाहिए कि जिस प्रकार उस मक्खन-मलाईवाले दूधका जिसके बारेमें यह मालूम हो जाये कि वह दूषित है, कोई मूल्य नहीं होता उसी प्रकार हमारे पास जो विदेशी वस्त्र हैं, उनका कोई मूल्य नही। उन्हें फेंक देनेके सिवा और कोई चारा नहीं। यदि हमें अब विदेशी वस्त्र नहीं पहनने है, तो उन्हें अपने ट्रंकमें ताला लगाकर बन्द कर रखना क्या एक निरर्थक बड़ा बोझ ही नहीं है? क्या यूरोपमें लोग उन मूल्यवान वस्तुओंको छोड़ नहीं देते जिनका चलन बन्द हो गया है? मैं इस प्रारम्भिक अवस्थामें सावधानीके ये शब्द इसलिए कहता हूँ, क्योकि मैं जानता हूँ बहुतसे लोगोंने अपने विदेशी वस्त्रोंका केवल एक भाग ही दिया है और शेष स्पष्टतः इस आशासे अपने पास रख लिये हैं कि शायद समय आनेपर वे उन्हें पहन सकें। विदेशी वस्त्रोंका संग्रह, द्रव्य या गहनोंका संग्रह नहीं है जिसमें से केवल अंशमात्र देनेसे काम चल सकता है। विदेशी वस्त्रोंका संग्रह तो उस कूड़े-करकटके ढेरके समान है जिसके एक-एक कणको मेहनती तथा कुशल गृहिणी घूरेपर फेंक देती है। यदि हमारे बाजारोंमें विदेशी वस्त्रोंकी दुकानें रह भी जायें तो उधर आकर्षित न होनेका दारमदार हमारी तड़क-भड़क और चमक-दमककी ओर जानेवाली रुचिमें क्रान्तिकारी परिवर्तन करनेकी योग्यतापर निर्भर करेगा। हमें नकलके पीछे दीवाना नहीं बनना चाहिए। यदि हम ऐसा करते हैं तो सम्भव है कि धोखाधड़ीसे विदेशी बाजारोंसे हमारे यहाँ नकली खादी आने लगे। फिलहाल संक्राति कालमें हमारे लिए मोटी-झोटी बिना धुली खादी ही सर्वोत्तम है।

मैं खादीकी प्रतिज्ञा इसलिए करता हूँ कि यह हमें अपनी सभी शक्तियोंका उपयोग करनेका अवसर देती है और लाखों स्त्री-पुरुषोंमें से प्रत्येककी, चाहे वह बूढ़ा हो या जवान, परीक्षा लेती है। इसमें सफलताकी आशा केवल तभी की जा सकती है जब कि भारत एक मत होकर कार्य करे। यदि भारत इसे स्वदेशीके सम्बन्धमें चरितार्थ कर सकता है तो समझ लेना चाहिए कि उसे स्वराज्यका रहस्य मालूम हो गया है। तब वह वैज्ञानिक ढंगसे विनाश और निर्माणकी कलामें प्रवीण हो जायेगा।

कल जिस स्थानपर[१] हमने अपने पापोंके एक अंशको जलाया वह हमारे लिए तीर्थस्थान बन गया है। मुझे आशा है कि श्री सोबानी जिन्होंने इस आन्दोलनमें पहले

१. देखिए "भाषण: बम्बईमें स्वदेशीपर", ३१-७-१९२१।

ही उदारतापूर्वक योगदान दिया है और जो अपने लड़के तकको इसके लिए समर्पित कर चुके हैं, उस स्थानको जहाँ बलिदानकी आग जलाई गई थी, राष्ट्रको समर्पित कर देंगे जिससे कि वहाँ इस घटनाकी यादगार-स्वरूप किसी उपयुक्त स्मारकका निर्माण किया जा सके। इसी प्रकार हमें यह स्थान भी, जहाँ हम आज एकत्र हुए हैं और जहाँ हमने लोकमान्यके अवशेष जलाये थे, प्राप्त कर लेना चाहिए, यहीं उनकी भस्मीसे असहयोगकी शक्ति उत्पन्न हुई है। पिछले अगस्तकी पहली तारीखको असहयोगका जन्म हुआ था और कल परेल स्थित श्री सोबानीके मैदानमें राष्ट्रने वह कार्य प्रारम्भ किया जो, मेरे विचारमें, स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए प्राय: अन्तिम मंजिल है। ईश्वर करेगा तो आगामी ३० सितम्बरतक भारत अपने उद्देश्यकी प्राप्तिके अयोग्य नहीं रहेगा।

स्वयसेवकोंके सम्बन्धमें दो शब्द कहकर मै अपनी बात समाप्त करना चाहता हूँ। अकसर हमपर दोष मढ़ा जाता है कि हम संगठन-कार्यके अयोग्य हैं। फिर भी कल पुलिसकी बिलकुल जरूरत नहीं पड़ी और न कोई दुर्घटना ही हुई। विदेशी वस्त्र संग्रह करनेसे लेकर जलाने तकके सारे कार्यकी व्यवस्था स्वयंसेवकोंने ही की। इसका सारा श्रेय उन्हें और हमारे अन्य सहायकोंको है। इसी प्रकार धैर्ययुक्त, मौन तथा शान्तिपूर्ण प्रयत्नोंसे हम स्वतन्त्रता-संग्रामको भी जीतनेकी आशा करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४–८–१९२१

२३५. टिप्पणियाँ

आन्ध्रका गौरव

आखिरकार कोण्डा वेंकटप्पैया और उनके बैरिस्टर और वकील-मित्र गिरफ्तार हो गये। एक प्रसिद्ध बैरिस्टर और एक वकीलकी गिरफ्तारीका समाचार पानेपर यदि यह भी सुननेको मिलता कि श्री वेंकटप्पैयाको गोली मार दी गई है तो आश्चर्य न होता। उन्होंने कमेटीकी मंजूरी मिलनेसे पहले इन गिरफ्तारियोंपर एक सप्ताहकी हड़ताल घोषित कर दी थी। मुझे हड़ताल करना एक गलत कदम मालूम पड़ा था। अभीतक मेरा यही विचार है। किन्तु फिर उनका तार आया कि हड़ताल शान्तिपूर्वक चल रही है। फिर उनके चार सहयोगियोंकी और स्वयं उनकी गिरफ्तारीकी सूचना तारसे मिली। मैं कोण्डा वेंकटप्पैयाको आन्ध्रका गौरव समझता हूँ। इस महान् प्रान्तमें जब और सब सुप्त थे वे जाग उठे। उनमें जबरदस्त चरित्रबल है। उन्होंने अहिंसाको अपना सिद्धान्त मान लिया है और वे उसका पूरी तरहसे पालन कर रहे हैं। अन्य बहुतसे देशभक्तोंके साथ वे बरसोंसे देशसेवामें लगे हुए हैं। और जब कि वे गिरफ्तार कर लिये गये है तब मुझे लगता है कि सरकार बिलकुल पागल हो गई है। उसका यह कार्य पागलपनकी पक्की निशानी है। यह मेरे लिए भविष्यमें शीघ्र विजय मिलनेका चिह्न भी है। बस, आन्ध्रके मित्रोंको शान्त और अनुद्विग्न रहना चाहिए। वे वीर और धार्मिक वृत्तिके लोग हैं। उनमें दृढ़ संकल्प है। वे कर्मठ कार्य-

कर्त्ता हैं। वे इन कुछ महीनोंमें कड़ा उद्यम करके अपनी तेजस्विता दिखा सकते हैं। वे स्वयं नेता बनकर स्वदेशीकी व्यवस्था करके ही अपने बन्दी नेताओंको सच्चा मान दे सकते हैं। उन्हें विदेशी कपड़ेका त्याग करना चाहिए। हमारे देशमें केवल इतना ही कपड़ा है कि हम अपने नंगेपनको ढक सकें। आन्ध्रमें इस समय इतनी दस्तकारी है कि वह भारत-भरमें सबसे महीन हाथके कते सूतका उत्पादन कर सकता है। चाहे किसीको कुछ भी हो जाये, आन्ध्रके सब नर-नारी अगले दो महीने इसी महान् कार्यमें व्यस्त रहें। हमारे नेताओंकी गिरफ्तारीसे हमारे कामकी प्रगतिमें अवरोध न आना चाहिए; बल्कि उलटे उसकी गति बढ़नी चाहिए।

भारतीय सैनिक और शासकवर्ग

शासकवर्गसे तात्पर्य केवल अंग्रेजोंसे नहीं है, बल्कि उनके द्वारा प्रशिक्षित किये गये हजारों भारतीयोंसे भी है। यह एक दूषित प्रणाली है; इसके अन्तर्गत जो भी कर्मचारी आते हैं वे सभी दूषित हो जाते हैं। और अब संयोगसे ऐसी स्थिति आ गई है कि भारतीय सैनिको और शासकोंका उपयोग इस प्रणालीकी उत्तरोत्तर वृद्धिके लिए किया जा रहा है। गुन्टूरकी गिरफ्तारियोंके लिए कौन जिम्मेदार है? हिन्दुस्तानी। मटियारीमें गोली चलानेकी आज्ञा किसने दी? एक हिन्दुस्तानीने। असमके निरीह श्रमिकोंपर किसने प्रहार किया? हिन्दुस्तानियोंने। मौलाना शेरवानीके मुकदमेका झूठा दिखावा किसने किया? हिन्दुस्तानीने। प्रहार करनेवाले गोरखोंमें इतना साहस नहीं था कि निर्दोष स्त्री-पुरुषोंपर प्रहार करनेकी आज्ञाकी अवज्ञा करते। विभिन्न स्थानोंपर भारतीय पदाधिकारियों और न्यायाधीशोंमें इतनी दिलेरी नहीं है कि वे निर्दोष लोगोंपर गोली चलाने या उन्हें दण्ड देनेसे इनकार करें। हम स्वेच्छासे अत्याचारीके हाथका खिलौना बन जाते हैं यह हमारा पूरा-पूरा नैतिक पतन है। यदि हम यह देखें कि भावी जलियाँवाला-काण्डकी व्यवस्था भारतीय कर रहे हैं और वह उन्हींके मार्ग-दर्शनमें कार्यान्वित की जा रही है तो इससे मुझे कोई आश्चर्य न होगा। और हमारे वंशजोंके लिए यह स्वराज्यका प्रशिक्षण होगा। एक ऐसी शासन प्रणालीके अन्तर्गत, जो कि लम्बीसे-लम्बी अवधितक लाखों मनुष्योंको दासत्वके बन्धनमें जकड़े रखनेके निमित्त बनाई गई हो, सैनिक या न्यायाधीशका पेशा मानप्रद नहीं हो सकता। परन्तु हमें विदेशियोंके अत्याचारके समान ही अपने सगे भाई-बन्दोंका अत्याचार भी सहना पड़ेगा। हम भीरुतावश यह कल्पना न कर लें कि हम उन्हें डराकर उनसे उनकी नौकरी छुड़वा सकते हैं। वे उसे तभी छोड़ेंगे जब वे उससे तंग आ जायेंगे, हम उनका जीना दूभर करके उनसे उनका धन्धा नहीं छुड़वा सकते। हमें अंग्रेज अफसरके समान उन्हें भी चुनौती देनी होगी कि वे हमारे साथ बुरेसे-बुरा व्यवहार कर लें। सच तो यह है कि वे केवल दयाके पात्र हैं। और गैर-जिम्मेदार होनेके कारण शायद अंग्रेज अफसरोंसे भी अधिक घातक चूकें कर सकते हैं। अंग्रेज जानते हैं कि वे शासक जातिके सदस्य हैं, इस कारण वे बहुधा अपने ऊपर कुछ संयम रखते हैं जब कि हिन्दुस्तानीको बहुतसे-बहुत अपना पद छिननेका खतरा होता है। इस कारण अपने देशमें दमन जो निश्चित रूप ले रहा है वह दमनके अबतकके रूपकी अपेक्षा बहुत अधिक खतरनाक है।

सिखोंका रंग

प्रस्तावित राष्ट्र-ध्वजके रंगोंके प्रश्नपर सिख भाई अनावश्यक रूपसे क्षुब्ध हो रहे हैं। वे अपने सैनिक महत्त्वके कारण यह चाहते हैं कि उनका काला रंग भी राष्ट्र-ध्वजमें रखा जाये। इसके औचित्य या अनौचित्यकी बात छोड़ दें तो उनका क्षोभ अकारण है, क्योंकि यह प्रश्न अभी तो अ० भा० कांग्रेस कमेटीमें भी विचार या निर्णयके लिए नहीं रखा गया है। और उनकी इस आपत्तिको ध्यानमें रखते हुए, जबतक मैं उनको यह विश्वास नहीं करा देता कि उनकी माँग अनुचित है तबतक, मेरा विचार इसे समितिके सम्मुख रखनेका नहीं है। इसके औचित्य या अनौचित्यपर विचार करें तो मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नहीं है कि उन्हें अपनी आपत्ति वापस ले लेनी चाहिए। सफेद रंगमें अन्य सब रग आ जाते हैं। विशेष महत्त्वकी माँग करनेका अर्थ यह है कि वे संख्यामें बड़ी दोनों जातियोंमे मिलना नहीं चाहते। यदि हिन्दुओं और मुसलमानोंमें कोई झगड़ा न होता तो मैं तो एक ही रंग रखना पसन्द करता। सिखों और हिन्दुओंमें कभी कोई मतभेद नहीं रहा। और मुसलमानोंसे उनका झगड़ा वैसा ही है जैसा हिन्दुओंका है। मतभेदों या विशेषताओंपर जोर देना खतरनाक बात है। हमें यह देखना चाहिए कि समानता किन बातोंमें है। प्रमुख मुसलमान मित्रोंने सिखोंकी माँगकी बात सुनकर मुझे सलाह दी कि सफेद या लाल एक ही रंग रखा जाये। किन्तु यह भी ठीक नही है। लाल और हरे दो रंग तो रहने ही चाहिए जिससे सदा बोध होता रहे कि हमारी एकता बढ़ रही है। राष्ट्रवादी सिखोंके सम्मुख क्या-क्या कठिनाइयाँ हैं, यह मैं जानता हूँ। सिखोंके दलमें सरकारके गुर्गे हैं वे उनमें फूट डालनेके लिए धूर्ततापूर्ण सुझाव दे रहे हैं और सिख स्वभावतः शंकित हैं। सर्वोत्तम यही है कि हम कोई चिन्ता न करें। यदि वे हिन्दुओं या मुसलमानोंके विरुद्ध या सामान्यतः असहयोग आन्दोलनके विरुद्ध कृत्रिम रूपसे खड़ी की गई हर शिकायतके विरोधके लिए कटिबद्ध हो जायें तो उनके लिए कोई भी मंच बाकी न बच रहेगा। राष्ट्रवादी सिखोंको चाहे वे कम हों चाहे ज्यादा, अपना विचार स्थिर कर लेना चाहिए और उनकी प्रतिष्ठा कम करनेवाले लोग चाहे कुछ भी कहते रहें, उससे विचलित न होना चाहिए।

सिखोंका प्रतिनिधित्व

अतः राष्ट्रीय रंगोंके विषयमें सिखोंकी शिकायतको व्यर्थ समझते हुए भी मैं इस स्थितिमें प्रतिनिधित्वके विषयमें उनके भयको उचित मानता हूँ। उन्हें कांग्रेसने यह आश्वासन दे दिया है कि यदि मुसलमान लखनऊ-समझौतेपर हठ पकड़ेंगे तो उस दशामें उनको साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व दे दिया जायेगा। कार्यकारिणी समितिने मुसलमानोंमें फूट डालनेके प्रयासोंके कारण केवल परामर्श रूपमें निर्देश दिये हैं। अतः सिखोंको भी ऐसे ही आश्वासन प्राप्त करनेका अधिकार है। हमें उनको ऐसे आश्वासन देनेमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। यह प्रश्न प्रधानतः पंजाबके तीनों सम्प्रदायोंके आपसी समझौतेका है। समिति तो केवल सहायक निर्देश दे सकती है।

सम्मत वक्तव्य

वाइसरायने अपने साथ मेरी मुलाकातोंके सम्बन्धमें एक वक्तव्य[1] निकाला है जो मुझे भी मान्य है। उस वक्तव्यमें जनताके जानने योग्य सब आवश्यक ब्यौरा है। मैं उसका विवेचन करना नहीं चाहता। मेरे विचारमें उससे इस बातका स्पष्टीकरण हो जाता है कि जिस पश्चात्तापके वक्तव्यको मैंने 'क्षमा-प्रार्थना' कहा है उसका उद्भव केवल मुझसे है। उसकी बात मैंने यह जानकारी मिलनेसे पहले ही सोच ली थी कि मुझे जो भाषण दिखाये गये हैं उनके आधारपर अली भाइयोंपर मुकदमा चलाया जायेगा। इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि मैंने उसका सुझाव अली भाइयोंपर मुकदमा चलाये जानेकी आशंकासे नहीं दिया था; और उनको कैदसे बचानेके खयालसे तो हर्गिज नहीं दिया था। मेरा यह पक्का विश्वास है कि दोनों भाइयोंने यह वक्तव्य देकर अपने ध्येयकी बहुत बड़ी सेवा की है। उन्हें ऐसी सलाह देनेपर मुझे कोई पछतावा नहीं है। लॉर्ड रीडिंगने एक सम्मत वक्तव्य प्रकाशित करनेके सम्बन्धमें मेरे अनुरोधको मान लिया, मैं इसकी भी सराहना करना चाहता हूँ। वक्तव्यकी भाषा और स्वरूपके निर्धारणके विषयमें जो हमारा लम्बा पत्र-व्यवहार[2] चला उसमें मुझे लॉर्ड महोदयका ऐसा कोई दुःख दिखाई नहीं दिया कि मैं किसी प्रासंगिक विगतका उल्लेख न करूँ। मैंने अपनी ओरसे उन्हें सूचना दे दी थी कि किसी भी बातको छिपानेका मेरा विचार नहीं है। अतः जनताके सामने दोनों पक्षोंका पूर्ण वक्तव्य मौजूद है।

कराचीमें भीड़का दुर्व्यवहार

हालाँकि मैंने अभी स्वामी कृष्णानन्दके कारावास-दण्डके कारण उत्तेजित भीड़ द्वारा यूरोपीयोंपर पत्थर फेंकनेका विवरण अखबारोंमें नहीं पढ़ा है, तो भी मैंने अपने सिन्धी मित्रोंसे जो-कुछ सुना है उससे मुझे यही कहना पड़ता है कि पत्थर फेंकनेवालोंने अपने मान्य पवित्र ध्येयका अहित ही किया है। अहिंसाकी प्रतिज्ञाको तोड़कर उन्होंने स्वामीजीका भी अनादर किया है। स्वामीजी निःसन्देह एक लोकप्रिय और निर्भीक कार्यकर्त्ता हैं। उनके व्यवस्थित धरनेका शराबके व्यापारियोंकी बिक्रीपर निश्चित प्रभाव पड़ रहा था। मैंने यह भी सुना है कि उनपर किसीसे मारपीट करनेका झूठा अभियोग लगाया गया था। यह-सब मानते हुए भी जनताका यह सीधा कर्त्तव्य था कि वह पूर्ण संयम रखती। पुलिसने स्वामीजीपर अन्यायपूर्वक मुकदमा चलाया और न्यायाधीशने उन्हें अन्यायपूर्वक दण्ड दिया। इस कारण कुछ निर्दोष यूरोपीयोंसे मारपीट करना अत्यन्त अविचारपूर्ण कार्य है। ऐसी घटनाएँ सविनय अवज्ञाको असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य बना देती है। जिस भीड़ने कराचीमें ऐसा दुर्व्यवहार किया उसे स्वामीजीका मान विदेशी कपड़ेके बहिष्कार, चरखा कातने और कपड़ा बुननेके द्वारा करना चाहिए।

१. देखिए परिशिष्ट ३ ।
२. यह उपलब्ध नहीं है ।

समयका प्रतीक

बम्बईमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी सभामें एक सुखद घटना यह घटी कि एक तेलुगु-भाषी सदस्यने हिन्दुस्तानी जाननेवाले सदस्योंसे हिन्दुस्तानकी भाषामें ही बोलनेका आग्रह किया और तमिल-भाषी सभापतिने इस सुझावका अनुमोदन करते हुए उसी समय अगले वक्तासे हिन्दुस्तानीमें बोलनेका निवेदन किया। यह सुझाव बहुत लोगोंको पसन्द आया और कई वक्ताओंने उसपर अमल किया। द्रविड़ प्रान्तमें अब हिन्दुस्तानी सिखानेवाली बहुत-सी पाठशालाएँ हैं। फिर भी अभी तो बहुत-कुछ करना बाकी है। मुझे आशा है कि जब कमेटीकी अगली बैठक होगी तबतक द्रविड़ सदस्य हिन्दुस्तानी सीखनेमें काफी प्रगति कर लेंगे। कांग्रेसके भावी प्रतिनिधि भी इसका ध्यान रखें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-८-१९२१

२३६. सविनय अवज्ञा

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सभी सदस्योंके मुँहपर 'सविनय अवज्ञा' की चर्चा थी। असलमें यह अवज्ञा कभी आजमाई तो गई नहीं, इस कारण सभी इसे भ्रमवश वर्तमान कालकी व्याधियोंकी रामबाण ओषधि समझकर इसपर रीझे हुए जान पड़ते थे। मुझे विश्वास है कि यदि हम उचित वातावरण बना सकें तो यह रामबाण ओषधि बन सकती है। मनुष्यके लिए व्यक्तिगत रूपसे वैसा वातावरण सदा मौजूद रहता है। इसमें अपवाद यह एक ही स्थिति है जब उनकी सविनय अवज्ञाके फलस्वरूप रक्तपात आवश्यक हो जाये। मुझे इस अपवादका पता सत्याग्रहके दिनोंमें लगा। फिर भी अन्तरात्माकी ऐसी पुकार हो सकती है कि उसकी अवहेलना करनेका साहस हो, चाहे कुछ भी कीमत क्यों न चुकानी पड़े। मुझे वह समय आता साफ दीख रहा है जब मेरे लिए सरकारके बनाये प्रत्येक कानूनकी अवज्ञा करना आवश्यक हो जायेगा, फिर चाहे उससे रक्तपात ही क्यों न हो। जब इस पुकारकी अवज्ञा भगवान्‌की अवज्ञा जँचे तब सविनय अवज्ञा अपरिहार्य कर्त्तव्य बन जाती है।

जन-समूहकी सविनय अवज्ञाका आधार दूसरा ही होता है। उसको केवल शान्त वातावरणमें आजमाया जा सकता है। वातावरणकी यह शान्त शक्ति ज्ञानपर आधारित होनी चाहिए, दुर्बलता और अज्ञानपर नहीं। व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा दूसरोंके हितार्थ हो सकती है और बहुधा होती भी है। जन-समूहकी सविनय अवज्ञा स्वार्थके निमित्त हो सकती है और बहुधा होती भी है, क्योंकि व्यक्ति अपनी सविनय अवज्ञासे व्यक्तिगत लाभकी आशा रखते हैं। इस प्रकार दक्षिण आफ्रिकामें कैलेनबैक[1] और पोलकने[2]

१. हरमान कैलेनबैक, एक जर्मन वास्तुकार और दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके सहयोगी।

२. एच० एस० एल० पोलक, दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके एक निकटतम साथी। **इंडियन ओपिनियन**के सम्पादक। देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४७।

दूसरोंके हितार्थ सविनय अवज्ञा की थी। उन्हें उससे स्वयं कोई लाभ न था। हजारों लोगोंने स्वार्थ-भावसे सविनय अवज्ञा की, क्योंकि उन्हें गिरमिट-मुक्त पुरुषों, उनकी पत्नियों और उनकी वयस्क सन्तानोंपर लगे करके निराकरणकी आशा थी। यदि सत्याग्रही इस सिद्धान्तकी कार्यान्वितिको समझ लें तो जन-समूहकी सविनय अवज्ञामें इतना काफी है।

दक्षिण आफ्रिकामें दो-तीन हजार पुरुषों और कुछ स्त्रियोंके साथ निषिद्ध क्षेत्रमें प्रवेश करते हुए जहाँ मैं गिरफ्तार किया गया था,[१] वह प्रदेश प्रायः उजाड़ था। हमारे दलमें कई पठान और तगड़े लोग थे। हमारे आन्दोलनको दक्षिण आफ्रिकी सरकारसे योग्यताका यही सबसे बड़ा प्रमाणपत्र मिला था। वह जानती थी कि हम जितने कृत-संकल्प हैं उतने ही निरापद भी हैं। मुझे गिरफ्तार करनेवाले लोगोंके टुकड़े-टुकड़े कर डालना उस जन-समुदायके लिए बिलकुल आसान था किन्तु ऐसा करना उन लोगोंके लिए घोर भीरुताका काम होता, यही नहीं बल्कि उससे उनकी ही प्रतिज्ञा झूठी हो जाती और टूट जाती और इसका यह अर्थ होता कि स्वतन्त्रताका वह आन्दोलन छिन्न-भिन्न हो जाता और एक-एक हिन्दुस्तानीको दक्षिण आफ्रिकासे बलात् निष्कासित कर दिया जाता। परन्तु वे लोग साधारण अव्यवस्थित भीड़के लोगोंकी तरह नहीं थे। वे अनुशासित सैनिक थे और उनकी खूबी निहत्थे होनेके कारण और भी बढ़ गई थी। मैं उनसे अलग कर दिया गया था, परन्तु वे तितर-बितर नहीं हुए और न वापस मुड़े। वे अपने गन्तव्य स्थानकी ओर तबतक बढ़ते चले गये जबतक उनमें से हर एकको गिरफ्तार करके जेलमें नहीं डाल दिया गया। जहाँतक मुझे ज्ञान है अनुशासन और अहिंसाका यह एक ऐसा उदाहरण है जिसका इतिहासमें कोई जोड़ नहीं। मुझे ऐसे संयमके बिना भारतमें जन-समूहकी सफल सविनय अवज्ञाकी कोई आशा नहीं बँधती।

हमें यह विचार अपने मनमें से निकाल देना चाहिए कि हम हर गिरफ्तारीपर बड़े-बड़े प्रदर्शन करके सरकारको डरा सकेंगे। इसके विपरीत हमें गिरफ्तारीको असहयोगीके जीवनकी सामान्य शर्त मानकर चलना होगा। क्योंकि हमें गिरफ्तारी और कारावासको वैसे ही अंगीकार करना पड़ेगा जैसे संग्राममें जानेवाला सैनिक मृत्युको अंगीकार करता है। हम सरकारके विरोधको गिरफ्तारीसे बचकर नहीं, बल्कि उसको अपनाकर समाप्त करनेकी आशा करते हैं, भले ही इसके लिए हमें यह दिखाना पड़े कि हम सामूहिक रूपसे गिरफ्तार होने और जेल जानेके लिए तैयार हैं और माना भी यह जाता है कि हम इसके लिए तैयार होंगे। तब सविनय अवज्ञाका निश्चित अर्थ होगा एक निहत्थे पुलिसके सिपाहीके सामने भी आत्मसमर्पण करनेकी इच्छा। हमारी विजय इसीमें है कि हमें हजारोंकी संख्यामें उसी प्रकार जेल ले जाया जाये जैसे मेमने कसाईखानेमें ले जाये जाते हैं। यदि संसारके मेमने स्वेच्छासे कसाईखाने गये होते तो वे कबके कसाईकी छुरीसे बच गये होते। इसके अतिरिक्त सर्वथा निर-

१. गांधीजी ६ नवम्बर, १९१३ को पामफोर्डके पास उस 'महान् कूच' में भारतीय स्त्री-पुरुषों और बच्चोंको लेकर ट्रान्सवालमें प्रवेश करते हुए गिरफ्तार किये गये थे। देखिए खण्ड १२।

पराध गिरफ्तार होनेमें हमारी विजय है। हम जितने अधिक निर्दोष होंगे हमारी शक्ति उतनी ही बड़ी होगी और हमें विजय उतनी ही तीव्र गतिसे मिलेगी।

असल बात यह है कि यह सरकार भीरु है और हम कारावाससे डरते हैं। सरकार हमारे जेलके डरका लाभ उठाती है। यदि हमारे स्त्री-पुरुष जेलको आरोग्य-स्थल समझकर उसका स्वागत करें तो हम जेलमें पड़े हुए अपने प्रियजनोंकी चिन्ता करना छोड़ देंगे; इन जेलोंको हमारे दक्षिण आफ्रिकी देशभाइयोंने तो 'सम्राट्के होटल' उपनाम दिया था।

हम लोग बड़े अरसेसे मनमें सरकारके नियमोंकी अवहेलना करते रहे हैं, और बहुधा लुके-छिपे उनको माननेसे बचते रहे हैं; इस कारण हम अचानक ही सविनय अवज्ञा करनेके योग्य नहीं बन सकते। अवज्ञा सविनय बने इसलिए हमें उसपर अहिंसात्मक ढंगसे और खुल्लमखुल्ला आचरण करना होगा।

पूर्ण सविनय अवज्ञा एक शान्त विद्रोहकी दशा है — वह सभी सरकारी कानूनोंको माननेसे इनकार करनेकी दशा है। यह निश्चय ही सशस्त्र विद्रोहसे अधिक खतरनाक है। क्योंकि सत्याग्रहियोंकी घोर कष्ट सहन करनेकी तत्परताकी दशामें इसका दमन सर्वथा असम्भव है। इसका आधार है यह पूर्ण आस्था कि हममें निर्दोष होनेपर भी कष्ट-सहनकी पूरी क्षमता है। सत्याग्रही बिना शोर-गुल मचाये जेल जाता है तो वह अवश्य ही वातावरणको शान्त बनाता है। प्रतिरोधकी अनुपस्थितिमें अन्यायकारी अन्याय करते-करते थक जाता है। जब पीड़ित व्यक्ति कोई प्रतिरोध नहीं करता तो अन्यायकारीका सारा आनन्द चला जाता है। इतने बड़े पैमानेपर एक आन्दोलन चलानेसे पहले कमसे-कम जनताके प्रतिनिधियोंको सफल सविनय अवज्ञाकी सब शर्तोंका पूरा ज्ञान कर लेना आवश्यक है। जल्दीसे-जल्दी लाभ पहुँचानेवाली औषधियोंमें हमेशा ज्यादा-से-ज्यादा खतरा होता है और उनको बड़ी चतुराईसे काममें लाना पड़ता है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि हम विदेशी कपड़ेका सफल बहिष्कार कर लें तो ऐसा वातावरण तैयार हो जायेगा जिसमें हम इतने बड़े पैमानेपर सविनय अवज्ञा शुरू करनेमें समर्थ हो सकेंगे जिसका विरोध कोई सरकार नहीं कर सकती। अतः मैं उनसे, जो सामूहिक रूपसे सविनय अवज्ञा आरम्भ करनेके लिए आतुर हैं, धीरज रखने और स्वदेशीके प्रचारपर अपना ध्यान कृतसंकल्प होकर केन्द्रित करनेका अनुरोध करना चाहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४–८–१९२१

२३७. पत्र : महादेव देसाईको

अलीगढ़
५ अगस्त, १९२१

भाईश्री महादेव,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम मुझसे मिले नहीं, इससे कोई हानि नही। मेरी शुभेच्छा-में आशीर्वाद तो मिला ही हुआ था। तुम्हें वहाँ कोई कष्ट न होगा और कोई कठिनाई नहीं होगी। मथुरादास[1] और दुर्गाकी स्थिति तो मैं समझता हूँ। उन दोनोंसे मिलनेकी मेरी प्रबल इच्छा थी। किन्तु बम्बईमें यह कैसे हो सकता था? बम्बईने जो-कुछ किया है उसमें प्रयत्नकी तो कोई कमी नहीं रही न?

हम १० तारीखको तो मिलेंगे ही; इसलिए अधिक कुछ नहीं लिखता।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

प्रभुदास[2] आ गया है। स्टोक्स भी साथ है।

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४१६) की फोटो-नकलसे।

२३८. भाषण : मुरादाबादकी सार्वजनिक सभामें[3]

६ अगस्त, १९२१

सज्जनो,

युक्त-प्रान्तमें सरकारकी ओरसे जगह-जगह जो अमन सभाएँ स्थापित की जा रही हैं, मेरी समझमें अबतक नहीं आया कि उनका उद्देश्य क्या है। यदि इनका उद्देश्य वास्तवमें अमन कायम रखना है, तो ये सभाएँ हमारे साथ मिलकर क्यों काम नहीं करतीं? हमारे असहयोग आन्दोलनका वास्तविक उद्देश्य भी तो अमन कायम रखते हुए अपने अभीष्ट स्वराज्यको प्राप्त करना है। जब दोनोंका अभिप्राय एक है तब फिर उक्त सभाओंके अलग अस्तित्वकी क्या आवश्यकता रह जाती है। इसको आप ही विचारकर स्थिर करें। किन्तु हाँ, यदि यह अमन सभाके नामसे लोगोंमें बदअमनी फैलाती हो, लोगोंको अनुचित तैश दिलाती हो और लोग झगड़ा-

१. मथुरादास त्रिकमजी (१८९४–१९५१); गांधीजीकी बहनके पौत्र और उनके अनुयायी।

२. छगनलाल गांधीके पुत्र।

३. मुरादाबादमें गांधीजीने महिला-मण्डल तथा महाराजा थियेटरमें आयोजित सभाओंमें भी भाषण दिये थे।

फसाद बरपा करनेको उद्यत होते हों, और ये सभाएँ अपने नामका दुरुपयोग करके कलंकित होती हों, तो मैं आपसे कहूँगा कि ऐसी अमन सभाओंको दूरसे ही नमस्कार कीजिए। मृगतृष्णाके पीछे मत दौड़िये, जिससे पीछे पछताना न पड़े। कहना मेरा काम है, इतनेपर भी जो सज्जन न समझें, वे स्वतन्त्र हैं। वे अपनी इच्छानुसार काम करें।

आगे गांधीजीने विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार तथा स्वदेशी पहननेपर जोर दिया और कहा:

यद्यपि खादी अभी मँहगे दामोंमें मिलेगी, तो भी मलमलके मुकाबले उसमें किफायत ही रहेगी, क्योंकि जहाँ एक वर्षमें मलमलके आप आठ कुरते फाड़ेंगे वहाँ खादीके चार कुरते भी मुश्किलसे फटेंगे। कई बरससे अनवरत खादी पहननेके कारण यह मेरा पक्का अनुभव है। यदि आप लोगोंने मेरे कथनानुसार सच्चे मनसे स्वदेशी वस्त्र अपनाया, चरखा काता, विदेशी कपड़ोंको शवपर पड़े वस्त्रकी नाई त्याग दिया तो दयामय जगदीश कभी हमारे प्रति अप्रसन्न न रह सकेंगे, शीघ्र ही उनका आसन चलित होगा और स्वराज्य प्राप्त करानेमें वे हमारे सहायक होंगे।

आज, १५–८–१९२१

२३९. नई प्रतिज्ञा

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा बेजवाड़ामें की गई प्रतिज्ञा पूरी हुई कही जा सकती है। प्रतिज्ञामें एक करोड़ रुपया इकट्ठा किये जानेकी बात निश्चित की गई थी, ईश्वरने हमारी उस प्रतिज्ञाको पूरा किया और हिन्दुस्तानकी प्रतिष्ठाको बचा लिया। अब जो दूसरी प्रतिज्ञा ली गई है वह अपेक्षाकृत अधिक कठिन है। ऐसा ही होना चाहिए। हमें ३० सितम्बरसे पहले-पहल विदेशी कपड़ेका सर्वथा त्याग कर देना चाहिए।

इसमें गुजरातका कितना हिस्सा होगा, गुजरातके लिए इसका निश्चय करने जैसी कोई बात नहीं है। सबको विदेशी कपड़ेका पूर्ण बहिष्कार करना होगा। इसलिए इस काममें परस्पर एक-दूसरेसे ज्यादा अथवा कम करनेकी कोई बात नहीं है। विदेशी कपड़ेके आयातको रोकनेका कार्य तभी हो सकता है जब सभी उसका त्याग कर दें। अतएव इसमें गुजरातका योगदान यही है कि प्रत्येक गुजराती विदेशी कपड़ेका त्याग करे।

इस त्यागके लिए हमें गुजराती बोलनेवाले और गुजरातमें रहनेवाले प्रत्येक व्यक्तिके पास पहुँचना चाहिए और उसे प्रभावित करनेका प्रयत्न करना चाहिए। लोगोंको इतना समझाना भी कितना कठिन कार्य है इसका हम अन्दाज लगा सकते हैं। लेकिन इससे क्या हम हार मान लें? विदेशी कपड़ेका त्याग करना हमारे लिए क्या सचमुच बहुत भारी काम है? अपने देशकी अपेक्षा क्या हमें रेशमी और झीने

वस्त्र अधिक प्रिय हैं? हमें स्वदेशीकी स्वराज्य दिलानेकी शक्तिके विषयमें सन्देह भले ही हो फिर भी स्वदेशीके पालनके सम्बन्धमें तो कतई कोई शंका नहीं हो सकती।

इस दृष्टिसे विचार करते हुए हमारा काम बहुत आसान है। पैसा देनेमें हमें संकोच होता था, वकालत छोड़ते समय आजीविकाका प्रश्न उठ खड़ा होता था, सरकारी स्कूलोंको छोड़नेसे शिक्षाके पिछड़ जानेका भय था, लेकिन विदेशी कपड़ेके त्यागमें क्या भय हो सकता है? इससे नुकसान तो हो ही नहीं सकता। जिसका उपयोग नहीं उसे किसलिए इकट्ठा करें? रोग-मुक्त होनेपर दवाईकी बोतल चाहे कितनी ही महँगी क्यों न खरीदी हो, फेंक दी जाती है। मोह मिटनेपर बड़ेसे-बड़े शृंगारको भी हम पल-भरमें तज देते हैं। विदेशी कपड़ेका मोह क्या इतना ज्यादा है कि हम उसे छोड़ ही नहीं सकते? मैं आशा करता हूँ कि विदेशी कपड़ेको खरीदनेमें खर्च किये गये पैसोंका विचार कोई नही करेगा। उसकी कीमतका विचार करेंगें तो हम कंजूसीका पाप करेंगे। कंजूस माँ बालकसे बर्तनमें बची खुराकको खा जानेका आग्रह करके उसे बीमार कर देती है। असली किफायत खुराकको फेंक देनेमें ही है। उसी तरह असली किफायत विदेशी कपड़ेको त्याग देनेमें ही है।

विदेशी कपड़ा त्यागते ही झूठी शान खत्म हो जाती है और सादगी आ जाती है। खादीके कपड़े टिकाऊ होनेके कारण बहुत दिन चलते हैं। जिसका हर महीने सौ रुपया खर्च होता था उसका अब पूरे सालमें इतना खर्च नहीं होता। तब उनके लिए अपनी हजारोंकी पोशाक फेंक देनेमें कोई तकलीफकी बात नहीं है। विदेशी कपड़ेका आज ही त्याग करके हम देशका करोड़ों रुपया बचा सकते हैं; अतः लाखों अथवा करोड़ों रुपयोंके कपड़ेको फेंक देना दूरन्देशीकी निशानी है।

स्वदेशी हमारी अन्तिम मंजिल है। उसमें अगर हम हार गये तो हमें इस वर्ष स्वराज्य प्राप्त करनेकी उम्मीद छोड़ देनी होगी। इसलिए मुझे आशा है कि गुजरात अब स्वदेशीके कार्यको तुरन्त हाथमें लेकर अपने कर्त्तव्यको पूरा करेगा।

यद्यपि विदेशी कपड़ेका त्याग करनेका सबका कर्त्तव्य एक समान है तो भी कपड़ा तैयार करनेमें गुजरात सबसे आगे जा सकता है। प्रत्येक स्कूल और घर अगर कातने-बुननेके काममें जुट जायें तो हमें कपड़ेकी कभी तंगी नहीं होगी। गुजरात खादीमय नहीं बनता तो हम जीती हुई बाजी हार जायेंगे।

आइये, हम स्वदेशीका मतलब समझ लें। उससे हम विदेशोंको जानेवाली साठ करोड़ रुपयेकी राशिको बचाना चाहते हैं। इतना ही नहीं बल्कि करोड़ों स्त्री-पुरुषों द्वारा उतने रुपयेका कपड़ा तैयार करवाकर हम उनके घरोंमें करोड़ों रुपया भरना चाहते हैं। ऐसा करके हम हिन्दुस्तानसे भुखमरीका बहिष्कार करना चाहते हैं। इसीसे विदेशी कपड़ेके पूर्ण बहिष्कारको मैं भुखमरीका बहिष्कार मानता हूँ। इसके अतिरिक्त हमारे यहाँ सदाव्रतकी प्रथा बढ़ती जा रही है। लाखों व्यक्ति आलसी बनकर केवल भिक्षापर रहकर भगवेको लजाते हैं। समर्थ व्यक्ति अगर काम नहीं करता तो उसे खानेका भी अधिकार नहीं है। आज हमारे पास ऐसा कोई काम नहीं है जो प्रत्येक भिक्षुकको सौंपा जा सके। जब देशमें चरखे और करघेकी प्रतिष्ठा हो जायेगी तब केवल प्रजाको ज्ञान देनेवाले ब्राह्मण और फकीर ही भीख माँगेंगे। प्रत्येक असमर्थ

और अपंगको जनता प्रेमपूर्वक भोजन करायेगी, तब धूर्त लोग साधुके वेशमें घूम-घूमकर भिक्षा नहीं माँग सकेंगे। इस तरह स्वदेशीका अर्थ है ढोंगका नाश और साधुताका प्रभाव।

मैं आशा करता हूँ कि इतना समझ लेनेके बाद गुजरात हर घरमें चरखे, करघे और रुई पींजनेकी प्रवृत्तिको तुरन्त बढ़ावा देगा और इस तरह अपनी तथा हिन्दुस्तानकी सेवा करेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७–८–१९२१

२४०. टिप्पणियाँ

बम्बईने कमाल कर दिया

बम्बईने तिलक महाराजको सुन्दर ढंगसे श्रद्धांजलि अर्पित की है। रविवार, ३१ जुलाईको सेठ हाजी यूसुफ सोबानीकी जमीनपर एक यज्ञ हुआ जिसमें लगभग दो लाख व्यक्तियोंने अपनी मलिनताको जला डाला। कपड़ोंकी होली करनेके सम्बन्धमें जिन व्यक्तियोंके दिलोंमें शंका थी, ऐसे असंख्य व्यक्तियोंकी शंका दूर हो गई। कमसे-कम लगभग डेढ़ लाख पोशाकें जलाई गईं। जब यज्ञ शुरू हुआ तब जो लोग विदेशी काली टोपियाँ पहनकर आये हुए थे उन्हें शर्म आई और टोपियोंकी बौछार होने लगी।

उस दिन लोगोंमें जो उत्साह था वह अवर्णनीय है। ऐसा लगता था मानो सारा बम्बई इस मैदानमें सिमट आया है। सफेद खादीकी टोपियों और खादीके कपड़ोंसे सज्जित स्त्री-पुरुषोंसे मैदान खचाखच भर गया था। उस दिन जो अग्नि प्रगट हुई थी वह हिन्दुस्तानके हृदयमें आज जो आग सुलग रही है उसकी परिचायक थी। जबतक हमारे घरोंमें एक अंगुल भी विदेशी कपड़ा है तबतक यह अग्नि पूरी तरह शान्त नहीं होगी। मेरी कामना है कि सिर्फ इस पवित्र मैदानमें ही नहीं वरन हिन्दुस्तानके हर गाँव और हर रास्तेमें यह अग्नि प्रगट हो और उसमें विदेशी कपड़े रूपी हमारी मलिनता भस्म हो जाये। विदेशी कपड़े त्यागकर और इस तरह पवित्र होकर बम्बईके स्त्री-पुरुष और बच्चे पवित्र खादी पहनकर चौपाटीके मैदानमें जिस स्थानपर तिलक महाराजका अग्नि-संस्कार किया गया था, वहाँ गये और उन्होंने उस पवित्र आत्माकी पूजा की तथा उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की। इतने सारे लोग इतनी पवित्रतासे कभी किसी चक्रवर्तीकी पुण्य-तिथिपर भी इकट्ठे नहीं हुए होंगे।

बम्बईने जूनमें हिन्दुस्तानकी प्रतिज्ञाको पूरा करनेके निमित्त भारी दान देकर अपनी मनोरमता सिद्ध की थी और इस एक महीनेमें अगले कदमके लिए पृष्ठभूमि तैयार करके वह और भी मनोरम बन गई है।

लेकिन अभी बहुत-कुछ करना बाकी है। बम्बईने विदेशी कपड़े रूपी कचरेको पूरी तरह साफ नहीं किया है। विदेशी कपड़ा देनेवाले बहनों और भाइयोंने आधे मनसे कपड़ा दिया है। जबतक सारे मैलको निकाल बाहर नहीं किया जाता तबतक

पूरी शुद्धि नहीं होगी; और जिस तरह थोड़ा-सा मैल भी जहरीली हवा पैदा कर सकता है उसी तरह थोड़ा-सा बचा हुआ विदेशी कपड़ा भी भारी नुकसान पहुँचा सकता है। इसलिए मुझे उम्मीद है कि क्या बम्बई और क्या अन्य शहर, सभी जगहोंसे विदेशी कपड़े रूपी मैलको झाड़-पोछकर निकाल दिया जायेगा। हमारे घरोंसे यह मैल जबतक पूरी तरह साफ नहीं हो जाता तबतक विदेशी कपड़े रूपी महामारीके फिरसे फैलनेका भय बना रहेगा। यदि हम स्वराज्य प्राप्त करना ही चाहते हैं तो विदेशी कपड़ा हमें हमेशाके लिए असह्य होना चाहिए। और यह बात कपड़ेको जान-बूझकर जलानेसे ही उत्पन्न हो सकती है।

जय अथवा पराजय

बहुत समय पहले एक पत्र-लेखकने मुझसे पूछा था कि दक्षिण आफ्रिकामें जैसी विजय मिली थी, क्या यहाँकी विजय भी वैसी ही होगी। मुझे इस प्रश्नमें जितनी कटुता दिखाई दी उतना ही अज्ञान भी दिखाई पड़ा। दक्षिण आफ्रिकाका सवाल क्या था, इसकी पत्र-लेखकको कोई जानकारी ही न थी। दक्षिण आफ्रिकामें लड़ाई अमुक कानूनके विरुद्ध थी। उसमें हमने सम्पूर्ण विजय पाई। एशियाई अधिनियम रद्द करो, प्रवास सम्बन्धी अधिनियममें से रंगभेद निकालो, हिन्दू और मुस्लिम विवाहोंको मान्यता प्रदान करो, और तीन पौंडी करको रद्द करो — दक्षिण आफ्रिकी सरकारके सम्मुख हमारी एकके-बाद एक उपर्युक्त माँग थी और वहाँकी सरकारको ये सब माँगें स्वीकार करनी पड़ीं।[1]

इसे मैं पूरी विजय मानता हूँ। लेकिन सबसे बड़ी विजय तो यह हुई कि सत्याग्रहके कारण ही भारतीय जनता दक्षिण आफ्रिकामें अपने पैर जमा सकी। इसीसे अन्य उपनिवेशोंमें भारतीयोंपर होनेवाला आक्रमण कुछ धीमा पड़ गया। इसीसे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंको समस्त संसारने जाना। एशियाई अधिनियम भारतीयोंका समूल नाश करनेकी दिशामें पहला कदम था। उसके अस्तित्वमें आते ही हमने उसे उखाड़ फेंका। ठीक यही बात यहाँकी लड़ाईके सम्बन्धमें समझनी चाहिए। खिलाफतकी माँग स्वीकृत हो जानेके बाद खिलाफतपर कभी कोई संकट नहीं आयेगा, सो बात नहीं है। स्वराज्य मिलनेके बाद हम फिर कभी उसे नहीं खोयेंगे, ऐसी बात नहीं है। अमुक वस्तुको हम तबतक अपने पास रख सकते हैं जबतक उस वस्तुको प्राप्त करनेमें सहायक साधन हमारे पास मौजूद हैं। आत्मबलसे प्राप्त की हुई वस्तुको हम आत्मबलके क्षीण हो जानेपर अवश्य खो बैठेंगे। संयमसे प्राप्त आरोग्य नियमोंका उल्लंघन करने और मनमाना भोजन करनेसे तुरन्त नष्ट हो जायेगा।

सत्याग्रह और उसकी शाखा असहयोग ऐसे शस्त्र हैं जिनके उपयोगसे पराजयकी कोई गुंजाइश ही नहीं है। जो मृत्यु-पर्यंत लड़ते हैं उनकी पराजय कैसी? जीवित व्यक्तिका 'पराजित' कहलाना उसकी पराजय है। रणक्षेत्रमें काम आये योद्धाको पराजित कौन कह सकता है? जो सत्याग्रही अपने आग्रहको छोड़ता ही नहीं उसे

१. देखिए खण्ड १२।

पराजित करनेवाला इस जगत्में कोई है ही नहीं। स्वयं आत्मा ही अपना मित्र और शत्रु दोनों है।

कराचीमें शान्तिभंग

कराचीमें स्वामी कृष्णानन्दको गिरफ्तार करके जेलमें ठूँस दिया गया। स्वामी कृष्णानन्द लोकप्रिय थे। उन्होंने मद्यनिषेधकी दिशामें अच्छा काम किया था। मुझे बताया गया है कि उनपर झूठा आरोप लगाया गया था। इसमें सन्देह नही कि यह सब लोगोंके रोष और दुःखका कारण था, लेकिन असहयोगने हमें अपने रोषका सदुपयोग करना सिखाया है। यदि लोगोंके दिलोंमें स्वामी कृष्णानन्दके प्रति सच्चा प्रम है तो उन्हें शराब छोड़ देनी चाहिए, शराबकी दुकानोंपर शान्तिपूर्वक धरना देना चाहिए, विदेशी कपड़ोंको जला देना चाहिए, चरखा और करघा चलाना चाहिए तथा खादीका उत्पादन करना चाहिए। ऐसा करके स्वराज्य प्राप्त करें और स्वामीको छुड़वायें अथवा स्वामीके समान कार्य करके जेल-महलमें जा विराजें। लेकिन कुछ-एक लोगोंने इसके विपरीत किया और रास्तेसे गुजरते हुए अंग्रेजोंपर पत्थर फेंके। उससे स्वामी तो नहीं छूटे अलबत्ता स्वराज्य कुछ दूर चला गया। स्वराज्य तो आज ही मिलना चाहिए लेकिन नहीं मिलता; क्योंकि हम अपने क्रोधको नहीं रोक पाते। स्वराज्य मिलनेकी सबसे बड़ी शर्तको हम भंग करें और स्वराज्यकी उम्मीद करें, यह कैसे हो सकता है? कराचीकी कांग्रेसको और खिलाफतके कार्यकर्त्ताओंको मेरी सलाह है कि अपराधियोंको ढूँढ़ निकालें और उनसे पश्चात्ताप करवायें। इस तरहके शान्तिभंगके कारण कानूनकी सविनय अवज्ञाको आरम्भ करनेकी बात भी दूर होती चली जाती है। या तो हममें मार-धाड़को रोकनेकी शक्ति आनी चाहिए अन्यथा उसे सरकार रोकेगी। मार-धाड़को रोकनेके लिए जबतक हमें सरकारपर निर्भर रहना पड़ता है तबतक समाजका शान्तिप्रिय वर्ग स्वतन्त्रताकी कामना ही नहीं करेगा, यह बात एक अनुभवहीन व्यक्तिको भी समझ लेनी चाहिए। और जबतक आम जनतामें स्वतन्त्रताकी तीव्र भावना उत्पन्न नहीं होती तबतक स्वराज्य असम्भव है।

हिन्दू-मुसलमान

आतरसुम्बाके बनिये और मुसलमान छोटी-सी बातपर लड़ पड़े। वहाँ एक मुस्लिम महिलाका घर हिन्दुओंके मन्दिरके पास है। वह महिला बेचारी शान्तिके साथ अपने घरमें रहती थी। धीरे-धीरे मन्दिरके न्यासी बनियोंने उसकी जमीनपर कब्जा करना चाहा। महिला बेचारी कुछ खीज उठी; उसने कुछ कह दिया। इसपर बनिये क्रोधित हो उठे। उन्होंने उस महिलाको गालियाँ दीं और इस तरह उसका अपमान किया। महिलाने वहाँ रहनेवाले मुसलमानोंसे फरियाद की, मुसलमान खीज उठे। उन्होंने बनियोंको चुन-चुनकर मारा। श्री अब्बास तैयबजीको इसकी खबर लगी। उन्होंने श्री मोहनलाल पण्ड्याको शान्ति स्थापित करनेके लिए भेजा। दोनों पक्षोंने उनकी बात सुनी और इस तरह झगड़ा शान्त हुआ। मुसलमानोंने जब बनियोंपर हमला किया तब उनमें अपना बचाव करनेकी शक्ति भी न थी इससे वे सब घरोंमें घुस गये। इस घटनाके बारेमें मैंने जैसा सुना ठीक वैसा ही लिखा है। लेकिन दोनों कौमोंके बीच

वैर इसी तरह पनपा और बढ़ा। उपर्युक्त महिलाको सताने, उसकी जमीनपर कब्जा जमानेमें अपराध बनियोंका था। महिलाने अगर कोई भूल की भी थी तो बनियोंका फर्ज था कि वे उसे बरदाश्त करते; इसके विपरीत उन्होंने एक चींटीके विरुद्ध सेना लेकर चढ़ाई कर दी। मुसलमानोंके दोषको मैं समझ सकता हूँ। लेकिन उन्होंने गम्भीर भूल की। उनका फर्ज था कि जिन बनियोंने अपराध किया था उन्हें ढूँढ़ निकालते और पंचोंके सामने ले जाते। पंच न मिलते तो उन्हें पड़ोसकी कांग्रेस कमेटी अथवा खिलाफत समितिके सम्मुख पेश करना चाहिए था और राहत प्राप्त करनी चाहिए थी। वैसा न करके उन्होंने समस्त बनियोंको सजा देनेका अन्याय किया और जो अपराध बनियोंने महिलाके प्रति किया था वही अपराध मुसलमानोंने बनियोंके प्रति किया। सौभाग्यसे श्री मोहनलाल पण्ड्या वहाँ पहुँच गये और झगड़ा निपट गया। इसमें दोनों पक्षके अपराधियोंने दुर्बलको दबानेकी नीतिको पसन्द किया। जबतक एक भी पक्ष ऐसी हरकत करता है तबतक झगड़ेको जड़मूलसे नष्ट नहीं किया जा सकता। स्वराज्यका असली अर्थ यही है कि निर्बलकी रक्षा करें और बलवानसे न डरें। बनियोंको चाहिए था कि वे भूलको स्वीकार करते और तिसपर भी अगर मुसलमान उन्हें मारते तो मारको सहन कर लेते। घरोंमें घुस जानेका मतलब यह हुआ कि वे दुर्बल हैं और स्वराज्यके अयोग्य हैं। इसमें सन्देह नही कि किसी समय हमें मार खानी पड़ेगी। हर बार भयके कारण घरोंमें घुस जाना, यह कोई स्वराज्यका लक्षण नहीं है। शान्तिमय असहयोग जड़ी-बूटी है। उन्हें मुसलमान भाइयोंको शान्तिसे समझानेकी नीति अपनानी चाहिए थी। शान्ति अर्थात् कायरता नहीं, शान्ति अर्थात् मार पड़नेपर भी निर्भय हो उसका विरोध न कर उसे सहन करनेकी शक्ति। शान्तिमें जो बल है वह तलवारमें नहीं है, यह सत्य बात ऐसी है जिसे प्रत्येक व्यक्ति सोच-विचार करनेपर भली-भाँति समझ सकता है।

भोजा भगत मोची थे?

मास्टर भोजाजी और एक अन्य सज्जनने पत्र लिखकर मुझे बताया है कि भोजा भगत लेऊवा कणबी होने चाहिए। एक भाईने निश्चयपूर्वक कहा है कि वे कणबी ही थे। अपनी इस मान्यताके लिए कि वे मोची थे मेरे पास सिवाय इसके कोई प्रमाण नहीं है कि बचपनमें शिक्षाके दौरान उनके एक सम्बन्धी किसी व्यक्तिको मेरे पास लाये थे। उनके उस सम्बन्धीसे मैंने यह भी पूछा था कि 'क्या आप अब भी मोचीका धन्धा करते हैं?' जहाँतक मुझे ध्यान है उन्होंने इसका उत्तर नकारात्मक दिया था। लेकिन भोजा भगत मोची न थे, ऐसा उन्होंने नहीं कहा। अगर मैंने भूल की है तो पाठक मुझे क्षमा करेंगे। मुझे विश्वास है, मैंने उनपर मोची होनेका जो आरोप लगाया है उससे उनकी आत्मा दुःखी नहीं होगी। मेरा लेख लिखनेका जो आशय था, वह इस भूलके बावजूद कायम है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-८-१९२१

२४१. पत्र : महादेव देसाईको

लखनऊ जाते हुए
रविवार [७ अगस्त, १९२१][1]

भाईश्री महादेव,

लखनऊ पहुँचनेसे पहले यह पत्र लिख रहा हूँ। वहाँ[2] बुधवारके प्रातः पहुँचकर उसी रातको आरा रवाना हो जाना है।

मैं जोज़ेफकी गिरफ्तारीकी खबर मिलनेकी राह देख रहा हूँ। मुझे लग रहा है कि रंगा अय्यर अकेले नहीं रहने चाहिए।

लोगोंकी जय-जयकारसे तंग आ रहा हूँ।

मेरे लिए पेड़े, सोडा पड़ी पूड़ियाँ और मीठी टिकियाँ (गोल पापड़ी) बन सकें तो बनवा लेना। इस बार यात्रामें मेरे पास पेड़े ही हैं और उनके भी समाप्त होनेकी सम्भावना है। और सफर लम्बा है। सम्भव है, वहाँ बकरीके दूधसे बनाया हुआ घी सुगमतासे न मिल सके। पेड़े ही बन सकें तो भी ठीक है। हर जगहसे टोपियाँ खूब मिल रही हैं।

वालजीको[3] तुम्हें 'यंग इंडिया' के प्रूफ भेजनेके लिए लिख दिया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२१) की फोटो-नकलसे।

२४२. भाषण : लखनऊमें[4]

७ अगस्त, १९२१

महात्माजीने अपने भाषणमें अहिंसात्मक असहयोग तथा हिन्दू मुसलमानोंकी एकता-पर अधिक जोर दिया। उन्होंने कहा कि मैं आप लोगोंसे इतना ही कहता हूँ कि किसी प्रकारका असन्तोष तथा उद्दण्डता हम लोगोंके मन्तव्यमें बाधक होगी। विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार ही खिलाफतकी बुराइयोंको हटाने तथा अंकाराकी मददके लिए एकमात्र

१. गांधीजी अलीगढ़से इसी दिन लखनऊ पहुँचे थे और उस दिन रविवार था।

२. इलाहाबाद।

३. वालजी गोविन्दजी देसाई, कुछ समयतक गुजरात कालेज, अहमदाबादमें अंग्रेजीके प्राध्यापक; नौकरीसे त्यागपत्र देकर गांधीजीके साथ हो गये। गांधीजीकी अनेक पुस्तकोंके अनुवादक।

४. अमीनुद्दौला पार्कमें आयोजित सार्वजनिक सभामें। सभामें लगभग एक लाख लोग थे। मौलाना मुहम्मद अली भी उपस्थित थे।

उपाय है। आप लोग संयुक्त प्रान्तकी सरकारकी ज्यादतियोंको देखिए। यह सूबा इस दमन नीतिमें अन्य सूबोंसे बढ़ा-चढ़ा है। किन्तु फिर भी मैं शान्तिपूर्वक रहनेके लिए ही आप लोगोंसे कहूँगा। यदि आप लोग पचास हजार ऐसे काम करनेवालों की एक फौज तैयार कर लें जो स्वतन्त्रताकी रक्षाका फाटक बननेको तैयार रहे तो मैं आशा करता हूँ कि संसारकी कोई फौज इसे न हरा सकेगी, और तीन ही महीनेके अन्तमें या तो इस सरकारको सुधार देगी या समाप्त कर देगी। मेरा फिरसे यही कहना है कि हिन्दू मुसलमानोंकी एकतापर बड़ा ध्यान रखना चाहिए। दोनोंसे मेरा यही कहना है कि एक दूसरेके साथ सहानुभूति रखें। आनेवाली बकरीदपर कोई दंगा न होने पाये। हिन्दुओंसे मेरा यह कहना है कि यदि वे गौओंको बचाना चाहते हैं तो उन्हें चाहिए कि बिना किसी विचार या लालचके खिलाफतके मामलेमें मुसलमानोंकी मदद करें।

आज, १०–८–१९२१

२४३. काठियावाड़के राजा-महाराजाओंसे

लखनऊ
सोमवार, श्रावण [८ अगस्त, १९२१]

महोदय,

मैंने कई बार आपको दो शब्द लिखनेका विचार किया; किन्तु लिखा नहीं। किन्तु कुछ बातें सुनकर और जानकर अब मैं अपने विचार आपके सामने रखना अपना धर्म समझता हूँ।

कदाचित् आपसे यह कहना कि काठियावाड़से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध है, अनावश्यक है। किन्तु वहाँ जन्म लेनेके कारण ही मैं काठियावाड़से बँधा हुआ नहीं हूँ। वहाँके तीन-तीन राज्योंमें मेरे पिताश्रीने मुख्य मन्त्रीकी तरह काम किया था। मेरे चाचाने एक राज्यमें और दूसरेमें मेरे पितामहने भी यही पद सँभाला था। गांधी-परिवारके अनेक व्यक्तियोंने काठियावाड़के राज्योमें नौकरी करके निर्वाह किया है। इसलिए मेरा आपसे विशेष नाता है। आपके प्रति मेरा विशेष कर्त्तव्य है।

अतएव मैं जब काठियावाड़के किसी भी राज्यकी स्वेच्छाचारिताके विषयमें कुछ सुनता हूँ, तब मेरे हृदयको बड़ा दुःख होता है। काठियावाड़को मैं शूरवीरोंकी भूमि समझता हूँ और मैं यह आशा लगाये हूँ कि स्वराज्य-यज्ञमें काठियावाड़ अपना पूरा हिस्सा अदा कर अपना तथा भारत-भूमिका मुख उज्ज्वल करेगा।

'स्वराज्य' शब्दको सुनकर आप चौंकिए नहीं। मैं चाहता हूँ कि 'स्वराज्य' और 'असहयोग' इन नामोंसे आप न चौंकें। जो लोग यह कहते हैं कि यह आन्दोलन तो अराजकता और राजद्रोह फैलानेवाला है, इससे देशका सत्यानाश हो जायेगा, उन्हें ऐसा कहने दीजिए। परन्तु यह मानकर कि वे अज्ञानवश ऐसा कहते हैं अपने मित्रोंके सामने भी मेरी स्थिति स्पष्ट कीजिए।

हमारे शास्त्र यह सिखाते है कि अपने प्राणोंकी आहुति देकर भी अन्यायका सामना करना चाहिए। मेरे पूज्य पिताजीने अपने चरित्र द्वारा मुझे यही शिक्षा दी है। लोग साहस-सम्पन्न हों तो इससे देशकी हानि नहीं होगी।

किन्तु मैंने यह पत्र स्वराज्यके विषयमें लिखनेके उद्देश्यसे शुरू नहीं किया है। मेरे स्वराज्य विषयक विचार आपकी दृष्टिसे ओझल न रह जायें इसलिए ऊपरके वाक्य लिख दिये हैं।

आपके राज्योंके विषयमें अनेक लेख मेरे पास आये हैं। कितनी ही शिकायतें मैंने जबानी भी सुनी हैं। परन्तु अबतक मैंने उनमें से कुछ भी प्रकाशित करना उचित न समझा। मैं यही आशा लगाये रहा कि अन्तमें सब ठीक हो जायेगा, और अब भी मेरा यही खयाल है। बड़े साम्राज्यकी स्वेच्छाचारिता जहाँ एक बार नष्ट हुई कि छोटे-छोटे राज्योंकी मनमानी भी उसके साथ बन्द हो जायेगी। आत्म-शुद्धि एक ऐसी वस्तु है जिसकी जड़ जमनेमें कुछ समय लगता है। परन्तु जड़ जम जानेपर उसके फैलनेमें विलम्ब नहीं लगता।

पर, अब तो मैं सुनता हूँ कि कोई-कोई राज्य चरखेका उपहास करता है, कोई उसे एक रोग समझकर मिटानेकी इच्छा रखता है, कोई 'स्वदेशी' जैसे शाश्वत आन्दोलनको रोकनेके लिए लोगोंको अनुचित रीतिसे दबाता है, कोई खादी पहननेके खिलाफ उठ खड़ा होता है और खादीकी टोपी पहननेको 'जुर्म' मानता है। इन बातोंपर विश्वास करते हुए मुझे क्षोभ होता है। परन्तु मेरे पास इसके इतने प्रमाण मौजूद है कि ये सारी बातें झूठ नहीं हो सकतीं।

काठियावाड़की धरती ऐसी [उपजाऊ] है कि वहाँके किसी भी आदमीको बाहर जानेकी जरूरत नहीं पड़नी चाहिए। कोई व्यक्ति बड़ा व्यापार शुरू करनेकी हिम्मत करे, तो वह स्तुत्य है। किन्तु ऐसे सैकड़ों बल्कि हजारों काठियावाड़ी मेरे सम्पर्कमें आये हैं जिन्हें केवल आजीविकाके अभावमें काठियावाड़ छोड़ना पड़ा है। यह बात मुझे सालती है और चाहता हूँ कि आपको भी साले। काठियावाड़के मजबूत काठीवाले खूबसूरत ग्रामीणोंके घरोंमें पहले जो तेज दिखाई देता था वह तेज मुझे अपनी इस बारकी यात्रामें दिखाई नहीं दिया। मुझे संवत् ३५ के[1] अकालके पहले गाँवोंमें दूध-घीकी बहुलता देखनेकी याद है। पलीसे घी परसना तो कंजूसी मानी जाती थी। मुझे बचपनमें काठियावाड़ी ऊँची-पूरी देहाती बहनोंके हाथों चमचम करते हुए कटोरोंमें गाढ़ा मठा पीनेका स्मरण है।

आज तो मठेके नाम सफेद पानी दिखता है; घीकी कुप्पियाँ अब नहीं दिखतीं; चम्मच दो चम्मच घी दिख जाये तो गनीमत है। समृद्धिके समाप्त होनेसे लोग दीनताका अनुभव करने लगे हैं और प्रान्त छोड़कर बाहर भागने लगे हैं।

यह निश्चय जानिए कि यदि राजा-महाराजा मदद करें तो चरखों और करघोंके द्वारा काठियावाड़में पहलेसे भी अधिक जान आ जाये। काठियावाड़की आबादी छब्बीस लाख गिनी जाती है। वहाँ पाँच लाख चरखे आसानीसे चल सकते हैं। इससे प्रति

१. विक्रम संवत् १९३५ अर्थात् ईसवी सन् १८७९-८०।

वर्ष कमसे-कम साढ़े सात लाखकी आमदनी हो सकती है। यदि काठियावाड़की बहनें केवल आठ ही महीने भजन गाते हुए चरखा कातें तो हर साल साठ लाख रुपये पैदा कर सकती हैं। इसके लिए आपको एक पाई भी खर्च नहीं करनी पड़ेगी। ऐसे आसान उपायसे यदि काठियावाड़के लोग धन कमा सकें तो क्या आप उसको बुरा मानेंगे? क्या इसका मजाक उड़ायेंगे?

यदि शरीरपर मोटी खादीकी बंडी और सिरपर बड़ी पगड़ी बाँधनेवाले काठियावाड़की मेघवाल जातिके लोगोंमें से एक लाख व्यक्ति भी करघे चलाने लगें तो वे हर महीने कमसे-कम बीस लाख रुपया कमा सकते हैं। यदि इस तरह आठ महीने बुनें तो साल-भरमें एक करोड़ साठ लाख रुपया घरमें आये। क्या आप दीर्घदृष्टिसे देख समझकर इतनी बरकत देनेवाले उद्योगको पूरा-पूरा प्रोत्साहन नहीं देंगे?

आपसे तो मैं यह आशा करता हूँ कि आप अपने दरबारमें भी दीन-हीन लोगों द्वारा बुनी हुई खादीकी प्रतिष्ठा करेंगे। दरबारी पोशाक खादीकी हो और आप स्वयं भी अपनी प्रजाकी बनाई खादी पहनकर भूषित हों।

काठियावाड़की प्रजा तो भूखो मरे और मैनचेस्टर अथवा जापानके लोग आपके पैसोंपर गुलछर्रे उड़ाये, यह राज-न्याय नहीं है। आपके शास्त्रवेत्ता लोग आपको यह बात समझायेंगे। यदि आपको मलमल चाहिए तो अच्छी रुई पैदा कराइए, महीन सूत कतवाइए और कपड़ा बुननेवालों को प्रोत्साहन दीजिए।

काठियावाड़के पहाड़ोंमें रहनेवाले राजाओंको आमोद-प्रमोदकी क्या आवश्यकता है? कुत्तोंके झुण्ड वे अपने पास किसलिए रखें? वे तो प्रजाके लिए अपने प्राण दें। प्रजाके दुःखसे दुखी हों और प्रजाको खिलाकर ही आप खायें। राजा बनिया बन जाये और ब्राह्मण नाटक करते फिरें तो धर्मकी शिक्षा कौन दे और रक्षा कौन करे?

मैं यह नहीं चाहता कि काठियावाड़के लोग आपके राज्योंमें रहते हुए अंग्रेजी राज्यके खिलाफ आन्दोलन करें और आपकी स्थितिको नाजुक बनायें। आपकी नाजुक स्थिति मेरे ध्यानमें है। आपके प्रति मेरी सहानुभूति है। आप भले ही असहयोगी न हों, परन्तु मैं आपसे नम्रतापूर्वक अनुरोध करता हूँ कि आप स्वदेशीको एक विशेष अंग ही समझिए और प्रजाको सहायता देकर स्वतन्त्रतापूर्वक उसका उत्कर्ष कीजिए।

और भी एक निवेदन है। काठियावाड़में शराबकी दुकानोंका होना कैसे सहन हो सकता है? क्या आपको भी शराबके द्वारा कुछ आमदनी करनेकी आवश्यकता है? जब प्रजा खुद ही शराबखोरी छोड़नेके लिए प्रयत्न कर रही है तब मैं तो आपके दरबारसे भी शराबकी बोतलोंके बहिष्कारकी आशा रखता हूँ। श्री रामचन्द्रने एक धोबीकी बात सुनकर सती सीताका त्याग कर दिया था, तब अपनी प्रजाकी इच्छाको जानकर क्या आप शराबको काठियावाड़से नहीं निकाल सकते?

और आपकी ट्रेनोंमें अन्त्यजोंके लिए अलग डिब्बे हों, उन्हें टिकट मिलनेमें कठिनाई हो, वे धक्के खायें, यह भी कैसे सहन हो सकता है? लोगोंको एकत्र करके आप उनके साथ विचार कीजिए और उन्हें समझाइए कि भंगी-चमारोंके साथ जो

दुर्व्यवहार हो रहा है वह दया-धर्म नहीं है, वह तो अत्याचार है। इस तरह आप उन बेचारोंको सुखी कीजिए और उनके दिलसे निकलनेवाली दुआ लीजिए।

और भी बहुत-सी बातें सुनी हैं। पर उन बातोंको मैं आज नहीं उखाड़ना चाहता। वे पुरानी बातें हैं। मैंने तो सिर्फ यही प्रार्थना करनेके लिए यह पत्र लिखा है कि आजकल जो शुद्ध प्राण-वायु बह रहा है उसकी गतिको न रोकिए। मैंने प्रेम-भावसे जो-कुछ लिखा है आप समझिए और प्रेमपूर्वक पढ़कर मेरे विनम्र सुझावोंको कार्यरूपमें परिणत कीजिए; बस यही निवेदन है। ईश्वरसे प्रार्थना है कि वह आपको न्यायवृत्ति दे और काठियावाड़के राजा-प्रजा नीति-मार्गपर चलते हुए सुखी रहें।

आपका सेवक,
मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १४–८–१९२१

२४४. सम्पादकके प्रश्नोंके उत्तर[1]

८ अगस्त, १९२१

'इंडियन डेली टेलीग्राफ' के सम्पादक श्री मैकेंजीने श्री गांधीको उत्तर देनेके लिए पाँच प्रश्न भेजे हैं:

(१) आपके विचारों और लॉर्ड रीडिंगके विचारोंमें जो अन्तर है वह समय बीतनेके साथ-साथ बढ़ेगा या कम होगा, इस सम्बन्धमें आपका क्या खयाल है?

(२) आप स्वराज्यकी स्थापना कबतक करनेकी आशा करते हैं?

(३) क्या आप समझते हैं कि प्रधान मन्त्रीका कार्य पहलेकी अपेक्षा अब अधिक राक्षसी या दुष्टतापूर्ण है?

(४) आप अपने देशमें उत्पन्न और शिक्षित मन्त्रियोंको, जो सुधारोंके अन्तर्गत बनी परिषदोंके द्वारा भारतमें पूर्ण उत्तरदायी शासनकी स्थापनाका प्रयत्न कर रहे हैं, प्रोत्साहित क्यों नहीं करते?

(५) क्या आप जीवनमें विनोद-वृत्तिको आवश्यक समझते हैं?

श्री गांधीने निम्नलिखित उत्तर दिये हैं:

(१) यह अन्तर जितना कम होना सम्भव है उतना ही बढ़ना भी सम्भव है।

(२) मैं खुद अपने ऊपर यथासम्भव शीघ्र स्वराज्यकी स्थापनाका प्रयत्न कर रहा हूँ। मैं भारतमें स्वराज्यकी स्थापना नहीं कर सकता। किन्तु मैं निश्चय ही उससे इसी वर्षमें स्वराज्यकी स्थापना करनेकी अपेक्षा रखता हूँ।

१. इसका मिलान १८–८–१९२१ के **यंग इंडिया**में प्रकाशित पाठसे कर लिया गया है।

(३) मुझे स्वीकार करना चाहिए कि प्रधान मन्त्री मेरे लिए एक समस्या हैं। वे निश्चय ही अभीतक भारतीय मुसलमानोंके ऋणी हैं और उनसे उऋण नहीं हुए हैं।

(४) ये मन्त्री जबतक इस प्रणालीसे, जो इनका अनुचित उपयोग भारतको पतित बनानेके लिए कर रही है, सर्वथा मुक्त नहीं हो जाते तबतक मुझे उनको प्रोत्साहन देनेसे आदरपूर्वक इनकार ही करना चाहिए। (संयुक्त प्रान्तमें जो-कुछ हो रहा है वह मेरे इस कथनकी पुष्टि करता है)

(५) यदि मुझमें विनोद-वृत्ति न होती तो मैंने कभीकी आत्महत्या कर ली होती।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, १०-८-१९२१

२४५. भाषण: कानपुरमें[1]

९ अगस्त, १९२१

महात्माजीने आरम्भमें सबको धन्यवाद देते हुए कहा कि आप लोगोंके अभिनन्दन-पत्रमें एक त्रुटि है। आप लोगोंने मौलाना मुहम्मद अलीका नाम इसमें नहीं लिया है, इससे ऐक्यमें फर्क पड़ता है। इस समय हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यकी परम आवश्यकता है। इसी ऐक्यपर खिलाफत तथा पंजाबके अन्यायोंका निपटारा और अन्तमें स्वराज्यकी सिद्धि निर्भर है। गोरक्षाका प्रश्न भी खिलाफतपर ही निर्भर है। हिन्दुओंको बिना किसी बदलेके खिलाफतके वास्ते आत्मत्याग करनेके लिए प्रस्तुत रहना चाहिए। मैं नित्य प्रातःकाल गौओंकी रक्षाके लिए प्रार्थना करता हूँ। गोवध हिन्दुओंके पापका फल है और इन्हीं पापोंके कारण हमारे साथ हमारे भाइयोंकी सहानुभूति नहीं है। हम लोगोंको अपने पापोंका प्रायश्चित्त करना चाहिए। हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यकी अत्यन्त आवश्यकता है ताकि खिलाफत प्रश्नका सन्तोषजनक निर्णय हो। खिलाफत ही हिन्दू-मुसलमानोंको एक करेगी।

इसके साथ-साथ शान्ति और अहिंसाकी भी बड़ी आवश्यकता है। हम लोगोंको अपने क्रोधको जीतना चाहिए और ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिए कि हम लोगोंमें से क्रोधका लोप हो जाये।

स्वदेशीके बिना स्वराज्य नहीं मिल सकता। महिलाओंका धर्म है कि वे खादी ही पहनें। उनको महीन वस्त्रोंका त्याग कर देना चाहिए। मुझे पूर्ण आशा है कि पहली जनवरीतक स्वराज्य अवश्य मिलेगा। यदि उस समयतक स्वराज्य न मिला

१. कानपुरके नागरिकों द्वारा दिये गये अभिनन्दनपत्रके उत्तरमें। इससे पहले गांधीजीने महिलाओंकी सभामें स्वदेशीपर और मारवाड़ी विद्यालयमें आयोजित कपड़ेके व्यापारियोंकी सभामें विदेशी वस्त्रके बहिष्कार-पर भाषण दिये थे।

तो जीवन भारी हो जायेगा। हम लोग स्वावलम्बन भूल गये हैं, हम लोगोंको यह सीखना है कि मरना किस तरह चाहिए। यदि गोली चले तो उसे हमें अपनी छाती-पर रोकना चाहिए न कि उसे पीठ देनी चाहिए। यदि अंग्रेज हमारे देशमें रहना चाहते हैं तो उन्हें सहयोगी तथा सेवकोंकी तरह रहना सीखना पड़ेगा। वे अब मालिक-की हैसियतसे यहाँ नहीं रह सकते। महिलाओंको विदेशीका बहिष्कार तथा चरखा चलाना अपना धर्म समझना चाहिए, ताकि यदि मैं जेलमें रहूँ या फाँसी चढ़ा दिया जाऊँ, तब भी स्वराज्य अवश्य मिले।

आज, ११-८-१९२१

२४६. भेंट : 'आज' के प्रतिनिधिसे

९ अगस्त, १९२१

प्रश्न : यदि स्वदेशी वस्त्रका मूल्य बढ़ता जाये और विदेशीका घटता जाये तो उस हालतमें हमारा धर्म क्या है?

उत्तर : स्वदेशी व्रतके माने यही है कि यदि विदेशी हमें मुफ्त भी मिले तो भी हम नहीं ले सकते। जैसे रोटी बहुत मँहगी भी हो तो भी हिन्दू गोमांस नहीं खा सकता।

यदि विदेशी सूतसे भारतमें कपड़ा तैयार किया जाये तो वह विदेशी होगा कि स्वदेशी?

वह विदेशी है।

यदि किसी मिलमें धन भारतीयोंका लगा हो परन्तु उसके मैनेजर और उसका प्रबन्ध विदेशियोंके हाथमें हो तो वह स्वदेशी कही जायेगी या विदेशी?

वह विदेशी कही जायेगी। स्वदेशी वही है जिसमें धन और प्रबन्ध दोनों भार-तीयोंका हो। स्वदेशी मिलोंके बने कपड़े गरीबोंके वास्ते छोड़ दिये जाने चाहिए। कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओंको शुद्ध खादी पहननी चाहिए।

पहली अगस्तको बनारसकी सभामें पुलिसकी तरफसे जो ज्यादती हुई थी उसके सम्बन्धमें महात्माजीने कहा कि उनको क्षमा करना चाहिए नहीं तो हम स्वराज्यके योग्य नहीं हैं।

आज, १०-८-१९२१

२४७. पत्र : मणिलाल कोठारी और फूलचन्द शाहको

[कानपुर
९ अगस्त, १९२१][1]

भाईश्री मणिलाल और फूलचन्द,

बढवानमें काठियावाड़ राजनैतिक सम्मेलन करनेके सम्बन्धमें मेरा कहना यह है कि मैं इस सम्बन्धमें अपना मत अभी व्यक्त नहीं कर सकता। जब सितम्बरके महीनेमें मेरा दौरा खत्म होगा तब यदि आप पूछेंगे तो मै निश्चित उत्तर दूँगा। यदि मै उसकी अध्यक्षता करनेका निर्णय करूँगा तो मैं कार्यको अधूरा नहीं छोड़ सकता। यह नहीं हो सकता कि मै सविनय अवज्ञा करनेके बारेमें सलाह तो दे दूँ और बैठ जाऊँ। इस कारण मैं सम्मेलनकी अध्यक्षता करनेके सम्बन्धमें पहलेसे कोई निश्चय नहीं कर सकता।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
गुजराती, १४–८–१९२१

२४८. भाषण : इलाहाबादकी सभामें[2]

१० अगस्त, १९२१

श्री गांधीने अपना भाषण प्रारम्भ करते हुए कहा कि संयुक्त प्रान्तमें इस समय जो दमन हो रहा है मैं उसके बारेमें कुछ कहना चाहता था, किन्तु अब उसके विषयमें कुछ कहे बिना केवल उन साथी कार्यकर्त्ताओंको बधाई देता हूँ जो जेल गए हैं। आपको यह समझ लेना चाहिए कि यदि आपमें से कोई जेल चला जाये तो भी स्वराज्यके कार्यमें ढील नहीं होनी चाहिए। जबतक आप ऐसा अनुभव नहीं करते तबतक आप न तो स्वराज्यके योग्य हैं और न जेलके ही। यदि आप इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं तो आपको जेल और मृत्युका भय छोड़ देना चाहिए। बल्कि आपको तो यह सोचना चाहिए कि निर्दोष व्यक्तिकी हर जेलयात्रा और मृत्यु स्वराज्यको अधिकाधिक निकट ले आती है। जबतक आप ऐसा अनुभव नहीं करते तबतक मैं समझूँगा कि

१. साधन-सूत्रमें यही तारीख है।

२. यह सभा स्वराज्य सभाके मैदानमें साँझको हुई थी। इसमें १०,००० से अधिक लोग शामिल हुए थे और इसकी अध्यक्षता पण्डित मोतीलाल नेहरूने की थी। इस सभामें मुहम्मद अली और स्टोक्सने भी भाषण दिये थे।

आप अहिंसा और असहयोगके अर्थको भली-भाँति नहीं समझ सके हैं। असहयोगका अर्थ निष्क्रिय बैठे रहना नहीं है। इसका अर्थ है अपनी शक्तिको संगठित करना, क्योंकि असहयोगके लिए महान् शक्तिकी आवश्यकता है। मैं ब्रिटिश झंडे यूनियन जैक के सामने, जिसके सामने फौजी कानूनके दिनोंमें पंजाबके बालकोंको अपना सिर झुकाना पड़ता था, तबतक सिर नहीं झुकाऊँगा जबतक सरकार अपने पिछले अत्याचारोंके लिए पश्चात्ताप प्रकट करके क्षमा नहीं माँगती।

आगे बोलते हुए गांधीजीने संयुक्त प्रान्तकी स्थितिका उल्लेख किया और कहा : छोटे-छोटे बालक जेल भेजे जा रहे हैं और तिसपर भी यह घोषित किया जा रहा है कि संयुक्त प्रान्तमें कहीं कोई दमन नहीं हो रहा है। संयुक्त प्रान्तकी सरकार पंजाब सरकारसे कहीं अधिक चालाक है। उसने बड़े-बड़े नेताओंको नहीं छुआ; क्योंकि उसे डर था कि उनकी गिरफ्तारीसे प्रान्तमें अशान्ति फैल जायेगी, किन्तु वह छोटे बालकोंको कालकोठरीमें बन्द करनेकी सजा दे रही है। यह दमनका भयानक तरीका है। दमनकी प्रणालीमें लोगोंको भयभीत करना तथा उन्हें नैतिक रूपसे गिरा देना भी आता है। किसानोंपर भी इसी प्रकारका दबाव डाला जा रहा है। उन्हें अमन-सभाका सदस्य बनने तथा असहयोग आन्दोलनसे अलग रहनेको मजबूर किया जा रहा है। इसके लिए मैं उच्च अधिकारियोंको दोषी ठहरानेको तैयार नहीं, क्योंकि गवर्नर और उनके सहकारी यह बात जानते हैं या नहीं, इसका मुझे अभीतक निश्चय नहीं है। मैं तो अब भी महमूदाबादके राजा और श्री चिन्तामणि[1] तथा अन्य लोगोंका सम्मान करता हूँ। किन्तु उनके हाथ भी पापसे पंकिल हो गए हैं; भले ही उन्होंने वे पाप जान-बूझकर या स्वेच्छासे न किये हों। अब वे सरकारी सदस्य बन गये हैं, इसलिए उनके दिमाग बदल गए हैं। उन्होंने घोषित किया है कि स्वयं असहयोगी ही अपने विरोधियोंके खिलाफ हिंसाका प्रयोग कर रहे हैं। मैं इस आरोपसे एकदम इनकार नहीं करता; और इसीलिए मैंने अलीगढ़ तथा मालेगाँवकी घटनाओंपर पश्चात्ताप व्यक्त किया है और हिंसक कार्योंकी निन्दा की है। फिर भी मेरा विचार है कि कुल मिलाकर असहयोगका कार्य शान्तिपूर्ण ढंगसे हो रहा है।

श्री गांधीने आगे कहा : मैं चाहता हूँ कि शान्तिकी यह भावना प्रगति करे। सरकार आप लोगोंको जेलमें डाले या गोलीसे मारे तब भी आपको सरकारी अधिकारियोंको बुरा-भला नहीं कहना चाहिए और न उनका सामाजिक रूपसे बहिष्कार ही करना चाहिए। जब आप अपने ऊपर इतना नियन्त्रण प्राप्त कर लेंगे तब समझिए कि स्वराज्य आपका है और तभी पंजाब और खिलाफतके सम्बन्धमें आप न्याय प्राप्त कर सकेंगे। किन्तु ऐसा तबतक सम्भव नहीं जबतक कि हिन्दू और मुसलमान एक नहीं हो जाते। बकरीद आ रही है। यदि हिन्दू गायको बचाना चाहते

१. सर चिरावुरी यज्ञेश्वर चिन्तामणि (१८८०–१९४१); प्रसिद्ध पत्रकार, लेखक तथा राजनीतिज्ञ; इलाहाबादके प्रसिद्ध दैनिक लीडरके सम्पादक।

हैं तो वे खिलाफतकी पवित्र अग्निमें अपनी बलि दे दें, किन्तु वे सौदेबाजीकी भावनासे ऐसा न करें। वे मुसलमान भाइयोंसे गोवध न करनेका आग्रह भी न करें।

स्वदेशीके प्रश्नपर आते हुए उन्होंने कहा: स्वदेशीकी वकालत करनेका अर्थ है प्रतिवर्ष ६० करोड़ रुपयेकी बचत, भुखमरीसे पीड़ित अपने देशवासियोंके लिए भोजन तथा अपनी स्त्रियोंकी पवित्रताकी रक्षा। किन्तु इन सबसे बढ़कर इसका उद्देश्य है सविनय अवज्ञाके लिए तैयारी करना। यदि आप स्वदेशीके मुद्देको सितम्बरतक सफल बना देते हैं तो मैं समझूँगा कि आप सरकारको अन्तिम चेतावनी देनेके लिए पर्याप्त समर्थ हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त इसका अर्थ दुनियाको यह बतला देना भी होगा कि भारतने अपनी शक्तिको संगठित कर लिया है। मैं चाहता हूँ कि आप अपने विदेशी वस्त्रोंको जला दें। यदि आप स्मरनाकी सहायता करना चाहते हैं तो आप अपने उतारे कपड़े न भेजकर, वहाँ नकद या नये कपड़े भेजें। किन्तु यदि आप अपने काममें लाये हुए कपड़े ही भेजना चाहते हैं तो भी मैं आपत्ति नहीं करूँगा। किन्तु आपको तो अपने सभी विदेशी वस्त्रोंका त्याग करना ही होगा। आप अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके निर्णयानुसार काम करें और करघे तथा चरखेको अपनायें। अर्थात् आपको उन कपड़ोंपर निर्भर रहना चाहिए जो आपके अपने जिलेमें तैयार होते हों। दूसरे स्थानोंसे कपड़ेका आयात नहीं करना चाहिए, चाहे आपको अर्धनग्न ही क्यों न रहना पड़े। इससे आपपर स्वदेशी वस्त्रोंका नाम लेकर विदेशी वस्त्र थोपनेका खतरा मिट जायेगा।

भाषणको समाप्त करते हुए उन्होंने कहा: अब मैं यहाँ एकत्र विदेशी वस्त्रोंके ढेरमें आग लगाने जा रहा हूँ। इसमें किसीके भी प्रति दुर्भावनाकी कोई बात मेरे मनमें नहीं है। प्रेम, अहिंसा और शान्ति मेरा धर्म है। अन्तमें मैं आशा करता हूँ कि पुरुषोंकी अपेक्षा महिलाएँ इस दिशामें अधिक कार्य करेंगी इसलिए मैं उनसे अपील करता हूँ कि वे इस कार्यमें हाथ बटाएँ।[1]

[अंग्रेजीसे]

लीडर, १२–८–१९२१

१. अपने भाषणके बाद गांधीजीने विदेशी वस्त्रोंके विशाल ढेरकी होली जलाई।

२४९. टिप्पणियाँ

बम्बईमें होली

विदेशी कपड़ोंकी होली जलानेके बारेमें अगर किसीको कोई शक रह भी गया था, तो परेलमें श्री सोबानीके अहातेमें जलाई गई होलीको अपनी आँखोंसे देखनेवाले सभी लोगोंका वह शक दूर हो गया होगा। हजारों दर्शकोंने वह प्रेरणादायक दृश्य देखा था। जैसे ही आगकी लपटें ऊँची उठ-उठकर कपड़ोंके अम्बारको अपने आगोश-में भरने लगीं, उपस्थित दर्शकोंकी हर्ष-ध्वनिसे आकाश गूँज उठा। लगता था जैसे हमारी जंजीरें टूक-टूक हो रही हों। सभीके चेहरोंपर स्वतन्त्रताकी आभा दमक उठी। यह शानदार काम बड़े शानदार ढंगसे सम्पन्न हुआ। मुझे पूरा भरोसा है कि लोगोंके दिमागोंपर किसी भी और चीजकी इतनी गहरी छाप न पड़ी जितनी स्वदेशीकी पड़ी है। होलीमें जलाये जानेवाले कपड़े फटे-पुराने भी नहीं थे; उनमें बढ़ियासे-बढ़िया किस्मकी साड़ियाँ, कमीजें और जाकिटें थीं। मैं जानता हूँ कि कुछ माताओंने अपनी बेटियोंकी शादीके लिए सहेजकर रखे गये रेशमी वस्त्र भी जलानेके लिए दे दिये थे। इतने कीमती कपड़ोंको जला देना काफी महत्त्व रखता है। लपटोंमें झोंके गये कपड़ोंकी तादाद किसी कद्र डेढ़ लाखसे कम नहीं थी। उनमें ऐसे-ऐसे कपड़े भी शामिल थे जिनमें से एक-एककी कीमत कई सौ रुपये बैठती। मुझे पूरा यकीन है कि यह सब देशके भलेके लिए ही हुआ। ऐसी चीजें गरीबोंको बाँटना पाप होता। जरा सोचिये इन बेशकीमती कपड़ोंमें गरीब लोग कैसे लगते। अधिक न कहा जाये तो भी इतना तो कहना ही पड़ेगा कि वह दृश्य बड़ा ही बेतुका और अभिरुचिहीन लगता। सच तो यह है कि जलाये गये अधिकतर कपड़े ऐसे थे जो गरीबोंकी जिन्दगीके साथ जरा भी मेल नहीं खाते। मध्यम-वर्गके लोगोंके पहनावेमें इतनी बड़ी तब्दीली आ गई है कि गरीबोंको वे कपड़े देना बिलकुल उचित न होता। वह तो ऐसा ही होता जैसे इस्तेमालशुदा कीमती दाँतका ब्रश किसी गरीबको देना। इसलिए मुझे आशा है कि ऐसे होली-काण्ड होते रहेंगे और वे भारतके एक छोरसे दूसरे छोरतक फैल जायेंगे और वे तबतक बन्द नहीं होंगे जबतक कि एक-एक विदेशी कपड़ा भस्म नहीं कर दिया जाता या देशसे बाहर नहीं भेज दिया जाता।

तमिल नारियाँ

तिरुपतिसे एक मित्र लिखते हैं:

मद्रासमें हमारे आन्दोलनकी सफलताके मार्गमें सबसे बड़ी बाधा है मद्रासकी नारी। उनमें से कुछ तो बड़ी ही प्रतिक्रियावादी हैं और ऊँचे ब्राह्मण घरानोंकी स्त्रियोंमें से बहुत-सी ऐसी हैं जिन्हें पाश्चात्य बुराइयोंकी आदत हो गई है। वे दिनमें तीन बारसे कम काफी नहीं पीतीं; इससे और ज्यादा बार पीना 'फैशन' मानती हैं। भूषामें भी उनका यही हाल है। उन्होंने घरेलू तौरपर तैयार होने-

> **वाला सस्ता कपड़ा त्याग दिया है और वे मँहगे विदेशी वस्त्रोंके पीछे पागल हैं। आभूषणोंके मामलेमें ब्राह्मण घरोंकी स्त्रियाँ सबसे आगे रहती हैं और उनमें भी श्री वैष्णव घरानोंकी स्त्रियाँ। पुरुष तो सादगीका अच्छा जीवन अपना रहे हैं, पर हमारी महिलाएँ फिजूलखर्च बनती जा रही हैं। मन्दिरोंमें ईश्वराधनाके लिए जाते समय भी उनको सादगीका पहनावा अपनानेकी बात नहीं सूझती। वे कीमतीसे-कीमती जवाहरात और ज्यादासे-ज्यादा कीमती जरी इत्यादि पहन-कर मन्दिरोंमें जाना चाहती हैं। मैं ऐसी कई ईमानदार महिलाओंको जानता हूँ जो सिर्फ इसीलिए मन्दिर नहीं जातीं कि उनके पास कीमती वस्त्र और आभूषण नहीं हैं।**

मेरे ये वैष्णव मित्र जो-जो कहते हैं उस सबकी सचाईपर विश्वास करनेका मेरा मन नहीं होता। ये सज्जन असहयोगी हैं और वकील हैं। मैं उनके इस कथनपर अविश्वास करना चाहता हूँ कि तड़क-भड़क और दिखावेके मामलेमें तमिल बहनें अन्य सभी प्रदेशोंकी महिलाओंसे आगे हैं। फिर भी उनके पत्रसे तमिल बहनोंको अपने बारेमें कुछ सोचनेकी प्रेरणा तो मिलनी चाहिए। उनको फिरसे अपनी पहलेकी सादगी अपनानी चाहिए। ईश्वर निश्चय ही उन स्त्रियोंसे कहीं ज्यादा प्रसन्न होगा जो अपने हृदयकी शुचिताके प्रतीकस्वरूप बिलकुल साफ धुली खादी पहनती हैं। हमारे मन्दिर शान-शौकत और दिखावेके लिए नहीं हैं; वे तो आराधकोंकी मनःस्थितिके अनुकूल विनम्रता और सादगीकी अभिव्यक्तिके लिए हैं। मद्रास अहातेकी महिलाओंमें इस बुराईके खिलाफ निरन्तर प्रचार होता रहना चाहिए।

मध्य प्रान्तमें खादी-टोपी

मध्य प्रान्तमें सरकारी कर्मचारियों द्वारा खादीकी टोपियाँ पहनना अधिकृत रूपसे गैरकानूनी माना जाने लगा है। मध्य प्रान्त परिषद्ने सार्वजनिक रूपसे इस निर्णयका समर्थन कर दिया है। मध्य प्रान्त सरकार द्वारा निर्धारित यह नियम परले दर्जेकी गुलाम मनोवृत्तिका सूचक है और खतरनाक है। यदि खादीकी टोपी असहयोग दलकी निशानी है, तो फिर खादीका इस्तेमाल भी गैर-कानूनी माना जा सकता है और इसके लिए सजा दी जा सकती है। और इस तरह तो सरकारी शब्द-कोषमें स्वदेशीको भी जुर्म माना जा सकता है। विदेशी वस्त्र आजसे दो सदी पहले भारतपर जबरन लादे गये थे। और अब भारतको फिरसे स्वदेशी अपनानेसे रोकनेमें जबरदस्ती की जा रही है। आम जनताकी रायका खयाल रखनेवाली किसी भी नेकनीयत सरकारको सरकारी कर्मचारियों द्वारा खादीके इस्तेमालको बढ़ावा देना चाहिए था। मैं यह नहीं मानता कि खादीकी टोपी असहयोगकी निशानी है। मैं ऐसे कई लोगोंको जानता हूँ जो असहयोगको ठीक नहीं समझते पर उन्होंने सुविधा और स्वदेशीकी निशानीके तौरपर खादीकी टोपीको अपना लिया है। कांग्रेसने अभीतक सरकारी कर्मचारियोंसे नौकरियाँ छोड़नेके लिए नहीं कहा है, लेकिन मैं उनसे इतनी उम्मीद जरूर करता हूँ कि वे अपनी पसन्दका पहनावा बरकरार रखनेकी हिम्मत दिखायेंगे और इस तरह

अपने आचरणकी स्वतन्त्रताको बरकरार रखेंगे, चाहे फिर इसमें उनकी नौकरियोंपर भी क्यों न बन आये। यदि सभी सरकारी कर्मचारी मिलकर यह काम करें तो वे देखेंगे कि सरकार उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती। यह मुमकिन हो या न हो, पर मुझे उनसे इतनी उम्मीद जरूर है कि व्यक्तिगत रूपसे कुछ ऐसे सरकारी कर्मचारी अवश्य निकल आयेंगे जो खादीकी टोपी पहननेसे नहीं हिचकिचायेंगे।

ग्वालियरमें अन्धकार

ग्वालियर स्टेशनसे गुजरते हुए, मुझे यह देखकर ताज्जुब हुआ कि लोग हमारे डिब्बेके पास आनेमें भय खाते थे। प्लेटफार्मपर स्वदेशीका नाम-निशानतक नही था। दूसरे स्टेशनोंकी तरह एकने भी आकर हमें अपनी विदेशी टोपी नही सौंपी। इसके कारणका मुझे जल्द ही पता चल गया। उस राज्यमें असहयोग आन्दोलनपर करीब-करीब प्रतिबन्ध ही लगा दिया गया है। खादीकी टोपी पहनना और घरमें चरखा रखना अगर जुर्म नहीं तो नापसन्द तो किया ही जाता है। यह तो सोचा भी नहीं जा सकता कि महाराजाके विचार भी इतने प्रतिक्रियावादी होंगे। महाराजाके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। वैसे सरकारका विषैला प्रभाव रजवाड़ोंमें ही सबसे ज्यादा दिखाई पड़ता है, क्योंकि रजवाड़ोंके पास कोई भी ठोस किस्मका सुधार करनेकी शक्ति ही नहीं है और उनको अक्सर ही उनकी प्रजाकी स्वतन्त्रता सीमित करनेका साधन बननेपर विवश किया जाता है। इतना ही नही, प्रभुता सम्पन्न सत्ताके संरक्षणने शेष भारतकी भाँति उनको भी पुंसत्वहीन और अनुत्तरदायी बना दिया है। इसलिए जब भी कोई राजा मनमानी और दमन करनेपर तुल जाता है, तो अपने राज्यमें जुल्म ढानेकी उसकी शक्ति वाइसरायसे भी कहीं ज्यादा होती है। सरकारकी वर्तमान व्यवस्थामें यह एक बहुत ही बड़ी बुराई है। फिर भी, आशा है कि ग्वालियर स्टेशनपर मुझे जो खबर दी गई उसमें काफी नमक-मिर्च लगाया गया होगा और जितना मुझे बतलाया गया है राज्यमें दमनका रूप उतना नृशंस नही होगा।

लाहौरका अनुकरण कीजिये

लाहौर नगरपालिकामें असहयोगियोंका बहुमत है। उसने प्रस्ताव स्वीकार किया है कि वहाँके सभी कोचवान और ऐसे ही अन्य कर्मचारी खादीकी टोपियाँ पहनेंगे और नगरपालिकाके सभी विभाग खादीका यथासम्भव अधिकतम उपयोग करेंगे। कहा जाता है कि अमृतसरके वकीलोंने अपनी पोशाकके लिए खादीको अपना लिया है। आशा है कि अन्य नगरपालिकाएँ लाहौरका अनुकरण करेंगी और देश-भरके वकील अमृतसरके वकीलोंके मार्गपर चलेंगे। देश और स्वदेशीकी खातिर वे कमसे-कम इतना तो कर ही सकते हैं।

श्रमिकोंका योगदान

जनताको इसका कोई अन्दाज नहीं है कि श्रमिकोंने तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा देनेमें कहाँतक हाथ बँटाया है। अहमदाबादके २१ हजार मिल-मजदूरोंने इस कोषमें करीब ५४,००० रुपये दिये हैं। यह चन्दा उन्होंने निर्धारित दर, अर्थात्

अपनी माहवारी मजदूरीके दसवें भागके हिसाबसे दिया था। सात हजार मजदूर सदस्य बन चुके हैं। इसी तरह बम्बईके मजदूरोंने भी बिना माँगे चन्दा भेजा है। हालाँकि उन्होंने अहमदाबादके मजदूरोंकी तरह किसी निश्चित हिसाबसे और उतना ज्यादा नहीं दिया है। मजदूरोंका यह योगदान बतलाता है कि हवाका रुख किस तरफ है। मजदूर जितने ही अधिक संगठित होते जायेंगे और अपने हितके साथ-साथ देशके हितोंका भी खयाल करते जायेंगे, उतना ही अपनी मेहनतसे तैयार होनेवाली चीजोंकी कीमतें निर्धारित करानेके लिए उनका संघर्ष तीव्रतर होता जायेगा। तब फिर मिल-मालिकों द्वारा मजदूरों और उपभोक्ताओंके हितोंकी परवाह किये बिना अपने भागीदारोंका लाभांश बढ़ानेकी गरजसे बेहिसाब कीमतें वसूल करनेका सवाल ही नहीं रहेगा। एक ऐसा वक्त जरूर आयेगा — और वह जितनी जल्दी आये उतना अच्छा होगा — जब भागीदारोंके लाभांश, मजदूरोंकी मजूरी और उपभोक्ताओं द्वारा अदा की जानेवाली कीमतोंके बीच समुचित सामंजस्य स्थापित हो जायेगा।

अनुशासनहीनता

मैंने दुबारा जो दौरा शुरू किया है उसका तजुर्बा पहलेके मुकाबले अच्छा नहीं रहा है। मैंने तो सोचा था कि मैं अनुशासनके बारेमें इतना लिख और बोल चुका हूँ और चूँकि हम अनुशासनके एक दौरसे गुजर ही चुके है, इसलिए अब इस दौरेमें मुझे काफी अनुशासित और सन्तुलित किस्मके प्रदर्शन देखनेको मिलेंगे। लेकिन मुझे यह देखकर ताज्जुब ही हुआ कि स्टेशनोंपर लोगोंका हुजूम ठेला-ठेली और शोर-गुल करते हुए मिलता है। आगरा और टूँडलामें भीड़ उत्तेजित थी और लोग किसीकी बात सुननेको तैयार नहीं थे। टूँडलामें तो भीड़के कारण स्टेशनसे बाहर निकलना तक कठिन हो गया था। जाहिर है कि उनसे जो भी कुछ कहा जा रहा था वह उनको सुनाई नहीं देता था। उनसे कोई चुप रहनेको कहता तो वे जोर-जोरसे चीखने लगते थे। और मुझे जैसे-तैसे जब भोजन-कक्षमें पहुँचाया गया तो भीड़ वहाँ भी घिर आई। अन्दर झाँकनेके लिए उत्सुक लोगोंने दरवाजेके काँच तोड़-फोड़ डाले। लोग तबतक सन्तुष्ट नहीं हुए जबतक मैं उन्हें लेकर स्टेशनसे बाहर नहीं निकल आया। लेकिन मेरे भाषणके बाद काफी फर्क पड़ा। लोग हिदायतोंपर कान देने लगे। शोर-गुल भी पहलेसे कम हो गया। फिर लोग मेरे डिब्बेकी ओर बेतहाशा नहीं भागे और हम लोगोंको गुजरनेके लिए रास्ता भी दे दिया। मैं टूँडलासे कई बार गुजर चुका हूँ, पर मैंने पहले कभी इतनी भीड़ वहाँ नहीं देखी थी। पूछताछ करनेपर मुझे पता चला कि इस बार आसपासके गाँवोंके लोग सिर्फ दर्शनोंके लिए सिमट आये थे। यह 'दर्शन' तो एक परेशानी बन गई है, और इसमें काफी कीमती समय बेकार चला जाता है। इससे मुझे सचमुच बड़ी परेशानी होती है और यात्राके दौरान अपने लेखन-कार्यके लिए मुझे जिस शान्तिकी जरूरत है वह भी नहीं मिल पाती। इस सारी कठिनाईकी जड़में यही बात है कि हम पहलेसे कोई योजना नहीं बनाते और हम अच्छी तरहसे संगठित भी नहीं हैं। कार्यकर्त्ताओंको या तो इन प्रदर्शनोंको सर्वथा व्यवस्थित ढंगसे संगठित करना चाहिए या फिर इनका विचार ही त्याग देना चाहिए। गनीमत समझिए कि

ये प्रदर्शन मैत्रीपूर्ण प्रदर्शन हैं और इसलिए कोई झंझट खड़ी नहीं होती। किन्तु सोचिए अगर हम विरोधमें कोई प्रदर्शन करें तो कैसी अंधाधुंधी मच जाये। अगर हमें गोली-बारीके समय या लोगोंके उत्तेजित रहते हुए भीड़की व्यवस्था करनी पड़े तो क्या हो? मैंने टूँडलामें देख लिया है कि ऐसी भीड़को लेकर सार्वजनिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाना असम्भव है। जबतक हम भीड़के लोगोंको आदेश देने और उनका पालन करानेकी स्थितिमें नही आ जाते, तबतक हम किसी भी कामको कारगर ढंगसे अंजाम नहीं दे सकते। इसलिए हमारे स्वयंसेवकोंको भीड़को नियन्त्रित रखनेका प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। भारतीय लोगोंकी भीड़को नियन्त्रणमें रखना और व्यवस्थित बनाना अत्यन्त ही सरल कार्य है। यह संसारके अन्य सभी देशोंके लोगोंको नियन्त्रणमें रखनेसे कहीं आसान है। हाँ, इसके लिए पहलेसे तैयारी की जानी चाहिए। और यदि पहलेसे तैयारी न हो तो समझदारी इसीमें होगी कि भीड़का जमाव ही न होने दिया जाये।

प्रदर्शन

अब यह समझना काफी आसान हो गया है कि मालेगाँवमें और यहाँ तक कि अलीगढ़में भी आगजनीकी घटनाएँ कैसे हुई होंगी। अनुशासनहीन भीड़ वहाँ इकट्ठी हो गई थी। ऐसी भीड़में कुछ ऐसे शरारती लोग रहते ही हैं जो सिर्फ मौकेका इन्त-जार करते रहते हैं। जब समूची भीड़ उत्तेजित हो जाती है तो वह आँख मूँदकर उनके पीछे चलने लगती है; अर्थात् वह भीड़ क्षणिक आवेशमें बह जाती है। इसी-लिए जब हम ऐसे प्रदर्शनोंका आयोजन करते हैं जिनको हम नियन्त्रित नहीं कर सकते, तो हम 'शत्रुओं' के हाथोंमें खेलते हैं। आज हमारा उद्देश्य एक ऐसा वातावरण बनाना है जो शान्त और अहिंसापूर्ण होते हुए भी दृढ़ निश्चयसे प्रेरित हो। जब पूर्णतया अनु-शासित सैनिकोंकी ओरसे एकाएक गोलीबार शुरू हो जाता है, तो हमारा दृढ़ निश्चय काफूर हो जाता है। इसीलिए हमें गिरफ्तारियोंके विरुद्ध प्रदर्शनोंका आयोजन करना जान-बूझकर छोड़ देना चाहिए। सरकार जिनको भी गिरफ्तार करना चाहती है, उनको बिना किसी शोर-गुलके गिरफ्तार हो जाने देना चाहिए। जब हम अपने-आपपर पर्याप्त आत्म-नियन्त्रण प्राप्त कर लेंगे, तब हम स्वराज्य और सविनय अवज्ञाके लिए तैयार हो जायेंगे। यह आत्म-नियन्त्रण पूर्ण रूपसे स्वदेशीका पालन करनेसे ही पैदा होगा। विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार करने और अपनी जरूरतके लायक खादी तैयार करनेकी कोशिशसे हमारे अन्दर जितना आत्मविश्वास पैदा होगा, उतना अन्य किसी भी चीजसे पैदा नहीं हो सकता।

रिहाईका दुःख

श्री वैंकटप्पैयाने एक तार द्वारा खेद प्रकट किया है कि वे स्वयं रिहा कर दिये गये हैं और उनके दूसरे साथी अब भी हिरासतमें हैं। मुझे भी इसका दुःख है। आज-कल तो जेल ही हर आत्म-सम्मानी भारतीयके लिए सबसे उपयुक्त स्थान है। आज अलीगढ़का हर आदमी मौलाना शेरवानी और उनके भाग्यसे ईर्षा करता है। बेगम ख्वाजाने मुझे लिखा है कि उनके शौहरके साथीके जेलमें रहते उन्हें अपने पतिकी

रिहाईसे बड़ा दुःख पहुँचा है। यही सच्ची भावना है। और इस वर्ष स्वराज्य मिलना तभी सम्भव होगा जब हमारे देशके स्त्री-पुरुष स्वतन्त्रताके लिए संघर्ष करते हुए जेल जाना अपना सौभाग्य मानेंगे। स्पष्ट है कि गुण्टूरके लोगोमे इसी तरहकी सही भावना मौजूद है। गिरफ्तारियोंकी खबर सुनकर श्री प्रकाशम् तुरन्त ही गुण्टूर गये और उन्होंने वहाँसे तार भेजा है कि वहाँ कई वकीलोंने अपनी वकालत मुल्तवी कर दी है और अब जनता कांग्रेसके असहयोग कार्यक्रमपर और भी दृढ़ताके साथ अमल करनेकी कोशिश कर रही है। हम लोग जब जेलोंसे बाहर उत्तरदायित्वपूर्ण ढंगसे स्वतन्त्रचेता व्यक्तियों-की तरह काम करने लगेंगे, तो सरकार हमें जेल भेजनेमें देर नहीं करेगी, और हम जितने दिन जेलसे बाहर रहेंगे, उतने दिन हमें भी यह विश्वास रहेगा कि हम अपना समय यों ही बरबाद नहीं कर रहे हैं।

पहली अगस्तको ताकतका प्रदर्शन

किसी पत्र-लेखकने बड़े रोषके साथ पूछा है कि पहली अगस्तका मेरा अनुभव क्या है। पहली अगस्तका मेरा अनुभव यह है कि मैंने उससे अधिक व्यवस्थित भीड़ इससे पहले नहीं देखी थी। मैं पत्र-लेखककी इस बातपर यकीन करता हूँ कि कुछ लोगोंको विदेशी टोपियाँ उतारनेके लिए मजबूर किया गया था। लेकिन मुझे पक्का भरोसा है कि ऐसे उदाहरण बिरले ही थे। स्वदेशीके प्रचारमें ताकतके इस्तेमालकी कोई गुंजाइश ही नहीं है, और मुझे इसमें किंचित् भी संदेह नहीं कि जोर-जबरदस्तीका इस्तेमाल हमारे अपने उद्देश्यको ही विफल बनानेवाला सिद्ध होगा। हम भारतको जबरन खादी पहननेपर मजबूर नहीं कर सकते। खादी पहनना तो स्वतन्त्रता और सम्मानका सूचक बन जाना चाहिए; लेकिन यदि उसके प्रचारमें जोर-जबरदस्तीसे काम लिया गया तो ऐसा नही हो सकता।

बंगाल और मद्रासके चुनाव

इसमें सन्देह नहीं कि बंगाल और मद्रासके चुनावोंके सम्बन्धमें लिये गये कार्य-समितिके निर्णयसे कुछ नाराजगी बढ़ेगी। इसलिए और भी कि यह निर्णय अध्यक्षके इस निर्देशके बावजूद किया गया था, कि संविधानकी व्यवस्थाके अनुसार चुनाव नही किये जा सकते। इससे जिन लोगोंको हानि पहुँची है; मुझे उनसे हमदर्दी है। पर मैं उनसे यही कहूँगा कि वे समितिके निर्णयके पीछे काम करनेवाले कारणोंको समुचित महत्त्व दें। मेरी अपनी राय यह है कि समितिके लिए सभी सम्बन्धित पक्षोंकी बात सुने बिना केवल कुछ मुद्दोंको ध्यानमें रखकर ऐसा निर्णय देना सम्भव नहीं था। लेकिन अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा निर्धारित कार्यक्रम पूरा करना था और सभी सम्बन्धित पक्षोकी बात सुननेका समय कार्य-समितिके पास रह ही नहीं गया था। यदि ऐसी जाँच-पड़ताल की जाती तो सारी प्रक्रिया पूरी होनेतक सदस्य उसी स्थितिमें बने रहते जिसमें वे आज हैं। इसलिए दूसरे पक्षके लोगोंके नवम्बरतक रुके रहनेसे कोई हानि नहीं होगी। और फिर ऐसे मामले अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सामने तभी पेश करने चाहिए जब उनका स्थानीय तौरपर निबटारा करनेका यथासम्भव पूरा प्रयास कर लिया गया हो। इसके बिना उन्हें वहाँ पेश करना गलत होगा।

हम यही तो चाहते है कि स्थानीय लोकमतकी ताकतके बलपर ही अनियमितताओंको रोका और ठीक किया जा सके। प्रबुद्ध लोकमतके विरुद्ध क्या बंगाल और क्या मद्रास, कहींकी भी कांग्रेस कमेटी खड़ी नहीं रह सकती। यदि यह मान लिया जाये कि जनता वर्तमान चन्द नेताओंका अन्धानुसरण करती है तो फिर अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके फैसलेसे भी शिकायत करनेवालो को कोई सन्तोष नहीं हो सकता। कांग्रेसका अपना एक लोकतान्त्रिक संविधान है, लेकिन जबतक उसपर अमल करनेवाले कार्यकर्त्ता लोकतांत्रिकताको अपनाकर न चले, और लोकमतको अपना पथ-प्रदर्शक मानकर चलनेके लिए तैयार न हो तबतक संविधानका इस्तेमाल निश्चय ही गैर-लोकतांत्रिक उद्देश्योंके लिए ही होगा। केन्द्रकी ओरसे जल्दबाजीमे अगर कोई हस्तक्षेप किया जायेगा तो उसका नतीजा यही होगा कि दलमें कटुता और फूट बढ़ेगी। इसीलिए कार्य-समिति जान-बूझकर इसके वैधानिक पक्षको बचाती रही। उसने गुण-दोषोंका विवेचन नही किया और दोनो पक्षोंसे अनुरोध किया कि वे स्थानीय तौरपर प्रयास करके सारा मामला निबटा लें। शास्त्रीय बहस या कानूनी बारीकियोमें पड़नेका समय हमारे पास नहीं है। हमें पदोंकी बात कम और सेवाकी बात अधिक सोचनी चाहिए।

एक अंग्रेज मित्रकी चेतावनी

नीचे मैं एक अंग्रेज मित्रके पत्रके कुछ प्रासगिक अश उद्धत कर रहा हूँ। मैं इन अंग्रेज मित्रको कई वर्षसे जानता हूँ। वे बड़ी सत्यान्वेषी हैं। इनका कहना है:

> आपके कुछ वाक्य बड़े ही सुन्दर लगे, पर कुछ वाक्य ऐसे लगे जैसे आपके न हों, और इससे मुझे उलझन महसूस हुई। मै आलोचना क्यों करूँ? मुझे तो इस पेचीदा परिस्थितिकी जानकारी तक नहीं है। फिर मैं कैसे फतवा दे सकती हूँ कि आप जिस उग्र किस्मकी उथल-पुथलके लिए कोशिश कर रहे हैं उसका कोई औचित्य है या नहीं? जब मै पीछेकी ओर मुड़कर देखती हूँ कि मेरी आपपर कितनी श्रद्धा थी, आप मेरे तई किस तरह एक आदर्शके प्रतीक बन गये थे, तब यही इच्छा होती है कि परिस्थिति ज्योंकी-त्यों बनी रहती, उसमे कोई परिवर्तन न होता। और कुछ भी ऐसा घटित न होता कि मुझे यह सोचना पड़ता कि मैंने कहीं गलती तो नहीं की है। वैसे यह एक बड़ा कमजोर-सा खयाल है और वर्तमान परिस्थितिके कठोर यथार्थका सामना करनेका साहस मुझे अपने-आपमें बटोरनेमें सफल होना ही चाहिए। आप जिस हदतक सही रास्तेपर हैं, उस हदतक मैं अब भी आपके प्रति अपनी श्रद्धा बरकरार रख सकती हूँ। लेकिन मैं यही तो तय नहीं कर पाती कि आप किस हदतक सही रास्तेपर हैं। पर यह एक बात मुझे बिलकुल निश्चित लगती है, कि अगर आप गलतीपर होंगे तो आप अपनी सफलताकी कामना भी नहीं करेंगे; क्योंकि सर्वोपरि सत्य आपको अपने प्रयासोंसे कहीं अधिक प्रिय है। कैसी विचित्र बात है कि हम लोग यह न जानते हुए भी कि सत्य क्या है, इसीके लिए सबसे अधिक चिन्तित रहते हैं कि सत्यकी ही विजय होनी चाहिए। हमारी अपनी योजनाओंके मुकाबले उसीको सफलता मिलनी चाहिए।

मैं अच्छी तरह समझता हूँ कि मेरी इस मित्रकी तरह ही अन्य मित्र भी महसूस करते हैं। एक अन्य अंग्रेज पत्र-लेखकने इसी विचारको ज्यादा दो टूक शब्दोंमें व्यक्त किया है। उनका कहना है कि मैं बुराईको शायद इसीलिए बरदाश्त करता हूँ कि उससे भलाई पैदा हो सके। मै दोनों ही पत्र-लेखकोंको यकीन दिलाता हूँ कि मैं यदि कुछ चाहता हूँ तो केवल सत्यकी विजय चाहता हूँ। मैंने कभी भी इसपर विश्वास नही किया और आज भी नही करता कि लक्ष्य ही सब-कुछ है। उसे प्राप्त करनेके लिए शुद्ध-अशुद्ध कैसे भी साधन अपनाये जा सकते हैं। बल्कि इसके विपरीत मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि लक्ष्य और उसे प्राप्त करनेके साधनोंमें एक अन्तरंग सम्बन्ध रहता है, इतना कि आप भले लक्ष्यको बुरे साधनोंके जरिये प्राप्त नहीं कर सकते। और कमसे-कम मुझे तो इसकी बिलकुल जानकारी नहीं कि मैंने सत्य और न्यायकी अपनी मान्यताओंमें किंचित् भी कभी कोई कसर आने दी हो। मैं तो समझता हूँ कि अगर मैं कभी क्षण-भरके लिए भी सत्यके पथसे विचलित हुआ होता तो बहुत पहले ही लोगोंकी नजरोंमें गिर चुका होता। मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूँ कि मैं एक बहुत ही खतरनाक और कठिन परीक्षण कर रहा हूँ। हजारों मुसलमानोंको और यों हिन्दुओंको भी, अहिंसा अपनाने और सर्वथा अहिंसक आचरण करनेके लिए तैयार करना सचमुच एक बड़ा खतरनाक प्रयोग है, क्योंकि उनकी धार्मिक आस्था उनको परिस्थिति विशेषमें हिंसात्मक आचरण करनेकी अनुमति देती है। मेरा यही दुर्भाग्य रहा है कि मैंने जब भी किसी नये कामका बीड़ा उठाया है, लोगोंने मुझे पहले गलत ही समझा है। मेरे मित्र और शत्रु दोनों ही नये उद्देश्यकी बातपर चौक उठते हैं (उनके लिए वह नया ही होता है)। इस सनातन सत्यको चरितार्थ करनेकी बात उनको अजीब और नई मालूम पड़ती है। दक्षिण आफ्रिकामें गड़बड़ी पैदा करनेका आरोप तो मेरे ऊपर इतने जोर-शोरसे लगाया गया था कि अक्सर यही लगता था कि मुझे अपने अच्छेसे-अच्छे मित्र भी खो देने पड़ेंगे। बादमें मेरे अधिकांश मित्र और शत्रु भी मानने लगे थे कि मैं सही रास्तेपर चल रहा हूँ। मैं जिस सिद्धान्तको व्यावहारिक जीवनमें चरितार्थ करनेकी कोशिश कर रहा था उसे उन्होने समझा नहीं था। इसीलिए मैं महसूस करता हूँ कि असहयोगका भी वही हाल हुआ है। मै तो असहयोगको नैतिक आचरणका सबसे अधिक शिष्ट और सौम्यतापूर्ण तरीका मानता हूँ। केवल असहयोगके जरिये ही अंग्रेजों और भारतीयोंके बीच सही किस्मकी सच्ची समझदारी और सहयोग पैदा किया जा सकता है। केवल इसी एक मार्गसे पूर्व और पश्चिममें सच्ची मित्रता स्थापित की जा सकती है। असहयोगके मार्गपर चलकर ही भारत अपनी उत्कृष्ट संस्कृतिकी ऊँचाइयोंतक उठ सकता है। ऊपरसे लक्षण कुछ भी क्यों न मालूम पड़ते हों, उन सबके बावजूद, मुझे वह दिन निकटतर आता दीख रहा है जब अंग्रेज और भारतीय एक-दूसरेको परस्पर मित्र और सहयोगी मानने लगेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-८-१९२१

२५०. सफलताकी शर्तें

विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारका कार्यक्रम ३० सितम्बरसे पहले ही समाप्त कर लेना हो तो निस्सन्देह हमें अपनी रुचिको सुधारना, सादगीको अपनाना और अपनी आवश्यकताओंको घटाकर कमसे-कम करना आवश्यक है। किसी भी असहयोगीके लिए तीनसे अधिक वस्त्र पहनना अनुचित है। हमें बेजवाड़ाके महीन वस्त्रोंके लिए लालायित नहीं होना चाहिए, बल्कि मामूलीसे-मामूली खादी पहनकर सन्तोष कर लेना चाहिए। किन्तु यह भी केवल प्राथमिक बात हुई। बिना व्यावसायिक रीतिको अपनाये स्वदेशीमें सफलता नहीं मिल सकेगी। अबतक हम छात्रोंमें काम करनेका प्रयत्न करते रहे और उन्होंने अपने ज्ञान तथा योग्यताके अनुसार हमारा साथ दिया। बहुत-से असहयोगी छात्र धरना देनेवालों तथा प्रचारकोंके रूपमें साहसपूर्ण कार्य कर रहे हैं। एक असहयोगी स्कूलमें सभी सार्वजनिक कार्य हो रहा है। किन्तु हम केवल स्कूलके जरिये स्वदेशीमें सफलता नहीं प्राप्त कर सकते। हमें तो भारतके बुनकरोंके हृदयोंको छूना होगा। हमें उन्हें संगठित करना होगा। जिन बुनकरोंने गुंजाइश न होनेके कारण अपना पेशा छोड़ दिया है उन्हें फिरसे अपना पेशा अपनानेके लिए प्रेरित करना होगा। हमें उनकी सभा बुलानी होगी और उन्हें बताना होगा कि उनको क्यों हाथकता सूत बुनना चाहिए। चाहे हाथका कता सूत अ-सम ही क्यों न हो फिर भी विदेशी सूतको छूना वे क्यों पाप मानें यह भी उन्हें समझाया जाना चाहिए। इसी प्रकार हमें धुनियोंको प्रेरित करना होगा कि वे कातनेके लिए पूनियाँ तैयार करें। हमें कपड़ेके व्यापारियोंको भी प्रेरित करना होगा कि वे अपने व्यापारमें देशभक्तिका खयाल रखकर हाथ-बुना कपड़ा बेचें और विदेशी कपड़ा बेचना छोड़ दें। हमें स्वदेशी दूकानोंके लिए ऐसे निरीक्षक रखने होंगे जो विदेशी तथा स्वदेशी वस्त्रों एवं हाथ-बुने तथा मशीन-बुने वस्त्रोका भेद समझनेमें प्रवीण हों। जबतक विशाल परिमाणमें हम अपनेको संगठित नहीं करते तबतक यह बड़ा भारी काम सम्पन्न नहीं हो सकता। और इस प्रकारका संगठन तबतक सर्वथा असम्भव है जबतक कि कांग्रेसकी प्रत्येक संस्था स्वदेशीपर पूर्ण रूपसे ध्यान नहीं देती, अर्थात् अन्य सब काम छोड़कर विदेशीका बहिष्कार तथा स्वदेशीका उत्पादन नहीं करती।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि प्रत्येक गाँवका आदर्श है कि अपने लिए उसी प्रकार सूत काते और बुने जिस प्रकार कि आज बहुतसे गाँव अपनी जरूरतके लिए अन्न स्वयंमेव उगा लेते हैं। अपने लिए पूरा अन्न उगानेकी अपेक्षा सूत कातना और बुनना कहीं सरल है। प्रत्येक गाँव गेहूँ या चावल नहीं उगा सकता, किन्तु प्रत्येक गाँव पर्याप्त रुई पैदा कर सकता है और बिना किसी कठिनाईके उसे कात और बुन सकता है। अलबत्ता इस शुभ वस्तु-स्थिततक पहुँचनेमें हमें कुछ समय तो अवश्य लगेगा। इस बीच वे प्रान्त जो इस कार्यके लिए पूर्ण रूपसे संगठित हैं, जैसे कि पंजाब, न केवल अपने बाजारसे सारा विदेशी कपड़ा तुरन्त निकाल बाहर फेंकें बल्कि वे

अपनी अतिरिक्त खादीको भारतके उन भागोंमें निर्यात करें जहाँ उसकी जरूरत है। प्रान्तोंमें खादीके उत्पादनकी दृष्टिसे पंजाब, आन्ध्र, बिहार तथा गुजरात सबसे अधिक संगठित प्रतीत होते हैं। उन्हें खादीकी आवश्यकताका पूर्वानुमान लगाकर इस काममें जुट जाना चाहिए।

यदि हमें इस बड़े तथा शानदार कामको अंजाम देना है तो हमें बातें बनाना छोड़ देना चाहिए; या हम बातें करें भी तो वे व्यावसायिक होनी चाहिए। हमें प्रत्येक बातपर तू-तू मैं-मैं करना तथा व्यर्थकी आपत्ति उठाना छोड़ देना चाहिए। साथ ही यदि कोई इन बातोंमें पड़नेपर जोर देता हो तो हमें उससे भी किनारा काट लेना चाहिए। कांग्रेसको उन प्रतिभावान वकीलोंके लिए वादविवादकी गोष्ठी नहीं बने रहना है जो अपनी वकालत नहीं छोड़ना चाहते, बल्कि अब उसमें उत्पादक, निर्माता तथा वे लोग आने चाहिए जो इन बातोको समझ सकें, इनमें सहायता पहुँचा सकें तथा अपनी तत्सम्बन्धी भावनाओंको व्यक्त कर सकें। वकालत करनेवाले वकील मौन कार्यकर्त्ता बनकर तथा चन्दा देकर सहायता कर सकते हैं। प्रकाशमें आनेकी उनकी इच्छाके साथ मेरी सहानुभूति है। किन्तु मैं उनसे अर्ज करूँगा कि वे अपनी सीमाओंको पहचानें। उनका दिन उस समय आयेगा जब कि राष्ट्र पुनः ऐसी स्थितिमें आ जाये कि वह न्याय और विधानके लिए कानूनी अदालतों तथा विधान सभाओंमें जा सके। आज इनमें से किसीपर भी उसका विश्वास नहीं है क्योंकि वे इतनी भ्रष्ट हैं कि उसका वर्णन नहीं हो सकता। जब सरकार और जनताके बीचका सवाल उठता है तब कानून तथा कानूनी अदालतें दोनों न्याय नहीं कर पाते। उनकी उपयोगिताकी परीक्षा इन्हीं दोनोंके बीच प्रश्न उठनेपर ठीक-ठीक न्याय करनेकी उनकी योग्यतापर निर्भर करती है न कि इस बातपर कि वे लोगोंके ही विभिन्न दलोंमें कानूनका ठीक उपयोग कैसे करती हैं। दूसरे प्रकारका न्याय तो ऐसा ही है जैसे शेर मध्यस्थ बनकर मेमनोंको एक दूसरेको खा जानेसे या बीमारीके कारण मरनेसे इस उद्देश्यसे बचा ले कि वह उन सबका भक्षण कर सके।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-८-१९२१

२५१. भारतीय महिलाओंसे

प्रिय बहनो,

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने विदेशी वस्त्रोंके पूर्ण बहिष्कारके लिए आगामी ३० सितम्बर अन्तिम तारीख निश्चित की है। यह बहिष्कार बम्बईमें ३१ जुलाईको लोकमान्य तिलककी स्मृतिमें प्रज्ज्वलित बलिदानकी अग्निसे प्रारम्भ किया गया था। जिन मूल्यवान साड़ियों तथा पोशाकोंको आप अबतक बढ़िया और सुन्दर समझती रही हैं, उनके विशाल ढेरमें आग लगानेका श्रेय मुझे दिया गया था। मेरा विचार है कि जिन बहनोंने उसके लिए अपने कीमती कपड़े दे दिये थे उन्होंने ठीक और समझदारीका काम किया था। जिस प्रकार प्लेगके कीटाणुओंसे युक्त वस्तुओंको नष्ट कर देना ही उनका सर्वोत्तम उपयोग है उसी प्रकार विदेशी वस्त्रोंका सर्वोत्तम उपयोग उन्हें नष्ट कर देना ही है। राजनीतिके शरीरको और भी भयानक रोगोंसे बचानेके लिए की गई यह एक शल्यक्रिया है।

भारतीय महिलाओंने पिछले बारह महीनोंमें मातृभूमिके लिए जबरदस्त काम किया है। आप लोग दयाके देवदूतोंकी तरह चुपचाप कार्य करती रहीं। आपने नकद राशि और कीमती आभूषण दिये। आप चन्दा एकत्र करनेके लिए घर-घर घूमीं। आपमेंसे कुछने तो धरना देनेमें भी सहायता की। आपमें से कुछ जो रंग-बिरंगी बढ़िया पोशाकें पहनती थीं और दिनमें कई बार अपनी पोशाकें बदलती थीं, अब सफेद और निष्कलंक किन्तु मोटी खादीकी साड़ियाँ पहनने लगी हैं। ये साड़ियाँ स्त्रीकी सहज पवित्रताकी याद दिलाती हैं। आपने यह-सब भारतके लिए, खिलाफतके लिए और पंजाबके लिए किया है। आपकी वाणी और कार्यमें किसी प्रकारका छल नहीं है। आपका बलिदान सर्वथा शुद्ध है; उसमें क्रोध या घृणाका लेश भी नहीं है। मैं आपके सामने यह स्वीकार करना चाहता हूँ कि भारत-भरमें आपने स्वतः प्रेरित होकर प्रेमपूर्वक आन्दोलनके प्रति जो अनुकूल प्रतिक्रिया दिखाई उससे मुझे विश्वास हो गया है कि ईश्वर हमारे साथ है। हमारा संघर्ष आत्मशुद्धिका संघर्ष है, यह इसी बातसे प्रमाणित हो जाता है कि भारतकी लाखों महिलाएँ सक्रिय रूपसे इसकी सहायता कर रही हैं।

आपने काफी दिया है, किन्तु अभी और भी देना आवश्यक है। तिलक स्वराज्य-कोषमें पुरुषोंने अधिक चन्दा दिया है। किन्तु स्वदेशीका कार्यक्रम तभी पूरा हो सकता है जब कि आप उसमें प्रमुख रूपसे भाग लें। "जबतक आप अपने सारे विदेशी कपड़े नहीं दे डालतीं" तबतक बहिष्कार असम्भव है। जबतक उनमें आपकी रुचि रहेगी तबतक उन्हें आप छोड़ नहीं सकेंगी, उनका बहिष्कार नहीं कर सकेंगी। बहिष्कारका अर्थ है सम्पूर्ण परित्याग। भगवान् जो बच्चे हमें देता है हम उन्हें पाकर खुश रहते हैं और उसे भगवान्की कृपा मानते हैं, उसी प्रकार जो कपड़ा देशमें ही बन सकता है उससे हमें सन्तुष्ट रहना सीख लेना चाहिए। मैं तो ऐसी किसी माँको नहीं जानता जिसने किसी बाहरी व्यक्तिके कुरूप कहनेपर अपने बच्चेको फेंक दिया हो। भारतमें

निर्मित वस्तुओंके प्रति देशभक्त महिलाओंका भाव ऐसा ही होना चाहिए। आपके लिए तो भारतीय वस्त्रका मतलब हाथ-कता और हाथ-बुना वस्त्र ही हो सकता है, और इस संक्रान्ति-कालमे बहुतायतसे केवल मोटी खादी ही मिल सकती है। आप अपनी रुचिके अनुरूप आवश्यक कला-कौशलका प्रयोग करके उसे जितना बने सुन्दर बना लें। यदि आप कुछ महीनोंतक मोटी खादीसे ही सन्तुष्ट हो जायें तो हम आशा कर सकते हैं कि आगे चलकर फिर देशमें पुराने जमानेकी तरह वैसा महीन, मूल्यवान् और सुन्दर कपड़ा बनने लगेगा, जिसे एक समय संसार ईर्ष्यासे देखता रह जाता था। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि छः महीने भी यदि आपने इतना आत्म-त्याग किया तो यह बात आपकी समझमें आ जायेगी कि जिसे आज हम कला कहते हैं वह बनावटी कला है; सच्ची कला केवल बाहरी आकारको नही देखती बल्कि जो-कुछ उसके पीछे है उसे भी देखती है। एक कला वह है जो नाश करती है और दूसरी वह है जो जीवन देती है। जो महीन कपड़ा हम पश्चिम या सुदूर पूर्वसे मँगाते हैं, वास्तवमें उसने हमारे लाखों भाई-बहनोंको खत्म कर दिया और हमारी हजारों बहनोंको शर्मनाक जिन्दगी बितानेके लिए मजबूर किया है। सच्ची कला कलाकारकी प्रसन्नता, परितृप्ति तथा पवित्रताकी द्योतक होती है और यदि आप हमारे बीच इस प्रकारकी कलाको पुनरुज्जीवित करना चाहती हैं तो आपमें जो श्रेष्ठ है उनके लिए फिलहाल खादीका उपयोग करना कर्त्तव्यरूप है।

स्वदेशीके कार्यक्रमकी सफलताके लिए न केवल खादीका उपयोग वरन् यह भी आवश्यक है कि आपमे से प्रत्येक अपनी फुरसतके समय चरखा काते। मैंने बालकों और पुरुषोंके लिए भी यही सुझाव दिया है। आज उनमें से हजारों रोजाना चरखा कात भी रहे हैं। किन्तु जैसा पहले होता था चरखा कातनेका काम प्रमुख रूपसे आप लोगोंको उठाना चाहिए। दो सौ वर्ष पूर्व भारतकी महिलाएँ न केवल घरकी बल्कि विदेशोंकी माँगको पूरा करनेके लिए भी कातती थीं। वे केवल मोटा सूत ही नहीं, दुनियामें किसी भी समय जो महीनसे-महीन सूत काता गया है वैसा महीन सूत भी कातती थीं। हमारे पूर्वज जितना महीन सूत कातते थे उतना महीन सूत आजतक कोई मशीन भी नहीं कात सकी। इसलिए यदि हमें इन दो महीनोंमें और उसके बाद खादीकी माँग पूरी करनी है तो आपको कताई-मण्डल बनाकर तथा कताईकी प्रतियोगिताएँ चलाकर भारतीय बाजारको हाथकते सूतसे पाट देना चाहिए। इस उद्देश्यके लिए आपमें से कुछको कातने, धुनने तथा चरखोंको दुरुस्त करनेमें सिद्धहस्त होना चाहिए। इसका अर्थ है निरन्तर परिश्रम करते रहना। आप सूत कातनेको आजीविकाका साधन न समझेंगी। मध्य-वर्गके परिवारकी आय उससे बढ़ेगी। अलबत्ता बहुत ही गरीब स्त्रियोंके लिए यह आजीविकाका साधन है। चरखेको पहलेकी तरह विधवाओंका सहारा बनना है। किन्तु जो इस अपीलको पढ़ेंगी उनके सामने तो मैं चरखा यही कहकर पेश करना चाहता हूँ कि उसे चलाना आपका कर्त्तव्य और धर्म है। यदि भारतकी सभी सम्पन्न महिलाएँ प्रतिदिन एक निश्चित मात्रामें सूत कातने लगें तो उससे सूत सस्ता हो जायेगा और उसमें इतनी जल्दी आवश्यक सुन्दरता ले आयेंगी जितनी जल्दी कि अन्य उपायोंसे सम्भव नहीं।

इसलिए भारतकी नैतिक और आर्थिक मुक्ति प्रमुख रूपसे आपपर निर्भर करती है। भारतका भविष्य आपपर ही निर्भर है, क्योंकि भावी पीढ़ीका लालन-पालन आपके ही हाथमें है। आप चाहें तो भारतके बच्चोंका इस प्रकार लालन-पालन कर सकती हैं जिससे वे सादगी-पसन्द, ईश्वरप्रेमी और वीर स्त्री-पुरुष बनें; और आप चाहें तो वे कमजोर, जीवनकी आँधी झेलनेके लिए अनुपयुक्त तथा उन महीन विदेशी वस्त्रोंका उपयोग करनेवाले भी बन सकते है जिन्हें छोड़ने में फिर वे कठिनाई महसूस करेंगे। आगामी कुछ सप्ताहोंमें मालूम हो जायेगा कि भारतकी महिलाएँ किस मिट्टीकी बनी हैं। मुझे इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं कि आप क्या चुनेंगी। भारतका भाग्य जितना आपपर निर्भर करता है उतना उस सरकारपर नहीं, जिसने भारतका इतना शोषण किया है कि उसका खुद अपनेपर ही विश्वास नहीं रहा। महिलाओंकी प्रत्येक सभामें मैंने राष्ट्रीय प्रयत्नोंकी सफलताके लिए आपके आशीर्वाद-की माँग की है और मैंने ऐसा इस विश्वासके साथ किया है कि आप पवित्र है, आपको सादगी पसन्द है और आपमें आशीर्वाद देने योग्य धर्मपरायणता हैं। विदेशी वस्त्रोंका उपयोग छोड़कर और अपनी फुरसतके समय राष्ट्रके लिए नियमित रूपसे चरखा कातकर आप अपने आशीर्वादको निश्चय ही सफल बना सकती हैं।

आपका स्नेही भाई,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ११–८–१९२१

२५२. भाषण : गयामें[1]

१२ अगस्त, १९२१

महात्मा गांधीने श्रोताओंको सम्बोधित करते हुए कहा कि मुझे इस बातपर शर्म महसूस हो रही है कि मैं गो-रक्षाके प्रश्नपर भाषण देनेके लिए इलाहाबादसे यहाँ आया हूँ। दो मौलानाओंने[2] आपको बताया कि उस विषयपर उनका धर्म क्या कहता है। कोई व्यक्ति गायत्री न जपने तथा सन्ध्या और गायकी रक्षा न करनेपर भी हिन्दू कहला सकता है। साथ ही हिन्दू धर्म आपको मुसलमानों या अंग्रेजोंको मारनेके लिए भी नहीं कहता। आपको गायकी कुर्बानीसे होनेवाले दुःखको सहनेके लिए तैयार रहना चाहिए।

१. गांधीजीने ९–३० बजे रातको एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया था जिसमें लगभग २०,००० व्यक्ति उपस्थित थे। उनके साथ मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना आजाद सुभानी भी थे।
२. मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना आजाद सुभानी जिन्होंने उनसे पहले भाषण दिये थे।

मैं दीर्घकालसे इस तथ्यपर जोर देता आ रहा हूँ कि मुसलमानोंके प्रति हिन्दुओंके वैरके कारण गोवध होता है। मान लो यदि गयाकी ६५,००० आबादी १०,००० मुस्लिमोंसे बलपूर्वक गोवध बन्द कराना चाहे तो जरूर मुसलमानोंमें से कोई आगे आकर कहेगा: "मैं तुम्हारे सामने ही गोवध करूँगा।"

मुसलमानोंके हाथोंसे गायको छीन लेना हिन्दुत्वके अनुकूल नहीं है। 'गीता'में कहा है कि जबरदस्ती करना धर्मानुकूल नहीं है और बलप्रयोगमें भी धर्म नहीं है। 'रामायण' और 'गीता' दोनोंसे यही निष्कर्ष निकलता है। धर्मका रहस्य शान्ति बनाये रखनेमें है न कि भाइयोंको बुरा-भला कहनेमें। आप प्रार्थना कर सकते हैं किन्तु बलप्रयोग नहीं कर सकते। यदि कोई हिन्दू इन सिद्धान्तोंके विरुद्ध चलता है तो उसके बारेमें कहा जा सकता है कि उसने 'महाभारत' और 'मनुस्मृति' दोनों ही नहीं पढ़े। हिन्दुओंको खिलाफतकी रक्षा करनी चाहिए। यदि आप शान्ति और एकताके साथ कार्य करते हैं तो भारतीयोंके प्रति प्रेमकी भावना उत्पन्न होगी। यदि आप खिलाफतका समर्थन करेंगे तो गोवध अपने आप समाप्त हो जायेगा। हिन्दुओंको ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि मुसलमान उनके दुश्मन हैं। बम्बईमें सर्वश्री छोटानी तथा खत्रीने सैकड़ों गायोंको बचाया। यदि आप गौओंको मुसलमान भाइयोंके विवेकपर छोड़ दें तो गोरक्षा हो जायेगी।

यदि सरकारी कर्मचारी आपका साथ नहीं देते तो आप उनपर न तो आक्रमण करें और न उन्हें गाली ही दें। आपका कर्त्तव्य है कि आप उन्हें प्यार करें।

तीसरा मुद्दा जिसपर मैं जोर देना चाहता हूँ, वह स्वदेशी है। बिहार एक सुन्दर और पवित्र स्थान है। एक समय था जब यहाँ बहुत व्यापार होता था। बिहारके बहुतसे लोगोंने ईस्ट इंडिया कम्पनीकी नौकरियाँ स्वीकार कर ली थीं। पहले-पहल मुझे यहाँ स्वदेशीका उपक्रम करनेमें बड़ी कठिनाई हुई थी। चम्पारनमें जिन बालकोंने स्वदेशीका अनुसरण किया उनका मजाक उड़ाया गया। यह ईश्वरकी महिमा है कि धीरे-धीरे इसकी आवश्यकता अनुभव की जा रही है। मैंने देखा कि एक (गयावाल) पण्डेका लड़का सिरसे पाँवतक विदेशी वस्त्र पहने है। मुझे इससे बड़ा दुःख हुआ। यह जानकर मेरे हृदयको बड़ा दुःख हुआ कि पण्डे लोग इतने नासमझ हो गए हैं। पण्डे तो धर्मके संरक्षक और संन्यासी हैं। उन्होंने आगे कहा: आप लोगोंको वेश्या-गमन और जुआ खेलना छोड़ देना चाहिए अन्यथा आपको स्वराज्यकी आशा नहीं करनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, २१-८-१९२१

२५३. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

बिहार शरीफ
१३ अगस्त [१९२१][1]

प्रिय चार्ली,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले हैं। मैं जानता हूँ, सारे आन्दोलनकी योजना गरीबोंके प्रति सेवा-भावनाको लेकर बनाई गई है, इसलिए मेरा विदेशी वस्त्रोंकी होली जलाना गलत हो ही नहीं सकता। चूँकि विदेशी वस्त्रोंका अब हमारे लिए कोई उपयोग नहीं रहा है, इसलिए उन्हें गरीबोंमें बाँट देना मुझे नितान्त अपमानजनक लगता है। यह तो वही वस्त्र है, जिसने देशमें गरीबी फैलाई और हजारों स्त्रियोंको शर्मनाक जिंदगी बितानेपर मजबूर किया। हजारों सड़ी-गली टोपियोंकी बात तो दूर रही, यदि रेशमी रूमालों, महीन साड़ियो और उनसे भी महीन कमीजोंको गरीबोंमें बाँट दिया जाये तो स्वयं गरीब ही यह नहीं समझ सकेंगे कि अचानक उनपर यह दया क्यों हो रही है। विदेशी वस्त्रोंको जलानेका प्रमुख उद्देश्य यह है कि हमने विचारपूर्वक गरीबोंको हानि पहुँचाकर अपनेको जो विदेशी वस्त्रोंसे सुसज्जित किया है, उनके प्रति हमारे हृदयमें अत्यन्त घृणा उत्पन्न हो। हाँ, मुझे उन विदेशी वस्त्रोको पहनना पाप समझनेमें कोई बुराई नजर नहीं आती जिनका उद्देश्य भारतका अपमान करना और उसे गुलाम बनाना है। मैं इस समय इस प्रयत्नमें हूँ कि शल्यक्रिया हाथको दृढ़ रखकर की जाये जिससे वह सुचारु रूपसे हो सके। मैं उस वस्त्रका आदर करूँगा जिसे किसी यूरोपीय बहनने प्रेमके साथ तैयार किया हो, किन्तु फिर भी मैं उस निषिद्ध वस्त्रका उपयोग करनेको राजी नहीं हो सकता क्योंकि किसी व्यक्तिको माँके हाथसे भी ऐसा अपाच्य भोजन स्वीकार करनेके लिए तैयार नहीं होना चाहिए जिसे वह प्रेमके कारण अज्ञानवश दे रही हो। श्रीमती रॉबर्ट्सने मेरे लिए एक ऐसी चीज भेजी थी जिसमें उनकी दृष्टिसे, दूधके सब गुण मौजूद थे किन्तु जो गायके दूधसे नहीं बनाई गई थी। किन्तु जब मुझे मालूम हुआ कि वह दूधसे बनाई गई है तब मैंने तुरन्त उन्हें यह बात बताई और उसका उपयोग न करनेकी छूट माँगी। उन्होंने न केवल मेरे दृष्टि-कोणको समझा बल्कि गलतीके लिए क्षमा-याचना भी की। तथ्य यह है कि मैं जीवनमें अनुशासन और संयम चाहता हूँ। तथाकथित योगियों द्वारा अपने शरीरको दी जानेवाली यातनामें अक्सर उक्त गुण विकृतिके रूपमें दिखाई देते है। किन्तु उनके मूलतत्त्व अत्यधिक जाँच-पड़तालमें भी खरे उतरेंगे। तुम इसका ठीक अनुमान नहीं लगा सकते कि वे लोग जो पापीसे घृणा करते थे किस प्रकार चुपचाप अनजाने ही पापीके बजाय पापसे घृणा करने लगे हैं। पहली अगस्तको बम्बईकी अंग्रेज महिलाओंको [भारतीयोंसे सावधान रहनेको] चेताया गया था! किन्तु उस दिन स्टोक्स और एक

१. गांधीजी १९२१ में इन्हीं दिनों बिहार शरीफमें थे ।

अंग्रेज नर्स प्लेटफार्मपर लगभग तीन लाख भारतीय स्त्री-पुरुषोंके बीचमें खड़े थे। भगवान् ही जानता है कि यह सब अन्तमें क्या रंग लायेगा। मैं तो इतना ही जानता हूँ कि आज बहुतसे लोग ऐसे हैं जो यह सब मानव-प्रेमके कारण कर रहे हैं।

हाँ, पेटिटके पास जो पैसा है वह मेरा ही है किन्तु मेरा उसपर नियन्त्रण नहीं है। अच्छा होता कि तुम उनकी इनकारीके बारेमें मुझे पहले सूचना दे देते। मैं प्रयत्न करूँगा। कृपया मुझे बताओ कि मालवीयजीने क्या कहा है। यदि वास्तवमें तुम्हें कोई कठिनाई महसूस होती हो तो मेरी सहायता ले सकते हो। तुम्हारे प्रस्थानकी अन्तिम तारीख क्या है?

मैंने स्टोक्सके साथ अच्छा समय बिताया है। हम संयुक्त-प्रान्तका दौरा करते समय छः दिनतक साथ-साथ रहे।

मैं तुमसे सहमत हूँ कि हमें अफीमके विरुद्ध भी उसी तरह कार्य करना चाहिए जिस प्रकार हम मद्यपानके विरुद्ध कर रहे हैं। मैं यह निश्चित रूपसे अनुभव कर रहा हूँ कि यदि स्वदेशीका कार्यक्रम उचित रूपसे आगे बढ़ता रहा और शान्ति तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता कायम रही तो हम जरूर इस वर्षके अन्दर स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे। तब नई जिन्दगीकी शुरुआतके साथ-साथ अफीम तथा इसी प्रकारकी अन्य घृणित वस्तुएँ भी समाप्त हो जायेंगी।

सस्नेह,

तुम्हारा,
मोहन

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ९६२) की फोटो-नकलसे।

२५४. पत्र : महादेव देसाईको

गया
शनिवार [१३ अगस्त, १९२१][1]

भाईश्री महादेव,

तुम्हारा पत्र मिला। आत्मार्पणमें मौलिक सृजनकी शक्तिका लोप नहीं होता और न ही होना चाहिए। आत्मार्पणका अर्थ इतना ही है कि मनुष्य अपनी लघुताको समझता है और जिसका भरोसा करता है, उसका अवलम्ब लेता है। जब किसी विषयमें शंका होती है तो वह अपनी बातपर आग्रह नहीं रखता; प्रत्युत अपने साथीके आग्रहको ठीक मान लेता है। अर्जुनने कृष्णके सम्मुख जिज्ञासा करनेमें कमी नहीं रखी। कच्छप

१. प्रोफेसर कृपलानीने गांधीजीको अपने साथ किसी बंगालीको रखनेका सुझाव इसी दिन दिया था और उसका उल्लेख इस पत्रमें है। उनके इस सुझावके तत्काल बाद कृष्णदास गांधीजीके साथ रहने लग गये थे।

प्रभु-भक्त था। कच्छपीने अन्ततक ईश्वरका नाम लिया। यद्यपि . . . ने[1] अपने मन्त्रियोंका तिरस्कार किया और उनको राज्यसे निकाल दिया; किन्तु वह ईश्वरसे द्रोह तो करता ही रहा। आत्मार्पणका अर्थ यह नही है कि मनुष्य स्वयं अपनी विचार-शक्तिको ही गँवा बैठे। शुद्ध आत्मार्पणका परिणाम विचार-शक्तिका कुण्ठित हो जाना नही, उसका तीव्र होना है। ऐसा मनुष्य यह समझकर कि उसका एक अन्तिम अवलम्ब तो है ही, अपनी मर्यादाके भीतर रहता हुआ सहस्रों प्रयोग करता रहता है। किन्तु उन सबके मूलमें उसकी विनम्रता रहती है, उसका ज्ञान और विवेक रहता है। मैं मानता हूँ कि मेरे प्रति मगनलालकी आत्मार्पण-बुद्धि बहुत अधिक है, किन्तु फिर भी उसने स्वयं विचार करना कभी नहीं छोड़ा, मेरी ऐसी मान्यता है। तुम्हारा आचरण उससे भिन्न है। तुममें साहसकी कमी है; जब भी सहारा मिलता है तुम साहस खो देते हो। बहु-पठित होनेसे तुम्हारी अपनी सृजनकी शक्ति कुण्ठित हो गई है; इसी कारण तुम सहकारी होना चाहते हो। मनुष्य स्वतन्त्र कार्य करनेकी इच्छा रखते हुए भी अति विनम्र हो सकता है।

तुम जिस दृष्टिसे मेरे साथ रहना चाह रहे हो, वह शुद्ध है; किन्तु वह भ्रमयुक्त है। तुम तो केवल पश्चिमका अनुकरण करना चाहते हो। यदि मै किसी मनुष्यको अपने कार्यका लेखा रखनेके उद्देश्यसे ही सदा अपने साथ रखूँ तो स्वयं मेरा यह व्यवहार अस्वाभाविक हो जायेगा। कोई सामान्यतः मेरे साथ रहे और मेरे कार्यका लेखा अदृश्य रूपसे रखे, यह एक बात है और कोई इसी इरादेसे साथ रहकर लेखा रखे, यह बिलकुल दूसरी बात है। रामके कार्यका लेखा किसने रखा था? उसका लेखा नहीं रखा गया, इससे कोई हानि तो नही हुई। जॉन्सनके कार्यका लेखा पूरा रखा गया उससे दुनियाको कोई अनुपम लाभ हुआ हो ऐसा मुझे नहीं दीखता। हम इस बातपर केवल साहित्यिक दृष्टिसे ही तो विचार नहीं करते। किन्तु मैं यह तो चाहता ही हूँ कि तुम मेरे साथ हर वक्त रहो। तुम्हारी ग्रहणशक्ति और तैयारी अच्छी है; इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम मेरी सभी बातें जान लो। मेरे मस्तिष्कमें विचार बहुत हैं; किन्तु वे प्रसंग आनेपर ही व्यक्त होते हैं। उनमें कई सूक्ष्मताएँ होती हैं, जो किसीको दिखाई नही दे सकतीं। वसन्तराम शास्त्रीके पत्रपर[2] की गई मेरी शुद्ध टीका न काका[3] समझे और न स्वामी।[4] उसे उनसे कुछ अधिक तुमने समझा। उस टीकामें निहित मेरी मृदुलता किसीको दिखाई नहीं दी। यदि तुम जैसा कोई मनुष्य मेरे साथ रहे तो वह अन्तमें मेरे कामको हाथमें ले सकता है, यह लोभ मेरे मनमें रहता है। मेरी अभी तुमको किसी एक काममें लगा देनेकी इच्छा नहीं होती; प्रत्युत मै तुमको अनुभव कराना चाहता हूँ। फिर जिन लोगोंको मै जानता हूँ उन सबसे तुम्हारा सम्पर्क हो जाये तो भविष्यमें इस प्रवृत्तिको चलानेमें सुविधा रहेगी।

१. साधन-सूत्रमें यह अंश अस्पष्ट है।

२. देखिए "टिप्पणियाँ", १७-७-१९२१।

३. काका कालेलकर।

४. स्वामी आनन्द।

वालजी[1] और स्वामीका तार मिला है कि अगले अंकोंमें भूल नहीं होगी। प्रोफेसरने[2] फिर यह इच्छा प्रकट की है कि मैं अपने साथ किसी बंगालीको रखूं। इसलिए तुम जब वहाँसे निवृत्त हो जाओ तब यहाँ मेरे पास आ जाओ, यह ठीक रहेगा। यदि तुम स्वयं 'यंग इंडिया' के कार्यको हाथमें लेकर उसको स्वतन्त्र रूपसे चलाना चाहो तो इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है। किन्तु मैं तो यही ठीक मानता हूँ। मेरे जानेपर 'यंग इंडिया' अनावश्यक हो जायेगा। यदि तुममें से कुछ लोगोंको यह विश्वास हो कि तुम मेरे जानेपर मेरे सन्देशको पहुँचाते रहोगे तो तुम इसे चलाओगे। किन्तु इसके लिए भी मुझे तुम्हारा उसमें रहना जरूरी नहीं जान पड़ता। इससे पहले मुझे यह जरूरत जान पड़ती है कि तुम विविध अनुभव प्राप्त करके परिपक्व हो जाओ। तब तुम 'यंग इंडिया' को अधिक कुशलतासे चला सकोगे। 'इंडिपेंडेंट' के सम्बन्धमें जवाहरलालसे बात कर लो। उन्हें संयुक्त-प्रान्तके ही किसी व्यक्तिको ढूंढ़ना चाहिए। हिन्दुस्तानीके इतने बड़े क्षेत्रमें से क्या कोई न मिलेगा। कपिलदेव मालवीय[3] कैसे हैं? जो भी हो, इन सब बातोंपर जवाहरलालसे बातचीत कर लो।

तुमने २५,००० रुपयेकी अच्छी याद दिलाई। मैं इस सम्बन्धमे सब व्यवस्था किये दे रहा हूँ। छपाई सुधरनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैं देवदासको अभी वहीं रहनेके लिए लिख रहा हूँ। पत्रको लिखकर पढ़नेका समय नहीं मिला है।

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४१७) की फोटो-नकलसे।

२५५. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

शनिवार [१३ अगस्त, १९२१][4]

आप इतने सख्त बीमार हो गये थे, इसका मुझे अनुमान नहीं था। फिर भी आपसे आकर मिलनेकी आशा तो अन्ततक किये रहा। किन्तु आ कैसे सकता था? मैं बोरीबन्दर समयसे पाँच ही मिनट पहले पहुँचा था। फिर एकके बाद दूसरा काम निकलता चला गया। आप जो आशा करते हैं उसे मैं समझता हूँ; किन्तु मुझे अपने अत्यन्त प्रियजनों [से मिलने] की इच्छा छोड़नी भी पड़ती है। मेरे सम्मुख ऐसे अनेक

१. वालजी गोविन्दजी देसाई।

२. आचार्य जीवतराम बी० कृपलानी (जन्म १८८८); शिक्षाविद्, राजनीतिज्ञ और १९४६ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष।

३. उत्तर प्रदेशके एक राजनैतिक कार्यकर्ता।

४. साधन-सूत्रमें यही तारीख दी गई है।

प्रसंग आ चुके हैं। और मेरे लिए यही उचित है। इसलिए आप मुझसे आशा करते हैं, यह मानते हुए मैं यह भी कहता हूँ कि यदि आपकी आशा नहीं फली तो आप निराश भी न हों। और भविष्यमें जब आपका बहुत मन हो तो मुझे यह कहला भी भेजे कि अब तो आये बिना गुजर नहीं है। यदि आप सभी ऐसा करें तो मैं निश्शंक हो सकता हूँ। स्टेशन पास आ रहा है, इसलिए इस पत्रको यही समाप्त करता हूँ।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

२५६. भाषण : बिहार शरीफकी सार्वजनिक सभामें[1]

१३ अगस्त, १९२१

. . . गांधीजीने उन्हें और उनके भाई मौलाना मुहम्मद अलीको दिये गये मानपत्रके लिए नगरपालिकाके सदस्योंको धन्यवाद देते हुए कहा : आप लोग देशमें फैली विभिन्न बुराइयाँ दूर करनेके लिए चलाये गये वर्तमान संघर्षमें समुचित रूपसे योगदान करें। गोवधका उल्लेख करते हुए उन्होंने हिन्दुओंसे कहा : यदि आप गोवधके सवालको उचित ढंगसे हल करना चाहते हैं तो आप खिलाफतके सवालपर मुसलमानोंका साथ दें और रोज सुबह गो-रक्षाके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करें। भाषण समाप्त करते हुए उन्होंने सभामें उपस्थित प्रत्येक व्यक्तिसे अपील की : आप चरखेको अपनायें और ३० सितम्बरसे पहले विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार करनेके लिए कटिबद्ध हो जायें। उनके भाषणोंको सारी जनता शान्तिसे सुनती रही। ८ बजे रातको सभा समाप्त होनेके बाद गांधीजी परदानशीन महिलाओंकी सभामें शामिल हुए जहाँ उन्हें नकदी और गहने भेंटमें मिले।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, २१-८-१९२१

१. यह सभा देवीसराय मैदानमें ६ बजे शामको हुई थी। गांधीजीको नगरपालिकाकी ओरसे मानपत्र भेंट किया गया था। वे मौलाना मुहम्मद अलीके बाद बोले थे।

२५७. मृत्युका भय

मैं स्वराज्यकी व्याख्याएँ एकत्र कर रहा हूँ। उनमें एक व्याख्या यह भी है — मृत्युके भयका त्याग। जिस देशके लोग मृत्युके भयसे भीत रहते हैं वे न तो स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं और न उसे सँभाल ही सकते हैं। अंग्रेज लोग तो मौतको जेबमें लिये घूमते हैं, अरब और काबुली भी मरणको एक मामूली अलामत समझते हैं। जब उनके यहाँ कोई मर जाता है तब वे रोते-पीटते नहीं। बोअर-स्त्रियाँ तो जानती ही नहीं थीं कि मरणका भय क्या चीज है। बोअर-युद्धके समय हजारों बोअर-युवतियाँ विधवा हो गई। पर उन्होंने इसकी कुछ परवाह न की। उन्होंने अपने दिलको समझाया कि मेरे पति या पुत्र मर गये तो क्या हुआ, मेरे देशकी इज्जत तो कायम रही। यदि देश गुलाम हो जाता तो पतिके रहनेसे भी क्या होता? अपने गुलाम बेटेकी परवरिश करनेकी अपेक्षा तो उसकी लाशको कब्रमें दफना देना और उसकी आत्माको याद करते रहना ही अच्छा है। इस तरह धीरज रखकर असंख्य बोअर-रमणियोंने अपने प्रियजनोंका बिछोह सहा।

ये उन लोगोंके उदाहरण हैं जो खुद तो मरते ही हैं और दूसरोंको भी मारते हैं। परन्तु जो लोग मारते नहीं सिर्फ मरते-भर हैं, उनका क्या पूछना? ऐसोंकी तो संसार पूजा करता है। ऐसोंकी बदौलत देशका उत्कर्ष होता है। अंग्रेज और जर्मन दोनों आपसमें लड़े। दोनोंने मार मारी और मार खाई। फल यह हुआ कि शत्रुता बढ़ गई, अशान्ति बढ़ गई और आज यूरोपकी दशा दयनीय हो गई है; पाखण्डकी वृद्धि हुई है और वे एक-दूसरेको फाँसनेका प्रयत्न कर रहे हैं। परन्तु जिस मृत्यु-भयको छोड़नेका अथक प्रयत्न हम कर रहे हैं वह तो एक शुद्ध यज्ञ है और उसके द्वारा हम, थोड़े ही समयमें, बड़ी भारी विजय प्राप्त करनेकी आशा रखते है।

जब हमें स्वराज्य मिल जायेगा तब या तो हममें से अधिकतर लोगों ने मौतका डर छोड़ दिया होगा अथवा हमें स्वराज्य ही न मिला होगा। अभी तक तो देशके ज्यादातर नौजवान ही मरे हैं। अलीगढ़में जितने लोगोंकी जानें गई हैं वे सब २१ वर्षसे कम अवस्थावाले थे। उन्हें तो कोई जानता भी नहीं था। पर अब भी यदि सरकार खून-खराबी करनेपर तुली ही हो तो मैं यह विश्वास किये बैठा हूँ कि उस समय देशके प्रथम श्रेणीके किसी व्यक्तिकी बलि होगी।

बालक, जवान या बूढ़े मरें, हम इससे भयभीत क्यों हों? कोई पल ऐसा नहीं जाता जब इस जगत्‌में कहीं किसीका जन्म और कहीं किसीकी मृत्यु न होती हो। पैदा होनेपर खुशियाँ मनाना और मौतसे डरना बड़ी मूर्खता है, यह बात हमें सदा ही अनुभव करनी चाहिए। जो लोग आत्मवादी हैं — और हममें कौन ऐसा हिन्दू, मुसलमान या पारसी होगा जो आत्माके अस्तित्वको न मानता हो — वे जानते हैं कि आत्मा कभी मरती नहीं। यही नहीं बल्कि जीवित और मृत, समस्त प्राणी एक ही हैं, उनके गुण भी एक ही हैं। इस दशामें, जब कि जगत्‌में उत्पत्ति और लय

पल-पलपर होती ही रहती है, हम क्यों खुशियाँ मनायें और क्यों शोक करें? सारे देशको यदि हम अपना परिवार मानें—यदि हमारी भावना इतनी व्यापक हो—और देशमें जहाँ-कहीं किसीका जन्म हुआ हो उसे हम अपने ही यहाँ हुआ मानें तो फिर आप कितने जन्मोत्सव मनायेंगे? देशमें जहाँ-जहाँ मृत्यु हो उन सबके लिए यदि हम रोते रहें तो हमारी आँखोंके आँसू कभी सूखेंगे ही नहीं यह सोचकर हमें मृत्युका डर छोड़ ही देना चाहिए।

प्रत्येक भारतवासी अधिक ज्ञानी, अधिक आत्मवादी होनेका दावा करता है। तिसपर भी मौतके सामने जितने दीन हम हो जाते हैं उतने और लोग शायद ही होते हों। और उसमें भी मेरा खयाल है कि हिन्दू लोग जितने अधीर हो जाते हैं उतने भारतके दूसरे लोग नहीं होते। अपने यहाँ किसीका जन्म होते ही हमारे घरोंमें आनन्द-मंगल उमड़ पड़ता है और जब कोई मर जाता है तब इतना रोना-पीटना मचता है कि आसपासके लोग हैरान हो जाते हैं। यदि हम स्वराज्य लेना चाहते हैं और अपनेको उसके योग्य सिद्ध करना चाहते हैं तो हमें मृत्युका भय बिलकुल छोड़ ही देना चाहिए।

और जो मनुष्य मृत्युका भय छोड़ देगा उसे जेलका भय क्योंकर होगा? पाठक यदि विचार करेंगे तो उन्हें मालूम हो जायेगा कि स्वराज्य-प्राप्तिमें हमें जो विलम्ब हो रहा है उसका एकमात्र कारण है—हम लोगोंमें मृत्यु तथा उससे हलके दुःखोंको सहनेकी शक्तिका अभाव।

ज्यों-ज्यों अधिकाधिक निरपराध मनुष्य जान-बूझकर मौतको गले लगानेके लिए तैयार होते जायेंगे त्यों-त्यों दूसरे लोगोंका बचाव होता जायेगा और दुःख भी कम होता चला जायेगा। जो दुःख खुशीके साथ सहन किया जाता है वह दुःख नहीं रहता, बल्कि सुख हो जाता है। जो दुःखसे जी चुराता है वह बहुत कष्ट उठाता है और संकटके उपस्थित होनेपर निर्जीव-सा हो जाता है। जो आनन्दके साथ दुःखका स्वागत करनेके लिए पैर बढ़ाता है उसे वह आरम्भिक दुःख, जो केवल दुःखकी कल्पनासे ही उत्पन्न होता है, कैसे हो सकता है? आनन्द पीड़ापर क्लोरोफार्मका काम करता है।

इस विषयपर इस समय जो मुझे इतना लिखना पड़ा सो इसलिए कि यदि "हमें इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना हो तो मृत्युका विचार भी कर लेना होगा।" जो लोग पहलेसे तैयारी कर रखते हैं वे आपत्तिसे बच जाते हैं, हमारे विषयमें भी ऐसा हो सकता है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि स्वदेशी-आन्दोलन हमारी ऐसी ही पेशबंदी है। यदि इसमें हमारी फतह हो गई तो मैं समझता हूँ, सरकारको अथवा और किसीको हमारी अग्नि-परीक्षाकी आवश्यकता ही न रहेगी।

परन्तु इतना होनेपर भी, यह आवश्यक है कि हम गफलतमें न रहें। सत्ता अन्धी और बहरी होती है। वह अपने बिलकुल पासकी घटनाओंको भी नहीं देख पाती। अपने कानके पासका कोलाहल भी वह नहीं सुन सकती। अतएव यह नहीं कहा जा सकता कि जो सरकार मदोन्मत्त है वह क्या नहीं कर बैठेगी। इसलिए मेरे मनमें यह खयाल उठा कि अब देश-सेवकोंको मृत्यु, जेल अथवा दूसरी आपत्तियोंका एक मित्रकी तरह स्वागत करनेकी तैयारी कर रखनी चाहिए।

एक शूरवीर जिस प्रकार हँसते हुए मृत्युका स्वागत करता है उसी प्रकार वह सावधान भी रहता है। शान्तिमय संग्राममें तो गफलतके लिए गुंजाइश ही नही है। जो नीति और सदाचारके विरुद्ध हैं, हम ऐसे अपराध करके न तो जेल जाना चाहते हैं और न फाँसीपर ही लटकना चाहते हैं। हमें तो सरकारके अन्यायपूर्ण कानूनोंका सामना करते हुए बलिदान होना है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-८-१९२१

२५८. स्वराज्यकी व्याख्या

स्वराज्यकी व्याख्याओंके सम्बन्धमें मैं अपने मनमें तो विचार किया ही करता हूँ। अब उन्हें पाठकोंके सामने भी उपस्थित करता हूँ:

(१) स्वराज्यका अर्थ है — स्वयं अपने ऊपर प्राप्त किया हुआ राज्य। इसे जो मनुष्य प्राप्त कर चुका है वह अपनी व्यक्तिगत प्रतिज्ञाका पालन कर चुका।

(२) परन्तु हमने तो उसके कुछ लक्षणों, और स्वरूपकी कल्पना की है। अतएव स्वराज्यका अर्थ है — देशके आयात और निर्यातपर, सेना और अदालतोंपर जनताका पूरा नियन्त्रण। दिसम्बरकी प्रतिज्ञाका यह अर्थ है। इसमें अंग्रेजी साम्राज्यके साथ सम्बन्ध रखनेके लिए जगह है भी और नहीं भी है। यदि खिलाफत और पंजाब-काण्डका निपटारा न हो तो जगह नहीं है।

(३) परन्तु व्यक्तिगत स्वराज्यका उपभोग तो साधु लोग आज भी करते होंगे, और हमारी पार्लियामेंट स्थापित हो जानेपर भी, सम्भव है लोगोंकी दृष्टिमें स्वराज्य न आये। इसलिए स्वराज्यका अर्थ है — अन्न-वस्त्रकी बहुतायत। परन्तु वह इतनी होनी चाहिए कि किसीको भी उसके बिना भूखा और नंगा न रहना पड़े।

(४) ऐसी स्थिति हो जानेपर भी एक जाति या एक श्रेणीके लोग दूसरोंको दबा सकते हैं। अतएव स्वराज्यका अर्थ है — ऐसी स्थिति जिसमें एक बालिका भी घोर अन्धकारमें निर्भयताके साथ घूम-फिर सके।

(५) उपर्युक्त चार व्याख्याओंमें कितनी ही बातोंका समावेश दिखाई देगा। तथापि राष्ट्रीय स्वराज्यमें प्रत्येक अंग सजीव और उन्नत हो जाये और होना चाहिए तो उस दशामें स्वराज्यका अर्थ होगा अन्त्यजोंके प्रति अस्पृश्यताकी भावनाका सर्वथा लोप।

(६) ब्राह्मणों और अब्राह्मणोंके झगड़ेकी समाप्ति।

(७) हिन्दू-मुसलमानोंके मनोमालिन्यका सर्वथा नाश। इसका अर्थ है कि हिन्दू मुसलमानोंकी भावनाओंका ध्यान रखें और इसके लिए जानतक दे दें। इसी तरह मुसलमान हिन्दुओंकी भावनाओंका ध्यान रखें। मुसलमान गो-हत्या करके हिन्दुओंका दिल न दुखायें; बल्कि स्वयं ही गो-वध बन्द कर दें और अपने हिन्दू भाईके चित्तको चोट न पहुँचने दें तथा हिन्दू, बिना किसी तरहका बदला चाहे, मसजिदोंके सामने बाजे न

बजायें और मुसलमानोंका जी न दुखायें, बल्कि मसजिदोंके पाससे गुजरते हुए बाजे बन्द रखनेमें बड़प्पन समझें।

(८) स्वराज्यका अर्थ है — हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई, यहूदी, सभी धर्मोंके लोग अपने-अपने धर्मका पालन कर सकें और ऐसा करते हुए एक-दूसरेकी रक्षा और एक-दूसरेके धर्मका आदर करें।

(९) स्वराज्यका अर्थ है कि प्रत्येक ग्राम चोरों और डाकुओंके भयसे अपनी रक्षा करनेमें समर्थ हो जाये और प्रत्येक ग्राम अपने लिए आवश्यक अन्न-वस्त्र पैदा करे।

(१०) स्वराज्यका अर्थ है — देशी राज्यों, जमींदारों और प्रजामें मित्रभाव रहे, देशी राज्य अथवा जमींदार प्रजाको परेशान न करें और रियाया, राजा अथवा जमींदारको तंग न करे।

(११) स्वराज्यका अर्थ है — धनवान् और श्रमजीवियोंमें परस्पर मित्रता। मजदूर उचित मजदूरी लेकर धनवान्के यहाँ खुशीसे मजूरी करे।

(१२) स्वराज्य वह है जिसमें स्त्रियाँ माता और बहनें समझी जायें और उनका मान-आदर हो तथा ऊँच-नीचका भेदभाव दूर होकर सब परस्पर भाई-बहनकी भावनासे बरताव करें।

इन व्याख्याओंसे सिद्ध होता है कि

(१) स्वराज्यमें राज्यसत्ता, शराब, अफीम इत्यादि [मादक पदार्थों]का व्यापार न करे।

(२) स्वराज्यमें अनाज और रुईका सट्टा न हो।

(३) स्वराज्यमें कोई कानूनको भंग न करे।

(४) स्वराज्यमें स्वेच्छाचारके लिए बिलकुल स्थान न रहे, जिससे कोई अपने ही खिलाफ की गई शिकायतका फैसला खुद ही काजी बनकर न करे बल्कि देशकी बनाई अदालतमें अपने खिलाफ की गई फरियादका फैसला होने दे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४–८–१९२१

२५९. अस्पृश्यता और राष्ट्रीयता

अंकलेश्वरसे एक सज्जनने बहुत लम्बा पत्र लिखा है। उनका कहना है कि राष्ट्रीय आन्दोलनमें अस्पृश्यताको दाखिल करके मैंने हिन्दुस्तानको भारी नुकसान पहुँचाया है। मैंने उस सवालकी चर्चा करनेमें अति की है और व्यर्थ ही हम लोगोंमें अनबनका कारण उत्पन्न कर दिया है। इस भाईके पत्रमें लगाये गये अन्य आक्षेपोंका कोई हिसाब नहीं है। उनका मैं यहाँ उत्तर नहीं दे रहा हूँ, [मुझे उम्मीद है] इसके लिए वे मुझे क्षमा करेंगे।

कुछ-एक सामाजिक प्रश्न इतने व्यापक होते हैं कि उन्हें राजनैतिक बनाये बिना काम ही नहीं चल सकता। हिन्दू-मुस्लिम एकताके प्रश्नको अगर सामाजिक मानकर निकाल दें तो हमारी गाड़ी पहली मंजिलपर ही अटक जायेगी। दक्षिणमें ब्राह्मण और ब्राह्मणेतर प्रश्न इतना उग्र हो गया है कि जो राजनैतिक पक्ष उसे छोड़ देगा वही मृत्युको प्राप्त होगा। अमुक प्रश्नको राष्ट्रीय आन्दोलनमें शामिल किया जाना चाहिए अथवा नहीं, इसका निर्णय करना आसान है। जिसका निर्णय किये बिना हमारा काम रुक जाये उसका निर्णय करना ही चाहिए। मेरा यह निश्चित मत है कि यदि मैंने अस्पृश्यताके प्रश्नको न उठाया होता तो हमारा आन्दोलन आगे बढ़ ही नहीं सकता था। हम घोर अज्ञानवश जिन लोगोंको अस्पृश्य मानकर अपमानित कर रहे हैं उन छः करोड़ लोगोंको छोड़कर हम स्वर्गके विमानमें कदापि नही बैठ सकते। वे लोग भूमिपर होनेके कारण उस विमानको पकड़े रहेंगे और वह उड़ान नहीं भर सकेगा। विमानको पकड़कर, जैसे-तैसे लटके रहकर भी वे उड़ सकते हैं — ऐसा अगर मुझे लगता तो मैं इस प्रश्नको न उठाता। पत्र-लेखकके पत्रसे मुझे ऐसा लगता है कि वह वर्तमान राज्यतन्त्रसे परिचित ही नहीं है।

इस राज्य-व्यवस्थाका महल हमारी दुर्बलताओंकी नींवपर ही उठाया गया है। आज हिन्दू-मुसलमानका प्रश्न, तो कल ब्राह्मण-ब्राह्मणेतरका प्रश्न, और फिर अस्पृश्यता तथा राजा और प्रजाका प्रश्न, धनवान और मजदूरका प्रश्न, हमारे मद्यपान आदिके शौकसे — इस राज्य-व्यवस्थाने हमारी इन दुर्बलताओंका हमेशा लाभ उठाया है, इसीसे अपनी लड़ाईको हमने आत्म-शुद्धिकी लड़ाई माना है। मैंने अस्पृश्यताको सबसे बड़ा कलंक माना है; क्योंकि हिन्दू-संसारने इस वर्गपर डायरशाही चलाई है।

मैं शास्त्रजालमें पड़कर भरमनेवाला व्यक्ति नहीं हूँ। मेरी आँखोंने जो देखा है उसे मैं ऐसे ही दरगुजर नहीं कर सकता। जहाँ भी देखता हूँ वहाँ मैं अन्त्यजोंको तिरस्कृत होते हुए देखता हूँ। एक पत्र-लेखक अभिमानके साथ लिखता है कि हिन्दू समाजने अन्त्यजोंका यदि सचमुच तिरस्कार किया होता तो अन्त्यज कभीके नष्ट हो गये होते। मुझे तो लगता है कि हमने ही उनका नाश नहीं किया क्योंकि उनसे हमें अपनी गन्दगी उठवानी थी। गुलामोंका नाश कौन करता है? जिसे भार उठवाना है, वह अपने जानवरका नाश नहीं करता। हमने अन्त्यजोंसे कितना भार उठवाया है और

उन्हें किस तरह गुलाम बनाया है, इसका जब मै विचार करता हूँ तब मुझे अपना जीवन भार लगने लगता है। लेकिन मेरी समझमें तो हमारे अत्याचारोंमें अज्ञान है, इरादा नहीं; इसीलिए शब्द-प्रहारोंके बावजूद मै अत्यन्त प्रेम और विनयसे हिन्दू-संसारको जाग्रत कर रहा हूँ और जी रहा हूँ। अन्त्यजोंके प्रति आज हमारा जो व्यवहार है उसके लिए हमारे पास एक भी नैतिक कारण नहीं है।

किसी मैली चीजसे छू जानेपर नहानेकी बात मुझे अच्छी लगती है। मैं स्वयं भी नहाता हूँ। दूसरोंको भी वैसा करनेकी सलाह देता हूँ। लेकिन जो मेरे जैसे ही शरीरसे शुद्ध जान पड़ते हैं उनकी जात पूछकर अगर वे अन्त्यज हों तो उनको त्यागने-का न्याय तो मुझे असह्य है।

स्वराज्यमें दुर्बलकी रक्षा प्रधान है। यदि हम उनकी रक्षा करनेके लिए तैयार न हों, अपने कुओंसे उन्हें पानी न भरने दें, उन्हें गन्देसे-गन्दे मुहल्लोमें रखें, उन्हें अपने स्कूलोंमें न आने दें, और आने भी दें तो उन्हें अलग आसन दें, हमसे भी ज्यादा साफ होकर आनेपर भी उनसे छू जानेपर हम नहायें तो यह हिन्दू-शास्त्र नहीं है; अपितु शास्त्रोंकी ज्यादती है और डायरशाही है।

अन्त्यजोंके पक्षके एक भाई मुझे लिखते हैं कि लॉर्ड क्लाइवने[1] अन्त्यजोंकी सहायता लेकर अन्य लोगोंका दमन किया था। मैंने इस बातकी जाँच नहीं की है, लेकिन उसकी सचाईके सम्बन्धमें मुझे कोई सन्देह नहीं है। आज भी अगर अन्त्यज भुलावेमे पड़ जायें तो ऐसे अनेक क्लाइव पड़े हैं जो उसका मनमाना लाभ उठाकर सिर उठानेवालों को कुचलनेके लिए तैयार हैं। गोरखोमें हमारा ही खून है; चाँदपुरमें निर्दोष मजदूरोंपर उनका उपयोग किसने किया? अब सिखोंकी आँखें खुली हैं। लेकिन इस राज्य-व्यवस्थामें हमें दबानेके लिए क्या इस बहादुर कौमका कम उपयोग किया गया है?

अपनी दुर्बलताओंको छिपानेसे, सबलता कहकर उनका वर्णन करनेसे, उनमे सुधार करनेकी बातको मुल्तवी रखनेसे हम अपने ही गलेमें फन्दा डालते हैं।

जिस धर्ममें गरीबका भाग निकालकर खानेका रिवाज है उसी धर्मके अनुयायी अगर दूरसे ही अन्त्यजोंकी झोलीमें अपनी थालीकी बची हुई जूठन और सड़ा हुआ अनाज फेंकें तो उनके इस अकृत्यको डायरशाही न कहकर और क्या कहा जायेगा?

प्रस्तुत पत्र-लेखक कहते हैं कि भड़ौच परिषद्में जब अन्त्यजोंको दाखिल किया गया उस समय सब लोग वहाँ बैठे रहे सो केवल संकोचवश; लेकिन उनके दिलोंको ठेस पहुँची थी। यदि ऐसी बात है तो इसका मुझे दुःख है। अगर हम स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं तो हम एक-दो व्यक्ति ही क्यों न हों, हमें अपने विचारोंको प्रकट करना चाहिए और उनपर अमल करना चाहिए।

मैं जानता हूँ कि अस्पृश्यताके सम्बन्धमें लेख लिखकर अथवा भाषण देकर मैंने अनेक भावुक हिन्दुओंके दिलोंको दुखाया है। लेकिन साथ ही मैं यह भी जानता हूँ कि इसमें द्वेष नहीं है और न कभी था। वैद्य जब रोगीको चिरायता देता है तब

१. लॉर्ड रॉबर्ट क्लाइव (१७२५–१७७४)।

रोगी बुरा मुँह बनाते हुए भी जानता है कि यह चिरायता उसके लिए सबसे अच्छी औषध है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-८-१९२१

२६०. समझौता ?

इस तरहके मिले हुए पत्रोंमें यह कोई अकेला पत्र[1] नहीं है। मैंने भी वसन्तराम शास्त्रीके लेखको पसन्द किया, इसके लिए मुझे कितने ही मित्रोंने उलाहना दिया है; तथापि इस सम्बन्धमें व्यक्त किये गये विचारोंपर मैं दृढ़ हूँ। उपर्युक्त पत्र और इस तरहकी टीकाएँ मुझे प्रिय हैं। यह एक सन्तोषजनक बात है कि अब बहुत सारे लोग अस्पृश्यताके दोषको देखने लगे हैं और उनका यह सुझाव है कि इसमें समझौतेको कोई स्थान नही है। शास्त्रीजीके लेखको आलोचक अपनी दृष्टिसे देखते हैं। मैंने शास्त्रीजीकी दृष्टिसे ही उसका अवलोकन किया और जब यह देखा कि शास्त्रीजी अस्पृश्यताको एक शौच-क्रियाके रूपमें मानते हैं तब मुझे प्रसन्नता हुई। रजस्वला माताको न छूने जितनी अस्पृश्यता अगर अन्त्यजोंके सम्बन्धमें भी बरती जाये तो उसे मैं समझ सकता हूँ। 'चांडाल'को न छूनेकी प्रथा कैसे पड़ी होगी, इस बातको मैं बिना किसी अड़चनके समझ सकता हूँ।

जो सुधारक स्वयं अपना स्थान न छोड़कर अपने समीप आनेवाले लोगोंका स्वागत करता है — क्योंकि उसे पूरी आशा होती है कि वे लोग कभी-न-कभी सुधारोंके स्वरूपसे अवगत हो जायेंगे — वही सच्चा सुधारक है। मैंने शास्त्रके नामसे प्रचलित अस्पृश्यताकी निन्दा की है और इसमें मैं कोई परिवर्तन नहीं करना चाहता। लेकिन जो अन्त्यजोंसे छू जानेपर नहानेके बावजूद अन्त्यजोंके प्रति प्रेमभाव रखेंगे, उनके लिए जलाशय बनवायेंगे, उन्हें पढ़ायेंगे, उनके दुःखमें दुःखी होंगे, उन्हें खिलाकर खायेंगे, उन्हें आदरसहित ट्रेनमें बिठायेंगे, उनके बीमार पड़नेपर उनकी सेवा-शुश्रूषा करेंगे उनकी मैं वंदना करूँगा। जो अन्त्यजोंके स्पर्शसे अपनी आत्माको कलुषित हुआ मानेगा उसके लिए मैं भगवान्से प्रार्थना करूँगा कि वह उसे क्षमा कर दे। मैं अपनी मान्यतामें, अपनी पद्धतिमें अथवा अपने व्यवहारमें कोई परिवर्तन नहीं करनेवाला हूँ। लेकिन जो लोग इस आदर्शको जितना ज्यादा अपनायेंगे, मैं उतना ही उनका सम्मान करूँगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-८-१९२१

१. उक्त पत्र यहाँ उद्धृत नहीं किया गया। यह पत्र एक सनातनी हिन्दूने लिखा था जिसमें उसने शास्त्री वसन्तरामके लेखपर गांधीजीने जो आलोचना की थी उसके विरुद्ध शिकायत की थी; देखिए "टिप्पणियाँ", १७-७-१९२१।

२६१. टिप्पणियाँ

टोपियोंकी आहुति

बम्बईने उत्साहपूर्वक जो कार्य आरम्भ किया था वह खूब जोर-शोरसे चल रहा है। हमारी यात्रामें प्रत्येक स्थानपर मलमल, मखमल और फेल्टकी टोपियोंका ढेर लग जाता है। मुसलमान अपनी तुर्की और अस्तरखानी टोपियाँ फेंकते है तो कोई अपनी पगड़ी फेंकता है। एक मित्रने कहा कि हिन्दुस्तानके आन्तरिक तारके आगे टेलीफोन अथवा टेलीग्राफ किसी कामके नहीं हैं। पवनवेगसे हिन्दुस्ताननें जान लिया है कि विदेशी कपड़ा पहनना अथवा घरमें रखना पाप है। मुझे आश्चर्य तो यह देखकर होता है कि अपने कपड़े जलानेके लिए देते समय कदाचित् ही कोई हिचकिचाता है।

हमारा दल

इस बारकी यात्रामें हमारे दलमें केवल अली भाई और मैं ही नहीं हैं बल्कि कानपुरके मौलाना आजाद सोबानी तथा शिमलेके पास कोटगढ़में रहनेवाले श्री स्टोक्स भी हैं। श्री स्टोक्स कांग्रेसके सदस्य हैं। और पहाड़ोंमें बेगार लेनेका जो रिवाज है इन्होंने अपना सारा समय उसे दूर करनेके कार्यमें दे दिया है। श्री स्टोक्सने एक भारतीय ईसाई महिलासे विवाह किया है और उनके छः पुत्र हैं। लड़कोंको उन्होंने अभीतक अंग्रेजीका एक अक्षर भी नहीं सिखाया है। वे सिर्फ पहाड़ी और हिन्दी, यही दो भाषाएँ जानते हैं। उन्होंने भी ३१ जुलाईके यज्ञमें अपने कपड़ोंकी आहुति दी। इनकी पोशाक अब धोती, कुर्ता और टोपी है और ये सब चीजें खादीकी होती हैं। फिलहाल अवकाश होनेसे हमारी यात्राके अनुभवोंको ग्रहण करनेके विचारसे वे हमारे साथ हैं। श्री स्टोक्सने अनेक वर्षोसे अपना रहन-सहन सर्वथा भारतीय ही रखा है। पोशाकमें परिवर्तन इन्होंने अभी-अभी किया है।

जयघोष और चरण-स्पर्श

जयघोष और चरण-स्पर्शकी व्याधि अभीतक गई नहीं है। मुझे उम्मीद थी कि इनके सम्बन्धमें मेरे लेखोंके बाद परिवर्तन हो गया होगा। लेकिन मैंने जबसे संयुक्त-प्रान्तमें प्रवेश किया है तबसे जयघोष और चरण-स्पर्शसे मैं घबरा गया हूँ। लोगोंके उत्साहकी कोई सीमा नहीं है। लेकिन यह सारा उत्साह जयघोष और चरण-स्पर्शमें ही बह जाता दिखाई देता है। मेरे कान भी अब इतने मजबूत नहीं रह गये हैं कि मैं बहुत ज्यादा शोर सहन कर सकूँ। हजारोंकी भीड़में चरण-स्पर्श इतनी अधिक अव्यवस्था फैलाता है कि प्रतिक्षण गिर जानेका भय बना रहता है।

स्वयंसेवक

स्वयंसेवक तो बहुत सारे लोग बन गये हैं लेकिन उन्हें अभीतक अपने कर्त्तव्यका पूरा भान नहीं हुआ है। उनमें शिक्षाकी कमी है। यदि हमें कानूनका सविनय भंग

करना है तो स्वयंसेवकोंको सम्पूर्ण बनना चाहिए। उनमें शोर बन्द करनेकी, चरण-स्पर्श रोकनेकी और लोगोंतक अपनी आवाज पहुँचानेकी शक्ति होनी ही चाहिए। वैसा न हो तो दिक्कतके समय स्वयंसेवक सेवा करनेमें असमर्थ सिद्ध होंगे। अतएव हमें अपनी लड़ाईमें स्वयंसेवकोंकी तालीमको एक महत्त्वपूर्ण अंग मानना चाहिए।

जाँच-पड़ताल

हम स्वदेशीका पालन करते हैं अथवा नहीं इसकी जाँच कैसे हो सकेगी, लोग प्रायः यह बात मुझसे पूछते रहते हैं। यह जाँच दो प्रकारसे की जा सकती है। इस समय तो बाजारोंमें हमें अपने देशके स्त्री-पुरुषोंके शरीरपर विदेशी कपड़ोंके अलावा कदाचित् ही कोई और वस्त्र दिखाई देता है। हमें तोरणों और सजावट आदिमें भी मैनचेस्टरका कपड़ा ही चाहिए। हमारे झंडे और चपरासके परतले आदि भी विदेशी कपड़ेके ही होते हैं। मन्दिरोंमें, मस्जिदोंमें यही देखनेमें आता है। इसके बदले जब हम सब स्थानोंपर खादीका उपयोग करने लगेंगे तब हम समझेंगे कि खादीका जमाना आया। इससे भी पक्का सबूत हमारी कपड़ेकी दुकानें और बुनकरोंकी बस्ती हमें देगी। यदि हमारी दुकानोंमें विदेशी कपड़ा आसानीसे न मिल सके और सिर्फ खादी ही नजर आये तथा बुनकरोंके करघोंपर विदेशी सूत न हो तो हमें समझ जाना चाहिए कि अब स्वदेशीका युग आ गया है। यदि विदेशी माल माँगनेवाला कोई होगा ही नहीं तो विदेशी मालकी दुकानें कहाँसे होंगी? इस महत्त्वपूर्ण उपलब्धिको हिन्दू-मुसलमान दोनों समझ जायें तभी सफलता मिलेगी। करोड़ों हिन्दू अगर बारीक मलमलके शौकको न छोड़ें तो अकेले मुसलमान क्या कर सकते हैं? करोड़ों मुसलमान वैसा न करें तो हिन्दू अकेले क्या कर सकते हैं?

अपने कियेका फल

हमने जनताके अन्य अंगोंकी उपेक्षा की, इसीसे अब हमपर मुश्किल आई है। मैं जहाँ कहीं जाता हूँ वहीं मुझे व्यापारियों तथा बुनकरोंमें सहयोगका अभाव दिखाई देता है। व्यापारी तो कुछ हदतक प्रवृत्तिमें शामिल हो गये हैं, लेकिन बुनकरोंमें तो हमने अभीतक प्रवेश ही नहीं किया। अतएव हमें अब उन्हें शिक्षा देनी चाहिए। जबतक हम उन्हें शिक्षित नहीं करते तबतक हमारी दिक्कतें बढ़ती ही चली जायेंगी। व्यापारी विदेशी माल लाते रहेंगे और बुनकर विदेशी सूत कातते रहेंगे और हाथकते सूतको छुएँगे भी नहीं। फिर हमारा क्या हाल होगा? कांग्रेस कमेटीके प्रत्येक अधि-कारीको अब बुनकरों और व्यापारियोंसे मिलना चाहिए, उन्हें सदस्य बनाना चाहिए और उन्हें उनके धन्धेमें उचित परिवर्तन करनेके लिए समझाना चाहिए। मुरादाबादमें ऐसा प्रयत्न सफल हुआ। वहाँकी कमेटीने कार्य करनेवालों और व्यापारियों, दोनोंको इकट्ठा किया था। उन्होंने बात समझने और अपनी गुत्थियोंको सुलझानेके बाद खुशी-खुशी विदेशी कपड़ा न खरीदनेकी प्रतिज्ञा की। मैं जहाँ-जहाँ जाता हूँ वहाँ-वहाँ गुजरातियोंकी एक अच्छी संख्या दिखाई देती है। उनमें से अनेक तो सौ-सौ, दो-दो सौ वर्षोंसे अमुक-अमुक प्रान्तोंमें रहते आये हैं। वे लोग अब सभी स्थानोंपर बड़ी स्पर्धासे काम कर रहे हैं और जहाँ रहते हैं वहाँके लोगोंसे मिल-जुलकर रहते हैं। किसी-किसी

स्थानपर तो उनकी मेहनतसे कांग्रेसका कार्य अच्छी तरह जमा हुआ दिखाई देता है। कांग्रेसके कार्यमें भाग लेते हुए भी वे स्वयं निरभिमानी हैं। इस तरह गुजरातसे बाहर गुजराती अपने गुणोंको प्रगट कर रहे हैं, यह देखकर मुझे बहुत सन्तोष होता है। अगर हम हर तरहके भयसे मुक्त हो जायें तो अभी और भी ज्यादा देशसेवा कर सकते हैं।

शान्तिका बल

प्रत्येक स्थानपर मैं यह देखता हूँ कि जहाँ लोग शान्तिके पाठको अच्छी तरह समझ गये हैं वहाँ उन्होंने ज्यादासे-ज्यादा तरक्की की है। भय अथवा दुर्बलताके मारे जिस शान्तिका पालन किया जाता है वह सच्ची शान्ति नही है। सच्ची शान्ति वही हो सकती है जिसमें बल और तेज हो। अंग्रेजोंके प्रति अपने सम्बन्धोंमें जैसे हमने शान्ति नहीं खोई उसी तरह हमें अपने ही अधिकारियों, सिपाहियों और पुलिस आदिके प्रति भी नही खोनी है। एक भाई मुझसे पूछते हैं कि हमे परस्पर शान्ति बनाये रखनी चाहिए अथवा सिर्फ अंग्रेजोंके प्रति। इस प्रश्नके लिए तो कोई गुंजाइश ही नहीं हो सकती। हम अपने लोगोंके प्रति शान्तिका पालन नहीं करेंगे तो भी हार जायेंगे। असहयोगी सबके प्रति विनयी रहता है, सबके प्रति शान्त और नम्र रहता है। व्यक्ति जितना शूरवीर हो उसे उतना ही शान्त होना चाहिए; वह जितना बड़ा हो उसे उतना ही नम्र होना चाहिए। उद्धत व्यक्ति, जो बात-बातमें मारने और गाली देनेके लिए तैयार रहता है, अपना बल खो बैठता है। शान्ति भी सूक्ष्म वीर्य है; उसको संचित करनेवाला भी प्रौढ़ ब्रह्मचारी और तेजस्वी बनता है। हमने ब्रह्मचर्यकी व्याख्याको स्थूल स्वरूप प्रदान करके जो व्यक्ति प्रतिक्षण क्रोधसे भड़क उठते हैं उन्हें दोषी मानना छोड़ दिया है। शरीर-सुखके लिए जिस तरह स्थूल ब्रह्मचर्यका पालन आवश्यक है उसी तरह आध्यात्मिक ब्रह्मचर्यकी भी आवश्यकता है। मेरा तो विश्वास है कि हमने सहयोगियोंपर क्रोध करके, पुलिसको गाली देकर अपनी लड़ाईको लम्बा कर दिया है। यदि हम मन, वचन और कर्मसे सब विरोधियोंके प्रति शान्त, विनम्र और विनयी रहे होते तो अभीतक समस्त सत्ताको अपने हाथमें लेकर बैठ गये होते।

पारसी बहनोंसे

मै जानता हूँ कि एक अच्छी संख्यामें पारसी बहनें 'नवजीवन' पढ़ती हैं। उन्हें 'नवजीवन' की भाषाको समझनेमें जरा कठिनाई होती होगी। मैं जहाँतक बने सरल भाषा लिखने और संयुक्ताक्षरोंको न आने देनेका प्रयत्न करता हूँ, लेकिन भाषाके नियमोंकी एकदम उपेक्षा नहीं की जा सकती। पारसियोंने गुजरातीको इतना ज्यादा बिगाड़ दिया है कि उनके साथ प्रतिस्पर्धा करना भाषाका खून करनेके समान होगा। इसलिए बहनोंसे मेरी प्रार्थना है कि उन्हें जो शब्द कठिन लगें उन्हें जाननेके लिए मेहनत करें, किसीसे पूछ लें। थोड़ेसे अंकोंको इस तरह प्रयत्नपूर्वक पढ़नेके बाद उन्हें फिर बिलकुल अड़चन नहीं होगी।

पारसी भाइयों और बहनोंको यही शोभा देता है कि वे भाषाको सुधारनेका प्रयत्न करें। अब तो पारसी गुजराती, मुसलमान गुजराती और हिन्दू गुजराती —

भाषाके ये तीन वर्ग हो गये जान पड़ते हैं। फिर मुसलमान भाई गुजरातीको पारसियों जितना नहीं बिगाड़ते और उन्हें 'नवजीवन' की गुजरातीको समझनेमें भी कोई दिक्कत नही आती। खबरदार,[१] मलबारी[२] आदि लेखकोंने बता दिया है कि पारसी चाहें तो अच्छी गुजराती लिख अवश्य सकते हैं। मेरे पास कितने ही पारसियोंके पत्र आते हैं; उनमें मैं शुद्ध गुजराती पाता हूँ। केवल भाषाके प्रति थोड़ेसे अभिमानकी जरूरत है। इतना होनेपर पारसियोंकी गुजराती धीरे-धीरे सामान्य स्तरपर पहुँच जायेगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-८-१९२१

२६२. पत्र : ओंकारनाथ पुरोहितको

पटना जाते हुए
१५ अगस्त, १९२१

भाई ओंकारनाथ,

आपका पत्र मीला। छपेला पत्र मैं भेजता हुं। उस पत्रमें ऐसी कोई अनीतिमय बात नहिं देखता हुं जिसलीये आपको अनीति प्रकट करनेके कारन खतको छापना चाहिये। उस खतको न प्रकट करनेकी प्रतिज्ञाका पालन करना हि चाहिये। उसमें दीइ हुई सलाहका पालन न करना या करना आपका हि हृदयपर निर्भर रहता है।

मोहनदास गांधी

ओंकारनाथ पुरोहित
द्वारा/लाला चन्दूलाल
राजाका बाजार
आगरा

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल पत्र (जी० एन० ६०८८) की फोटो-नकलसे।

१ व २. पारसी कवि।

२६३. सन्देश : शिमला-पहाड़ियोंकी जनताके नाम

१५ अगस्त, १९२१

भाइयो,

मुशी कपूरसिंह और उनके साथी आपके लिए कष्ट भोग रहे है। उनका उद्देश्य है कि आप उन सब अन्यायोंसे बचें जो आप बहुत दिनोंसे भोग रहे हैं। क्या आप अपने इन साथियोके लिए कोई यत्न करेंगे? मुझे विश्वास है कि जबतक आपके साथी जेलमें हैं आप सरकार और रियासतको बेगार न देंगे। इस मामलेमें श्री स्टोक्सका कहना आपको मानना चाहिए। आप कोई उपद्रव न करें। जबतक आपके भाई जेल-खानेमें हैं आप अपने दिलसे क्रोध हटा दें। आपके लिए तकलीफ उठाना और जेल जाना अच्छा है पर किसी अफसरको बेगार नहीं देना चाहिए। याद रखिए यदि इस अवसरपर आप पीछे हटे तो आप अपनी दासता और दृढ़ करेंगे और सदाके लिए दास बने रहेंगे। इस बारेमें मैं पूरी तरह आपके साथ हूँ।

आज, १७–८–१९२१

२६४. पत्र : महादेव देसाईको

कलकत्ता जाते हुए
[१७ अगस्त, १९२१के पूर्व][1]

भाईश्री ५ महादेव,

तुम्हारा पत्र मिला। मोतीलालजी तो यही चाहते हैं कि तुम रहो, किन्तु मुख्य बात तो तुम्हारी इच्छा ही है—यदि वहाँ बहुत मेहनत पड़े या तुम्हारी तबीयत ही अच्छी न रहे तो निश्चय ही चले आना। किसी आदमीका दाहिना हाथ बननेसे अधिक महत्त्वपूर्ण और क्या हो सकता है? यह वाक्य कि "यदि मैं दाहिना हाथ बन सकता" केवल दुःखमें अथवा ज्ञानपूर्वक लिखा जा सकता है। यदि दुःखमें लिखा हो, तो फिर तुमने मुझे नहीं समझा है। यदि ज्ञानपूर्वक लिखा है, तब तो कुशल है। दो दिमाग एक-दूसरेसे विलग रह सकते हैं, किन्तु हाथ दिमागसे विलग होकर क्या कर सकता है? मैं तुम्हें दिमाग मानकर शिक्षित कर रहा हूँ। सन्तराम तो "पर्मनेंट अंडर-सेक्रेटरी" है, इसलिए वह तो खिसक नहीं सकता।

१. गांधीजी १७ अगस्त, १९२१ को कलकत्तामें थे।

मैं चाहता हूँ कि तुम अपनी सही परिस्थितिको समझो। मैं प्यारेलालको[1] क्यों रखे हुए हूँ, यह भेद तुम नहीं समझोगे। मेरी जिन्दगीके इस भागको तुम समझ नहीं सकोगे। बाका और मेरा स्वभाव एक नहीं है। बा मुझे नहीं समझती। आश्रममें अभी तक तो मुझे जैसी चाहिए वैसी एक भी स्त्री नहीं मिली। रसोई-घरके काम-काजको सँभालना [विकट] काम है। विरला ही उसे सँभाल सकता है। मैं उसे तुम्हारी शक्तिके बाहर मानता हूँ। उसके लिए तो फिलहाल मगनलाल, विनोबा, छोटेलाल[2], मैं और कुछ अंशमें भुँवरजीने[3] अपनेको सिद्ध किया है। हमारा भोजन तो एक शास्त्रके अनुसार है। गोकीबेनको[4] लेकर काफी परेशानियाँ थीं। हमें एक प्रौढ़ मनुष्यकी निश्चय ही आवश्यकता है। मैं अपनी समझमें प्यारेलालका अच्छेसे-अच्छा उपयोग कर रहा हूँ। वक्त आनेपर मैं उसे अन्यत्र रख सकूँगा।

जोजेफके बाहर रहते हुए तुम्हारा देवदास अथवा प्यारेलालको माँगना तो ज्यादती जान पड़ती है। तुम्हें इन दोनोंसे कुछ हलके दर्जेके व्यक्तिसे सन्तोष करना चाहिए। तुम प्रभुदासको रख सकते हो।

दुर्गाके अच्छे हो जानेपर क्या तुम जोजेफके साथ रह सकते हो? लेकिन यह तो दूरकी बात हुई। पहले तो मुझे तुम्हारी इच्छा ही जाननी है। मैं तुम्हें अभी 'यंग इंडिया' में नहीं भेजूँगा। क्या तुम्हें मेरा पिछला पत्र मिला था? फिलहाल तो मैं इसी तरह सोचता हूँ कि या तो तुम वहीं रहो या फिर मेरे साथ।

तुम्हारे लेख पढ़े। सभी अच्छे हैं यानी उनपर कोई टीका-टिप्पणी जरूरी नहीं है। विपिनचन्द्रको[5] ठीक जवाब दिया गया है।

मुझे गौहाटी लिखना। मैं २५ तक गौहाटीके आसपास रहूँगा। क्रिस्टोदास[6] 'यंग इंडिया' के विचारसे साथ है। उसके आनेकी बात थी और वह आ गया है। वह मेरे साथ ही है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ११४१३) की फोटो-नकलसे।

१. प्यारेलाल नय्यर, १९२० में गांधीजीके साथ हुए और महादेव देसाईकी मृत्युके बाद उनके मुख्य सचिव बने।

२. छोटेलाल जैन, सत्याग्रह आश्रमवासी।

३. सत्याग्रह आश्रमवासी।

४. गांधीजीकी बहन।

५. विपिनचन्द्र पाल।

६. कृष्णदास।

२६५. भाषण : कलकत्तेके मिर्जापुर पार्कमें[1]

१७ अगस्त, १९२१

महात्मा गांधीने भाषणके प्रारम्भमें कहा कि मैं ५ मिनटसे ज्यादा नहीं बोलूँगा, क्योंकि मुझे आज शामको ही दार्जिलिंग मेलसे असमके लिए रवाना होना है, इसलिए मैं आशा करता हूँ, सब लोग मेरी बात धैर्यसे सुनेंगे।

मुझे विश्वास है आप सबने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका प्रस्ताव पढ़ा होगा। उसमें कहा गया है कि आगामी ३० सितम्बरसे पहले विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण रूपसे बहिष्कार हो जाना चाहिए। इसलिए मैं आप लोगोंसे जोर देकर कहता हूँ कि आप प्रस्तावको अमलमें लायें। मैं आपसे अपील करता हूँ कि आप स्वदेशी वस्त्रोंका उपयोग करें और जिन विदेशी वस्त्रोंको आप अब भी पहने हुए हैं उन्हें जला दें या स्मरना भेज दें। अपने खादीके कपड़े और 'स्वराजी टोपी' की ओर संकेत करते हुए उन्होंने कहा: यद्यपि खादी कुछ खुरदरी होती है फिर भी आप हतोत्साहित न हों। मैं आपको याद दिलाता हूँ कि यदि आप प्रस्तावपर पूर्ण रूपसे अमल करनेके लिए कृतसंकल्प हैं तो मैं आपको आगामी अक्तूबरमें स्वराज्य दिला दूँगा और खिलाफत तथा पंजाबपर किये गये अत्याचारोंका प्रतिकार भी हो जायेगा। मैं आपको सलाह देता हूँ कि आप हिन्दू और मुसलमान, दोनों एक माँके दो बेटोंके समान मिलकर कार्य करें और अपने संघर्षमें शान्तिके साथ जूझनेके लिए तैयार रहें। स्वतन्त्रताके संघर्षमें साहसके साथ मोर्चा लें और अहिंसक साधनोंको अपनायें।

भाषण समाप्त करते हुए महात्मा गांधीने श्रोताओंसे पुनः अपील की कि वे अपने सब विदेशी कपड़ोंको उतारकर फेंक दें और यदि जरूरत हो तो उन्हें जला दें। उन्होंने यह भी कहा कि वे कुछ दिनोंमें ही असमके दौरेसे कलकत्ता लौटेंगे और तब उनके बीच अधिक समयतक भाषण दे सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १८-८-१९२१

१. यह सभा साढ़े चार बजे शामको हुई थी। इसमें १५,००० से ऊपर हिन्दू-मुसलमान उपस्थित थे। उपस्थित लोगोंमें मौलाना अबुल कलाम आजाद और मुहम्मद अली भी थे।

२६६. पत्र : ख्वाजाको

[१७ अगस्त, १९२१ के बाद][1]

प्रिय ख्वाजा साहब,[2]

मैं गोवधके सम्बन्धमें आपके तारका जवाब पहले नहीं भेज सका इसके लिए आप कृपया मुझे क्षमा करेंगे। मैं जानता हूँ, भारतके बहुतसे भागोंमें सचमुच बहुत ही अच्छा कार्य हुआ है। आप अन्नकी कमीके बारेमें तार चाहते थे। अब तार देनेका कोई उपयोग नहीं बचा है। मैं ४ तारीखको[3] आपसे मिलनेकी आशा करता हूँ। यदि स्थितिपर फिर भी विचार करनेकी जरूरत हो तो उस समय आप इसका उल्लेख करें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ७५९९)की फोटो-नकलसे।

२६७. संयुक्त-प्रान्तमें दमन

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने मेरे लिए आजसे दो मास पूर्व निम्नलिखित टिप्पणी[4] तैयार की थी। इसमें उन्होंने ३० मईतक संयुक्त-प्रान्तमें होनेवाले दमनके तरीकोंकी समीक्षा की है। दूसरे मामलोंमें व्यस्त रहनेके कारण मैं पण्डित जवाहरलाल नेहरूकी इन टिप्पणियोंपर ध्यान नहीं दे सका। किन्तु वे आज भी उतनी ही ताजी लगती हैं जितनी जूनमें थीं। सरकारकी ओरसे उत्पीड़नके आरोपका जो निराकरण किया गया है उसका लगभग पूरा जवाब पाठकको इन टिप्पणियोंमें पढ़नेको मिलेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८–८–१९२१

१. यह पत्र ख्वाजाके १६ तारीखके उस तारके जवाबमें लिखा गया था जो गांधीजीको १७ अगस्तको मुंगेरमें मिला था। तार इस प्रकार है: "पिछले वर्षकी ६ गौओंके मुकाबले इस वर्ष कल २ की कुर्बानी की गयी। . . . स्वदेशीके सम्बन्धमें प्रतिक्रिया अत्यन्त आशाजनक। रुपयेका ४ सेर गेहूँ। अधिक महँगा होनेकी अफवाह। इससे नगरमें महान् विक्षोभ। खतरनाक स्थिति उत्पन्न होनेकी आशंका। कृपया तारसे सलाह दें।"

२. अनुमानतः अलीगढ़के राष्ट्रीय मुस्लिम विश्वविद्यालयके उप-कुलपति ख्वाजा अब्दुल मजीद।

३. गांधीजीको ६ सितम्बरको होनेवाली कार्यकारिणीकी बैठकमें शामिल होनेके लिए ४ तारीखको कलकत्ता पहुँचना था।

४. टिप्पणीके पाठके लिए देखिए परिशिष्ट ५।

२६८. टिप्पणियाँ

'हिन्दी नवजीवन'

बहुतसे हिन्दी-भाषी मित्र इस बातके लिए उत्सुक थे कि मैं 'नवजीवन' के हिन्दी संस्करणके प्रकाशनका दायित्व अपने ऊपर ले लूँ। मैं स्वयं भी उसके लिए उत्सुक था। किन्तु यह अबतक सम्भव नहीं हो सका। 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' के सम्पादनका काम सँभालना काफी कठिन होता है। किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि मैं अपने विचारों और सिद्धान्तोंको पसन्द करता हूँ। मेरी पक्की राय है कि वे भारतके लिए हितकर हैं और यदि मुझे पूर्ण विनम्रतासे इतना कहनेकी अनुमति हो तो वे सभीके लिए हितकर हैं। इस कारण मैं मित्रों और कार्यकर्त्ताओंके हिन्दी संस्करण निकालनेके दबावके आगे झुक रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि भारतके विभिन्न भागोंमें मेरे लेखोंके अनेक हिन्दी अनुवाद छपते हैं। किन्तु सभी चाहते थे कि 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' के चुने हुए लेखोंका एक अधिकृत स्वतन्त्र अनुवाद एक जगह छपे। यह कार्य अब किया जा रहा है। इस संस्करणकी हिन्दी वस्तुतः हिन्दुस्तानी होगी जो ऐसे हिन्दी और उर्दू सरल शब्दोंसे बनी मिली-जुली भाषा होगी जिन्हें हिन्दू और मुसलमान दोनों समझते हैं। प्रयत्न यह किया जायेगा कि इसमें कोई सजावट न की जाये। असल बात तो यह है कि मैं चाहता था कि इसका उर्दू रूप भी साथ ही निकले। किन्तु अभी यह नहीं निकाला जा सकता। मैं पाठकोंसे यह भेद भी छिपाना नहीं चाहता कि 'हिन्दी नवजीवन' के प्रकाशनमें जो यह जल्दी की गई है उसके पीछे मेरा अपने मारवाड़ी भाइयों और खास तौरसे जमनालालजीके प्रति आदरभाव है। जमनालालजीने प्रकाशकके रूपमें और श्री शंकरलाल बैंकरने मुद्रकके रूपमें अपने नामकी सूचना अदालतमें दे दी है। गुजराती और अंग्रेजी संस्करणोंकी तरह 'हिन्दी नवजीवन' में भी विज्ञापन नहीं रहेंगे। इसे उन दोनोंकी तरह स्वावलम्बी भी बनाना होगा; इसलिए इसे जो सहायता मिलेगी, इसका अस्तित्व उसीपर कायम रहेगा। हिन्दी संस्करणका चन्दा ४ रुपये वार्षिक होगा और ६ मासका २ रुपये होगा। जो लोग ग्राहक बनना चाहते हैं उनको मेरी सलाह है कि वे अभी आधे सालका चन्दा भेजें। 'हिन्दी नव-जीवन' का प्रकाशन अभी परीक्षणके रूपमें किया जा रहा है। मेरे पास कार्यकर्त्ता सीमित हैं। यदि मुझे स्वामी आनन्दानन्दकी अथक शक्ति और सूझबूझका सहारा न मिलता तो मैं इस जिम्मेवारीको उठानेसे इनकार कर देता। हमने यह देख लिया है कि सबसे अच्छा काम वे लोग ही करते हैं जो स्वेच्छासे काम करते हैं। और इस प्रकारका शारीरिक या मानसिक श्रम करनेवाले लोगोंको ढूँढ़ना आसान नहीं है। इसलिए मैं उन हिन्दी-प्रेमियोंका, जिन्होंने असहयोगको जीवनका सिद्धान्त बना लिया है, आह्वान करता हूँ कि वे 'नवजीवन' को परीक्षणके रूपमें छः मासतक अपना संरक्षण दें। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि ये पत्र मुनाफा कमानेके लिए नहीं निकाले गये हैं। इसलिए

यदि कोई बचत होगी तो वह तीनों संस्करणोंके विकासमें लगाई जायेगी। पाठकोंकी दिलचस्पी यह जाननेमें भी होगी और उन्हें इससे प्रसन्नता होगी कि मौलाना मुहम्मद अलीने अपनी 'कामरेड'की मशीनें, टाइप और अन्य सामग्री बिना कुछ लिये हमें दे दी है। इस प्रकार अशुभ शक्तियोंसे असहयोगकी लड़ाई शुभ शक्तियोंके निकटतम सहयोगपर निर्भर है। मैं सरकारकी शक्तियोंको अशुभ शक्तियाँ और असहयोगकी शक्तियोंको असहयोगियोंकी समस्त त्रुटियों और सीमाओंके बावजूद शुभ मानता हूँ।

नकली माल

एक मित्र मद्राससे लिखते हैं—

> **इसके साथ मैं कपड़ेका एक नमूना भेजता हूँ। यह मद्रासमें बॉम्बे स्वदेशी स्टोर द्वारा १०–१५ आने गजके भाव, शुद्ध खादी—अर्थात् हाथकती और हाथबुनी खादीके नामसे बेचा जा रहा है। ऐसी धोखेबाजीसे लोगोंका बचाव किस तरह किया जाये? मुझे इसमें शक नहीं कि नमूनेका यह कपड़ा विदेशका बना है।**

मैंने नमूनेके कपड़ेको देखा है। इसमें तो जरा भी सन्देह नहीं कि वह न तो हाथके कते सूतका बना है और न हाथसे बुना हुआ है। मुमकिन है कि वह हिन्दुस्तानकी मिलोंमें तैयार हुआ हो। परन्तु मुझे तो उसकी चमक-दमक और सफाई हिन्दुस्तानकी अपेक्षा जापानी अधिक मालूम होती है। दु:खकी बात तो यह है कि ऐसा माल स्वदेशी भण्डारों द्वारा बेचा जाता है। परन्तु ऐसी कुछ-न-कुछ धोखेबाजी तो होती ही रहेगी। हमें उसका सामना करनेके लिए सदा तैयार रहना चाहिए। वे इस बातके जीते-जागते प्रमाण हैं कि स्वदेशीका जोश बढ़ता जा रहा है। परन्तु सवाल यह है कि इस धोखेबाजीको किस तरह पहचाना और रोका जाये। इसका अचूक उपाय तो यही है कि हम अपने लिए खुद ही सूत कातें और उसे जुलाहोंसे, अपनी ही देखरेखमें बुनवा लें। निस्सन्देह ऐसा समय आ रहा है। जब हम खुद कात न सकें तब हमें सारे देशमें जो हजारों कातनेवाले तैयार हो रहे हैं उनसे सूत कतवा लेना चाहिए। यदि हमसे यह भी न हो सके तो जब हम खादी खरीदने लगें तब जो कपड़ा किसी भी तरह मिलका बना जैसा मालूम हो उसे न खरीदें। मोटे सूतके कपड़ोंमें यह पहचान करना बड़ा ही कठिन है कि कौन-सा विदेशसे आया है और कौन-सा यहाँकी मिलोंका बना है। हाथ-कते सूतकी खादीमें मिलकी-सी निस्तेज चमक नहीं रहती, बल्कि वह देखनेमें मोटी, झिरझिरी बुनावटकी, हलकी और छूनेमें मुलायम मालूम होती है। वह चिकनी और चमकदार तो होती ही नहीं। बचावका एक दूसरा उपाय यह है कि कपड़ा पाउडरसे सफेद किया हुआ न होना चाहिए। तीसरी एक और बात है परन्तु वह धोखेसे खाली नहीं। प्रत्येक कांग्रेस जिलेमें ऐसी स्वदेशी दूकानें होनी चाहिए जिन्हें कांग्रेसकी ओरसे प्रमाणित किया जाये। अच्छे जानकार निरीक्षक रखे जायें जो लगातार ऐसी दूकानोंके मालकी जाँच किया करें। मुमकिन हो तो हरएक चीजपर मुहर लगी रहे। मैं जानता हूँ कि अभी हममें इतना संगठन नहीं

हुआ है और हमें इतनी तालीम नहीं मिली है कि हम बहुत बड़े पैमानपर इस कामको उठा सकें। परन्तु जबतक हरएक जिला अपने लिए आवश्यक खादी तैयार न करने लगे तबतक ऐसी निगरानीकी तो निश्चय ही आवश्यकता है और सच्चे दिलसे जो-कुछ इसके लिए किया जा सकता है वह किया जाना चाहिए।

लखनऊके पाप-स्थान

एक अंग्रेज मित्रने मुझे लखनऊसे लिखा है:

> **मैं यह पत्र आपसे यह अनुरोध करते हुए लिख रहा हूँ कि आप यहाँसे जानेके पहले लखनऊके वेश्यागृहोंके सम्बन्धमें यहाँके किसी अधिकारीको, जो आपके मतका समर्थक हो, कुछ लिख दें। आज सुबह मैं अमीनाबादमें फौजी पुलिसके सिपाहीसे बातचीत कर रहा था। उससे मालूम होता है कि उस तरफकी बस्तीमें ऐसे कोई पचास मुकाम हैं, जहाँ यूरोपीय और एंग्लो-इंडियन सिपाही अक्सर जाया करते हैं। (इनमें से कुछ लोग फौजी अदालतोंमें पेश भी किये जा चुके हैं, क्योंकि उस बस्तीमें फौजियोंका जाना मना है)। उसने हिन्दुस्तानियोंके विषयमें कुछ नहीं कहा; परन्तु मुझे बादमें किसीने बताया कि वे भी उन स्त्रियोंके यहाँ जाते हैं। मनुष्यके इस अधःपतन और असंयमके सम्बन्धमें आप यदि कुछ शब्द लिख देंगे तो वह इस बुराईको दूर करनेमें अन्य सब बातोंसे अधिक कारगर होगा। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि इस काममें जितनी सहायता मुझसे हो सकती है, मैं करूँगा।**

मैं चाहता हूँ कि मैं भी इन अंग्रेज मित्रकी तरह विश्वास कर सकता कि मेरे शब्दोंमें वह प्रभाव है, जो उन्होंने बताया है। इन पंक्तियोंको लिखते समय बार-बार मेरी आँखोंके सामने उन प्यारी बहनोंका चित्र आता है जो मुझसे रातके समय कोकोनाडामें मिली थीं। जब मुझे उनकी लज्जाजनक स्थितिका हाल मालूम हुआ तब वे तो मुझे और भी प्यारी लगने लगीं। वे केवल संकेतसे मुझे अपने जीवनकी दशा बता सकी थीं। जो स्त्री उनकी तरफसे मुझसे बात कर रही थी उसकी आँखोंमें लज्जा और दुःख अंकित था। मैं उन्हें दोषी कहनेके लिए तैयार न हो सका। इस मुलाकातके बाद मैंने 'व्यक्तिगत चरित्र-शुद्धि' की आवश्यकतापर ही भाषण दिया। इसलिए आज मेरे हृदयमें लखनऊकी इन पतित बहनोंके प्रति सहानुभूति उत्पन्न होती है। वे ऐसा लज्जाजनक जीवन बितानेके लिए मजबूर की गई हैं। मुझे यकीन हो गया है कि वे अपनी खुशीसे ऐसा जीवन स्वीकार नहीं करतीं। यह तो मनुष्यकी पशुवृत्ति है जिसने इस घृणित कुकर्मको एक 'धन कमानेका धन्धा' बना दिया है। लखनऊ अपनी आराम-तलबीके लिए मशहूर है। परन्तु वह एक मुसलमान औलियाका भी स्थान है। इस्लाममें जो-कुछ भी उत्कृष्ट व महान् है वह सब लखनऊमें है। हिन्दुओंके लिए तो लखनऊ उस प्रान्तका सदर-मुकाम है जो सती सीता और रामकी पुण्यभूमि थी। वह हिन्दुओंकी पवित्रता, उदात्तता, शौर्य और सत्यपरायणताके श्रेष्ठ युगकी याद दिलाता है।

असहयोग आत्मशुद्धि है, और मैं सभी असहयोगियों तथा अन्य लोगोंसे भी कहता हूँ कि वे लखनऊकी इस नैतिक व्याधिको दूर करनेका उपाय करें। मैं आशा करता हूँ कि लखनऊकी शोहरतका हिमायती कोई भी व्यक्ति मुझसे यह नहीं कहेगा कि लखनऊ भारतके दूसरे शहरोंसे तो बुरा नहीं है। लखनऊका जिक्र तो यहाँ उदाहरणके तौरपर संयोगसे आ गया है। हम तो सारे भारतमें स्त्री जातिकी सुरक्षा और पवित्रताके लिए उत्तरदायी हैं। लखनऊ इसमें अगुआ क्यों न हो?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-८-१९२१

२६९. मुसलमानोंकी बेचैनी

मैंने लखनऊमें मुसलमानोंको खिलाफतके मामलेमें बेचैन पाया। उनकी बेचैनी स्वाभाविक है। मौलवी सलामतुल्लाने कहा कि अंग्रेजोंका रुख तो अब असह्य होता जाता है। यह कहकर उन्होंने सौम्य भाषामें अंकारा सरकारकी स्थितिके विषयमें लोगोंकी जो भावनाएँ हैं उन्हींको व्यक्त किया है। इसमें कोई शक नहीं कि तुर्कोंके साथ मित्र-भाव रखनेके सम्बन्धमें अंग्रेजोंने जो आश्वासन दिये हैं उनके प्रति अविश्वास बढ़ता जा रहा है। अब इन दोमें से किसी बातपर कोई विश्वास नहीं करता कि अंग्रेजोंके आश्वासन बिलकुल सच्चे हैं या ब्रिटिश सरकार तुर्कोंकी मदद करनेमें असमर्थ है, अतएव अधीर और क्रोधित होकर मुसलमान तुरन्त कांग्रेस और खिलाफत कमेटीकी ओरसे कोई कड़ी और जोरदार कार्रवाईकी माँग करते हैं। मुसलमान तो स्वराज्यका अर्थ यह समझते हैं, और उनका ऐसा समझना ठीक है कि हिन्दुस्तान खिलाफतके मामलेका निपटारा पक्के तौरपर करनेके लायक हो जाये। इसलिए वे कहते हैं कि अगर स्वराज्यके मिलनेमें काफी देरी है या उसके लिए प्रयत्न करते हुए मुसलमानोंको कायरोंकी तरह लाचार भूमध्य सागरमें टर्कीकी बरबादी देखते रहना पड़े तो मुसलमान उसके लिए तैयार नहीं हैं।

यह नामुमकिन बात है कि ऐसी हालतमें मुसलमानोंके लिए हमदर्दी न पैदा हो। यदि कोई कारगर इलाज मेरे खयालमें आया होता तो मैं जरूर खुशीसे कोई फौरी कार्रवाई करनेकी सिफारिश करता। अगर मैं देखता कि स्वराज्यकी हलचलको मुल्तवी कर देनेसे हम खिलाफतको ज्यादा फायदा पहुँचा सकेंगे तो मैं खुशीसे ऐसी सलाह देता। करोड़ों मुसलमानोंका दिल हलका करनेके लिए अगर असहयोगके अलावा भी मुझे कोई उपाय नजर आता तो मैं खुशीसे उसमें लग जाता।

मगर मेरी नाकिस रायमें तो खिलाफतके अन्यायको जल्दीसे-जल्दी मिटानेका अगर कोई साधन है तो वह स्वराज्य ही है। और यही कारण है कि मेरे लिए तो स्वराज्यका पाना ही खिलाफतके सवालका हल होना है और खिलाफतके सवाल-का हल होना ही स्वराज्य पाना है। मुसीबतके मारे हुए तुर्कोंको मदद पहुँचानेका सिर्फ एक ही उपाय हिन्दुस्तानके लिए है और वह है खुद अपने अन्दर इतनी ताकत

पैदा कर लेना, जिससे वह अपने स्वत्वको प्रदर्शित कर सके। यदि वह एक मियादके भीतर इतनी शक्ति नहीं बढ़ा सकता तो फिर हिन्दुस्तानके लिए दैवाधीन होनेके सिवा बाहर निकलनेका दूसरा कोई रास्ता नहीं है। जिसे खुद लकवा मार गया है वह अगर दूसरेकी मददके लिए हाथ बढ़ाना चाहे तो वह पहले खुद लकवेसे अपना पीछा छुड़ानेके सिवा और क्या कर सकता है? इसके बजाय अगर हम केवल नासमझी, नादानी और गुस्सेमें आकर खून-खराबी कर बैठें तो इससे अन्दरकी आग भले ही बाहर आकर धधक उठे, टर्कीका दुःख दूर नहीं हो सकता। और न इससे हिन्दुस्तानमें ऐसी ताकत ही आ सकती है कि वह अपने स्वत्वको प्रदर्शित कर सके। और इसके अलावा उस दंगे-फसादको दबानेके लिए जो उपाय काममें लाये जायेंगे उनसे सम्भव है हमारा वह वेग, जिसके साथ आज हम अपने लक्ष्यकी ओर दौड़े चले जा रहे हैं, बहुत मन्द पड़ जाये।

तो भी हमें किसी तरह निराश होनेका कोई कारण नहीं। कांग्रेसका सारा कार्यक्रम ऐसा ही बनाया गया है और ऐसे ही उपाय किये जा रहे हैं जिनसे खिलाफतके संकटका सामना किया जा सके। स्वदेशीके कार्यको पूरा करनेकी मियाद दो मासकी रखी गई है। यह निस्सन्देह एक ऐसा तीव्र और प्रबल उपाय है जिसके द्वारा देशका सम्पूर्ण सत्त्व प्रकट हो सकेगा। और यदि भारतने सितम्बरतक पूरा बहिष्कार कर दिखाया और अक्तूबरमें वह अपने पाँवोंपर खड़ा हो गया तो निश्चय ही इससे बड़े-बड़े तेज मिजाजवाले लोगों और मुझ जैसे अधीर तथा जोशीले खिलाफतियोंकी आत्माको भी सन्तोष होगा।

पर बात यह है कि अभी हमारे काम करनेवाले सभी लोगोंको न तो इस बातका यकीन हो पाया है कि बताई हुई मियादके भीतर स्वदेशीका कार्यक्रम पूरा हो जायेगा और जो करामात इसमें बताई जाती है न वे उसके कायल हो पाये हैं। ऐसे संशयात्मा लोगोंको जबतक कि वे इससे बेहतर और जल्दी असर करनेवाला दूसरा उपाय नहीं बता सकते और उसे देशसे स्वीकृत नहीं करा सकते, इससे अलग ही रहना लाजिम है। अथवा शंकालु होते हुए भी उन्हें शुद्ध हृदयसे स्वदेशीके काममें जुट जाना चाहिए और इस प्रयोगको सचाईके साथ आजमाना चाहिए। सन्देह करना ठीक हो तो भी क्या यह सन्देह करना कि भारत स्वदेशीके कार्यक्रमके अनुसार काम करनेमें समर्थ नहीं है, यह नहीं बतलाता कि खिलाफतके काममें भारतको वास्तवमें कोई अनुराग नहीं है और वह उसके लिए कुछ भी त्याग करना नहीं चाहता? क्या हर हिन्दू और मुसलमानके लिए विदेशी वस्त्र-मात्रको छोड़कर सिर्फ खादी पहनना, कोई बड़ा भारी स्वार्थ-त्याग है? यदि भारतवर्ष ऐसी क्षमता प्राप्त नहीं करता तो क्या यह इस बातका सबूत नहीं होगा कि वह इससे अधिक स्वार्थ-त्यागके लायक नहीं है और इसलिए टर्कीकी सहायताके योग्य भी नहीं है? आइए, हम सब मिलकर विदेशी कपड़ोंका पूरा बहिष्कार करें और जितनी जरूरत है उतनी खादी बनायें; इतना करनेपर हमें अपना लक्ष्य समीप आता दिखाई देने लगेगा।

लखनऊमें यह मसला बड़ी संजीदगीके साथ पेश किया गया था कि हम राली ब्रदर्सका जो कि एक यूनानी कम्पनी है, बहिष्कार करके यूनानियोंसे बदला चुका लें

तथा उन मजदूरोंसे जो बन्दरगाहोंपर काम करते हैं, कहें कि वे विदेशी जहाजोंपर माल न चढ़ायें। मैं तो समझता हूँ कि ये दोनों सुझाव अस्वाभाविक हैं और उनको कार्यरूपमें परिणत करना भी असम्भव है। जरा देरके लिए मान लीजिए कि हम एक क्षणमें राली ब्रदर्सका कारोबार चौपट कर सकते हैं, पर इसका असर यूनानपर क्या पड़ सकता है? राली ब्रदर्स सारा या ज्यादातर माल यूनान नहीं भेजते। उनका व्यापार तो सारी दुनियामें फैला हुआ है। अतएव स्वदेशीका काम उठानेकी अपेक्षा उनके व्यापारके साथ झगड़ना ज्यादा कठिन होगा। ऐसा करना गलत है इस बातको जाने दें तो भी इस तरहके काम करके हम अपनी हँसी करायेंगे, जो ठीक ही होगी। विदेश जानेवाले जहाजोंपर काम करनेवाले मजदूरोंके काममें बाधा डालना भी उतना ही असंगत है। यदि जनतापर हमारा इतना पूर्ण नियन्त्रण होता तो हम इस समरमें अबतक कभीके जीत गये होते। मालका बाहर जाना बन्द कर देनेके लिए हमें आज काम करनेवाले सारे मजदूरोंका काम हमेशाके लिए या एक अनिश्चित समयतक बन्द रखना होगा। यही नहीं बल्कि ऐसा करते समय यह पहले ही मान लिया जाता है कि जो मजदूर काम बन्द कर देंगे उनकी जगह दूसरे मजदूरोंको कामपर न आने देनेकी सामर्थ्य हममें है। मेरा तो खयाल है कि अभी हम इतने संगठित नहीं हैं। ऐसी कोशिशमें नाकामयाब होनेके सिवा और कुछ हासिल नहीं होगा। और भी बुरा नतीजा न निकले तो गनीमत समझिए।

इसका एक ही सम्भव उपाय है कि हम तुरन्त सविनय अवज्ञा शुरू कर दें। परन्तु मुझे इतमीनान हो गया है कि देश अभी बड़े पैमानेपर इसे करनेके लिए तैयार नहीं है। पर यदि देश इस बातको दिखा दे कि उसमें संगठनकी इतनी काफी क्षमता है, उसके पास इतने विभिन्न साधन हैं और उसमें इतनी नियमबद्धता है जितनी कि स्वदेशी जैसे सर्वथा व्यवहार्य कार्यको पूर्णतः सफल बनानेके लिए आवश्यक है, तो कानूनका सविनय भंग बिना जोखिमके सफलतापूर्वक शुरू किया जा सकता है। आइए, हम यह आशा और प्रभुसे प्रार्थना करें कि देश ऐसा कर दिखाये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-८-१९२१

२७०. द्वेषपूर्ण अभियोग

संयुक्त-प्रान्तके दौरेमें दमनकी अजीब कहानियाँ मेरे सुननेमें आईं। अभी तो मैं केवल उन दो अभियोगोंकी चर्चा करना चाहता हूँ जिनको द्वेषपूर्ण कहनेमें मुझे कोई हिचक नहीं है। सीतापुरके जमींदार मोहनसिंह दरमल और भूतपूर्व तहसीलदार शम्भुनाथको सम्मन भेजे गये हैं और पूछा गया है कि उनसे जमानत क्यों न माँगी जाये। उनका अपराध सम्मनमें यह बताया गया है:

चूँकि रामगढ़के पटवारीकी सूचनासे यह प्रकट होता है कि

१. ठा० मोहनसिंह रामगढ़वाले

२. बा० शम्भुनाथ, भूतपूर्व नायब तहसीलदार, जो अब भुवाली और भुन्याधरमें हैं, सरकारके विरुद्ध आन्दोलनमें भाग ले रहे हैं और तिलक स्वराज्य-कोषकी हुण्डियाँ बेच रहे हैं। चूँकि कानून द्वारा संस्थापित सरकारके विरुद्ध ऐसे आन्दोलनसे आम लोगोंके अमन चैनमें विघ्न पड़ने और शान्तिके भंग होनेका अन्देशा है, अतः इन लोगोंसे स्पष्टीकरण माँगा जाता है कि उनमें से हर एकसे एक साल तक शान्ति कायम रखनेके लिए १,००० रुपयेके मुचलके और ५००–५०० रुपयेकी दो जमानतें क्यों न ली जानी चाहिए।

ऊपरी तौरपर सम्मनसे कोई अपराध प्रकट नहीं होता। परन्तु पटवारीका बयान पढ़कर स्थितिकी दुःखजनक हास्यास्पदता बढ़ जाती है। इसमें कहा गया है कि अभियुक्तने पण्डित मोतीलाल नेहरूको चन्दा दिया है और उसे रामगढ़-जैसी हवाखोरीकी जगहमें पण्डित (मोतीलाल) नेहरू-जैसे पक्के असहयोगीके साथ देखा गया है। यह सच है कि न्यायाधीशमें ऐसे प्रसंगोचित तथ्यका जिक्र करनेका साहस नहीं है, परन्तु जैसा कि दूसरे अभियुक्तके बयानसे सुस्पष्ट हो जाता है, उसका एकमात्र अपराध पण्डितजीके साथ रहना और उनकी सेवा करना ही है। अभियुक्त अपने जिलेका एक प्रसिद्ध व्यक्ति है। यह भी सभी जानते हैं कि वह क्षयरोगसे पीड़ित है और अब उसका रोग चरम अवस्थामें है। उसका दाहिना फेफड़ा समाप्त-प्रायः है। उसका बायाँ फेफड़ा और उसकी आँतें भी बहुत खराब हैं। उसने महीनोंसे किसी राजनैतिक काममें भाग नहीं लिया है। उसने भाषण भी नहीं दिये हैं। वह रामगढ़में पण्डितजीकी तरह स्वास्थ्य सुधार रहा है। अतः न्यायाधीशके लिए उसे गिरफ्तार करनेका या गिरफ्तारीके बाद उसपर मुकदमा चालू रखनेका कोई कारण ही नहीं है। तथ्य यह है कि न्यायाधीश असहयोगसे तनिक भी सम्बद्ध लोगोंको स्पष्टतः आतंकित करना चाहता है। इसमें वे लोग भी आ जाते हैं जो गाँवमें चन्दा इकट्ठा करते हैं या असहयोगियोंकी सहायता करते हैं। कहा जा सकता है कि ऐसी घटनाएँ वास्तवमें अपवाद-स्वरूप हैं और उनके महत्त्वकी अतिरंजनाकी कोई जरूरत नहीं। मैं इस सिद्धान्तको माननेमें असमर्थ हूँ। इस दृष्टान्तमें न्यायाधीशने सम्भवतः एक मौलिक तरीका अपनाया है, परन्तु

संयुक्त-प्रान्तमें मैंने जो-कुछ देखा उससे मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि वहाँ एक ऐसा परोक्ष आतंकवाद चालू है जैसा शायद सिन्धको छोड़कर अन्यत्र कहीं नहीं है। इसका एकमात्र उद्देश्य असहयोगकी समस्त प्रवृत्तियोंको कुचल डालना है, चाहे वे कितनी ही अहिंसात्मक और सब प्रकारसे निर्दोष क्यों न हों। अली भाइयोंके क्षमा-याचनाके वक्तव्यका भी अत्यन्त बेईमानीभरा उपयोग किया जा रहा है। उसका उपयोग करनेवाले अली भाइयोंकी क्षमा-याचनाकी रीति और विधिसे परिचित हैं। परन्तु अली भाइयोंके इस वीरतापूर्ण कार्यको विकृत रूपमें प्रस्तुत करना इन लोगोंकी उन धूर्तताओं-की तुलनामें कुछ नहीं है जिन्हें ये असहयोगियोंको झुकाने और दूसरोंको उनके मार्गसे हटानेके उद्देश्यसे प्रयोगमें लाते हैं। मुझे पक्का पता है कि असहयोगका झण्डा उठानेकी हिम्मत करनेवाले निर्धनोंको इसलिए सताया जाता है कि वे कांग्रेस कमेटीमें शामिल न हों और उनको वैसे ही आपत्तिजनक तरीकोंसे उन शान्ति सभाओंमें शामिल होनेके लिए बाध्य किया जाता है जो वस्तुतः गैरकानूनी हैं; क्योंकि उनके बनाने और चलानेमें अवैध और अनैतिक विधियाँ अपनाई जाती हैं। संयुक्त-प्रान्तकी सरकार कूट और भीरु ढंगसे वही कर रही है जो सर माइकेल ओ'डायरकी सरकारने लट्ठमार तरीकेसे किया था। उन्होंने अपनी नीतिके अनुरूप अमल किया और सब नेताओंको गिरफ्तार कर खुलेआम जलियाँवालाका वातावरण बनानेका साहस दिखाया था। मैं इस तथ्यकी ओर दूसरे स्थानोंपर पाठकोंका ध्यान आकृष्ट कर चुका हूँ कि पंजाबमें सैनिक भरतीके दिनोंमें जलियाँवालासे भी भीषण घटनाएँ हो चुकी हैं, किन्तु उनकी ओर किसीका ध्यान नहीं गया, क्योंकि नेता गिरफ्तार नहीं किये गये थे। संयुक्त-प्रान्तकी सरकार श्री शेरवानीके जैसे इक्के-दुक्के उदाहरणोंको छोड़कर बड़े नेताओंको गिरफ्तार नहीं करेगी। सरकारने श्री रंगा अय्यरको गिरफ्तार किया है। उसने अभी तक पण्डित जवाहरलाल नेहरू या श्री जोजेफको हाथ भी नहीं लगाया है, हालाँकि चुनौती तीनोंने साथ-ही-साथ दी थी। मैंने संयुक्त-प्रान्तके अपने निरीक्षणको लेखबद्ध करनेका झंझट इसलिए उठाया है कि मैंने श्री चिन्तामणिका वह भाषण पढ़ा है जिसमें उन्होंने सरकारकी कार्रवाईका जोरदार समर्थन किया है और मुझपर यह जोर भी डाला गया है कि मैं पूर्ण उत्तरदायी सरकारकी तरह सुधारोंको कार्यान्वित करनेवाले उन मन्त्रियोंको प्रोत्साहन दूँ। मेरे तुच्छ विचारमें जहाँ भी सम्भव है वहाँ सुधारोंको और सुधारोंके अन्तर्गत बनाये गये मन्त्रियोंका उपयोग चतुर परन्तु बेईमान नौकरशाहीको सहारा देनेके लिये किया जा रहा है। मंत्री इस बातको नहीं जानते और वे अनचाहे उसके हाथोंकी कठपुतली बन रहे हैं, किन्तु इससे नीतिकी सदोषतामें कोई कमी नहीं आती। हाँ, इस स्थितिमें मंत्रियोंका दोष कुछ हलका जरूर मालूम पड़ता है। मुझे यह विश्वास करनेमें हिचक है कि राजा साहब महमूदाबाद और श्री चिन्तामणि यह जानते हैं कि वे क्या कर रहे हैं। मेरा खयाल तो यही होता है कि वे नौकरशाहीके जालमें मजबूरन फँस गये हैं और उनके सम्मुख जो प्रत्यक्षतः उचित दिखनेवाली दलीलें रखी गई हैं उनके कारण वे उन बातोंको क्षम्य मान लेते हैं जिन्हें वे अन्यथा बेहिचक निन्दित ठहराते। 'इंडिपेंडेंट' ने लिखा है कि राजा महमूदाबादने उस जिला न्यायाधीशके कार्यका समर्थन किया है जिसने पूर्वी बदायूँके एक मुन्सरिमको अपने बेटेका,

जिसे दफा १४४ के अन्तर्गत नोटिस दिया गया था, राजभक्तिका शपथ-पत्र दाखिल न करनेपर मुअत्तिल कर दिया था। वह जबतक आवश्यक शपथ-पत्र दाखिल न करे तबतक के लिए १० मईको मुअत्तिल किया गया। यह बात सच है कि पुत्र पिताके साथ रहता था। फल यह हुआ कि मुन्सरिमने ६ जूनको अपने बेटेकी ओरसे अमन सभामें शामिल होनेकी अर्जी पेश कर दी और अपने बेटेकी इच्छानुसार काम करनेकी स्वतन्त्रताको बेचकर नौकरीपर अपनी बहाली हासिल कर ली। यदि हम पर्देके पीछे झाँककर देख सकते तो सम्भवतः हमें बेचारे मुन्सरिमकी मुअत्तिलीके समर्थक गुप्त खरीते मिल जाते। खैर, जो भी हो यह दुःखजनक तथ्य है कि सरकारी नौकरोंपर यह दबाव डाला जा रहा है कि वे अपने लड़कोंको असहयोग आन्दोलनसे हटा लें। मुझे कोई शक नहीं कि तीन साल पहले राजा साहब स्वयं सरकारी नौकरों और उनके परिवारोंके ऐसे भयंकर पतनके विरुद्ध मुझसे कहीं अधिक सशक्त रूपसे लिखते और भाषण देते थे। मंत्रिगण बेईमान लोगोंके हाथों कठपुतली बनाये जा रहे हैं इस सत्यकी ओर लोगोंका ध्यान आकृष्ट करनेसे भी अधिक मतलबकी बात यह है कि असहयोगियों-को सरकारके यहाँ उल्लिखित अवैध और अनैतिक कार्योंसे हतोत्साह न होना चाहिए प्रत्युत यह समझ लेना चाहिए कि हमें ऐसे और इससे भी कड़े दमनकी आशा रखने और उसे यह मानकर कि विश्वके सब सुधारकोंके भाग्यमें यही बदा है, प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करनेकी जरूरत है। आततायी सचमुच यही विश्वास रखते हैं कि हम गलती कर रहे हैं और देशको हानि पहुँचा रहे हैं और जिस आन्दोलनके हम समर्थक हैं वह कुचला जाता हो तो उसको कुचलनेमें कैसे साधन प्रयुक्त किये जाते हैं यह बात कोई महत्त्व नहीं रखती। अतः हमें दमनको विजयकी प्रस्तावना समझना चाहिए, और इस कारण उसका स्वागत करना चाहिए और उससे अपने निश्चयको दृढ़तर बनाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८–८–१९२१

२७१. मेरी भूल

परमात्मा ही जानता है कि मैंने कितनी बार भूलें की हैं। जो लोग यह समझते हैं कि मुझसे भूल नहीं होती वे मुझे नहीं पहचानते। मेरे निजी अनुभवोंने तो मुझे नम्रतापूर्वक इस बातको जानना और मानना ही सिखाया है कि भूलोंसे संग्राम करना ही जीवन है। १९१९में जब मैंने बड़ी प्रसन्नतासे सत्याग्रह आरम्भ किया, मैंने देखा कि मैंने बड़ी भारी गलती की है। नडियादमें ज्यों ही मैंने दूरंदेशीकी कमी देखी त्यों ही कहा कि यह तो 'हिमालय जैसी गलत-अन्दाजी' है। इसमें कोई अत्युक्ति नहीं थी। और यदि इससे भारतकी नैतिक उन्नतिकी क्षति नहीं हुई है तो इसका कारण यह है कि भूलको साफ और पूरे तौरपर कबूल कर लेनेकी बुद्धि मुझमें थी। अब अगले कुछ सप्ताहोंमें एकाग्र होकर "स्वदेशी" का आन्दोलन करते समय

मैं एक और भूल स्वीकार कर लेना चाहता हूँ। अध्यापकों और विद्यार्थियोंके साथ बातचीतमें तो मैंने वह भूल पहले ही कबूल कर ली है। परन्तु अपने चित्तकी शान्ति और साथ ही वर्तमान स्वदेशी-प्रचारके कार्यके लिए उसे सब लोगोंके सामने अधिक निश्चित रूपसे स्वीकार कर लेना आवश्यक है। इन नौ महीनोंके अनुभवने यह बात पक्की कर दी है कि सरकारी शिक्षा-संस्थाओंका बहिष्कार करना ठीक ही था। परन्तु उस समय विद्यार्थियोंको जो मार्ग बताया गया उसमें मेरी कमजोरी थी। इसे मैं कमजोरी इसलिए कहता हूँ कि मुझे अपनी बातपर दूसरोंको विश्वास करा देनेकी अपनी क्षमतापर विश्वास नहीं था। मैंने इसके नतीजेको भगवान्पर छोड़नेकी बजाय उसकी चिन्ता खुद ही की। इससे मुझमें दुर्बलता आ गई और मैंने लड़कोंसे कहा, मदरसे छोड़ देनेपर, चाहे गलियोंमें घूमते फिरो, चाहे वैसी ही पढ़ाई पढ़ो या, सबसे बेहतर, स्वराज्य स्थापित होनेतक हाथ-कताईके काममें लग जाओ। परन्तु नागपुर कांग्रेसके प्रस्तावके बाद ही मैंने जान लिया कि लड़कोंको कई मार्ग बताकर मैंने गलती की है। परन्तु अनर्थ तो हो ही चुका था। वह पिछले सितम्बरमें शुरू हुआ और जनवरीसे मैं उसे सुधारने लगा। परन्तु मरम्मत तो हमेशा पैबन्दका काम देती है। और इसीलिए अधिकतर असहयोगी विद्यालयोंमें चरखा कातना एक अनावश्यक कार्य या कालक्षेपका साधन हो गया है। मुझे साहस करके सारी सच्ची बात कहनी थी और बताना था कि हाथसे कातना और बुनना शिक्षा-संस्थाओंके बहिष्कारके प्रस्तावका अभिन्न अंग है। हाँ, यह सच है कि इससे शायद कम लड़कोंने स्कूल छोड़े होते। परन्तु उन्होंने उन हजारों लड़कोंकी बनिस्बत, जिन्होंने इस मार्गके विषयमें निश्चित कल्पना किये बिना ही स्कूल और कालेज छोड़ दिये हैं, बहुत ज्यादा काम किया होता। अबतक तो वे हाथ-कताई और हाथ-बुनाईमें प्रवीण हो गये होते और हमारा स्वदेशीका काम ज्यादा आसान हो गया होता। मैं जानता हूँ कि असहयोगी विद्यालयोंके अध्यापक और विद्यार्थी अपनी पूरी शक्ति इसमें लगा रहे हैं। परन्तु यह मानना होगा कि वे उसे दिक्कतके साथ कर रहे हैं। वे सामान्य रूपसे स्वदेशी या हाथ-कताईके विषयमें कोई विश्वास लेकर नहीं आये हैं। उन्होंने इस प्रश्नपर सिर्फ शिक्षाकी दृष्टिसे ही विचार किया है और ऐसा करनेका उन्हें अधिकार भी था। उनके लिए तो बस इतना ही काफी था कि वे सरकारी शिक्षालयोंसे निकल आयें और इस तरह उन्होंने सरकारका मान घटा दिया। अब यह कहना उनको अखरेगा कि तुम्हारा बहिष्कार पूर्ण तभी हो सकता है जब तुम सूत कातो और खादी तैयार करो, और इस नई (स्वराजी) शिक्षा-विधिकी आरम्भिक पढ़ाई तो यही है कि संग्रामके समयमें हाथ-कताईका तथा कपड़ा तैयार करनेकी दूसरी क्रियाओंका ज्ञान प्राप्त किया जाये।

परन्तु अब जब कि गलती हो चुकी है, मुझे उसकी सजा भोगनी लाजिम है; और वह इस रूपमें कि मैं धीरजके साथ शंकालुओंको यह विश्वास करानेका प्रयत्न करूँ कि यदि मैंने हाथ-कताईको भी असहयोगके शिक्षा-सम्बन्धी कार्यक्रमका एक आवश्यक अंग बनानेपर जोर दिया होता तो अच्छा होता। अतएव मैं उन सब लोगोंका, जिनका मत मुझसे मिलता है, आह्वान करता हूँ कि वे अब इस भूलको सुधारनेमें जल्दी करें और जिन राष्ट्रीय शिक्षा-संस्थाओंपर उनका प्रभाव है उनमें सूत और

खादी तैयार करानेके काममें तत्परतापूर्वक लग जायें। वे शिक्षकोंकी माँग मुझसे न करें। शिक्षक मेरे पास ही बहुत कम हैं। परन्तु उन्हें मैं यह बताये देता हूँ कि कपड़ा बनानेके लिए गाँठकी रुईपर कौनसी क्रिया किस तरह करनी चाहिए। आज तो हमें आमतौर पर गाँठकी रुई ही मिलती है। सबसे पहले वह धुनी जानी चाहिए। हिन्दुस्तानका ऐसा कोई हिस्सा नहीं जहाँ धुनिये या पिंजारे न मिलते हों। ये रुई धुन दे सकते हैं और एक-दो दिन ध्यानसे देखने-मात्रसे उस रीतिको समझा जा सकता है। छः घंटा रोजके हिसाबसे एक हफ्ता अभ्यास करनेपर मामूली तौरपर अच्छा धुनना आ सकता है।

धुनी हुई रुईकी अब पूनियाँ बना लें। पूनी बनाना तो इतना सीधा और आसान काम है कि एकाएक कोई उसपर विश्वास भी नहीं करेगा।

अब रुई सूत कातने योग्य हो गई। सूत कातना किसी भी कातनेवाले से सीखा जा सकता है। वही सूत 'सूत' हो सकता है जिसमें गर्द न लगी हो, जो एकसार और अच्छा बटदार हो। यदि सूत एकसार और अच्छा बटदार न होगा तो वह बुना नहीं जा सकेगा।

इसके बाद माड़ी लगाई जाती है। इसका अभ्यास कुछ कठिन है। मुझे कोई वैज्ञानिक नियम नहीं मालूम जिससे यह बताया जा सके कि उसमें कौन-सी वस्तु कितनी होती है। यह काम किसी तजुर्बेकार जुलाहेसे जानना होगा।

सूत साँधनेकी क्रिया भी अलगसे सीखनी चाहिए। जिस तरह साइकिल चलानेमें कुछ तरकीबसे काम लेना पड़ता है उसी तरह इसमें भी है और वह आसानीसे आ सकता है।

अब रही बुनाई। यह केवल अभ्यासकी बात है। इसका तत्त्व तो एक ही दिनमें समझमें आ जाता है। मैं दावेसे कहता हूँ कि इसकी क्रिया बड़ी आसानीसे सीखी जा सकती है। पाठक इसपर आश्चर्य न करें। सारा आवश्यक और स्वाभाविक कार्य आसान होता है। बस, प्रवीणता प्राप्त करनेके लिए लगातार अभ्यास और कामके पीछे पड़नेकी जरूरत होती है। कामके पीछे पड़नेकी योग्यता ही स्वराज्य है। वही योग है। पाठकोंको एक ही काम लगातार करते रहनेसे उकताना भी नहीं चाहिए। कामकी ऐसी एकरूपता — अर्थात् किसी कामका एक ही तरहसे किया जाना — तो प्रकृतिका नियम है। सूर्यको देखिए, किस तरह वह बार-बार उदित होता है। यदि सूर्य मौजमें आकर कहीं मनोरंजन करनेमें अटक जाये तो खयाल कीजिए, दुनियापर आफतका कैसा पहाड़ टूट पड़ेगा। परन्तु एक प्रकारकी एकरूपतासे रक्षा होती है, और दूसरे प्रकारकी एकरूपतासे संहार होता है। आवश्यक कार्योंकी एकरूपतासे आह्लाद और जीवन मिलता है। कारीगर अपनी कारीगरीसे कभी नहीं उकताता। जो कातनेवाला सूत कातनेकी कलामें निपुण हो गया है वह निश्चय ही अथक लगातार काम करता रहेगा। सूत कातनेमें तकुवेसे जो संगीत निकलता है उससे अच्छा कातनेवाला तुरन्त ही आनन्द लाभ करने लगता है। और जब भारत सूत कातनेके बलपर स्वराज्य प्राप्त कर लेगा तब उसका यह कार्य एक सुन्दर कार्य होगा और वह सदा आनन्दका स्रोत होगा। परन्तु यह चरखेके

बिना नहीं हो सकता। अतएव भारतके लिए सबसे श्रेष्ठ राष्ट्रीय शिक्षा यही है कि बुद्धिमत्तापूर्वक चरखा चलाया जाये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-८-१९२१

२७२. पत्र : देवदास गांधीको

असम
बृहस्पतिवार [१८ अगस्त, १९२१][1]

चि० देवदास,

मैं तो चाहता हूँ कि तुम वहीं रहो। तुम्हें वहाँ बहुत सारे अनुभव प्राप्त करने हैं — 'यंग इंडिया' में तथा 'नवजीवन' हिन्दी और गुजराती दोनोंमें। हिन्दी विभागमें तुम खूब काम कर सकते हो। और फिर बाको जो शान्ति दे सकते हो सो अलग। यदि तुम दिलचस्पी लो तो वहाँ कातना और पींजना भी है। छोटी-मोटी तकरारें हो जानेपर तुम वैद्यका काम कर सकते हो। इसलिए मेरा खयाल है कि इस महीने तो तुम्हारा वहीं रहना ठीक होगा। अब ब्रह्मपुत्रको पार करनेका समय आया है। डाक जानेसे पहले इस पत्रको पूरा करना होगा, इसलिए अधिक नहीं लिखता। हरिलालके साथ ठीक-ठीक बातचीत हुई है। उसने मुझे बताया कि उसने भी अगस्तसे खादीकी टोपी पहनना आरम्भ कर दिया है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ७६३१) की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजी १७ अगस्तको कलकत्तामें तथा १९ को गोहाटीमें थे। सम्भवतः उन्होंने १८ अगस्तको जो कि बृहस्पतिवार था ब्रह्मपुत्र पार की थी।

२७३. 'हिन्दी नवजीवन'

यद्यपि मुझे मालूम है कि 'नवजीवन' को हिन्दीमें प्रकाशित करना कठिन काम है तथापि मित्रोंके आग्रहवश होकर और साथियोंके उत्साहसे 'नवजीवन' का हिन्दी अनुवाद निकालनेकी धृष्टता मैं करता हूँ। मेरे विचारोंपर मेरा प्रेम है। मेरा विश्वास है कि उनके अनुकरणसे जनताको लाभ है। इसलिए उनको हिन्दीमें प्रकट करनेकी इच्छा मुझे बहुत समयसे थी। परन्तु आजतक परमात्माने उसे सफल नहीं किया था। हिन्दुस्तानीको भारतवर्षकी राष्ट्रीय भाषा बनानेका प्रयत्न मैं हमेशासे करता आया हूँ। हिन्दुस्तानीके सिवा दूसरी भाषा राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती, इसमें कुछ भी शक नहीं। जिस भाषाको करोड़ों हिन्दू-मुस्लिम बोल सकते हैं, वही अखिल भारतवर्षकी सामान्य भाषा हो सकती है, और उसमें जबतक 'नवजीवन' न निकाला गया तबतक मुझे दुःख था।

हिन्दुस्तानी-भाषानुरागी 'हिन्दी नवजीवन' में उत्तम प्रकारकी हिन्दीकी आशा न रखें। 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' का अनुवाद ही उसमें देना सम्भवनीय है। मुझे न तो इतना समय है कि हमेशा हिन्दुस्तानीमें लेख आदि लिखकर दे सकूँ और न बहुत हिन्दुस्तानी लिखनेकी शक्ति ही मुझमें है।

'हिन्दुस्तानी भाषाका प्रचार' इस साहसका मुख्य हेतु नहीं है। 'शान्तिमय असहयोगका प्रचार' ही इसका उद्देश्य समझना चाहिए। हिन्दुस्तानी भाषा जाननेवाले जबतक असहयोग और शान्तिके सिद्धान्त भलीभाँति न समझ लेंगे, तबतक शान्तिमय असहयोगकी सफलता असम्भव-सी है। इसलिए 'हिन्दी नवजीवन' की आवश्यकता थी। परमात्मासे प्रार्थना है कि जो लोग केवल हिन्दुस्तानी ही समझते हैं, उन्हें 'हिन्दी नवजीवन' मददगार हो।

हिन्दी नवजीवन, १९–८–१९२१

२७४. मारवाड़ी भाइयों और बहनोंसे

प्रिय भाई-बहनो,

आपके प्रेमवश होकर मैंने 'हिन्दी नवजीवन' निकालनेका साहस किया है। जबसे मैं भारतवर्षमें आया हूँ, तबसे मेरा आपका सम्बन्ध निकट आता जा रहा है। आपने मेरी प्रवृत्तिको प्रेमभावसे देखा है और मुझे सहायता दी है। आपने हिन्दी-प्रचारमें खूब मदद की है। आपकी ही सहायतासे आज द्राविड़ प्रान्तोंमें हिन्दीका प्रचार अच्छी तरह हो रहा है। आप भाई और बहनें असहयोगी हैं। आप राष्ट्रीय जीवनमें रस लेते हैं। आपने देख लिया है कि धनी पुरुष और स्त्रियाँ राष्ट्रीय जीवनसे पराङ्मुख नहीं रह सकते।

आप धर्मप्रेमी हैं। धर्मके लिए आप लाखों रुपये देते हैं। आपमें साहस भी है। द्रव्योपार्जन आपका प्रधान क्षेत्र है। [तथापि] धनिकवर्गके अलग रहते हुए इस धर्म-युद्धमें, जो आज भारतवर्षमें छिड़ रहा है, सफलता मिलना मुझे बहुत ही कठिन दिखाई देता है।

अखिल भारतकी राष्ट्रीय समितिने स्वराज्य प्राप्तिके लिए अब जो कदम उठाया है, उसमें आप लोगोंकी ओरसे सहायता मिलनेपर ही सम्पूर्ण सफलता मिल सकती है। उक्त समितिने निश्चय कर लिया है कि आगामी ३० सितम्बरतक विदेशी कपड़ोंका पूरा बहिष्कार कर दिया जाये। मैंने आपके ही विश्वासपर सितम्बर मासकी अवधि रखनेकी सलाह दी। अतएव इस स्वदेशी आन्दोलनको प्रबल बनानेके समय 'हिन्दी नवजीवन' का प्रकाशित होना उचित ही है।

राष्ट्रीय जीवनमें आजकल दो ही वृत्तियाँ देखी जा रही हैं, व्यापार और नौकरी। ब्राह्मणवृत्ति और क्षात्रवृत्तिका अभाव मालूम होता है। अब हमारे व्यापारी-समाज तथा दास-वर्गको ज्ञान और शौर्य प्राप्त करनेकी आवश्यकता है। हमें इस बातका ज्ञान होना चाहिए कि विदेशी कपड़ेके व्यापारसे हमारा देश मटियामेट हो गया है। और उस व्यापारका त्याग करनेका शौर्य भी हममें होना चाहिए। यदि हममें इतना भी बलिदान करनेका शौर्य नहीं है जितना कि विदेशी कपड़ेके व्यापारके त्यागके लिए आवश्यक है, तो हम अपने धर्मका पालन नहीं कर सकते; अपने ही भाई-बहनोंको नुकसान पहुँचाकर हमने करोड़ों रुपये इकट्ठा किये और उसमें से लाखोंका दान किया, तो यह पुण्य नहीं है। इसलिए आप भाई और बहनोंसे मेरी प्रार्थना है कि आप विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करनेमें और खादी तैयार करनेमें पूरा साहस दिखाकर अपनी पिछली देशसेवामें वृद्धि करें।

आपका,
मोहनदास करमचन्द गांधी

हिन्दी नवजीवन, १९-८-१९२१

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

'यंग इंडिया' के सम्पादकको पत्र

बरेली
१५ अप्रैल, [१९२१]

सम्पादक
'यंग इंडिया'
महोदय,

आपको ज्ञात है कि मौलाना मुहम्मद अलीने मद्रास अहातेमें होनेवाली एक सार्वजनिक सभामें खुले आम कहा है कि अगर अफगानिस्तानके अमीरने उन लोगोंके विरुद्ध संग्राम करनेके लिए, जिन्होंने इस्लामको पौरुषहीन बना डाला है और जो इस्लामके पवित्र स्थानोंपर कब्जा किये बैठे हैं, भारतकी ओर कदम बढ़ाया तो मैं उनकी सहायता करूँगा। मेरा खयाल है कि भारतमें इस प्रश्नके बारेमें भिन्न-भिन्न मत हैं। नरम दलवाले [नेतागण] इस प्रकारके किसी भी आन्दोलनको कुचल देने पर आमादा हैं। राष्ट्रीय दलवाले नेता भी, उदाहरणार्थ लाला लाजपतराय, श्री चित्तरंजन दास और पण्डित मालवीय चुप्पी साधे हुए हैं। इतना ही नहीं, आपने भी श्री मुहम्मद अलीके उक्त महत्त्वपूर्ण भाषणके सम्बन्धमें कुछ नहीं कहा है। सम्राट्के दुश्मनके प्रति सहानुभूति दिखाना और खुले रूपमें उसकी सहायता करना बहुत बड़ी गद्दारी है, परन्तु आजकल जब सभा-मंचोंसे स्पष्ट बातें कहने और बेलाग होकर भाषण करनेका रिवाज-सा पड़ गया है, लोगोंके मनमें नेताओंका फैसला सुननेकी उत्सुकता स्वाभाविक है। यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। समाचारपत्रोंमें सार्वजनिक विषयोंपर लेख भेजनेवालों की —— सौभाग्यसे मैं भी उनमें से एक हूँ —— समझमें यह नहीं आ रहा है कि [मौलाना मुहम्मद अलीके भाषणके बारेमें] क्या राय कायम की जाये।

दूसरी बात जो मैं आपसे कहना चाहता हूँ वह यह है: क्या आपका खयाल यह है कि ईश्वरसे डरनेवाले लोग या केवल वही व्यक्ति जो ईश्वरमें विश्वास रखते हैं, असहयोगी हो सकते हैं? मेरा एक मित्र बुद्धिवादी —— खुदाका शुक्र है कि मैं तो एक पक्का मुसलमान हूँ —— और पक्का राष्ट्रवादी [भारतीय] है। मेरा वह मित्र अपनी मातृभूमिकी वेदीपर तथा किसी अपेक्षाकृत निर्बल राष्ट्रको न्याय दिलानेकी खातिर अपना सब-कुछ कुर्बान करनेको तैयार है, परन्तु वह खुदाके नामपर कुछ भी करनेको तैयार नहीं है, क्योंकि उसका खयाल है कि खुदा है ही नहीं। मेरा यह मित्र खद्दर पहननेको तैयार है, और उसने खद्दर पहनना शुरू भी कर दिया है।

वह तिलक महाराजका प्रशंसक है और तिलक स्वराज्य-कोषमें अकसर मुक्तहस्तसे चन्दा दिया करता है। परन्तु क्या वह 'असहयोगी' है? क्या आपकी सूचीमें उसका नाम है? अगर उसमें और कोई कमी न हो तो क्या वह आपके आश्रममें भरती हो सकता है?

तीसरी कठिनाई यह है कि आपके कथनानुसार इस — शैतानियतसे भरी हुई — सरकारका सदस्य बनना पापमय है, परन्तु फिर भी इस सरकारकी नौकरीमें अथवा सरकारी संस्थाओंमें अपने इतने अधिक देशवासियोंके बने रहनेको आप बरदाश्त करते हैं। आप उन्हें इस समय अपने दलमें शामिल होनेका निमन्त्रण नहीं दे रहे हैं। क्या यह उचित है? यदि इस सरकारकी नौकरी करना सामाजिक अथवा धार्मिक दृष्टिसे अपराध है — मेरे खयालसे ऐसा ही है — तो आप उन्हें वहाँ क्यों रहने दे रहे हैं? क्या धर्म, आत्मशुद्धि और स्वावलम्बनके क्षेत्रमें सामयिक लाभ उठानेकी नीतिकी गुंजाइश हुआ करती है?

अन्तमें आपसे एक बात और पूछना चाहता हूँ: "एक सालके अन्दर ही स्वराज्य प्राप्त करने" से आपका क्या मतलब है? क्या उस वाक्यका मतलब यह है कि कांग्रेसके आगामी अधिवेशनके अवसरपर देश ब्रिटिश साम्राज्यसे मुक्त और अलग हो जानेकी घोषणा कर देगा? अगर ऐसा नहीं हो तो क्या फकत आजादीका अहसास, स्वदेशीको अपनाना और अदालतों तथा स्कूलोंका अधूरा बहिष्कार — इन तीन बातोंसे यही समझा जायेगा कि भारतमें स्वराज्य स्थापित हो गया? और अगर खुदा न खास्ता हमारा बहिष्कार आन्दोलन असफल रहा तो क्या उसका मतलब यह होगा कि जिनसे एक सालके वास्ते वकालत करना और स्कूलोंमें पढ़ना-लिखना छोड़ देनेको कहा गया है वे उन निषिद्ध मानी जानेवाली संस्थाओंमें फिर जाने लगेंगे?

आपका,
अहफद हुसैन

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ४–५–१९२१

परिशिष्ट २

चरखा और अकाल-पीड़ितोंकी सहायता

अगस्त १९२० में जब अकाल तीव्र रूपमें था, उस समय ऐसा सोचा गया कि दुर्भिक्ष-पीड़ितोंकी सहायताके लिए सम्भ्रान्त मध्यम-वर्गके लोगोंको चरखा चलाना चाहिए। इसकी शुरुआतके लिए कुमारी लेथमने कृपापूर्वक एक चरखा प्रदान किया। कोशिश इस बातकी की गई कि यह काम विशेषतया धाँगरों द्वारा, जो ऊन कातनेके अभ्यस्त थे, कराया जाये परन्तु वह प्रयत्न असफल रहा। रुईकी कताईसे जो बिलकुल अनभिज्ञ हो ग्रामके ऐसे लोगोंसे बारीक सूत कतवाना असम्भव था। इसके सम्बन्धमें शंका उठाई गई कि आया इस कामसे —— अगर यह शुरू किया गया —— पैसे कमाये जा सकते हैं या नहीं अथवा थोड़ी-बहुत मदद मिल सकती है या नहीं। इस प्रकारकी भिन्न-भिन्न कठिनाइयों और आपत्तियोंके बीच लगभग तीन मासतक चरखा बिना चले ही पड़ा रहा और बड़ी कोशिशोंके बावजूद चरखा चलानेके लिए कोई भी व्यक्ति राजी न दीख पड़ा। दिसम्बर १९२० में कुमारी लेथमने श्रीमती जे० पेटिटकी मेहरबानी-के परिणामस्वरूप चार चरखे पुनः भेजे। थोड़ी रुई भी भेजी। ये दोनों चीजें कुछ व्यक्तियोंमें आजमाइशके तौरपर वितरित की गईं। अब कुछ आशा जागी। अन्ततोगत्वा एक रमोशी स्त्री यह काम लगनके साथ करने पर राजी कर ली गई। यह बात २० जनवरी, १९२१ के लगभग की है। उस दिनसे कताईके काममें कुछ और ही छटा दीख पड़ने लगी। इस स्त्रीका अनुकरण दो अन्य स्त्रियोंने किया, वे चरखा चलानेको राजी हो गईं। बड़े अध्यवसायके फलस्वरूप इन तीन महिलाओं द्वारा ४ पौंड सूत तैयार किया गया और उसे बिक्रीके वास्ते भेजा गया। इस बीच अनेक स्त्रियोंने पूछताछ शुरू की और यह इच्छा व्यक्त की कि अगर इस कामसे उन्हें थोड़ा-बहुत भी आर्थिक लाभ हो तो वे कताई करना चाहेंगी। इसलिए कताईकी दर ६ आना पौंड निर्धारित की गई। इससे अन्य कतैये भी इस काममें शामिल होने लगे।

अब दूसरी कठिनाई धनकी आ खड़ी हुई। पाँचों चरखे चलाये जा रहे थे। उसी गाँवमें जो पाँच चरखे बनवाये गये थे, वे भी चालू हो गये थे। उस केन्द्रमें रुईका जो भण्डार था वह चुक गया था। ऐसा लगने लगा था कि चरखे बनवाने, रुई खरीदने और मजदूरी देनेके लिए आवश्यक धनके अभावमें काम रुका रहेगा। राव बहादुर चितलेने यह कठिनाई स्वयं आकर देखी-समझी और १००) प्रदान करके काममें सहायता की। कुमारी लेथमको जब इस कठिनाईका पता चला तो उन्होंने भी एक सौ रुपये भेजे। ये दोनों दान ऐन मौकेपर प्राप्त हुए और उनकी बदौलत काम चल निकला। स्थानीय लोगोंने अपने पाससे कपास देकर इस काममें सहायता दी।

चरखोंकी माँग दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई। वहाँके लोग इतने गरीब थे कि अपना-अपना चरखा भी नहीं खरीद सकते थे। इसलिए यह आवश्यक हो गया कि उसी गाँवमें

चरखे बनवाये जायें और वे कतैयोंको उधार दिये जायें। २७ और चरखे बने, जिसकी वजहसे अकालके कारण निठल्ले बैठे हुए स्थानीय बढ़इयोंको काम मिल गया। इनमें से एक बढ़ईने चरखेमें कुछ सुधार करके उसे महीन सूत कातनेके लिए अपेक्षाकृत अधिक हलका और उपादेय बना दिया। चरखोंकी कीमत उनकी अच्छाईके अनुसार ३ रु० से लेकर ४ रु० तक यानी तीन, साढ़े तीन और चार रुपये अदा की गई। ऐसे तीन चरखे साढ़े नौ रुपयेमें बिके। इन चरखोंपर कुल मिलाकर १०३ रुपये ८ आने व्यय हुए। इस राशिमें चरखोंके निमित्त श्रीमती पेटिट द्वारा कृपापूर्वक भेजा गया रुपया भी शामिल है।

इस कामके लिए स्थानीय रुई मुहैया तो कर ली गई थी परन्तु वह नौसिखुओंके लिए बिलकुल अनुपयुक्त सिद्ध हुई। इसलिए स्थानीय कपासकी किस्मको कुछ बढ़िया बनानेका एक नया तरीका काममें लाया गया। इसके परिणामस्वरूप न सिर्फ काममें मदद मिली बल्कि कुछ और कतैयोंको काम भी मिलने लगा। कच्ची कपास ली गई और ओटाईसे पूर्व उसमें से पत्तियाँ और गर्द इत्यादि सावधानीसे अलग की जाने लगी। इस कामके लिए मजदूरीकी दर एक पैसा प्रति पौंड निश्चित की गई। कोई भी वृद्धा स्त्री प्रतिदिन ४ पौंड कपास साफ करके दिनमें एक आना कमा सकती थी। कपासकी सफाईके बाद उसे ओटा जाता था, और ओटाईकी दर प्रति दस पौंड एक आना तय हुई। इस प्रकार प्रत्येक स्त्री ढाई आने रोज कमा सकती थी। इस प्रकार ओटी हुई कपास धुनिये द्वारा १ आना प्रति पौंडकी दरसे साफ की जाती थी। वह लगभग आठ आने रोज कमा लेता था। अगर रुई मिलोंसे खरीद ली जाती तो ज्यादा अच्छा होता और आसान भी। परन्तु चूँकि ऐसी स्थानीय कपासकी सफाईके कामसे कुछ लोगोंको काम मिल जाता था, इसलिए इसे जारी रखना ठीक समझा गया। रुईकी सफाईके काममें जो उजरत दी जाती थी उसका अधिकांश ओटाईमें निकले बिनौलोंकी बिक्रीसे वसूल हो जाता है। निम्नलिखित आँकड़ोंसे विदित होगा कि ६० पौंड कपासको खरीदने व उसको अन्तिम रूपमें लानेके सम्बन्धमें कितना खर्चा पड़ता है।

	रु०आ०पा०
२० रुपये फी पटिया (२४० पौंड) की दरसे ६० पौंड कपासकी कीमत	५–०–०
रुईसे गर्द, सूखी पत्तियाँ आदिकी निकलवाई १ पैसा फी पौंडकी दरसे	०-१५-०
५२ पौंड साफ कपासकी ओटाई १ आना प्रति १० पौंडके हिसाबसे	०–५–३
धुनिये द्वारा लिंट (१७ पौंड) की साफ कराई एक आना प्रति पौंडकी दरसे	१–१–०
कुल	७–५–३
३५ पौंड बिनौलोंकी कीमत २० पौंड प्रति रुपयेके हिसाबसे घटाई	१-१२-०
१७ पौंड साफ रुईकी वास्तविक कीमत	५–९–३

इस प्रकार एक पौंड रुईकी कीमत ५ आने ३ पाई बैठती है। ६० पौंड कपासमें ८ पौंड कचरा निकलना ज्यादा माना जायेगा और इसे अच्छी और बढ़िया किस्मकी कपासका इस्तेमाल करके कम किया जा सकता है।

फिलहाल २९ चरखे चल रहे हैं, फिर भी और चरखोंकी बहुत माँग है, परन्तु चूँकि कोष सीमित है इसलिए और ज्यादा चरखे बनवाकर नहीं बाँटे जा सके। सूत ऐसे लोग कात रहे हैं जिन्हें इससे पहले इसका जरा भी ज्ञान न था। इसलिए सूत घटिया किस्मका आ रहा है। दिन-ब-दिन उसमें सुधार तो हो रहा है परन्तु यदि किसी योग्य शिक्षककी सेवाएँ सुलभ की जा सकें तो सुधार बहुत जल्दी होने लगेगा। कातनेवालों में कुछ तो पूरा समय कातनेवाले हैं और कुछ फुरसतके समय ही कातते हैं।

आजकल लगभग २ पौंड सूत नित्य तैयार किया जाता है। ज्यों-ज्यों कातनेवालों को अभ्यास होता जायेगा त्यों-त्यों अधिक सूत काता जाने लगेगा। कताई ६ आने प्रति पौंडके हिसाबसे दी जाती है। हाँ, यह जरूर है कि बहुतेरे कार्यकर्त्ता इस बातकी शिकायत करते हैं कि इतनी मजदूरी काफी नहीं है। चूँकि बिक्रीके लिए भेजे गये सूतसे १२ आने प्रति पौंड ही मिला इसलिए कातनेकी उजरत बढ़ाना मुमकिन न था, वरना नुकसान उठाना पड़ता। १ पौंड सूतपर सवा ग्यारह आने खर्चा आता है अर्थात् सवा पाँच आने रुईके लगे और छः आने कताईके हुए। इस प्रकार हम देखते हैं कि १ पौंड कपासके पीछे सिर्फ ९ पाईका मुनाफा रहता है। इसमें दफ्तर-खर्च तथा अन्य खर्चे शामिल नहीं हैं। ६ आने प्रति पौंड कताईकी वर्तमान दरसे हर कतैयेको प्रतिदिन २० से २४ तोले सूत कात लेनेपर मजदूरीके रूपमें ३ आने रोज मिल जाते हैं। ज्यादातर लोग १५ तोले सूत कातकर २ आने रोज और शेष लोग १० तोले कातकर १$\frac{1}{2}$ आना कमा लेते हैं। नौसिखुओंको इसमें नहीं गिना गया है। ज्यों-ज्यों अभ्यास बढ़ता जायेगा त्यों-त्यों कमाई ज्यादा होने लगेगी।

[इस प्रकार] काते गये सूतसे कपड़ा बनवाया गया। एक बुनकरको साढ़े तीन पौंड सूत बुननेके लिए दिया गया। उसने बुनाई बहुत ऊँची दरसे ली। उस बुनकरने साढ़े नौ गज कपड़ा तैयार किया और तीन रुपये नौ आने मजदूरीके रूपमें लिये। ऐसा समझिए कि १ पौंडकी बुनवाई एक रुपया ली। उस कपड़ेकी लागत ६ रुपये ६ पाई बैठी और वह बिका ६ रुपये ३ आने में। फकत ढाई आने मुनाफेमें आये। बुन-वानेकी इस कठिनाईसे बचनेके लिए यह निहायत जरूरी है कि एक करघा अलगसे लगाया जाये और बुनाई सिखानेके लिए एक शिक्षक रखा जाये जो स्थानीय लोगोंको बुनाई सिखाये। बहुतसे स्थानीय लोग बुनाई सीखना चाहते हैं। एक अलग करघा होनेसे उसपर बुने गये कपड़ेका भाव मौजूदा बाजार भावसे कम होगा। अलग-अलग बुनकरोंको करीब ६ पौंड सूत इस उद्देश्यसे सौंपा गया है कि बुनाई ठीक-ठीक कितनी दी जानी चाहिए इसका पता चल जाये। परन्तु यह सब असुविधा तो तभी दूर हो सकती है जब हम अलगसे एक करघा बठा लें।

जब रुई कम उपलब्ध होती थी और काम करनेवाले काम माँगते थे तब ऊन चालू कर दिया जाता था और यह तबतक चालू रहता था जबतक रुई तैयार न हो। धाँगर लोग इस कामको बड़ी खुशीसे हाथमें ले लेते थे परन्तु उनसे कहा जाता था कि जितनी महीन ऊन अभीतक काती जा रही थी उससे अधिक महीन ऊन कातो।

इन लोगोंको कामपर हाथ बैठानेमें कुछ समय लगा, और अब १० कतैये हैं जो महीन ऊन कातते हैं। उनको भी फी पौंड ६ आनेके हिसाबसे मजदूरी दी जाती है। २ रुपये प्रति २ पौंडके हिसाबसे ३१ रुपयेकी ऊन खरीदी गयी। यद्यपि रुई तैयार हो गई थी तो भी ऊनकी कताई जारी रखी गई। इस कामके लिए एक अलग विभाग खोल दिया गया। क्योंकि धाँगर लोगोंने यह काम शीघ्र ही सीख लिया था। ऊनकी सफाईकी कुल कार्रवाई धाँगर जातिकी स्त्रियों द्वारा ही की जा रही है जिससे उन्हें फी पौंड १ आना और मिल जाया करता है।

ऊनके वर्गीकरणकी ओर विशेष रूपसे ध्यान दिया जाता है। ऊनकी कताई करनेवाले अधिकांश लोग अपने ही चरखे काममें लाते हैं। इनमेंसे कुछ कतैये महीन ऊन कातनेके लिए वर्तमान चरखोंकी अपेक्षा अधिक अच्छे चरखे माँग रहे हैं।

धाँगर बुनकर यहींके हैं। इसलिए यहाँके कते इस महीन ऊनसे पंढरपुर और दावनगिरि नमूनेके कम्बल बनाये जा रहे हैं। बुनकरोंको बुनाईके और नमूने भी सुझाये गये हैं। धाँगर कुछ जिद्दी किस्मके लोग होते हैं इसलिए वे नये और उन्नत तरीकोंको शीघ्र नहीं अपनाते। परन्तु इस कामके चलते वे नये नमूनेके कम्बल बनाने लगे हैं और यह उनके अपने पेशेमें भी स्थायी रूपसे सहायक सिद्ध होगा। अब उन्हें ज्यादा चौड़े तथा उन्नत ढंगके करघोंकी जरूरत है। वे ऊनको रँगनेकी विधि भी जानना चाहते हैं। पूरे दिन काम करनेवाले एक होशियार बुनकरको लगानेकी कोशिश की जा रही है। यह बुनकर बुनाईकी ज्यादा अच्छी विधि सिखायेगा। दो कम्बल तैयार किये गये और उनको लागत दामपर बेच दिया गया। उनमें से एकका दाम रु० ५–१३–६ था और दूसरेका रु० ६–६ था और अधिक कम्बलोंकी माँग आई है परन्तु इस कामको चालू रखनेके लिए कुछ रकमकी जरूरत पड़ेगी।

इतने लोगोंको कामपर लगाये रखना अकाल-पीड़ितोंकी सहायताका एक आदर्श तरीका तो है ही, इसके अलावा ग्रामीण उद्योगोंको बढ़ावा देनेका साधन भी है। साथ ही बार-बार अकाल पड़नेसे जो पस्तहिम्मती आ गई है वह भी इससे दूर होगी। लगभग एक महीनेमें इतना काम हो पाया है। अब हमें एक उन्नत ढंगके करघेकी, एक अच्छे शिक्षककी, ऊनकी बुनाई करनेके लिए एक अच्छे करघेकी और अधिक चरखोंकी (जिनकी माँग पड़ोसके गाँववाले कर रहे हैं) तथा अन्य बहुतसी चीजोंकी जरूरत है। काम तेजीसे चल रहा है और आशा की जाती है कि धनके अभावके कारण काम रुके ऐसी नौबत न आने पायेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११–५–१९२१

परिशिष्ट ३

भेंट तथा क्षमा-प्रार्थना

श्री शौकत अली तथा श्री मुहम्मद अलीके बारेमें वाइसराय महोदय और श्री गांधीके बीच जो वार्त्ताएँ हुई हैं, उनके सम्बन्धमें समाचारपत्रोंमें अनेक वक्तव्य तथा कुछ निष्कर्ष भी प्रकाशित हुए हैं। लोगों, विशेषतया श्री गांधी, ने वाइसराय महोदयका ध्यान उन वक्तव्यों तथा प्रकाशित निष्कर्षोंकी ओर आकर्षित करते हुए कहा है कि उनमें इन वार्त्ताओंके बारेमें कुछ भ्रान्तियाँ दिखती हैं।

वाइसराय तथा श्री गांधीके बीच हुई मुलाकातोंकी जड़में वह वार्तालाप है जो भारतमें सामान्यतया फैली परिस्थितिके सम्बन्धमें वाइसराय और पण्डित मालवीयके बीच हो चुका था। वाइसरायने पण्डित मालवीयको बताया कि सरकारने फैसला किया है कि श्री शौकत अलीपर उनके द्वारा दिये गये हिंसाको प्रोत्साहन देनेवाले भाषणोंके कारण मुकदमा चलाया जाये। बातचीत तब सम्भावित उपद्रवोंके बारेमें होने लगी। पण्डित मालवीयने अपनी यह सम्मति व्यक्त की कि श्री गांधीसे मुलाकात करना वाइसराय महोदयके लिए उपयोगी होगा। वाइसराय महोदयने उत्तरमें कहा कि यदि श्री गांधी मुलाकात चाहें तो उन्हें श्री गांधीसे मिलने तथा उनके विचार सुननेमें प्रसन्नता होगी। दूसरे दिन श्री एन्ड्रयूज वाइसरायसे मिले और उन्हें श्री गांधीसे मिलनेका सुझाव दिया। यह कह देना उचित ही होगा कि इन वार्तालापोंमें बहुतसे महत्त्वपूर्ण विषयोंपर विचार-विनिमय हुआ और यह तय हुआ कि वाइसराय तथा श्री गांधीके बीच होनेवाली प्रस्तावित भेंटमें [भारतकी] परिस्थितिपर सामान्य रूपसे चर्चा की जायेगी। वाइसराय महोदय जानते हैं कि पण्डित मालवीयने श्री गांधीको शिमला बुलाते समय श्री शौकत अली तथा श्री मुहम्मद अलीके खिलाफ जो कानूनी कार्रवाई प्रारम्भ की जानेवाली है उसका अपने पत्रमें कोई जिक्र नहीं किया था।

पण्डित मालवीय तथा श्री एन्ड्रयूजके अनुरोधपर श्री गांधी यथासमय शिमला आये और उन्होंने वाइसरायसे मुलाकातका समय माँगा। मुलाकातकी व्यवस्था तुरन्त कर दी गई। पहले दिनकी वार्त्तामें प्रस्तावित मुकदमोंकी कोई भी बात नहीं उठाई गई। उस दिन तो भारतमें फैले हुए असन्तोषके कारणोंपर ही बातचीत होती रही। दूसरी मुलाकातके अवसरपर वाइसराय महोदयने कहा कि सरकारी रिपोर्टोंसे प्रकट हुआ है कि जिम्मेदार असहयोगियोंने श्री गांधी द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तोंके विरुद्ध हिंसा भड़कानेवाले व्याख्यान दिये हैं। श्री गांधीने किसी जिम्मेदार असहयोगी द्वारा हिंसा भड़कानेके आरोपका खण्डन करते हुए कहा अगर मुझे यह यकीन हो जाये कि किसी भी जिम्मेदार असहयोगीने हिंसाको प्रोत्साहन दिया है और अगर वह अपने उन भाषणोंपर जिनसे हिंसाको प्रोत्साहन देनेकी ध्वनि निकलती है, खेद प्रकट न करेगा, तो मैं उसकी तथा उसके भाषणोंकी सार्वजनिक रूपसे निन्दा करनेको तैयार हूँ। वाइ-

सरायने अली भाइयोंके नाम लिये, और कहा कि मैं आपको इन भाइयोंके भाषणोंमें से निकालकर वे वाक्य दिखाऊँगा जिनसे मेरे विचारमें हिंसाको प्रोत्साहन मिलता है। और जब वे वाक्य श्री गांधीको पढ़कर सुनाये गये तब उन्होंने स्वीकार किया कि सचमुच इनसे तो वही अर्थ निकल सकता है जो वाइसराय महोदयने निकाला है। परन्तु उन्होंने (श्री गांधीने) कहा कि मुझे विश्वास है कि श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अलीका इरादा श्रोताओंको हिंसाकी ओर प्रवृत्त करनेका कदापि न था। श्री गांधीने कहा कि मैं शिमलासे लौटते ही उनसे मिलूँगा और उन्हें सलाह दूँगा कि वे अपने भाषणोंमें कहे गये हिंसाको प्रोत्साहन देनेवाले शब्दोंके लिए —— यद्यपि उनका इरादा ऐसा न था —— सार्वजनिक रूपसे खेद प्रकट करें। वाइसरायने इसपर श्री गांधीसे पूछा कि आप श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अलीको जैसा वक्तव्य प्रकाशित करनेकी सलाह देनेका विचार कर रहे हैं, उसके महत्त्वको देखते हुए क्या आप मुझे उसका मसविदा दिखायेंगे ?

इस जगह वाइसराय महोदयने श्री गांधीसे कहा कि उन वाक्योंके कारण सरकार श्री शौकत अली तथा श्री मुहम्मद अलीपर मुकदमा चलानेका विचार कर रही है। उन्होंने श्री गांधीसे कहा कि अगर आप मुझे उस वक्तव्यको दिखा देंगे और अगर अपनी सरकारके दृष्टिकोणसे मैं उसे सन्तोषजनक पाऊँगा तो मैं अली भाइयों-पर मुकदमा न चलानेके लिए अपना जोर लगाऊँगा क्योंकि अगर भविष्यमें हिंसात्मक कृत्योंको प्रोत्साहन देनेवाले भाषण देना बन्द कर दिया जायेगा तो सरकारका मतलब हल हो जायेगा। श्री गांधीने वक्तव्यको दिखाना खुशीसे स्वीकार कर लिया। वादेके अनुसार वक्तव्यका मसविदा वाइसरायके सामने प्रस्तुत किया गया। परमश्रेष्ठने [उसे पढ़कर] उनसे कहा कि इस वक्तव्यमें कुछ अनुच्छेद ऐसे डाल दिये गये हैं जिनसे यह वक्तव्य विज्ञप्तिका रूप ले लेता है, जिसमें श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अलीके धार्मिक सिद्धान्तोंका समावेश भी है। वाइसराय महोदयने कहा कि यह वक्तव्य इस हदतक अपूर्ण है कि इसमें भविष्यके लिए हिंसाको प्रोत्साहन देनेवाले भाषण न देनेका आश्वासन नहीं है। वाइसराय महोदयने यह भी कहा कि वक्तव्यके प्रकाशित हो जानेके पश्चात् श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अली इस बातका ध्यान रखते हुए कि वे कानूनका उल्लंघन न करें, अपने भाषणों द्वारा जैसी चाहें वैसी सफाई पेश कर सकते हैं। जिन वाक्योंके सम्बन्धमें आपत्ति उठाई गई थी श्री गांधी उनको हटा देनेको तथा भविष्यमें ऐसे भाषण न देनेके आश्वासनका अनुच्छेद जोड़ देनेको राजी हो गये। तदनन्तर वाइसरायने श्री गांधीको सूचित किया कि यदि श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अली श्री गांधी द्वारा संशोधित वक्तव्यपर हस्ताक्षर कर देंगे और भविष्यमें इस प्रकारके भाषण न देनेका वचन भी दे देंगे, तो उनपर मुकदमा न चलानेके लिए जरूरी कदम उठाया जायेगा, और जबतक उस वक्तव्यमें दिये गये वचनोंका पालन होता रहेगा तबतक उनपर मुकदमा न चलाया जायेगा। परन्तु पिछले भाषणोंके सम्बन्धमें उनपर मुकदमा चलानेके बारेमें सरकार मुक्त होगी। वाइसरायने यह भी लिखा कि यदि श्री शौकत अली तथा श्री मुहम्मद अलीका वक्तव्य प्रकाशित हो गया और उसके परिणामस्वरूप सरकारने उनपर मुकदमा न चलाया तो इस आशय-

की एक विज्ञप्तिका प्रकाशित किया जाना आवश्यक हो जायेगा कि इस सम्बन्धमें सरकारने क्या रुख अख्तियार किया है। परन्तु इस सब कार्यमें सौदेबाजीकी भावना नहीं है। श्री गांधीने यहाँतक कहा कि मुकदमा चलाया जाये चाहे न चलाया जाये, मेरा यह कर्त्तव्य हो जायेगा कि मैं [इस वक्तव्य] के कुछ अंश उन्हें दिखाऊँ और उसके उपरान्त उन्हींकी आबरू तथा उद्देश्यकी खातिर उन दोनोंसे यह कहूँ कि आप लोग सार्वजनिक रूपसे खेद प्रकट कीजिए।

वार्तालापके पूरे दौरमें वाइसराय महोदय तथा श्री गांधी, दोनों ही के दिलोंमें यह इच्छा काम कर रही थी कि मुकदमा चलाये जानेपर गड़बड़ न मच पाये और उनकी यह भी ख्वाहिश थी कि भविष्यमें हिंसाको प्रोत्साहन देनेवाले भाषण न दिये जायें। वाइसरायने श्री गांधीको सूचित किया कि अगर वह वक्तव्य यथाशीघ्र प्रकाशित नहीं कर दिया जायेगा तो मैं मुकदमा चलाया जाना रुकवा न सकूँगा। इन भाषणोंकी बहुत चर्चा भारतमें ही नहीं बल्कि इंग्लैंडमें भी हुई थी। श्री गांधीने वक्तव्यको अविलम्ब प्रकाशित करना स्वीकार कर लिया।

इसके बाद श्री गांधी शिमलासे रवाना हो गये, और उन्होंने कुछ दिनोंके अन्दर वाइसरायको इस आशयका तार भेजा कि श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अलीने वक्तव्यपर हस्ताक्षर कर दिये हैं, और उसमें बहुत मामूलीसा रद्दोबदल किया गया है। वह समाचारपत्रोंको प्रकाशनार्थ भेज दिया गया है। परिवर्तन निम्नलिखित था:

श्री गांधी द्वारा तैयार किये गये मसविदेमें जहाँ ये शब्द लिखे हैं "हम कहना चाहते हैं कि हमारा मंशा हिंसाको प्रोत्साहित करना कदापि न था, परन्तु हम मानते हैं कि हमारे भाषणोंमें कुछ वाक्य ऐसे जरूर हैं जिनका वही अर्थ निकल सकता है जो लगाया गया है", श्री शौकत अली तथा श्री मुहम्मद अलीने ये शब्द लिख दिये: "हम कहना चाहते हैं कि हमारा मंशा हिंसाको उकसानेका कदापि न था, और हमने कभी यह सोचा भी न था कि हमारे भाषणोंमें कोई वाक्य ऐसा भी हो सकता है जिनसे वह अर्थ निकलता हो जो किया गया है परन्तु हम अपने मित्रकी दलीलके जोरको और उनके द्वारा लगाये गये अर्थको तसलीम करते हैं।"

वक्तव्यके प्रकाशित हो जानेके पश्चात् सरकारी विज्ञप्ति प्रकाशित की गई। उस विज्ञप्तिमें क्या-क्या शर्तें होंगी इसका निर्णय ठीक-ठीक तबतक न हो पाया जबतक वह प्रकाशनकी तिथिके समीप न पहुँच गई। श्री गांधी उसे नहीं देख पाये; हाँ, यह जरूर था कि उसका सार जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है श्री गांधीको बतला दिया गया था। वाइसराय और श्री गांधीके बीच हुई मुलाकातोंका मुख्य भाग उस वार्तालापमें बीता जो भारतमें फैले असन्तोषसे सम्बन्धित था और जिसमें पंजाबके उपद्रव, खिलाफत आन्दोलन, सेवरकी सन्धि तथा जनताकी आम हालत — ये चीजें शामिल थीं। श्री गांधीने वाइसरायके सम्मुख स्वराज्यकी कोई योजना पेश नहीं की थी और न उक्त मुलाकातोंमें ऐसी किसी योजनापर बातचीत ही हुई थी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-८-१९२१

परिशिष्ट ४

रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा असहयोगकी आलोचना

२ मार्च, १९२१

(१)

दुबले-पतले शरीरवाले तथा भौतिक साधनोंसे विहीन महात्मा गांधीने दीन-दुर्बल लोगोंकी महाशक्तिका —— जो भारतके अपमानित तथा पद-दलित और निर्धन व्यक्तियोंके हृदयोंमें बैठी इन्तजार कर रही थी —— आह्वान किया है। यह इस देशके लिए उपयुक्त ही है। भारतने अपने भाग्यके साथीके रूपमें नारायणी सेनाको नहीं बल्कि नारायणको . . .शरीर-बलको नहीं, आत्म-बलको चुना है। भारत मानव-समाजके इतिहासको शरीर-बलके युद्धरूपी दलदलसे ऊँचा उठाकर नैतिक स्तरपर लानेको कटिबद्ध हुआ है। स्वराज्य क्या है? वह माया है। वह उस कोहरेके समान है जो शाश्वत या अविनाशीके प्रखर तेजपर किसी प्रकारका धब्बा डाले बिना विलीन हो जायेगा। हम लोग पश्चिमसे सीखे हुए कुछ वाक्योंकी दुहाई देकर अपनेको कितना ही धोखा दे लें, लेकिन सचाई यह है कि स्वराज्य हमारा ध्येय नहीं है। हमारा संघर्ष आध्यात्मिक संघर्ष है। यह मानवताके लिए होनेवाला संघर्ष है। हमें मानवको राष्ट्र, देश, स्वतन्त्रता आदिके उस जटिल जालसे, जिसे उसके राष्ट्रीय अहम्ने अपने चारों ओर बुन लिया है, मुक्त करना है। तितलीको यह समझाना है कि रेशमके कोयेमें दबे पड़े रहनेकी अपेक्षा आकाशमें विचरनेकी स्वतन्त्रता अधिक मूल्यवान है। यदि हम, शक्तिशाली व्यक्ति या संस्थाको, शस्त्रसज्जित संगठन या धनाढ्य-वर्गको ललकार सकते हैं या उसके आदेशोंका तिरस्कार करनेका साहस रखते हैं और इस प्रकार संसारके सामने अनश्वर आत्माकी शक्तिका परिचय प्रस्तुत कर सकते हैं तो पशुबलका दिवाला ही निकल जायेगा। ऐसी स्थिति उत्पन्न होनेपर मानव स्वराज्य पा जायेगा। पूर्वके रहनेवाले हम नंगे-भूखे और दरिद्र लोगोंको समस्त मानव-समाजके लिए स्वतन्त्रता प्राप्त करनी है। 'राष्ट्र' जैसा शब्द हमारी भाषामें है ही नहीं। जब हम इस शब्दको अन्य लोगोंसे उधार ले आते हैं तब हम देखते हैं कि वह हमारे लिए ठीक नहीं बैठता। इसका कारण यह है कि हमें नारायणका पल्ला पकड़ना है। हमारी विजय हमें विजयके अतिरिक्त —— ईश्वरीय जगत्की विजय —— कुछ नहीं दे सकती। मैंने पश्चिमका अवलोकन किया है; मुझे अपावन भोजोंकी, जिनमें वह प्रतिक्षण मस्त रहता है, लालसा नहीं है। पश्चिम तो अपनी इस प्रवृत्तिके कारण दिनपर-दिन मोटा-ताजा, सुर्ख और भयावह रूपसे मदमस्त और वासना-प्रिय होता जा रहा है। मशालोंकी रोशनीमें आधी राततक चालू रखी जानेवाली विलासितापूर्ण और विवेकहीन रंगरलियोंकी चहल-पहल हमें नहीं चाहिए। हमारे लिए तो उषाकालके मन्द और मनोहर प्रकाशकी सजगता ही ठीक है।

(२)

५ मार्च, १९२१

असहयोगकी कल्पना राजनैतिक कार्योंके लिए अपनाई हुई फकीरी है। हमारे विद्यार्थी अपने त्यागकी श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे हैं। उनका यह त्याग उन्हें कहाँ ले जा रहा है? पूर्णतर शिक्षाकी ओर नहीं, बल्कि अशिक्षाकी ओर। उस कल्पनाके पीछे विनाशका उत्कट सुख है और यह भावना अपने सबसे सुन्दर रूपमें फकीरी या संन्यास, तथा खराबसे-खराब रूपमें भयंकरताका वह ताण्डव है जिसके चलते मानव-प्रकृति सामान्य जीवनकी मौलिक वास्तविकतामें विश्वास खो बैठती है और निरर्थक विनाशमें उदासीनतापूर्ण आनन्दका अनुभव करती है — जैसा कि गत महायुद्धके अवसर-पर तथा हमारे ही जीवनमें घटित होनेवाले ऐसे ही अन्य अवसरोंपर प्रकट हो चुका है। यह भावना अपने अनाक्रामक नैतिक रूपमें संन्यास है, और सक्रिय नैतिक रूपमें हिंसा। मरुस्थल (उपेक्षा) भी उसी प्रकार हिंसाका रूप है जैसा कि तूफानके समय विक्षुब्ध सागर। ये दोनों ही जीवनके शत्रु हैं।

बंगालमें स्वदेशी आन्दोलनके जमानेका वह दिन मुझे याद है जब तरुण विद्यार्थियों-का एक समूह मुझसे मिलने आया। मैं उस समय अपने 'विचित्रा' निवासकी पहली मंजिलके बड़े कमरेमें था। उन्होंने मुझसे कहा कि यदि आप हमें अपने स्कूल और कालेज छोड़ देनेका आदेश देंगे तो हम लोग तुरन्त ही उसका पालन करेंगे। मैंने ऐसा करनेसे दृढ़तापूर्वक इनकार कर दिया। वे क्रोधित हुए और इस भावके साथ लौट गये कि कदाचित् मुझमें देश-प्रेम है ही नहीं। परन्तु जनताके इस अदम्य उत्साह-के प्रदर्शनसे बहुत पहले मैंने, उस समय जब मेरे पास अपना कहनेको ५ रुपये तक न थे, एक स्वदेशी स्टोर खोलनेके निमित्त एक हजार रुपये दिये थे और इस प्रकार मैं पैसे-पैसेको मुहताज हो गया था। उन विद्यार्थियोंको पढ़ाई छोड़नेकी सलाह देनेसे इनकार करनेका कारण यह था कि स्कूल छोड़ना एक नकारात्मक कदम है जिससे अराजकता फैलती है; और यह कदम अस्थायी रूपसे ही क्यों न उठाया गया हो, मुझे कभी पसन्द नहीं है। मुझे एक ऐसे काल्पनिक सिद्धान्तसे भय लगता है जो वास्तविकताकी ओरसे आँखें मूँदनेको तैयार है। . . . आप जानते हैं कि मैं पाश्चात्य देशोंकी अर्थ-प्रधान सभ्यतामें उसी प्रकार विश्वास नहीं करता जिस प्रकार मैं मानवमें उसके शरीरको ही सबसे बड़ा सत्य माननेसे इनकार करता हूँ। शरीरको नष्ट करने तथा जीवनकी भौतिक आवश्यकताओंकी उपेक्षा करनेमें तो मेरा और भी कम विश्वास है। जरूरत इस बातकी है कि मनुष्यकी शारीरिक और आध्यात्मिक प्रकृतिके बीच सामंजस्य स्थापित किया जाये, बुनियाद और उसपर खड़े भवनके बीच सन्तुलन बनाये रखा जाये। मैं पूर्व और पश्चिमके वास्तविक मिलनमें विश्वास करता हूँ। प्रेम आत्मा-का अन्तिम सत्य है। हमें उस सत्यपर आघात करनेका नहीं, वरन् सब प्रकारके विरोधोंके बीच भी उस सत्यकी ध्वजाको ऊँचा रखनेका भरसक प्रयत्न करना चाहिए। असहयोगका विचार उस सत्यको अनावश्यक रूपसे चोट पहुँचाता है। वह हमारे चूल्होंमें जलनेवाली अग्नि नहीं है बल्कि वह आग है जो हमारे घरोंको भस्मीभूत कर देती है।

(३)

१३ मार्च, १९२१

आज विश्व-इतिहासके इस नाजुक मौकेपर क्या भारत अपनी सीमाओंसे ऊपर उठकर संसारके सामने वह महान् आदर्श नहीं रखेगा जो पृथ्वीके भिन्न-भिन्न लोगोंके सहयोगसे सब देशोंमें समन्वय और प्रेम स्थापित करनेका प्रयास करे। विश्वासवादी लोग तो यही कहेंगे कि समस्त संसारकी खातिर अपनी आवाज बुलन्द कर सके, इससे पहले भारतको शक्तिशाली और समृद्ध बननेकी आवश्यकता है। परन्तु मैं इस बातमें विश्वास नहीं करता। यह धारणा कि मनुष्यके बड़प्पनका मापदण्ड उसके आर्थिक साधन हैं, एक बहुत बड़ी भ्रान्ति है जो आजके संसारपर अपनी काली छाया डाल रही है — यह मानवका अपमान है। आर्थिक दृष्टिसे जो लोग निर्बल हैं उनका फर्ज है कि वे संसारको इस भ्रान्तिसे बचायें। और भारत अपनी निर्धनता और गिरी हुई हालतके बावजूद मानव-समाजके त्राणके लिए आगे बढ़नेकी क्षमता रखता है। . . .

. . . भारतका आदर्श इसके पक्षमें नहीं है कि एक देशके लोग दूसरे देशके लोगोंसे अपनेको अलग मानें। यह भावना अन्ततः अनवरत संघर्षोंको जन्म देती है। इसलिए मेरा निवेदन यह है कि भारतको संसार-भरके राष्ट्रोंके बीच सहयोगका पक्ष लेना उचित है। इसकी अस्वीकृतिकी भावनाको पार्थक्यकी अनुभूति द्वारा समर्थन प्राप्त होता है, एकताकी अनुभूतिसे स्वीकृतिकी भावनाको बल मिलता है। भारतने सदा यही कहा है कि ऐक्य ही सत्य है और पार्थक्य माया है। यह ऐक्य शून्य नहीं है। यह वह शक्ति है जिसमें सबका समावेश हो जाता है; और इसीलिए अस्वीकृतिके मार्गसे उसतक पहुँचना कदापि सम्भव नहीं है। अपने हृदय और मस्तिष्कको पश्चिमके हृदय और मस्तिष्कसे पृथक करनेका हमारा वर्तमान संघर्ष आध्यात्मिक आत्मघातका एक प्रयत्न कहा जा सकता है। अगर हम मिथ्या राष्ट्रीय दर्पकी भावनासे प्रेरित होकर जोर-जोरसे यह कहते फिरें कि पश्चिमने मानवके असीम लाभकी कोई चीज उत्पन्न नहीं की है, तो पूर्वीय मस्तिष्कने कुछ महत्त्वपूर्ण चीज दी है, इसके बारेमें हम गहरी शंकाको ही जन्म देते हैं। क्योंकि पूर्व और पश्चिम दोनोंके ही मानव-मस्तिष्क सत्यतक पहुँचनेके लिए उसके विभिन्न पहलुओंको ध्यानमें रखते हुए अपने जुदा-जुदा दृष्टिकोणोंसे सतत प्रयत्न कर रहे हैं। और यदि यह सच हो सकता है कि पश्चिमकी शक्तिने उसे बिलकुल गलत रास्तेपर ला छोड़ा है तब हम पूर्वके दृष्टिकोणके बारेमें निश्चयात्मक रूपसे कुछ भी नहीं कह सकते। हमें चाहिए कि हम मिथ्याभिमानको त्यागें और संसारके किसी भी भागमें यदि कोई दीपक जलाया जा रहा हो तो इस भावनाके साथ खुशियाँ मनायें कि यह आलोक हमारे सभी घरोंके सामान्य प्रकाशका ही एक अंग है। . . .

पश्चिमने पूर्वको गलत समझा है और उन दोनोंके बीच फैले हुए अनैक्यका कारण यही है। परन्तु यदि पूर्व भी अपनी तरफसे पश्चिमको गलत समझनेकी कोशिश करे तो क्या इससे बात सुधर जायेगी? वर्तमान युगमें पश्चिमका व्यापक और प्रबल

प्रभाव रहा है। यह इसीलिए सम्भव हो पाया है क्योंकि नियतिने पश्चिमको मानवके लिए बहुत बड़ा काम सौंपा है। हम पूर्वके निवासियोंको पाश्चात्य देशोंमें उसके निकट वह सीखनेके लिए जाना होगा जो उसके पास हमें सिखानेके लिए है। ऐसा करके हम इस युगको शीघ्र सफल बनानेमें सहायक होंगे। हम जानते हैं कि पूर्वके पास भी सिखानेके लिए कुछ जरूर है और उसका अपना भी यह उत्तरदायित्व है कि वह प्रकाशको बुझने न दे। वह समय आनेवाला है जब पश्चिमको यह समझनेका अवकाश मिलेगा कि पूर्वमें उसके निवासके लिए स्थान है, भोजन है और अन्य आवश्यक वस्तुएँ भी प्रस्तुत हैं।

[अंग्रेजीसे]

लैटर्स टु ए फ्रैंड

परिशिष्ट ५

संयुक्त-प्रान्तमें दमनपर नेहरूकी टिप्पणी

संयुक्त-प्रान्तमें सरकारी दमन — प्रमुख नेताओंकी गिरफ्तारी इत्यादि — कुल मिलाकर दिखावटी ढंगका नहीं रहा है प्रत्युत वह दमन बहुत ही सुव्यवस्थित और जमकर किया गया है और थोड़े ही लोग होंगे जो उसकी चपेटमें न आये हों। इसपर तीन भिन्न शीर्षकोंके अन्तर्गत विचार किया जा सकता है:

१. किसान आन्दोलनसे सम्बन्धित दमन-कार्य।
२. नौजवान कार्यकर्त्ताओंपर अभियोग और दण्ड।
३. सुरक्षात्मक धाराओं तथा धारा १४४का प्रयोग।

१. किसान आन्दोलन

सरकारने इस आन्दोलनको कुचल देनेका अत्यन्त दृढ़ और अविरत प्रयत्न किया है। फरवरीके प्रारम्भमें रामचन्द्र, केदारनाथ और देवनारायण गिरफ्तार किये गये। कहीं किसी प्रकारका उपद्रव नहीं हुआ जिससे सरकारका हौसला बढ़ गया और उसने किसानोंको कुचलनेके लिए बहुत जोरदार कदम उठाये। घुड़सवारोंके दस्ते, तोपें और पैदल सेनाके दस्ते मुख्य-मुख्य जिलोंमें घुमाये गये और सैनिकोंके लिए रसद इत्यादि मुहय्या करनेको लोग मजबूर किये गये। एक स्थानपर स्कूली छात्रोंसे गोरे सनिकोंको जबरदस्ती सलाम करवाया गया।

रायबरेली और फैजाबादमें बहुत बड़ी संख्यामें किसान गिरफ्तार किये गये। उनकी गिरफ्तारीका कारण यही बताया गया कि उन्होंने गत जनवरीमें की गई लूट-पाटमें भाग लिया था। इन गिरफ्तार किये गये किसानोंमें से अधिकांश निर्दोष थे; उनका अपराध केवल इतना ही था कि वे [गाँवोंके] पंच थे। सैकड़ोंको जेलमें डाल दिया गया और बादमें बिना मुकदमा चलाये उन्हें छोड़ दिया गया। सैकड़ों व्यक्ति

अब भी जेलोंमें हैं और मुकदमेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। कुछ सप्ताह पहले फैजाबाद जेलमें लगभग ७०० किसान थे। वे बिना किसी मुकदमेके पिछले तीन माहसे जेलमें थे। रिहा किये गये कैदियोंका कथन है कि जो लोग जेलोंमें हैं उनको इतने खराब किस्मका भोजन दिया जा रहा है कि उन जेलोंमें हैजा फैल गया है और इस प्रकार पीड़ित कैदी बड़ी संख्यामें मौतके शिकार बन रहे हैं।

सुलतानपुर और प्रतापगढ़ जिलोंमें किसी किस्मका उपद्रव नहीं हुआ था; परन्तु इन जिलोंमें भी पंचों और सरपंचोंको या तो जेल भेज दिया गया है या मुचलका देनेको विवश किया गया है। इन लोगोंके खिलाफ सामान्यतः यह आरोप लगाया जाता है कि "तुम सभाके सरगना हो और लोगोंको सभामें शरीक होनेपर मजबूर करते हो।" कभी-कभी यह भी कह दिया जाता है कि [तुम्हारे कहनेसे] "नाई, धोबी बन्द कर दिये गये हैं।" इन आरोपोंमें, जहाँतक गत दिसम्बर और जनवरीका सम्बन्ध है, बहुत-कुछ सचाई है परन्तु उसके बाद इन जिलोंमें सामाजिक बहिष्कारका एक भी वाकया नहीं हुआ है। इन आरोपोंकी आड़में झूठे मुकदमे चलाये जाते हैं और सजा हुए बिना नहीं रहती। इस तरहके मामलोंमें से अधिकांश मामले स्थानीय पुलिस या जमींदारके उकसानेपर चलाये जाते हैं और इन मुकदमोंको दायर करनेवाले उसी हलकेके कुछ लोग हुआ करते हैं।

राजद्रोहात्मक सभा अधिनियम फैजाबाद, प्रतापगढ़, सुलतानपुर और रायबरेलीमें लागू किया गया है। इस अधिनियमको लागू करनेके पहले कुछ जिलोंमें १४४ धाराके अन्तर्गत सभी प्रकारकी सभाओंका बुलाया जाना निषिद्ध ठहरा दिया गया था। इस हुक्मकी बाकायदा तामील की गई और कोई सभा नहीं की गई। तिसपर भी राजद्रोहात्मक सभा अधिनियम लागू कर दिया गया।

इन जिलोंमें काम करनेवाले हमारे कार्यकर्त्ताओंको तरह-तरहसे परेशान किया जाता है। उनके पीछे खुफिया पुलिसके बहुतसे आदमी तथा वर्दीधारी पुलिसमैनोंका एक गिरोह चला करता है और जहाँ वे कार्यकर्त्ता जानेवाले होते हैं वहाँ वे पहलेसे ही जा डटते हैं। गाँववालोंको धमकाया जाता है ताकि वे कांग्रेसमें शरीक न हों और हमारी कोई सहायता न करें। उनसे जबानी तौरपर यह भी कहा गया है कि चरखा चलाना गैर-कानूनी है और "महात्मा गांधीकी जय"का नारा लगाना बहुत बड़ा अपराध है, कांग्रेसकी मेम्बरीके कागजपर दस्तखत करना अवैध है इत्यादि, इत्यादि। जिन लोगोंने [कांग्रेसके सदस्यता-पत्रपर] हस्ताक्षर कर दिये हैं उनको यह कहकर धमकाया जाता है कि तुमपर मुकदमा चलाया जायेगा, और मामलेको दबा देनेकी गरजसे रिश्वतें माँगी जाती हैं।

पर्चे बाँटनेके अपराधमें प्रतापगढ़ जिलेके छः नवयुवक विद्यार्थी-कार्यकर्त्ता जेल भेज दिये गये। उनसे जमानत जमा करनेको कहा गया, परन्तु उन्होंने ऐसा करनेसे इनकार कर दिया। सुलतानपुर जिलेमें एक ऐसा ही मामला छः व्यक्तियोंके विरुद्ध चलाया गया था, परन्तु अब वह वापस ले लिया गया है। राजद्रोहात्मक सभा अधिनियमको भंग करनेके झूठे अपराधमें दो कार्यकर्त्ताओंको छः महीनेकी सख्त कैदकी

सजा दी गई। इन दो कार्यकर्त्ताओंमें से एकको पुलिसके एक सिपाही द्वारा ठोकरें लगाई गईं और पीटा गया।

किसानोंको कुचल देनेके लिये सरकारने जो सैकड़ों तरीके अपनाये हैं उसका अन्दाज लगाना कठिन है। जमींदार और कुछ स्थानीय लोग जो अपनेको 'माडरेट' कहते हैं, सरकारसे मिल गये हैं और उन लोगोंने सामान्य किसानकी जिन्दगी भारी कर रखी है—इतनी भारी कि वह बेचारा पिसा जा रहा है।

संयुक्त-प्रान्तके अन्य जिलोंमें भी किसान आन्दोलनको कुचलनेका ठीक ऐसा ही, यद्यपि छोटे पैमानेपर, ढंग अख्तियार किया गया है।

२. कार्यकर्त्ताओंको सजा

बहुतसे कांग्रेस व खिलाफत कार्यकर्त्ताओंपर मुकदमे चलाये गये हैं और उन्हें सजा दे दी गई है। आन्दोलनके किसी नेताको अभीतक नहीं पकड़ा गया है, परन्तु इन नेताओंके अनेक योग्य और कुशल सहायकोंको जेल भेज दिया गया है। अपेक्षाकृत प्रख्यात व्यक्तियोंमें, जिनके खिलाफ राजद्रोहका मुकदमा चलाया गया है, देहरादूनके पण्डित देवरत्न शर्माका नाम उल्लेखनीय है।

इलाहाबादके एक खिलाफत कार्यकर्त्ताको जिनका नाम हमीद अहमद है अभी-अभी धारा १२१ क के अन्तर्गत आजीवन काले पानीकी सजा मिली है और उनकी सब जायदाद जब्त कर ली गई है। उनपर यह अभियोग लगाया गया था कि उन्होंने अपने एक भाषणमें फिलहाल अहिंसाके पालनकी सलाह देते हुए कहा था कि यदि असहयोग आन्दोलन विफल हुआ तो मुसलमान लोग तलवार उठायेंगे।

जिलोंके अनेक कांग्रेस अधिकारियोंको धारा १०८ या १२४ क के अन्तर्गत सजा दी जा चुकी है।

कुछ स्वयंसेवकोंको नशाबन्दी आन्दोलनके सिलसिलेमें जेल भेज दिया गया।

३. सुरक्षा धाराएँ तथा धारा १४४

धाराओंका असाधारण रूपसे बड़े पैमानेपर प्रयोग किया गया है। ऐसा शायद ही कोई प्रख्यात कार्यकर्त्ता होगा जिसके नाम धारा १४४ का नोटिस न भेजा गया हो। मौलाना मुहम्मद अलीतक को ऐसा नोटिस भेजा गया है। जिन-जिनके नाम यह नोटिस भेजा गया है उनमें से सौसे ऊपरकी नामावली मेरे पास है, परन्तु यह सूची बहुत अधूरी है।

धारा १४४ को पूरे-पूरे जिलोंपर लागू करके उन जिलोंमें सभाएँ करना निषिद्ध कर दिया गया है। इस धारा १४४ से राजद्रोहात्मक सभा अधिनियमका काम निकाला गया है।

एक मामला ऐसा भी है जिसमें धारा १४४के अन्तर्गत जारी किये गये नोटिसका लिखित आदेश यह था कि खिलाफतकी रसीदें न बेची जायें और सम्बन्धित व्यक्तिको इस प्रकारके किसी भी संगठनका सदस्य नहीं होना चाहिए।

सुरक्षा कानूनके खण्ड प्रेस ऐक्टका काम दे रहे हैं। 'प्रताप' नामक समाचार-पत्रमें छापे गये कुछ लेखोंके कारण उस पत्रके सम्पादक और मुद्रकसे ३० हजार रुपये-की जमानत तलब की गई है। जमानतें जमा कर दी गई हैं।

४. विविध

बन्दूकके अनेक लाइसेंस जब्त कर लिये गये हैं। सरकारी नौकरोंको बर्खास्तगीकी धमकी दी गई है क्योंकि उनके रिश्तेदार असहयोग आन्दोलनमें शरीक थे। गांधी टोपियाँ पहनना निषिद्ध करार दिया गया है। स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा माँगनेवालों तथा चन्दा देनेवालोंके लिए धमकी-भरा नोटिस जारी किया गया है।

कांग्रेस और किसान सभाके दफ्तरोंपर पुलिसने छापे मारे हैं।

बनारसमें कुछ विद्यार्थी तथा अन्य लोगोंको भी भिन्न-भिन्न अवधिके कारावासकी सजा सुनाई गई है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-८-१९२१

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली: गांधी साहित्य और सम्बन्धित कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

साबरमती संग्रहालय: पुस्तकालय तथा आलेख संग्रह: जिसमें गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी कालके और १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात सुरक्षित हैं, देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३६०।

'अमृतबाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'आज': बनारससे प्रकाशित दैनिक।

'गुजराती': बम्बईसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'नवजीवन' (१९१९–१९३२): गांधीजी द्वारा सम्पादित अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक जो कभी-कभी सप्ताहमें दो बार भी निकलता था; यह 'नवजीवन अने सत्य' (१९१५–१९१९) नामक गुजराती मासिकके रूपको बदलकर निकाला गया था, जिसका पहला अंक ७ सितम्बर, १९१९ को निकला था। १९ अगस्त, १९२१ से उसका हिन्दी संस्करण भी प्रारम्भ हो गया था।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'यंग इंडिया' (१९१८–३२): अहमदाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक। सम्पादक: मो० क० गांधी; प्रकाशक: मोहनलाल मगनलाल भट्ट।

'लीडर': इलाहाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'सर्चलाइट': पटनासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, स्वराज्य आश्रम, बारडोली।

'नरसिंहरावनी रोजनिशी' (गुजराती): नरसिंहराव भोलानाथ दिवेटिया; गुजरात विद्यासभा, अहमदाबाद।

'बापुना पत्रो: मणिबहेन पटेलने' (गुजराती): सम्पादक–मणिबहेन पटेल; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो: सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती): सम्पादक–मणिबहेन पटेल; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती): मथुरादास त्रिकमजी; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१५ अप्रैलसे १९ अगस्त, १९२१ तक)

अप्रैल १५ : गांधीजीने रास और बोरसदकी सार्वजनिक सभाओंमें भाषण दिये। दोपहरको गोधरा पहुँचे।

अप्रैल १६ : हालोलकी ताल्लुका परिषद्‌की अध्यक्षता की, गांधीजीको थैली भेंट की गई। सन्ध्याके समय किसानोंकी सभामें भाषण।

अप्रैल १७ : कालोलके हरिजनोंकी सभामें भाषण। गोधराके लिए रवाना हुए।

अप्रैल १९ : सुबह सूरत पहुँचे।

सूरत नगरपालिका द्वारा भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर देते हुए अधिक चरखे चालू करवाने और अस्पृश्यता दूर करनेकी आवश्यकतापर जोर दिया। पाटीदार विद्यार्थी आश्रममें भाषण दिया। दोपहरको महिलाओंकी एक सभामें भाषण दिया, जिसमें तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा प्राप्त हुआ।

ओरपाडके लिए रवाना हुए।

अप्रैल २० : सन्ध्याके समय सूरतकी सार्वजनिक सभामें भाषण। बलसाड़की सभामें भाषण।

अप्रैल २१ : वल्लभभाई पटेल और अन्य साथियोंके साथ सुबहके समय चिखली पहुँचे।

सीसोदराकी सभामें भाषण।

अप्रैल २२ : सिन्धके दौरेके लिए रवाना हुए।

अप्रैल २४ : हैदराबाद (सिन्ध) पहुँचे।

अप्रैल २६ : सुबह कराची पहुँचे। सार्वजनिक सभामें भाषण दिया। २५,००० रुपयेकी थैली भेंट की गई। कराची नगरपालिकाके सदस्योंसे अनुरोध किया कि शिक्षाका राष्ट्रीयकरण करें। यदि सरकारकी आर्थिक सहायताके बिना काम न चला सकें तो त्यागपत्र दे दें। कराचीके वकीलोंसे की गई एक भेंटके दौरान उन्हें सलाह दी कि वे पर्ची डालकर इस बातका निर्णय कर लें कि किन लोगोंको असहयोग आन्दोलनमें भाग लेना है और किन लोगोंको वकालत जारी रखनी है। वकालत करनेवाले वकील असहयोगी वकीलों और उनके परिवारोंकी धन आदिसे सहायता करते रहें।

मालेगाँव, नासिक जिलेमें दंगे।

मई १ : रातके समय अहमदाबाद पहुँचे।

मई ४ : सुबह कपड़वंज पहुँचे और वहाँ आयोजित एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया। कठलालमें महिलाओंकी सभामें भाषण दिया। रातको नडियादके लिए रवाना हुए।

मई ७: सुबह बम्बई पहुँचे और महाराष्ट्र प्रान्तीय सम्मेलनमें भाषण दिया।

मई ८: इलाहाबादमें सरूपकुमारी नेहरू (श्रीमती विजयलक्ष्मी)के विवाहोत्सवमें शामिल हुए।

मई १०: इलाहाबाद जिला सम्मेलनमें भाषण दिया। सभामें पण्डित मोतीलाल नेहरूने नागरिकोंकी ओरसे एक मानपत्र भेंट किया।

मई ११: इलाहाबादसे रवाना हुए।

मई १२: शिमला पहुँचे।

मई १३: दोपहरके समय वाइसरायसे भेंट की।

मई १४: प्रातःकाल वाइसरायसे पुनः भेंट। गांधीजीके सम्मानमें जुलूस निकाला गया और स्वागत-समारोहका आयोजन किया गया।
सार्वजनिक सभामें भाषण।
महिलाओंकी सभामें स्वदेशी अपनाने और तिलक स्वराज्य-कोषके लिए खुले दिलसे चन्दा देनेका अनुरोध किया। सभामें उन्हें धन और आभूषण भेंट किये गये।

मई १५: ईदगाह मैदान, शिमलाकी सभामें भाषण।

मई २१: भुसावल जाते समय रास्तेमें रेलवे स्टेशनपर भाषण।
भुसावलकी सार्वजनिक सभामें भाषण।

मई २२: संगमनेरकी सभामें भाषण।

मई २३: रात्रिके समय येवला पहुँचे।

मई २४: बरसीकी सभामें जनतासे तिलक स्वराज्य-कोषके लिए खुले दिलसे चन्दा देने और स्वदेशी अपनानेका अनुरोध किया।

मई २६: सुबह शोलापुर पहुँचे और रिपन हॉलमें नगरपालिका द्वारा भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर दिया।

मई २७: शामके समय बागलकोटसे बीजापुर पहुँचे। महिलाओंकी सभामें भाषण दिया। नगरपालिका तथा स्थानीय व्यापारी संघ द्वारा आयोजित सभाओंमें दिये गये अभिनन्दनपत्रोंके उत्तरमें भाषण दिये।

मई २८: बीजापुरसे रवाना हुए।

मई २९: बम्बईकी सार्वजनिक सभामें लोगोंसे तिलक स्वराज्य-कोषके लिए खुले दिलसे चन्दा देनेका अनुरोध किया।

मई ३०: बम्बईसे भड़ौंचके लिए रवाना हुए।

जून १: भड़ौंचमें गुजरात राजनीतिक परिषद्में भाषण।
वेजलपुरकी अन्त्यज परिषद् द्वारा भेंट किये गये मानपत्रके उत्तरमें भाषण।

जून २: भड़ौंचकी खिलाफत सभामें भाषण।

जून ५: गुजरात राजनीतिक परिषद्में भाषण।

जून ८: सरखेज और सामोदकी सभाओंमें भाषण। तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा किया। अहमदाबादके वकीलोंके साथ बातचीत।

जून ९: अहमदाबादसे बढवान पहुँचे।
लिम्बड़ीके महाराजके निवास-स्थानपर आयोजित सार्वजनिक सभामें भाषण।
जून १३: अहमदाबादकी सार्वजनिक सभामें अध्यक्ष-पदसे भाषण।
जून १५: घाटकोपर, बम्बईमें नागरिकोंकी सभामें भाषण। व्यापारी समुदायकी ओरसे तिलक स्वराज्य-कोषके लिए ४०,००० रु० की थैली भेंट की गई।
जून १८: केन्द्रीय पारसी संघकी परिषद्में असहयोगपर भाषण।
मिलीटरी रिक्वायरमेंट कमेटीके सामने उपस्थित होनेसे इनकार किया।
जून १९: विले पार्ले बम्बईकी सार्वजनिक सभामें भाषण। तिलक स्वराज्य-कोषके लिए थैली भेंट की गई।
जून २२: बम्बईके प्रथम राष्ट्रीय कन्या विद्यालय — लोकमान्य राष्ट्रीय कन्या शालाका उद्घाटन। गांधीजीका सन्देश महिलाओंकी सभामें पढ़कर सुनाया गया।
जून २५: मांडवी, बम्बईकी प्राथमिक शालाओंके विद्यार्थियों व शिक्षकोंके समक्ष भाषण।
तिलक स्वराज्य-कोषके लिए थैली प्राप्त।
जून २६: सान्ता क्रूजकी सार्वजनिक सभामें भाषण।
तिलक स्वराज्य-कोषके लिए थैली प्राप्त हुई।
जून ३०: विभिन्न संघों द्वारा आयोजित सभाओंमें भाषण।
तिलक स्वराज्य-कोषके लिए चन्दा प्राप्त हुआ।
सूती कपड़ा व्यापारी संघ और पारसी संघ द्वारा थैलियाँ भेंट की गईं।
बेजवाड़ा कांग्रेसमें तिलक स्वराज्य-कोषके लिए १ करोड़ रुपये एकत्र करनेका लक्ष्य पूरा हुआ।
जुलाई १: बाँदरा, बम्बईकी सभामें स्वदेशीपर भाषण।
जुलाई २: बम्बई कमीशन एजेंट्स एसोसिएशन और लिंगायत कमीशन एजेंट्स एसोसिएशन द्वारा आयोजित सभाओंमें भाषण।
जुलाई ६: अलीगढ़में साम्प्रदायिक दंगे।
कपड़ेके व्यापारियोंसे व्यापारको शुद्ध स्वार्थके बजाय राष्ट्रीय आधारपर चलाने तथा कीमतें न बढ़ानेका अनुरोध किया।
जुलाई ७: कपड़ेके व्यापारियोंसे विदेशी कपड़ेका आयात बन्द करनेका अनुरोध किया।
जुलाई १०: बम्बईके दवा-विक्रेताओंकी सभामें स्वदेशीपर भाषण।
जुलाई १२: बम्बईमें पारसी राजकीय सभा द्वारा आयोजित सभामें शराबके विक्रेताओंके समक्ष शराबबन्दीपर भाषण।
जुलाई १६: परेल, बम्बईकी सभामें स्वदेशीपर भाषण।
जुलाई १७: केन्द्रीय खिलाफत समितिकी असहयोग सम्बन्धी रिपोर्ट प्रकाशित। बम्बईमें बुनकरोंकी सभामें भाषण।
जुलाई १९: दोपहरके समय बम्बईकी मुस्लिम महिलाओंकी सभामें भाषण।
पारसी राजकीय सभा द्वारा आयोजित शराबके ठेकेदारोंकी सभामें भाषण।
जुलाई २०: पूना नगरपालिका द्वारा मानपत्र भेंट। तिलक महाविद्यालयके उद्घाटन-समारोहमें भाषण। तिलककी प्रतिमाका अनावरण। बादमें सार्वजनिक सभामें

भाषण दिया जिसमें एकमतसे विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करने और स्वदेशी अपनानेका प्रस्ताव पास किया गया।

जुलाई २२ : बम्बईकी दो सार्वजनिक सभाओंमें स्वदेशीपर भाषण।

जुलाई २३ : बम्बईकी पारसी राजकीय सभाके तत्त्वावधानमें आयोजित सार्वजनिक सभामें भाषण।

जुलाई २४ : सान्ता क्रूजकी सभामें स्वदेशीपर भाषण।

जुलाई २६ : मारवाड़ी विद्यालय और भायखला, बम्बईकी सभाओंमें विदेशी कपड़ेके बहिष्कारपर भाषण।

जुलाई २८ : अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बम्बईमें बैठक।

जुलाई ३० : पारसी राजकीय सभा द्वारा आयोजित पारसियोंकी बृहत् सभामें स्वदेशीपर भाषण।

जुलाई ३१ : अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें चुनाव सम्बन्धी प्रस्ताव प्रस्तुत किया।

बम्बईमें एल्फिस्टन मिलके समीप परेलकी ऐतिहासिक सभामें भाषण, जिसका आयोजन विदेशी कपड़े जलाकर स्वदेशी आन्दोलनका श्रीगणेश करनेके उद्देश्यसे किया गया था।

बम्बईकी राष्ट्रीय स्त्री-सभा द्वारा आयोजित खादी-प्रदर्शनीके उद्घाटनके अवसरपर भाषण।

बम्बईकी अदालतमें बचाव पक्षकी ओरसे गवाही दी।

अगस्त १ : लोकमान्य तिलककी बरसीके उपलक्ष्यमें आयोजित चौपाटी, बम्बईकी सार्वजनिक सभामें भाषण।

अगस्त ३ : बम्बईमें खिलाफत भण्डारका उद्घाटन किया और यह आशा व्यक्त की कि बम्बईके धनी व्यापारी ऐसे भण्डारोंकी स्थापना कर स्वदेशी आन्दोलनको प्रोत्साहन देंगे।

अगस्त ५ : अलीगढ़ पहुँचे।

अगस्त ६ : मुरादाबाद पहुँचे। महिलाओंकी सभा तथा एक सार्वजनिक सभामें भाषण।

अगस्त ७ : अमीनुद्दौला पार्क, लखनऊकी बृहत् सार्वजनिक सभामें भाषण।

अगस्त ८ : गांधीजी और केन्द्रीय खिलाफत समितिने मुसलमानोंसे अपील की कि वे आगामी बकरीदपर गो-वध न करें।

अगस्त ९ : गांधीजी कानपुर पहुँचे। महिलाओं और व्यापारियोंकी सभाओंमें भाषण। सार्वजनिक सभामें मानपत्र भेंट किया गया।

'आज' के प्रतिनिधिसे भेंट।

अगस्त १० : सुबह इलाहाबाद पहुँचे। महिलाओंकी सभामें स्वदेशीपर भाषण। शामको मोतीलाल नेहरूकी अध्यक्षतामें आयोजित सार्वजनिक सभामें भाषण।

अगस्त ११ : सहसरामकी सभामें भाषण।

अगस्त १२ : गया पहुँचे। रातको सार्वजनिक सभामें भाषण।

अगस्त १३ : बिहार शरीफके बुनकरों द्वारा स्वागत-समारोहका आयोजन। सार्वजनिक सभामें भाषण, जिसमें नगरपालिका द्वारा अभिनन्दनपत्र भेंट किया गया था। रातको महिलाओंकी सभामें भाषण।

अगस्त १५ : शिमला क्षेत्रके निवासियोंसे अनुरोध किया कि ब्रिटिश सरकारके लिए बेगार न करें।

अगस्त १६ : पटनामें।

अगस्त १७ : शामको मिर्जापुर पार्क, कलकत्ताकी सभामें भाषण।
सियालदह स्टेशनपर सेवा समिति द्वारा मानपत्र भेंट।
असमके लिए रवाना।

अगस्त १९ : शामको असम प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मन्त्री गोपीनाथ बारदोलाईके निवासपर कांग्रेस कार्यकर्त्ताओंसे भेंट।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

ई

ए

ओ

क

ख

ग

घ

च

त

थ

द

भ

म

य

र

ह